खण्डित भारत

खण्डित भारत

लेखक—

डाक्टर राजेन्द्र प्रसाद

प्रकाशक

द्वितीयावृत्ति 　　१९४७ 　　[मूल्य ५)

प्रकाशक—

ज्ञानमण्डल (पुस्तक भण्डार) लिमिटेड,

बनारस

प्रथमावृत्ति—सौर चैत्र २००२

द्वितीयावृत्ति—सौर चैत्र २००३

मुद्रक—

महताबराय,

ज्ञानमण्डल (यन्त्रालय) लिमिटेड, काशी, २००३

दो शब्द

मूल पुस्तककी प्रस्तावना

मार्च १९४० के लाहौर अधिवेशनमें अखिल भारतीय मुसलिम लीगके प्रस्तावके बादसे हिन्दू और मुस्लिम क्षेत्रोमे भारतके विभाजनका प्रश्न महत्व-पूर्ण हो गया है। इस प्रश्नपर बहुत कुछ लिखा गया है, यहांतक कि एक साहित्य तैयार हो गया है। तो भी मैं समझता हूं कि एक ऐसी पुस्तककी जरूरत है जो इस प्रश्नके हरएक पहलूपर प्रकाश डालती हो। खण्डित भारत (India Divided) मैंने मै उन सभी सामग्रियोको जुटाने और सग्रह करनेका यत्न किया है जिनकी सहायतासे पाठक स्वय अपना मत इस प्रश्नपर कायम कर सकें। इन प्रस्तुत सामग्रियोंके आधारपर ही मैंने अपने विचार व्यक्त किये हैं। इन सामग्रियोंके आधारपर मैंने जो मत व्यक्त किया है उसे सामग्रीसे सर्वथा अलग रखा है। इस-लिए पाठक मेरे परिणामोंकी उपेक्षा कर अपनी राय कायम करनेके लिए स्वतन्त्र हैं।

पूरी पुस्तक ६ भागोमे विभक्त है। प्रथम भागमे हिन्दू और मुसलमानोंके दो राष्ट्र होनेके सिद्धान्तोंपर विचार किया गया है। यह दिखलाते हुए कि उप-र्युक्त सिद्धान्तका समर्थन ऐतिहासिक प्रमाणो तथा प्रतिनिधि मुसलमानोंद्वारा नहीं होता, इसमे यह दिखलानेका यत्न किया गया है कि यदि यह मान भी लिया जाय कि मुसलमान अलग राष्ट्र हैं, भारतमे हिन्दू-मुसलिम समस्याके समाधान-के लिए अन्य देशोंके अनुभवो, इस विषयके प्रसिद्ध अन्तर्राष्ट्रीय विद्वानोके आधु-निक प्रामाणिक लेखोंका सहारा बहु-राष्ट्रीय राज कायम करनेमे लेना चाहिये जिसमें शक्तिशाली राजनीतिक संघ विभिन्न राष्ट्रीय दलोको सांस्कृतिक स्वत-न्त्रताकी गारण्टी करता है न कि राष्ट्रीय राजोकी स्थापनाके लिए जो राष्ट्रीय अल्पसंख्यकोंकी समस्याको बिना समाधानके ही नही छोड़ देगा बल्कि इन प्रश्नों-पर नयी समस्याएं उपस्थित कर देगा—आर्थिक, औद्योगिक, राजनीतिक, सैनिक रक्षा तथा आय-व्यय।

दूसरे भागमें इस प्रश्नपर विचार किया गया है कि हिन्दू-मुसलिम प्रश्न किस तरह पैदा हुआ और वर्तमान अवस्थातक बढ़ गया और किस तरह साम्प्रदायिक उलझनके आधारके विस्तारके साथ ही साथ दोनों सम्प्रदायोंके बीचका भेदभाव बराबर बढ़ता गया है।

तीसरे भागमें प्रकाशमें आयी विभाजनकी भिन्न-भिन्न योजनाओंका संक्षिप्त विवरण दिया गया है।

चौथे भागमें अखिल भारतीय मुस्लिम लीगके प्रस्तावकी अस्पष्टताको प्रकट करते हुए यह दिखलाया गया है कि प्रस्तावके आधारपर विचार करनेमें कितनी कठिनाईमें पड़ जाना पड़ता है। इसमें प्रस्तावकी व्याख्या की गयी है और उसमें प्रयोग किये गये शब्दोंके साधारण और स्वाभाविक अर्थके अनुसार पाकिस्तानकी सीमा नियत करनेका यत्न किया गया है।

पांचवें भागमें पाकिस्तान राजके साधनोंपर विचार किया गया है और दिखलाया गया है कि पाकिस्तान अव्यावहारिक है।

छठे भागमें हिन्दू-मुसलिम समस्याको सुलझानके लिए सस्थाओं अथवा व्यक्तियोंके भिन्न-भिन्न सुझावोंका समावेश है।

भाग १, ३, ४, ५, और ६ बांकीपुर जेलमें उन समयोंमें लिखे गये थें जब स्वास्थ्य अच्छा रहता था। इसलिए उनके पढ़नेसे साफ झलक जाता है कि बन्धनोंके भीतर ये काम किये गये है। जेलसे छूटनेके बाद समय निकालकर मैं दूसरा भाग तो लिख सका लेकिन पहलेके लिखे अंशोको दोबारा नही देख सका। जलमें किताबें मिलनेकी कठिनाईको डाक्टर सच्चिदानन्द सिनहा तथा बिहार लेजिस्लेटिव कौन्सिलके अध्यक्ष (President) सर राजीवरञ्जनप्रसाद सिंहकी उदार कृपासे बहुत हदतक दूर हो गयी थी जिन्होंने क्रमशः सिनहा पुस्तकालय तथा बिहार लेजिस्लेचरसे पुस्तकें मंगानेकी हर तरहकी इजाजत दे दी थी। बम्बईके श्री शान्तिकुमार मुरारजीने भी मेरे पास कुछ पुस्तकें और आंकड़े भेज दिये थे। मैं इन सभी सज्जनोंका आभार मानता हूं। बम्बईके श्री के० टी० शाह तथा बिड़ला कालेज पिलानीके अध्यापक बालकृष्णका उनके उपयोगी

सलाहोंके लिए कृतज्ञ हूं। बिड़ला कालेज पिलानीके अधिकारियोंने कालेजके पुस्तकालयका स्वतन्त्रतापूर्वक उपयोग करनेकी उदारता दिखाकर मेरी बहुत कुछ सहायता की। जेलमें जो कुछ लिखा गया था वह वहीं टाइप हो गया था। ताता वर्क्स यूनियन जमशेदपुरके सेक्रेटरी श्री एम० जानने टाइप करनेका काम किया तथा श्री एस० एच० रजी, एम० डी० मैडन तथा एम० के० घोषने टाइप की हुई कापीको असल कापीसे मिलानेका कष्ट किया। इसके लिए वे लोग धन्य-वादके पात्र हैं। श्री जानको कापी टाइप करनेकी आज्ञा प्रदान करनेके लिए मैं बिहार सरकारका कृतज्ञ हूं। ताता प्रयोगशाला (Tata Research Laboratory) जमशेदपुरके श्री एम० के० घोषने आंकड़ोंकी जांच और ग्राफ तैयार किया, इसलिए वे धन्यवादके पात्र हैं। दूसरा भाग तैयार करने तथा पुस्तकके प्रकाशित होनेमें श्री मथुराप्रसाद तथा श्री चक्रधरशरणसे अनेक तरहकी मदद मिली है और इसके लिए मैं उन्हें धन्यवाद देता हूं।

जहां कहींसे मैंने अवतरण या वक्तव्य लिया है उनके प्रति मैंने अपनी कृत-ज्ञता प्रकट कर दी है।

सदाकत आश्रम
दीघाघाट, पटना
१५ दिसम्बर, १९४५

राजेन्द्रप्रसाद

प्रकाशकका वक्तव्य

प्रथम संस्करणमें जो भूलें रह गयी थी उन्हें इस द्वितीय संस्करणमें यथा-साध्य दूर करनेका यत्न किया गया है तथा शिमला-सम्मेलनके बादकी घटनाएं अलग अध्यायमें जोड़ दी गयी हैं।

विषय-सूची

प्रथम भाग

दो राष्ट्र

द्वितीय भाग

साम्प्रदायिक त्रिभुज

तृतीय भाग

विभाजनकी योजनाएँ

चतुर्थ भाग

अखिल भारतीय मुस्लिम लीगका पाकिस्तानका प्रस्ताव

पञ्चम भाग

मुस्लिम राज्योंकी उत्पादक योग्यता

षष्ठ भाग

पाकिस्तानके विकल्प

पंजाब
बलूचिस्तान
Hindi
संयुक्त प्रान्त
बंगाल
मध्य प्रान्त
उड़ीसा
बम्बई
बरार
हैदराबाद
मद्रास
प्रस्तावित पाकिस्तान की सीमायें.
मुसलिम बहुसंख्यक जिले.
गैर मुसलिम बहुसंख्यक जिले.
अंग्रेजी राज्य के प्रान्त
देशी रियासत

गैर मुसलिम बहुसंख्यक जिला
मुसलिम बहुसंख्यक जिला
गै० मु० जिले की गैर-मुसलिम प्रतिशत आबादी
मु० जिले की मुसलिम प्रतिशत आबादी
अटक
रावलपिंडी
झेलम
गुजरात
शाहपुर
गुजरांवाला
सियालकोट
गुरदासपुर
मियाँवाली
शेखुपुरा
झंग
लायलपुर
लाहौर
मुजफ्फरगढ़
मान्टगोमरी
मुल्तान
डेरागाज़ी खाँ
कांगड़ा
करनाल
रोहतक
गुरगाँव
पंजाब

प्रथम भाग

दो राष्ट्र

१
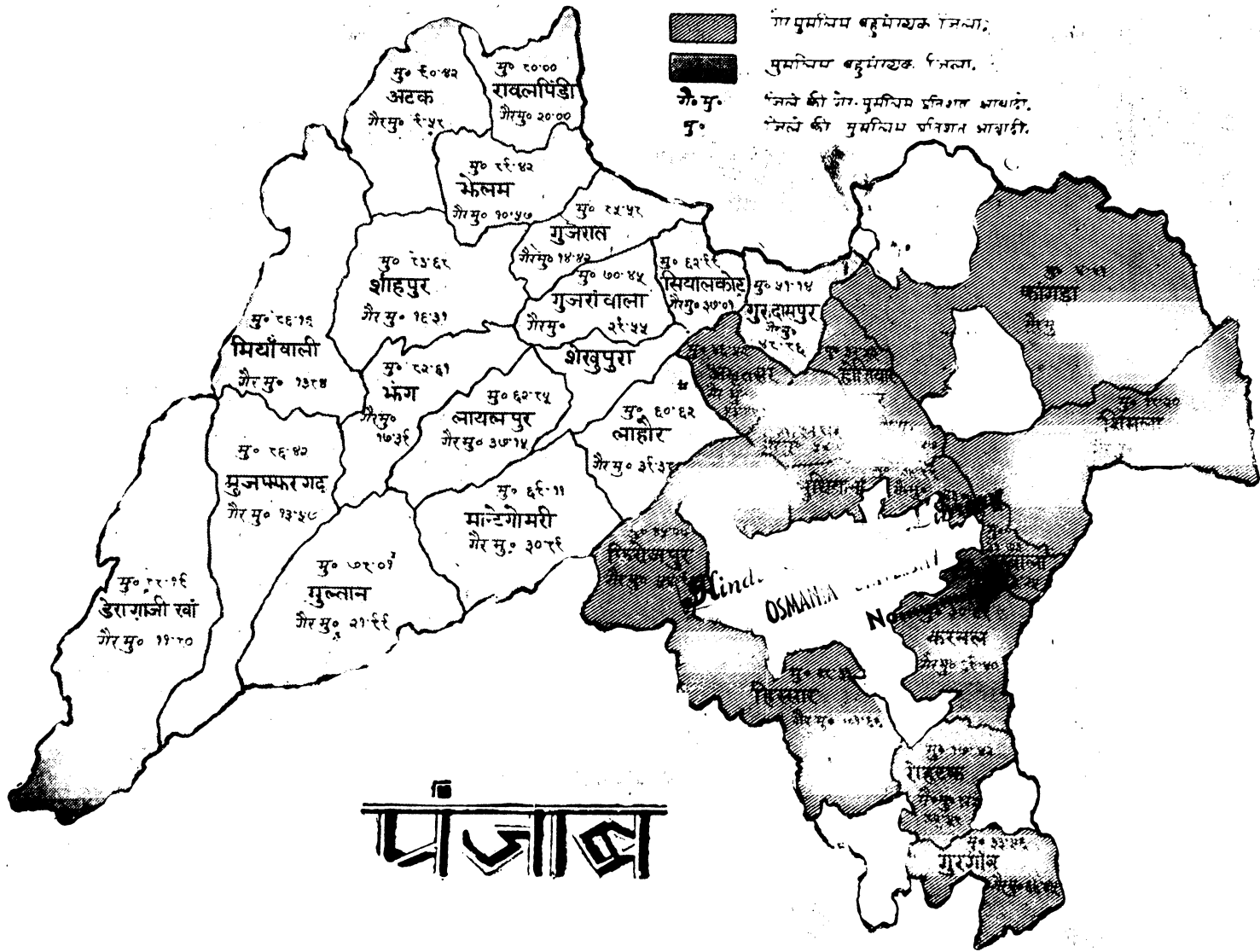
पाकिस्तानका आधार—दो राष्ट्र

भारतको मुसलमान और गैर-मुसलमान—इन दो पृथक् क्षेत्रोमे विभाजित करनेका प्रस्ताव, जिसमे प्रत्येक क्षेत्र स्वतन्त्र प्रभु सत्ताके रूपमे रहे, इस सिद्धान्त-पर आधृत है कि हिन्दू और मुसलमान दो पृथक् राष्ट्र है। मुसलिम लीगके लाहौरवाले अधिवेशनमे, जिसमे इस प्रकारके विभाजनका प्रस्ताव स्वीकृत हुआ था, अध्यक्ष-पदसे श्री मुहम्मद अली जिनाने कहा था कि 'राष्ट्रकी किसी भी परि-भाषाके अनुसार मुसलमान एक राष्ट्र है अतः उनकी अपनी वास-भूमि अपना प्रदेश और अपना राज्य होना चाहिये।'* 'यह समझना अत्यन्त कठिन है कि हमारे हिन्दू भाई इसलाम और हिन्दुत्वके वास्तविक रूपको क्यों नही समझ पाते। ये दोनो शाब्दिक अर्थमे धर्म नही है प्रत्युत ये दो पृथक् और स्पष्ट सामाजिक व्यवस्थाए है। हिन्दू और मुसलमान कभी एक संयुक्त राष्ट्रके रूपमें रह सकते है, यह कोरा स्वप्न है। एक भारतीय राष्ट्रकी यह भ्रामक धारणा बहुत आगे बढ़ चुकी है और यह हमारे अनेक कष्टोंका कारण बन रही है। यदि हमने समयपर इस धारणाको निर्मूल न किया तो यह भारतका सर्वनाश किये बिना न रहेगी। हिन्दुओं और मुसलमानोके धार्मिक सिद्धान्त सामाजिक रीतिरिवाज और साहित्य—एक दूसरेसे सर्वथा पृथक् है। उनका परस्पर रोटी-

* 'रीसेण्ट स्पीचेज एण्ड राइटिंग्स ऑव मिस्टर जिना', पृष्ठ १५५

बेटीका सम्बन्ध नहीं है और वस्तुतः दोनोंकी परस्पर विरोधी भावनाओंपर आधृत सभ्यताएं पृथक्-पृथक् हैं। जीवनपर दोनों भिन्न प्रकारसे विचार करते हैं। दोनोंके जीवन-सम्बन्धी दृष्टिकोणमें अन्तर है। यह पूर्णतः स्पष्ट है कि हिन्दुओं और मुसलमानों—दोनोको पृथक्-पृथक् ऐतिहासिक आधारोंसे प्रेरणा मिलती है। उनकी पुरातन गाथाएं, उनके वीर और उन वीरोंकी कहानिया पृथक्-पृथक् हैं। प्रायः ही एकका वीर दूसरेका शत्रु माना गया है और एककी विजय दूसरेकी पराजय। ऐसे दो राष्ट्रोंको एक राज्यमें गूथनेका प्रयत्न, जिसमें एक अल्पसंख्यक है दूसरा बहुसंख्यक, अवश्य ही असन्तोष उत्पन्न करेगा और उस शासन-व्यवस्थाका अन्त करके छोड़ेगा जो ऐसा राज चलानेका प्रयत्न करेगी।'※

'एक पञ्जाबी'ने 'कान्फेडरेसी ऑव इण्डिया' नामक पुस्तकमे इसी सिद्धान्तका प्रतिपादन करते हुए कहा है कि 'हम अपनी पिछली विवेचनासे इसी निष्कर्षपर पहुंचते है कि हिन्दू और मुसलमान एक दूसरेसे पृथक् है। उनकी सभ्यताएं अलग-अलग है। उन्होंने एक दूसरेको प्रभावित भले ही किया हो परन्तु वे एक दूसरेको आत्मसात् नहीं कर सकती। उनकी आदते और रीतिरिवाज उनकी सामाजिक प्रथाएं, नैतिक नियम, धार्मिक, राजनीतिक और सास्कृतिक विचार, परम्पराएं, भाषाएं, साहित्य, कलाकृतियां और जीवनका दृष्टिकोण एक दूसरेसे सर्वथा भिन्न ही नही अपितु परस्पर विरोधी है। ऐसे विरोधी दृष्टिकोणोंको लेकर एक राष्ट्र नहीं बनाया जा सकता। इन बातोंसे सदैव ही अविश्वास और भ्रम उत्पन्न होता है। दोनों सम्प्रदायोके बीच मौलिक मतभेद, भूतकालकी स्मृतियां और वर्तमानकालकी प्रतिद्वन्द्विताएं और गत १००० वर्षके भीतर एक दूसरेके प्रति किये गये अन्याय और अपराध—दोनोंके बीच न पट सकनेवाली खाई उत्पन्न करते है। जैसा कि पहले कहा जा चुका है, इधर कई शताब्दियोंसे दोनोंमें एक ही बात समान रही है और वह है दोनोंपर विदेशी शासनका भार

※'रीसेण्ट स्पीचेज एण्ड राइटिंग्स ऑव मिस्टर जिना', पृष्ट १५३

लदा रहना। जैसे ही वह भार हटा कि दोनों अलग हो जायँगे और दोनोके मत-भेद, जो आज अस्पष्ट है, पूर्णतः स्पष्ट होकर चमकने लगेंगे।'*

अलीगढ़के मुहम्मद अफजल हुसेन कादरी और प्रोफेसर सैयद जफरुल हसन, जिन्होने कि पुस्तकोमे भारतके विभाजनकी योजना प्रकाशित की है, 'एक पञ्जाबी'से पीछे नही है। आप कहते है कि '१९३५ के भारत शासन-विधान-का मौलिक दोष यह है कि वह इस प्रकट सत्यको स्वीकार नही करता कि भारत-के मुसलमान हिन्दुओसे पृथक् राष्ट्र है, दोनोके दृष्टिकोण और विचारोंमें आकाश-पातालका अन्तर है और अन्य किसी कथित हिन्दू या अहिन्दू राष्ट्रमें उनका घुल-मिल जाना सम्भव नही है।' तथा 'हमारा यह निश्चित मत है कि भारतके मुसलमानोको लगातार और जोरसे इस बातकी माग करनी चाहिये कि भारतके मुसलमान स्वतः एक राष्ट्र है। हिन्दुओं तथा अन्य गैर-मुसलमान दलोसे उनका राष्ट्रीय अस्तित्व सर्वथा भिन्न है। वस्तुतः सुडेटा जर्मन और चेकोमे जितना पार्थक्य था उससे कही अधिक पार्थक्य हिन्दुओं औ मुसलमानोमे है।'

अल हमजाने 'पाकिस्तान--एक राष्ट्र' नामक पुस्तकमे ये बातें दिखायी है--(१) भारत एक देश नही है। उसमे कई देश है जिनकी मानवीय परिधियोमे व्यापक अन्तर है, और (२) यहांके निवासियोकी नस्ल और सस्कृतिमे इतना अधिक अन्तर है कि दोनोंको ('राष्ट्र' शब्दके वर्तमान राज-नीतिक अर्थमे) एक राष्ट्र नही कहा जा सकता। उन्हें कई राष्ट्रोंमे विभक्त समझना चाहिये।† यह मतभेद प्रदर्शित करनेमे आप भाव-विभोर होकर कहने लगे है कि हिन्दुत्व मानो वर्षासे उद्भूत है और इसलाम मरुभूमिसे! ‡ उत्तर पश्चिमका पार्थक्य किसी भी वस्तुसें वैसा स्पष्ट व्यक्त नही होता जैसा हिन्दुस्तानमें

---

* एक पञ्जाबी : 'कान्फेडरेसी ऑव इण्डिया', पृष्ठ १५०-५१

† अल हमजा : 'पाकिस्तान--ए नेशन', ,, ७

‡ ,, वही ,, ४५

ऊँटोंके फैले रहनेसे।'ꕥ 'भौगोलक, ऐतिहासिक और दार्शनिक——सभी दृष्टियोसे ऊंटोके साथ हमारा ऐसा बहुमुखी सम्पर्क रहा कि हम स्पष्ट रूपसे उसमे एक सभ्यताका विकास अंकित पाते है। ऊटको हम उस महान् ऐतिहासिक प्रगतिका प्रतीक मान सकते है जो एक स्वतन्त्र नस्लकी आवश्यकताके कारण दक्षिण-पश्चिम एशियासे निकलकर सारे विश्वमे छा गया। आज कई शताब्दियोके उपरान्त हम दूर-दूर देशोमे अत्यन्त उज्वल रूपमें अरबकी महत्ताको आलोकित देखते है और शताब्दियोके इस प्रदर्शनमे हम आदिसे अन्ततक अरबकी तप्त बालुकाकी पृष्ठ-भूमिवाले कारवांको ऊटकी पीठपर सवार होकर विजय-पथपर बढता हुआ पाते है। अरबकी महत्ताके दिन बीत गये किन्तु अभी शुष्क व्यापकता और अपने निवासियोंकी धार्मिक और सांस्कृतिक समानताके लिए प्रख्यात देशमे ऊट आज भी मनुष्यका साथी बना हुआ है। ऊटका देश आज भी तुर्की और ईरानी तलवारों और खञ्जडियो, मसजिदो और मुअज्जिनो, बुर्जो और मीनारोका देश बना हुआ है।'† लेखक ऊंटपर आधृत अपने तर्कके बेतुकेपनको रत्तीभर महसूस नही करता और पश्चिमोत्तर प्रदेशके पार्थक्यको अरबके ऊटोका सजातीय बताकर सिद्ध करना चाहता है जब कि राजपूताना जैसे भारतके अन्य प्रदेशोमें भी वैसे ही ऊट पाये जाते है जो तलवारो और खञ्जड़ियो, मसजिदो और मुअज्जिनों, बुर्जो और मीनारवाले देश नही है।' इस तर्कको यदि सगत मान लिया जाय तो पूर्वी प्रदेशके पृथक्करणके लिए कोई दलील ही नही रह जाती, कारण अपने पशु और वनस्पति-जगत्, शस्यश्यामला भूमि और अत्यधिक वर्षाके कारण वह उष्ण कटिबन्धमे है। इस प्रकार मलाया-जैसे उष्ण कटिबन्धवाले देशोमे कोई भी मुसलमान न होना चाहिये था।

श्री एफ० के० खा दुर्रानीने प्रादेशिक विभिन्नता और ऐसी ही अन्य बातोपर आधृत उत्तर-पश्चिमी पाकिस्तानके पक्षमें उपस्थित किये जानेवाले तर्कके

ꕥ अल हमजा : 'पाकिस्तान——ए नेशन' पृष्ठ ७०

† ,, वही, पृष्ठ ७२

लचरपनकी उपेक्षा नहीं की है। आप 'दि मीनिग ऑव पाकिस्तान' (पाकिस्तान-का अर्थ) नामक पुस्तकमे लिखते है कि 'सभी मुलमान फिर वे चाहे पाकिस्तानमे रहते हो या हिन्दुस्तानमें, एक राष्ट्र है और हम पाकिस्तानवासियोंको चाहिये कि हम हिन्दुस्तानमे रहनेवाले सहधर्मियोंको एक ही रक्तमांसका समझें।'* अल हमजाके तर्कोकी आलोचना करते हुए आप कहते है कि 'पाकिस्तान ए नेशन' पुस्तकके लेखका सारा तर्क उस भौगोलिक विशेषतापर आधृत है जो पश्चिमोत्तर प्रान्तो—पञ्जाब, काश्मीर, सीमाप्रान्त, सिन्ध और बलूचिस्तान—को भारतके अन्य प्रान्तोसे पृथक् करता है। कुछ प्रान्तोमे अन्य प्रान्तोंकी अपेक्षा अधिक वर्षा होती है, कुछ प्रान्तोका मुख्य खाद्य गेहू है और कुछका चावल। मानसूनवाले प्रान्तोमें वनस्पति, लता और झाड़िया खूब है और अन्य प्रान्तोंमे कम। विभिन्न प्रान्तोके पशुओ और वनस्पतिमे बडा अन्तर है। पश्चिमोत्तरके शुष्क प्रदेशोमें जहां ऊंट मिलता है वहा दक्षिण और आसाम तथा बंगालके तर प्रदेशमे हाथी पाया जाता है। उत्तर-पश्चिमके शुष्क प्रदेशोंमे एक विशेष प्रकारकी नस्ल पायी जाती है जब कि अन्यत्र उससे भिन्न प्रकारकी, उससे कोमल तथा अधिक गहरे रंगवाली नस्ल मिलती है। भारत-जैसे विशाल देशके, जिसमें अनेक नस्लोके लोग निवास करते है और जो अनेक अक्षांशो और देशान्तरोंके बीच बसा है तथा जो समुद्र, पर्वत और मरुभूमिके विभिन्न प्रभावोसे प्रभावित है, निवासियो तथा वनस्पति आदिमे विभिन्नता स्वाभाविक और अनिवार्य है। मुसलिम भारतकी राजनीतिपर वे बातें लागू नही होती। यदि हम इसी तर्कपर चलेंगे तो हमे पश्चिमोत्तर प्रदेशके निवासियोंको भारतकी ऐसी मुसलिम जन-संख्याके एक बड़े अंशसे हाथ धो लेना पड़ेगा जो पाकिस्तानसे बाहर रहती है और जिसकी वेशभूषा और भोजन हमसे भिन्न है। हमे उसके साथ विदेशी-जैसा व्यवहार करना पड़ेगा। जीवन अथवा हितोमे उनके साथ हमारा कोई साम्य न रहेगा। पाकिस्तानका कोई भी मुसलमान इस स्थितिको स्वीकार

---

* एफ० के० खां दुर्रानी 'दि मीनिग ऑव पाकिस्तान', पृष्ठ ८

न मरेगा और पंजाबका कोई भी मुसलमान तो इसपर विचारतक करना पसन्द न करेगा।❀

अपनी बात सिद्ध करनेके लिए अन्य व्यक्तियोने——जैसे डाक्टर भीमराव अम्बेडकरने अपनी पुस्तक 'थाट्स आनं पाकिस्तान'मे——इतिहासके पृष्ठोसे वह सामग्री एकत्र की है जिसमें यह दिखाया गया है कि किस भाति मुसल्मान आक्रमणकारियो और शासकोंने हजारों मन्दिर नष्ट कर डाले, मूर्तियोको भग कर दिया, मन्दिरोको मसजिदोंमें परिवर्तित कर दिया अथवा उनकी सामग्रीसे उनके खम्भो आदिसे अन्यत्र मसजिदोका निर्माण किया; किस भाति उन्होने तलवारका भय दिखाकर इसलाम धर्म कबूल करनेका आदेश दिया और उससे इनकार करनेपर हजारो हिन्दुओंको तलवारके घाट उतार दिया। इसका निष्कर्ष यही निकाला गया है कि हिन्दू न तो इन अत्याचारोको भूले ही है और न कभी भूल ही सकते है। ये घटनाएं कभी उनके स्मृतिपटसे विलीन नही हो सकती। यह भी बताया गया है कि मसजिदके सम्मुख बाजा अथवा गोहत्या-जैसे सामान्य कारणोको लेकर हिन्दू-मुसलिम दंगोका होना यह बात स्पष्ट कर देता है कि पुरानी शत्रुता अब भी कायम है तथा ब्रिटिश गुलामी और उसका कड़ा शासन भी दोनो सम्प्रदायोंमें मेल करानेमें असमर्थ रहा है।

अब भारतके कुछ भागोमें मुसलिम राज्यकी स्थापनाके पक्षमे दिये जाने-वाले इस तर्कको समझना जरा कठिन है। जो लोग भारतको हिन्दूक्षेत्र और मुस-लिमक्षेत्रमे बाटनेकी बात कहते है उनका अन्ततः उद्देश्य तो यही है।

क्या इसका तात्पर्य यह है कि इसलामने गैर-मुसल्मानोके पवित्र स्थानोको दूषित करने और कलाकी हत्या करनेकी स्वीकृति दी और उसे प्रोत्साहित किया? यदि उसने इन कृत्योंकी अनुमति दी और उन्हे उचित ठहराया तो क्या अब यह कहा जा सकता है कि उसने अब ऐसे कृत्योका निषेध कर दिया? इस बातका भी प्रमाण क्या है कि अब इस सम्बन्धमे इसलामके दृष्टिकोणमें अन्तर

❀ एफ० के० खां दुर्रानी : 'दि मीनिग आव पाकिस्तान', पृष्ठ १–२

हो गया है ? यदि यह कहा जाय कि इसलामका प्रचार करनेवाले कुछ महत्त्वाकाक्षी व्यक्तियोने अपने उद्देश्यकी पूर्तिके लिए इस प्रकारके बर्बरतापूर्ण कृत्य किये, जिनका अरबके मसीहासे कोई सम्बन्ध न था तो अब भी इस बातका क्या ठिकाना कि भविष्यमे पुन: इस प्रकारके महत्त्वाकाक्षी व्यक्ति उत्पन्न होकर इसी प्रकार अपनी शक्तिका उपयोग न करेगे ? क्या इसका तात्पर्य यह है कि विभाजित क्षेत्रोमे मुसलिम राज स्थापित हो ताकि उन गैर-मुसलमानोपर, जो दुर्भाग्यसे उनके क्षेत्रोमे पड जायॅ, पुन. पहलेके समान अत्याचार हो और होते रहे ? यदि ऐसा हो तो किसी भी गैर-मुसलमानद्वारा ऐसी योजनाके समर्थनकी आशा रखना व्यर्थ है।

यदि ये सब बाते इसलामके उपदेशके अनुकूल नही है और वस्तुत: शान्ति और सहनशीलताके उसके मौलिक सिद्धान्तोके प्रतिकूल है तो क्या यह वाञ्छनीय है कि पुराने इतिहासको खोजकर इस प्रकारके उदाहरण मुसलमानो और गैर-मुसलमानोके समक्ष उपस्थित किये जायॅ ? क्या यह कार्य पुरानी कटु-स्मृतियोका स्मरण दिलाये बिना किया जा सकता है ? इन्हे तो सबके हितकी दृष्टिसे भुला डालना ही वाञ्छनीय है। मुसलमानोको सोचना चाहिये कि यह मुसलमानोके इतिहासका लज्जाजनक परिच्छेद है जिसमे इसलामके नामपर मुसलमानोने ऐसे कृत्योद्वारा अपने धार्मिक सिद्धान्तोकी हत्या की जिसे इसलाम कभी भी उचित नही ठहरा सकता। ऐसे कृत्य उन्होने अपने स्वार्थ और अधिकार-लोलुपताके वशीभूत होकर किये, इसलामके प्रचारके लिए नही; कारण उसका प्रचार ऐसे कृत्योसे नही अपितु इनसे कही शुद्ध, पवित्र और उत्तम कृत्योसे हो सकता था। गैर-मुसलमानोको यह इसलिए भुला देना चाहिये कि ऐसे धर्मका कुत्सित रूप दृष्टिसे ओझल हो जाय जो अपने प्रचारके लिए इस प्रकारके अत्याचार कर सकता है, तभी उनमे सद्भाव और प्रेमकी भावनामे वृद्धि होगी।

यदि मुसलमान और गैर-मुसलमान ऐसे उद्धरणोके आशिक निष्कर्षको भी मुसलिम शासनके अशके रूपमे ग्रहण कर ले तो मुसलमानोको उन्ही उपायोका सहारा लेना होगा जिन उपायोका सहारा उनके पूर्वजोने लिया था। जो लोग

ऐसी घटनाओके उद्धरण और उदाहरण देते है वे ही यह भी बतायेगे कि उस जमानेके मुसलमानोने तत्कालीन गैर-मुसलमानोंकी स्वीकृति और इच्छासे ऐसा अधिकार नही प्राप्त किया था। यदि अनेक शताब्दिया बीत जानेपर तथा इस बीच विश्वकी स्थितिमे अपार परिवर्तन हो जानेपर, आजकी स्थितिमे भी भारतके मुसलमानोने भारतके गैर-मुसलमानोके प्रति और गैर-मुसलमानोंने मुसलमानोके प्रति अपना रुख नही बदला तो यही आशा रखनेका क्या आधार है कि गैरमुसलमान इस मामलेमे अपना रुख परिवर्तित कर देगे और पिछला कुछ भी इतिहास रहते हुए भी उन गलतियो तथा अत्याचारोकी पुनरावृत्ति स्वीकार कर लेगे जिनकी सारे सभ्य संसारने, जिसमे भारतके मुसलमान भी सम्मिलित है, घोर निन्दा की है।

प्रश्न यह है कि ऐसे कार्य इसलाम धर्म और उसके विश्वासका अंग है अथवा नहीं। यदि वे उसका अंग है तो कोई भी गैर-मुसलमान ऐसी किसी भी बातके लिए राजी नही हो सकता जिससे ऐसे आदर्श मुसलिम राजकी, जिसका अन्तिम आदर्श शुद्ध इसलामी ढंगपर विश्वक्रान्तिका हो,* स्थापनाद्वारा उपरिलिखित उद्धरणोमे वर्णित कार्योकी पुनरावृत्ति हो सके। यदि ये कार्य इसलाम धर्म और विश्वासका अंग नही है तो इनकी स्मृतिको ताजा करनेसे कोई लाभ नही। उनसे गैर-मुसलमानोकी भावना उत्तेजित ही होगी। विभाजनको कोई पसन्द करे अथवा न करे किन्तु इतना तो निश्चित है कि भावनाओको उत्तेजित करना किसीका उद्देश्य नही हो सकता। यदि यह दिखाना इसका उद्देश्य हो कि पिछली घटनाओके कारण हिन्दू और मुसलमान एक साथ मिलकर नही रह सकते और इसीलिए उन्हे पृथक् हो ही जाना चाहिये तो यह स्मरण रखना चाहिये कि इसका परिणाम ठीक उलटा हो सकता है। सम्भव है हिन्दू इसी कारण मुसलिम क्षेत्रके अपने लाखो सहधर्मियोंको उन्ही पिछली घटनाओंकी पुनरावृत्तिका शिकार होने देनेके लिए छोड़नेको प्रस्तुत न हो। अतः इस प्रश्नपर व्यावहारिक रूपसे विचार करनेके लिए ऐसे उद्धरणोंका कोई मूल्य नहीं।

---

* एक पञ्जाबी—'कान्फेडरेसी ऑव इण्डिया', पृष्ठ २६९-०७

ऐसे उद्धरणोंकी उपयोगिता अथवा उद्देश्यकी बात छोडकर यदि हम विचार करे तो हम देखेंगे कि पुरानी अथवा नयी शुष्क पुस्तकोसे ऐसे उद्धरण एकत्र कर देनेमे विशेष श्रम नही करना पड़ता। अबतककी ऐतिहासिक पुस्तकोमे राजाओ और विजेताओ, उनके सुकृत्यों और कुकृत्यों, उनके युद्धो और विजयो, उनके दरबारो और महलोकी रगरेलियोकी ही तो चर्चा भरी पडी है। इन पुस्तकोके लेखकोने सर्वसाधारणकी ओर कोई विशेष ध्यान नही दिया। साधारण मनुष्य तो शान्तिपूर्वक खेतोमे हल अथवा फावड़ा चलाकर अपनी कुटियामे अपने चरखे, हँसिया, हथौडा, कुदाल, सुई, डोरा आदि छोटे-छोटे गृहशिल्पोंकी सहायतासे अपने पसीनेकी कमाईद्वारा ही अपनी रोजी चलानेमे मस्त और प्रसन्न था। जनताके इतिहासमें पण्डितो और पुजारियों, साधुओं और महात्माओ, विद्वानो और सुधारको, कवियो और दार्शनिको, कलाविदों और सगीतज्ञोके जीवन और कार्योंका जो महत्त्व होता है उसकी ओर समुचित ध्यान नही दिया गया। इन पुस्तकोके रचयिताओके मस्तिष्कपर, जो कि बहुधा ऐसे राजाओं अथवा विजेताओके दरबारी होते थे, यह भ्रान्त धारणा सवार रहती थी कि किसी मुसलिम सम्राट् अथवा विजेताकी धार्मिकता काफिरोके प्रति ऐसे कार्योके वर्णनद्वारा ही सिद्ध की जा सकती है। अधिकतर दरबारी होनेके नाते वे इन राजाओ अथवा विजेताओ और इसलामके प्रति अपना यह कर्तव्य समझते थे कि ऐसी घटनाओका विस्तारसे वर्णन किया जाय ताकि वे भावी शासकोके लिए उदाहरणका काम दे और विजित देशके निवासी उन्हे पढ़-पढ़कर भयभीत हो। यह आवश्यक नही कि लोग इन घटनाओको अतिशयोक्तिपूर्ण अथवा असत्य समझकर इनका मूल्य कम आके, किन्तु उन्हे केवल स्मरण रखना चाहिये कि केवल ये ही घटनाएं ऐसी न थी जिनका विवरण सुरक्षित रखा जाता। यदि इनके साथ-साथ ऐसी घटनाओका भी विस्तृत विवरण रखा जाता कि किस भाति सैकड़ों वर्षोतक हिन्दू और मुसलमान एक दूसरेका दुःख-सुख बँटाते हुए मिलकर एक साथ रहते थे, किस भाति साधु और महात्मा उनके रीति-रिवाजो, प्रथाओं, जीवन और जीवनकी अन्य बातोको प्रभावित करते और विशेष दिशामें

मोड़ते थे, किस भाति हिन्दुओके ढगपर ही मुसलमानोके घरोमे बच्चोके जन्मोत्सव और स्त्री-पुरुषोके विवाहोत्सव मनाये जाते थे, किस भाति विभिन्न प्रान्तोमे इन्ही रीति-रिवाजोमे हिन्दुओकी भाति ही मुसलमानोके यहा भी अन्तर रहता था, किस भाति मुसलिम फकीर मुसलमान शासकोकी तलवारकी अपेक्षा हिन्दुओका धर्मपरिवर्तन करानेमे कही अधिक समर्थ होते थे—तो वह विवरण मुसलमान शासको अथवा विजेताओके जुल्मो और अत्याचारोके विवरणसे कही बड़ा और विस्तृत होता। इस प्रकारके इतिहासकी पृष्ठ-सख्या, उन इतिहासोके साथ, जिनमेसे उपर्युक्त ढगके उद्धरण लिये गये है और जिनके आधारपर इतिहासकी पाठ्य-पुस्तके बनी है, उसी अनुपातमे रहती जो अनुपात देशकी आम जनताके और राजाओ तथा दरबारियो, उनके सेनापतियो और अधिकारियो, उनके हरमो और महलोके बीच रहता। उनका अनुपात वही रहता जो शान्ति, सद्भाव, दया, सहृदयता, सहनशीलता और मेलके दिनो और लडाई-झगड़ा, मारपीट, दगा, उपद्रव, लूटमार, हत्या, डाका, अग्निकाण्ड आदिके दिनोमे रहता है। आज भी समाचारपत्रोमे दगा-फसाद, उपद्रव, लूटमार, लड़ाई-झगडा आदिके समाचारोके लिए जितना स्थान दिया जाता है, वह उसकी अपेक्षा कई गुना अधिक होता है, जितना शान्ति, सद्भाव और प्रेम आदिके समाचारोके लिए दिया जाता है। यदि कोई व्यक्ति ५०० वर्ष बाद इन्ही समाचार-पत्रोके आधारपर, अथवा इनके उद्धरण देकर कोई इतिहास लिखने बैठे तो वह इनके आधारपर यह बात बडे मजेमे सिद्ध कर सकता है कि ब्रिटेनके सुशान्तिपूर्ण शासनकालमे भी शायद ही कोई दिन ऐसा रहा हो जिस दिन भारतमे शान्ति रही हो।

अत: उपयुक्त सामग्रीके अभावमे ऐसी पूर्ण और विस्तृत पुस्तक लिखना सरल नही जिसमे सामाजिक और सास्कृतिक प्रगति, जीवनपर उसकी गम्भीर और अमिट छाप और जनतापर उसके अस्पष्ट प्रभावोकी पूरी चर्चा हो।

———

२

राष्ट्रीयता और राज

चूकि सीमाप्रान्त और पूरबी भारतमे पृथक् और स्वतन्त्र मुसलमानी राजोंकी स्थापनाकी मांग इस सिद्धान्तके आधारपर की जाती है कि मुसलमानोका एक पृथक्—भारत कही जानेवाली भौगोलिक सत्ताके हिन्दू तथा अन्य निवासियोंसे भिन्न—राष्ट्र है, इसलिए 'राष्ट्र' का अर्थ साफ-साफ समझ लेना जरूरी है। भौगोलिक दृष्टिसे भारत एक है—इस तथ्यसे इनकार नही किया जा सकता। कारण, मनुष्य भूगोलमें कोई परिवर्तन नही कर सकता। श्री एफ० के० खा दुर्रानीने स्पष्ट ही कहा भी है—'इसके विपरीत, मै डाक्टर बेनीप्रसादके इस कथनसे सहमत हूं कि ससारमें ऐसा कोई भी देश नही जिसे समुद्र और पहाड़ोके कारण भारत-जैसा अखण्ड-रूप प्राप्त हो। जाति, जलवायु और धरातलके रूपोमें इतनी विभिन्नता होते हुए भी सुलेमान-श्रेणीसे लेकर आसामकी पहाड़ियों-तक और हिमालयसे लेकर समुद्रतक भारत एक ही भौगोलिक इकाई है।'*

तब प्रश्न यह है कि राष्ट्र है क्या? राष्ट्रके उपकरण क्या है? विभाजन-योजनाके समर्थकोने इस प्रश्नपर प्रकाश डाला और उत्तर दिया है, साथ ही अपने उत्तरके समर्थनमें विद्वान् लेखकोके मत भी उद्धृत किये है। श्री दुर्रानीने इस विषयपर विस्तारके साथ विचार किया है, इसलिए उनके निकाले हुए कुछ निष्कर्षोका यहां उल्लेख कर देना उपयुक्त होगा—(१) 'भौमोलिक दृष्टिसे भारत एक देश होते हुए भी इसके अधिवासियोमे विभिन्नता है, और राजों तथा राष्ट्रोंके निर्माणमें विशेषता अधिवासियोंकी ही होती है, भूगोलकी नही।... रेननके शब्दोंमें 'नदियोंके मार्ग और पहाड़ोंकी दिशाएं सजीव भावनाको वशी-भूत नही कर सकती।...भूभाग केवल धरातल और युद्ध एवं कार्यके लिए क्षेत्र प्रदान कर सकता है, भावना तो मनुष्य ही प्रदान कर सकता है।

---

* एफ० के० खा दुर्रानी: 'दि मीनिंग ऑव् पाकिस्तान', पृष्ठ २

जनता कही जानेवाली पवित्र वस्तुके निर्माणमे मनुष्य ही सब कुछ है, अन्य कोई भौतिक पदार्थ इस कार्यको सम्पन्न नही कर सकता।' (२) वस्तुत: जाति भी भूगोलकी ही तरह राष्ट्रोके निर्माणके पक्ष या विपक्षमे कोई निर्णायक हेतु नही है। (३) हिन्दू नेता गत दो दशकोसे इस मतका प्रचार करते आ रहे है कि धर्म (मजहब) को राजनीतिके साथ नही मिलाना चाहिए, केवल राजनीतिके आधारपर राष्ट्रका निर्माण होना चाहिये। क्या केवल राज-नीतिके आधारपर राष्ट्रका स्रजन सम्भव है? राजशास्त्रियोके मतसे केवल विशुद्ध रानीतिक बन्धन राष्ट्रके निर्माणमे समर्थ नही हुआ करते।* अपने वादके समर्थनमे उन्होने लार्ड ब्राइस और सिजविकका मत भी दिया है। सिजविकका कहना है—'यदि किसी राजनीतिक समाजके सदस्योमे एक ही सरकारके आज्ञा-नुवर्ती होनेके अतिरिक्त उन्हे पारस्परिक ऐक्यके सूत्रमे बाधनेके निमित्त और कोई चेतना विद्यमान न हो तो उस समाजकी स्थिति सन्तोषजनक तो होगी नही, उसका स्थायित्व भी अपेक्षाकृत कम ही होगा। ऐसे समाजमे समय-समय-पर सम्भावित बाहरी युद्धो और भीतरी असन्तोषके कारण होनेवाले विघटनकारी आघातोंका सामना करनेके लिए आवश्यक सघटन शक्तिका प्राय: अभाव ही होगा। फलत: हमे मानना पड़ता है कि राजके सदस्योको परस्पर आबद्ध रखनेके लिए कुछ और बन्धनोका होना आवश्यक है जो 'राष्ट्र' मे सन्निहित है।'† सिवजिक आगे कहता है 'जो राज्य राष्ट्र भी है उसके रूपकी आधुनिक कल्पनाके लिए जो तत्त्व वस्तुत: अनिवार्य रूपसे आवश्यक है वह यह है कि एक ही सरकारके अधीन होनेका जो लाभ है उसके अलावा राजके व्यक्तियोमे अपनापन, एक ही शरीरीके अग होनेकी चेतना, विद्यमान हो जिससे युद्ध या क्रान्तिके कारण उनकी सरकारका अन्त हो जानेपर भी उनमे परस्पर आबद्ध रहनेकी प्रवृत्ति बनी रहे। इस चेतनाके विद्यमान रहनेपर ही उनका समुदाय

---

* एफ० के० खा दुर्रानी: 'दि मीनिग ऑव पाकिस्तान', पृष्ठ ४—६

† „ वही „ ७

राष्ट्रका रूप ग्रहण कर सकता है फिर चाहे और तत्व भले ही वर्तमान न हों।'*
लार्ड ब्राइसकी व्याख्याके अनुसार 'राष्ट्र ऐसे मनुष्योंका समुदाय है जो किन्ही भावनाओसे प्रेरित होकर परस्पर आकृष्ट और आबद्ध हों। इन भावनाओमे जाति एव धर्मगत भावनाए प्रधान है, पर इनके साथ ही एक सामुदायिक भावना भी है जो सामान्य रूपसे एक ही भाषाके प्रयोग, साहित्यपर स्वत्व, अतीतकालमे सम्मिलित रूपसे सम्पादित कार्यो या कष्टसहनकी स्मृति, आचार-विचारोकी एक-रूपता तथा एक ही जैसे आदर्शो एव महत्वाकाक्षाओके कारण उत्पन्न होती है। कभी तो परस्पर आवद्ध रखनेवाली ये सभी भावनाए विद्यमान रहती है और कभी दो-एकका अभाव भी देख पड़ता है। इन कडियोकी संख्या जितनी ही अधिक होगी ऐक्यकी भावना भी उतनी ही अधिक मात्रामे पायी जायगी। फिर भी भावनाकी प्रगाढताकी कसौटी कडियोकी सख्या नही बल्कि प्रत्येक कड़ीकी दृढ़ता है।'† कुछ लेखकोका मत उद्धृत करनेके अनन्तर श्री दुर्रानी इस निष्कर्षपर पहुँचते है कि 'वस्तुतः राष्ट्रीयता केवल चेतनाका विषय है, मानस-की एक विशेष अवस्था मात्र है।'‡ उन्होने डाक्टर अम्बेडकरका मत भी दिया है जो उनके इस मतका समर्थक है--'यह श्रेणीगत चेतनाकी एक अनुभूति है जो एक ओर तो उन व्यक्तियोको जिनमे यह इतनी प्रगाढ होती है कि आर्थिक संघर्षो या समाजगत उच्चता-नीचताके कारण उत्पन्न होनेवाले भेदभावोको दबा-कर एक सूत्रमे बाधे रखती है और दूसरी ओर, उनको ऐसे लोगोसे पृथक् कर देती है जो उस श्रेणीके नही है।' § इसलिए श्री दुर्रानी यह अन्तिम परिणाम निकालते है कि (४) हिन्दुओ और मुसलमानोके बीच दलगत अथवा श्रेणीगत चेतनाका सर्वथा अभाव है। उनमे आपसमे न तो खान-पान हो सकता है और

---

* एफ० के० खा दुर्रानी: 'दि मीनिग ऑव पाकिस्तान', पृष्ठ ९
† ,, वही पृष्ठ ८
‡ ,, वही पृष्ठ ११
§ ,, वही पृष्ठ १२

न शादी-ब्याह। एकका भोजन दूसरेके लिए सर्वथा अग्राह्य होता है और मुसलमानसे छू जानेसे हिन्दू अपवित्र हो जाता है। उनमें ऐसा कोई भी सामाजिक सम्बन्ध नहीं है जो सामान्य रूपसे दलगत चेतनाका उत्पादक हेतु बन सके। ऐसी स्थितिमे दोनों दलोंका मिलकर एक सयुक्त और अखण्ड रूपमे परिणत होना मनोवैज्ञानिक दृष्टिसे वस्तुत. असम्भव ही है।"*

तुलनात्मक दृष्टिसे राष्ट्रीयताकी यह कल्पना आधुनिक है और हालमे ही, दो या अधिकसे अधिक तीन शताब्दी पूर्व, इसका इस रूपमे विकास हुआ है। राष्ट्रकी संज्ञा प्राप्त करनेवाले दलोमे लार्ड ब्राइस या प्रोफेसर सिजविक-द्वारा उल्लिखित तत्व अल्पाधिक मात्रामे पाये तो जाते है, पर प्रत्यक तत्वके सम्बन्धमें यह विचार करना कि वह वर्तमान है या नही और यदि है तो किस मात्रामें, और फिर इस परीक्षाके आधारपर यह निश्चय करना कि अमुक दल राष्ट्र कहला सकता है, ठीक नही कहा जा सकता। वस्तुतः राष्ट्रीयताका निश्चय तो परस्पर घात-प्रतिघात करनेवाले इन विभिन्न तत्वोंके समवाय या योगफल और उस ऐतिहासिक स्थितिके आधारपर ही किया जा सकता है जिसमे यह घात-प्रतिघातकी क्रिया सम्पन्न हुई। जैसा कि स्टालिनने निर्देश किया है, 'मूलत. राष्ट्र मनुष्योंका एक समुदाय, निश्चित समुदाय है' पर उनका 'एक जाति या एक श्रेणी' का होना आवश्यक नहीं। यह समुदाय ऐसा भी नही होता जो आकस्मिक कारणोसे या अत्यल्प कालके लिए बना हुआ हो, बल्कि स्थायी लोक-समुदाय हो।' सर्वसामान्य भाषा राष्ट्रकी एक परिचायक विशेषता है। इसी प्रकारकी दूसरी विशेषता सर्वसामान्य निवास-स्थल है। समवेत आर्थिक जीवन, आर्थिक सम्बन्ध, भी एक अन्य विशेषता है। इन विशेषताओंसे भिन्न राष्ट्रमें एक अपनी विशेष आध्यात्मिक प्रवृत्ति, अपनी विशेष मनोरचना—दूसरे शब्दोंमे, राष्ट्रीय चिन्ह होता है जो भिन्न संस्कृतिका स्पष्ट परिचायक होता है। स्टालिनके अनुसार 'राष्ट्र वह लोक-समुदाय है जो ऐतिहासिक दृष्टिसे विकसित और स्थायी

---

*एफ० के० खां दुर्रानी: 'दि मीनिंग ऑव पाकिस्तान', पृष्ठ १३

होनेके साथ सर्व-सामान्य भाषा, भूभाग, आर्थिक जीवन और सस्कृतिमे परिलक्षित होनेवाली विशेष मनोरचनासे युक्त हो।'*

'राज' और 'राष्ट्र' का अन्तर भी हमे स्पष्ट कर लेना चाहिये। ये दोनों सर्वदा सहव्यापी नही हुआ करते। एक ही राजमे कई राष्ट्रोके अस्तित्वके ज्वलन्त उदाहरण भूतकालमे भी मिले है और वर्तमान कालमे भी देख पड़ते है। कनाडा राजमे अंग्रेज और फरासीसी दो विभिन्न राष्ट्रीय दल है। दक्षिण अफ्रिकामें अग्रेजो और बोअरोंने भीषण रक्तपानके बाद आपसके समझौतेसे एक राजकी स्थापना की। सयुक्त राज अमेरिकामे विभिन्न राष्ट्रीयताके लोग एक राजके सदस्यके रूपमें आबाद हो गये है। रूसके सोवियत जनतन्त्रमें कई राष्ट्रीयताएँ मिली हुई है जिन्हे विधानद्वारा स्वशासन और पृथक् होनेका अधिकार प्राप्त है। स्वशासनाधिकार तो यहातक व्यापक है कि वे अपनी-अपनी सेना रख सकती है, विदेशी राजोसे सीधे सम्बन्ध स्थापित कर सकती है, उनके साथ समझौता कर सकती है और दूतादि भी रख सकती है। स्विट्जरलैण्डके अधिवासियोका उदाहरण तो अतिप्रसिद्ध है ही। राष्ट्रीयताकी दृष्टिसे उनका सम्बन्ध फरासीसी, जर्मन और इटालियन तीनो राष्ट्रोसे है जिनसे वे परिवेष्ठित है, फिर भी वे सबके सब एक ही राजमे है। सी० ए० मेकार्टनीने 'नेशनल स्टेट्स एण्ड नेशनल माइनारिटीज' नामक पुस्तकमे लिखा है कि 'यह कहना अधिक उपयुक्त होगा कि 'राष्ट्रीयता' शब्दसे इन दोनो भावोमेसे किसी एकका निर्देश होता है जो मूलतः और प्रकृतित. तो सर्वथा भिन्न है पर व्यवहारमे प्रायः एक दूसरेके लिए काम दे देते है।' यह खेदजनक वात है कि इग्लैण्डकी ऐतिहासिक प्रगति कुछ ऐसे क्रमसे हुई है कि उस देशमे दोनो एक दूसरेके पर्याय-से हो गये है, और भाषा अपने प्रयोक्ताओके फूहड यथार्थवादका प्रतिबिम्बन करती हुई दोनोका काम एक ही शब्दसे चलाया करती है, फिर भी राष्ट्रके प्रति आत्मीयताकी अनुभूतिकी द्योतक 'राष्ट्रीयता' राष्ट्रकी सदस्यताकी द्योतक

---

*'मार्क्सिजम ऐण्ड दि क्वेश्चन ऑव नेशनलिटीज', पृष्ठ ६

'राष्ट्रीयता' से मूलत. भिन्न है। इन दोनोके उत्पादक हेतु भी भिन्न-भिन्न है और विभिन्न वस्तुओकी ओर उनका नियोजित किया जाना सर्वथा सम्भव है।

पहली, जिसे हम सुविधाके विचारसे 'व्यक्तिगत राष्ट्रीयताका भाव' कह सकते है, व्यक्तिगत विशेषताओपर आश्रित है, जो प्रायः परम्परा-प्राप्त और साधारणतः वस्तुपरक होती है। व्यक्तिमे पायी जानेवाली ये विशेषताएँ उसके निवासस्थानसे, चाहे वहाके बहुसंख्यक निवासियोमे वे पायी जाती हों या नही, सर्वथा स्वतन्त्र होती है, वहांके राजनीतिक शासनसे भी, चाहे उसके अधिकारि-वर्गमे ये विद्यमान हो या न हो, इनका कोई सम्बन्ध नही होता। इन विशेष-ताओसे युक्त व्यक्तियोंका समुदाय ही राष्ट्रका रूप ग्रहण करता है।* जिन विशेषताओपर यह चेतना आधृत होती है उनमे परस्पर बडी भिन्नता होती है, पर मोटे रूपमे वे 'लघु त्रिगुट सन्धिया : जाति, भाषा और धर्म' की परिधिमे आ जाती है। हम फिर भी कहेगे कि वे राजनीतिक भावोसे सर्वथा शून्य होती है। आस्ट्रिया, चेकोस्लोवाकिया, ब्राजिल या होनोलुलूमे रहनेवाले जर्मनका प्रत्येक अश बरलिन-निवासीकी तरह ही जर्मन होता है।

बुनियाद और सच्चे प्रयोजनकी दृष्टिमे राज इससे (राष्ट्रसे) सर्वथा भिन्न है। राज वह साधन है जिसके द्वारा बहुसख्यक लोगोका कार्य-व्यापार संचालित और (साधारणतः) रक्षित होता है। जो लोग सामूहिक रूपसे राजका निर्माण करते है उनका समूह भी इंग्लैण्डमें उसी 'राष्ट्र' सज्ञासे निर्दिष्ट होता है जो उससे नितान्त भिन्न प्राकृतिक इकाईके लिए प्रयुक्त होता है, जिस-पर ऊपर विचार किया गया है। किसी कार्यको सर्वसामान्य मानने और इस प्रकार उसे राजके नियन्त्रणका विषय समझनेकी जो सीमा है उसमे भी विभिन्न समयो और देशोमे अन्तर हो जाया करता है। किसी-किसी परिस्थितिमे तो यह रक्षा-विषयसे अधिक नही बढ़ती, और किसीमे विशुद्ध निजी बातोको छोड़कर जीवनके अधिकाश पहलू इसके अन्तर्गत आ जाते है। ध्यान देनेकी

---

*सी०ए०मेकार्टनी : 'नेशनल स्टेट्स ऐण्ड नेशनल माइनारिटीज' (१९३४) पृष्ठ६

बात यह है कि उन सांस्कृतिक विशेषताओंपर जो व्यक्तिगत राष्ट्रीयताकी सूचक है, अधिकांश राजाओंने सबसे कम ध्यान दिया है और आज भी उनके सम्बन्धमें अधिकतर यही समझा जाता है कि वे राजके नियन्त्रणका विषय नही है।... दूसरी ओर, राजद्वारा सम्पन्न होनेवाले अधिकाश कार्योका व्यक्तिगत राष्ट्रीयतासे कोई सम्बन्ध ही नही होता। वास-भूमिकी रक्षा, सार्वजनिक व्यवस्थाकी रक्षा, अपराधोकी रोक और दण्ड-व्यवस्था, सड़को आदिका निर्माण, जनताकी सम्पत्तिकी रक्षा, समान रूपसे कर लगाना और वसूल करना, आदि कार्योंका सम्बन्ध राजके प्रत्येक निवासीसे है, फिर चाहे वह ईसाका अनुयायी हो या मुहम्मदका, उसकी मातृभाषा अंग्रेजी हो या वेल्श या यीडिश। इन राजनीतिक और सामाजिक कार्योमे, जो राजके सच्चे कर्तव्य है और जिनसे सबलोग समान रूपसे लाभान्वित होते है, प्रत्येक व्यक्तिको हाथ बटाना पड़ता है।*

प्रथम महायुद्ध समाप्त होनेके समयसे ही राष्ट्रीय राजोका प्रश्न व्यापक अध्ययनका विषय बन गया और इसपर बहुत-सा साहित्य भी प्रस्तुत हो गया है। १९३४ मे सी० ए० मेकार्टनीकी प्रामाणिक पुस्तकके प्रकाशनके बादसे, जिसका ऊपर मैने लम्बा उद्धरण दिया है, अध्ययनका सिलसिला जारी रहा है। इस सारे अध्ययनसे उसके ही निष्कर्षोकी पुष्टि हुई है जो सक्षेपमें इस प्रकार है—व्यक्तिगत राष्ट्रीयता और राजनीतिक राष्ट्रीयताकी भिन्नता स्पष्ट कर दी जानी चाहिये; यह आवश्यक नही कि राज और राष्ट्र सहव्यापी हों; राष्ट्रीय राजोकी स्थापनाका प्रयत्न असफल हुआ है और इससे नयी समस्याएं पैदा हो गयी है; राष्ट्रीय राजो और राष्ट्रीय अल्पसख्यकोके प्रति उनके बर्तावका अनुभव उत्साहवर्द्धक नही प्रतीत हुआ; राष्ट्रीय राजोसे अल्पसंख्यकोके सम्बन्धकी सन्धियोंके पालन करानेकी राष्ट्रसघद्वारा दी गयी गारटी अप्रभावकर और व्यर्थ सिद्ध हुई; अल्पसख्यकोकी समस्या राष्ट्रीय राजोकी स्थापनासे हल नही होगी क्योंकि सारे विजातीय लोगोको निकाल बाहर कर सिर्फ सजातीय लोगोका राज स्थापित करना

---

*सी.ए.मेकार्टनी : 'नेशनल स्टेट्स ऐण्ड नेशनल माइनारिटीज' (१९३४) पृ. ११-१२

सम्भव नही है; समस्याका समाधान बहुराष्ट्रीय राजसे होना सम्भव है जिसमे सभी राष्ट्रीय अल्पसख्यकोको अपनी व्यक्तिगत राष्ट्रीयताके विकासके निमित्त पूरी स्वतन्त्रता प्राप्त रहती है।

फ्रीडमानका मत है कि राष्ट्रीयतावाद और आधुनिक राज दो विभिन्न शक्तियां है जो न तो अभिन्न है, न समरूप है और न परस्पर-सम्बद्ध।* वह इस निष्कर्षपर पहुचा है कि इस सक्षिप्त आलोचनद्वारा यही प्रतिपादित करनेका प्रयत्न किया गया है कि राष्ट्रीय आत्मनिर्णयके आधारपर प्रतिष्ठित राजका आदर्श स्वय-विरुद्ध है, और जबतक राष्ट्रीय राज अन्तिम मानके रूपमे माना-जाता है तबतक समस्याका सन्तोषजनक समाधान होना असम्भव ही बना रहेगा। जान पड़ता है, इस समस्यापर गम्भीरतापूर्वक विचार करनेवाले सभी विद्वान् इस विषयपर एकमत है। इस समस्यापर गहरी छानबीनके पश्चात् मेकार्टनीने, सोवियत रूस और ग्रेट ब्रिटेनके अनुभवके आधारपर बहुराष्ट्रीय राजके ही पक्षमे अपना निर्णय दिया है। † उसने प्रोफेसर कारके इस मतपर कि 'सामान्य परम्परा और संस्कृतिके सूत्रमे अल्पाधिक सहजातीय और भाषा-भाषी दलके स्वतन्त्र राजनीतिक इकाईके रूपमे प्रतिष्ठित किये जाने या कायम रखे जानेका जो सिद्धान्त माना जाता था उसका अब त्याग कर देना चाहिये, ('फ्यूचर आव नेशन्स'—पृष्ठ४९)‡ और डी० एच० कोलके इस मतपर कि 'इस बीसवी शताब्दीमे राष्ट्रीयता राजका समुचित आधार नही मानी जा सकती' ('यूरोप, रशा ऐण्ड दि फ्यूचर'—पृष्ठ १४) अपनी स्वीकृति प्रदान की है। §

आगे वह इस परिणामपर पहुँचा है कि इस कला-कौशल और यान्त्रिक प्रगतिके जमानेमे राष्ट्रीय राजका, विशेषकर छोटे राजका, अस्तित्व असम्भव ही है।

---

*फ्रीडमान—'दि क्राइसिस आव दि नेशनल स्टेट' (१९४३) पृष्ठ, ९
† ,, ,, ,, ,, पृष्ठ ४०
‡ ,, ,, ,, ,, पृष्ठ १३३
§ ,, ,, ,, ,, पृष्ठ ४०

यदि वह राज अपनी सीमाओके भीतर जीवनकी आवश्यकताओंकी पूर्ति करनेमें समर्थ भी हो तो वह बाहरी आक्रमणका सफलतापूर्वक सामना नही कर सकेगा। आधुनिक रक्षाका क्षेत्र केवल इतना ही नही है, इसीके अन्तर्गत साधनोंकी व्यापकता और सुरक्षित सेना और सामान भी है जिनके कारण महाशक्तियो और छोटे राष्ट्रीय राजोके बीचकी विषमता बहुत अधिक बढ़ गयी है।* उसने अपने निकाले हुए निष्कर्षोंको सक्षेपमे इस प्रकार दिया है--'विश्लेषणसे यह पता चला कि आजकी राजनीतिक, आर्थिक और सामाजिक शक्तिया राष्ट्रीय राजकी ओरसे विरत करती है। . राष्ट्रवाद और राजका गठबन्धन होनेपर जब दोनों एक दूसरेसे आगे निकलनेका प्रयत्न करने लगते है तब सकटकी स्थिति उत्पन्न हो जाती है। राष्ट्रीय आत्मनिर्णय-जन्य विकट स्थितियोसे बचनेका एक मार्ग बहु-राष्ट्रीय राज है जिसमे एक सशक्त राजनीतिक सघ विभिन्न राष्ट्रीय दलोको सास्कृतिक अधिकारोके उपभोगका अधिकार देता है, पर राजनीतिक, सैनिक और आर्थिक अधिकारोके त्यागकी माग करता है।' †

श्रीकोबनकी 'स्टडी आन नेशनल सेल्फ डिटरमिनेशन' रायल इन्स्टिट्यूट ऑव इण्टरनेशनल अफेयर्सके तत्वावधानमे ऑक्सफर्ड यूनिवर्सिटी प्रेससे सन् १९४५ में प्रकाशित हुई है। वे भी मेकार्टनी और फ्रीडमानके ही निष्कर्षोपर पहुँचे हैं जिनका ऊपर उल्लेख किया गया है। उनकी पुस्तकमे लिये गये निम्नलिखित उद्धरणोसे यह बात और भी स्पष्ट हो जायगी--राजनीतिक इकाई या राजके रूपमे राष्ट्र एक उपयोगात्मक सस्था है जिसे राजनीतिक सूझने राजनीतिक--और साथ ही आर्थिक--उद्देश्योकी पूर्तिके लिए बना रखा है। राजनीति मानवके आत्म-हितका क्षेत्र है और इसकी सफलता उसी मात्रामे मानी जाती है जिस मात्रामे यह मानवके अच्छे जीवन-विधान और व्यवस्था, शान्ति और आर्थिक हितके निमित्त भौतिक साधनोकी व्यवस्था करनेमे समर्थ होती है।

---

* फ्रीडमान--दि क्राइसिस ऑव दि नेशनल स्टेट। पृष्ठ ९

† फ्रीडमान--दि 'क्राइसिस ऑव दि नेशनल स्टेट्', पृष्ठ ८३

इसके विपरीत, सास्कृतिक धारणाकी दृष्टिसे राष्ट्र स्वय एक अच्छी चीज, बुनियादी तथ्य और मानव-जीवनका अनिवार्य प्रथम स्वीकृत सत्य माना जाता है। इसका सम्बन्ध मानव-हृदयकी स्फूर्तियोमे है और उसका कार्यव्यापार कला और साहित्य, दर्शन और धर्मके क्षेत्रमे होता है। . . दोनो प्रकारकी प्रगतियों, जो दुर्भाग्यसे एक ही नाम 'राष्ट्र'के द्वारा व्यक्त की जाती है, के लक्ष्योकी भिन्नता मौलिक है। यह बात भलीभाति स्पष्ट की जा सकती है कि यह पृथकीकरण सैद्धान्तिक मात्र नही है।* उन्होने कनाडाके फरासीसियो और अग्रेजोका जो अपनी व्यक्तिगत राष्ट्रीयताका परित्याग न कर सामान्य राजनीतिक राष्ट्रीयता स्वीकार किये हुए है, और स्पेनिश अमेरिकाके विभिन्न राजोका उदाहरण दिया है जिनकी सास्कृतिक पृष्ठभूमि तो एक है पर कई राजनीतिक राजोमे विभक्त है। 'ऐसे बहुतसे उदाहरण दिये जा सकते है जिनमे सास्कृतिक और राजनीतिक राष्ट्रीयताके समरूप न हो सकनेकी असफलता स्पष्ट रूपसे देखी जा सकती है और वर्तमानकालमे जहा दोनोको एक ही साचेमे जबर्दस्ती ढालनेकी कोशिश की गयी है उसका परित्याग साधारणतः आपज्जनक ही हुआ है।'†

आगे चलकर उन्होने यह भी दिखलाया है कि राजत्व-सूचक राष्ट्रीयताका मान उतना ही परिवर्तनशील है जितना एक कालसे दूसरे कालमे, एक देशसे दूसरे देशमे, यहातक कि एक व्यक्तिसे दूसरे व्यक्तिमे राष्ट्रीयताकी भिन्नता पायी जाती है। इसमे राजके निवासियोके एक जातीय होनेका अर्थ भी सलग्न है जो कभी सत्य नही हो सकता क्योकि जातियोके हिसाबसे ससारका विभाजन सम्भव नही है। उनका अन्तिम निष्कर्ष है—'जिस पुरानी दुनियामे सास्कृतिक राष्ट्रो और राजनीतिक राजोकी पहलेसे चली आनेवाली आपसकी ग्रन्थियोका सुलझाव नही हो पाया है उसे अब इस विश्वासका पूर्णरूपसे त्याग कर देना चाहिये कि राष्ट्रीय राज ही दृढ़ राजनीतिक समुदायका एकमात्र आदर्श है। जैसा कि

---

* अल्फ्रेड कोबन : 'नेशनल सेल्फ डिटरमिनेशन', पृष्ठ ६०

† " " " पृष्ठ ६०

एक्टनने वर्षों पूर्व कहा था,--राजनीतिक पद्धतिमे बहुराष्ट्रीय राजको पुनः स्थान देना चाहिये जहासे इसे कभी हटाना ही नही चाहिये था। . . . हालके तथा गत शताब्दीके इतिहाससे राजनीतिक राज और राष्ट्रमें एकरूपता लानेके सम्बन्धमे इसके अलावा और कोई शिक्षा नही मिलती। हमे लाचार होकर इसी परिणामपर पहुँचना पडा कि अधिकाश परिस्थितियोमे दोनोको सहव्यापी बनाना सम्भव नही है। सास्कृतिक दृष्टिसे सयुक्त, राष्ट्रीय राजको आदर्श राजनीतिक सस्था बनानेका प्रयत्न अव्यावहारिक सिद्ध हो चुका है। सिद्धान्तकी दृष्टिसे भी यह कभी मान्य नही हुआ।*

राष्ट्र और राज--इन दो विभिन्न सत्ताओमे जो परस्पर गड़बडी पैदा हो गयी है उसका कारण यह है कि राष्ट्रीय आत्मनिर्णय पूर्ण-सिद्धान्तके रूपमे स्वीकार कर लिया गया है जिसके अनुसार प्रत्येक सास्कृतिक दल अपने लिए पृथक् स्वतन्त्र राजका दावा करनेका अधिकारी है, पर इस बातसे इनकार नही किया जा सकता कि इस प्रकारका कोई पूर्ण-सिद्धान्त हो ही नही सकता, और राष्ट्रीय आत्मनिर्णय भी उसी प्रकार सीमित है जिस प्रकार भिन्न-भिन्न विचारोके कारण समाजमे व्यक्तिकी स्वतन्त्रता सीमित रहती है।

कोबनका प्रश्न है--'क्या ऐसे भौगोलिक, ऐतिहासिक, आर्थिक और राजनीतिक कारण नही है जो संसारकी बहुत-सी छोटी राष्ट्रीयताओके लिए राष्ट्रीय आत्मनिर्णयको प्रभुराजके रूपमे माननेका सिद्धान्त अमान्य करते है? यदि किसी राष्ट्रके बहुसख्यक सदस्य भी राजनीतिक स्वतन्त्रताके इच्छुक हो तो परिस्थितियां इसे रोक दे सकती है और सिर्फ इच्छा, चाहे वह कितने ही आदमियोकी क्यो न हो, उन्हे बदलनेमे समर्थ नही हो सकती। बर्कके शब्दोमे, अगर हम बच्चोकी तरह चन्द्रमाको पानेके लिए शोर मचाये तो बच्चोकी तरह ही हमे चिल्लाते रह जाना पड़ेगा।'† मै इतना और कहूँगा कि ये सभी विचार

०अल्फ्रेड कोबन--'नेशनल सेल्फ डिटरमिनेशन', पृष्ठ ६२३

१अल्फ्रेड कोबन--'नेशनल सेल्फ डिटरमिनेशन', पृष्ठ ७४

भारतके विभाजनके विरुद्ध है, विशेषकर इस कारण कि विभाजनके लिए ऐसी कोई सीमा निर्धारित करना असम्भव है जिसमे पृथक् किये गये मुसलमानी राजोमे कमसे कम उतने ही अल्पसख्यक न बच रहते हो जितने सारे भारतमे मुसलमान है। भारतकी आर्थिक और सैनिक परिस्थितिया इसके एक बड़े राजके रूपमे ही बने रहनेकी आज्ञा देती है और छोटी-छोटी स्वतन्त्र राष्ट्रीय इकाइयोमे विभक्त होनेसे मना करती है। पृथक् होना विध्वसात्मक कार्य है। आरम्भमे ही इसका सहारा लेना उचित नही कहा जा सकता, इसका सहारा तो अन्तिम स्थितिमे और कोई उपाय न रह जानेपर ही लिया जा सकता है। यदि यह मान भी लिया जाय कि भारतमे वही स्थिति प्रस्तुत हो गयी है--और मुसलिम लीगके सिवा और कोई दल इस प्रकारकी स्थितिके निकट पहुचनेकी बात भी नही करता--तो भी किसी-किसी विशेष भूभागके पृथक् हो जानेसे समस्याका समाधान नही हो जाता; क्योकि फिर भी हिन्दू भारतमे जो मुसलमान बच रहेगे उनकी सख्या २ या ३ सौ लाखसे कम न होगी और जैसा कि अन्यत्र दिखलाया गया है, गैर-मुसलमान-प्रधान क्षेत्रोके सम्मिलित किये जानेपर ४७९ लाख और पृथक् रखे जानेपर १९६ लाख गैर-मुसलमान मुसलमानी राजोमे पड़ जायेंगे। इसलिए हमे कोई ऐसा हल ढूढ निकालना चाहिये--जो आधुनिक विचार-धाराके अनुकूल हो, जो शताब्दियोके इतिहासको खण्डित न करता हो, जो भूगोलके प्रतिकूल न पड़ता हो, जो ससारकी वर्तमान स्थितिमे देशकी रक्षा अगर असम्भव नही तो अत्यधिक कठिन न बना देता हो, जो पृथक् हुए राजोपर असह्य भार न लाद देता हो, जो परिणाममे नये राजोके निवासियोकी दशा अनिश्चित कालके लिए विपन्न और पतित न बना देता हो, जो मुसलमानी और हिन्दू राजोके सामने एक दूसरेको उदरस्थ कर लेनेकी समस्या न खडी करता हो, जो आवेशमे आकर न निकाला गया हो और जो स्थायी सघर्षके लिए क्षेत्र न तैयार करता हो।

इस भाति जहां हम देखते है कि राजकी स्थापनामे व्यक्तिगत राष्ट्रीयताका महत्त्वपूर्ण स्थान है वहा यह भी है कि सदैव केवल यही उसका एकमात्र अथवा प्रधान उपादान नही रहता। साथ ही जहा यह बात स्वीकार की जा सकती है

कि किसी राष्ट्रकी स्थापनाके लिए शुद्ध राजनीतिक ग्रन्थिया ही पर्याप्त नही है, वहा इस बातको भी इनकार नही किया जा सकता कि राष्ट्रोकी स्थापनामे उनका महत्त्वपूर्ण हाथ रहता है। यदि किसी दल-विशेषपर बाहरी दबाव पड़े तो जूलियन हक्सलेके शब्दोमे उक्त 'बाहरी दबाव ही किसी राष्ट्रके क्रमिक विकासका सम्भवन: सबसे बड़ा उपादान ठहरेगा।' भारतमे यही हुआ है पर हम इसकी चर्चा बादमे करेगे।

———

३

मुसलमान—एक पृथक् राष्ट्र

विभाजनका औचित्य सिद्ध करनेके लिए इतना ही दिखा देना पर्याप्त नही है कि हिन्दू और मुसलमान एक राष्ट्रके अग नही है। यह दिखाना भी आवश्यक है कि मुसलमान एक पृथक् राष्ट्र है और उनका पृथक् राज रहनेकी आवश्यकता है। श्री दुर्रानी अपने भाव प्रकट करनेमे चूकते नही। कहते है कि 'प्राचीन काल-के हिन्दू एक राष्ट्र नही थे। वे एक जनसमूह मात्र थे।'

भारतके मुसलमानोकी स्थिति कुछ विशेष अच्छी न थी। वस्तुत. इसलाम अपने जन्मदाताके समयमे ही एक राजके रूपमे गठित हो गया। उसके राज-नीतिक आदर्शोकी भलीभांति व्याख्या हो चुकी है। मेरे मनसे इसलाम स्वय ही एक राजशास्त्र है। . परन्तु मेरे इस कथनका अर्थ यह नही कि इसलामी राज ऐसा राज है जिसमे अल्लाहको सर्वोच्च अधिकारी मानकर ईश्वरीय आदेशो-का ही पालन कराया जाता है। . .इसलामी राज लोकतन्त्र शासन-व्यवस्था है जिसके सुचारु रूपसे सचालनके लिए प्रत्येक मुसलमान जिम्मेदार है। .. उमर महानका कथन है कि 'ला इसलाम इला ब जमाअत' अर्थात् 'संघटित समाजके बिना इसलामका कोई अस्तित्व ही नही है।' दुर्भाग्यकी बात है कि इसलामी राज अधिक दिनोतक न चल सका। उम्मायदो और अब्बासिदोने उसे नष्ट कर डाला, उसे 'मुल्क' अर्थात् स्वेच्छाचारी, एकतन्त्र, वशानुक्रमी राज बना डाला।....इन्ही दो स्वेच्छाचारी शासनोके समय मुसलिम समाजके राज-नीतिक जीवनको चौपट करनेके लिए और दो उपादान आकर उसमे जुट गये। एक वह धर्मशास्त्र था जिसमे ईश्वर और ईश्वरके प्रति मनुष्यके कर्त्तव्यकी चर्चा रहती है और दूसरा था सूफीवाद।....ये दोनो वस्तुएं मिलकर मुसलिम आत्मा-

को पथभ्रष्ट करने लगी और इन्होने इसलामको नैतिक और राजनीतिक दर्शनसे पलटकर एक प्रकारसे 'धर्म'मे परिवर्तित कर दिया। उसे ऐसी वस्तु बना दिया जिसे राजनीतिक नारे लगानेवाले 'व्यक्ति और ईश्वरके बीच व्यक्तिगत सम्बन्ध' कहकर पुकारते है। मुसलमानोने जिस समय भारतपर विजय प्राप्त की उस समय सारे ससारके मुसलमानोका यह स्वीकृत मत हो चुका था कि धर्म और राजनीति पृथक्-पृथक् वस्तुए है। जिन लोगोने भारतपर विजय प्राप्त की वे मुसलिम राजकी राष्ट्रीय सेनाके सदस्य न थे प्रत्युत एक साम्राज्यवादी अधिनायकके भाडेके टट्टू थे। उन्होने भारतमे जिस राजकी स्थापना की वह राष्ट्रीय मुसलिम राज न था अपितु एक स्वेच्छाचारी और उसके पिछलगुओका राज था। अपने ही हितोकी पूर्तिके लिए वे उसकी रक्षा करते थे। भारतका मुसलमानी साम्राज्य केवल इस अर्थमे मुसलिम राज था कि उसके सिहासनपर जो लोग विराजमान थे वे अपने आपको मुसलमान बताया करते थे। मुसलमानोने भारतपर अपने पूरे शासनकालमे कभी भी राष्ट्रत्वकी भावनाका विकास नही किया। अत. हमारे यहा हिन्दू और मुसलमान---दो जातिया बनी रही। दोनो एक ही साम्राज्यवादी सत्ताकी गुलाम थी और दोनो राष्ट्रीय भावनाओ अथवा राष्ट्रीय महत्त्वाकाक्षाओसे शून्य थी।

हिन्दुओ और मुसलमानोके धार्मिक विश्वासो और रीतिरिवाजोके पार्थक्य और भिन्नतापर बहुत कुछ लिखा जा चुका है। . .फिर भी, इन सब बातोके बावजूद, इन दोनोके धार्मिक विश्वासोमे कोई ऐसी भावना है जिसके कारण ये दोनो शताब्दियोतक आपसमे मिलकर प्रेमपूर्वक रहते आये और यदि ब्रिटिश राजकी अनुभूतियो और कष्टोको उनके मस्तिष्कसे निकाल दिया जाय और पुरानी ही धार्मिक भावना उनमे पुन. जागृत कर दी जाय तो वे पुनः अच्छे पडोसीके रूपमे एक ही राजकी छत्रछायामे बडे आनन्दपूर्वक रह सकते है। यह भावना सहनशीलताकी भावना है जो कि दोनो ही धर्मोमे समान रूपसे व्याप्त है।... यदि दोनो सम्प्रदायोके बीच यह सम्बन्ध लगातार बना रहता, उसमें कोई बाधा न पडती तो यह निश्चित है कि समय आनेपर भारत-भूमिपर एक ऐसे राष्ट्रका

जन्म हो गया होता जिसका मस्तिष्क और जिसकी आत्मा एक होती। क्या यह कभी सम्भव है कि वे दिन पुनः लौटे ?*

अतः शताब्दियोंके निकट सम्पर्क और पारस्परिक सहानुभूतिपूर्ण बर्तावके बावजूद हिन्दू और मुसलमान पृथक् ही बने रहे। दोनों धाराएं मिलकर एक न हो सकीं। दोनोंमें इतना अधिक पार्थक्य था कि यदि कभी उनमें उत्कट रूपसे वह भावना उत्पन्न हुई होती जिसे राजनीतिक विचारक 'राष्ट्रीय चेतना' कहकर पुकारते हैं तो उसका उनपर उलटा प्रभाव पड़ता, वे दो पृथक् राष्ट्रोंमें परिणत हुए बिना न रहते। कारण, पृथक् राष्ट्रकी भावनाकी उग्र-रूपसे जागृति ही तो राष्ट्रीयता अथवा राष्ट्रत्व है। इस समय वही तो हिन्दुओं और मुसलमानोंमें उत्पन्न हो गयी है।†

'दोनों स्वयं-जागृत राष्ट्र बन गये हैं और इस नयी जागृतिके अनु-रूप जबतक दोनों अपने पारस्परिक सम्बन्धोंका पुनः मेल नहीं बैठाते तबतक काम न चलेगा।'‡

श्री दुर्रानी आगे इस बातकी विवेचना करते हैं कि ऐसा किस प्रकार सम्भव हो सका। फिर आप यह निष्कर्ष निकालते हैं कि 'संक्षेपमें यदि हम कहना चाहें तो यही कहेंगे कि यह ब्रिटेनकी भेदभावपूर्ण और एक सम्प्रदायकी बलि चढ़ाकर दूसरे सम्प्रदायका पक्षपात करनेकी नीतिका प्रत्यक्ष परिणाम है।

'हिन्दुओं और मुसलमानोंकी राष्ट्रीयता धीरे धीरे पनपी है और निश्चित रूपसे यह कहना कठिन है कि किस दिन वह पूर्ण रूपसे विकसित हुई। पहले वह आर्थिक प्रतिद्वन्द्विताके रूपमें खड़ी हुई, विशेषतः सरकारी नौकरियोंके सम्बन्धमें; बादमें राजनीतिक प्रतिद्वन्द्विताके रूपमें परिवर्तित हुई और अन्तमें उसने राष्ट्रीय शत्रुताका रूप ग्रहण किया।'

---

* एफ० के० खां दुर्रानी : 'मीनिंग ऑव पाकिस्तान' पृष्ठ ३४

† ,, ,, पृष्ठ ४७

‡ ,, ,, पृष्ठ ४८

आपके कथनानुसार ब्रिटिश शासनमे मुसलमानोंकी अवनति और सर्वनाशमे जिन अनेक बातोंने मुख्य रूपसे सहायता की उनमे कुछ इस प्रकार है--(१) बगालके उद्योग-व्यवसायका सर्वनाश; (२) बगालका इस्तमरारी बन्दोबस्त, जिसके अनुसार छोटे हिन्दू रेवेन्यू कलक्टर जमीदार बन गये और बडे मुसलिम रेवेन्यू अफसरोकी उपेक्षा कर उनका स्थान यूरोपियन अफसरोंको दे दिया गया; (३) लगान रहित माफियोका उठा लिया जाना,जिनपर कि मुसलिम शिक्षापद्धति निर्भर करती थी, इस प्रकार उसे नष्ट कर देना; (४) शिक्षापद्धतिका नाश होनेसे यह स्वाभाविक था कि सरकारी नौकरियोमे मुसलमानोको स्थान न मिलता और उन स्थानोपर हिन्दुओका ही प्राधान्य रहता। यह प्राधान्य ओछी चाल-बाजियोद्वारा अब भी कायम रखा जा रहा है। नौकरियोमे यह साम्प्रदायिक वैषम्य भारतकी राजनीतिका मुख्य अग है और साम्प्रदायिक कटुता बढानेमे इसका बहुत बडा हाथ रहा है।

इसके साथ ही हिन्दुओमे आक्रमणकी भावनाका विकास होता रहा है तथा दोनो सम्प्रदायोमें पारस्परिक अविश्वास और राजनीतिक प्रतिद्वन्द्विता चलती रही है। बगाल और उत्तर भारतमे यह भावना विशेष रूपसे दिखायी पडती है; जिसके उदाहरण है--(१) 'वन्देमातरम्' गीतके भीतर छिपी भावना; (२) सन् १८५७ के गदरके तुरत बाद उसके विफल होनेपर यद्यपि उसे वस्तुत हिन्दुओ-ने ही आरम्भ किया था और बादमे मुसलमान भी उसमे शामिल हो गये थे, हिन्दुओने अपने साथी मुसलमानोके साथ विश्वासघात किया और वे सरकारके भेदिया बन गये। इसका परिणाम यह हुआ कि सरकारका सारा क्रोध मुसलमानो पर पडा और फलतः हजारो मुसलमान तलवारके घाट उतार दिये गये, उनकी सम्पत्ति जब्त कर ली गयी, उनके अनाथ बच्चे ईसाई पादरियोको सौप दिये गये; (३) काशीके प्रमुख हिन्दुओद्वारा १८६७ मे आरम्भ किया हुआ यह आन्दोलन कि उर्दूके स्थानपर, जो कि उस समय आम भाषा बन चुकी थी, ब्रज-भाषा चलायी जाय और अरबी लिपिके स्थानपर देवनागरी लिपि चालू की जाय, जिसके फलस्वरूप हिन्दू तीन-चौथाई शताब्दीसे उर्दू भुलाने और उसके

स्थानपर हिन्दी सीखनेके लिए प्रयत्नशील दीख पड़ने है। अब गान्धीजीने, जो ऐसे मामलोमे दूसरोकी अपेक्षा अधिक ईमानदारीसे हिन्दू-भावना व्यक्त करते है, जरा भी लज्जित हुए बिना कह दिया है कि हिन्दुस्तानीसे ऐसे सभी शब्द निकाल देने चाहिये जो हिन्दुओको इस बातका स्मरण दिलाते है कि इस देशपर कभी मुसलमानोका राज था,* (४) हिन्दुओकी अपने पूर्व इतिहासमे दिलचस्पी, जिससे 'वह परम महत्त्वपूर्ण उपादान मिला जिसका अभाव अभी-तक इस जातिको एक राष्ट्र बनानेसे रोके हुए था।'† यद्यपि यह दिलचस्पी ब्रिटिश शिक्षापद्धतिके कारण उत्पन्न हुई जिसने ब्रिटिश नागरिकों अथवा ईसाई मिशनरियोद्वारा लिखी इतिहासकी ऐसी पाठ्य पुस्तके पाठ्यक्रममें रखी 'जिनका उद्देश्य ही विषवमन करना था तथा हिन्दुओमे मुसलमानोके प्रति घृणा और शत्रुता उत्पन्न करना था।'‡ (५) चोटीके कांग्रेस नेता तथा शिवाजी की पूजाके नये प्रवर्तक कट्टर मराठा बालगगाधर तिलकद्वारा चलाया गया गोहत्या-विरोधी आन्दोलन।

ये ही सब बाते थी जिनको दृष्टिमे रखकर सर सैयद अहमद खाने अपनी नीति निर्धारित की और वे अपने सहधर्मियोंको कांग्रेससे अलग रहनेकी सलाह देनेके लिए विवश हुए। उनपर बगालके हिन्दू पत्रोके रुखका भी कम प्रभाव नही पड़ा था। 'ये पत्र मुसलमानोको विद्रोही बता रहे थे और इसीलिए इस बातपर जोर दे रहे थे कि मुसलमानोको सरकारी नौकरिया नही मिलनी चाहिये।'§

इस भाति '१८५७ के बाद कभी भी हिन्दुओं और मुसलमानोंने यह बात महसूस नही की कि हम दोनों एक है, और 'सर सैयद अहमदने सरकार और जनता दोनोको ही यह चेतावनी दी कि प्रतिनिधि सस्थाए केवल ऐसे देशोके लिए उपयुक्त हो सकती है जहां एकजातीय आबादी हो, पर भारत-जैसे देशमें,

---

* एफ० के० खां दुर्रानी : मीनिग ऑव पाकिस्तान' पृष्ठ ६७,
† पृष्ठ ६८ ‡ पृष्ठ ७४, § पृष्ठ ७०

जहां बहुजातीय लोग निवास करते है, सारे सामाजिक और राजनीतिक खतरे उठाये बिना पार्लमेण्टरी सस्थाएं स्थापित नही हो सकती।'*

परन्तु १९०६ में जब यह बात प्रकाशित हुई कि प्रान्तीय कौसिले सघटित होगी तो एक मुसलिम प्रतिनिधि-मण्डलने मुसलमानोके लिए पृथक् प्रतिनिधित्व-की माग की और वह माग स्वीकृत हो गयी। पृथक् निर्वाचनकी पद्धति न रहनेपर भी निश्चय ही संयुक्त एकजातीय राष्ट्र न बनता, उसका परिणाम केवल यह होता कि मुसलमानोपर हिन्दुओंका प्रभुत्व हो जाता।†

यद्यपि राजनीतिक जागृतिके पूर्व हिन्दुओके धार्मिक पुनर्जागरणका कार्य आरम्भ हो गया था तथापि १९०६–७ तक हिन्दुओमें साम्प्रदायिकतासे राष्ट्रीयताको अधिक महत्व देनेका गान्धीवादी आदर्श प्रविष्ट नही हुआ था और उस समय प्रत्येक व्यक्ति या तो शुद्ध अर्थमे हिन्दू था अथवा मुसलमान। 'साम्प्रदायिकता' शब्द उस समय घृणासूचक शब्द नही बना था। उस समय हिन्दू और मुसलमान अपने-अपने प्रतिद्वन्द्वीके प्रति सौजन्य, सहनशीलता और सहानुभूतिपूर्ण विवेकका व्यवहार करते थे। यह बात हिन्दूसभामें थी, जिसकी सबसे पहले १९०७ मे पजाबमे नीव पडी थी और बादमे वह अखिल भारतीय सस्थाके रूपमे परिणत हो गयी थी और अखिल भारतीय मुसलिम लीगमे भी, जिसकी नीव दिसम्बर १९०६ मे पडी थी।

ब्रिटिश अत्याचारोके भयसे प्रभावित होनेके कारण सर सैयद अहमद खाके नेतृत्वमे मुसलमानोकी नीति राजभक्ति और चाटुकारितासे पूर्ण थी। यह नीति अलीगढ़वालोसे विरासतमे मिली थी, यद्यपि जिन कारणोसे इसका जन्म हुआ था वे कारण मिट चुके थे।३ मुसलिम राजभक्तिको निम्नलिखित घटनाओसे गहरा धक्का लगा था—(१) १९११ मे ट्रिपोलीपर इटलीका आक्रमण और उसमे ब्रिटिश सरकारका शामिल होना, (२) दिसम्बर १९११मे बंगालके विभाजनका

---

* एफ० के० खा दुर्रानी : 'मीनिंग ऑव पाकिस्तान', पृष्ठ ७८

† पृष्ठ ७९, ३ पृष्ठ ८३

रद्द किया जाना; (३) एक सड़क-निर्माणकी योजनाका विरोध करनेपर कानपुरमे मुसलमानोकी निर्दयतापूर्ण हत्या। इन सब बातोसे प्रभावित होनेके कारण मुसलिम लीगमे मौलिक परिवर्तन हुआ जिससे उसने उत्तरदायी स्वशासनकी प्राप्ति अपना राजनीतिक उद्देश्य घोषित किया और अपने लक्ष्यको कांग्रेसके लक्ष्यके समान बनाया। दोनो सस्थाओके वार्षिक अधिवेशन एक ही स्थानपर होने लगे। १९१६मे उन्होंने प्रसिद्ध 'लखनऊ समझौता' किया जो १९१९के भारत शासन विधानमे शामिल कर लिया गया। उक्त समझौतेमे मुसलमानोके प्रति पूर्ण न्याय तो नही हुआ है पर उससे एक अत्यन्त महत्वकी यह बात अवश्य निकलती है कि काग्रेसने यह बात स्वीकार कर ली है कि हिन्दू और मुसलमान दो पृथक् राष्ट्र है और काग्रेस जहा हिन्दुओकी प्रतिनिधि सस्था है वहा मुसलिम लीग मुसलमानोकी।* काग्रेसने अब यह स्थिति अस्वीकार कर दी है और वह सारे भारतके प्रतिनिधित्वका दावा करने लगी है।.

प्रथम महासमर अतिशयोक्तिपूर्ण राष्ट्रीयताकी भावनाकी उपज था। उसने उन लोगोंमें भी यह विष भर दिया है जो अभीतक इससे मुक्त थे। उसने भारतवासियोके हृदयमे विदेशी शासनसे मुक्त होनेकी तीव्र लालसा उत्पन्न कर दी, उनमे स्वतन्त्रताकी उत्कट भावना जागृत कर दी जिसके कारण १९१९से लेकर १९२२तककी हिन्दू-मुसलिम-एकता सम्भव हो सकी।'† किन्तु 'गाधीजी तथा उनके सहयोगियोने अपने आपको प्रादेशिक राष्ट्रीयताके आकर्षक प्रवाहमे बह जाने दिया।' 'काग्रेसके कर्णधारोने यह घोषणा कर दी कि राजनीतिमे धर्मका प्रवेश नही होना चाहिये' और 'काग्रेसने भूगोल, राजनीति और अर्थशास्त्रके आधारपर सयुक्त भारतीय राष्ट्र बनानेका प्रयत्न आरम्भ किया। वस्तुत: उसने यह अनुमान कर लिया कि राष्ट्र तो पहलेसे ही बना बनाया है। सहज ही यह जाना जा सकता था कि यह अनुमान गलत है। उसके आधार गलत थे और काग्रेसने राष्ट्रीयताकी

---

१ एफ० के० खा दुर्रानी : 'मीनिंग ऑव पाकिस्तान', पृष्ठ ८४

२ „ „ „ पृष्ठ ९०

जो इमारत खड़ी करनेकी कल्पना की थी वह तीन सालके भीतर ही गिरकर चकनाचूर हो गयी। ..'महात्मा' जेल चले गये और हिन्दू-मुसलिम एकताका प्रदर्शन समाप्त हो गया। स्वामी श्रद्धानन्द और पण्डित मदनमोहन मालवीयने जेलसे निकलकर मुसलमानोके विरुद्ध खुला और निर्लज्जतापूर्ण प्रचार आरम्भ कर दिया। १९२३ मे अखिल भारतीय हिन्दू महासभाका पुनस्संघटन हुआ।... १९०७ और १९१५ मे अन्य सम्प्रदायोंके हितोको हानि पहुँचाये बिना हिन्दू-हितोंकी रक्षाकी घोषित नीतिका त्याग कर दिया गया और एक नया आदर्शवाद खड़ा किया गया कि भारत हिन्दुओका पवित्र देश है और हिन्दुओको एक राष्ट्र होनेका स्वत. अधिकार है जिसमे मुसलमानो, पारसियों और ईसाइयोका कोई स्थान नही तथा हिन्दुओका राजनीतिक लक्ष्य है—हिन्दू राज।* १९२५ मे स्वर्गीय लाला हरदयालका 'मेरे विचार' शीर्षक एक लेख जिसे उन्होने अपना राजनीतिक घोषणापत्र बताया था, भारत पहुचा और सारे भारतके हिन्दूपत्रोने उसे प्रकाशित किया। श्री इन्दुप्रकाशने 'व्हेयर वी डिफर' नामक अपनी पुस्तकमे तथा डाक्टर अम्बेडकरने 'थाट्स आन पाकिस्तान' नामक अपनी पुस्तकमे उस लेखके जो उद्धरण दिये है उन्हीके कुछ अश श्री दुर्रानीने अपनी पुस्तकमे उद्धृत किये है। मै यहा मूल लेखकके शब्दोका साराश दे रहा हूँ। उसमे कहा गया है कि राज हिन्दुओका हो। मुसलमान उसमे रह सकते है किन्तु राज न तो मुसलिम राज ही हो सकता है और न हिन्दू-मुसलिम-संयुक्त राज। स्वराज्यकी प्रातिके लिए हमे (हिन्दुओको) न तो मुसलमानोकी सहायताकी ही आवश्यकता है और न हम सयुक्त शासनकी स्थापनाके लिए ही इच्छुक है। हिन्दुस्तान और पंजाबके हिन्दुओंका भविष्य इन चार स्तम्भोपर निर्भर करता है(१) हिन्दू संघटन, (२) हिन्दू राज, (३) मुसलमानोंकी शुद्धि और (४) अफगानिस्तान तथा सीमाप्रान्तकी विजय और शुद्धि। १९२३ से अबतक हिन्दूमहासभाकी नीति इसी आदर्शसे प्रभावित रही है और इसके समर्थनमे श्रीदुर्रानी श्रीसावरकरके

---

*वही, पृष्ठ ९१—९३।

हालके वक्तव्योको उद्धृत करते है जिनमें उन्होने कहा है कि 'भारत आज एक और एक जातीय राष्ट्र नही माना जा सकता, इसके विपरीत यहा मुख्यतः दो राष्ट्र है—एक हिन्दू और एक मुसलमान।'* आगे श्रीदुर्रानी कहते है कि 'श्रीसावरकरका निष्कर्ष इतिहास और राजनीतिक सिद्धान्तोपर पूर्णतः आधृत है और उसका खण्डन करना सम्भव नही। विवादका प्रश्न केवल तब आता है जब वे अपने निष्कर्षसे ही असगत बाते कह उठते है। राजनीतिक विचारक यही कहेगे कि जब दो सम्प्रदायोमें पृथक् राष्ट्र होनेकी भावना जाग्रत हो गयी है जैसा कि आजकल हमारे देशमे हिन्दुओं और मुसलमानोमे है तो भीतरी तनातनी, गृहयुद्ध तथा इसी प्रकारकी अन्य बातें बचानेके लिए यही उत्तम होगा कि दोनों अलग हो जायं और अपनी-अपनी पृथक् राष्ट्रीय सरकारे स्थापित कर ले। अखिल भारतीय मुसलिमलीगका भी यही कहना है। श्रीसावरकर राष्ट्रत्वके प्रादेशिक आधारका तीव्र तर्कोसे खण्डन करते हुए भी पुनः भौगोलिक आधारपर लौट जाते हैं और भारतको हिन्दुओंका पवित्र देश बताते हुए यह दावा करने लगते है कि सारे भारतपर हिन्दू राष्ट्रकी बपौती है। अतः आप सारे भारतके लिए ऐसी एक सरकारकी कल्पना करते है जिसमे हिन्दुओका प्राधान्य रहेगा और मुसलमानोको निम्न पद मिल सकेगे अर्थात् हिन्दू शासक रहेगे और मुसलमान शासित।'†

भारतीय राष्ट्रीय काग्रेसकी स्थिति भी कुछ अच्छी नही। 'हिन्दुओके पुनर्जागण आन्दोलनको चरमसीमापर पहुंचा देनेके लिए ही कांग्रेसका जन्म हुआ था। वस्तुतः इससे हिन्दू राष्ट्रका उदय हुआ। यह ठीक है कि काग्रेसके आरम्भिक इतिहासमें कुछ थोड़ेसे मुसलमान भी उसके साथ सम्बद्ध थे किन्तु थोड़ेसे समयको छोड़कर, वह सदा ही हिन्दू सस्था बनी रही और आज भी

---

* १९३७ में हिन्दू महासभाके अहमदाबादवाले अधिवेशनमें श्रीदामोदर सावरकरका भाषण, श्री एफ० के खा दुर्रानी द्वारा उद्धृत: 'दी मीनिग ऑव पाकिस्तान'—पृष्ठ १०२। † वही, पृष्ठ, १०५

उसकी स्थिति वही है।'* १९१६ में कांग्रेसने लखनऊ समझौता करके यह बात स्पष्टतः स्वीकार कर ली। वह थोड़ा-सा समय जब उसका रूप हिन्दू संस्था जैसा नही रहा; गाधीजी और अलीबन्धुके नेतृत्वमें असहयोग आन्दोलनका समय था। किन्तु उक्त आन्दोलन बुरी भाति हुआ और उसमे मुसलमानोंको गहरी क्षति उठानी पड़ी। उस समय भी हिन्दू-मुसलिम ऐक्यके भवनमें यत्रतत्र सन्धिया दीख पडती थी। 'गांधीजी खूब अच्छी तरह जानते है कि हिन्दू मस्तिष्क किस दिशामे घूमता है।...उनमे कभी भी यह साहस नही रहा कि वे हिन्दू जनमतका निरादर करते, भले ही वे यह समझते रहे हो कि वह गलत रास्तेपर है। गो-पूजा जैमे हिन्दुओके अन्धविश्वासोके प्रति उनके स्वच्छ मस्तिष्कमें कोई आदर नही हो सकता फिर भी हिन्दू जनताकी चापलूसी करनेके लिए, उसे प्रसन्न करनेके लिए वे अनेक बार यह घोषणा कर चुके है कि स्वराज्य यदि गायकी कुर्बानी न रोक सका तो उसका कोई मूल्य नही।'†

१९२३ मे हिन्दू महासभाके पुनस्संघटनके बाद उसके हिन्दू राजकी स्थापनाके उद्देश्यकी पूर्तिके लिए त्रिविध कार्यक्रम आरम्भ किया गया। 'मुसलमान यद्यपि अल्पसंख्यक है तथापि अपनी सैनिक वीरताके लिए वे आज भी प्रख्यात है और हिन्दू, बहुसंख्यक होनेपर भी उनके आगे भेड़ ही बने रहते है।'‡ 'हिन्दू महासभाने १९२३ मे जब अपना नया आदर्श स्थिर किया तो उसने हिन्दुओके हृदयमें आक्रमणकारी भावना उत्पन्न करने और भयकी वह भावना मिटानेकी योजना बनायी जो मुसलमानके नामसे प्रत्येक हिन्दूके हृदयमें स्वतः उत्पन्न हो जाती है। उसने देशभरमें एक छोरसे दूसरे छोरतक दगेकी सुविचारित योजना कार्यान्वित कर दी, सभी नगरोकी सड़कोको छोटा छोटा युद्धस्थल बना दिया जहा कि हिन्दू यह सीख सकें कि रक्तपातके खेलमें मुसलमानोंका किस भांति सामना किया जाय।...जबतक हिन्दुओंके हृदयमें मुसलमानोंका भय था तबतक दगे हो ही नही सकते थे। दंगे ही हिन्दुओके

---

* वही, पृष्ठ १०९। † वही, पृष्ठ ११०–१११। ‡ वही, पृष्ठ ११३।

सैनिकीकरणकी शिक्षाके उपाय थे।'* उस समयके समाचारपत्रोंमें पण्डित मालवीयजीके दौरेके जो विवरण प्रकाशित हुए है उनसे स्पष्ट है कि वे ही इस प्रकारके दगोका सघटन करनेवाले प्रमुख व्यक्ति थे। 'पण्डित मालवीयके एक नगरमें जानेके कुछ सप्ताह बाद ही वहा भीषण दगा हो गया।'

फरवरी १९२४ में गान्धीजी जब जेलसे बाहर निकले तो उन्होने देखा कि सारे देशमे पण्डित मालवीयजीकी भीषण राजनीति व्याप्त है, किन्तु उनमे इस स्थितिका सामना करनेका साहस न था। महात्माने इस अग्निको शान्त करनेके लिए कुछ भी उपाय नही किया और लगातार (१९२३ से २७) ५ वर्षतक मालवीयकी दुर्बुद्धि हिन्दू भारतके राजनीतिक जीवनकी पथ-प्रदर्शिका बनी रही पर वे कुछ न बोले।† हिन्दू लोग साइमन कमीशनका वहिष्कार करना चाहते थे और उनकी यह इच्छा थी कि इस वहिष्कारमे हिन्दू और मुसलमान दोनो शामिल हो। 'अतः अपने पुराने ढगके अनुसार हिन्दू नेताओंने गुप्त बैठक की और मुसलमानोके विरुद्ध आतक उत्पन्न करनेवाला आन्दोलन उठा लेनेका निश्चय किया और इस प्रकार दगोका सहसा अन्त हो गया।'‡ 'गाधीजी बिलकुल चुप रहे और उन्होने उस रक्तरजित नाटकपर अगुलीतक न उठायी जो पण्डित मालवीय, लाला लाजपतराय तथा अन्य महासभावादी सारे देशमे कर रहे थे और १९२८ के अन्तमे वे जब विश्रामके उपरान्त पुनः कार्य-क्षेत्रमे आये तो केवल हिन्दू सम्प्रदायके नेताके रूपमे ही आये, विश्रामके पूर्व जैसे हिन्दू और मुसलमान दोनोके ही अखिल भारतीय नेताके रूपमे थे उस रूपमे नही। महात्माने जब मालवीयके हिन्दू राष्ट्रीयतावाद और हिन्दू राजके आदर्शको स्वीकार कर लिया तो मालवीय स्वय ही क्षेत्रसे हटकर अपने व्यक्तिगत कार्योमे सलग्न हो गये। उस समयसे गाधीजी केवल हिन्दू सप्प्रदायके नेता है। उन्होंने कई अवसरोपर यह बात स्वीकार भी की है तथा काग्रेस अपनी नीति और अपनी सदस्यतामे लगभग पूर्णतः हिन्दू सस्था रही है।'§

---

* वही, पृष्ठ, ११४। † वही, पृष्ठ ११५–११६। ‡ वही, पृष्ठ ११७। § वही, पृष्ठ १२०–१२१।

'महासभा और कांग्रेसमें कार्यकर्ताओंका हेरफेर होता रहता है। १९३८ में अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटीने अपने बम्बईवाले अधिवेशनमे ऐसा प्रस्ताव अस्वीकार कर दिया जिसके स्वीकृत होनेपर न तो कांग्रेसके सदस्य महासभाके सदस्य बन सकते और न महासभाके सदस्य कांग्रेसके सदस्य बन सकते, परन्तु मुसलिमलीगपर लगा प्रतिबन्ध ज्योका त्यो बना रहा।'* 'सन् १९२४ से २८ तक गांधीजी विभिन्न योजनाओपर विचार करते रहे और उसके उपरान्त शुद्ध नेताके रूपमें जनताके सम्मुख प्रकट हुए।'† 'इसके बाद उन्होंने अपना सविनय अवज्ञा आन्दोलन आरम्भ कर दिया। मुसलमान उससे सर्वथा पृथक् रहे। १९३१ मे गांधीजी द्वितीय गोलमेज सम्मेलनके लिए रवाना हुए तो दोनों सम्प्रदायोमें कुछ समझौता करानेका प्रयत्न किया गया परन्तु गांधीजीने उस प्रयत्नको विफल कर दिया और यह जानते हुए कि उनकी अंगुलियोपर नाचनेवाले कुछ मुसलमान कभी राजी न होंगे यह मांग की कि मुसलमानोको सयुक्त रूपमे अपनी मांग उपस्थित करनी चाहिये।'‡

१९३५ का विधान बननेके उपरान्त उक्त विधानको कार्यान्वित करनेमें मुसलिमलीगने कांग्रेससे सहयोग करनेका निश्चय किया और श्री जिनाने आशा की कि अपनी घोषित नीतिके कारण चुनावमे कांग्रेस मुसलिमलीगका विरोध न करेगी, किन्तु कांग्रेसने उस आशाके विपरीत लीगको चुनौती दी। उसने लीगके विरोधमें अपने उम्मेदवार खड़े किये और राष्ट्रपति जवाहरलाल नेहरूने घोषणा की कि देशमे केवल दो दल हैं—एक कांग्रेस है और दूसरा ब्रिटिश सरकार। १९३७ के चुनावमे कांग्रेसको अत्यधिक बहुमतसे विजय प्राप्त हुई किन्तु उसकी विजय केवल हिन्दू निर्वाचन क्षेत्रोमें ही सीमित रही। मुसलमानोके ४८२ स्थानोमें कांग्रेसने केवल ५८ स्थानोपर अपने उम्मेदवार खड़े करनेका साहस किया जिसमेंसे भी उसके ३२ उम्मेदवार हार गये। अपनी सफलताके कारण कांग्रेसका दिमाग सातवें आसमानपर चढ़ गया और उसने यह

---

* वही, पृष्ठ ११६। † वही, पृष्ठ ११८। ‡ वही पृष्ठ १२०–१२१।

मांग पेश करनी आरम्भ कर दी कि लीग या तो अपना स्वतन्त्र अस्तित्व ही न रखे और यदि रखे तो कमसे कम राजनीतिक सस्था कहलाना छोड़ दे। मुस-लिम जन-सम्पर्क आन्दोलन आरम्भ किया गया और मुसलमानोंसे कहा गया कि वे अपना साम्प्रदायिक पट्टा छोड़कर काग्रेसमे शामिल हो जाय। यह अपील केवल मुसलमानोसे की गयी जबकि हिन्दुओके लिए यह स्वतन्त्रता रही कि वे एक साथ ही महासभाके भी सदस्य बन सकते है और काग्रेसके भी।* कांग्रेसने अपने बहुमतवाले प्रान्तोमे उस समयतक अपना मन्त्रिमण्डल बनानेमे इनकार कर दिया 'जबतक इस बातका बचन न दे दिया जाय कि विधानके अनुसार गवर्नरोको अल्पमतवालों तथा अन्य विशेष हितोकी रक्षाके निमित्त जो अधिकार प्राप्त है उनका वे उपयोग न करेगे।'† युद्धकी घटनाओंको सिरपर मंडराते देख सरकारने शान्ति बनाये रखनेके हेतु काग्रेसके सम्मुख आत्मसमर्पण कर दिया। उसने काग्रेसको उक्त बचन देकर फिर एकबार मुसलमानोके प्रति विश्वासघात किया। काग्रेसने पदग्रहण करते ही सबसे पहले यही घोषणा की कि वह मुसलमानोको मन्त्रिमण्डलमे लेनेके लिए बाध्य नही है। अत उडीसाके मन्त्रिमण्डलमे कोई मुसलमान नही रखा गया और मध्यप्रान्तके मन्त्रिमण्डलको मुसलमान मन्त्रीसे मुक्त करनेके लिए शीघ्र ही एक अवसर खोज निकाला गया। इसके अलावा काग्रेसने यह भी घोषणा कर दी कि वह मुसलमानोको मन्त्रिमण्डलमे लेनेके लिए प्रस्तुत है बशर्ते कि मुसलमान अपने दलोंसे इस्तीफा देकर काग्रेसके प्रतिज्ञापत्रपर हस्ताक्षर करें।‡

'किन्तु असल बात यह है कि काग्रेसका शासन मुसलमानोके प्रति अत्य-धिक अन्याय और अत्याचारपूर्ण था। . हिन्दू बहुमतवाले प्रान्त ऐसा व्यवहार करने लगे मानो हिन्दू राज आ गया हो।.. काग्रेसी मन्त्रिमण्डलोने यह आदेश निकाला कि सभी सार्वजनिक भवनो और स्कूलोपर काग्रेसका तिरगा झण्डा फहराया जाय।. . .उन्होंने सभी सार्वजनिक अवसरोपर 'वन्देमातरम्' गान

---

* वही, पृष्ठ–१२३–१२५। † वही पृष्ठ १२६। ‡ वही पृष्ठ १२७-२८

जो कि हिन्दूराजका प्रतीक और मुसलमानोके प्रति घृणोत्पादक है, गानेकी आज्ञा दे दी। यहातक कि काग्रेस शासित कुछ प्रान्तोमे असेम्बलियोकी काररवाई भी 'वन्देमातरम्' गानके पश्चात् आरम्भ होने लगी।'* 'मुसलमानोंको सामूहिक रूपसे आतकित करने तथा सुयोजित दगोका आन्दोलन, जो पण्डित मालवीयने १९२३ से २७ तक जोरोसे चलाया था, पुनः आरम्भ कर दिया गया।' 'इसका विस्तृत विवरण शरीफ रिपोर्टके दोनों भागोमें, श्रीफजलुलहकके वक्तव्यमे तथा खा साहब अब्दुल रहमानखाकी रिपोर्टमे मिल सकता है।'†

काग्रेसी मन्त्रिमण्डलोने हिन्दू आक्रमणकारियोकी रक्षा करनेके लिए ये उपाय किये--(१) निम्नपदस्थ अधिकारियोको प्रोत्साहित्य कर ऐसा समझौता कराना जिससे मुसल्मान गायकी कुर्बानीका अपना अधिकार त्यागकर उसके लिए क्षमा माग ले और (२) पुलिसको तहकीकातमे देर लगानेकी अनुमति दे देना जिससे अपराधी प्रमाणके अभावमे बेदाग छूट जाय। मजिस्ट्रेटोका तबादला कर दिया गया तथा मुसल्मानी क्षेत्रोमे ताजीरी पुलिस तैनात कर दी गयी।

इसके उपरान्त श्रीदुर्रानीने हाईकोर्टके उस फैसलेके उद्धरण दिये है जिसमे चन्दूर विसवाकाण्डके अभियुक्त बरी कर दिये गये थे। उस मुकदमेमे दौरा जजने, जो सयोगसे अग्रेज था, एक हिन्दूकी हत्याके लिए कुछ मुसलमानोको फासी और कुछ मुसलमानोको कालेपानीकी सजा दी थी। उन्होने अपनी टीकामे लिखा है कि 'मध्यप्रान्तके प्रधान मन्त्रीमे लज्जाका एक कण भी होता तो वे आत्महत्या कर लेते, नही तो कमसे कम सार्वजनिक जीवनसे तो वे अवश्य ही अवकाश ग्रहण कर लेते। श्री यूसुफ शरीफ केवल इसलिए बर्खास्त कर दिये गये कि उन्होने एक ऐसे कैदीको मुक्त कर दिया था जिसकी कैदकी मीयाद लगभग पूरी हो चुकी थी। किन्तु नागरिकोके जीवनके विरुद्ध इस घृणित षड्यन्त्रके लिए काग्रेसने प्रधानमन्त्री पण्डित (रविशकर) शुक्लसे कोई जवाब-तलब नही किया। ..काग्रेसके अधिनायक और पण्डित शुक्लके समर्थक गांधीजी सदैव ही सत्य और अहिसाकी रट लगाये रहते है और अपनी आत्माकी पुकारका

---

* वही, पृष्ठ-१२९-१३०। † वही पृष्ठ १३१

डंका पिटा करते है। मेरा विश्वास है कि सर्वशक्तिमान ईश्वर कभी भी ऐसे पाखण्डियोंसे बात नही कर सकता। गांधीजीकी आत्माकी पुकार और किसी-की आन्तरिक आवाज होगी। जो हो, न्यायके ऐसे उदाहरण और ऐसे सुशासनको देखते हुए भारतके मुसलमान कभी भी ऐसी स्थितिमे रहना स्वीकार नही कर सकते जिसमे उन्हें हिन्दुओकी अधीनतामे रहना पड़े'*

कांग्रेसके अत्याचारोका वर्णन करते हुए आप आगे कहते है कि 'कितने ही स्थानोपर मुसलमानोंको 'अजा' लगाने अथवा अपने खानेके लिए गाये मारनेकी मनाही कर दी गयी थी। मसजिदो और कब्रगाहोंको दूषित किया गया जिनकी क्षतिपूर्तिकी कोई आशा नही। किन्तु मुसलमानोके लिए सबसे अधिक खराब और हानिकारक वस्तु जिसका उद्देश्य उन्हे मुसलमानियतसे वचित करना तथा सांस्कृतिक और सामाजिक एकताको नष्ट करना था, वर्धा-शिक्षा-योजना थी। भारतकी भावी कांग्रेस सरकारमें यह सबपर समान रूपसे लागू होनेको थी और विद्यामन्दिर योजनाके रूपमे मध्यप्रान्तमे उसका आरम्भ कर दिया गया था।'†

इन सब बातोके उपरान्त कांग्रेसी मन्त्रिमण्डलोके इस्तीफेसे सहज ही मुस-लमानोको बड़ी राहत मिली। उन्होने सन्तोषकी सांस ली। इसके उपरान्त व्यक्तिगत सत्याग्रह आन्दोलन चला और क्रिप्स प्रस्ताव आया। क्रिप्स प्रस्ताव उदार था। उसमें केवल एक दोष था अर्थात् मुसलिम भारतके सम्भाव्य पृथक्करण और एक स्वतन्त्र मुसलिम राजकी स्थापनाकी योजना थी जिसे कांग्रेस किसी भी स्थितिमे स्वीकार न कर सकी।

अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटीका ८ अगस्त १९४२ का प्रस्ताव 'खुला विद्रोह' था और 'जापानको आमन्त्रित करनेके लिए खुला निमन्त्रण था। उस समय जापानकी सेनाएं सीमाके दूसरी ओर थी और उसे पारकर देशपर अधिकार जमानेके लिए उत्सुकतासे प्रतीक्षा कर रही थी। इस भाति यदि हम विचार करें तो अगस्त प्रस्ताव भारतवर्षके प्रति और मुख्यतः मुसलमानोंके प्रति भीषणतम विश्वासघातपूर्ण कार्य था। कारण, हिन्दू तो जापानके साथ निकट

---

* वही, पृष्ठ १३४–५। † वही, पृष्ठ १३५, १३६।

सम्पर्कका कुछ दावा भी करते है पर मुसलमानोंका तो जापानसे कोई सम्पर्क न था।'* 'वाइसराय लार्ड लिनलिथगोके लम्बे शासनकालमे केवल उस समय एक बार सरकारने तत्काल और प्रभावकर काररवाई की जिससे गाधीजीके इस नाटकके प्रथम दृश्यपर ही काला पर्दा पड़ गया। मुसलिम भारत पुन. एक बार हन्दू राजकी दयाका आश्रित होनेसे बच गया।'†

'यद्यपि इसलामके शास्त्रमे नैतिक शास्त्र भी है और राजशास्त्र भी, तथापि भारतके मुसलमान समष्टि रूपसे अच्छे राजनीतिज्ञ नही है। किन्तु वे जिस वातावरणमे रख दिये गये उसमे वे अधिक समयतक वैसे ही न बने रह सके। हिन्दुओने उनके विरुद्ध जो 'सर्वागीण युद्ध' छेड़ दिया उसने उन्हे बुरी तरह विचलित कर दिया। १९३७ मे हम उन्हे स्तब्ध और विचलित अवस्थामे पाते है। १९३८ मे हम देखते है कि मुसलमानोमे यह भावना बढती जा रही है कि हिन्दू-मुसलिम संयुक्तराष्ट्रमें उनके लिए कोई स्थान नही। वर्षान्तमे हम सारे भारतमे ऐसी आवाज उठती देखते है कि भारतमे दो राष्ट्र है और मुसलमान अपने अधिकारानुकूल एक राष्ट्र है।'‡ 'और इसलिए मार्च १९४० मे लाहौरमे भारतीय मुसलिम लीगने पाकिस्तानका जो प्रस्ताव स्वीकार किया वह और कुछ नही मुसलमानोके राजनीतिक विश्वासका प्रदर्शन और लीगद्वारा उसकी स्वीकृतिमात्र था।'§

इस भाति श्री दुर्रानीके मतानुसार १९३८ मे भारतके मुसलमानोमे स्वतन्त्र राष्ट्र होनेकी भावना जाग्रत हुई और उन्होने पाकिस्तान ही अपना लक्ष्य बना लिया। 'पाकिस्तानने उनकी कल्पनामे चार चाद लगा दिये है। उन्हे उसमे ऐसी असंख्य विचित्र सम्भावनाएं प्रतीत हो रही है जिनका कभी स्वप्न भी नही देखा जा सकता था। उनकी कल्पना है कि पाकिस्तान ऐसा राज होगा जहा मनुष्य अत्याचार, अन्याय, शोषण, स्वार्थ लोभ और दरिद्रताके भयसे

---

* वही पृष्ठ १३९-४०। † वही पृष्ठ १४५। ‡ वही पृष्ठ १५३-५४

§ वही पृष्ठ १५७।

सर्वथा मुक्त रहेगे। इसलामी राज होनेसे उनके नागरिकोमे नागरिक अधिकारो तथा आर्थिक सुविधाओके सम्बन्धमे मुसलिम और गैरमुसलिमका कोई भेद न होगा। वे इसे 'हुकूमते इलाही' अर्थात् ईश्वरका राज्य कहते है, जिसे कि कुछ लोगोने अज्ञाननावश ऐसे राजका नाम दे दिया है जिसमे सर्वोच्च अधिकारी ईश्वर होता है और उसीके आदेश और नियमोपर सारा शासन चलता है। किन्तु इसलामी राज ऐसा राज नही है। इसलामी राज लोकतन्त्र है जिसके नागरिक 'हम स्वय राज है' यह बात महसूस करते है और इसकी घोषणा करते है।'*

मैने श्री दुर्रानीके इतने अधिक उद्धरण और निष्कर्ष इसलिए नही दिये है कि मै उन्हे स्वीकार करता हू--इनमे कितने ही तो स्पष्टत. उपहासास्पद है--प्रत्युत इसलिए दिये है कि उन्होने क्रमानुसार यह विवरण दिया है कि दो राष्ट्रोके सिद्धान्तने वर्तमान रूप कैसे ग्रहण किया। मैने इसलिए भी इन्हे दिया है कि श्री दुर्रानी यह दावा करते है कि 'मै ही वह व्यक्ति हू जिसने सबसे पहले यह बात प्रकाशित की कि हिन्दू और मुसलमान केवल दो सम्प्रदाय ही नही है अपितु दो राष्ट्र है और इस कारण किसी समझौतेद्वारा दोनोका एक सयुक्त राष्ट्र नही बन सकता और हिन्दू मुसलिम समस्याका एकमात्र स्वाभाविक और तर्कपूर्ण हल यही हो सकता है कि दोमेसे कोई सम्प्रदाय या तो दूसरेको आत्मसात् कर ले अथवा बिना हानि पहुचाये छोड दे।.. मुसलिम राष्ट्रका एक सदस्य होनेके नाते मेरे लिए यह स्वाभाविक था कि मै इस बातपर जोर दू कि मुसलमान इसलामके निमित्त पुन. भारतपर अपना कब्जा करे और इसीको अपना राजनीतिक लक्ष्य बनावे। मेरा अब भी यही मत है, कारण, मेरा विश्वास है कि भारतकी राजनीतिक मुक्ति इसलाममे ही निहित है।'†

---

* वही पृष्ठ १५८-१५९। † वही पृष्ठ १४६।

४

राष्ट्रीय और बहुराष्ट्रीय राज

तत्काल जिस विषयसे हमारा सम्बन्ध है वह यह है कि अगर हम तर्कके लिए यह बात मान भी ले कि भारतके मुसलमान सन् १९३८से ही पृथक् राष्ट्र होनेकी चेतनाका अनुभव कर रहे है, तो क्या हिन्दुओ और मुसलमानोके पृथक् राज बन जानेसे समस्या हल हो जायगी और इन दोनो प्रकारके राष्ट्रीय राजोमे अल्पसख्यकोकी स्थिति और अच्छी हो जायगी? इस सम्बन्धमे, पश्चिममे अभी हालमे ही जो कुछ घटित हुआ है उसके इतिहासका अध्ययन और यदि सम्भव हो तो, उससे शिक्षा ग्रहण करना लाभदायक ही होगा। यह बात भलीभाति विदित है कि प्रथम महासमरका अन्त होनेपर यूरोपके केन्द्रीय साम्राज्योके ध्वसावशेषमे कई नये राज्योकी सृष्टि की गयी और उन्हे यथासम्भव एक जातीय राज बनानेका प्रयत्न किया गया। परिणाम यह हुआ कि महासमरके पूर्वकी बहुतसी अल्पसख्यक जातियां नये राजोमे जिनका नामकरण उन्ही जातियोपर हुआ, बहुसख्यक रूपमे परिणत हो गयी, और पुराने विघटित राजोकी बहुसख्यक जातियोके सदस्य नये राजोमे अन्य लोगोके साथ अल्पसख्यक हो गये। चूकि इस बातकी आशंका बनी हुई थी कि अल्पसख्यकोके प्रति दुर्व्यवहार ससारके शान्ति-भगका कारण हो सकता है, इसलिए अल्पसख्यकोके प्रति व्यवहारका प्रश्न अन्तर्राष्ट्रीय विषय बन गया और अधिकांश राजोको अपने अल्पसख्यकोकी रक्षाके सम्बन्धमे समझौते करने पड़े जो 'अल्पसख्यक सन्धियां' (माइनारिटी ट्रीटीज) के नाममे विख्यात हैं और राष्ट्रसघ जिनका सरक्षक है।

विभाजनका उद्देश्य, प्रथम महासमरके बाद यूरोपमे स्थापित हुए राजोकी तरह, हिन्दू और मुसल्मानी राजोकी स्थापना है जिसमे हिन्दू और मुसलमान

दोनोंको अपने-अपने राजमें अपनी विशेष प्रवृत्तिके अनुसार सास्कृतिक, आध्यात्मिक, आर्थिक और राजनीतिक जीवनके विकासके निमित्त समुचित अवसर मिल सके और वे अपना भविष्य स्वयं निर्धारित कर सकें। इस उद्देश्यके सम्बन्धमें—यदि इसकी पूर्ति हो सके—किसीके झगड़नेकी आवश्यकता नही है। पर हिन्दू और मुसलमान अधिवासी सर्वत्र इस प्रकार बिखरे और आपसमें मिले-जुले है कि देशके किसी भी भागमे हिन्दू या मुसलमान किसीका ऐसा एकजातीय राज बन सकना सम्भव नही है जिसमे दूसरी जातिके बहुतसे लोग अल्पसख्यकके रूपमे शेष रह जाते हो। अधिवासियोंके बहुमतके धर्म (मजहब) के स्पष्ट आधार विशेष रूपसे बने हुए हिन्दू या मुसलमानी राजका हिन्दुओ या मुसलमानोका राष्ट्रीय राज बन जाना निश्चित है, और इस प्रकारका राज बन जानेपर उसका उन मनोदशाओ और विचारोसे अलिप्त रहना असम्भव होगा जिनका राष्ट्रीय राजमे अनिवार्य रूपसे प्राधान्य हुआ करता है। मेकार्टलनीके शब्दोमे 'भिन्न-भिन्न राजोके शासनारूढ़ बहुसख्यक राष्ट्र (भारतमे मुसलमानी राजोमे मुसलमान और हिन्दू राजोमें हिन्दू इसी प्रकारके राष्ट्र होगे) जबतक इन राजोको अपने राष्ट्रीय आदर्शो और महत्त्वाकाक्षाओकी प्राप्तिका साधन बनानेके प्रयत्नमे लगे रहेगे—जो सिद्धान्ततः असम्भव और व्यवहारतः असाध्य है—तबतक अन्तर्राष्ट्रीय सरक्षणकी किसी भी पद्धतिके सहारे अल्पसख्यकोकी स्थिति गवारा करने योग्य नही बनायी जा सकती।'*

---

* सी० ए० मेकार्टनी : 'नेशनल स्टेट्स ऐण्ड नेशनल माइनारिटीज', पृष्ठ ४२१

नोट—पाकिस्तानके समर्थक डाक्टर अम्बेदकरका कहना है कि 'दो प्रतिद्वन्द्वी सम्प्रदायोंको, जिनमें एक बहुसख्यक और दूसरा अल्पसख्यक है, मिलाकर एक ही सरकारके फौलादी साचेमे ढालनेका प्रयत्न साम्प्रदायिक समस्याका सर्वोत्तम हल नही है'; और अगर गैर-मुसलमान-प्रधान प्रान्तोंको पाकिस्तानसे अलग कर फिरसे उनकी सीमा निर्धारित करने और अधिवासियोकी अदला-बदलीसे यह हल प्राप्त न हो तो पाकिस्तानकी योजना साम्प्रदायिक समस्यागत बुराइयोको निकाल बाहर करनेमे समर्थ न हो सकेगी। इसलिए वे इन दोनों

राष्ट्रीय राज और राष्ट्रीय अल्पसंख्यक—दोनोंमें परस्पर विरोध हैं। इस समस्याका समाधान दो प्रकारसे हो सकता है—एक तो यह कि दोनो राजकी सीमा इस प्रकार निर्धारित की जाय कि अल्पसंख्यक जाति उसके बाहर पड़ जाय

उपायो—पुनः सीमा निर्धारण और अधिवासियोकी अदला-बदली—का सहारा लेनेकी राय देते है, और उनकी समझमे, जहातक पाकिस्तानका सम्बन्ध है ये दोनो उपाय व्यवहार्य है। लेकिन वे हिन्दुस्तानको एकजातीय हिन्दूराज बनानेका कोई उपाय नही बतलाते जिसमे बहुतसे मुसलमान अल्पसख्यकोके रूपमे शेष रह जाते है। वे सिर्फ इतना ही निर्देश कर सन्तोष कर लेते है कि इससे समस्याकी जटिलता बहुत कुछ कम पड़ जायगी और इस प्रकार समस्याका आसान हो जाना अन्ततोगत्वा हिन्दुओके लिए लाभदायक ही सिद्ध होगा (बी० आर० अम्बेदकर—'पाकिस्तान आर दी पार्टीशन ऑव इण्डिया', अध्याय ६, खण्ड २–३, पृष्ठ १०७)।

जहातक सीमाके पुर्ननिर्धारणका सम्बन्ध है, मैने लीगके प्रस्तावके अर्थपर सम्यक् रूपसे ध्यान देते हुए इसपर विस्तारके साथ विचार किया है कि सीमाए क्या हो सकती है, लेकिन कहा जाता है कि सन् १९४४ में महात्मा गाधीके साथ वार्ता चलाते समय श्री जिनाने प्रान्तोकी वर्तमान सीमाओको बनाये रखनेका ही आग्रह किया था। अधिवासियोकी अदला-बदलीके सम्बन्धमे सिर्फ इतना कह देना काफी है कि डाक्टर अम्बेदकरने सीमाओके सम्बन्धमे जो सुझाव रखा है उसके अनुसार पश्चिमोत्तर और पूरबके क्षेत्रोके मुसलमानी राजोसे हटनेवाले गैर-मुसलनानोकी सख्या क्रमशः ६१ लाख और १ करोड़ ३४ लाखसे अधिक ही होगी। मालूम नही, डाक्टर अम्बेदकरको यह कैसे पता चला कि तुर्की, यूनान और बलगेरियामे २ करोड़ अधिवासी स्थानान्तरित हुए। मेकार्टनीके अनुसार इन देशोके सारे अधिवासियोकी संख्या ढाई करोड़से कुछ ही अधिक है। इन तीनो राजोमें सभी तरहके अल्पसख्यकोकी कुल संख्या ३५ लाखसे कुछ ही अधिक है। मेकार्टनीका कहना है कि बलगेरिया और यूनान तथा यूनान और तुर्कीमे अधिवासियोकी अदला-बदलीके लिए जो कमीशन नियुक्त किया गया था उसने क्रमशः १५४–६९१ और ५४५–५५१ व्यक्तियोंके सम्बन्धमे ही निर्णय किया था।

या अधिवासियोंकी अदला-बदली हो, और दूसरा यह कि राजका आधार बदलकर उसे राष्ट्रीय या बहुराष्ट्रीय राज बना दिया जाय।

हिन्दू और मुसलमान सारे भारतमे इस प्रकार बिखरे और आपसमें मिलकर बसे हुए है कि ऐसा कोई भूभाग अलग कर सकना असम्भव है जिसमें अल्पसख्यक जातिके बहुतसे लोग शेष न रह जायँ। इस बातको सभी स्वीकार करते है इसलिए यह सुझाव रखा जाता है कि विशुद्ध मुसलमानी राज कायम न कर ऐसे राज हो जिनमे बहुसख्यक हिन्दू या मुसलमानके साथ-साथ दूसरी अल्पसख्यक जाति भी हो। देशके किसी प्रकारके विभाजनद्वारा एकजातीयता लाना असम्भव है।

क्या अधिवासियोकी अदला-बदलीके जरिये एकजातीयता लायी जा सकती है? डाक्टर एस० ए० लतीफ और डाक्टर अम्बेदकरके अतिरिक्त और किसी व्यक्तिने इस प्रकारका सुझाव नही पेश किया है। मार्च १९४० मे लीगके लाहौरवाले अधिवेशनमे अध्यक्ष-पदसे भाषण करते हुए श्री जिनाने कहा था—'भारतका भौतिक विभाजन होनेपर अधिवासियोकी अदला-बदली कहातक व्यवहार्य होगी, इसपर विचार करना पड़ेगा।'* दूसरे लोग सम्बद्ध व्यक्तियोंकी अत्यधिक सख्या इसमें होनेवाले व्यय और असुविधा तथा हटाये जानेवाले हिन्दू और मुसलमान दोनोकी अपनी भूमिके प्रति आसक्तिके विचारसे इसे अव्यावहारिक समझते है। इस सम्बन्धमें यूरोपके अल्पसंख्यकोकी भी चर्चा की जा सकती है—

वहां अल्पसंख्यक समझौतों (पीसट्रीटीज) के अनुसार अधिवासियोकी ऐच्छिक और अनिवार्य दोनों तरहकी अदला-बदलीका प्रयोग किया गया। मेकार्टनीका कहना है कि 'वस्तुतः स्वेच्छासे हटनेवालोंकी संख्या नहीके बराबर थी और समझौते (कन्वेन्शन)में जिस ऐच्छिक प्रवासकी बात रखी गयी थी

---

* स्पीचेज ऐण्ड राइटिंग्स ऑव मिस्टर जिना तीसरा सस्करण, पृष्ठ १५८

वह नामके लिए ही कार्यान्वित हुई।'* ऐसा कोई कारण नही दीख पड़ता जिसमे भारतमें इससे भिन्न स्थिति होनेका अनुमान किया जाय। यूनान और तुर्कीमे अनिवार्य प्रवास (विनिमय) का प्रयोग किया गया। इसके सम्बन्धमे मेकार्टनीने अपने निष्कर्षका साराश देते हुए कहा है कि 'अधिवासियोकी अदला-बदलीके जरिये अल्पसख्यकोकी समस्या हल करनेके सम्बन्धमे जो अनुभव प्राप्त हुआ है वह ऐसा उत्साह-वर्द्धक नही है कि इस प्रयोगकी पुनरावृत्ति की जाय। कहा जा सकता है कि युद्धोत्तर तुर्की ओर बालकन राजोकी स्थिति बिलकुल असाधारण थी और अपेक्षाकृत अधिक व्यवस्थित स्थितिमे न तो उतनी कठिनाइया उपस्थित होगी और न आर्थिक हानि होगी। इसके उत्तरमे कहा जा सकता है कि इस तरीकेका मूल सिद्धान्त ही उग्रतापूर्ण है। स्थिति व्यवस्थित और अल्पसख्यको तथा बहुसख्यकोंका पारस्परिक सम्बन्ध सौख्यपूर्ण होनेपर अदला-बदलीकी आवश्यकता ही कहा रह जाती है। स्वेच्छापूर्वक प्रवास करनेकी अपीलका भी कोई फल न निकलेगा। सम्बद्ध व्यक्तियोकी इच्छाके विरुद्ध प्रवासके लिए बाध्य करना बर्बरतापूर्ण कार्य होगा। पर अनुभवसे यही सिद्ध हुआ है कि वस्तुत. बाध्य करनेवाली स्थिति न हो तो स्वेच्छासे तो अदला-बदली कभी होती ही नही। इससे यही मानना पड़ता है कि यह कार्य कष्टसे रहित नही हो सकता। हा, सवाल सिर्फ यह उठ जाता है कि यह कष्ट निर्ममतापूर्वक पहुचाया जाता है या उत्साहके आवेशमे।'† इसलिए मेकार्टनी इस निष्कर्षपर पहुचता है कि 'अल्पसख्यक जातिसे पिण्ड छुडाकर बहुसंख्यककी समस्या हल करनेके सारे प्रयत्न इस प्रकार हतोत्साह करनेवाले ही प्रमाणित हुए है।....इसलिए मिस्र अधिवासियोवाले राजोको अल्पसख्यकोंकी ओरसे लगातार होनेवाली मागोके सम्बन्धमे समझौता कर लेना चाहिये। आजकल जो कठिनाई

---

* मेकार्टनी—'नेशनल स्टेट्स ऐण्ड नेशनल माइनारिटीज' (१९३४), पृष्ठ ४४०–४४१।

† मेकार्टनी—'नेशनल स्टेट्स ऐण्ड नेशनल माइनारिटीज' (१९३४), पृष्ठ ४४८–४४९।

उपस्थित होती है उसका मूल कारण राष्ट्रीय राजकी आधुनिक कल्पना : राजकी बहुसख्यक जातिके राष्ट्रीय-सास्कृतिक आदर्शों तथा सभी अधिवासियोके राजनीतिक आदर्शोमे कोई भेद न मान लेना है। यदि इन दोनो मूलतः भिन्न विषयोकी आपसकी सभी गड़बड़ी दूर कर दी जा सके तो ऐसा कोई कारण नही जिससे बीसो विभिन्न राष्ट्रीयतावाले सदस्य एक ही राजमे पूर्ण सामञ्जस्यके साथ न रह सकें और उनमेसे सबसे छोटेको भी उस नैतिक अधःपातका शिकार होना पड़े जिसके बहुतसे राष्ट्रीय अल्पसख्यक आज शिकार हो रहे है। आज भी यूरोपमे ऐसे कुछ राज हैं जिन्होने राष्ट्रीय राजका रूप ग्रहण करनेके प्रयत्नसे अपनेको विरत रखा है और इसके फलस्वरूप उनमे वास्तविक अल्पसख्यक समस्याका भी अस्तित्व नही है।'* इस सम्बन्धमे उसने सोवियत सघका उदाहरण देते हुए भारतकी समस्यापर भी दृष्टिपात किया है—'यह सुझाव पेश किया जा सकता है कि सिर्फ भारतके ब्रिटिश शासक ही नही बल्कि भारतके अधिवासी भी यूरोपके अल्पसख्यकोके सघर्षपर ध्यान देगे। इससे उनकी कोई हानि नही होगी। भारतकी आजकी स्थितिमे दो संघर्ष बिलकुल स्पष्ट है, एक तो अग्रेजोके विरुद्ध वहांके निवासियोका और दूसरा मुसलमानोके विरुद्ध हिन्दुओका। (छोटी-छोटी जातियोकी अनगिनत उलझनोका तो कुछ कहना ही नही)।'

चूकि भारत-स्थित अग्रेज इस देशकी कोई प्रमुख जाति न होकर विदेशी शासनसत्ताके प्रतिनिधि विशेष ही है, इसलिए पहला संघर्ष हैप्सबर्गवंशके विरुद्ध मेजारोके सघर्षसे बहुत कुछ मिलता-जुलता है और ब्रिटिश शासनको प्राप्त होनेवाला मुसलमानोका समर्थन हैप्सबर्गवश और हंगरीके जर्मन-क्रोटोके मध्य बार-बार होनेवाले मैत्री-सम्बन्धका स्मरण दिलाना है और जैसे मेजारों और हंगरीकी विभिन्न राष्ट्रीय जातियोका पारस्परिक संघर्ष उस समयतक निर्णायक स्थितिपर नही पहुंचा जबतक हैप्सबर्गवंशियोने घरेलू मामलोमे हस्तक्षेप करनेका अधिकार नही छोड़ा वैसे ही अग्रेजोके भारतमे विद्यमान रहनेके कारण यहा

---

* मेकार्टनी कृत पृष्ठ ४४८–४९।

बसनेवाली जातियोंका भी सच्चा संघर्ष रुका हुआ है। भारतको ज्यो-ज्यों अधिकाधिक स्वशासनका अधिकार प्राप्त होता जायगा त्यो-त्यों यह संघर्ष उन्हीं आन्तरिक संघर्षोंका रूप ग्रहण करता जायगा जो पूर्वी यूरोपीय राजके विघटनके कारण हुए हैं।...इसलिए जो लोग इस इतिहासका अध्ययन करें वे उससे शिक्षा ग्रहण करनेकी बुद्धिमानी अवश्य दिखलाएँ।'* इस प्रकारकी एक शिक्षाका उल्लेख उसने पुस्तकके आरम्भमें ही किया है जिसे हम भारतीयोंके लिए स्मरण रखना हितकर होगा। जब मेजारो और हैप्सबर्गवंशीयोके बीच खुल्लमखुल्ला संघर्ष छिड़ गया तब क्रोट और प्रायः सभी दूसरे अल्पसंख्यक राजाके पक्षमे हो गये। हगरीका शासन-चक्र विएनाकी ओरसे एक केन्द्रित और जर्मन विशेषता प्रदर्शित करनेवाली नौकरशाहीद्वारा संचालित होने लगा। यह शासन न तो मेजारोके लिए सन्तोषजनक था और न स्लोवानिक आकांक्षाओंके लिए हितकर। इसपर 'एक चतुर मेजारने अपने एक क्रोट मित्रको कहा था—हमे जो कुछ दण्ड रूपमे प्राप्त हुआ है वही तुम्हें पुरस्कारमे मिला है।'†

इसलिए भारतीय समस्याके हलके लिए हिन्दुओं और मुसलमानोके पृथक् राष्ट्रीय राजोकी स्थापनाके पीछे दौड़नेकी अपेक्षा, जिसमें दूसरे समुदायके बहुतसे लोग अल्पसंख्यकके रूपमें शेष रह जाते है, क्या यह अधिक उपयुक्त न होगा कि भारत अराष्ट्रीय राजके ही रूपमें बना रहे जैसा वह इस समय है और पहले भी रहा है? लीगने मुसलमानोंके लिए पृथक् राज स्थापित करनेकी जो इच्छा प्रकट की है वह छः साल भी पुरानी नही है और जैसा कि आगे दिखलाया जायगा कमसे कम उतने सौसे भी अधिक वर्षोका इतिहास खण्डित करनेवाली है। इसलिए उद्देश्य यह होना चाहिये कि राष्ट्रीय राजोका निर्माण न कर

---

* मेकार्टनी—'नेशनल स्टेट्स ऐण्ड नेशनल माइनारिटीज' (१९३४) पृ० ४८०-८१।

† मेकार्टनी—'नेशनल स्टेट्स ऐण्ड नेशनल माइनारिटीज' (१९३४), पृष्ठ ११८

भारतके अन्तर्राष्ट्रीय राजको ही, उसकी अराष्ट्रीय विशेषताको क्षति पहुँचानेवाले तत्वोंको दूर करते हुए, दृढ़ता प्रदान की जाय।

लार्ड ऐक्टनके उस मतको उद्धृत कर इस विवेचनका अन्त करना अच्छा होगा (दो राजोंका सिद्धान्त माननेवालोने भी इसे उद्धृत किया है) जिससे मेकार्टनी अपनी पुस्तकका अन्त करता है❀ 'यदि नागरिक समाजका उद्देश्य कर्तव्योके पालनेके लिए' स्वाधीनताका स्थापन माने तो हम इसी निष्कर्षपर पहुँचेग कि वही राज सर्वाधिक दृढ और पूर्ण होते है जिनमे.... बिना कष्ट पाये कई विभिन्न राष्ट्रीय जातिया रहती है, जिन राजोमे जातियोका सम्मिलन नही हुआ है वे अपूर्ण है और जिनमे इस प्रकारका प्रयत्न नही किया गया है वे अशक्त और क्षीण है। जिस राजमे भिन्न-भिन्न जातियोको सन्तुष्ट कर सकनेकी क्षमता नही है वह स्वय अभिशप्त है और जो राज उन्हे शक्तिहीन, आत्मसात् या बहिष्कृत करनेकी चेष्टा करता है वह अपनी जीवनी-शक्तिका नाश करता है और जो राज उन्हे अपनेमे समाविष्ट नही करता वह स्वशासनके मुख्य आधारसे ही वचित है।†

❀ मेकार्टनी—'नेशनल स्टेट्स ऐण्ड नेशनल माइनारिटीज'—पृष्ठ ५०१

† 'एक्टन्स एसेज ऑव लिबर्टी' पृष्ठ २७८

५

चित्रका दूसरा पहलू

पिछले पृष्ठोमे ऐसी 'बहुतसी बाते आयी है जो इसी लक्ष्यकी ओर सकेत करती है कि हिन्दू और मुसलमान एक दूसरेसे पृथक् है और ये दोनो कभी आपसमे मिलनेवाले नही। पर साथ ही चित्रका एक और पहलू भी है जिससे वह देखा जा सकता है। आइये थोड़ी देरके लिए इधर भी दृष्टिपात करे।

जूलियन हक्सलेके शब्दोमे बहुत-सी मानव स्फूर्तिया, महत्त्वाकाक्षाएँ और भाव स्वाभाविक या कृत्रिम रूपसे परस्पर मिलकर उस वृहत् सयोगकी सृष्टि करते है जिसे हम राष्ट्र शब्दद्वारा व्यक्त करते है। भाषा, मजहब, कला, विधान, आहार, भावभगी, मिलना-जुलना, वेशभूषा, खेल-कूद आदि भी इनमे योगदान करते है, ।* उसका यह भी कहना है कि 'समूह-भावनाके विशेष रूपका, जिसे हम 'राष्ट्रीयता' कहते है, विश्लेषण करनेपर यही सिद्ध होता है कि वह किसी ऐसी वस्तुपर आधृत है जो भौतिक सम्बन्धकी अपेक्षा व्यापक तो अधिक है पर उसकी व्याख्या वैसी सरल नही है। निश्चित भौगोलिक सीमाओमे परिवेष्टित देशमे निवास, विशेष प्रकारके रहन-सहनके साचेमे ढालनेवाला जलवायु, परम्पराएँ जिन्हे सबलोग अपना लेते है, सामाजिक सस्थाए और सघटन, सर्वमान्य धार्मिक रीति-रिवाज, सामान्य व्यापार और पेशा आदि भी उन अनगिनत उपादानोमें सम्मिलित है जो न्यूनाधिक मात्रामे राष्ट्रीय भावनाका निर्माण करनेमें सहायक हुए है। कल्पित 'रक्त सम्बन्धसे पुष्ट सामान्य भाषा भी बडी महत्वपूर्ण चीज है। पर दलगत अनुभूतिका पोषण करनेवाले सारे भावो, यहातक कि कल्पनाप्रसूत भौतिक या ऐतिहासिक सम्बन्धसे भी कही अधिक बलवती वह

---

* जूलियन हक्सले--'रेस इन यूरोप', पृष्ठ ३

प्रतिक्रिया है जो बाहरी हस्तक्षेपके विरुद्ध होती है। दलगत चेतनाके विकासमे यही सबसे अधिक सहायक हुई है। राष्ट्रीय विकासकी क्रियामें बाहरसे पड़नेवाला दबाव ही सम्भवतः सबसे बड़े कारणोमे है।'*

इनमेंसे कुछ अधिक महत्वपूर्ण तत्त्वोंपर बिचारकर देखे कि उन्होने भारतके हिन्दुओं और मुसलमानोंको कहातक प्रभावित किया है।

क—धर्म

में पहले धर्मको ही लेता हूँ। यह सत्य है कि भारतके हिन्दू और मुसलमान भिन्न-भिन्न धर्मोंके अनुयायी है और उनका सामाजिक जीवन भी इन्ही धर्मोंसे उद्भूत हुआ है। यह भी सत्य है कि कुछ धार्मिक कृत्यों और रीति-रिवाजोंमें बहुत अधिक अन्तर है और ऊपर-ऊपर यह भी जान पड़ता है कि उनमे आपसमें कभी मेल हो नहीं सकता ; पर कुछ मौलिक बातोमे जो अन्तर है वह उस अन्तरसे ज्यादा नहीं है जो एक ही व्यापक नामवाले मतोके अनुयायियोमे होता है जो निश्चय ही एक राष्ट्रके सदस्योके रूपमे शान्ति और सद्भावपूर्वक साथ रहे हैं। मुसलमानकी मसजिदके भीतरी हिस्से (जिसमे जायनमाज और बघने पड़े होते हैं) की बेहद सादगी और मन्दिरके भीतरी हिस्से (जिसमे देवमूर्तिया और पूजाका सामान रहता है) मे जो असमानता देख पड़ती है वह उससे अधिक नही होती जो प्रोटेस्टेण्ट या प्रेस्बीटेरियन गिरजाघरके भीतरी हिस्से (जिसमे आराधकोंके आसनों और उपदेशककी वेदीके अतिरिक्त और कुछ नही होता) और रोमन कैथलिक गिरजाघर (जिसमें शानदार सजावट, मूर्ति, चित्रकारी, बत्ती आदि बहुत-सी चीजे होती है) में देखा जाता है। मुसलमानोंमें कट्टर सुन्नी लोगोको मुहर्रके रवाजो—ताजिया, ताबूत, सिपारा, अलम, पैक, बहिश्तीको देखकर लगभग वैसा ही उद्वेग होता है जैसा हिन्दुओकी दुर्गाकी मूर्तिके जुलूसको देखकर। फिर भी आजतक किसीने यह दावा नही किया कि

---

*जूलियन हक्सले—'रेस इन यूरोप', पृ० १५।

इग्लैण्डके प्रोटेस्टेण्ट और कैथलिक एक ही ,राष्ट्रके अग नही है, और सुन्नी और शिया दो विभिन्न राष्ट्रोके हैं। हिन्दुओमे भी कुछ ऐसे सम्प्रदाय हैं जिनको मन्दिरो, उनमेंकी मूर्तियो और दूसरोके धार्मिक कृत्योसे वैसी ही चिढ़ है, फिर भी वे हिन्दू ही है। बाह्यचिन्हो और प्रतीको, रीतियो और रस्मो, मजहब और पूजाके रूपो और विधियोसे भिन्न, लोग दोनो धर्मोके बहुतसे दार्शनिकोंको जानते-मानते रहे है जिन्होने जीवन-मरण और मरणोत्तर जीवनके रहस्योमें गहरी डुबकी लगायी है और ईश्वरके एक होने, आत्माकी अविनश्वरता, भौतिक वस्तुओकी क्षणभगुरता और आध्यात्मिक विषयोके स्थायी महत्त्वके सम्बन्धमे एक ही जैसे मत प्रकट किये है। हिन्दुओका वेदान्तदर्शन और मुसलमानोका सूफीमत दोनो सत्यान्वेषणके कार्यमे एक ही परिणामपर पहुँचते है फिर चाहे एक दूसरेसे या अन्य किसी सामान्य सूत्रसे उन्होने प्रेरणा प्राप्त की हो अथवा नही। डाक्टर भगवानदास जैसा दोनोके साहित्यका पारगत विद्वान् दोनोके प्रामाणिक ग्रन्थोसे समानार्थक अवतरण आसानीसे दे सकता है।

'मुसलमानी रहस्यवादका तीसरा साधन भारतीय है। पूर्वके एक अध्यायमें दिखाया जा चुका है कि भारत और फारसकी खाड़ीके बीच घनिष्ठ व्यापारिक सम्बन्ध था, व्यापारके साथ विचारोका आदान-प्रदान भी निश्चय ही हुआ होगा। यह बात तर्कसिद्ध है कि जब भारतीय इतिहास और तलवार, भारतीय सुवर्ण और राज जैसी भौतिक उपयोगकी वस्तुएँ और चित्रित मेहराब तथा बीचमे उभरे हुए गुम्बदसी कलात्मक वस्तुएँ फारस और इराक पहुँच गयी थीं तब भारतके दार्शनिक विचार भी वहा अवश्य पहुँचे होगे। आरम्भके उमैयाद शाहोके शासनकालमे बहुतसे भारतीय माल-विभागमे काम करते थे। कहा जाता है कि खलीफा मुआवियाने सीरिया और विशेषकर अण्टिओकमे तथा हज्जाजने कासगरमे भारतीयोकी बस्ती ही बसा रखी थी। खलीफाके शहरोमे काली आंखों और जैतूनके रगवाले हिन्दुओके कन्धेसे मुसलमानोंका कन्धा रगड़ा करता था। साम्राज्यके पूर्वी प्रदेश—खुरासान, अफगानिस्तान, सिस्तान और बलूचिस्तान-धर्म-परिवर्तनके पूर्व बौद्ध या हिन्दू थे। बल्खमें एक बड़ा मठ (विहार)

था जिसका निरीक्षक (स्थविर) बरमक नामक एक व्यक्ति था जिसके वंशज अब्बासी खलीफा लोगोके प्रसिद्ध वजीर हुए।

'अरब लोग आरम्भिक कालसे ही भारतीय साहित्य और विज्ञानसे सम्पर्क स्थापित कर चुके थे। हिजरी सन्‌की दूसरी सदीमे ही उन्होने बौद्ध ग्रंथोका भाषान्तर किया था। किताबुलवुद और बिलावा एव सिन्द हिन्द (सिद्धान्त) और शुश्रुद (सुश्रुत) तथा स्रक (चरक) जैसे ज्योतिष और आयुर्वेद विषयक ग्रन्थ, कलीलादमनह (पचतन्त्र) और किताब सिन्दबाद जैसे कथाग्रन्थ तथा तर्कशास्त्र और रणविज्ञान विषयक ग्रन्थ इसके ज्वलन्त उदाहरण है।

'जिन लोगोसे उनका सम्पर्क होता था उनके रीति-रिवाज, रहन-सहन, विज्ञान, धर्म आदिका ज्ञान प्राप्त करनेमे वे बडी तत्परता दिखलाते थे। अल-किन्दीने भारतीय धर्मोपर एक पुस्तक लिखी थी और सुलेमान तथा मसऊदीने यात्रामें सकलित विवरणोको अपनी रचनाओमे स्थान दिया। अल्‌नादीम् अल्-अशरी, अल्-बेरूनी, शाहरास्तनी और बहुतसे अन्य लेखनोने भारतीय धर्मो और दार्शनिक पद्धतियोपर अपनी पुस्तकोमे विस्तारके साथ विचार किया है।

मुसलमानी साहित्यमें बुद्धका सन्तके रूपमे वर्णन किया गया है और सन्त-कथा-लेखक मुसलमानोने बुद्ध सम्बन्धी कथाओको इब्न अधमकी कथाओके साथ मिलाकर एक कर दिया है। जाड़ेमे भ्रमण करनेवाले और किसी जगह दो रातसे अधिक न ठहरनेवाले सन्यासियोसे मुसलमान मनीषियोका सीधा परि-चय था। इन्ही सन्यासियोसे उन्होंने चार नियम--स्वच्छता, पवित्रता, सत्य और निर्धनता--तथा मालाका उपयोग सीखा था।

'इस स्थितिमें निर्वाण विषयक कल्पना, अष्टागमार्ग, योगाभ्यास और चम-त्कार-सिद्धिके विषय इसलाममे फना, तरीका या सलूक, मोरावुलत और करामत या मजाजके नामसे अपना लिये गये तो इसमे आश्चर्यकी कोई बात नही।❀

❀ ताराचन्द--'इन्फ्लुएन्स आव इस्लाम, आन इण्डिया कल्चर।'--पृष्ठ ६५-६७।

'लेकिन जिस व्यक्तिने अपने साहसिक सिद्धान्तोके द्वारा इस्लाम जगत्में हलचल मचा दी वह था हुसेन बिन मनसूसन हल्लाजा। उसने भारत आदि कई देशोका भ्रमण किया और तीन बार मक्काकी यात्रा की। अन्तमे उसके कार्य इतने असह्य प्रतीत हुए कि वह सन् ९२२ मे गिरफ्तार कर लिया गया। चूंकि कबीर, दादू, नानक और दूसरे भारतीय सन्त सूफियोकी ही भाषाका प्रयोग किया करते थे इसलिए मनसूरकी रहस्य-पद्धतिकी सक्षपमे व्याख्या कर देना आवश्यक जान पड़ता है, क्योकि उसके शब्द सूफीमतमे टकसाल हो गये थे।'*

आगे चलकर इब्नअल् अरबी और अब्दुलकरीम जिलीने मनसूरके सिद्धान्तोको अपनी पद्धतियोमे और इब्नअल् फरीद तथा अब्री मईद इब्न अबुल खैरने अपनी कविताओमे स्थान दिया और इन सिद्धान्तोंका प्रभाव भी दूर-दूरके देशोमे फैल गया जिनमे भारत भी है।

जिली हिन्दू धर्मसे परिचित था क्योकि उसने दस मुख्य सम्प्रदायोमे बहिमा (ब्राह्मण) का उल्लेख किया है। ब्राह्मणोके सम्बन्धमे उसने कहा है कि 'ये लोग नबी या फरिश्तेका सहारा लिये बिना ही पूर्णब्रह्मके रूपमे ईश्वरकी आराधना करते है। उसके कथनानुसार ब्राह्मणोके धर्म-ग्रन्थ ईश्वरद्वारा नही बलिक अब्रह्म (ब्रह्म) के द्वारा उनको प्राप्त हुए थे। ये धर्म-ग्रन्थ पाच थे जिनमे पाचवा अत्यन्त दुरुह होनेके कारण ब्राह्मणोंकी शक्तिके परे था! और जो उसे पढ़ पाते थे वे सीधे मुसलमान हो गये।' स्पष्ट ही जिलीद्वारा उल्लि-खित यह पांचवां ग्रन्थ वेदान्त है जिसका अद्वैत दर्शन जिलीकी दृष्टिमे इस्लामसे अभिन्न जान पड़ा।'† जो मुसलमान रहस्यवादी अन्तर्भाव (फना) वाले सयोग (वस्ल) के पथपर अग्रसर होता है उसे सदैव आध्यात्मिक पथ-प्रदर्शककी आवश्यकता होती है क्योकि 'गुरुके अभावमे शैतान उसका इमाम बन बैठता है।' गुरु या आचार्य (पीर या शेख) ही वह केन्द्रीय वस्तु है जिसके चारो ओर सूफी मतका यन्त्र परिचालित होता रहता है। शिष्यको यह उपदेश दिया जाता

---

*वही, पृष्ठ ६९-७०। † वही-पृष्ठ ७७-७८।

है कि वह बराबर अपने गुरु (मुर्शिद) का स्मरण करे, निरन्तर ध्यान धारणा-द्वारा अपनेको उसमे अन्तर्भूत कर दे, सभी मनुष्यो और वस्तुओमें उसको देखे और अन्ततः गुरुमें ही अपनेको लय कर दे। मुर्शिदमे इस प्रकार अन्तर्भूत होने-पर गुरु विभिन्न अवस्थाओसे पार करता हुआ अन्तमे ईश्वरमे उसका अन्तर्भाव करा देता है। मुहम्मदने ईश्वर (इस्लाम) के प्रति आत्मसमर्पणकी शिक्षा दी थी, सूफीमतने गुरुके प्रति आत्मसमर्पणकी शिक्षा दी जो इस पृथिवीपर ईश्वरका प्रतिनिधि स्वरूप है।❀

हाजी वारिसअली शाह भारतके एक सूफी फकीर थे। बाराबकी जिले (युक्तप्रान्त) के देवोशरीफमे उनका मजार है। उनके शिष्य (मुरीद) अपने नामके साथ 'वारिसी' जोड़ा करते है और उनकी सख्या भी बहुत अधिक है। वारिसने सूफी मतकी शिक्षाओका साराश कुछ फारसी शेरोमे दिया है जो इस प्रकार है--

मन हमी गोयम कि पीरे मन ख़ुदास्त,
पेशे--मुनकिर ई सखुन गुफ्तन ख़तास्त,
यक सवाले मी कुनम् ऐ मर्दुमान,
पस जवाब ऊरा देहन्द ऐ मोमिनान,
हेजुम अन्दर नार चू शुद सोख्ता,
रिश्ता अन्दर जामेशुद चू दोख्ता;
पस वरा हेजुम बगोयम् या के नार,
रिश्तारा जामा बगोयम् या के तार;
चके पीरे मन फना फिल्लाह शुद,
रफ्त ब-शरियत हमा अल्लाह शुद;
पस बपाये ऊ कुनम् हरदम सजूद,
वक्फ कर्दम दर रेहशजाने वजूद;

❀ वही--पृष्ठ ८१।

आशिकी अज जुमले आलम् बरतर अस्त,
जा के ई मिल्लत खुदाई अकबर अस्त।

—अर्थात् मैं कहता हू पीर ही मेरा खुदा है। मुनकिर (अविश्वास करनेवाले) के सामने ऐसा कहना भूल है। ऐ लोगो, मैं एक सवाल करता हूं। ऐ विश्वास करनेवालो, इसका जवाब दो। जब लकड़ी आगमें जल जाती है, जब तागेका कपड़ा बन जाता है तब मैं उसे आग कहूं या लकड़ी, तागेको कपडा कहू या तागा? इसी तरह जब मेरा पीर खुदामें मिल गया तो मनुष्यका वजूद (अस्तित्व) खत्म हो गया, सब खुदाका रूप हो गया। इसलिए मैं हरदम उसके कदमोंकी बन्दगी करता हू। मैंने अपनी जिन्दगी और वजूद उसकी राहपर लगा दिया है। प्रेम सारे लोगोंसे बढ़कर है, इसलिए यही खुदाकी मिल्लत है।

हिन्दू धर्मग्रन्थ ऐसे प्रसंगोसे भरे पड़े हैं जो गुरुकी अनिवार्य आवश्यकताका प्रतिपादन करते है—ऐसा गुरु जो साधनाके कठिन और दुर्गम मार्गपर शिष्यका नमन करता है और जिसके अभावमे प्रगति सर्वथा असम्भव है। वस्तुतः 'गुरु ही ब्रह्मा है, गुरु ही विष्णु है, औ गुरु ही महेश्वर है, गुरु ही स्वय परब्रह्म है, और मैं उसी गुरुकी वन्दना करता हू'—यह प्रतिदिनकी सामान्य स्तुति है। गुरुकी शरणमे जाना और उससे दीक्षित होना प्रत्येक हिन्दूका कर्तव्य और आकाक्षा है।

"कबीरके पन्थ (मार्ग, सम्प्रदाय) मे गुरुका वही स्थान है जो सूफीमतमें। सूफियोके सम्बन्धका यह कथन कि 'उनमे परमेश्वरकी आराधना मनुष्यकी ही आराधना है" इसमे भी उसी रूपमें मान्य है क्योंकि कबीरका कथन है—गुरुको ही गोविन्द (ईश्वर) मानो' बल्कि इससे भी बढ़कर—

'अगर हरि रुष्ट होता है तो बचावकी सूरत रह भी जाती है पर गुरुके रुष्ट होनेपर तो निस्तार ही नही है।'

और सूफी सम्प्रदायकी तरह कबीर-पन्थमे भी 'वास्तविक ध्यान तो गुरुके ही रूपका और वास्तविक पूजन गुरुके चरणोंका है। गुरुका ही शब्द वास्त-

विक पोत है और वही तथ्य अनुभूतिकी दृष्टिसे सत्य है और तीनो लोको और नवो भुवनोमे गुरुसे बढकर कोई नही है।'*

"सूफियोकी तरह नानकका भी यह उपदेश है कि ईश्वरकी दिशामे आत्मा-की यात्रामे गुरुद्वारा पथ-प्रदर्शन सर्वथा आवश्यक है। उनकी पद्धतिमे गुरुका स्थान ठीक वही है जो कबीर-पन्थमे।"†

उत्तर भारतके प्रत्येक हिन्दूके मानसमे कबीर और नानकके नाम ठीक उन्ही व्यक्तियोके नामोकी तरह प्रत्यक्ष होते हैं जो इस्लाम और हिन्दू वेदान्तसे समान रूपसे प्रभावित थे। कबीरकी साखियो और भक्तिके पदोका अनगिनत हिन्दू पाठ करते है और असख्य परिवारोमे वे साय-प्रातः प्रार्थनाके समय गाये भी जाते है।

'इस प्रकार कबीरने भारतीयोका ध्यान एक सार्वभौमिक धर्मकी ओर आकृष्ट किया और एक ऐसा पथ प्रस्तुत कर दिया जिसपर दोनो साथ-साथ चल सके। किसी भी हिन्दू या मुसलमानको इस प्रकारके धर्मके प्रति आपत्ति नही हो सकती थी। कबीरके सन्देशका यही रचनात्मक अश था, पर इसका एक विध्वसात्मक पहलू भी था। वह यह कि उस जगलको साफ किये विना जो प्राचीन पगडण्डियोको ढँके हुए थे, कोई नया रास्ता तैयार करना असम्भव था। इसलिए कबीरने उस सारे ब्राह्य आवरणपर जिसने सत्यको ढँक रखा था या भारतीय सम्प्रदायको एक दूसरेसे अलग कर रखा था, निर्भीक एव रोष तथा कटुतापूर्ण शब्दोसे आक्रमण किया; उन्होने न तो हिन्दुओ-को छोडा और न मुसलमानोको।

'उन्होने हिन्दुओमे बाह्यधार्मिक कृत्य, बलिदान, सिद्धिका लोभ, मौखिक-पूजा, नियमोकी आवृत्ति, तीर्थाटन, उपवास, मूर्ति एव देवी-देवताओकी पूजा, ब्राह्मणोकी प्रधानता, वर्णगत भेदभाव, छूतछात और खान-पान सम्बन्धी दुर्भा-वनाओका परित्याग करनेको कहा जिसपर बुद्धके समयसे ही प्रत्येक सुधारक

---

* वही—पृष्ठ १५८। † वही—पृष्ठ १७६।

जोर देता रहा है। मुसलमानोसे उन्होंने बिलगाव, नबी और उनकी पुस्तकपर अन्धविश्वास, धार्मिक कृत्योमे बाह्याडम्बर, हज, रोजा-नमाज, औलिया, पीर एवं पैगम्बरकी पूजा छोडनेको कहा।

'उन्होने हिन्दू-मुसलमान दोनोसे सभी जीवितोके प्रति श्रद्धाभाव रखने और रक्तपातसे विरत रहने, जाति और पदगत अभिमानका पदत्याग करने, प्रवृत्ति ओर निवृत्तिकी अतिसे वचने और जीवनको समर्पणकी वस्तु समझनेका भी अनुरोध किया। उन्होने बार-बार यह बात दुहरायी है कि हिन्दू और मुसलमान दोनो एक ही है, एक ही ईश्वरकी पूजा करते है, एक ही पिताकी सन्तान है और एक ही रक्तसे उनका निर्माण हुआ है।*

यह बात हरएक आदमी जानता है कि गुरुनानकका सारा उपदेश दोनो धर्मोके मूल सिद्धान्तोका समन्वय मात्र है। 'नानकका सन्देश हिन्दू और मुसलमान दोनोको मिलानेके लिए था। उन्होने यह अनुभव किया कि समाजगत बुराइयोको दूर करनेके लिए धार्मिक सघर्षोका अन्त परमावश्यक है।† नानक अपने प्रति दयाका प्रदर्शन नही करते और दूसरोके प्रति बर्तावमे भी स्वभावत उतने कोमल नही थे। निश्चित, स्पष्ट विचार आदि भले-बुरेके विवेकके साथ उन्होने हिन्दू और इसलाम दोनो धर्मोके अन्धविश्वासो और बाह्याडम्बरोकी कठोर भर्त्सना की है।‡

कबीर मुसलमान और नानक जन्मना हिन्दू थे, फिर भी वे उस सम्मिलनके परिणाम थे जो बाहरी पार्थक्य और विभेदके होते हुए भी जारी था।

केवल दार्शनिक और धार्मिक विचारोमे ही पुनर्मिलनकी यह क्रिया नही चल रही थी, बल्कि व्यवहारके सम्बन्धमे भी ऐसे अनेकानेक मुसलमानोके उदाहरण दिये जा सकते है जिन्होने मन्दिरो और मठोको तथा हिन्दू साधुओं और हिन्दू शास्त्रोके विद्वानोको जागीरें दी थी। जिस प्रकार मुसलमान बादशाहोंद्वारा नष्ट-भ्रष्ट किये गये मन्दिरो और पवित्र स्थानोंका विवरण तैयार किया गया है उसी

---

* वही—पृष्ठ १६३–५। † वही—पृष्ठ १६८। ‡ वही—पृष्ठ १७२।

प्रकार उनके दिये हुए दानो और जागीरो आदिका भी विवरण यदि कोई विद्वान प्रस्तुत कर सके तो यह बहुत बड़ा सेवा-कार्य होगा।

'यदि आपसमे सास्कृतिक सहयोग न होता तो मुसलमान शासक हिन्दुओके और हिन्दू शासक मुसलमानोके आराधना-स्थानों और विद्यालयोके निमित्त सनदे आदि क्यो देते ? दक्षिण भारतके इतिहासके विद्यार्थियोको आदिलशाही, कुतुब-शाही और आसफशाही वशोसे ब्राह्मणोको मिली हुई वृत्तियोके अनगिनत उदा-हरण मिले होगे। दिल्लीके बादशाहोके साथ चलनेवाले संघर्षके बाद भी मराठा शासकोने मुसलमानोकी मसजिदोको इसी प्रकारकी वृत्तिया दी थी।'* बिहार-के दो प्रसिद्ध उदाहरणोका भी यहा उल्लेख किया जा सकता है। बोध-गयाके महन्तकी लाखो रुपये सालाना आमदनीवाली जमीदारीका मुख्य अग दिल्लीके मुहम्मदशाहसे मिला था जिन्होने महन्त लालगिरिको, जो सस्थापकसे चौथी पीढ़ीमें हुए थे, एक फरमानद्वारा मस्तीपुर ताराडीह नामक ग्राम दिया था। इसी तरह दरभंगाकी बहुत बड़ी—शायद भारतकी सबसे बडी—जमीदारी भी वर्तमान महाराजाधिराजके पूर्वजको उनकी विद्वत्ता और सज्जनताके उप-लक्ष्यमे अकबरसे मिली थी।

'हिन्दू प्रजाजनोको शिक्षाका प्रोत्साहन देनेके लिए उसने (शेरशाहने) जागीरें दी थी जिनका प्रबन्ध भी प्रजा ही करती थी। इसी उदार नीतिके कारण सभी जातियो और धर्मोके लोगोको वह प्रिय था।'†

कुछ अन्य उदाहरणोका भी, जो मुझे डाक्टर सैयद महमूदसे प्राप्त हुए है यहा उल्लेख किया जा सकता है।

काश्मीरका सुलतान जैनुल आबदीन अमरनाथ और शारदा देवीके मन्दिरका दर्शन करने जाया करता था और तीर्थयात्रियोके आरामके लिए वहा धर्मशालाए बनवायी थी।

---

* अतुलानन्द चक्रवर्ती—'काल इट पालिटिक्स', पृष्ठ ४४।

† ईश्वरीप्रसाद—'हिस्टरी ऑव मुसलिम रूल इन इण्डिया', पृष्ठ ३२९।

सन् १७८० मे हरद्वारपर नजीबाबादके पठानोका शासन था। नवाबने वहा हिन्दू तीर्थयात्रियोके आरामके लिए बड़ी-बडी धर्मशालाएं बनवा दी थी जो आज भी मौजूद है और हिन्दुओके अधिकारमे है।

सन् १५८८ मे गुरु अर्जुनदेवने अमृतसरमे एक तालाब खुदवाया और उसी साल प्रार्थना-मन्दिर बनवानेका विचार किया। इस हर मन्दिरकी नीव एक मुसलमान फकीरने जिसका नाम मिया पीर या बालापीर था, रखी थी। (सरदार ऊधम सिहकृत 'हिस्टरी ऑव दि दरबार ऑव अमृतसर')।

आलमगीरके शासनकालके प्रसिद्ध इतिहास-लेखक बटालाके मुशी सुजानरायने अपनी 'खुलासतुल तवारीख' नामक पुस्तकमे देपालीवाल नामक ग्रामका उल्लेख किया है जो कालानूरके पास है। यहा शम्शुद्दीनका मकबरा है जिसका बहुतसे लोग दर्शन करने जाया करते है। उसने लिखा है कि 'हिन्दू और मुसलमान दोनों जातियोके लोगोकी शाह शम्शुद्दीनके प्रति बड़ी भक्ति है, लेकिन दीपाली नामक हिन्दूकी भक्ति अन्य हिन्दुओ और मुसलमानोसे अधिक सिद्ध हुई। शाह दरयायीकी मृत्युके बाद मुसलमान न होते हुए भी दीपाली हिन्दू मुसलमान दोनो जातियोकी रायसे मकबरेका सरक्षक और निरीक्षक नियुक्त किया गया।....कुछ वर्ष पहले मुसलमानोने हिन्दू निरीक्षकको पृथक् करा देनेका प्रयत्न किया, यहातक कि इसके लिए धार्मिक कारण भी रखे गये, पर आलमगीरी हुकूमतने इस प्रयत्नको सफल नही होने दिया। आलमगीरके शासनके तीसरे वर्षमें, यह पुस्तक लिखते समय हिन्दू ही उस मकबरेके प्रबन्धक है।

हैदराबाद (दक्षिण) मे इस समय भी एक मशहूर बुजुर्ग (पीर) के दरगाहका संरक्षक (मुतवल्ली) एक ब्राह्मण परिवार है। निजामने दरगाहको एक बड़ी जागीर दे दी है और जनता भी भेट पूजा चढ़ाती है। मुसलमानोने हिन्दू मुतवल्लीको हटानेकी कोशिश की पर निजामने इसे स्वीकार नही किया।

आज भी हैदराबाद-स्थित सीताराम मन्दिर और माहोर (आदीलाबाद) के एक अन्य मन्दिरको निजामकी ओरसे वृत्ति मिली हुई है जिसकी वार्षिक

आय ५० या ६० हजार है। नन्देरके सिख गुरुद्वारेको निजामकी ओरसे मिली हुई जागीरकी वार्षिक आय २० हजार रुपया है।

अहमदशाह बहादुर गाजीने वृत्तिके सम्बन्धमे सन् ११६७ हिजरीमे फारसी-मे कुछ सनद दी थी जो इस आशयकी थी—

'अकबराबाद' जिलेके अचनेरा कस्बेके जमीदारो और किसानोको विदित हो कि १७ बीघे मुआफी (बेलगान) जमीन शीतलदास वैरागीको श्रीठाकुर-जीके भोग और नैवेदके लिए पुण्यार्थ दी जाती है जिसमे इस जमीनकी आयसे उक्त वैरागी ठाकुरजीकी पूजा आदिका खर्च चला सके।

'अचनेरा बाजारके चौधरीको मालूम हो कि उसे ठाकुरजीके लिए २० भार (नाप) गल्ला देना चाहिये। उक्त वैरागी इससे वचित न हो। ता० ३ रम-जान, ११३९ फसली।

शहाबुद्दीन खाकी ओरसे चिचवादके प्रसिद्ध गणेश-मन्दिरके खर्चके लिए दी गयी जागीरका कौलनामा—

चिचवाद, परगना पूनाके मूरत गोसाईके नाम, जिसके सम्बन्धमें खान-इ-हिकमत निशानने सूचित किया है कि वह कौलनामा (दानपत्र) चाहता है, इसलिए लिखित दानपत्र दिया जा रहा है कि अपने आदमियो और सम्बन्धियोके साथ ग्राममे रहे और वहाकी भूमिको उर्वरा और उन्नत बनाये। खुदा आजमके रहमसे वह किसी मुसीबतमे न पड़े या उसे नुकसान न पहुचे इसलिए कबूलियत-नामा लिखा गया—ता० १२ जेकाद, १३२६ हिजरी।

इलाहाबादकी ऐसी ही जागीरोके सम्बन्धमे दो फरमान है। इनमेसे एक प्रसिद्ध महेश्वरनाथके मन्दिरके पुजारियोको औरगजेबकी ओरसे लिखा गया है।

औरगजेबने ग्राम बस्ती, जिला बनारसके गिरिधर वल्द जगजीवन और महेशपुर, परगना हवेलीके जदुमिश्र, एव पण्डित बलभद्र मिश्रको, जो सबके सब पुजारी थे, जागीरे दी थी।

औरगजेबने मुल्तानके तुतलामाई मन्दिरके लिए, जो अब भी मौजूद है, कल्याणदासको १०० रुपया खर्च देना मजूर किया था।—मुलतान जिलेकी बन्दोबस्त रिपोर्ट ।

सुलतान मुहम्मद मुरादबख्शने ११५३ हिजरीमे उज्जैनके भण्डारसे रोज चार सेर घी देना मंजूर किया था जिसमे महाकालके मन्दिरमे रोज रातको रोशनी की जा सके।

साधारण रूपसे कहा जा सकता है कि बहुतसे मुसलमान बादशाह और शासक विज्ञानके बहुत बडे सरक्षक थे और केवल फारसी और अरबी नही बल्कि भारतीय साहित्य और विज्ञानके अध्ययनके लिए भी प्रोत्साहन दिया। भारतमें विद्याकी उन्नतिके लिए उन्होने जो कुछ किया है उसे संक्षेपमे भी दे सकना सम्भव नही है। 'सम्राट्के सरक्षणमे भिन्न विषयोके कई सस्कृत ग्रन्थोका अनुवाद फारसी और अरबीमे हुआ। इसके अलावा ऐसे कोड़ियो मुसलमान सरदार थे जिन्होने स्वय सस्कृतका अध्ययन किया और इसे अमित सरक्षण प्रदान किया। उनमेसे बहुतोने हिन्दुओकी विद्या मुसलमानोके लिए सुलभ बनानेके विचारसे सस्कृत ग्रन्थोका भाषान्तर किया। हिन्दू-छात्रोके पाठ-क्रममे सस्कृत ग्रन्थ प्रायः रखे जाते थे। साराश यह कि यथासम्भव हर तरहसे सस्कृतको प्रोत्साहन दिया जाता था।* डाक्टर जेम्स एच० कजिन्सने मुसल-मानी कालमे भारतकी शिक्षाके सम्बन्धमे लिखते हुए कहा है 'मुसलमान बादशाह और शाहजादे स्वय विद्यार्थी बनने और बौद्धिक रुचिके विषयमे हिन्दू सस्कृति भी सम्मिलित कर लेते थे। मुसलमानी साहित्यिक शिक्षामे हिन्दू साहित्य बिना किसी प्रतिबन्धके वैसे ही मिल रहा था जैसे मुगल चित्रकला राजपूत चित्रकलामे मिलती जा रही थी। प्राचीन हिन्दू ग्रन्थोका फारसीमे अनुवाद भी किया गया। परिणामतः फारसी सस्कृतिका हिन्दू सस्कृतिपर प्रभाव भी पडा।'†

आज भी हिन्दू लोग मुसलमानोकी ही तरह बहुत बडी सख्यामे मुसलमान फकीरोके दरगाह या मजारपर या उर्समेलोके अवसरपर सारे भारतसे अजमेर शरीफ जैसे स्थानपर और बिहार प्रान्तसे बिहार शरीफ, मनेर शरीफ और फुलवारी

---

* एस० एम० जाफर : एजुकेशन इन मुसलिम इण्डिया, पृष्ठ १५।

† वही—पृष्ठ १५ (७-६-१९३५के ईस्टर्नटाइम्ससे उद्धत)

शरीफ पहुंचा करते हैं। मुसलमान फकीरोंके साथ बहुतसे हिन्दुओका बहुत कुछ वैसा ही सम्बन्ध है जैसा गुरु और चेले तथा आचार्य और शिष्यके बीच हुआ करता है।

मुसलमानोंके मुहर्रमके त्योहारमे बहुसंख्यक हिन्दुओके सम्मिलित होने-की बात सारे उत्तर भारतमें सर्वत्र प्रसिद्ध है। कुछ ही काल पहले सम्मि-लित होनेवाले हिन्दुओंकी संख्या शायद मुसलमानोंसे अधिक ही हुआ करती थी; यह सिर्फ इस कारणसे कि हिन्दू मुसलमानोंसे बहुत अधिक है। हिन्दू लोग सिर्फ जुलूसमें ही शामिल नहीं होते थे, बल्कि वे लोग भी मुहर्रम उसी तरह मनाते थे जिस तरह मुसलमान लोग अपने घरोमे मातम और इबादतके दिनके रूपमे मनाते हैं—जब कि न तो कोई आनन्दोत्सव हो सकता था और न विवाह या गृहप्रवेश आदि जैसा कोई शुभ कार्य। बहुतसे हिन्दुओका अपना निजी ताजिया या सीपर हुआ करती थी और हिन्दू लड़के हरी पोशाक ओर बिल्ला (जो बिहारमे बद्धी कहलाता है) पहने तथा पानीका मशक लिये हुए पूरे पैक और बहिश्ती बने नजर आते थे। तेग और तलवार, गदका ओर लाठी तथा बहुतसे दूसरे हथियारोके खेलोंमें हिन्दू अखाड़े मुसलिम अखाड़ोसे होड़ लेते थे। इससे भी बढ़कर बात यह थी कि अखाड़े हिन्दुओ ओर मुसलमानोके अलग अलग न होकर प्रायः दोनोंके मिले हुए होते थे।

बाजे-गाजेके शोरगुलके साथ मुहर्रमका जुलूस मसजिदके सामनेसे गुजरने-पर कोई आपत्ति नही की जाती थी, और मसजिदके सामने हिन्दुओके गाने-बजानेपर जैसा सिर-फुड़ौवल या उससे भी भयंकर घटनाएं आज हुआ करती है पहले नहीं हुआ करती थी। विचित्र बात तो यह है कि हिन्दू जुलूसोके जिस बाजे-पर कही-कही मुसलमानोंद्वारा आपत्ति की जाती है उसके बजानेवाले प्रायः पेशे-वर मुसलमान ही हुआ करते हैं। इसी प्रकार वह गाय भी, जिसकी बकरीदके अवसरपर कुर्बानी उन हिन्दुओके भड़क उठनेके कारण हुआ करता है जो शहरों और विशेषकर छावनियोंमें मांस या खालके लिए रातदिन उसका

कत्ल किया जाना बर्दास्त करते रहते हैं, गाय प्रायः किसी हिन्दूकी ही होती है जिसे वह पैसेके लोभवश किसी मुसलमानके हाथ, उसके खरीदनेका उद्देश्य जानते हुए बेच डालता है।' दूसरी ओर बाबर और बादके मुसलमान शासकोंका उदाहरण है जिन्होंने अगर गोवधका बिल्कुल निषेध न भी किया तो कमसे कम हिन्दुओंकी भावनाका आदर करनेके लिए गोवधसे विरत रहनेपर अवश्य जोर दिया। ऐसे बहुतसे सम्भ्रान्त मुसलमान परिवार हैं जो पड़ोसी हिन्दुओंकी भावनाका विचार कर कभी गोमांसका व्यवहार ही नहीं करते। 'ऐसा जान पड़ता है कि ईदके मौकेपर गायका वध नहीं किया जाता था क्योंकि कहा गया है कि उस दिन (ईदके दिन) जो व्यक्ति समर्थ हो वह अपने घरमें बकरा हलाल करे और वह दिन एक बड़े त्योहारके रूपमें माने।'*

इस स्थलपर जहीरुद्दीन मुहम्मद बादशाह गाजी (बाबर) की शाहजादा नसीरुद्दीन मुहम्मद हुमायूंको—जिसे ईश्वर चिरायु करे—राज्यकी शक्तिवृद्धिके निमित्त लिखी गयी वसीयतको उद्धृत करना उपयुक्त होगा—

'प्रिय पुत्र, भारतके साम्राज्यमें अनेक धर्मोंका पालन करनेवाले व्यक्ति निवास करते हैं। ईश्वरको धन्यवाद है कि उन्होंने ऐसा साम्राज्य तुम्हें प्रदान किया। तुम्हारा कर्तव्य है कि तुम अपने हृदयसे ऐसी सभी भ्रामक धारणाएँ निकाल बाहर करो जो तुमने विभिन्न धर्मोंके प्रति बना रखी हों। प्रत्येक व्यक्तिके प्रति उसके धर्मानुकूल न्याय करो। गायकी कुर्बानी विशेष रूपसे बन्द कर दो। कारण, उसके रहते तुम भारतीय जनताके हृदयको नहीं जीत सकते। तुम्हें ऐसा प्रयत्न करना चाहिये जिससे तुम्हारी प्रजा हृदयसे राजभक्त बन सके।

'किसी भी सम्प्रदायके मन्दिर और धर्म-स्थानको नष्ट न करो। शासनका नियम यही है। न्याय ऐसा करो जिससे प्रजा राजाके प्रति और राजा प्रजाके प्रति सन्तुष्ट रहे। इसलामका प्रचार जुल्मकी तलवारकी अपेक्षा दया और उदारताकी तलवारके सहारे अधिक व्यापक रूपमें हो सकता है।

---

* ईश्वरीप्रसाद—'ए शार्ट हिस्टरी ऑव मुसलिम रूल इन इण्डिया' पृष्ठ ७३८

शीया और सुन्नियोंके धार्मिक मतभेदोंकी उपेक्षा करो अन्यथा इसलामकी कमजोरी प्रकट होगी।

'ऐसा प्रयत्न करो जिससे विभिन्न विश्वासोवाली प्रजा उसी भांति आपसमें मिलकर एक हो जाय, जिस भांति मानवशरीरके भीतर चारो तत्व आपसमें मिलकर एक हो गये है और सारा राज्य विभिन्न मतभेदोसे सर्वथा मुक्त हो जाय। प्रेम प्रसारक सौभाग्यवान तैमूरलंगके सस्मरणोको सदैव अपने नेत्रोके सम्मुख रखो ताकि तुम शासनके कार्योमें दक्ष हो सको।* जमादिउल अव्वल ९३५ हिजरी।'*

मुसलमानोकी सहिष्णुताके कुछ उदाहरण, जो मुझे डाक्टर सैयद महमूद-द्वारा उपलब्ध हुए है, यहां दिये जा रहे है—

प्रसिद्ध पुर्तगीज इतिहासज्ञ फरी सौजाने 'दक्खिनकी हालात' मे लिखा है कि 'हिन्दू और मुसलमान एक दूसरेकी मदद किया करते थे और मुसलमान राजा हिन्दुओंको उच्च और सम्मानित पदोपर नियुक्त किया करते थे। अर्थात् उस समय हिन्दुओके विरुद्ध कोई भेदभाव न था। वे बिना किसी बाधाके अपने धार्मिक कृत्य और उत्सव किया करते थे। मुसलमान हिन्दुओकी धार्मिक भावनाओंके प्रति परम आदर प्रदर्शित किया करते थे।

× × ×

औरंगजेबने शाहजहां और उनके मन्त्रियोंसे कितने ही योग्य हिन्दुओकी नियुक्तिके लिए सिफारिश की थी। जेसे, इलिचपुरकी दीवानीका पद रिक्त होनेपर उन्होंने रामकरण नामके एक राजपूत अफसरके नामकी सिफारिश की परन्तु शाहजहांने कुछ कारणोंसे यह सिफारिश स्वीकार नही की। औरंगजेबने उन्हें दुबारा लिखा कि इस पदके लिए इनसे उपयुक्त व्यक्ति मिलना असम्भव है। रुकात आलमगीरी, भाग १, पृष्ठ ११४। रुकात आलमगीरी तथा अदबे आलमगीरीमें इस प्रकारकी सिफारिशोंके कितने ही उदाहरण मिल सकते है।

---

*'सर्चलाइट' के ३०।५।१९२६ के अंकमें प्रकाशित बाबरकी वसीयतका अनुवाद, जिसकी नकल कोल्हापुरके राजाराम कालेजके प्रिंसिपल डाक्टर बालकृष्णनके पास थी।

सर अलफ्रेड लायलने 'एशियाटिक स्टडीज' के पृष्ठ २८९ मे लिखा है किन्तु उनमें (मुसलमान शासकोंमें) भारतवासियोंका मत परिवर्तन करानेकी भावनाका नाम भी न था यहांतक कि उच्चपदस्थ मुसलमानोंके लिए यह आवश्यक भी न था कि उनका धार्मिक विश्वास ठीक वैसा ही हो जैसा कि शासकोंका था।'

आमतौरसे लोगोंकी यह धारणा है कि औरंगजेबने हिन्दुओंको जबरन मुसलमान बनाया, किन्तु निम्नलिखित एक अद्भुत उदाहरणसे उसके रुखका पता चल जायगा—'शाहजहांने पुनः पुनः आज्ञा उल्लघन करनेके अपराधमें वन्धेराके राजा इन्द्रमणिको कैद कर रखा था। औरंगजेब जब दक्षिणके सूबेदार नियुक्त हुए तो उन्होने उनकी रिहाईके लिए शाहजहासे जोरदार सिफारिश की किन्तु शाहजहा इन्द्रमणिपर इतने नाराज थे कि उन्होने औरगजेबकी सिफारिश अस्वीकार कर दी और उन्हें लिखा कि इन्द्रमणिने पुनः पुनः ऐसे ही कार्य किये है जिनसे मै क्रुद्ध होऊँ किन्तु यदि वह मुसलमान बनना स्वीकार कर ले तो उसकी रिहाई हो सकती है। औरगजेबने इसका तीव्र विरोध किया और शाहजहाको लिखा कि यह शर्त अव्यवहार्य अबुद्धिमत्तापूर्ण और दूरदर्शिता-शून्य है। उन्हें यदि छोड़ना है तो उन्ही शर्तोपर उन्हे छोड़ देना चाहिये जो शर्ते वे स्वय स्वीकार करें। इस विषयमें औरंगजेबने प्रधानमन्त्री शफाउल्ला खाको जो पत्र लिखा था वह 'अदबेआलमगीरी' में देखा जा सकता है।

ख—सामाजिक जीवन

हिन्दुओं और मुसलमानोंने एक दूसरेके सामाजिक जीवन तथा रीति-रिवाजों-पर जो प्रभाव डाला वह कम महत्वपूर्ण नही है। यह प्रभाव मानव-जीवनके जन्म, विवाह और मृत्यु इन परम महत्वपूर्ण अवसरोपर प्रचलित रीति-रिवाजों और उत्सवोंसे भली भांति ज्ञात हो सकता है। यहां मैं थोड़ेसे ऐसे रीति-रिवाजोंका वर्णन कर रहा हूँ जो बिहारके मध्यम श्रेणीके अनेक हिन्दुओं और मुसलमानोंमें लगभग समान रूपसे प्रचलित हैं।

घरोंमे बच्चेके जन्मपर गीत गानेकी आम प्रथा है। ये गीत 'सोहर' कहलाते हैं। आसपास मुहल्लोंकी तमाम स्त्रियां एकत्र होकर ये गीत गाती हैं और अन्य उत्सवमें सम्मिलित होती है। जच्चाके कमरेके द्वारपर भूतप्रेतादिसे रक्षाके निमित्त आग जलती रहती है तथा लोहेका एक टुकड़ा, मुठियासीज नामक कांटेदार वृक्षकी डाल तथा ऐसी ही अन्य वस्तुएँ रख दी जाती है। जन्मके छठे दिन 'छठी' मनायी जाती है। उस दिन माता और बच्चेको स्नान कराया जाता है। बच्चेको गोदमे लेकर माता आकाशकी ओर देखती है तथा तारोको गिनती है। बीसवें दिन 'बिस्तौरी' और पचासवे दिन 'छल्ला' उत्सव मनाया जाता है। बच्चेके जन्मदिनसे लेकर 'छठी' तक जच्चा अपवित्र समझी जाती है और उसे अन्य व्यक्तियोका भोजन स्पर्श करनेकी मनाही रहती है। कट्टरपन्थी इसलाम धर्ममे घरोमे भूतप्रेतादिके घूमनेकी और स्पर्श करनेसे भोजनकी अपवित्रताकी भावनाका कोई स्थान नही है। ये दोनो भावनाएं उसके लिए विदेशी हैं। वही बात जन्मके उपरान्त किसी निश्चित दिनपर बच्चेके स्नानके सम्बन्धमें है। परन्तु मुसलमान गृहस्थोके यहां भी ये प्रथाएं हिन्दुओंकी भाति ही प्रचलित हैं और वे इन्हें इसी भाति मनाते है।

बच्चा जिन बालोके साथ जन्म लेता है उनका क्षौर कराना भी हिन्दुओं और मुसलमानोके यहा महत्वपूर्ण कृत्य समझा जाता है। हिन्दुओको यहां इसे 'मुण्डन' कहते है और मुसलमानोके यहां 'अमीका'। सम्भव है इसका कोई धार्मिक महत्व हो परन्तु इसके मनाये जानेकी पद्धतिमें अद्भुत साम्य है।

इसलाममे विवाह कानूनी दृष्टिसे एक ठेका समझा जाता है। दूल्हा और दुलहिन पति और पत्नीके रूपमे रहना स्वीकार कर लेते है और अन्य ठेकोकी भाति इस ठेकेपर भी लोगोकी गवाही होती है तथा स्वीकृतिके पूर्व विचार किया जाता है। यह ठेका रद्द भी किया जा सकता है किन्तु उस स्थितिमें क्षति-पूर्त्ति करनी होती है। विवाहके अवसरपर ही यह निश्चित कर दिया जाता है कि क्षति-पूर्त्तिके निमित्त कितनी रकम देनी पड़गी। विवाह सम्बन्ध भग न होनेतक यह रकम नही देनी पड़ती। विवाहोत्सवका एक महत्त्वपूर्ण

अंग और है। वह है गवाहोंके सम्मुख वर-वधू—दोनों पक्षके लोगोंमें समझौता। इसमें विशेष विलम्ब नहीं लगता और चन्द मिनटोंमें ही सारी कार्रवाई पूरी हो जाती है। 'निकाह'—बस इतना ही है। इसको यथावसर 'शादी'-के नामसे मनाये जानेवाले उत्सवसे पृथक् कर सकते है।

हिन्दुओंके यहां विवाह एक पवित्र संस्कार समझा जाता है। सिद्धान्ततः वह अविच्छेद्य है। उस समय जो प्रतिज्ञाकी जाती है वह धार्मिक प्रतिज्ञा है और उसके साक्षी केवल मनुष्य ही नहीं, सूय और चन्द्र, अग्नि और पृथिवी, जल और पाषाण भी रहते है जिनका अस्तित्व मानवके अनन्तमे एकाकार होनेके उपरान्त भी बना रहता है। विधिवत् करनेपर इस संस्कारमें बड़ा विलम्ब लगता है। इससे ऐसा जान पड़ेगा कि दोनोंकी विवाह-पद्धतिमें मूलतः अन्तर है। किन्तु व्यवहारतः जहां हिन्दू और मुसलमान दोनों ही अपनी-अपनी धार्मिक रीतिसे मूल कृत्य सम्पन्न करते है वहां अन्य पद्धतियां, धार्मिक दृष्टिसे आवश्यक नहीं है, अनेक अंशोमें एक दूसरेसे मिलती-जुलती है। विवाहका धूम-धड़क्का और बारातका जुलूस, दावतें और उत्सव, महिलाओंद्वारा इस अवसरपर गाये जानेवाले गीत,उपहार, मनोविनोद, हंसी मजाक आदिमें पूर्ण साम्य है। इसलाममें धूम-धड़क्केकी मनाही की गयी है, हिन्दू धर्ममें न तो उसका आदेश ही है और न मनाही ; पर आज दोनो सम्प्रदायोमे विवाहके अवसरपर होनेवाले उत्सवको देखकर उसमें भेद करना कठिन है।

इसका विस्तृत विवरण दे देना अनुचित न होगा।

विवाहके अवसरपर बिहारके मुसलमानोंमें जो प्रथाएँ, रीति-रिवाज और उत्सव प्रचलित है उनपर हिन्दुओंकी प्रथाओं, रीति-रिवाजों और उत्सवका पर्याप्त प्रभाव पड़ा है। ऊपर लिखा जा चुका है कि मुसलमानी विवाहमें 'निकाह' परम आवश्यक संस्कार है। उसका उत्सववाला अंश 'शादी' कहलाता है पर प्रायः दोनों साथ ही साथ होते है। किन्तु कभी-कभी 'निकाह' और 'शादी' साथ-साथ न होकर भिन्न-भिन्न स्थानों और अवसरोंपर होते है। शादीके अवसरपर वरकी हैसियतके अनुरूप गाजेबाजे और धूमधड़क्केसे उसकी बारात वधूके यहां जाती है। वहां

वह साधारणतः श्वसुरके मकानमें नहीं, प्रत्युत अन्यत्र और प्रायः बाहर तम्बुओं और डेरोंमें ठहरायी जाती है। बारातकी विदाईके पूर्व वर और वधू दोनोंके यहां कुछ रस्में अदा की जाती हैं। एक रस्म 'रतजगा'के नामसे प्रसिद्ध है। इसमें स्त्रियां सारी रात जागती रहती है और गुलगुला तैयार करती हैं। दूसरे दिन 'मंडवा' की रस्म होती है। इसमें मकानके भीतरी आगनमें ऊंचे बांसोंपर एक तम्बू ताना जाता है। तीसरे दिन 'कन्दूरी' की रस्म होती है। इसमें भोजन पकाकर मृत व्यक्तियोके नामपर बांटा जाता है। केवल सैयद स्त्रियोंको ही यह भोजन लेने और खानेका अधिकार है। चौथे दिन बारात रवाना होती है और वधूके यहां पहुँचती है। विवाहके कुछ दिन पूर्वसे वधूको मायू या मांजा करना पड़ता है। उस समय घरके भीतर ही रहना होता है और घरकी कुछ चुनी हुई स्त्रियां ही उससे मिलने पाती हैं। प्रतिदिन उसे उबटन लगाया जाता है तथा वह केवल विवाहके दिन ही बाहर निकलती है।

हिन्दुओंमें विवाहसे दो एक दिन पूर्व किसी शुभ दिनपर 'मंडप' या 'मंड़वा' गाड़ा जाता है। एक विशेष पूजा होती है। जिसमें पितृ और पूर्वजोंका आवाहन किया जाता है और उनसे प्रार्थना की जाती है कि वे नवदम्पतिको आशीर्वाद देकर इस मंगल समारोहको सफल बनायें। कन्याका तेल चढ़ता है, उबटन होता है। यह परम महत्त्वपूर्ण संस्कार समझा जाता है। कहा ही गया है कि 'तिरिया तेल हमीर हठ चढ़ै न दूजी बार!' विवाहके कई दिन पहलेसे कन्या सबसे अलग रखी जती है। इन दिनों वह स्नान भी नहीं करने पाती। इन्हीं सब कारणोसे वह अत्यधिक मैली कुचैली और दुर्बल दिखाई पड़ती है। विवाहके दो एक दिन पूर्व समारोह पूर्वक उसे स्नान कराया जाता है। ब्राह्मण भोजन तो हिन्दुओंके यहां साधारण बात है। ऐसे अवसरपर उसका आयोजन रहता ही है। हाथी, घोड़ों, आजकल मोटरकारों और रात्रिके समय गैसबत्ती, रोशनी, बाजा आदि वस्तुओंसे सजी हुई बारातको देखकर यह पहचानना कठिन होता है कि यह बारात किसी हिन्दू है अथवा मुसलमान की। मुसलमानोंकी भांति हिन्दुओंकी बारात भी किसी दूसरेके मकान अथवा तम्ब रावटियोंमें

टिकायी जाती है। इसका एक मुख्य कारण यह भी है कि कन्याके पिताके घरमें इतना स्थान प्रायः नही होता कि वह सारी बारातको अपने घर टिका सके। हिन्दू हो या मुसलमान सबके यहां यही होता है।

बिहारके हिन्दुओमें जब बारात कन्याके मकानपर पहुँचती है, कन्याके परिवारकी स्त्रियां वरका स्वागत करती है, उसपर जल और अक्षत छिड़कती हैं, उसके माथेपर तिलक लगाती है और उसकी आरती उतारती है। कन्याका पिता भी वरका स्वागत करता है तथा कुछ मुद्रा आदि उसे भेंट करता है। इसे 'परछावन' कहते है। आगत सज्जनोका भी स्वागत होता है और उन्हें हलका जलपान कराया जाता है। इसके उपरान्त बारात जनवासे लौट जाती है। इसके बाद ही कन्यापक्षके लोग, जिनके साथ कुछ स्त्रियां जल और भोजनकी सामग्री लिये रहती हैं, जनवासेमें पहुँचते है और बारातको भोजनके लिए बाकायदे आमन्त्रित करते है और वरके बुजुर्गोको कुछ भेंट दी जाती है। यह 'धुरचक' कहलाता है।

इसके कुछ ही देर बाद बारात कन्याके मकानपर पहुँचती है। वरका बड़ा भाई एक विशेष रूपसे सजायी पेटीमें, जो देखनेमें मन्दिर जैसी लगती है कन्याके लिए वस्त्र, आभूषण, फल मेवा, इत्र आदि लेकर मण्डपमें पहुँचता है और वहांपर बैठी कन्याको ये सब वस्तुएँ भेट करता है। केवल यही एक ऐसा अवसर है जब ऐसा समझा जाता है वरका बड़ा भाई कन्याको देखता अथवा स्पर्श करता है। इसे 'कन्या निरीक्षण' कहते है। इसके बाद ही विवाहकी पद्धति आरम्भ होती है और वर-वधू मण्डपमें लाये जाते है। वधू उन वस्त्रोंको पहनकर मण्डपमें आती है जो वरकी ओरसे भेंट किये जाते है और वर उन वस्त्रोंको पहनकर आता है जो कन्या पक्षकी ओरसे उसे भेंट किये जाते हैं। ईश्वरकी आराधनाके उपरान्त कन्याके मातापिता विधिवत् कन्याको वरके हाथोंमें समर्पण करते हैं। दोनों पक्षके कुछ निकट सम्बन्धी वहां उपस्थित रहते हैं। बिहारमें पर्देका प्राबल्य होनेके कारण इस अवसरपर वरपक्षके केवल वे ही व्यक्ति मण्डपमें रहने पाते हैं जिनका कार्यवश वहां रहना अनिवार्य होता

है, कारण, मण्डपस्थलमें कन्याके घरकी स्त्रियां उपस्थित रहती हैं। बासती आदि तो विवाहके साक्षी माने ही जाते हैं, ईश्वर, सूर्य, चन्द्र, अग्नि, जल, पृथिवी, पत्थर आदि भी साक्षी माने जाते हैं। इन सबसे यह आशा रखी जाती है कि वर-वधू दोनोंको आशीर्वाद देंगे। वर-वधू दोनों ही कुछ मन्त्रोंका उच्चारण करते हैं जिनमें एक दूसरेके प्रति ईमानदार और विश्वस्त होनेका वचन दिया जाता है। इसके उपरान्त वर-वधू अग्निकी परिक्रमा करते हैं और वधूके मस्तकमें वरके सिन्दूरदान करनेके उपरान्त संस्कार पूर्ण होता है। इसे 'सिन्दूरदान' कहते हैं। सिन्दूर महिलाओंके सौभाग्यका चिन्ह है और वे उस समयतक उसे धारण करती हैं जबतक पति जीवित रहता है।

मुसलमानोंमें बारात आनेके उपरान्त 'बरी' की प्रथा है। इसमें बारातवाले वस्त्र, तेल, मिठाई, फूल आदि लेकर बाजे-गाजेके साथ कन्याके मकानकी ओर रवाना होते हैं। ये लोग एक टोकरी जिसे 'सुहागपुरा' कहते हैं, लेकर आगे-आगे चलते हैं। यह टोकरी हिन्दुओंकी टोकरीकी ही भांति होती है और इसमें फल, मिठाई, मसाले, रंगा सूत, चावल आदि सामग्री रहती है। कन्या पक्ष-वालोंको जब ये वस्तुएं मिल जाती हैं तो ये वरके लिए अपनी ओरसे वस्त्र आदि जिसे 'खिलअत' कहते हैं, भेंट करते हैं। वर इन वस्त्रोंको पहन लेता है। तब, यदि पहलेसे नहीं हुआ रहता है तो, 'निकाह' होता है। हिन्दुओंमें जिस भांति वर वधूके मस्तकमें सिन्दूरदान करता है उसी भांति उनके यहां वर वधूके मस्तकमें चन्दन लेप करता है जिसे कि 'मांगभरी' कहते हैं। इस अवसरपर समयानुकूल कविता पढ़ी जाती है और गीत गाये जाते हैं। हिन्दुओंमें भी 'धुरचक' और 'कन्या निरीक्षण' के अवसरपर कविता पाठ होता है और लड़के आपसमें पद्यप्रतियोगिता करते हैं। विवाहके सभी अवसरोंपर हिन्दुओंके यहां भी और मुसलमानोंके यहां भी, स्त्रियां उपयुक्त गीत गाती हैं। ये गीत ध्वनि और आशयमें एक दूसरेसे पूर्णतः मिलते हैं।

बारात कन्याके यहां प्रायः एक दिन ठहरकर वापस लौट पड़ती है। दूसरे दिन वरको मण्डपस्थलमें ले जाते हैं और वहांपर कुछ रस्में अदा की जाती हैं।

इनमें स्त्रियां भी भाग लेती हैं। धार्मिक महत्त्व न होनेपर भी ये रीति-रिवाज प्रचलित हैं और स्थान-स्थानपर इनमें कुछ भेद है। हिन्दुओंमें वरको उबटन लगानेकी प्रथा है। वह उबटन लगवाना केवल तभी स्वीकार करता है जब उसे कुछ प्राप्ति होती है। सायंकाल स्त्रियां वरको वधूके कमरेमें ले जाती हैं। वहांपर 'कोहबर' होता है। बारातके रवाना होनेके पूर्व 'मुंहदेखी' होती है। उसमें वर-वधू पास-पास बैठे रहते हैं और ऐसा मान लिया जाता है कि वरके सम्बन्धी वधूका मुख देखकर उसे कुछ भेंट देते हैं। सबसे अन्तमें 'बिदाई' होती है। इस बीचमें कन्यापक्षवाले बारातवालोंको भोजन कराते हैं। मुसलमानोंमें भी वरको मण्डपस्थलमें ले जाते हैं और वहां 'रूनुमाई' की प्रथा पूरी की जाती है। इसमें वर-वधू दर्पणमें एक दूसरेका मुख देखते हैं। वर-वधूकी बिदाईके अवसरपर हिन्दुओंमें भी और मुसलमानोंमें भी वरको अनेक वस्तुएं भेंट की जाती हैं। इनमें पहनने-ओढ़नेके वस्त्र, बर्तन तथा घर-गृहस्थीके उपयोगकी अनेक वस्तुएं रहती हैं। वधूके लिए पालकी या वैसी ही कोई कोई सवारी रहती है। हिन्दुओंमें वरको साधारणतः एक गाय तो भेंट की ही जाती है। जो लोग सम्पन्न हैं वे घोड़ा, हाथी और आजकल तो मोटरकार भी भेंट करते हैं।

मुसलमानोंमें वधूको सीधे ही वरके मकानपर नहीं ले जाते बल्कि उसे 'दरगाह' जैसे किसी पवित्र स्थानपर ठहारते हैं। वहांपर वरके घरकी स्त्रियां जल और आमके वृक्षकी डालियां लेकर आती हैं और कुछ रस्में पूरी करती हैं। वरके मकानपर आनेपर वरका बहनोई उसकी सवारी रोकता है और उस समयतक उसे घरमें प्रविष्ट नहीं होने देता जबतक उसे कुछ दक्षिणा नहीं मिल जाती। हिन्दुओंमें भी वरके बहनोईको इसी भांति पालकी रोकनेपर कुछ प्राप्ति होती है और वर-वधूको मन्दिर अथवा 'काली-स्थान' जैसे किसी पवित्र स्थानपर परिक्रमाके लिए ले जाते हैं।

इस भांति हम देखते हैं कि हिन्दू और मुसलमान—दोनोंके यहां समान रीति-रिवाज होते हैं। और मजेकी बात यह है कि इसलाममें ऐसे रीति-रिवाज

का कोई विधान नहीं है और इनमेंसे अनेक रस्में कट्टर और दकियानूसी मुसलमानोंकी दृष्टिमें धर्मके विरुद्ध भी हो सकती हैं।

हिन्दू और मुसलमान दोनों ही अपने-अपने धर्मके अनुसार मृतकोंका अन्तिम संस्कार करते हैं। मुसलमानोमें मुर्दा दफनानेके पहले प्रार्थना की जाती है। इसके उपरान्त मृतात्माके हितके लिए तीसरे दिन (तीजा) अथवा चौथे दिन (चहारुमपर) और फिर दसवें दिन (दसवं) और चालीसवें दिन (चहेलुमपर) भी प्रार्थना की जाती है। मैं नही जानता कि इसलामने मृत्युके उपरान्त इन निश्चित दिनोंपर मृतकके लिए प्रार्थना करनेकी आज्ञा दी है अथवा नही, परन्तु इसमें सन्देह नही कि हिन्दुओके यहां भी दूसरे, सातवें, दसवें अथवा तेरहवें या तीसवें दिन ऐसा ही संस्कार होता है। वे लोग भी उस दिन मृतात्माके लिए जल और पिण्ड भेंट करते है, दरिद्रनारायणोंको भोजन कराते हैं तथा भिक्षा वितरण करते हैं।

हिन्दू धर्ममें ऐसा माना जाता है कि केवल जीवनकालमें ही नहीं, मृत्युके उपरान्त भी विवाह-विच्छेदकी अनुमति नही है। अतः विधवाका पुनर्विवाह नहीं हो सकता। इसलाममे ऐसी बात नही और वहां तो स्वयं पैगम्बरने विधवा विवाहका आदर्श उपस्थित किया है। फिर भी हिन्दू वातावरण और रीतिरिवाजोंने मुसलमानोंपर इतना अधिक प्रभाव डाला है कि उत्तर भारतके प्रतिष्ठित मुसलमान परिवारोंमें, धार्मिक अथवा सामाजिक निषेध न होनेपर भी किसी विधवाका पुनर्विवाह आदरकी दृष्टिसे नहीं देखा जाता।

हिन्दुओंकी वर्ण-व्यवस्थाने भी भारतीय मुसलमानोंको प्रभावित किये बिना नहीं छोड़ा। मुसलमानोंमें जाति-भेद प्रदर्शित करनेके लिए सैयद, शेख, पठान, मलिक, मोमीन, मन्सूर, रायन, कसाब, राकी, हज्जाम, धोबी तथा अन्य कितने ही नाम लिये जा सकते है। इनमें कुछ जातियां तो पेशेके अनुरूप हैं और कुछ जन्म और वंशानुक्रमसे हैं। विधवाओंके पुनर्विवाहकी भांति ही, धार्मिक और स्वाभाविक निषेध न होनेपर भी, विवाहके मामलेमें भी प्रायः यही देखा जाता है कि अपनी जाति या वर्गके भीतर ही लोग विवाह करते हैं। इसमें

अपवाद कम ही देखनेमें आते हैं। पर बात विवाहतक ही नही इनके निकट सम्पर्क-में रहकर कोई भी व्यत्त यह देख सकता है कि ये जाडिअथवा वर्ग बहुत हदतक आगे बढ़ गये हैं और इनमे भी लगभग वैसी ही पार्थक्यकी भवना उत्पन्न हो गयी है जैसी हिन्दुओंमें स्पष्ट रूप देखी जाती है। जैसे, मुस-लमानोंमें एक मुसलमान भगीका स्थान वैसा ही समझा जाता है। जैसा हिन्दुओंमें एक हिन्दू भंगीr। ट्टसामे ऐसे किसी भेद-भावकी बात नही है। दङ्रासङुसके वातावरणका प्रभाव है जिसके कारण भारतके तुसलमानोंमें भी यह बात आ गयी है।

इस सम्बन्धमें यह बता देना आवश्यक है कि असख्य मुसलमान हिन्दू धर्मसे परिवर्तित होकर इसलाममे पहुंचे हैं। इतना अधिक समय बीत जानेपर भी वे अब भी अपने पुरों हिन्दू रीति-रिवाजोको मानते चले आ रहे हैं। उदा-हरणस्वरूप 'मलकाना' राजपूतोंको ले लीङ्ये। लऊग २० वर्ष पूर्व उन्हें पुनः हिन्दू धर्ममें लार्ने प्रयत्नमे अत्यधिक रक्तपात हुआ था। वे आज भी ऐंसी अनेक रस्में मनाते हैं जो उस समय मनाया करते थे ब वे हिन्दू थे। निस्सन्देह मुसल-मानोंमें ऐसी अनेक जातियां हैं जिन्होने इसी भांति अपनी पुरानी प्रथाओं-का त्याग नहीं किया है।

इस बातको सभ जानते हैं कि मुसलमानोके अनेक वर्ग अभी हालत उत्त-राधिकारके उन्ही नियमो और कानूनोंका पालन किया करते थे जिन्हे वे इसलाम स्वीकार करनेके पूर्व मानते थे यद्यपि इस सम्बन्धमें इसलामी कानून. कुछ और है। सिन्ध, गूरात और बम्बई खोजा, कच्छी, मेमन और बोहरा बड़े धनी हैं। केवल भारतके अन्य भागोंमें ही नप इन लोगोका व्यापार दक्षिण और पूर्वी अफ्रीका, अरब, ईरान, मलाया आदि देशोमें भी है। इनमेसे अनेक व्यक्ति १९३७ तक अनेक हिन्दू प्रथाएं रग्र ही, उत्तराधिकारके हिन्दू नियम भी मानते हे हैं। इसी भांति बलूचियों तथा कुछ पञ्जाबी मुसलमानमें उनके अपने कानून और नियम प्रचलित हैं। मोपले 'मरुंक्काथय्यम' कानून मानते हैं। सन् १९३७ में ही एक ऐसा कानून बना जिसके अनुसार शरियत मुसल-

मानोंपर लागू हुई और तबसे किसी विरोधी रीति-रिवाजके लिए उसमें स्थान नहीं रहा।

इसमें सन्देह नही कि हिन्दुओंने मुसलमानके साथ बैठकर भोजन करना कभी स्वीकार नही किया। किन्तु सभी हिन्दू भी तो एक दूसरेके साथ बैठकर भोजन नही करते। ये रूढ़ियां आज भी है और केवल हिन्दुओं और मुसलमानों-के बीच ही नही, हिन्दुओकी विभिन्न जातियो, उपजातियोके भीतर भी वर्तमान हैं। न तो कोई ब्राह्मण राजपूतके साथ बैठकर भोजन करता है न कोई राजपूत किसी वैश्य या कायस्थके साथ। ब्राह्मणोमें भी शाकद्वीपी ब्राह्मण सरयूपारीणके साथ भोजन नही करते और न दक्षिणी ब्राह्मण किसी बंगाली अथवा मैथिल ब्राह्मणके साथ। सभी सरयूपारीण ब्राह्मण एक दूसरेके साथ बैठकर भोजन नही करते और न श्रीवास्तव कायस्थ किसी अम्बष्ठ अथवा कर्ण कायस्थके साथ भोजन करते है। यदि कोई गैर-हिन्दू इन रूढियोकी तहमें प्रविष्ट होना चाहे तो वह पूर्णतः चकित हुए बिना न रहेगा। केवल जातियोंमे ही ये रूढ़ियां सीमित नही है अपितु विभिन्न प्रकारके भोजनो तथा पकानेके ढंगमें भी भेद पड़ जाता है। बिहारमें घीमें तली रोटी यदि अन्य जातिके व्यक्तिद्वारा छू जाय तब भी वह खा ली जाती है परन्तु केवल आगपर पकायी हुई रोटी नही खायी जाती। किन्तु बंगालमें ऐसा नही है। कुछ तरकारियां यदि बिना नमक डाले पकायी जायं तो खायी जा सकती हैं, नमक पड़ जानेपर नही। इस सम्बन्धमें विभिन्न प्रान्तों, जातियों और वस्तुओमे अन्तर रहता है। जो व्यक्ति ऐसे समाजमें उत्पन्न और और बढ़ा-पनपा नही है वह इसके भेद-उपभेदों और उनके वास्तविक तथ्योंको, यदि वस्तुतः उनके भीतर कोई तथ्य निहित है तो नही समझ सकता। इसीसे यदि कोई राजपूत किसी कायस्थका अथवा कोई कायस्थ किसी राजपूतका स्पर्श किया हुआ भोजन करनेसे इनकार कर देता है तो इसमें उसे अपमानका कोई बोध नही होता। सब इसे स्वाभाविक समझते है। अतः इससे उनमें अपमान अथवा हीनताकी भावनाका उदय नही होता। अभी हालतक कथित दलितवर्गके लोग ऐसी बातोंमें किसी प्रकारकी कटुता अथवा घृणाका

बोध नहीं करते रहे हैं। उपर्युक्त बातें साधारण हिन्दू समाजमें प्रचलित हैं, नवशिक्षितों अथवा ब्रह्मसमाज और आर्यसमाज जैसी सुधारक संस्थाओं उनके सम्मेलनों अथवा महात्मा गाधीके आन्दोलनसे प्रभावित लोगोंमें नहीं। इन शिक्षित अथवा सुधरे विचारवालोने अपने जीवनसे ऐसी कितनी धार्मिक रूढ़ियोंको निकाल बाहर किया है और कुछ लोग ऊपरसे इनका व्यवहार करते हुए भी हृदयसे न तो इन्हे स्वीकार करते है और न कोई महत्व ही देते हैं।

हिन्दुओं और उनकी जातिगत भावनाओके सम्पर्कमे रहनेवाले मुसलमान इन धार्मिक रूढियोकी बात भलीभाति समझते है। वे ऐसी बातोका विरोध नही करते। कारण वे जानते है कि ऐसी रूढिया किसी हीनता अथवा उच्चता-की भावनाके वशीभूत होकर व्यवहृत नही होती अपितु पुरातनकालसे प्रथाके रूपमें चलती आ रही है इसीलिए अब भी व्यवहृत हो रही है। इसी कारण वे हिन्दुओंके यहां विवाह और जन्म आदिके उत्सवके समय आमन्त्रित होनेपर उसमें प्रसन्नतापूर्वक सम्मिलित होते हैं और यही हाल मुसलमानोके यहां है। ऐसे अवसरोंपर आमन्त्रित होनेपर हिन्दू भी उनके यहा प्रसन्नतापूर्वक सम्मिलित होते हैं। स्वतन्त्र मैत्रीपूर्ण सामाजिक सम्बन्धके मार्गमे भोजन कभी भी बाधक नहीं हुआ है। हिन्दू और मुसलमान एक दूसरेकी जातिगत भावनाओका आदर करते हुए भी एक दूसरेको खिलाते पिलाते रहे है। यह बात भी मैं साधारण मुसलिम समाजके सम्बन्धमे कह रहा हूं, शिक्षित तथा आधुनिक विचारवाले मुसलमानोके सम्बन्धमें नही। उपर्युक्त बातोंका तात्पर्य यह नहीं है कि मैं जाति प्रथाका औचित्य सिद्ध करनेका प्रयत्न कर रहा हूं अथवा उसकी बुराइयोंको कम करके दिखानेके लिए प्रयत्नशील हू। मैने केवल वास्तविकता दिखानेका प्रयत्न किया है। अब समय बदल गया है और उसके साथ-साथ लोगोंके विचारो, भावो और रुखोमें भी परिवर्तन हो गया है। अतः जहां इस बातकी आवश्यकता है कि ये विभिन्न जातिभेद यथा-शीघ्र मिटाये जायं, विशेषतः इसलिए भी कि अनेक हिन्दू और मुसलमान इनका विरोध कर उठे हैं, वहां इन बातोको अत्यधिक महत्व देना भी अवांछ-

नीय है। यह कहना गलत है कि दोनो सम्प्रदायोमें इसी कारण प्रेम, सद्भाव और सौहार्द्र उत्पन्न नही होता। भूतकालमें भी ऐसी बात न थी और आज भी ऐसी नही है।

प्रायः सभी प्रान्तोमें फिर चाहे वे मुसलिम बहुमतवाले प्रान्त हों चाहे हिन्दू बहुमतवाले, ऐसे असख्य ग्राम है जहा हिन्दू और मुसलमान साथ-साथ रहते हैं। ऐसे गांवोके सम्बन्धमें यह बात सभी जानते है कि वहा हिन्दू और मुसलमानोंमे सच्ची मैत्री और पड़ोसीपनका भाव रहता है और सबलोग आपसमें गावके रिश्ते-के अनुसार एक दूसरेको भाई, चाचा, काका आदि कहकर पुकारते है। अनेक नाम ऐसे भी हैं जो हिन्दुओके यहा भी रखे जाते हैं, मुसलमानोंके यहा भी, विशेषतः नीची श्रेणीके लोगोमें। हिन्दुओके अनेक नाम मुसलमानोंने रख छोडे हैं और मुसलमानोके अनेक नाम हिन्दुओने। व्यक्तिगत नामोतक ही यह बात सीमित नही, गांवो, नगरों, तालाबो तथा ऐसी सब वस्तुओंका जिनका कि कोई नाम हो सकता है, कोई न कोई हिन्दुआना या मुसलमानी अथवा आधा हिन्दु-आना, आधा मुसलमानी नाम रख लिया गया है। इससे कोई मतलब नहीं कि गांवमें हिन्दुओकी आबादी है या मुसलमानोकी या दोनोकी अथवा गांव-पर हिन्दुओंका अधिकार है या मुसलमानोंका।

पुराना ग्रामीण जीवन क्रमशः नष्ट होता जा रहा है। मेरा जन्म बिहारके एक गावमें हुआ। वहीपर मेरा लालन-पालन हुआ और अब भी मैंने ग्रामसे किनारा-कशी नही की है। अत. मै अपने आरम्भिक और युवाकालके अनुभवके बलपर ग्रामोंके उस समयके साधारण जीवनका वर्णन कर रहा हूं जिसे अधिक समय नहीं बीता और जिसके चिह्न आज भी पाये जाते हैं। उस समय प्रत्येक ग्राम अनेक मामलोंमें अधिक या कम मात्रामें आत्मनिर्भर था। उसकी अपनी जमीन थी जिसे गांववाले ही जोतते थे। उसकी अपनी गोचर-भूमि थी और उसके अपने ही मजदूर और कारीगर तथा विभिन्न पेशेवाले लोग थे। इस भांति किसी भी साधरण गावमें हमें किसान और मजदूर, जमींदार और ब्राह्मण, और अनेक स्थानोंमें हिन्दू और मुसलमान एक साथ रहते दिखाई पड़ते थे। अनेक गांवोंमें

उनके अपने बढ़ई और लुहार, नाई और धोबी, कुम्हार और चुड़िहार (मनिहार) तथा मक्का, जौ, मटर, चना तथा सत्तू आदि भूजनेवाले भड़भूजे होते थे। उनके अपने मेहतर, भंगी, डोम, चमार भी होते थे। ग्रामोंके सामाजिक तथा आर्थिक जीवनमे इन सबका अपना महत्व और उपयोग था और इन सबको फसल तैयार होनेपर प्रत्येक किसान इनके कार्य और सेवाका पुरस्कार प्रायः गल्ले-के रूपमें दिया करता था। शादी-विवाह, जन्म-मृत्यु आदिके अवसरोंपर इन लोगोंको विशेष कार्य करना पड़ता था जिसके लिए उन्हें उनकी सेवाका उपयोग करनेवाले अपनी हैसियतके अनुरूप विशेष पुरस्कार दिया करते थे। इनमेसे यदि कुछ व्यक्ति मुसलमान होते तो वे भी अपने हिन्दू भाइयोंके समान ही कार्य करते और इसका वैसा ही पुरस्कार पाते। जैसे, हिन्दुओके प्रायः सभी कृत्योंमें नाईका विशेष कार्य रहता है। चूड़ाकरण, यज्ञोपवीत, विवाह तथा प्रायः प्रत्येक संस्कारमे क्षौर तथा अन्य कार्योके लिए उसकी आवश्यकता पड़ती है। मृतक संस्कारमे क्षौर अत्यन्त आवश्यक कृत्य समझा जाता है। उसमें तथा श्राद्ध-तर्पण और पिण्डदान आदिमे नाईका कार्य पड़ता है। अनेक ग्रामोमे हिन्दू नही उनके स्थानपर मुसलमान नाई ये सभी कृत्य कराते है। वे केवल खाद्य-पदार्थ और जल नही देते। यह सारा सेवाकार्य लेनेमें न तो हिन्दुओको आपत्ति होती है कि यह हमारे धर्म अथवा प्रथाके प्रतिकूल है और न मुसलमान नाई ही ये सब धार्मिक ढंगके सेवाकृत्य करनेमे यह सोचते है कि ये हमारे इस-लामके प्रतिकूल है। प्रत्येक सधवा चूड़ियां पहनती है और वे उसके सौभाग्यका चिह्न समझी जाती है। विवाह तथा अन्य शुभ अवसरोंपर चूड़िया पहनाने और बदलनेवाले प्रायः मुसलमान ही होते है। उनकी स्त्रियां चूड़िया पहनानेके लिए कठोर पर्देवाली सम्पन्न हिन्दू परिवारकी स्त्रियोमें भी जाती हैं और इसपर कोई आपत्ति नहीं की जाती। इसी भांति धोबी और भंगी भी साधारण और विशेष अवसरोंपर अपना कार्य करते रहते हैं। इस बातका कोई विचार नही किया जाता कि वे हिन्दू है या मुसलमान। इसी भांति माली केवल विशेष अव-सरोंपर ही नहीं सभी धार्मिक अवसरों और दैनिक पूजाके लिए पुष्प देता है।

उसके विषयमें भी यह कभी नहीं सोचा जाता कि वह हिन्दू है या मुसलमान। न तो हिन्दुओंको ही अपने देवतापर चढ़ानेके लिए मुसलमान मालीसे पुष्प लेनेमें आपत्ति होती है और न मुसलमान मालीको ही पुष्प देनेमें आपत्ति होती है कि वे मन्दिरमें मूर्तिके ऊपर चढ़ेगे अथवा अन्य धार्मिक कृत्योमें उनका उपयोग होगा। ये सब बाते सैकड़ो वर्षोंसे चलती आ रही है। इनसे स्पष्ट है कि पहले दोनो सम्प्रदायोमे अत्यन्त घनिष्ठ सम्पर्क रहा है। ये सब बातें उसीकी उपज है।

पोशाक

मनुष्यकी पोशाकपर सबसे अधिक प्रभाव उसके निवास-स्थानके जलवायुका पड़ता है। इसलिए भारतके विभिन्न प्रान्तोंकी पोशाकमे अगर अन्तर पड़े तो इसमें आश्चर्यकी कोई बात नही। पहननेवालोकी आर्थिक स्थिति भी इस अन्तरका एक बड़ा कारण है। समाजके निम्नवर्गीय तथा निर्धन लोगों और उसी प्रकार उच्च वर्गके लोगोंकी पोशाकमे कोई विशेष अन्तर नही होता। अन्तर तो वस्तुतः धनियों और निर्धनोके बीच ही विशेष रूपसे हुआ करता है। पण्डित मोतीलाल नेहरू, सर तेजबहादुर सप्रू, डाक्टर सच्चिदानन्दसिह या पण्डित जवाहरलाल नेहरू, या बिहार प्रान्तीय हिन्दू सभाके अध्यक्ष कुमार गंगानन्दसिहकी और लीगके प्रधान नवाब मुहम्मद इस्माईल या चौधरी खलीकुज्जमा या कायदे आजमकी भी हिन्दुस्तानी पोशाकमे किसी विदेशीको साधारणतः कोई अन्तर नहीं जान पड़ेगा। इसी प्रकार सरदार शार्दूल सिंह कवीश्वर या सरदार मंगलसिंह जो सिख हैं, और मौलाना जफरअली या मौलाना अबुलकलाम आजाद की पोशाकमें भी, सिखकी पगड़ीके सिवा, उसे कोई विशेष अन्तर नही मालूम होगा। अगर वह बिहार, बंगाल, पंजाब या युक्तप्रान्तके किसी ग्राममे जाय तो वह मुसलमानोंको जिस पोशाकमें खेतीका काम करते हुए देखेगा उससे उसी काममें लगे हुए वहांके किसी हिन्दूका अन्तर नहीं कर सकता। मै फैज टोपीकी बात नहीं चलाता जो भारतीय नही है और जिसे कुछ ही दिनसे मुसलमान, विशेषकर शिक्षित मुसलमान तुर्कोंकी देखादेखी पहनने लगे हैं, पर स्वयं तुर्कलोग

छोड़ चुके है। पायजामा हिन्दुओंसे ज्यादा मुसल्मान पहनते हैं और कुछ स्थानोंमें यह उनकी खास पोशाक कहा जा सकता है; पर पायजामा पहननेवाले हिन्दुओंकी सख्या भी कम नही है। अधिकाश मुसलमान भी इसे नही पहनते। धोती, जिसका नाम भी सस्कृतसे निकला है, किसी न किसी रूपमे भारतके अधिकाश मुसल-मानोद्वारा काममे लायी जाती है। कोई भी व्यक्ति जिसने ग्रामोको देखा है और नगर तथा ग्राम दोनो जगहोके, विशेषकर ग्रामके मुसल्मानोके सम्पर्कमे रह चुका है, इस बातको अवश्य स्वीकार करेगा।

शारीरिक शृगारकी एक ही जैसी वस्तुएँ पर्दा होते हुए भी 'जनाने'मे प्रविष्ट हो गयी है। बहुतसे गहने हिन्दू और मुसल्मान दोनोके यहा समान रूपसे पहने जाते है और बहुतसे गहने तो ऐसे भी है जिनके हिन्दू या मुसल्मानी नाम, हिन्दू या मुसल्मान चाहे जिसके भी उपयोगमे वे आते हो, ज्योके त्यो बने हुए है। इसी प्रकार साड़ी सारे भारतमे औरतोका सर्वाधिक सामान्य वस्त्र है। हिन्दू और मुसल्मान दोनों जातियोकी स्त्रिया इसे पहनती है। जहा स्त्रियां पायजामा पहनती है, जैसे पश्चिमोत्तर प्रदेशमें, वहा केवल मुसल्मान ही नही बल्कि सिख और हिन्दू स्त्रिया भी पायजामा ही पहनती है। पहाडोपर कडी ठण्ढ होनेके कारण सभी लोग पायजामा ही पहनते है।

पर्दा

भारतका भ्रमण करनेवाले विदेशीका ध्यान एक विशेष सामाजिक प्रथापर अवश्य जायगा। यह प्रथा पर्देकी है जिसे कही-कही 'गोशा' भी कहते है। यह शुद्ध मुसलमानी प्रथा है, हाला कि भारतमे इसकी विधि स्वतन्त्र रूपसे विकसित हुई है। मैंने सुना है कि इस्लामकी शरीअतके मुताबिक स्त्रियोंका घरसे बाहर जाना मना नही है, सिर्फ मुहको और अंगोकी तरह बुरकेसे ढँक लेना जरूरी है। भारतमें उन्हें साधारणतः बाहर नही निकलने दिया जाता; पर यह उन्ही परिवारोमें सम्भव है जिनकी आर्थिक स्थिति ऐसी है कि घरके अन्दर रहकर काम चलाया जा सके; जो लोग गरीब हैं उन्हें लाचार होकर तरह-तरहके कामोंसे बाहर जाना ही पड़ता है।

प्राचीनकालमे हिन्दुओमे पर्देकी चाल नही थी और न इसके लिए किसी तरहका प्रोत्साहन था। सस्कृत ग्रन्थोमे स्त्रियोके सम्बन्धमे ऐसे प्रसंग भरे पड़े हैं जिनमे उनके बाहर आने और हाथ बटा सकने योग्य पतिके सारे कामोमें योग देनेका उल्लेख मिलता है। पर्देकी वर्तमान प्रथा मुसलमानोसे आयी है और जो स्थान मुसलमानोके प्रभावमें विशेष रूपसे रहे हैं वहा इस प्रथाका पालन बड़ी कड़ाईसे किया जाना है। दक्षिणमे, जिसपर मुसलमानोका प्रभाव उत्तर भारतकी तरह विशेष रूपसे नही पड़ सका, कुछ ऐसे वर्गोको छोड़कर जो मुसलमान शासकोकी नकल किया करते थे, यह प्रथा प्रचलित नही है। मुसलमानोकी अपेक्षा हिन्दुओमें आज पर्दा-विरोधी सुधार ज्यादा तेजीसे चल रहा है, क्योकि इस्लाममे तो यह विधि विहित है पर हिन्दू धर्ममे इसका अभाव है।

ऊपर जो विचार प्रकट किये गये है उनसे यह स्पष्ट है कि दोनो समुदायोने एक दूसरेको बहुत प्रभावित किया है और ऐसे धार्मिक भेदोके बावजूद जिनके कारण उनका सामाजिक जीवन बिलकुल भिन्न प्रकारका बन गया है, वे शान्ति और सद्भावपूर्वक साथ-साथ रहे। फिर भी यह सत्य है कि दोनो न तो कभी मिलकर एक हुए और न एक दूसरेको आत्मसात् करनेमें समर्थ हो सका। ऐसा हो सकनेकी आशा भी नही की जा सकती थी, क्योकि इस्लाम विदेशी धर्म होने और अनुयायियोके जीवनका नियमन और नियन्त्रण करनेके लिए सर्वथा भिन्न आधारपर बना विधान होनेके कारण उसका हिन्दू धर्मको अपनेमें मिला सकना या स्वय उसमें मिल जाना असम्भव नही तो कठिन अवश्य था। हिन्दू साहित्य, दर्शन और धर्म बहुत उन्नत है और लाखो-करोड़ो आदमी उन्हे मानते और उनका आदर करते है। विरोधमे जितने भी नये मत उठ खड़े हुए, हिन्दू धर्मने सबको आत्मसात् कर लिया। रिसडेविड्सने हिन्दू धर्म और बौद्ध मतका सम्बन्ध स्पष्ट करते हुए कहा है—'विचार और भाषणकी स्वतन्त्रता जितनी हिन्दूमतमे है उतनी और किसी मतमे नही।* यह बात वेदों और उपनिषदोके आरम्भिक

---

* रिसडेविड्स—'बुद्धिस्ट इण्डिया', पृष्ठ २५८

कालसे ही चली आ रही है और यही विभिन्न विचारो और दर्शनोंकी उत्पत्तिका कारण है। इसलिए मत-सम्बन्धी कोई ऐसा निश्चित नियम नही है जिसे कोई हिन्दू माननेके लिए बाध्य हो। हां, कुछ ऐसे व्यक्तिगत और सामाजिक नियमोके पालनपर जोर दिया जाता है जिनका रूप देशकालके अनुसार बदलता रहता है। इस प्रकार हिन्दुओमें सामाजिक सुधारोके लिए बहुत अधिक गुजाइश रहती है। इसके इस लचीलेपनके कारण हिन्दू समाज केवल अपनेको बदलती हुई परिस्थितियोके अनुकूल बनानेमें ही नही समर्थ हुआ बल्कि ऐसे बहुतोको पचा जानेमें भी समर्थ हुआ जिनका दार्शनिक और सामाजिक आधार पुराना नही था। परिस्थितिके अनुकूल बना लेनेकी इसकी सामाजिक शक्ति और विचार-स्वातन्त्र्यसे, जिससे विरोधमे उठे हुए बौद्ध मत जैसे नये मतके प्रवर्तकोको भी देवत्व प्रदान करनेमे हिचक नही होती थी, इसे बहुत सहायता मिली है। बुद्ध एक अवतार मान लिये गये, हाला कि ग्रन्थोसे ऐसे बहुतसे प्रसंग उद्धृत किये जा सकते है जिनमे बुद्धकी निन्दा की गयी है। यह उस सघर्षका परिचायक है जो बौद्ध मतको आत्मसात् करनेके समयमे चल रहा था। आज बौद्ध मत—उसका दर्शन और व्यवहार नियम—हिन्दू धर्ममे इस प्रकार अन्तर्भूत हो गया है कि उसके जन्मस्थानमे ही कोई बौद्ध नही रह गया है। वस्तुतः बौद्ध मत हिन्दू धर्मकी ही एक शाखा है और विचार तथा अभिव्यजनकी दृष्टिसे इसका आधार भी हिन्दू ही है। इस कारण भारतमे तो यह बड़ी सरलतासे हिन्दू धर्ममें मिल गया, पर अन्य देशोमें जहा दूसरे किसी धर्म या दर्शनद्वारा इसके आत्मसात् किये जानेका अवसर नही था, यह फूलता फलता रहा। ऐसे आधारवाला हिन्दू धर्म यदि इस्लामको आत्मसात् नही कर सका या स्वयं उसमे नही मिल सका, तो इसमे आश्चर्यकी कोई बात नही। मेरा विश्वास है, दोनोका साथ-साथ बने रहना और बढ़ना दोनोके लिए हितकर ही हुआ है। साथ-साथ रहते समयकी विस्मृतिके गर्तमे बड़ी पुरानी घटनाओं और वृत्तान्तोको खोद-खोदकर निकालने और दोनोंका पार्थक्य सिद्ध करने तथा उनमे प्रतिस्पर्धा और द्वेषका भाव जाग्रत् करनेसे, मेरी समझमें, किसीको लाभ नही पहुँच सकेगा।

इससे कहीं अधिक लाभदायक और सम्मानजनक यह तथ्य स्वीकार कर लेना है कि सदियोंसे दोनों सद्भावपूर्वक मिल-जुलकर रहे है, और इससे भी बढ़कर यह कि भविष्यमें इस माथसे पिण्ड छुडानेका दूसरा कोई उपाय भी नही है।

इस अंशका अन्त दो प्रोफेसरोके मतके उद्धरणके साथ करना अच्छा होगा—एक तो डाक्टर ताराचन्दका जो हिन्दू है और जिनका मत प्रायः उद्धृत किया गया है, और दूसरा श्री सलादुद्दीन खुदाबख्शका जो मुसलमान है और कलकत्ता विश्वविद्यालयमें कानन और इस्लामके इतिहासके अध्यापक थे।

डाक्टर ताराचन्द लिखते है—

"भारतीय जीवनके भिन्न-भिन्न अगोपर मुसलमानोका जितना अधिक प्रभाव पड़ा है उसका उल्लेख कर सकना कठिन है। पर यह प्रभाव रीति-रिवाज, पारिवारिक जीवनकी छोटी-मोटी बातो, सगीत, पोशाक, पाक-विधि, विवाह, त्योहार और मेले, मराठा, राजपूत और सिख राजाओके दरबारी तरीकोंपर जितना स्पष्ट और प्रत्यक्ष देख पड़ता है उतना अन्यत्र नही देख पड़ता। बाबरके समयमें हिन्दुओ और मुसलमानोका आचार-विचार आपसमे इतना मिलता था कि उनके अजीब 'हिन्दुस्तानी तरीके' पर उसका ध्यान गये बिना नही रह सका। उसके वशजोने इस पैतृक वस्तुको इतना अलंकृत और सम्पन्न बना दिया कि भारत उनसे मिले उत्तराधिकारपर गर्व कर सकता है।"*

श्री सलादुद्दीन खुदाबख्श कहते है—

"हम प्रायः सुना करते है कि मुसलमान हिन्दुओसे वैसे ही भिन्न है जैसे आर्योसे समेटिक। उनके जीवनके आधारमे ही गहरा अन्तर है; उनके स्वभाव, मनोवृत्ति, सामाजिक प्रथाओ और जातीय रूपमे मिल सकना नितान्त असम्भव

---

* ताराचन्द—'इन्फ्लुएन्स आव इस्लाम आन इण्डियन कल्चर', पृष्ठ १४१–१४२।

है, एक ऐसा स्वप्न है जो कभी कार्यका रूप ग्रहण नही कर सकता। यह दलील कभी टिक सकेगी, इसका मुझे जरा भी निश्चय नही; माना कि मुसलमान बाहरसे विजेताके रूपमे आये जो हिन्दुओसे वैसे ही भिन्न थे जैसे हम दोनोसे अंग्रेज भिन्न है, पर हम यह कभी नही भूल सकते कि वे सदियोसे साथ ही रहते आये है, यहाके लोगोमे मिलते रहे है, एकने दूसरेको प्रभावित किया है, उन्होने यहांकी महिलाओसे विवाह किया है, स्थानीय रीति-रिवाज अपनाया है और यहाकी विशेषताओको भी ग्रहण करते रहे है। इसका सबसे अधिक निर्भ्रान्त प्रमाण विवाह-सस्कारमे जो पूर्णतः हिन्दुओका है, और स्त्री-समाजमें पाया जाता है—जैसे सिन्दूरका चिह्न जो विवाहित होनेका सूचक है, विधवाओके भोजनाच्छादनपर प्रतिबन्ध, विधवा विवाहको अमान्य ही नही बल्कि अपराध समझना और 'जनाने'की तफसीलकी हजारो बाते। ये सब बाते इन दोनो सम्प्रदायोके जिनमे भारतके लोग विभक्त है, केवल बाहरी सम्बन्धोको नही व्यक्त करती। इसका स्पष्टतर प्रमाण भाषाकी एकता और पोशाककी समानता है। सबसे बढकर बात तो यह है कि बहुत-से ही नही, बल्कि अधिकाश मुसलमान पहलेके हिन्दू ही है। यह कपोल कल्पना नही बल्कि निश्चित बात है कि हिन्दुओ और मुसलमानोमे परस्पर प्रतिक्रिया होती रही है जिससे सामाजिक प्रथाएं तो प्रभावित हुई ही, एकके धर्मपर दूसरेके धर्मका रंग भी चढा। यह हिन्दू और मुसलमान—दोनो धाराओके मिलनका स्पष्ट उदाहरण है जो मुसलमानोकी विजयके बादसे भारतमे प्रवाहित होती रही है।"* इस सुन्दर ताने-बानेको लेकर अनगिनत हिन्दू और मुसलमान नर-नारियोने, जानकर या अनजाने, हमारे सामाजिक जीवनके जिस कोमल और भव्य पटका सदियोमे निर्माण किया है उसे क्या नासमझ राजनीतिके निर्दय और अविवेकी हाथो द्वारा टुकडे-टुकड़े कर देना उचित होगा? ●

---

* 'सम एमिनेण्ट बिहार कण्टेम्पोरेरीज'मे डाक्टर सच्चिदानन्दसिंहद्वारा उद्धृत, पृष्ठ १८५–८६

ग—भाषा

आजकल उत्तर भारतमें जो भाषा बोली जाती है—उसे चाहे जिस नामसे भी पुकारिये—यदि इसे हिन्दू और मुसलमानोके संयुक्त प्रयासका फल न भी कहें तो भी इतना तो निश्चित है कि उसपर दोनोका स्पष्ट प्रभाव है। इसका उद्गम स्थान तो निश्चित ही सस्कृति और उसकी उपशाखायें पाली तथा प्राकृत है जो संस्कृतके बाद उस समय प्रचलित हुई जब सस्कृत जनसाधारणकी भाषा नही रह गयी। मुस्लिम आक्रमणकारियोकी भाषा उनकी जाति-विशेषके अनुसार भिन्न-भिन्न थी। इस भाषापर अरबी और फारसीका प्रभाव बहुत अधिक था। मुस्लिम शासनकालमें फारसी अदालती भाषा बनी। उँची श्रेणीके हिन्दुओने भी इस भाषाको अपनाया। खासकर उन लोगोने, जिनका दरबारों और राजके कामसे ज्यादा सम्बन्ध था। लेकिन यह भाषा जनसाधारणकी भाषा कभी नही बन सकी। भारतके अधिक मुसलमान जन्मना हिन्दू थे। इसलिए उस युगके अधिकांश मुसलमानोकी भाषा भी फारसी नही थी। इसीसे एक ऐसी भाषाकी आवश्यकता प्रतीत हुई जिसका प्रयोग विदेशी मुसलमान शासक और भारतीयों—हिन्दू और मुसलमान दोनो—के बीच किया जा सके। इस तरहकी भाषाके निर्माणमें दोनोने हाथ बटाया। अमीर खुसरोके जीवनकालमें ही इस भाषाने इतनी उन्नति कर ली थी कि उसका प्रयोग उन्होने अपनी कविताओंमें किया और वे कविताएँ आज भी लोकप्रिय है। हिन्दी और उर्दूके इस युगके हिमायती भी इस तथ्यको स्वीकार करते है कि दोनोंको यदि भिन्न-भिन्न भाषा मान लिया जाय तो भी दोनों भाषाओके साहित्यके विकासमें हिन्दू और मुसलमान दोनोंने हाथ बंटाया। धार्मिक कृत्योके लिए हिन्दुओंका झुकाव संस्कृतकी ओर और मुसलमानोंका अरबी और फारसीकी ओर था, इसलिए यह स्वांभाविक था कि भाषाके गठनको ज्योंका त्यों रखकर दोनो—हिन्दू और मुसलमानों—ने संस्कृत, अरबी तथा फारसी भाषाके शब्दोंको अपनाया। वह गठन जो भाषाका सच्चा स्वरूप है आज भी हिन्दी और उर्दू भाषामें एक-सा ही है। भेद केवल शब्दावलीका है। उत्तर भारतमें आज भी दोनों जातियोमें एक ही भाषा बोली और समझी

जाती है—यद्यपि दोनो भाषाओके विद्वान अपने लेखोमे अधिकांश संस्कृत, अरबी या फारसीके ही शब्दोका प्रयोग करते है। यह दुर्भाग्यकी बात है कि भाषाके प्रश्नको लेकर भी विवाद खडा हो गया है जो वास्तवमे हिन्दू और मुसलमान दोनोकी समान रूपसे विरासत है।

अमीर खुसरोके कालसे आजतक हिन्दी भाषा तथा उसके साहित्यके विकासमें मुसलमानोने जो बहुमूल्य सामग्री प्रस्तुत की है उसे न तो हिन्दीके हिमायती भूल ही सकते है और न उसकी उपेक्षा ही कर सकते है। प० रामनरेश त्रिपाठी-द्वारा सम्पादित कविता-कौमुदीमे हिन्दीके मुसलमान कवियोकी कविताओका जो सग्रह दिया गया है, उसे देखनेसे ही यह बात स्पष्ट हो जाती है। उन मुसलमान कवियोने हिन्दीके नामसे पुकारी जानेवाली भाषाका ही केवल प्रयोग नही किया है बल्कि अपनी कविताओका विषय भी पूर्णतया हिन्दू रखा है। हिन्दुओके साहित्यके आधार अधिकतर सीताराम और राधाकृष्ण है। गोरखपुरके गीता प्रेसने भजनोका सग्रह पाच जिल्दोमे प्रकाशित किया है। उनमेसे एक जिल्दमे केवल मुसलमान कवियोका सग्रह है। इन भजनोको पढ़कर किसी भी भक्तकी भक्तिभावनाको पर्याप्त प्रोत्साहन मिल सकता है। गिरिधरदास-की कुण्डलियाकी भाति रहीमके दोहोका उत्तर भारतमे घर-घर आदर है। कबीर-की चर्चा पहले हो चुकी है। वह उन दार्शनिक भक्तोमे थे जिन्होने अपने पदो-द्वारा वेदान्त और उपनिषदोकी दुर्गम शिक्षाका प्रचार जनसाधारणमे किया और वेदान्तके कठिन सूत्रोको साधारण जनताके समझने योग्य बनाया। जिस दुरूह ज्ञानको प्राप्त करनेके लिए योगीजन एकान्त जगलोमे और पहाडोपर कठोर तपस्या करते थे उसका प्रचार उन्होने साधारण झोपड़ियोमे किया। भक्तिमार्गके प्रचारके लिए जो काम तुलसीदासने उत्तर भारतमे तथा महाप्रभु चैतन्यने बंगाल और उडीसामे किया वही काम योग और वेदान्तके प्रचारके लिए कबीरने उत्तर भारतमे किया।

इसी तरह उर्दू भाषाको समृद्ध बनानेमे हिन्दुओके प्रयासकी कौन उपेक्षा कर सकता है? और इस तथ्यको कैसे अस्वीकार किया जा सकता है कि

आजकल भी उर्दू भाषा और साहित्यमें रुचि रखनेवालोमें हिन्दुओंकी संख्या पर्याप्त है। इसलिए भाषाके प्रश्नको हिन्दू मुस्लिम संघर्षका आधार-पृष्ठ बनाना ऐतिहासिक तथ्यको अस्वीकार करना ही नही है बल्कि जीवनकी दैनिक घटनाओकी ओरसे आखे बन्द कर लेना है।

"हिन्दी तथा उर्दू भाषामे विकासके लिए तो मुसलमान शासकोने यत्न किया ही, साथ ही प्रान्तीय भाषाओको भी उन्होने प्रोत्साहन दिया। प्रान्तीय भाषाओपर मुसलमान शासकोका यह ऋण है। 'उत्तरमे हिन्दी, पच्छिममे मराठी और पूर्वमे बगालीने साहित्यक भाषाका रूप ग्रहण किया। इनके विकासका श्रेय हिन्दू और मुसलमान दोनोको बराबर है। इसके बाद भाषाके सम्बन्धमे एक नयी प्रवृत्ति उत्पन्न हुई। मुसलमानोने तुर्की और फारसी भाषाका त्यागकर हिन्दुओकी बोलचालकी भाषा अपनायी। अपनी आवश्यकताके अनुसार सगीत और वास्तुकलाकी भाति उसने भाषाका रूप भी बदल दिया। इस तरह एक नयी भाषा उत्पन्न हो गयी जिसे उर्दू कहते है। हिन्दू और मुसलमानोने इसे समान रूपमे अपनाया। इससे एक अद्भुत बात यह पैदा हुई कि हिन्दी भाषाका प्रयोग एक प्रकारके साहित्यके लिए हुआ और उर्दूका प्रयोग दूसरे प्रकारके लिए। इस तरह जब हिन्दू मुसलमानोकी साहित्यिक प्रवृत्ति एक तरफ झुकी तब उन्होने हिन्दीका प्रयोग किया और जब वह प्रवृत्ति दूसरी तरफ झुकी तब उर्दूका प्रयोग किया। .. ..हिन्दीपर मुसलमानोका प्रभाव गहरा था जिसका प्रत्यक्ष दर्शन शब्दकोष, व्याकरण, मुहावरा, वाक्य और शैलीमे होता है। वही बात मराठी, बगला, और उससे भी ज्यादा पजाबी और सिन्धीमे दिखायी पडती है।'※

बगालके मुसलमान शासकोका ध्यान केवल मुसलमानोमें शिक्षाका प्रचार करनेकी ओर नही था। उन्होने शिक्षाके प्रचारको नयी धारामे बहानेका यत्न किया जो बगला भाषा-भाषियोके लिए विशेष महत्वपूर्ण है। बगालियोको इस

※ ताराचन्द—इन्फलुएन्स आव इस्लाम ऑन इण्डियन कल्चर : पृ० १३९-४०

बातसे विस्मय होगा कि उनकी भाषाके विकासका श्रेय मुसलमानोको ही है। मुसलमानोंके प्रयाससे ही बंगला भाषा साहित्य भाषा बनी है। बगालके मुसलमान शासकोंका ही ध्यान पहले-पहल रामायण और महाभारतकी ओर आकृष्ट हुआ और उन्होने इन ग्रन्थोका अनुवाद बगला भाषामे कराया। महाभारतका बगला अनुवाद पहले-पहल बगालके नाजिरशाह (१२८२–१३८५) ने कराया। वह बगलाभाषाके बहुत बडे हिमायती थे। मैथिल-कोकिल विद्यापतिने अपना एक गीत उन्हे समर्पित कर उनका नाम अमर कर दिया है। अभी यह निर्णय नही हो सका है कि रामायणका बगला अनुवाद करनेके लिए कीर्तिवासको बंगालके किसी मुसलमान शासकने नियुक्त किया था अथवा हिन्दू राजा कसनारायणने। यदि हिन्दू राजावाली बात ही स्वीकार कर ली जाय तो भी यह बात स्वीकार करनी पड़ेगी कि उस हिन्दू राजाको मुसलमान शासकोकी प्रवृत्तिसे प्रेरणा मिली।...सम्राट् हुसेनशाह बगला भाषाके कट्टर सरक्षक थे। उन्होने भागवतका अनुवाद बगला भाषामे करनेके लिए महलर बसुको नियुक्त किया था। हुसेनशाहके सेनापति परगलखा और उनके पुत्र छुतीखाने महाभारतके एक अशका बगलामे अनुवाद कराकर अपनेको अमर बना लिया।"*

भाषाके प्रश्नका अध्ययन दूसरे पहलूसे भी करना होगा। जहातक दो राष्ट्रके सिद्धान्तका प्रश्न है, बटवारेके हिमायतियोको इससे भी सहायता नहीं मिलती। भाषाका भेद स्थान-स्थानमे पाया जाता है, जाति-जातिमे नही। बगालमे रहनेवाले हिन्दू और मुसलमान दोनोकी भाषा बगाली है। इसी तरह गुजरातकी भाषा गुजराती, पजाबकी भाषा पजाबी और उत्तर भारतकी भाषा है हिन्दी, उर्दू या हिन्दुस्तानी——चाहे जो भी नाम इसे दिया जाय। यह क्षेत्र पजाबसे बंगालतक हिमालयकी तराईसे मध्य तथा दक्षिण भारतके मराठी तथा तेलगू बोलनेवालोके प्रान्ततक फैला हुआ है। ये भाषाए दक्षिण भारतकी तेलगू

---

* एन० एन० ला——प्रोमोशन आव लर्निग इन इण्डिया ड्यूरिग मोहम्मदन रूल पृष्ठ १०७–११०

तामिल, कनारी तथा मलयालम भाषाओंसे एकदम भिन्न है। इनके अपने शब्द और बोलिया है जिनका प्रयोग जनसाधारणमे होता है। भारतके किसी भी भाग-में जनसख्याके आधारपर ऐसा कोई बंटवारा नही है जो धार्मिक विश्वासके अनु-सार भाषाका प्रयोग करता हो। भाषाका प्रयोग सम्प्रदाय या धर्मके अनुसार न होकर प्रदेशके अनुसार है। यदि हिन्दुओके उत्तर-पूर्वी प्रदेशमे——जहा मुसलमान अधिक बसते है——मुसलमान और गैरमुसलमानोकी भाषा बगाली है, पंजाबके हिन्दू, मुसलमान और सिखोकी समान भाषा पजाबी है, उत्तर पश्चिमके चार-पाच प्रदेशके निवासियोकी——जिन्हे उत्तर-पश्चिमके क्षेत्रमे शामिल करनेका यत्न किया गया है——कोई भी एक समान भाषा नही है, पश्तो, सिन्धी और बलूची भाषा पजाबी भाषासे उतनी ही भिन्न है जितनी हिन्दी भाषा बगाली भाषासे अथवा पश्तो भाषा सिन्धी या काश्मीरी भाषासे; इसलिए यदि भाषाको राष्ट्रीयताका आधार माना जाय, तब तो बंगालके हिन्दू और मुसलमानोकी एक ही राष्ट्रीयता होगी क्योकि दोनोकी एक ही समान भाषा बगाली है। इसी आधार-पर पंजाबी, सिन्धी, पठान और बलूची एक राष्ट्र नही हो सकते क्योकि इनकी भाषामें परस्पर उतना ही अन्तर है जितना कि बंगला भाषासे है।

हिन्दुओके धार्मिक साहित्यपर संस्कृतका तथा मुसलमानोके धार्मिक साहित्यपर अरबीका प्रभाव है। ये ही इनके उद्गमस्रोत है। बंगाल,तामिल तथा सिन्धके हिन्दू समान रूपसे धार्मिक कार्योमें संस्कृतसे ही प्रभावित होते है। इसी तरह पंजाब, पूरब तथा दक्षिण भारतके मुसलमान धार्मिक कार्योके लिए अरबी-की ओर आकृष्ट होते है। जहा धार्मिक मामलोंमें भिन्न भिन्न प्रान्तोके हिन्दू सस्कृतकी ओर और मुसलमान अरबीकी ओर दौड़ते हैं, वहां दैनिक प्रयोगके लिए प्रत्येक प्रान्तके हिन्दू-मुसलमानोंकी अपनी समान भाषा है जिनमें बहुतोका साहित्य पर्याप्त समृद्ध है। समान भाषाके उस प्रयोगमें धर्म किसी तरहकी बाधा नही उपस्थित करता। यह प्रान्तीय भाषा तथा प्रदेशके हिसाबसे भिन्न-भिन्न है।

अगर हिन्दी हिन्दुओंकी और उर्दू मुसलमानोंकी दो भिन्न भाषा मान ली जाय और यदि हिन्दू और मुसलमान दो राष्ट्रोंमें भारतका बंटवारा कर दिया जाय

जिसमें प्रत्येक राष्ट्रको अपने कल्याणकी दृष्टिमे अपने विकासकी स्वतन्त्रता रहे--केवल उन सरक्षणोको स्वीकार करना पड़े जो अल्पसख्यक समुदाय तथा उनकी भाषाके लिए निर्धारित किया जाय, तो उर्दू किसी भी मुसलिम क्षेत्रकी भाषा नही रहेगी। ऐसी हालतमे उर्दूका भविष्य कितना उज्ज्वल होगा? तब उसे या तो किसीपर जबर्दस्ती लादना पडेगा या वह अजनबी भाषाकी भाति पश्चिमी और पूर्वी क्षेत्रमे पाली-पोषी जायगी क्योकि दोनोमे किसी भी प्रदेशकी बोली जानेवाली भाषा वह नही रहेगी, अथवा मध्य क्षेत्रमे वह अल्पसख्यकोकी भाषाके रूपमे रहेगी क्योकि इस क्षेत्रमे गैर-मुसलमानोका बहुमत होगा और उनकी यह अपनी भाषा नही होगी।

यदि हिन्दी और उर्दूको दो भाषा मान भी लिया जाय तब उन्हे अपने अपने दायरेमे स्वतन्त्र रूपसे फूलने फलने और विकसित होने दिया जाय और समान भाषाको स्वतन्त्र छोड़ दिया जाय जिसमे न तो संस्कृत और न अरबी या फारसी शब्दोकी भरमार हो और जो समस्त देशकी राष्ट्रभाषाके रूपमे फूले और फले।

घ--कला

कलाओमे सबसे मुख्य है--वास्तुकला, मूर्तिकला, चित्रकारी, संगीत तथा नृत्यकला। सस्कृत तथा कतिपय अन्य प्रान्तीय साहित्यकी भाति मुसलमानोके आगमनसे पहले ही यहा ये उन्नत दशामे थी। इसलिए यह आशका नहीं उत्पन्न हो सकती थी कि मुसलमानोकी कलाएँ इन्हे अपनेमे हजम कर लेगी और यही हुआ भी। जहातक सम्भव था दोनो एक दूसरेमे घुलमिल गयी और उत्तर भारतकी भाषाकी भाति एक नये रूपमे प्रकट हुई। किसी किसी दिशामे तो मुस्लिमकलापर इनका बहुत अधिक प्रभाव पडा।

भारतीय इतिहासमे हिन्दू तथा बुद्धयुगकी वास्तुकला और मुस्लिम युगकी वास्तुकलामे बहुत अन्तर है। लेकिन उन्हे देखकर यह नही कहा जा सकता कि ये भारतके लिए एकदम नयी चीजे है जो बाहरसे लाकर यहा स्थापित कर दी गयी है। यह बात कल्पनासे बाहरकी है कि ताजके निर्माणमें हिन्दू कारीगरोंका कोई हाथ नही था और उसी प्रकार मुस्लिम शासनकालमें हिन्दुओके जो मन्दिर बने

उनमें मुसलमान कारीगरोका कोई हाथ नही था। इस युगमें तो उत्तरी भारतके हिन्दुओंके मकान ही नही बल्कि मन्दिरोके निर्माणमे भी मुसलमान कारीगरोका हाथ रहता है। मुस्लिम युगकी अनेक उत्तम इमारतोके निर्माण और उनके विशिष्ट रूपोमे वास्तुकलाके विशेषज्ञोको हिन्दू और मुसलमान कलाविदोका सयुक्त हाथ स्पष्ट दिखायी देता है।

"मुसलमानोने उस युगमे धार्मिक, प्रबन्धीय तथा सैनिक कामोके लिए जो इमारतें बनवायी वे सब शुद्ध मुस्लिम-सिरो, मिस्र, फारस तथा मध्य एशियाके आदर्शपर नहीं बनी थी, और न उस युगकी हिन्दू इमारते और मन्दिर ही शुद्ध हिन्दू आदर्शपर बने थे। मुस्लिम तथा हिन्दू वास्तुकलाके शुद्ध रूपमे अनेक परिवर्तन हुए। कारीगरी, सजावट तथा साधारण रूप तो हिन्दू वास्तुकलाका रहा किन्तु गुम्बज, मीनार, दीवारोकी सादगी एव भीतरी विस्तार मुस्लिम वास्तुकलासे लिया गया। तेरहवी सदीके बादसे जो भी हिन्दू या मुसलमानोकी इमारते बनी है, दोनोका कलात्मक रूप एकसा है यद्यपि उद्देश्य और प्रयोगकी दृष्टिसे उनमें भेदभाव अवश्य रखा गया है। धार्मिक विशेषता तथा स्थानीय परम्पराके अनुसार उनका ढाचा भिन्न-भिन्न प्रकारका है।

"फरगुसनके समस्त हिन्दू-मुस्लिम शिक्षा-भवनोकी शैली—दिल्ली, अजमेर, आगरा, गौर, मालवा, गुजरात, जौनपुर तथा बीजापुरमें—चाहे वहाके शासक अरब, पठान, तुर्क, फारसी, मंगोल अथवा भारतीय जो भी रहे हो, मसजिदों, कब्रो तथा महलोके गुम्बजोके रूप और निर्माण तथा हिन्दू आदर्श जो उनके ऊपर प्रतिबिम्बित है, मेहराब जो हिन्दू मन्दिरोको भव्य बनाते है तथा जिन्हें हिन्दू वास्तुकलाका रूप दिया गया है, उनकी बनावट और सजावटके नमूने—ये सब स्पष्ट रूपसे प्रकट करते है कि भारतीय कारीगरोने मुस्लिम वास्तुकलाको अपनानेमे जरा भी सकोच नही किया। हिन्दू वास्तुकलाकी मौलिकताको कायम रखते हुए उन्होने मुस्लिम वास्तुकलाकी मनमानी नकल की।* हैवेलने अपनी पुस्तकमे भारतीय कलापर इतने विस्तारके साथ प्रकाश डाला है कि इस

* हैवेल—इण्डियन आर्किटेक्चर : पृष्ठ १०१

सम्बन्धमें कुछ अधिक लिखनेकी आवश्यकता नहीं है।"* अठारहवीं सदीमें शैलीका यह प्रभाव समस्त भारतपर पड़ा, नैपालतक इससे अछूता बचा न रह सका।† उन्नीसवीं सदीके महल, मसजिद और मन्दिर——चाहे वे पश्चिममें जामनगरमें, पूरब कलकत्तेमें बने हों, पञ्जाबमें सिखोंद्वारा अथवा मध्यप्रदेशमें जैनियोंद्वारा बनवाये गये हों, सबपर हिन्दू-मुसलिम संयुक्त वास्तुकलाकी छाप है।‡ "भारतकी स्मारक इमारतोंमें ही इस संयुक्त हिन्दू-मुसलिम शैलीने प्रधानता नहीं पायी बल्कि साधारण उपयोगके भवनों, मकानों, सड़कों, घाटों——सभी जगह इसीके दर्शन होते हैं।"§ हिन्दुओंके निवास-भवनोंका रूप वही है जो मुसलमानोंके। दोनोंकी निर्माणकलामें किसी तरहका भेद नहीं है। हां, जलवायुके ख्यालसे भिन्न भिन्न प्रान्तोंके मकानोंमें भिन्नता अवश्य पायी जाती है।

मूर्तिकला

हिन्दू मूर्ति-पूजक हैं। हिन्दू मन्दिरोंमें मूर्तियों और प्रतिमाओंकी स्थापना देवताके लिए होती है। इस कारण हिन्दुस्तानमें मूर्ति-निर्माणकला बहुत उन्नत दशामें थी। इसलाम धर्म मूर्ति और प्रतिमाकी स्थापना और उसकी पूजाका निषेध करता है इसलिए इस कलाका विकास मुसलिम देशमें नहीं हो सका। इसलिए भारतीय मूर्ति-निर्माणकलापर इसका कोई प्रभाव नहीं पड सका, यद्यपि फारसके राजाओंका अनुकरण कर भारतके मुसलमान शासकोंने——विशेषकर मुगल सम्राटोंने अपने महलोंको सजानेमें मूर्ति-निर्माण-कलाविदों तथा चित्रकारोंकी पूरी सहायता ली।×

चित्रकारी

मनुष्योंके आकारका चित्र तथा संगीत——विशेषकर वाद्य-संगीत-कला तथा नृत्यकलाको इसलाम यदि प्रोत्साहित नहीं करता तो निन्दा नहीं करता।

---

* ताराचन्द—इन्फ्लूएन्स आव इस्लाम आन इण्डियन कल्चर पृष्ठ २४३-२४४

† वही, पृष्ठ २५५। ‡ वही, पृष्ठ २५६। § वही, पृष्ठ २५७।

× एस० एम० जाफर— कल्चरल आस्पेक्ट आव मुसलिम रूल इन इण्डिया, पृष्ठ ११०।

चित्रकला और सगीतकलामें हिन्दू-मुसलिम कलाका सबसे अधिक सम्मिश्रण हुआ है यद्यपि इनके प्रति इसलामका रुख उदासीन ही नही था बल्कि विरोधी था। "भारतके आरम्भिक मुसलमान शासकोने अन्य कलाओंकी भाति चित्रणकलाको प्रोत्साहन नही दिया। इसका एकमात्र कारण यह था कि इनका सम्बन्ध मूर्ति-पूजासे था जिसका इसलाम धर्ममे निषेध है। एकाध उदाहरण ऐसे मिलते है जिनसे पता चलता है कि मुसलमान शासको और सरदारोने प्रचलित परिपाटी तोड़कर इस कलाको अपनाया था। इसका एक कारण यह भी है कि हिन्दुओमे इस कलाका बहुत अधिक प्रचार था और उनमेसे बहुतोने इसलाम धर्म ग्रहण किया था पर अपनी कलाप्रियताको वे नही त्याग सके। इससे यह सहजमें माना जा सकता है कि उस युगके मुसलमान शासक इस कलाके वैसे कट्टर विरोधी नही थे, जैसा कि चित्रित किया जाता है। इन नये मुसलमानोमेसे बहुतोने तथा इनकी सन्ततिने अपनी इस कलाप्रियताको अवश्य कायम रखा और फारसके विचारोमे प्रभावित जो मुसलमान बाहरसे आये उन्होने भी इसमे अपनी प्रवृत्ति और रुचि दिखलायी होगी, यद्यपि उतनी तत्परतासे नही, जितनी तत्परता उस युगके हिन्दुओमे थी। इन सब बातोसे इतना तो स्पष्ट है कि शासकवर्ग इस कलाके प्रति भले ही उदासीन रहा हो पर जनसाधारणने इसे बहुत कुछ अपनाया था।"

"मुगलकालमे ये बातें सर्वथा भिन्न थी। कलाके बारेमे उनके अपने विचार थे और उन्होने भिन्न भिन्न क्षेत्रोमे उसे अपनाया और उत्साहित किया। बाबरके पूर्वज—तिमूर जातिके लोग—चित्रण-कलामे दक्ष थे। अपने पूर्वजोके सग्रहालयसे बाबर अपने साथ चित्रण-कलाके उत्तम नमूने ले आया था। इन चित्रोको मुगल सम्राट् अपनी सबसे प्रिय तथा मूल्यवान वस्तु समझते थे और उन्हे इसका गर्व था।* मुसलमानोंके आगमन-कालके पहलेकी हिन्दू, जैन

* एस० एम० जाफर—कल्चरल आस्पेक्ट आफ मुसलिम रूल इन इण्डिया पृष्ठ १२५–२६।

तथा बौद्ध आदि भारतीय चित्रकारी अपनी स्वतन्त्र विशेषता रखती है। वास्तविकताकी कल्पना जो उन्हे प्रेरणा प्रदान करती है और जो उनकी चित्रण कलाकी विशेषता है, उनकी अपनी चीज है। वे उस सस्कृतिके कलात्मक रूप है जिसका जन्म जातीय समन्वयके अनुभवोसे हुआ है। ये समन्वय हर्ष-विषाद, सुख-दुःख, सफलता-असफलता, इहलोक-परलोक, राग-विराग, आसक्ति-विरक्ति, आकाक्षा, लीनता, व्यसन, सन्तोष, तथा शान्ति आदि विरोधी भावनाओमे समता स्थापित करनेका प्रतीक है। .....अजन्ताकी चित्रकारी ही प्राचीन भारतकी चित्रकारीका एकमात्र नमूना बची रह गयी है। ईसाके पहले साहित्यिक ग्रन्थो—विनय पिटक, महाभारत, रामायण, शकुन्तला आदिमे विद्वानोने कलाकी चर्चा पायी है। प्राचीनकालकी चित्रण-कलाके अवशेष चिह्न आज भी अनेक गुफाओमे विद्यमान है। लेकिन प्राचीन युगकी चित्रण कलाकी पूर्णता तथा उसकी व्यापकताका पूरा ज्ञान तो एकमात्र अजन्ताकी चित्रकारीसे होता है। चट्टानोको खोदकर जो मन्दिर बना है उसकी दीवारे और छते उस युगकी चित्रकारीसे भरी पडी है। ईसाकी प्रथम छठी सदीमे ये बनायी गयी थी। कलाकी इस पिपासाको शान्त करनेके लिए न जाने कितने राजाओ और धनिकोकी सम्पत्ति इसमे लगायी गयी होगी।"*

बाबरके भारत विजयके समय बिहजाद अपने यशके शिखरपर था। उसकी शैली आदर्श मानी जाती थी। कलाके पारखी, बाबर और उसके साथी तथा उसके बाद हुमायू जब अपने पलायनके बाद फारससे भारत वापस आये तब अन्य चगताई सरदारोने बिहजादकी शैलीको भारतीय चित्रकारोके सामने आदर्श स्वरूप रखा ताकि ये लोग उसीका अनुकरण करे। इस प्रकार बिहजाद और उसकी शैली भारतीय चित्रकारोका आदर्श बन गयी और अजन्ताकी चित्रकारी-पर तिमूर चित्रण कलाकी छाप पड़ी। इस कलाकी विशेषता व्यक्तित्त्वके स्पष्ट प्रद-

---

* ताराचन्द—इन्फ्लुएन्स आव इस्लाम आन इण्डियन कल्चर पृष्ठ २५८-२५९।

र्शनमें है। यह कला जमात या भीड़के चित्रणमे रुचि नही रखती। सम्मिश्रण-की ओर इसकी विशेष रुचि नही। वस्तुका स्पष्ट विवेचन और व्यक्तीकरण इसकी विशेषता है। व्यक्ति-विशेषके अंग-प्रत्यगको व्यक्त करना इस कलाका विशेष अंग है। सांगोपांग जीवनको व्यक्त करनेकी ओर यह विशेष प्रेरणा प्रदान करती है और इस प्रेरणाको वह चित्रमे पूरी तरह व्यक्त करनेका प्रयास करती है।* "अजन्ताके समान यहां भी रेखाएँ ही व्यक्त करनेके लिए आधार है। तो भी दोनोंमें कितना अधिक अन्तर है।....इन चित्रोंके निर्माणमें जो तत्व सम्मिलित किये जाते हैं, वे उनसे एकदम भिन्न है, जिनका दर्शन अजन्ता-में होता है।† मुगल सम्राटोंकी देखरेख और प्रोत्साहनसे दोनों कलाओंके सम्मिश्रणसे एक नयी शैलीका उदय हुआ। अजन्ताकी चित्रकारीपर समर-कन्द और हेरादके आदर्शोंका रंग अनेक रूपोंमें चढ़ा। प्राचीनकालकी सजधजपर नया रूप चढ़ाया गया। जीवनको व्यक्त करनेके प्राचीन स्वतन्त्र और सहज तरीके उस सीमाके अन्दर बांधे गये जो रूपको स्पष्ट और पूर्णताके साथ व्यक्त करनेवाले थे। इसका परिणाम यह हुआ कि चित्रकलाकी दोनों शैलियोंको अपनी मौलिकता और विशेषताका अंशतः त्याग करना पड़ा। लेकिन इस सम्मिश्रणसे जो नयी शैली प्रतिष्ठित हुई वह कहीं अधिक मर्यादापूर्ण थी और रंगों तथा रेखाओंका उसमें प्राचुर्य था।

इस नयी शैलीका विकास तेजीसे हुआ। सम्भवतः बाबरने आगरामें भारतके हिन्दू और मुसलमान कलाविदोंमें तिमूरकलाका प्रचार किया।...इस कालकी प्रारम्भिक अवस्थामें भी—जिसे क्लार्कने हुमायूंकाल कहा है—भारतीय भावना स्पष्ट दृष्टिगोचर होती है।...आगे चलकर अकबरके दरबारके कला-विदोंको इसी कलाकी शिक्षा मिली होगी। इन कलाविदोंकी शिक्षा आदि सम्भ-वतः उन चार मुसलमान कलाविदोंद्वारा हुई होगी जिनकी चर्चा अबुल फजलने की है। ये हैं—फरूख कलमक, शिराजके अब्बास समद, तब्रीजके मीर

---

* वही पृष्ठ २६५-२६६ † वही पृष्ठ २६८

सैयदअली तथा मिस्किन। उनके शागिर्द जो सम्भवतः हिन्दू चित्रकार थे परम्परागत शैलीमें निष्णात थे और उनकी ख्याति इतनी ज्यादा थी कि सम्राट्के दरबारमें उन्हें बुलाया जा सके। उन्हें सिर्फ अपनी प्रवृत्ति बदलकर इस नयी शैलीके अनुसार चित्रकारी करनी थी जो इनके प्रभुओंको पसन्द थी। इससे स्पष्ट हो जाता है कि अकबरके शासनकालमें ही हिन्दू मुसलमानकी यह नवीन शैली इतनी विकसित हो गयी। दसवन्त, बसावन, केशोलाल, मुकुन्द, माधो, जगन्नाथ, महेस, खेमकरण, तारा, सेनवाला, हरिवंश तथा रामके नाम तो आइन-ए-अकबरीमें दर्ज हैं। उस समयके चित्रोंमें अन्य अनेक हिन्दुओंके नाम भी पाये जाते हैं। खुदाबख्श पुस्तकालय, बांकीपुरमें जो हस्तलिखित पुस्तकें हैं उनके चित्रोंमें तुलसीदास, सुरजन, सूरदास, इस्सर, शंकर, रमेश, बनवाली, नन्द, नन्हा, जगजीवन, धर्मदास, नारायण, चतरमन, सूरज, देवजीव, सरन, गंगासिंह, पारस, धन्ना तथा भीम आदिके नाम मिलते हैं। कई चित्रोंमें इन चित्रकारोंका निवास-स्थान भी दिया हुआ है। उससे प्रकट होता है कि अधिकांश चित्रकार ग्वालियर, गुजरात और काश्मीरके थे। इससे यह स्पष्ट है कि मध्ययुगमें हिन्दू संस्कृतिके ये ही प्रधान केन्द्र थे, हिन्दू कलापर अजन्ताकी ही छाप थी, मुगलकला पूर्णतः मध्यएशिया तथा फारसकी शैलीकी अनुयायी नहीं थी बल्कि नयी प्रेरणासे मुक्त पुरानी शैली ही उद्भूत थी।"*

'इस हिन्दू-मुसलमान शैलीपर एक ओर तो अजन्ताकी चित्रकलाका प्रभाव पड़ रहा था और दूसरी ओर समरकन्द और हेरातकी चित्रणकलाका। लेकिन इसकी कुछ ऐसी भी शाखाएं थीं जिनका झुकाव एक या दूसरीकी तरफ बहुत ज्यादा था और इसका परिणाम यह हुआ कि बीचकी अन्य अनेक शैलियां निकल आयीं। जैसे, जैपुरकी राजपूत और पहाड़ी शैली कांगड़ा तथा हिमालय पहाड़ियोंकी हिन्दू शैली। इन शैलियोंका झुकाव प्राचीन हिन्दू शैलीकी तरफ अधिक था। इसके विपरीत दक्खिन, लखनऊ, काश्मीर, पटना आदिके चित्र-

---

*ताराचन्द इन्फ्लूएन्स आव इस्लाम आन इण्डियन कल्चर पृ० २६८-७१

कारोंका झुकाव मुस्लिम शैलीकी ओर था। सिख चित्रकारोंकी प्रवृत्ति दोनोंके बीचकी थी। ये सब उप-शैलियां हैं। इनका उद्गम स्रोत वही शैली है जो उस समय दिल्ली और आगराके दरबारमें प्रचलित थी।'*

पटनाके श्री पी० सी० मानुकके पास भारतीय चित्रोंका बहुत ही सुन्दर संग्रह है और वह स्वयं भी चित्रणकलाके बारीक पारखी हैं। भारतीय चित्रण-कलाके सम्बन्धमें अपने विचारोंको प्रकट करते हुए आपने मुगल शासनकालकी चित्रणकलाके विकासका परिचय इस प्रकार दिया है:—'इस्लाम धर्मके सूत्रोंके अनुसार मनुष्य अथवा किसी भी जीवित वस्तुका चित्रण करना 'हराम' या पाप समझा जाता था। पैगम्बर मूसाने लिखा है—'तू इस तरहका चित्र नही बनवायेगा जो मानव रूपको स्पष्ट व्यक्त करे। यद्यपि फारसके सुधारवादी शाह अब्बास तथा उदारचेता मुगल सम्राटोंकी छत्रछायामें इन कानूनोंको भंग किया गया और उस समयके चित्रकारोंने ऐसे सुन्दर चित्र तैयार किये, जिन्हें देखकर आंखें तृप्त हो जाती हैं किन्तु उनसे आत्माको सन्तोष नहीं होता। लेकिन उनके हिन्दू शिष्योंके मार्गमें इस तरहकी कोई बाधा नहीं थी। क्योंकि हिन्दुओंके देवी और देवता मूर्तमान माने जाते हैं और उनकी प्रतिमाएं स्थापित की जाती हैं। यही कारण है कि हिन्दू चित्रकारोंके चित्रोंमें सजीवता बहुत अधिक पायी जाती है और उन्हें देखकर आत्मा अधिक तृप्त होती है। उत्तम कोटिकी कलाकी यही परख है। स्मरण रखना चाहिये कि कला और धर्मका सदियोंसे घनिष्ट सम्बन्ध रहा है और यूरोपके चतुर चित्रकारोंने यूनान और रोमको प्राचीन वृत्तान्तोंसे धार्मिक अथवा अर्द्ध धार्मिक विषयोंपर ही सुन्दर चित्र बनाये हैं।''†

संगीत

आधुनिक भारतीय संगीतकलापर भी इस्लामका बहुत अधिक प्रभाव पड़ा

---

*ताराचन्द—इन्फ्लूएन्स आव इस्लाम आन इण्डियन कल्चर पृ० २७२

† सर्चलाइट—अनिवर्सरी नम्बर १९२६ पृ० १५

है और उससे प्रोत्साहन भी मिला है। भारतीय संगीतकला मुसलमानोंके आगमनके पहलेसे ही उन्नत दशामें थी। इसलिए यह नहीं कहा जा सकता कि मुसलमानोंने इसे विकसित और उन्नत किया। यह हिन्दू और मुसलमान दोनोंके प्रयासका फल है जिसकी पृष्ठभूमि हिन्दू है और जिसकी सजावटमें दोनोंका सम्मिश्रण है। यदि विभिन्न वाद्ययन्त्रोंकी उत्पत्तिका इतिहास खोजा जाय तो यही प्रकट होगा कि उनका वर्तमान रूप हिन्दू तथा मुसलमानोके सयुक्त प्रयास का फल है कहीं-कहीं तो मुसलमानोंका प्रयास बहुत अधिक दिखाई पड़ेगा। कुछ यन्त्रोके तो वे आविष्कारक ही पाये जायंगे। इसी प्रकार वर्तमान राग-रागिणियोके विकासमें भी मुसलमान संगीतज्ञोंका विशेष हाथ है।

'इस्लाम धर्मके आरम्भिक युगमें चित्रणकलाकी भांति संगीतकला भी पीछे रह गयी। यद्यपि इसका भी वही कारण नहीं है जो चित्रकलाका है। संगीतका प्रभाव मानव मस्तिष्कपर इतना अधिक पड़ता है कि वह उसे दूसरे कामोंके लिए बेकार बना देता है। इसके इस व्यापक आकर्षणके कारण आरम्भिक युगमें इस्लामसे इसे प्रोत्साहन नही मिला। यह सब होते हुए भी मानव प्रकृति बलवती प्रतीत हुई और चित्रणकलाकी भांति संगीतकलाका भी धीरे धीरे प्रचार होने लगा, यद्यपि उत्साहके साथ नहीं। ईरानमें संगीतकलाका प्रचार बहुत अधिक था। ईरानियोंके साथ इस्लामका संसर्ग होनेसे इसपर सूफियोंका प्रभाव पड़ा। सूफी (मुस्लिम रहस्यवादी) सम्प्रदायके लोग संगीतको आत्मोन्नति और मानसिक विकासका साधन मानते हैं। इससे संगीतकलाकी ओर मुसलमानोंकी प्रवृत्तिमें बहुत अधिक परिवर्तन हुआ और उन्होंने अपनी उदासीन प्रवृत्ति उस ओर लगा दी। भारतमें बस जानेके बाद मुसलमानोंने देखा कि यहांके हिन्दुओंके सामाजिक तथा धार्मिक जीवनमें संगीतका बहुत अधिक प्रभाव है। इसका भी उनपर असर पड़ा। इसका परिणाम यह हुआ कि मसजिदोंमें नमाज तो उसी सादगीके साथ होता रहा लेकिन अन्य मुसलमानी उत्सवोंके अवसरोंपर संगीत और बाजेका भरपूर उपयोग होने लगा। सूफी सम्प्रदायकके लोग संगीतके प्रेमी थे। फलस्वरूप जहां-तहां अर्ध धार्मिक जलसे होने लगे।

इन जलसोंमें कौवालोंद्वारा कौवाली नामक धार्मिक गीत गाये जाते थे।'*

'कहनेका मतलब यह है कि मुस्लिम भारतमें संगीतकलाका उससे कही ज्यादा प्रचार था जितना हमलोग समझते हैं। इसकी प्रसिद्धिका एक कारण यह हो सकता है कि भारतीय मुसलमानोंमें अधिकांश वे मुसलमान थे जो पहले हिन्दू थे या जिनके पुरखे हिन्दू थे। इस्लाम धर्म ग्रहण करनेके बाद भी वे लोग अपनी प्रिय वस्तु संगीतका त्याग नहीं करना चाहते थे। इसका परिणाम यह हुआ कि संगीतकलाका प्रवेश मुसलमानोंमें हो गया और उसकी ख्याति वहां भी बढ़ी। यहां यह भी लिख देना उचित प्रतीत होता है कि अन्य सूक्ष्म कलाओंकी भांति संगीतकलाने भी हिन्दू और मुसलमानोंके बीच मेल-मिलापका नया रास्ता खोल दिया। परस्पर आदान-प्रदान और मेल-मिलापका यह काम मुसलमानोंके आगमनकालसे ही आरम्भ हुआ और एक दूसरेके पास जो समृद्धि थी, उसका परस्पर आदान-प्रदान कर दोनोंने अपनेको समृद्ध बनाया।'†

"सम्राटोंने भी संगीतकलाको प्रोत्साहित किया। उनके शासन-कालमें उस कलाकी अत्यधिक उन्नति हुई। इनके दरबारमें संगीतकलाके अनेक विद्वान रहते थे—हिन्दू, ईरानी, तूरानी, काश्मीरी, इनमें पुरुष और महिलाएं दोनों थीं।......विश्वविख्यात संगीतज्ञ मियां तानसेन—जो हिन्दूसे मुसलमान हो गये थे—अकबरके दरबारके गवैया थे। इनकी ग्वालियर-स्थित कब्र भारतीय संगीतज्ञोंका तीर्थक्षेत्र बन गयी है। इसी युगमें प्रसिद्ध गवैया हरिदास हुए थे। ये तानसेन और रामदासके गुरु थे। रामदास लखनऊके निवासी थे और दूसरे तानसेनके नामसे प्रसिद्ध थे। कहा जाता है कि खानखानाने उन्हें एकबार एक लाखकी थैली भेंट की थी। अकबरके दरबारमें संगीत-कला उन्नतिकी चरम सीमापर पहुँच गयी थी। संगीत विद्या तथा भिन्न-भिन्न राग-रागिणियों,

---

* एस० एम० जाफर—कल्चरल आस्पेक्ट ऑव मुस्लिम रूल इन इण्डिया पृ० १५५-५६

† वही पृ० १६४-६५।

जिनमेंसे कुछको प्रयोगके अभावमें लोग भूल गये हैं—तथा वाद्य-यन्त्रोंका बहुत अधिक आदर होता था। संगीतकलाके क्षेत्रमें हिन्दू और मुसलमानोंके बीच बहुत अधिक आदान-प्रदान हुआ है। एकमें जो उत्तम गुण था उसे दूसरेने निःसंकोच ग्रहण किया और इस तरह अपनेको समृद्ध बनाया। सम्मिश्रणकी यह परिपाटी अकबरके युगकी कोई नयी परिपाटी नही थी बल्कि पुराने जमानेसे यह इसी तरह चली आ रही थी। मुसलमानोके आगमनकालके बादसे ही भारतीय सगीतकलाको इतिहासका यह नया अध्याय आरम्भ होता है जिससे यह प्रकट होता है कि दोनों जातियोके बीच सामाजिक और राजनीतिक मेल-मिलाप तथा आदान-प्रदान जारी था। उदाहरणके लिए 'ख्याल' को ले लीजिये। इसके आविष्कर्ता जौनपुरके सुल्तान हुसेन शर्की माने जाते हैं। 'ख्याल' वर्तमान भारतीय सगीतकलाका प्रधान अंग माना जाता है। इसी तरह 'ध्रुपद' मुस्लिम संगीतकलाका अंग बन गया है। प्राचीन कालसे लेकर आधुनिक विश्रृंखलित युगतक भारतीय संगीतकला इस तरहके सम्मिश्रणका प्रबल प्रमाण है।...केवल सम्राटों तथा प्रान्तोंके शासकोंने ही इस उत्तम कलाको प्रोत्साहन नही दिया बल्कि सरदारोंने भी इसके द्वारा अपना मनबहलाव किया।*
"सम्राट् शाहजहां संगीतकलाके बड़े प्रेमी थे। वह खुद भी अच्छे गवैया थे। उनके दरबारके दो प्रसिद्ध गवैये रामदास और महापात्तर थे'।†

७

यदि संगीतकलाके विशेषज्ञोंकी नामावली तैयार की जाय तो जनसंख्याके अनुपातसे मुसलमानोंका नाम कहीं ज्यादा निकलेगा और जिस अनुपातमें उन्हें केन्द्रीय सभाओंमें प्रतिनिधित्व दिया जा रहा है उससे भी अधिक होगा। यदि उन संगीत सम्मेलनोंकी जांच पड़ताल की जाय जिनका आयोजन संगीतकलाके

---

* एन० एन० ला० प्रोमोशन ऑव लर्निंग इन इण्डिया ड्यूरिंग मुहम्मदन रूल पृ० १५५-५८।

† वही—पृ० १८३।

लब्धप्रतिष्ठ विद्वानोंने किया है और जिनमें हिन्दुस्तानके प्राय: सभी संगीतज्ञोंको निमन्त्रित किया गया है—तो सबसे अनुदार व्यक्तिको भी यह निःसंकोच स्वीकार करना पड़ेगा कि हिन्दू मुस्लिम संगीतकलाओंके सम्मिश्रणसे जिस सांस्कृतिक कलाका उद्गम हुआ है वह हर तरहसे भारतीय है, साम्प्रदायिकताकी उसमें गन्धतक नहीं है।

हिन्दू और मुसलमानोंके इस आदान-प्रदानके प्रयासका उल्लेख करते हुए मि० एस० एम० जाफरने लिखा है:—

"जो मुसलमान भारतमें आये उन्होंने इसे अपना घर बना लिया और इसीमें घुल मिल गये। हिन्दुओंके इस आदिनिवासमें अनवरत लड़ते-झगड़ते रहकर बस जाना उनके लिए सम्भव नही था। साथ-साथ रहनेसे मेल-मिलाप होने लगा और एक दूसरेको समझने लगे। समयकी प्रगतिके साथ उन्होंने वह बीचका रास्ता निकाल लिया जिससे दोनों मित्रकी भांति रह सकें। फारसी संस्कृतिकी रूढ़िसे उन्होंने एक नयी भाषा तैयार कर ली और वर्तमान हिन्दू-मुस्लिम समान संस्कृतिने अपना पुराना ढर्रा त्याग दिया और इस नये स्रोत उर्दूका सहारा लिया। इस सम्मिश्रणसे जिस संस्कृतिका प्रवेश हुआ वह न तो पूर्णतया हिन्दू संस्कृति थी और न मुस्लिम बल्कि दोनोंका सम्मिलित रूप थी। मुसलमान राजाओं और सरदारोंने हिन्दू साहित्यकला, विज्ञान तथा दर्शनको प्रोत्साहन दिया और अपने साहित्य तथा कलाका द्वार बिना किसी भेदभावके सबके लिए खोल दिया। सन्तों और फकीरोंकी तरह उन लोगोंने भी अपने दायरेमें हिन्दू-मुस्लिम एकता स्थापित करनेकी ओर ध्यान दिया। इसका परिणाम यह हुआ कि दोनों जातियां एक दूसरेसे घुल-मिल गयीं। इसलिए यदि हिन्दुओंने मुसलमानोंके मजारोंपर शिरनी चढ़ायी, भाग्यकी परीक्षाके लिए कुरानकी सहायता ली, विघ्नोंसे त्राण पानेके लिए कुरान रखे और मुसलमानोके उत्सव मनाये तो इसमें आश्चर्यकी कोई बात नहीं। क्योंकि मुसलमानोंका भी वही व्यवहार हिन्दू-ग्रन्थों तथा देवी-देवताओंके प्रति था।...मुसलमानोंकी अधिक संख्या हिन्दू वंशोंसे थी, इसलिए उनके सामाजिक विचार और रीति-रिवाजोंमें

किसी तरहके परिवर्तन नहीं हुए—यद्यपि उनमें अनेक हेरफेर हो गय। उन्होंने अपना धर्म अवश्य छोड़ दिया था लेकिन अपनी पुरानी चाल-ढाल, रीति-रिवाज, रस्म, रहन-सहन और मनोरंजनके साधनोंको पूर्ववत् कायम रखा। धर्मपरिवर्तनसे उनके उस वातावरणमें किसी तरहका परिवर्तन नहीं हुआ जो उनके सामाजिक-विचार, अन्धविश्वास तथा जातीय प्रथामें पूरी तरह व्याप्त था।'*

'संस्कृति' शब्द बहुत ही जटिल है। राष्ट्र शब्दकी भांति उसकी कोई निर्दिष्ट परिभाषा नही हो सकती। तो भी किसी एक संस्कृतिमें उत्पन्न व्यक्ति दूसरी संस्कृतिसे अपनी भिन्नता व्यक्त किये बिना नही रह सकता। एक ही संस्कृतिमें उपजातियां हो सकती है जो एक दूसरेसे भिन्न होते हुए भी एक ही संस्कृतिके अंग हो सकती है।

कोई भी संस्कृति जिसका निर्माण भिन्न-भिन्न, अथवा विरोधी सामाजिक, धार्मिक तथा अन्य उपकरणोके सम्मिश्रणसे हुआ हो, इस तरहके दलों या उप-जातियोंसे युक्त रहेगी ही, यह अनिवार्य है। लेकिन इस आधारपर यह नहीं कहा जा सकता कि इन समस्त उपदलों या उपजातियोंको एक सूत्रमें बांध रखनेवाली उस सर्वव्यापी संस्कृतिका कोई अस्तित्व नही है। जब हम एक सस्कृतिसे दूसरी संस्कृतिकी तुलना करना चाहते हैं तब यही उचित है कि दोनों संस्कृतियोंकी उपजातियोंकी एक दूसरेसे तुलना न कर उस सर्वव्यापी संस्कृतिकी ही एक दूसरेसे तुलना करें जो उन उपदलों या उपजातियोके ऊपर विद्यमान है। एक दूसरेसे भिन्न होते हुए भी उनमें बहुत-सी समानताएं पायी जायंगी जिनसे अन्य संस्कृतियोसे उसका भेद स्पष्ट हो जायगा। भारतवर्षके हिन्दू, मुसलमान, सिख, ईसाई और पारसी अनेक बातोंमें एक दूसरेसे भिन्न हैं तो भी उनमें अनेक बातें समान रूपसे पायी जाती है जो उन्हें किसी विदेशी-यूरोपीयसे पृथक् करती है। जो लोग इस तथ्यको स्वीकार करनेके लिए तैयार नही है उन्हे

---

* एस० एम० जाफर—सम कल्चरल आस्पेक्ट्स ऑव मुस्लिम रूल इन इण्डिया, पृष्ठ २०६-७।

विभिन्न ब्रिटिश उपनिवेशोंमें बसे हुए भारतीयोंकी स्थितिका अध्ययन करना चाहिये। वहां उन्हें इस बातका अकाट्य प्रमाण मिल जायगा कि भारतके हिन्दू और मुसलमानोंकी दो भिन्न संस्कृतियां नही है। दक्षिण अफ्रिका, आस्ट्रेलिया, कनाडा तथा केनियामें रहनेवाले यूरोपियनोकी दृष्टिमे प्रत्येक भारतीय——चाहे वह हिन्दू, मुसलमान, सिख, पारसी या ईसाई हो——वह जीव है जिसे इस तरह दबाकर रखना है ताकि वह यूरोपीय सस्कृतिको दूषित न कर सके और उनके रहन-सहनकी विशिष्टताको नीचे न गिरा सके। यह हीन व्यवहार केवल भारतवासियोके साथ नही है जो गुलाम देशके रहनेवाले है। चीनी——जो आजाद देशके रहनेवाले हैं और जापानी——जिन्हे इस युद्धके पहले आदरके साथ देखा जाता था उन देशोंके यूरोपियनोंद्वारा इसी तरहके व्यवहारोका शिकार थे। इस भेदभावका कारण यूरोप और एशियाकी सस्कृतिकी विभिन्नता है। इन उदाहरणोंसे यह स्पष्ट है कि अनेक तरहके भेदभावोंके रहते हुए भी भारतके हिन्दू और मुसलमानोने एक संयुक्त संस्कृतिको जन्म दिया जो हर तरहसे भारतीय है और किसी भी भारतीयको किसी भी विदेशीसे अलग कर देती है चाहे वह पूर्व या पश्चिमसे आया हो चाहे वह प्राचीन दुनिया या वर्तमान दुनियाके किसी भी महाद्वीप या देशका निवासी हो। युद्ध और शान्तिमें सदियोंसे साथ-साथ और हिलमिलकर काम करनेके कारण इससे भिन्न कोई दूसरी बात हो भी नही सकती थी।

यदि आमके दो पौधे एक साथ बांध दिये जाय या एक पौधा आमकी किसी डारसे बांध दिया जाय तो इसका परिणाम यह होता है कि इस तरह जो नया पेड़ तैयार होता है उससे पुराने पेड़की अपेक्षा अच्छा फल पैदा होता है। इसलिए उसे काटकर अलग करनेका प्रयास गलत और क्रूर है और साथ ही यह भी स्मरण रखनेकी बात है कि इतने समयके बाद ऐसा करना सम्भव भी नहीं है क्योंकि समयकी गतिके साथ इस नये पेड़ने अनेक तूफानोंके झटके बर्दाश्त किये और शक्तिशाली बन गया। यदि इस तरहके प्रयासको सफलता मिली तो इससे दोनोंकी घोर क्षति होगी। दोनों कमजोर हो जायंगे और हर तरफसे उनपर आक्रमणका खतरा उपस्थित हो जायगा।

च—एक देश

भारत एक विस्तृत देश है। उत्तरमें हिमालय-शृंखलासे लेकर दक्खिनमें कटिबन्ध रेखातक फैला हुआ है। इसलिए जलवायुकी विभिन्नता तथा शारीरिक गठनमें अन्तर होना स्वाभाविक है। इसके साथ ही साथ प्रायः चार हजार फुट लम्बा समुद्री किनारा है जो समुद्रसे कटकर विषम हो गया है। इस देशमें राजपूताना और सिन्धके समान मरु-प्रदेश भी है और बंगाल तथा आसामके समान हरे-भरे प्रान्त भी। आसामके उत्तर-पूर्वी भाग तथा पश्चिमी घाटके दक्षिण-पश्चिमी भागके समान प्रदेश भी है जहा अत्यधिक वर्षा होती है तथा राजपूताना, सिन्ध और आन्ध्रके कुछ हिस्सेके समान प्रदेश भी है जहां अति अल्प वर्षा होती है। इसी तरह ऐसे भी प्रान्त है जहा अत्यधिक सर्दी तथा गर्मी पड़ती है जैसे, पंजाब तथा सीमाप्रान्त, और ऐसे भी प्रदेश है जहां न तो गर्मी पडती है और न सर्दी ही, जैसे दक्षिणके समुद्री किनारेके प्रदेश। लेकिन जलवायु तथा इन अनेक विभिन्नताओका कोई भी असर यहाके निवायियों-के धार्मिक विश्वासपर नहीं पड़ा है और न इससे किसी तरहका भेद-भाव ही पैदा हुआ है। उत्तर-पश्चिमी तथा उत्तर-पूर्वी प्रदेशोंके जलवायुमें वहुत अधिक अन्तर है, लेकिन साथ ही दोनों प्रदेशोमे मुसलिम जनसंख्या इतनी अधिक है कि इसीको आधार मानकर साम्प्रदायिक बँटवारेकी मांग पेश की जाती है।

जलवायु तथा इस तरहकी अन्य विभिन्नताओंका असर विभिन्न प्रान्तोंके निवासियोंकी पोशाक, गृह-निर्माण, रीति-रिवाज तथा रहन-सहनपर अवश्य पड़ा है। इस तरहके भेदभावके रहते हुए भी भारत अखण्ड है और प्रकृतिने इसे स्वाभाविक प्रतिबन्धों—जैसे ऊंचे ऊंचे पहाड़ और समुद्र—द्वारा अन्य देशोंसे अलग रखना ही उचित समझा है। प्रत्येक आक्रमणकारी, विजेता या सम्राट्ने—चाहे वह हिन्दू शासनकाल या मुसलमान शासनकालमें हुआ हो—इस भूमि-भागके प्रत्येक प्रान्तपर अपना शासन फैलानेका यत्न किया है। प्रत्येक शासकने इस बातका यत्न किया कि यदि शासनके अन्दर नहीं तो प्रभुत्वके अधीन तो यह

समूचा देश अवश्य आ जाय। उत्तर पश्चिमी सीमाके एक कोनेमें सदा ऐसा भूमिभाग रहा है जो उस युगमें कभी भी किसीके अधीन नहीं रहा, कुछ काल-के लिए किसी भारतीय अथवा विदेशीका शासन उसपर भले ही हो जाता रहा हो। भारतको अपने अधीन करनेके लिए ब्रिटिश सरकारने भी उसी पुरानी नीतिको अपनाया। आजके प्रान्तोंके समान उस युगमें छोटे छोटे राज्य थे जो आपसमें लड़ा करते थे। लेकिन किसी भी शासक, राजा या नवाबने कभी यह कल्पना नहीं की कि वह इस देशका निवासी नही है अथवा किसी भी प्रकार वह विदेशी है या चीन, बर्मा, अरब अथवा तुर्किस्तानका रहनेवाला है। सन्ध्या सरीखे नित्यकर्मके एक संकल्पके लिए जिस मन्त्रका प्रतिदिन पाठ किया जाता है उसमें अखण्ड भारतकी ही पूर्ण कल्पना है और जलपात्रमें सिन्धु गंगा तथा कावेरी आदि नदियोंका आवाहन किया जाता है। यह बात उसी समयतक सीमित नहीं थी जब इस देशपर हिन्दू चक्रवर्ती सम्राटोंका शासन था बल्कि उस युगमें भी जब यहां मुसलमान बादशाह राज्य करते थे अथवा जब दिल्लीके तख्तपर मुसलमानोंका राज्य था और भिन्न भिन्न प्रदेशोंका राज्य छोटे छोटे स्वतन्त्र राजाओंके हाथमें था। आज जब समूचे भारतपर ब्रिटिश झण्डा फहरा रहा है तब भी उसी मन्त्रका उच्चारण होता है। हिन्दुओके चार प्रसिद्ध तीर्थस्थान है जिन्हे धाम कहते हैं। इन चारो धामोंकी यात्रा करना प्रत्येक हिन्दू अपना सबसे बड़ा धार्मिक कृत्य मानता है। ये धाम भारतके दक्षिणी विन्दुपर रामेश्वर उत्तरमें हिमालयकी १५००० फुट ऊंची चोटीपर बदरिकाश्रम, पूर्वी किनारेपर उड़ीसामें जग-न्नाथ और पश्चिमी किनारेपर काठियावाड़में द्वारका है। यह किसी भी प्रकार अस्वीकार नहीं किया जा सकता कि चाहे देशपर किसी जातिका शासन क्यों न रहा हो, भारत कितने भी छोटे-मोटे राज्योंमें क्यों न विभक्त रहा हो, लेकिन यहांके हिन्दुओंने कभी इसकी खण्डताकी कल्पनातक नही की और मुसलमान तथा ब्रिटिश शासकोंने भी हिन्दुओंकी उसी परम्पराको पूर्णतः स्वीकार किया है।

दूसरी तरफ दो राष्ट्रीयताके सिद्धान्तकी इस घोषणाके पहले आधुनिक कालतक इस देशके मुसलमान निवासियोंने भी कभी यह कल्पना नहीं की कि भारतका कोई भी भाग इससे भिन्न या अलग है। किसी भी मुसलमान विजेता या शासकने इस देशके किसी भी अंशको अपनी मातृभूमि या जन्मभूमिमें मिलानेकी कल्पना नहीं की। जो समर्थ था वह यहां बस गया और जिस प्रदेशके निवासी उसकी अधीनता स्वीकार करनेके लिए तैयार नहीं थे, उन्हें अपने अधीन करनेका यत्न किया। सीमाके पास इस तरहका भूमिभाग था जो कभी एक तथा कभी दूसरी सीमामें समा जाता था, इस बातका प्रमाण नही हो सकता कि ऊपर जो बातें कही गयी है वे गलत है।

मुसलमानी शासनकालकी बात यदि छोड़ दी जाय तो भी ब्रिटिश शासन-कालमें ही ब्रिटिश भारत तथा देशी राज्योंतकके मुसलमानोने भारतके किसी भी भूभागको इससे अलग नही माना है। इसे खण्ड करनेकी आवाज एकदम नयी है। मुसलिम लीग—जो उत्तर-पश्चिमी और पूर्वी प्रदेशको स्वतन्त्र राष्ट्रके रूपमें स्थापित करना चाहती है—वह भी इन प्रदेशोंको भारतसे बाहर मानती है या भारतका एक अंग मानती है, यह मैं निश्चित रूपसे नही कह सकता। जहा-तक मुझे मालूम है एकमात्र श्री सी० रहमतअली—जो पाकिस्तान राष्ट्रीय आन्दो-लनके विधायक अध्यक्ष है—ही ऐसे व्यक्ति है जिन्होने स्पष्ट शब्दोमें कहा है:— 'भारतकी दैशिक इकाईको स्वीकार करनेका अर्थ होगा मिल्लतके गलेमें भारतीयता-का क्रूर जुआ बांध देना।' उन्होने मुसलमानोसे कहा है कि 'हमलोगोंको भारतसे हर तरहका नाता तोड़कर रहना होगा, भारतीयतासे मिल्लतकी रक्षा करनी होगी और 'पैन इस्लामिका'का समर्थन करना होगा।'* 'अखिल भारतीय मुस्लिम लीग' नामसे भी उन्हें चिढ़ है क्योंकि उसके साथ 'भारतीय' शब्द लगा है और 'इस तरह भारतीयताके विरुद्ध हमारी युद्ध-घोषणाको वह खोखला साबित कर देता है।'

---

* दी मिल्लत ऑव इस्लाम ऐण्ड दि मेनास ऑव इण्डियनिज्म—एक पत्र जो श्री सी० रहमतअलीने पाकिस्तान नेशनल आन्दोलनकी सुप्रीम कौसिल-के पास भेजा था। पृष्ठ ७

"उसमें 'भारतीयता'की गन्ध जाती है और इस तरह 'मिल्लत' भारतीयताका अंग बन जाता है। नामोके असर और प्रभावको किसी भी तरह लघु नहीं समझना चाहिये। ये व्यक्त चिह्न है और धारण करनेवालेके व्यक्तित्वको स्पष्ट करते हैं। इतना ही नही, ये ऐसे चारित्रिक चिह्न है जिनसे प्रोत्साहन मिलता है........इस भूलका हमलोगोको बहुत बड़ा मूल्य चुकाना पड़ा है। इसने हमारी राष्ट्रीयताको हलका बना दिया है और हमलोगोको भारतीय। मै यह इसलिए नही कह रहा हूं कि 'भारतीय' शब्दमे किसी तरहकी कमी है। वह उसी तरह आदरणीय है जिस तरह कोई दूसरा नाम। असल बात यह है कि हमलोग भारतीय नहीं हे इसलिए हमारे किसी विधानमे 'भारतीय' शब्दका रहना हमारी हीनताका द्योतक है।"* इस तथ्यको समझ लेनेके बाद श्री रहमतअलीने "१९३२मे उत्तर-पश्चिमके पाच मुसलिम-प्रधान प्रदेशोंको पाकिस्तानकी संज्ञा दी। १९३७में उन्होने बगाल-आसामको बंग-ए-इस्लाम और हैदराबाद—दक्खिनको 'उस्मानिस्तान' नाम दिया। इन तीनों प्रदेशोको वे मिल्ली गढ़ मानते है जो अकारण या मनमाने ढगसे विभिन्न राष्ट्रीयतायुक्त उपमहाद्वीप भारतमें मिला लिया गया है।"† इस तरह हम देखते है कि १९३३से श्री रहमतअली तथा पांकिस्तान राष्ट्रीय आन्दोलनद्वारा भारत एक उपमहाद्वीप माना जाने लगा है जिसमें भिन्न भिन्न देश शामिल है। किसी दूसरी महत्वपूर्ण संस्था या व्यक्तिने उनकी इस उक्तिको स्वीकार किया है या नही, मुझे नही मालूम! शासनकी सुविधाके लिए देशोंका बँटवारा हो सकता है, लेकिन मुझे एक भी ऐसा उदाहरण नही मिला है जहां इस तरह किसी भी देशका निर्माण हुआ हो। यूरोपमें जब कभी किसी देशके टुकड़े करनेके इस तरहके प्रयास हुए है तब उसका परिणाम अनवरत घृणा, द्वेष और जातीय युद्ध हुआ है। वर्तमान विश्व-नाशकारी युद्ध भी इसी तरहके प्रयासका कुफल है। इससे हमलोगोंको शिक्षा और चेतावनी ग्रहण करनी चाहिये।

---

* वही पृष्ठ १५। † वही पृष्ठ १ तथा १६।

छ—एक इतिहास

नवीं सदीमें मुहम्मद बिन कासिम सिन्धके किनारेपर उतरा था। यहींसे हिन्दुस्तानपर मुसलमानोंका आक्रमण आरम्भ होता है। यह चढ़ाई १८वीं सदी-तक जारी रही। आखिरी चढ़ाई अहमदशाह अब्दालीकी हुई थी। निश्चय रूप-से यह नहीं कहा जा सकता कि ८ या ९ सौ वर्षोंकी यह लगातार चढ़ाई केवल धार्मिक दृष्टिकोणसे की गयी थी अर्थात् धार्मिक जोशमें आकर केवल इसलाम धर्मको फैलानेके लिए यह चढाई थी। ये चढाइयां भी अन्य साधारण चढ़ाइयोंकी भांति अर्थलोलुपता और भौतिक लाभकी दृष्टिसे की गयी थीं, धार्मिक जोशकी मात्राका इनमे सर्वथा अभाव था। आरम्भमें इन चढ़ाइयोंका मुकाबला केवल हिन्दुओने किया क्योकि उस समयतक ये ही इस देशके निवासी थे। इसलिए वे आरम्भिक लडाइयां हिन्दुओं और मुसलमानोंके बीच ही हुई। लेकिन आरम्भिक कालसे ही इन मुसलमान आक्रमणकारियोकी अभिलाषा यहां बस जानेकी थी। ग्यारहवी सदीमे शहाबुद्दीन गोरीकी चढाई इस देशपर हुई थी। इसके बाद जितने भी मुसलमानोंने इस देशपर चढाई की—चाहे वे पठान रहे हो, अथवा तातार, तुर्क, मुगल या अफगान जो भी हिन्दुस्तानके बाहर-से आये, सबने हिन्दुस्थानमें किसी न किसी भागपर अपना प्रभुत्व कायम किया और अवसर पाकर उसका विस्तार किया। ज्यों ज्यों उनके राज्य-का विस्तार होता गया त्यों त्यों उनकी राजधानी दिल्लीसे समूचे राज्यका प्रबन्ध करना कठिन होता गया और सुदूर देशोके शासनके लिए उन्हें शासक (गवर्नर) नियुक्त करने पड़े। इन शासकोने केन्द्रीय शासन (साम्राज्य) की कमजोरियोंसे सदा लाभ उठाया और मौका पाते ही अपने अपने प्रान्तोंमें अपना स्वतन्त्र राज्य कायम कर लिया। इसलिए मुसलमानी शासनकी लम्बी अवधिमें हमें दो तरहकी लड़ाइयां दृष्टिगोचर होती हैं। आरम्भमें मुसलमानों-को अपने राज्यके विस्तारके लिए युद्ध करने पड़े और युद्ध मुख्यतः हिन्दुओंके साथ हुए क्योंकि जिन राज्योंको मुसलमान विजेता अपने अधीन करना चाहते थे उनपर हिन्दुओंका शासन था, लेकिन थोड़े ही कालके भीतर स्वतन्त्र

मुसलमान राष्ट्र हिन्दुस्थानमें कायम हो गया था और दिल्लीके मुसलमान सम्राट्‌को जितने युद्ध करने पड़े अथवा जितनी कठिनाइयां सहनी पड़ीं उनमेंसे अधिकांश हिन्दुओंके मुकाबले नहीं थी बल्कि मुसलमान राजाओं अथवा अपने उन शासकोंके खिलाफ थीं जिन्होंने विद्रोह खड़ाकर अपनेको स्वतन्त्र बना लिया था। इन युद्धों और चढ़ाइयोंमें हिन्दू सैनिकोंने दोनों पक्षोंकी ओरसे युद्ध किया। गोरीके बाद जितने भी मुसलमान विजेता उत्तर-पश्चिमसे आये सबको भारतके किसी न किसी मुसलिम राज्यपर ही चढ़ाई करनी पड़ी और दिल्लीके किसी न किसी मुसलमान शासकको ही परास्त करना पड़ा। उन्होने ऐसा ही किया भी। चंगेजखां और तैमूरकी चढ़ाई किसी हिन्दू सम्राट्‌के ऊपर नही थी बल्कि दिल्लीके मुसलमान बादशाहोके ऊपर थी और उन्होने ही इन चढ़ाइयोंका सामना भी किया था। मुगल साम्राज्य स्थापित करनेके लिए बाबरको किसी हिन्दू सम्राट्‌से युद्ध नहीं करना पड़ा था, बल्कि मुसलमान सम्राट् इब्राहीमलादीको पानीपतके मैदानमें हराकर उसने इस देशपर अपना पैर जमाया। मेवाड़के राणा सागाके साथ बाबरका जो युद्ध हुआ था उसमें राणाकी तरफसे केवल राजपूत ही नहीं लड़े थे बल्कि मेवातका हसनखां ओर सिकन्दरलोदीका लड़का मुहम्मदलोदीने भी राणाका साथ दिया था क्योंकि राणने उसे दिल्लीका सम्राट् स्वीकार किया था। हिन्दू और मुसलमानोकी इस संयुक्त सेनाको १५२७ ई०में खनवाके मैदानमें हरानेके बाद ही दिल्लीमें बाबरके साम्राज्यकी जड़ जम सकी।

पठान मुसलमान शासक शेरशाहने ही बाबरके पुत्र हुमायूसे राज्य छीन लिया था और शेरशाहकी मृत्युके बाद जब इसपर फिर मुगलोंका प्रभुत्व कायम हुआ तब हुमायूके पुत्र अकबरको अपने साम्राज्यकी नींव दृढ़ करनेके लिए मुसलमान शासकोंसे ही मोर्चा लेना पड़ा था। अकबरसे लेकर औरंगजेबतक मुगल साम्राज्यका इतिहास विद्रोही मुसलमान शासकोंको दबाने तथा स्वतन्त्र मुसलमान राज्यको जीतकर साम्राज्यमें मिलानेके वृत्तान्तोंसे भरा पड़ा है। इतिहास साक्षी है कि औरंगजेबको दक्खिनके स्वतन्त्र मुसलमान राज्य बीजापुर और गोलकुण्डाको परास्त करनेके लिए कई वर्षतक दक्खिनमें रहना पड़ा और अन्तमें

वह उधर ही मर भी गया। मुगल सम्राटोंकी तरफसे इन चढ़ाइयोंका सेना-पतित्व अकबरके शासनकालमें मानसिंह और भगवानदास तथा औरंगजेबके शासनकालमें जसवन्तसिंह और जयसिंहने किया था। इन चढ़ाइयोंमें उन्होंने केवल मुसलमान शासकोंको ही परास्त नही किया बल्कि उन हिन्दू राजाओंको भी तहस-नहस कर डाला जो स्वतन्त्र शासन कर रहे थे। इससे यह स्पष्ट है कि मुसलमान शासनकी उस लम्बी अवधिमें भारतपर जो चढ़ाइयां हुई और हिन्दु-स्तानमें जो युद्ध हुए, सबका एकमात्र उद्देश्य अर्थ-लोलुपता और भौतिक लाभ था जो प्रायः सभी चढ़ाइयों और युद्धोंके कारण हुआ करते है अर्थात् आकांक्षा, साम्राज्यके लिए स्पर्धा, और साम्राज्य-विस्तारका लोभ तथा साम्राज्य कायमकर वह ख्याति और यश प्राप्त करना जो इनके वरदान माने जाते हैं।

तेरहवीं सदीके आरम्भसे लेकर—जब १२०६ में कुतुबुद्दीन ऐबकने हिन्दुस्तानमे मुसलमानी सलतनत कायम की—१८वीं सदीके अन्ततक, जब कि ब्रिटिश शासनने अपनी नीव मजबूत कर ली थी—इन ६०० बर्षोका इतिहास हिन्दू और मुसलमानोंके बीच परस्पर संघर्ष और अनवरत युद्धका इतिहास नहीं है। न तो यह उपयुक्त स्थान है और न यहां इसकी गुन्जाइश है कि विस्तृत रूपसे यह दिखलाया जाय कि ये लड़ाइयां हिन्दू और मुसलमानोके बीच उतनी ज्यादा नहीं लड़ी गयीं जितनी ज्यादा दो मुसलमान राज्योके बीच लड़ी गयी थीं। यहां केवल इनका दिग्दर्शनमात्र कराया जा सकता है।

इस कालको दो हिस्सोंमें बांटा जा सकता है। एक वह जब दिल्लीके सिंहा-सनपर सुलतानोंका आधिपत्य था और दूसरा मुगलोंका शासनकाल। प्रथम कालमें भारतमें मुसलमानोंका राज्य ही स्थापित नही हुआ बल्कि हिमालयकी तराईसे लेकर रामेश्वरम्तक और पश्चिमी सीमासे लेकर उड़ीसा और बंगालके पूर्वी किनारेतक उसका फैलाव भी हुआ और साथ ही साथ अनेक छोटे छोटे स्वतन्त्र और अर्द्ध स्वतन्त्र मुसलमान राज्य भी कायम होते गये। समय समयपर दिल्लीके सिंहासनपर भी भिन्न-भिन्न मुसलमान वंशोंका शासन कायम होता रहा।

दिल्लीके सुलतानोंका अधिकांश समय हिन्दुओंको परास्त कर साम्राज्यके विस्तारमें ही नहीं बीतता था बल्कि उन्हें अपने अधीनस्थ मुसलमान शासकोंके विद्रोहको भी दबाना पड़ता था। जो मुसलमान शासक स्वतन्त्र हो जाते थे उन्हें हटाकर उनके राज्यको साम्राज्यमें पुनः मिलाने तथा कभी-कभी आक्रमणोंसे अपनी रक्षामें वे व्यस्त रहते थे। ११९३ और १५२६ के बीच दिल्लीके सिहासनपर ३५ सुलतान आरूढ़ हुए थे जो ५ भिन्न भिन्न वंशके थे। ये सभी बादशाह मुसलमान थे; प्रत्येक इसलाम धर्मको मानता था और प्रत्येकको किसी मुसलमान वंशने ही पदच्युत किया। जो ३५ सुलतान दिल्लीके सिहासनपर बैठे उनमेंसे १९ अर्थात् अधिकांश जानसे मारे गये या कत्ल कर दिये गये। इन्हे हिन्दुओने नही, बल्कि मुसलमानोंने ही कत्ल किया।

जो स्वतन्त्र या अर्धस्वतन्त्र मुसलमान राज्य इस कालमें स्थापित हुए थे उनमेंसे कुछ ये है—बंगाल, गुजरात, जौनपुर, मालवा, खानदेश, बहमनी राज्य—जो आगे चलकर बरार, बिहार, अहमदनगर, बीजापुर और गोलकुण्डा नामक पांच राज्योंमे बंट गया। इनमेसे प्रत्येक राज्यका अलग अलग स्वतन्त्र इतिहास है अर्थात् पड़ोसी मुसलमान राज्यों तथा दिल्लीके राजाके साथ सघर्षका इतिहास। कभी कभी उन हिन्दू राजाओके साथ भी उनकी मुठभेड़ हो जाया करती थी जो उस समय भारतके किसी भागके शासक थे।

भारतके मुसलमान शासकोंपर समय समयपर उत्तर-पश्चिम सीमाप्रान्तकी ओरसे बाहरी मुसलमान विजेताओंकी चढाइयां भी होती रही। इन चढ़ाइयोंका तांता इतना अधिक बंध गया था कि अलाउद्दीनके समयसे तो उस तरफकी चढ़ाइयोंको रोकनेके लिए एक तरहकी किलेबन्दी करनी पड़ी थी।

सन् १५२६ में बाबरने पानीपतके मैदानमे इब्राहिमलोदीको हराकर भारतमें मुगल साम्राज्यकी नीव डाली। लेकिन दिल्लीका सिहासन उसके उत्तराधिकारियोंके लिए कभी गुलाबका सेज नहीं बन सका। उसके बेटे हुमायूको अपने ही भाई कामरानसे युद्ध करना पड़ा जो काबुल और कन्धारके राज्यसे सन्तुष्ट न होकर लाहौरपर चढ़ आया और समस्त पंजाबको अपने अधीन

कर लिया। हुमायूको अपने अन्य दो भाइयों—हिन्दल और मिर्जा अस्करीसे भी संग्राम करना पड़ा था। हिन्दल लड़ाईमे मारा गया और कामरान कैद कर लिया तथा उसकी दोनो आखें निकाल ली गयी। अस्करी भी कैद कर लिया गया और कामरानकी तरह उसे भी मक्का भेज दिया गया।

उत्तर भारतमें अपनी स्थिति कायम रखनेके लिए हुमायूको अनवरत युद्ध करना पडा था। उसे गुजरातके बहादुरशाहपर चढ़ाई करनी पड़ी लेकिन शेरखाके विद्रोहके कारण वह गुजरातको अपने अधीन नही कर सका। शेरखां बिहारका एक अफगानी सरदार था। इसने हुमायूको हराकर दिल्लीका सिहासन छीन लिया। हुमायू वर्षोतक मारा-मारा फिरता रहा और फारसके शाहसे उसे सहायताकी भीख मागनी पड़ी।

शेरशाहके बाद उसका बेटा सलीमशाह गद्दीपर बैठा। अफगान सरदार उसकी हुकूमत माननेके लिए तैयार नही थे। कितनोंको उसने कैद कर लिया और कितने ही मौतके घाट उतारे गये। पजाबके शासकने विद्रोह किया। उसका दमन किया गया। वह भागकर काश्मीर चला गया और वही मार-डाला गया।

सलीमशाहके बाद उसका बेटा फिरोजखा गद्दीपर बैठा। इसे उसके मामा मुबारिजखाने मरवा डाला और मुहम्मदशाहके नामसे खुद गद्दीपर बैठा। उसके राज्यका प्रबन्ध हेमू नामक हिन्दू करता था। सरदारोने बगावतका झण्डा खड़ा किया और इब्राहिम सूरने दिल्ली तथा आगरेपर कब्जा कर लिया। इब्राहिम सूरको सिकन्दर सूरने मार भगाया। हुमायू चुपचाप अवसरकी प्रतीक्षा कर रहा था। भारतकी इस अस्तव्यस्त दशासे उसने लाभ उठाया। सेना लेकर चढ़ आया और सरहिन्दके मैदानमें सिकन्दर सूरको हराकर १५५५ में पुनः अपने साम्राज्यको प्राप्त किया लेकिन थोड़े ही दिन बाद मर गया।

हुमायूंका बेटा अकबर सिंहासनपर बैठा। काबुल हिन्दुस्तानका मातहत राज्य समझा जाता था। इसका शासक अकबरका छोटा भाई महमूद हकीम बनाया गया। उस समय अकबरकी उम्र छोटी थी। राज्यकी देखभालका काम

बैरमखां करते थे। इस समय मुगल साम्राज्यपर पहली विपत्ति सूर राजाओद्वारा आयी। उसके अमात्य (प्रधान मन्त्री) हेमूने दिल्लीपर चढ़ाई कर दी और मुगल सेनापति फरीदबेगको हरा दिया। इस आयोजनके फलस्वरूप बैरमखांने उसे मरवा डाला। इस विजयके बाद हेमूने विक्रमादित्यकी उपाधि ग्रहण की और साम्राज्य स्थापित करनेके यत्नमे लग गया। पानीपतके मैदानमें बैरमखांने उसे हराकर कैद कर लिया और मार डाला। इसके बाद ही सिकन्दर सूरने आत्मसमर्पण कर दिया और इस तरह १५५६ मे सूरवशका अन्त हुआ।

बैरमखाकी अधीनतासे अकबर अधीर हो उठा। इस काममे उसकी मा, हमीदा बेगम, तथा उसकी धाय महम अका और उसके बेटे आदमखांने उसे बहुत प्रोत्साहित किया। १५६० ई० मे अकबरने बैरमखांको अलग कर दिया। बैरमखां मक्काके लिए रवाना हुआ। लेकिन अकबरके मनमे यह शंका बनी रही कि कही वह विद्रोह न खड़ा करे। इसलिए उसे जल्दी रवाना कर देनेके लिए अकबरने पीरमुहम्मदको सेना लेकर भेजा। इससे चिढ़कर उसने विद्रोह खड़ा कर दिया और पंजाबकी तरफ बढ़ा। अकबरने उसका पीछा किया। अन्तमें उसने आत्मसमर्पण कर दिया और उसकी पिछली सेवाओका ख्यालकर उसे मक्का जाने दिया गया। गुजरातके पास पाटनमे उसके किसी दुश्मनने उसे मार डाला।

अकबरके सेनापति पीरमुहम्मद और आदमखांने मालवापर चढ़ाई की और वहांके मुसलमान शासकको बड़ी क्रूरता और निर्दयतासे दबाकर उसका राज्य छीन लिया। अकबरको इन विद्रोहोंका दमन करना पड़ा था:—

(१) अब्दुल्लाखां उजबेग पीरमुहम्मदकी जगह मालवाका शासक बनाया गया था। उसने मालवामें विद्रोह कर दिया।

(२) खा जमनने जौनपुरमे बगावत की।

(३) उजबेगोसे प्रोत्साहित होकर अकबरके भाई मिर्जा हकीमने सिंहासन छीन लेना चाहा था। अकबर पंजाबकी तरफ बढ़ा। मिर्जा तेजीसे पीछे हटने

लगे। खां जमन लड़ाईमें मारे गये। मिर्जा गिरफ्तार कर लिये गये और उनका सिर उतार लिया गया। अन्य बलवाई भी बड़ी क्रूरतासे दबाये गये।

१५७३ ई०में अकबरने मुजफ्फरशाहसे गुजरातको छीनकर अपने साम्राज्य-मे मिला लिया। अकबरके इतिहासमे यह महत्वपूर्ण घटना है।

शेरशाहके शासनकालमे बंगाल अफगान सरदारोंके अधीन था। १५६४-में बिहारके सुलेमानखाने गौड़पर कब्जा किया और दोनों प्रान्तोके शासक बन गये। उसके बाद उसका बेटा बयाजिद शासक बना। उसके वजीरोंने उसे मार डाला और उसके छोटे भाई दाऊदको गद्दीपर बिठाया। दाऊदने जमनिया-के किलेपर कब्जा कर लिया। इससे वह सम्राट्का कोप-भाजन बन गया। अकबरने अपने सेनापति मुनीमखाको लेकर उसपर खुद चढ़ाई कर दी। १५७६ मे दाऊद लड़ाईमें मारा गया। इस तरह बगाल और बिहार मुगल साम्राज्यमे मिला लिये गये। इसके बाद १५९२ ई०में उड़ीसा भी मिला लिया गया।

मुजफ्फरखा तुरबती बंगालका शासक बनाया गया। लगानबन्दीमें उसकी क्रूरता और बेईमानियोंसे स्थानीय सरदार भडक उठे। धार्मिक सहनशीलता "सुलह-कुन" के कारण अकबर अपनी धार्मिक नीतिके लिए बदनाम हो गये थे। इससे लाभ उठाकर चिढ़े हुए उलमाओने जौनपुरके काजीके नेतृत्वमें इस आशयका फतवा निकाल दिया कि सम्राट्के विरुद्ध हथियार उठाना जायज है। चगतायियोंका एक महत्वपूर्ण फिरका बाबाखांके अधीन गौड़पर चढ़ आया। अकबरने राजा टोडरमल (हिन्दू) को उसे दबानेके लिए भेजा। मुजफ्फरखां मारा गया और सारे बंगाल तथा बिहारपर बलवाइयोंका कब्जा हो गया। बड़ी कठिनाईसे इस विद्रोहका शमन किया गया।

हकीमने पुनः पंजाबपर चढ़ाई कर दी। लेकिन अकबरने उसे हरा दिया। १५८५ में उसकी मृत्युके बाद काबुलको दिल्लीमें मिला लिया गया और वहांका शासन-भार राजा मानसिंह (हिन्दू) को सौंपा गया। सीमाप्रान्तके फिरके भी दबा दिये गये। काश्मीरके मुसलमान बादशाहको जबर्दस्ती दबाया गया और

काश्मीरको मुगल साम्राज्यमें मिला लिया गया और मिर्जा जानीसे सिन्ध छीन लिया गया। १५९५ में कन्धार भी मिला लिया गया।

समस्त उत्तरी भारत और अफगान प्रदेशपर अपनी सुदृढ़ प्रभुता स्थापित कर अकबर दक्खिनकी ओर मुडा। पहली चढाई अहमदनगरपर हुई। वहांकी गद्दीपर बुरहान निजामशाहकी बहन चादबीबी थी। उसने वीरताके साथ मुगलोंका सामना किया। अन्तमे वह हार गयी और १६०० ई०मे अहमद-नगरका पतन हुआ। इसके बाद बुरहानपुरपर चढ़ाई की गयी और १६०१में खानदेशके शासक मीरान बहादुरसे असीरगढ़ जीत लिया गया।

दक्खिनके लिए प्रस्थान करते समय अकबरने राजधानीका भार अपने पुत्र सलीमको दिया था और उसे हिदायत कर दी गयी थी कि राजा मानसिंह तथा शाह कुलीखांको लेकर वह मेवाड़पर चढ़ाई कर दे। लेकिन शाहजादेने विद्रोह खड़ा किया और स्वतन्त्र बन गया। अकबर फौरन दक्खिनसे वापस आया। सलीमने इलाहाबादमें स्वतन्त्र राज्य कायम कर लिया था। लेकिन बादमें उसने अकबरसे क्षमा मांग ली और पिता-पुत्रमें मेल हो गया। इसके बाद सरदारोंने षड्यन्त्र किया कि सलीमको पदच्युत कर उसके छोटे बेटे खुसरोको गद्दीका उत्तरा-धिकारी बनाया जाय। लेकिन षड्यन्त्र सफल नहीं हुआ और अकबरके मरनेपर १६०५ में जहांगीरके नामसे सलीम गद्दीपर बैठा।

राजसिंहासनपर बैठते ही जहांगीरको अपने ही बेटे खुसरोके षड्यन्त्रका मुकाबला करना पड़ा। वह आगरासे निकल भागा और कतिपय सरदारोंको मिलाकर बगावतका झण्डा खड़ा किया। उसे हराकर गिरफ्तार किया गया और हथकड़ी तथा बेड़ियोंके साथ सम्राट्के पास लाया गया। वह कैदमें डाल दिया गया और उसके सहायकोंको कड़ी सजाएं दी गयी। उसके आकर्षक व्यक्तित्वने पुन: षड्यन्त्रका बीजारोपण किया और सम्राट्की हत्या कर उसे सम्राट् बनानेका गुप्त आयोजन होने लगा। लेकिन षड्यन्त्रका भण्डा फूट गया। खुसरोकी आख निकाल ली गयी और उसे कालकोठरीमें डाल दिया गया। १६१६ ई०में उसे उसके जानी दुश्मन आसफखांके हवाले कर दिया

गया। आसफखांने खुसरोको उसके प्रतिद्वन्दी शाहजहाके सुपुर्द कर दिया, जिसने उसे १६२२ ई० में मरवा डाला। वह इलाहाबादमें दफनाया गया। वह स्थान आज भी खुसरोबागके नामसे मशहूर है। उसकी हत्यासे जहांगीरको बड़ा सदमा पहुँचा। शाहजहाका दूसरा प्रतिद्वन्दी और शत्रु शहरयार था। यह नूरजहांका दामाद होता था। शाहजहाने खुद अपने पिताके खिलाफ बगावत की और १६२२ से अपने पिताकी मृत्युतक बागी बना रहा। वर्षों-तक इधर-उधर भटकनेके बाद अन्तमें उसने आत्म-समर्पण किया और अपनी नेकनीयतीके सबूतमें अपने दो बेटों दारा और औरगजेबको दरबारमें जमानतके तौरपर रख दिया। जहांगीरकी मृत्युके बाद शहरयारने सिहासन पानेके लिए यत्न किया लेकिन असफल रहा। वह कैद कर लिया गया और उसकी आंखें निकाल ली गयी। इस तरह अपने ससुर आसफखांकी सहायतासे अपने प्रतिद्वन्दियो-को मौतके घाट उतारकर शाहजहां सम्राट् बना। आसफखांने क्रूरताके साथ राजवंश-के शाहजादोंकी हत्या करवायी। कितनी बेगमोंने तो आत्महत्या कर ली। जहांगीरको भी बगालमे अपने अफगान सरदारोंके विद्रोहका दमन करना पड़ा था और अपने सरदार महाबतखांसे ही युद्ध करना पड़ा था जिसने एकबार जहांगीर और नूरजहां दोनोंको कैद कर लिया था। शाहजहांका पहला नाम शाहजादा खुर्रम था। दक्खिनके मुसलमानी राज्योंको परास्त करनेपर उसके पिताने उसे शाहजहाकी उपाधि दी थी। हिन्दू राजाओंके खिलाफ जहांगीरकी केवल दो चढ़ाइयां हुई थी। पहली चढ़ाई १६२० मे कांगड़ापर और दूसरी चढ़ाई मेवाड़पर। मेवाड़के राजा अकबरके समयसे ही मुगल साम्राज्यका मुकाबला करते आ रहे थे। जहांगीरने उन्हें अपने अधीन किया लेकिन वे इसी समय कन्धार साम्राज्यसे निकलकर फारसवालोके कब्जेमें चले गये।

सिहासनपर बैठते ही शाहजहांको अपने बुन्देला सरदारोंके विद्रोहका मुका-बला करना पड़ा। वे तो दबा दिये गये लेकिन १६२९ मे दक्खिनके सूबेदार खाजहां लोदीने विद्रोह कर दिया। अन्तमें वह भी परास्त किया गया और अपने सौ साथियोंके साथ सूलीपर चढ़ा दिया गया।

१५९९ ई० में अकबरने खानदेश और १६०० में अहमदनगर जीतकर मुगल साम्राज्यमें मिला लिया था। लेकिन अहमदनगरपर वास्तविक अधिकार कभी भी स्थापित नहीं हुआ था। मलिक अम्बरके प्रभावके करण जहांगीरके शासनकालमें भी उस दिशामें कोई प्रगति नहीं हुई थी। शाहजहांकी विजय स्थायी नहीं रह सकी और दक्खिनके सुलतान पूरी तरह दबाये नही जा सके थे। १६३३ में अहमदनगर सदाके लिए साम्राज्यमें मिला लिया गया। लेकिन बीजापुर और गोलकुण्डा अक्षत बने हुए थे। बीजापुरके सुलतानकी सहायतासे शाहजीने निजामशाहीके एक बालकको अहमदनगरकी गद्दीपर बिठाया था। इससे सम्राट् बिगड़ खड़े हुए और उन्होने उनके खिलाफ फौजे भेजी। गोलकुण्डाके सुल्तान परास्त किये गये। इसी समय बीजापुरने भी सम्राट्की अधीनता स्वीकार कर ली। इसके बाद औरंगजेब दक्खिनका सूबेदार बनाया गया। यह शान्ति स्थायी नहीं रह सकी। कुछ ही वर्षोंके बाद इनपर पुनः चढ़ाइयां करनी पड़ीं। बिहारपर कब्जा कर लिया गया। गुलबर्गामें बीजापुरको परास्त किया गया और १६५८ के घेरेके बाद कल्यानीका किला अधीन कर लिया गया। राजनीतिक कारणोंके अलावा दक्खिनके दोनों सुलतान शिया थे इसलिए भी उन्हें दबाना सुन्नी सम्राट्का बहुत बड़ा कर्तव्य था।

जहांगीरके शासनकालमें ही फारसवालोने कन्धार दखल कर लिया था। शाहजहांके शासनकालमें उसे प्राप्त करनेके लिए बार-बार कोशिशें की गयी। १६३९ में कन्धारके शासनकालको अपने ही शाहपर सन्देह हुआ। उनकी नीयतपर सन्देह कर उसने दिल्लीके सम्राट्के पास सन्देश भेजा। तुरत सेना भेजी गयी और १६३९ में बिना किसी प्रयासके कन्धारपर कब्जा हो गया। लेकिन फारसवाले चुप नहीं रहे। उनका प्रयास जारी था और १६४९ में उन्होंने कन्धार पुनः छीन लिया। दिल्लीके सम्राट्की तरफसे लगातार धावे किये गये। अनेक बार कन्धारपर घेरा डाला गया। इस चढ़ाईमें प्रायः १२ करोड़ रुपये खर्च पड़े, तो भी सम्राट्को सफलता नहीं मिली।

शाहजहांने बल्ख और मदख्शांको भी जीत लेनेका प्रयास किया। शाहजादा मुरादके अधीन बहुत बड़ी सेना रवाना की गयी। बोखाराके शासक नाज मुहम्मदखा और उसके विद्रोही बेटेके परस्पर कलहसे लाभ उठाकर मुराद १६४६ में बिना रोक-टोक बल्खमे प्रवेश कर गया। नाज मुहम्मद भाग गया। मुराद वहासे हिन्दुस्तानके लिए लौट पड़ा और औरगजेबके नेतृत्वमे दूसरी चढ़ाईका आयोजन करना पडा। आरम्भमे कही जमकर लडाई नही हुई। लेकिन जब राजपूत और मुगलोने गोली दागना शुरू किया तो उजबग लोग मैदान छोड़कर भाग खड़े हुए और विजयी औरगजेबने बल्खमे प्रवेश किया। राजपूत सरदार मधुसिह हाड़ाको बल्खका शासक बनाकर औरगजेब आगे बढा। उसे पग-पगपर बुरी तरह मुसीबतोका सामना करना पड़ा और अन्तमें पीछे हटना पड़ा। मार्गमें उसकी सेनाको घोर मुसीबतोका सामना करना पड़ा और जो राजपूत पीछे छोड़ दिये गये थे वे अन्न और पनाहके अभावमे मर गये। यहा चढ़ाई बुरी तरह असफल रही और इसमें साम्राज्यके प्राय: ४ करोड़ रुपये खर्च हुए।

सन् १६५७ ई०में शाहजहा बीमार पड़ा। अफवाह फैल गयी कि सम्राट्का स्वर्गवास हो गया। जनतामें अशान्ति फैल गयी और राजगद्दीके लिए युद्ध छिड़ गया। यह सभी जानते है कि अपने पिताकी गद्दी प्राप्त करनेके लिए औरंगजेबको अपने भाइयों दारा, शुजा और मुरादके खूनसे अपना हाथ रंगना पड़ा था। यह लिखा जा चुका है कि उसे बीजापुर और गोलकुण्डाके खिलाफ अनवरत युद्ध करने पड़े थे और २५० सालके अनवरत प्रयासके बाद दोनों राज्य दिल्लीमे मिलाये गये थे। यदि औरंगजेबके युद्धोंमें हिन्दू सहायक थे तो "शिवाजीकी सेनामे भी अनेकों मुसलमान अफसर थे। सिद्दी हुलाल तथा नूरखा आदि अनेक मुसलमान तो ऊंचे-ऊंचे पदोंपर थे। शिवाजीकी नौ-सेनामें सिद्दी सम्बल, सिद्दी मिस्री और दौलतखा तीन मुसलमान अफसर थे।❀

मैंने इतना लम्बा-चौड़ा ऐतिहासिक विवरण केवल यह दिखलानेके लिए नहीं दिया है कि उस समयके हिन्दुस्तानके मुसलमान बादशाह आपसमे लड़नेके सिवा और कुछ नही करते थे। उन्होंने और भी बहुतसे काम किये है।

❀ अशोक तथा पटबर्धन—कम्यूनल ट्रैंगिल पृष्ठ १८

उन्होंने उस साम्राज्यको प्रौढ़ बनाया जो प्रतिष्ठाकी चरम सीमापर जा पहुंचा। उन्होंने कलाको प्रोत्साहन दिया और अपने अनवरत प्रयाससे उन्होंने ऐसे राज्य को जन्म दिया जिसे हम हिन्दुस्तानका राष्ट्रीय राज कह सकते है। उस समयके राष्ट्रीय राजोका यही रूप था। मैने यह विवरण यह दिखलानेके लिए दिया है कि उस समयके मुसलमान बादशाह हिन्दुओंपर चढाई करनेकी अपेक्षा मुसलमानोपर चढाई करनेमे अधिक व्यस्त रहे। कुछ लेखकोका यह प्रतिपादन करना सरासर गलत है कि ६०० सालके उस दीर्घकालीन युगमे मुसलमान शासक हिन्दुओंसे ही उलझे रहे और उन्हे दबानेमें ही सतत लगे रहे। ऐसा लिखकर वे घृणा और द्वेषकी विरासत छोड गये है जो किसी भी प्रकार भुलाया या मिटाया नही जा सकता।

आधुनिक युगमें ब्रिटिश सेनामे भारतीय सिपाही देशमे बाहर ब्रिटिश साम्राज्यके लिए लड़नेके निमित्त चीन, मलाया, बर्मा, अरब, फारस, अफगानिस्तान, मिस्र, तुर्की, सिरेनैका, त्रिपोली तथा यूरोपतकमें भेजे गये है। तुर्की साम्राज्यको विध्वंस करनेके लिए मुसलमान सैनिक काममें लगाये गये थे। जिन देशोंके विरुद्ध उन्होने युद्ध किया उसके शासक मुसलमान है, यह बात यदि उसके दिलमें कभी नही आयी तो इसमे आश्चर्यकी कोई बात नही है। हिन्दुस्तानके बाहर भी इसलामका इतिहास इस तरहके उदाहरणोसे भरा पड़ा है जहा मुसलमानोंने मुसलमानोंके विरुद्ध युद्ध किया है और एक मुसलमान बादशाहने दूसरे मुसलमान बादशाहपर चढ़ाई की, उसे परास्त किया और उसके देशको जीत लिया।

पैगम्बरका आदेश है कि मुसलमानको मुसलमानकी हत्या नही करनी चाहिये। उनके जीवनकालमें ही ऐसे अवसर आये थे जब युद्धके मैदानमें ही किसी व्यक्तिने अपनेको मुसलमान घोषित कर दिया और यह प्रश्न उठा कि जिस व्यक्तिने इस तरह अपनेको मुसलमान तो घोषित कर दिया लेकिन जिसकी ईमानदारी और नेकनीयतीका कोई सबूत नही है ऐसे व्यक्तिको लड़ाईमें मार डालना चाहिये या उसकी रक्षा करनी चाहिये, तब उन्होंने स्पष्ट निर्णय किया कि अपनेको मुसलमान कह देने मात्रसे ही वह अच्छा है, उसकी रक्षा होनी चाहिये।

लेकिन उनके अवसानके बाद ही उनके इस आदेशको साधारण मुसलमान ही नहीं बल्कि वे लोग भी भूल गये जो उनके सीधे सम्पर्कमें थे जिनसे उनकी घनिष्ठता थी। हजरत उसमान जो तीसरे खलीफा ही नहीं बल्कि पैगम्बरके निकटस्थ सम्बन्धी थे---क्योकि पैगम्बरकी दो लड़कियोंकी शादी उनके साथ हुई थी---विद्रोही मुसलमानोंद्वारा ही मारे गये। हजरतअली पैगम्बरके चचेरे भाई और दामाद भी थे। इन्हे पैगम्बरकी विधवा पत्नी आयशा बेगमसे युद्ध करना पड़ा था और हजरत उसमानकी तरह वे भी मुसलमानोंद्वारा ही मारे गये। हजरत अलीके बेटे उन मुसलमानों द्वारा मारे गये जिन्होने यजीदको खलीफा बनाना चाहा। पैगम्बरकी मृत्युके चन्द साल बाद ही यह हालत हो गयी थी और खासकर उन लोगोकी जिन्हें आदिम मुसलमान कहा जा सकता है---क्योकि हजरतअली पहले युवक थे जिन्होंने स्वयं पैगम्बरोंसे इस्लाम धर्म ग्रहण किया था और उनके आजीवन साथी रहे। तब यह समझना आसान है कि वादके मुसलमान भी आपसमे लड भिड़ सकते थे।

आरम्भिक युद्धोमे शायद नही, लेकिन बादके युद्धो और चढ़ाइयोंमे तो निश्चय ही इस्लामके विस्तार, प्रचार और रक्षाके लिए रक्तपात नहीं किये गये थे---यद्यपि ये युद्ध हिन्दुस्तानके मुकाबलेमे या हिन्दुस्तानमे ही लड़े गये। विजय और शान्तिके बाद प्रत्येक राजा और सम्राट् उस समयकी अवस्थाके अनुसार राज्यके प्रबन्धमे लग गया। यह बात अस्वीकार नही की जा सकती कि इस्लामका प्रभाव राजा और प्रजा दोनोंपर पड़ा। लेकिन यह कहना कि उस समयके शासकोंका उद्देश्य हिन्दुस्तानसे बाहर और हिन्दुस्तानमें भी---इस्लामका प्रचार और उसकी रक्षा थी, एकदम गलत है। हिन्दुस्तानके मुसलमान शासक ही क्या समस्त मुस्लिम जनताने ही इसे एक टापू समझ लिया था जो दिन प्रतिदिन पानीसे निकलकर आकारमें बढ़ता जाता था। विजेता या आक्रमणकारीके रूपमें जो मुसलमान हिन्दुस्तानमें आये थे अन्य मुसलमानोंकी अपेक्षा कही कम थे। मुसलमानोंकी वर्तमान जनसंख्यामें अधिकांश वे हिन्दू तथा उनकी सन्तान हैं जिन्होंने समय समयपर इस्लाम धर्म ग्रहण किया।

जब हम लड़ाईके मामलोंमे दोनों जातियोमें इस तरहका सद्भाव और भाईचारेका व्यवहार देखते है तब तो शासनके काममे और दैनिक जीवनके व्यवहारमें इससे कही ज्यादा सद्भाव और विश्वासकी आशा की जा सकती है और इतिहासमे इसका प्रत्यक्ष प्रमाण मिलता है।

"मुसलमान शासकोके लिए हिन्दुओको नौकर रखना अनिवार्य था। गजनीके महमूदकी सेनामे असख्यो हिन्दू सिपाही थे जिन्होने उसके लिए मध्य एशियामें युद्ध किया था और उसके हिन्दू सेनापति तिलकने उसके मुसलमान सेनापति नियाल्टगीनके विद्रोहका दमन किया था। जब कुतुबुद्दीन ऐबकने हिन्दुस्तानमें बसनेका निश्चय किया तब हिन्दू कार्यकर्ताओको रखनेके अलावा उसके पास दूसरा कोई चारा नही था क्योकि आन्तरिक शासनका उन्हे ही पूर्ण ज्ञान था और उनकी सहायता बिना न तो वह शासनका कार्य कर सकता था और न एक पैसा मालगुजारी ही वसूल कर सकता था। कोई भी मुसलमान शासक हिन्दुस्तानके बाहरसे अपने साथ कारीगर, हिसाबिया और किरानी लेकर नही आया था। उनकी विशाल अट्टालिकाओके निर्माता हिन्दू ही थे जिन्होने अपनी प्राचीनकलाको नया रूप दिया, उनके सिक्कोंको हिन्दू सोनारोने ढाला, और उनके हिसाब-किताबका काम हिन्दू अफसरोने ही किया। ब्राह्मण धर्माधिकारियोंने हिन्दू विधानके प्रयोगमें उनका पथ-प्रदर्शन किया और हिन्दू ज्योतिषियोंने साधारण कामोंमे उनकी सहायता की।'* इब्राहिम आदिलशाह, प्रथम (१५३४–५७ ई०) के शासनकी सबसे बड़ी विशेषता यह थी कि सरकारी सब हिसाब-किताब फारसीमें न लिखा जाकर हिन्दीमें लिखा जाने लगा था और इस पदपर अनेक ब्राह्मण नियुक्त किये गये थे, जिनका प्रभाव बहुत ज्यादा बढ़ गया था। यूसुफ आदिलशाहके शासनमें भी माल मुहकमेके अनेक प्रधान पदोंपर हिन्दू ही थे।"†

---

*ताराचन्द—इन्फ्लुएन्स आव इस्लाम आन इण्डियन कल्चर पृ० १३६-७।

† एन०एन०ला० प्रोमोशन आव लर्निग इन इण्डिया ड्यूरिंग मुहम्मदन रूल पृ० ९३।

"सुलतान मुहम्मद तुगलककी सेवामें भी अनेक हिन्दू थे। माल मुहकमेका सबसे बड़ा अफसर रतन नामका हिन्दू ही था। अकबरके सुविख्यात मालमन्त्री राजा टोडरमलने शासनमे अनेक उपयोगी परिवर्तन किये और वह साम्राज्यके सबसे बड़े प्रतिष्ठित पदाधिकारी समझे जाते थे। औरंगजेबके मालमन्त्री रघुनाथ भी हिन्दू ही थे।*

आज भी देशी राजोमे बिना किसी भेदभावके हिन्दू और मुसलमान दोनो बड़े बड़े पदोपर नियुक्त किये जाते हैं। हैदराबादके महाराज सर किशन प्रसाद और मैसूर (इस समय जैपुर) के मिर्जा सर मुहम्मद इस्माइलकी चर्चा ही इसके लिए पर्याप्त है।

सन् १८५७ का विद्रोह हिन्दू और मुसलमानोका सयुक्त प्रयास था। इसीसे दोनो ही दिल्लीके नाममात्रके बादशाह बहादुरशाहके झण्डेके नीचे आ जुटे थे। यदि वह विद्रोह सफल हुआ होता तो बहादुरशाहका साम्राज्य फिर दृढ़ हो गया होता। विद्रोहके विफल होनेका भी वही फल हुआ अर्थात् बहादुरशाह गिरफ्तार कर देशसे निकाल दिये गये और मुगल साम्राज्यका रहासहा नाम भी इतिहाससे लुप्त हो गया।

१८५७ के विद्रोहके बाद ब्रिटिश सरकारन मुसलमानोंपर घोर अत्याचार आरम्भ किया। उलेमाओंने दिलसे ब्रिटिश शासनको स्वीकार नही किया। हिन्दुस्तानके इतिहासके साथ इतनी लम्बी अवधितक इतना प्रभावपूर्ण सम्पर्क होनेके बाद इस तहरका विदेशी हस्तक्षेप उन्हें असह्य था। जुलियन हक्सलेके शब्दोंमें "राष्ट्रीय विकासके प्रयासमें इतने बड़े पैमानेपर विदेशी हस्तक्षेपका यह अनूठा उदाहरण है।"† और यदि भारतीय राष्ट्रके जन्म देनेमें इससे प्रोत्साहन मिला तो आश्चर्यकी कोई बात नहीं। हिन्दू और मुसलमान दोनों समान रूपसे इस भारतीय राष्ट्रकी सत्ताके समर्थक थे यद्यपि दोनोंके धार्मिक विश्वास भिन्न थे

---

* मेहता और पटवर्धन—दी कम्यूनल ट्रैंगिल पृष्ठ १९।

† जूलियन हक्सले—रेस इन यूरोप पृष्ठ ३।

और दोनोके अनुयायी पर्याप्त थे। सर सैयद अहमदखां–जिन्हे मुसलमानोंको कांग्रेससे अलग रखनेका सारा श्रेय दिया जाता है, आरम्भमे इसी विचारके थे। वे हिन्दू और मुसलमानोको किसी सुन्दरीकी दो आखे मानते थे और यही कहते थे कि एकको क्षति पहुचाये बिना दूसरेको क्षति नही पहुंचायी जा सकती। जिन मुसलमानोका भारतीय राष्ट्रीय महासभा (इण्डियन नेशनल कांग्रेस')से सम्बन्ध रहा है उन मुसलमानोके भाषणोसे अवतरण देना अनावश्यक है।

हिन्दुस्तानके चन्द प्रसिद्ध मुसलमानोके भाषणोसे अवतरण देकर दो राष्ट्रके सिद्धान्तके इस विवादको मै खतम कर देना चाहता हू। सबसे पहले मै सर सैयद अहमदखाके भाषणोसे दो अवतरण देना चाहता हू। उसके बाद दो जीवित मुसलमानोके भाषणोसे अवतरण दूगा। १८८५ ई०मे गुरुदासपुरकी एक सभामे भाषण करते हुए आपने कहा था :—

"प्राचीन कालसे राष्ट्र शब्दका प्रयोग एक ही देशके निवासियोके लिए होता आया है—यद्यपि उनमे अपनी अनेक विशेषताए एक दूसरेसे पृथक् होती है। हिन्दू और मुसलमान भाइयो! क्या आपलोग हिन्दुस्तानके अलावा किसी अन्य देशमे बसते है? क्या आप एक ही भूमिपर नही बसते और उसीमें जलाये और दफनाये नही जाते? क्या आपलोग वही भूमि नही जोतते और उसीपर नही चलते-फिरते? स्मरण रखिये कि हिन्दू और मुसलमान शब्द केवल दो भिन्न धर्मोके द्योतक है तथा इस भूमिपर बसनेवाली प्रत्येक जाति—हिन्दू, मुसलमान और ईसाई—एक ही राष्ट्रके हैं। इस तरह सभी भिन्न भिन्न फिरके एक ही राष्ट्र माने जायगे। इसलिए देशके कल्याणके लिए सबको संघटित होना चाहिये। इसीमे सबका कल्याण है।"*

दूसरे अवसरपर लाहोरमे उन्होने उसी सम्बन्धमे कहा था :—

"राष्ट्र शब्दमे हिन्दू और मुसलमान दोनो शामिल है। मेरी समझमें इस शब्दका दूसरा अर्थ नही हो सकता। मेरे लिए यह विचार करना आवश्यक

* रेजौल करीम खां "लिखित" पाकिस्तान इग्जामिण्डमे उद्धृत पृ० ११७

नही है कि उनका धार्मिक विश्बास क्या है क्योकि उसका कोई महत्व मेरी दृष्टिमे नही है। हमारे लिए सबसे ज्यादा महत्वकी बात यही है कि हमलोग एक ही देशके रहनेवाले है, एक ही शासनके अधीन रहते है, बरकतोके स्रोत दोनोके लिए समान है और अकालोकी पीडा दोनोको समान रूपसे सहनी पडती है। इन कारणोसे यहा बसनेवाली दोनों जातियोको मै एक ही नामसे पुकारता हू और वह नाम है "हिन्दू" अर्थात् हिन्दुस्तानके निवासी। व्यवस्थापक सभाके सदस्यकी हैसियतसे मै एस राष्ट्रके कल्याणके लिए सदा यत्नशील रहता था।*
(इण्डियन नेशन बिल्डर्स—सर सैयद अहमद खा पृष्ठ ४१–८२)

श्रीयुत अतुलानन्द चक्रवर्ती लिखित "हिन्दू एण्ड मुसलमान आव इण्डिया" नामक पुस्तककी भूमिकामे असाधारण इतिहासज्ञ सर शफात अहमदखा हिन्दुस्तानके सामाजिक और सास्कृतिक विकासका विहगावलोकन करनेके बाद निम्नलिखित निष्कर्षपर पहुचते है.—"हमलोगोके राष्ट्रीय जीवनके हर एक पहलूमे दोनो जातियोके बीच, जितना साधारणत लोग समझते है, उससे कही ज्यादा मेल और एकता थी। हिन्दुस्तानका सास्कृतिक इतिहास स्पष्ट बतलाता है कि विचारोका आदान-प्रदान और भावोकी एकता दोनो जातियोके जनसमुदाय और उच्चवर्गमे समान रूपसे थी और भारतीय भाषाओके साहित्यमे इस राष्ट्रीय एकताका जो आभास मिलता है उसका दर्शन एशियाके किसी अन्य राष्ट्रमे नही पाया जाता। इस सद्भावने जनसाधारण और कुलीन वर्गकी मनोवृत्ति और विचारधाराको ही पुनीत नही बनाया बल्कि राष्ट्रके समस्त जीवनमे व्याप्त होकर उसे निर्मल बना दिया। हमलोगोके राजनीतिक मतभेद चाहे जो कुछ भी हो—और मै उन्हे किसी भी तरह कम करके नही प्रकट करना चाहता—एक बात निश्चित है कि बौद्धिक क्षेत्र, जीवनकी परम्परा, रहन-सहन तथा विचारधारामें दोनो जातियोके बीच एकताकी सुदृढ़ परम्परा है जो प्राय: हजार वर्षोंके उथल-

---

* रेजौल करीमखा लिखित पाकिस्तान इग्जामिण्डमे उद्धृत पृष्ठ ११७

पुथलकी आच और सर्दीमे तपकर निकली है। यह अमर और अविनाशी है।"*
आगे चलकर उन्होने फिर लिखा है—'यह तो महज अदूरदर्शिता है जो सामाजिक वातावरणको राजनीतिक रूप देकर किसी राष्ट्रकी कमजोरियोको राजनीतिक असन्तोषका रूप देना चाहती है। उसे अपनी विचारधाराका सुधार हिन्दू तथा मुसलमानोकी संस्कृतिके अध्ययनसे कर लेना चाहिये और उन शक्तियोका मनोयोगपूर्वक अध्ययन करना चाहिये जिन्होने हमारे उज्वल अतीतके दिनोमे हमारी विचारधारा और हमारी आकाक्षाओका निर्माण किया है।'†

सर सुलतान अहमदने भी इसी तरहकी जोरदार भाषामे अपना विचार प्रकट किया है—हिन्दू-मुसलमानोके बीचका वर्तमान मतभेद दोनो जातियोके बीचके ऐतिहासिक भ्रातृभावनापर पानी फेरना चाहता है जो भ्रातृभाव मुगलकालसे आरम्भ होकर सदियोतक कायम रहा है। इस बातपर ध्यान नही दिया जाता कि हिन्दुस्तानको छिन्न-भिन्न करनेका तात्पर्य होगा उस ऐतिहासिक रचनात्मक कार्यको ध्वंस करना जो इस देशमे मुसलमान शासनकी विशेषता है। हिन्दुस्तानके वर्तमान निवासी अपने पूर्वजोसे अधिक ज्ञानवान अवश्य है लेकिन उनके भावोका चित्र उस पटपर ही अकित होता है जिसका आधार आर्य सारसेनीय एकता है। अतोतकालके भारतीय नेता और विजचारवानोने दोनो धर्मोके बीच एकता स्थापित करनेका प्रयास किया। शाहजादा दाराशिकोहने दोनोंकी तुलना दो नदियों—मजमा, अलबहरीन—से की है। कबीर और नानकने दोनोको मिलाकर एक स्रोतमे बहानेका यत्न किया और अपनी उपासनाओमे दयानिधि अल्ला और राम दोनोंको साथ ही स्मरण किया है। हिन्दू और मुसलमान कलाविदोने दोनो कलाओका मिश्रित रूप ही उपस्थित करनेका यत्न किया जिसने हिन्दू और मुसलमान दोनोंकी इच्छाकी पूर्ति की और जिससे दोनोको समानरूपसे सन्तोष हुआ। आनन्द और सौन्दर्यके समान आधार खोज निकाले गये।

---

* अतुलानन्द चक्रवर्ती—हिन्दूज ऐण्ड मुसलमान्स आव इण्डिया पृ० १९—२०
† ,, ,, ,, पृष्ठ १६

इतिहासने अपने हाथोंसे जिस वाटिकाको इस तरह सजाया उसे ही आजकलके हिन्दुस्तानी नष्ट करनेपर तुले हुए है। इतिहासके उस मर्मको समझनेमें असमर्थ होनेके कारण वे उसे बुरा बतलाते है।

खेद तो इस बातसे होता है कि दोनो जातियोके बीच इतनी अधिक समानता होते हुए भी हिन्दू-मुसलिम एकता टुकड़े-टुकड़े होने जा रही है। हम लोगोंका कर्तव्य था कि एकताके इन आधारोकी सहायतासे हम मेलजोलको और भी बढाते और पुष्ट करते। सगीत, साहित्य, चित्रणकला, वास्तुकलामे ही दोनों जातियोंकी एकताका पुश्तैनी दर्शन नही होता बल्कि दोनो जातियोने युद्धके मैदानमे अगल-बगल रहकर युद्ध कर राजनीतिक एकता भी स्थापित की थी। सामाजिक जीवनमे भी दोनो जातियोकी परम्परा और आचरण एक दूसरेसे पूरी तरह सम्बद्ध थे। सम्राट् बाबरके युगमें ही दोनो जातियोके रहन-सहनमें समानता दृष्टिगोचर होने लगी थी जिसका नाम सम्राट्ने 'हिन्दुस्तानी तौरतरीका' रख दिया था। इसमे हिन्दू और मुसलमान दोनोके रहन-सहनका सम्मिश्रण था। इसके बाद ही उर्दू भाषाका उदय हुआ। सैनिकोकी भाषाके रूपमे इसका आवि-र्भाव हुआ। धार्मिक विश्वास—जो उस समय सबसे प्रिय माना जाता था—पर भी एक दूसरेका प्रभाव पड रहा था। मुसलमानोंने हिन्दू जनसाधारणके धार्मिक विश्वासपर नया रंग चढाया और उसे नया दृष्टिकोण प्रदान किया। उसी तरह मुसलमान धर्मपर भी भारतीय रंग चढ़ गया। दोनो धर्मोंके कट्टर-पन्थियोने इस परिवर्तनको मजेमे समझ लिया था।

"हिन्दुस्तानके मुसलमान उसी मिट्टीकी सन्तान बन गये। गजनवी साम्राज्य-से दिल्लीकी सलतनतको अलग करके सुलतान कुतुबुद्दीनने इसका अन्तिम फैसला कर दिया। उसने स्पष्ट शब्दोमे अंकित कर दिया था कि मुसलमान बादशाहको अपनी प्रजामें किसी तरहका भेदभाव न रखना चाहिये। उन्हे सभी धर्मोंको समान रूपसे देखना चाहिये। किसीपर कृपा और किसीपर कोपकी वर्षा नहीं करनी चाहिये। बाबरका यादनामा और अबुलफजलका आइन-ए- अकबरी पढ़नेसे साफ प्रकट हो जाता है कि उनके हृदयोंमें हिन्दुस्तानके प्रति मातृभूमिका-

सा प्रेम किस तरह उदय हुआ। मुगल साम्राज्यके जन्मदाता बाबरने लिखा है—हिन्दुस्तानमे सुखके साधन बहुत ही कम हैं। लेकिन सम्राट् अकबरके राजगद्दीपर बैठनेके समयतक इन आगन्तुकोंकी विचारधारामें घोर परिवर्तन हो गया था। इनके इतिहासज्ञोपर भारतके सौन्दर्यका गहरा प्रभाव पड़ा है। क्योंकि अपने देशके प्रति उत्कट प्रेमके कारण उनके हृदयमे जो व्यवधान पैदा हो गया था उसके लिए उन्होने स्पष्ट शब्दोमे क्षमा मागी है।*

---

* सुलतान अहमद—ए ट्रीटी बिटवीन इण्डिया ऐण्ड यूनाइटेड किंगडम पृष्ठ ६०—६१

द्वितीय भाग

साम्प्रदायिक त्रिभुज

१

प्रवेश

यह देखा जा चुका है कि मुसलमान शासकों, कलाकारो, फकीरों तथा अन्य लोगोंने किस प्रकार हिन्दू सस्कृति ग्रहण करनेके निमित्त समान रूपसे लगातार प्रयत्न किया। हिन्दुओंके पक्षमें भी यह आदान-प्रदानकी क्रिया उल्लेखनीय मात्रामें चलती रही। यद्यपि दोनों आपसमें मिलकर एक नहीं हुए फिर भी सम्बन्ध और सामान्य हितके विषय बहुत बढ़ गये और समय पाकर एक विशेष संस्कृति, जिसे हिन्दुस्तानी संस्कृति कह सकते हैं, विकसित हो गयी। राजनीतिक दृष्टिसे इसका अवश्यम्भावी परिणाम एक राष्ट्रका—आधुनिक अर्थमें—निर्माण था और यह भारतमे अग्रेजी शासन स्थापित हो जानेपर विशेष रूपसे हुआ है जिसकी हिन्दू और मुसलमान दोनों प्रजा हो गये। हमने प्रामाणिक मुसलिम मत उद्धृत कर यह दिखलाया है कि हिन्दुओंकी ही तरह मुसलमान भी हिन्दू और मुसलमान दोनोंको एक ही राष्ट्रके अंग मानते थे। पर साथ ही हम यह भी जानते है कि अखिल भारतीय मुस्लिम लीग और उसके हिमायती समान रूपसे जोरदार शब्दोंमें आज कह रहे है कि मुसलमान हिन्दुओसे पृथक् एक राष्ट्र है। इस बाह्य रूपान्तरकी क्या व्याख्या हो सकती है? इसका उत्तर देनेके लिए कुछ ऐतिहासिक विषयोंकी छानबीन करना आवश्यक है।

मुसलमान विजेताओंका रुख साधारणतः सहिष्णुताका ही रहा है और कुछ लोगोंके धर्मान्धता-प्रदर्शनके बावजूद भी यह मजेमें कहा जा सकता है कि आरम्भसे ही हिन्दुओंके साथ अच्छा बर्ताव करनेका सतत प्रयत्न किया गया। इस कालकी एक घटनाका उल्लेख यहां किया जा सकता है। ब्राह्मणाबादके लोगोंने जब उसपर कब्जा करनेवाले मुहम्मद-बिन कासिमसे पूजा आदिके

विषयमें स्वतन्त्र कर देनेकी प्रार्थना की तो उसने ईराकके गवर्नर हजाजको इस सम्बन्धमें लिखा। उसने उत्तर दिया—'चूकि उन्होंने (हिन्दुओने) अधीनता स्वीकार कर खलीफाको कर देना स्वीकार कर लिया है इसलिए उनसे और किसी बातके लिए कुछ कहना ठीक नही। वे अब हमारे संरक्षणमें आ गये हैं और उनके जानमालपर किसी तरह अपना हाथ नहीं बढ़ा सकते। उनको अपने देवताओकी पूजा करनेकी अनुमति दी जाती है। किसी व्यक्तिको उसके धर्माचरणसे रोका या विरत नही किया जा सकता। वे अपने घरोंमे जैसे चाहे रह सकते है।'* यह पैगम्बरके उपदेशों और उस सिद्धान्तके अनुकूल था जिसके अनुसार खलीफा लोग, जो अधीन होकर जजिया देना स्वीकार करनेवाले गैर-मुसलमानोके साथ इस प्रकारका बर्ताव करते थे, अनुशासित हुआ करते थे।

मुसलमान धर्माचार्य क्या आवश्यक और उचित समझते है, इसका कुछ विचार न कर शासकलोग शीघ्र ही अपनी स्वतन्त्र नीति बरतने लग गये, और इस प्रकार उन्होने राजको धर्मसे स्वतन्त्र कर लिया। अलाउद्दीन खिलजी, जिसका साम्राज्य उत्तर और दक्षिण सारे भारतमें फैला हुआ था, राजके विषयोमे उलेमाके हस्तक्षेपोंका कट्टर विरोधी था। वह कहा करता कि कानून शासककी इच्छापर निर्भर है, नबीके कानूनसे उसका कोई वास्ता नही। वह दण्ड देनेके शासकके विशेषाधिकारका पक्षपाती था और काजीके आम कानूनके खिलाफ घोषित करनेपर भी वह बेईमान और दुराचारी अफसरोंके लिए अंगभंगका दण्ड न्याय्य मानता था। उसने शासकके कर्तव्यकी व्याख्या करते हुए काजीसे स्पष्ट शब्दोंमें कहा था—'विद्रोह रोकनेके विचारसे, जिसमे हजारोकी जाने जाती है, मै वही आदेश देता हूँ जो मुझे राजके लिए कल्याणकारी और लोगोके लिए हितकर जान पड़ता है। लोग मेरी आज्ञाओपर ध्यान नही देते और उनका अनादर तथा अवमानना करते है। उनसे आज्ञा-

---

* ईश्वरीप्रसाद—'शार्ट हिस्टरी ऑव मुस्लिम रूल इन इण्डिया', पृ० ४६

का पालन करानेके लिए मुझे लाचार होकर कड़ाईसे काम लेना पड़ता है। मेरी आज्ञा वैध होती है या अवैध, इसका मुझे ज्ञान नहीं। मुझे जो बात राजके लिए कल्याणकारी और संकटकालके लिए उपयुक्त जान पड़ती है वही मैं करनेकी आज्ञा देता हूँ। कयामतके दिन मेरा क्या होगा, इसका मुझे पता नहीं।'* यही वह बात है जिसका उदार स्वेच्छाचारी शासकोंने बराबर दावा किया है और जो उनके द्वारा भिन्न-भिन्न धर्मों और रीति-रिवाजोवाले प्रजाजनोंके शासकके और धर्म-विशेषके अनुयायीके रूपमें किये जानेवाले कर्तव्योंका पार्थक्य पूर्णतः स्पष्ट कर देती है।

बाबरके जिस इच्छा-पत्रका विस्तृत उद्धरण पहले दिया गया है उसमें उल्लिखित आदेशोका मुगलसम्राटोंने पालन किया और इसका परिणाम यह हुआ कि उनके साम्राज्यका बहुत विस्तार हो गया। इस मार्गका परित्याग करनेपर जो स्थिति उत्पन्न हुई उसने साम्राज्यको अन्ततः छिन्न-भिन्न कर दिया। हिन्दुओंकी भावनाके प्रति जो आदरभाव दिखलाया जाता था उसपर विदेशियोंकी भी दृष्टि पड़ी है। 'ऐसा जान पड़ता है कि ईदके अवसरपर गायकी कुर्बानी नही की जाती थी क्योंकि कहा जाता है कि 'उस दिन (ईदके दिन) जो समर्थ हो वह अपने घरमें बकरेकी कुर्बानी करे और यह दिन एक बड़े त्योहारके रूपमें मनाये।'† इसमे कोई आश्चर्य नही यदि दोनों समुदाय एक साथ मेल-जोलसे रहें, हालां कि वे कभी न तो आपसमें मिलकर एक हो सके और न एकका दूसरेमें अन्तर्भाव हुआ।

श्री एफ० के० खां दुर्रानीने संक्षेपमें परिस्थितिका जो विवरण किया है उसका यहां विस्तृत उद्धरण दे देना मैं अच्छा समझता हूँ।

'पुराकालीन हिन्दुओंका कोई राष्ट्र नही था। वे समुदाय या सिर्फ एक गरोहके रूपमें थे।'

---

* ईश्वरीप्रसाद 'शार्ट हिस्टरी आव मुस्लिम रूल इन इण्डिया', पृष्ठ १२६

† वही—पृष्ठ ६९८ (पेलसर्टका पृष्ठ ७४ से उद्धरण)

'भारतके मुसलमान भी इससे अच्छे रूपमें न थे। पर इस्लामने अपने प्रवर्तकके जीवन-कालमें ही राजका रूप ग्रहण कर लिया था। इसका सुनिश्चित धर्मशास्त्र (राजशास्त्र) है। मैं तो यह कहूँगा कि स्वयं इस्लाम ही राजशास्त्र है। इस्लामी राज एक तरहसे जनतन्त्र है जिसे बनाये रखनेका दायित्व प्रत्येक मुसलमानपर है। उमर आजमका कहना है—'संघटित समाजके अभावमें इस्लामका अस्तित्व नही माना जा सकता (ला इस्लाम इल्ला ब-जमायतहू)।' दैव दुर्विपाकसे यह इस्लामी राज बहुत दिनोतक कायम न रह सका। उमैया और अब्बासी खलीफा लोगोंने इसका अन्त कर इसे मुल्क या वंशानुगत स्वेच्छाचारी राजतन्त्रमें परिणत कर दिया।'*

'मुसलमानोंद्वारा भारतकी विजयके समयतक सारे संसारके मुसलमानोंमें यह मत मान्य हो चुका था कि धर्मका राजनीतिसे कोई सम्बन्ध नही है। जिन व्यक्तियोंने भारतको जीता वे किसी मुसलमानी राजके राष्ट्रीय सैनिक नहीं बल्कि एक साम्राज्यके स्वेच्छाचारी शासकके भाड़ेके सैनिक थे। भारतमें जिस राजकी उन्होंने स्थापना की वह कोई राष्ट्रीय मुसलमानी राज नही था बल्कि एक स्वेच्छाचारी शासक और उसके पिट्ठुओके लाभके लिए अधिकारमें रखा गया शोषणका एक साधनमात्र था। भारतका मुसलमानी साम्राज्य सिर्फ इस अर्थमें मुसलमानी था कि उसका सम्राट् मुसलमान था। भारतमे मुसलमानोके सारे शासनकालमें उनमें राष्ट्रत्वके भावका कभी विकास ही नही हुआ। उनकी साम्राज्यनीति आदिसे अन्ततक इस भावके विकासमें बाधक ही रही।'†

"इस प्रकार यहां हिन्दू और मुसलमान दो समुदाय थे जो एक स्वेच्छातन्त्रीय साम्राज्यकी अधीनतामें साथ-साथ रहते थे और दोनों ही राष्ट्रीय भावना या राष्ट्रीय महत्वाकांक्षासे सर्वथा वंचित थे। हिन्दुओं और मुसलमानोंकी धार्मिक भावनाओं, विश्वासों और कृत्योंकी पारस्परिक सामंजस्य-हीनताके सम्बन्धमें

---

* एस० के० खां दुर्रानी—'दि मीनिंग ऑव पाकिस्तान', पृष्ठ ३४-३५

† एस० के० खां दुर्रानी—'दि मीनिंग आव पाकिस्तान', पृष्ठ ३५-३६

बहुत कुछ लिखा गया है,...फिर भी इन सब बातोके बावजूद उनके धर्मोंमें कोई ऐसी चीज है जिससे दोनों जातियां सद्भावपूर्वक कई सदियोंतक साथ-साथ रहीं और यदि उनके दिमागसे वे सब बातें निकल जायं जो उन्होंने ब्रिटिश शासनमे सीखीं या जिनसे वे प्रभावित हुए है और उनमें वही धार्मिक मनोवृत्ति उत्पन्न की जा सके जिससे एक सदी पूर्वके उनके पूर्वज अनुप्राणित थे, तो वे पुनः नेक पड़ोसियों और एक ही राजके नागरिकोंकी तरह सद्भावपूर्वक साथ-साथ रहने योग्य स्थितिमें हो जायंगे। वह चीज सहिष्णुताकी भावना है जो दोनों धर्मोंमें भरी गयी थी।'*

२

भेदनीतिका प्रयोग

फूट पैदा कर शासन करनेकी नीति बहुत पुरानी है और सभी युगोके विजेताओने सर्वत्र इसका सहारा लिया है। विदेशी शासनकी वैधता स्वीकार कर लेनेपर यदि शासक इसका सहारा लेता है तो वह दोषी नहीं ठहराया जा सकता। इसलिए यदि अंग्रेज अन्य विदेशी विजेताओसे ऊँचे नही उठ सके और मांस्टुअर्ट एल्फिस्टनकी इस सम्मतिका अनुसरण करते रहे कि 'भेदनीति द्वारा शासन, पुराना रोमन मन्त्र है और यही हमारा भी होगा', तो इसके लिए वे दोषी नही कहे जायगे। कुढ़न तो पैदा होती है उनके इस पाक ढोंगसे कि भारतमें हम जो कुछ करते है वह उच्च आदर्शवाद और परोपकारकी भावनासे प्रेरित होकर ही करते है। अपरिहार्य जान पड़नेवाला हिन्दुओ और मुसलमानोंका यह पारस्परिक भेद-भाव बहुलांशमें जान-बूझकर प्रयुक्त की गयी इसी भेदनीतिका परिणाम है। ईस्ट इण्डिया कम्पनीके दिनोंमें जब अंग्रेज लोग शासकके रूपमें

---

* वही पृष्ठ ३६–३७।

यहां जम ही रहे थे तभी इस नीतिका प्रयोग आरम्भ हो गया था और यही नीति अब भी काम करती जा रही है जो भूतपूर्व भारत-सचिव श्री एल. एस. एमरी और भारत सरकारसे सम्बद्ध उच्च-पदस्थ अंग्रेजोके हालके वक्तव्योंसे बिलकुल स्पष्ट हो जाता है। यही बात है जिसके कारण उस पुरानी मनोवृत्तिका पुर्ननिमाण बहुत कठिन हो गया है जो हिन्दुओं और मुसलमानोको अच्छे पड़ोसियो और एक ही राजके नागरिकोकी तरह मिलजुलकर रहने योग्य बना सकती थी।

इस प्रकार भारतकी साम्प्रदायिक समस्या हिन्दुओ और मुसलमानोके बीचकी समस्या नही है जिसे ये चाहे तो अपने इच्छानुसार हल कर सके। इसमे एक तीसरा पक्ष और कई बातोके विचारसे सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण पक्ष भी है और वह है ब्रिटिश सरकार। यही साम्प्रदायिक समस्या हमारे सामने प्रस्तुत है जिसे 'साम्प्रदायिक त्रिकोण' का अर्थ-व्यजक नाम प्रदान किया गया है। हिन्दू और मुसलमान इस त्रिकोणकी दो भुजाए है और ब्रिटिश सरकार इसका आधार है। आधारकी लम्बाईमे वृद्धि होनेके साथ दोनो भुजाओके बीचका कोण भी बढ़ता गया है। मुगल साम्राज्यके पतनकालमे स्वतन्त्र बने हुए शासकोंके पारस्परिक कलह और सघर्षसे उत्पन्न अशान्तिकी स्थितिमे जब ईस्ट इण्डिया कम्पनी भारतमें अपने साम्राज्यकी नीव डाल रही थी उस समय कम्पनीकी ओरसे भारतमे नियुक्त गवर्नरोकी मौलिक नीतिका अभिप्राय इन कलहों और सघर्षोंसे लाभ उठाना और अग्रेजोके विरुद्ध भारतीयोंको परस्पर मिलनेसे रोकना था। कम्पनीके अफसरोके उद्देश्योमे एक था मराठोंको-निजाम और कर्नाटकके नवाबको और बादमे हैदराबाद और टीपू सुलतानको आपसमें मिलनेसे रोकना। डब्ल्यू एम० टारेन्सका कहना है 'मालकमके शब्दोंमें यदि हिन्दुस्तानके ही लोगोने सहायता न की होती तो वह कभी विजित न हुआ होता। पहले निजाम आरकाटके विरुद्ध और आरकाट निजामके विरुद्ध और फिर मराठे मुसलमानोंके विरुद्ध और अफगान हिन्दुओके विरुद्ध भिड़ाये गये।*

* डब्ल्यू एम० टारेन्स--'इम्पायर इन एशिया'। पृष्ठ १९

मराठा दरबारमें अंग्रेजोंकी दुरभिसन्धि ही बहुलांशमें मराठोंके पारस्परिक भेदका कारण थी। मराठा इतिहासमें दो ही केन्द्रीय व्यक्ति हैं जो मराठा साम्राज्यके उत्थान और पतनके कारण हुए। शिवाजीके साहस और प्रतिभाने साम्राज्यकी नीव डाली और रघुनाथरावकी दुरभिसन्धिने उसे पतनके गड्ढेमें ढकेला।'*

ग्रैण्ट डफने लिखा है—'घरमें फूट पैदा कर या चाहे जिस उपायसे हो सके, मराठोंका हैदर या निजामअलीसे मिलना रोकनेके लिए बम्बई सरकारने श्री मास्टिनको पूना भेजा।'† उन्होंने राघोबाकी सहायता की जो उनके हाथका खिलौना बन गया था और निजाम तथा हैदरअलीके विरुद्ध उससे युद्ध छिड़वा दिया जिससे मराठा साम्राज्यको कोई लाभ नहीं हुआ। नाना फड़नवीसको शीघ्र ही पता चल गया कि राघोबा बम्बई सरकारके हाथोंका खिलौना बन गया है और यदि वह पेशवाके पदपर बना रहा तो मराठा साम्राज्यका अन्त दूर नहीं है। नाना फड़नवीस तथा अन्य मन्त्रियोंको अपने विरुद्ध देखकर राघोबा भागकर गुजरात चला गया और बम्बई कौंसिल तथा उसके अध्यक्षसे सहायताके लिए प्रार्थना की जिसके लिए वे पहलेसे ही तैयार बैठे थे, क्योंकि वे मराठा साम्राज्य-को निर्बल कर पश्चिमी तट और विशेषकर सालसिट टापू तथा बसीन प्रायद्वीपकी प्राप्तिद्वारा कम्पनीको फायदा पहुँचाना चाहते थे।

यह नीति बरतते समय हिन्दुओं और मुसलमानोंके बीच धर्मके आधारपर कोई भेद नहीं किया गया और जिस प्रकार हिन्दू मुसलमानोंके और मुसलमान हिन्दुओंके भी विरुद्ध खड़े किये गये, ठीक उसी प्रकार मुसलमान भी हिन्दुओं और मुसलमानोंके विरुद्ध समान रूपसे खड़े किये गये। उद्देश्य था एककी सहायतासे दूसरेको पराभूत कर पहलेके साथ भी फिर वही बर्ताव करना। इसका ज्वलन्त उदाहरण वारेन हेस्टिंग्सके कालमें रुहेलोंके साथ किया गया बर्ताव है। रुहेले अवधके वजीरके राज्यकी सीमापर बसे हुए थे। उनका शासन उन्हींके सरदारों

---

* बी० डी० बसु—'राइज आव क्रिश्चियन पावर इन इण्डिया', पृ० २०९

† ग्रैण्ट डफ—'हिस्टरी आव दि मरहटाज', पृ० ३४०।

और मजिस्ट्रेटोंद्वारा होता था, पर उन्हें साधारणसे अधिक ही स्वतन्त्रता प्राप्त थी और इसके फलस्वरूप वे अन्य समुदायोकी अपेक्षा समृद्ध भी अधिक थे। वे स्विस लोगोंकी तरह शान्तिमय कलाकौशलमें अध्यवसाय-पूर्वक लगे रहते थे। उनका देश अवध और मराठोके नवविजित प्रदेशके बीच पड़ता था। मराठे वजीरके राज्यमें लूट-पाट मचानेके लिए रुहेलोके देशसे होकर जाना चाहते थे और इसके लिए वे जो शर्तें पेश कर रहे थे वे रुहेलोके हकमें वड़े फायदेकी थी, पर उन्होने उन शर्तोंको अस्वीकार कर मराठोंके हमलेका खतरा स्वयं अपने सर उठाना पसन्द किया क्योंकि अंग्रेजोके कहने और आश्वासन देनेपर उनमे और वजीरमें परस्पर मैत्रीकी सन्धि हुई थी। मराठोके भगा दिये जानेपर रुहेलोको देश मिला लेनेके लिए गवर्नर-जनरलने वजीरके साथ मिलकर गुप्त अभिसन्धि की। हेस्टिंग्सने वजीरको अपने राज्यमें सहायक सेना रखनेको प्रस्तुत किया। कहा गया कि वह बाहरी शत्रुओसे उसकी रक्षा करेगी, पर उसके अफसर और सेनापति कम्पनीके होंगे। इसके वदलेमे वजीरने एक बँधी रकम देना स्वीकार किया जो कम्पनीके लिए लाभ और मालगुजारीका एक अच्छा साधन थी। लाभकी मात्रा बढ़ानेके विचारसे रुहेलखण्डकी बिक्रीकी बात भी आपसमे तै कर ली गयी। सूबेदार और गवर्नर-जनरलके बीच एक गुप्त सन्धि हुई जिसके अनुसार कम्पनीने ४० लाख रुपया और लड़ाईका सारा खर्च लेनेकी शर्तपर बहाना मिलते ही अवधकी सेनाके साथ रुहेलोको पराभूत कर उनका देश वजीरके राज्यमें सम्मिलित करनेकी बात स्वीकार की।* बहाने बनाकर रुहेलोपर आक्रमण कर दिया गया। रुहेलोने वीरतापूर्वक सामना किया पर वे पराभूत हो गये। 'विजयजन्य अधिकारोंका जैसा अमानुषिक दुरुपयोग इस समय किया गया वैसा शायद ही कभी हुआ हो। 'रुहेला नामधारी प्रत्येक व्यक्तिको या तो तलवारके घाट उतरना पड़ा या फिर देशका परित्याग करके ही अपनी जान बचानी पड़ी।' लेकिन यह बात सन्धिके बाहर नही थी, क्योकि हेस्टिंग्सके अपने ही

---

* डब्ल्यू० एम टारेन्स कृत—'इम्पायर इन एशिया' पृष्ठ १००-१ से संकलित।

पत्रोंसे यह मालूम होता है कि सन्धिकी शर्तोंमें ही यह बात स्पष्टतः स्वीकार की गयी थी कि अगर आवश्यक प्रतीत हुआ तो रुहेलोंका अन्त कर दिया जायगा।' भाषा स्वयं उसकी ही है।"* टारेन्सके अनुसार, इसके फलस्वरूप हेस्टिंग्सने पत्रपर हस्ताक्षर करनेके लिए बीस हजार पौण्ड तो अपनी जेबमें डाले और चार लाख पौण्डकी रकम सरकारी खजानेमे पहुंची।

शीघ्र ही नवाब वजीरकी भी बारी आ पहुंची। रुपयेकी मांग होनेपर नवाबने अपनी निर्धनता प्रकट की। इस सम्बन्धमें बातचीत चलने लगी जिसके फलस्वरूप लखनऊका खजाना बिना खाली किये ही कलकत्ताका खजाना भरनेका स्मरणीय उपाय ढूढ़ निकाला गया। लार्ड मेकालेके शब्दोंमे 'उपाय यह था कि गवर्नर जेनरल और नवाब वजीर दोनों मिलकर किसी तीसरेको लूटे। और यह तीसरा---जिसे लूटनेका निश्चय किया गया---स्वय लुटेरोंमेसे ही एककी माताके अतिरिक्त और कोई नहीं था।'† जिन व्यक्तियोंको उन्होंने लूटा वे भूतपूर्व वजीरकी माता और विधवा थी जिनके पास बहुत बड़ा खजाना होनेका अनुमान किया गया था। इस लूटमे बारह लाख पौण्डकी रकम हाथ लगी।

हेस्टिंग्सने 'हिन्दुस्तानके राजाओंको सहायक सेनाके नामसे अंग्रेज सैनिकोंकी स्थायी सेना किरायेपर देनेकी प्रथा चलायी और इसके द्वारा उनमेसे प्रत्येककी सत्ता और स्वतन्त्रताका अन्त कर देनेका एक साधन प्रस्तुत कर दिया। हेस्टिंग्सने स्वीकार किया है कि अवधमें यह सेना रखनेका उद्देश्य देशी राज्यको अधीन राज्यके रूपमें परिणत करना था। उसके सहयोगीने अपने शिकारके साथ ही अपना भी अन्त कितनी शीघ्रतासे कर दिया, बादकी घटनासे यह बिलकुल स्पष्ट हो गया।'‡

एक भारतीय नरेशके विरुद्ध दूसरेको खड़ा करने और फिर उसे भी पराजित करनेकी ब्रिटिश नीति किस प्रकार काममें लायी जाती रही, इसके और उदाहरण देनेकी आवश्यकता नहीं जान पड़ती। यह नीति केवल भारततक ही

---

* वही पृष्ठ १०२। † वही, पृष्ठ ११६। ‡ वही पृष्ठ १०१।

सीमित नहीं रही है, बल्कि अन्यत्र भी उसी सत्यानासी प्रभावके साथ बरती गयी है।

उन्नीसवी सदीके आरम्भतक केवल मुगल साम्राज्यकी ही शक्ति पूर्णतः छिन्नभिन्न नही की गयी बल्कि वे स्वतन्त्र राज्य भी जो मुगल साम्राज्यके विध्वस-के फलस्वरूप कायम हुए थे, या तो पूर्णतः नष्ट कर दिये गये या इस प्रकार निःशक्त कर दिये गये कि ईस्ट इण्डिया कम्पनी सारे देशमें प्रभु सत्ताके रूपमे रह गयी। कुछ देशी राज्योंकी स्वतन्त्रता---वास्तविक या अवास्तविक---फिर भी शेष रह गयी थी। जबतक उनका अन्त नही हुआ तबतक यह नीति प्रयोगमें लायी जाती रही। इस प्रकार उन्नीसवी शताब्दीका प्रथम चरण पूरा होते होते मराठा साम्राज्यका सफाया हो गया और जिन मराठा सरदारोंको शासकके रूपमें देशमें रहने दिया गया उनका राज्य करद राज्यके रूपमे परिणत हो गया था। अवधका राज्य नाममात्रके लिए अब भी स्वतन्त्र बना हुआ था, पर उसमें इतनी सामर्थ्य नही रह गयी थी कि वह अंग्रेजोके हमलेका सामना कर सकता। यह हमला कुछ दिनोके बाद हुआ और अवध भी अग्रेजी राज्यमे मिला लिया गया। टीपू सुलतान पहले ही पराभूतकर मार डाला गया था और उसका राज्य भी ले लिया गया था। सिखोने पञ्जाब और पश्चिमोत्तरमे अपना राज्य स्थापित कर लिया था और वे भी सन्देहकी ही दृष्टिसे देखे जा रहे थे। मुगल सम्राट् केवल नामका सम्राट् रह गया था और देशका कोई बड़ा भूभाग उसके शासनमें नही रह गया था।

३

वहाबी आन्दोलन

यद्यपि देशमें मुसलमानोंका पद बड़ी शक्तिके रूपमें नही रह गया था, तो भी उनपरसे लोगोंका आदरभाव हटा नही था। उनमें कुछ ऐसे व्यक्ति उठ खड़े

हुए जिनमें सुधारका मजहबी जोश भरा हुआ था। उन्होने इसलामके आदर्शोंसे भ्रष्ट होनेको ही राजनीतिक शक्तिके ह्रासका कारण ठहराया और उन रीति-रिवाजोको छोड़कर जो इसलामद्वारा अनुमोदित न होनेपर भी समय पाकर चल पड़े थे, इसलामके आरम्भिक उपदेशोकी ओर पुनः लौटनेपर जोर दिया। इन्ही आरम्भिक सुधारकोमे फरीदपुर जिले (बगाल)के बहादुरपुरके मौलवी शरिअतुल्लाह थे जिन्होने अरबमे बीस वर्ष रहनेके बाद भारत लौटनेपर बीसवी सदीके प्रथम दशाब्दमे "फ्रैजी" नामक एक सम्प्रदाय कायम किया। उनका पुत्र दुधू मिया उनका उत्तराधिकारी हुआ और किसानोमे अपना आन्दोलन केवल धार्मिक सुधारके लिए ही नही बल्कि जमीदारोके अत्याचारसे उनकी रक्षा करनेके विचारसे भी चलाता रहा।

कुछ वर्ष बाद रायबरेलीके सैयद अहमदने एक आन्दोलन आरम्भ किया जिसकी शाखाएं सारे देशमे कायम हुई थी और जिसने उन्नीसवी सदीके पूर्वार्द्धमे वहुत कुछ कार्य किया। उनका जन्म रायबरेलीमे और शिक्षा दिल्लीमे हुई थी। वे अपनी विद्वत्ताके लिए ही नही बल्कि साधुताके लिए भी बहुत प्रसिद्ध थे। उस समयके बहुतसे विद्वान् उलेमा उनको अपना नेता मानने लगे और उन्होने मदिरा-पान तथा वेश्या-गमन जैसी सामाजिक बुराइयोके विरुद्ध जोरोसे आन्दोलन किया। उन्होने अपने शिष्यो और कार्यकर्ताओको सुदूरवर्ती स्थानों जैसे हैदराबाद और उसके दक्षिण तथा बंगाल भेजा। वे पंजाबके सिखोके विरुद्ध जेहादके केन्द्र बन गये जो मुसलमानोको धार्मिक कृत्य करनेसे रोकते थे और उन्हे तग करनेके लिए मसजिदोंको अपवित्र करते थे। उन्होंने उनके राजको दारुल-हर्ब करार दिया और उनके विरुद्ध जेहाद करनेका निश्चय किया। यद्यपि मराठोने अपना शासन स्थापित कर लिया था, फिर भी उन्होने मुसलमानोके धर्ममे हस्तक्षेप नही किया; उनको अपना धार्मिक कृत्य करने दिया और मुसलमान काजियोंको भी काम करते रहने दिया। मुसलमानोंने उनके राजको तथा राजपूतोंके राजको दारुल इसलाम ही जैसा समझा, दारुल-हर्ब नही। सैयद अहमद बरेलवीने सिखोंके

विरुद्ध जेहादकी तैयारी की और इसके लिए धन-जन एकत्र करनेको अपने शिष्यों-को सारे देशमें भेजा। स्वयं उन्हें भी युद्धका कुछ अनुभव था। उन्होंने इस प्रकार एकत्र की गयी सेनाका नेतृत्व अपने हाथमें लिया। ब्रिटिश अधिकारियोंको इस सारी तैयारीकी खबर बराबर दी जाती रही, पर उन्होंने इसमें हस्तक्षेप नही किया। क्योंकि वह तैयारी सिखोंके विरुद्ध की गयी थी जिनकी शक्ति वे गवारा तो कर लेते थे पर उनपर उनकी कृपा-दृष्टि नही थी। सर सैयद अहमदने इस तैयारीके सम्बन्धमें लिखा है:—

'इन दिनों मुसलमान लोग मुसलमान जनतासे सिखोके विरुद्ध जेहाद करने-के लिए खुलेआम कहा करते थे। सिखोंके विरुद्ध जेहाद करनेके लिए हजारों सशस्त्र मुसलमान और अपार युद्ध-सामग्री एकत्र की गयी। जब कमिश्नर और मजिस्ट्रेटको इसकी सूचना दी गयी तब उन्होने सरकारको इसकी इत्तिला दी। सरकारने उनको साफ-साफ लिख दिया कि वे इसमें हस्तक्षेप न करें। जब दिल्लीके एक महाजनने जेहादियोकी कुछ रकम गड़बड़ कर दी तब दिल्लीके कमिश्नर विलियम फ्रेजरने उनको इसकी डिग्री दी और वह रकम वसूल करके सीमाप्रान्त भेज दी गयी'* मुहम्मद जाफर साहबने 'सवानात अहमदिया' (पृष्ठ १२९) में लिखा है कि 'इसमें कोई सन्देह नही कि सरकार (ब्रिटिश सर-कार) अगर सैयद साहबके विरुद्ध होती तो सैयद साहबको हिंन्दुस्तानमें कोई मदद हीं न पहुंची होती।'† परिणाम यह हुआ कि सैयद अहमद सिन्ध और बोलन-घाटी होते हुए अपनी फौजके साथ अफगानिस्तान पहुंचे और तब खैबर घाटीसे होकर १८२४ मे पंजाबपर आक्रमण किया। युद्ध अल्पाधिक सफलताके साथ १८३० तक चलता रहा जब कि उन्होने पेशावरपर कब्जा किया। सुल-तान मुहम्मद खां जो सिखोंकी ओरसे गवर्नर था, वफादारीकी शपथ ग्रहण

---

* ८ सितम्बर १८७१ के 'इन्स्टीट्यूट गजट'में प्रकाशित सर सैयद अह-मदके लेखसे एम० तुफैल अहमदद्वारा 'मुसलमानोंका रोशन मुस्तकबिल'में उद्धृत, पृष्ठ १०२।

† २ वही पृष्ठ १०३

करनेपर अपने पदपर रहने दिया गया और मौलवी मजहरअलीकी काजीके पदपर नियुक्ति हुई। इस प्रकार वे सीमाप्रान्तके मुसलमानोंको धार्मिक स्वतन्त्रता दिलानेमें कृतकार्य हुए। पर सुलतान मुहम्मदखां और काजी मजहरअलीके बीच पुराना झगड़ा चला आ रहा था। सैयद अहमदके पेशावरसे हटनेपर सुलतान मुहम्मदने खुले दरबारमें काजी मजहरअलीका काम तमाम करा दिया। स्थानीय नेताओके साथ षड्यन्त्र कर उसने उन व्यक्तियोंको भी मरवा डाला जिन्हें सैयद अहमदने कलक्टरके पदपर नियुक्त किया था। इस बातसे सैयद अहमदको इतना धक्का पहुँचा कि वे १८३० के अन्तिम भागमें अपने कुछ अनुयायियोके साथ पेशावर छोड़कर चले आये और बादमें ४५ वर्षकी अवस्थामें एक युद्धमे काम आये। हालां कि उनकी मृत्युके बाद उनकी सेना-तितर-बितर हो गयी, फिर भी जेहादी लोगोंने सीमाप्रान्तकी स्वातघाटीके सित्तान नामक स्थानमे अपना सदर मुकाम बना लिया और वहींसे हिन्दुस्तानसे मिली सहायताके बलपर युद्ध चलाते रहे। पंजाबपर कब्जा होनेके समयतक ब्रिटिश सरकार इसकी ओरसे आख मूंदे रही जो सर विलियम हण्टरकी 'इण्डियन मुसलमान्' नामक पुस्तकके निम्नलिखित अवतरणसे बिलकुल स्पष्ट है 'पंजाब मिलाये जानेके पहले वे हिन्दू पड़ोसियोंमें बेहिसाब लूटमार मचाया करते और ब्रिटिश जिलोंसे प्रतिवर्ष धर्मान्ध मुसलमानोको फौजमें भर्ती किया करते थे। हमलोगोंने इस उपनिवेशमें धर्मान्धोके अपने उन प्रजाजनोंको एकत्र होनेसे रोकनेपर ध्यान नही दिया जो सिखोंपर जो विभिन्न जातियोंका समूह है और कभी हमारे मित्र रहते है और कभी शत्रु, अपना सारा क्रोध ठण्ढा करते है। एक अंग्रेजने जिसकी पश्चिमोत्तर प्रान्तमें नीलकी कोठियां हैं, मुझे बतलाया है कि उसके यहां नौकरी करनेवाले सारे धार्मिक विचारके मुसलमान सित्तान पड़ावके लिए अपने वेतनसे एक निश्चित अंश निकाला करते थे। अधिक साहसिक लोग इन धर्मोन्मत्त नेताओंके नेतृत्वमें अल्पाधिक समयके लिए लड़ने भी जाया करते थे। जिस तरह हिन्दू ओवरसियर अपने पूर्वजोंके वार्षिक श्राद्धके लिए जबतब अवकाशके लिए कहा करते थे उसी प्रकार मुसलमान कर्मचारी

१८३० से १८४६ तक जेहादियोंके साथ मिलकर काम करना अपना धार्मिक कर्तव्य बतलाकर कुछ महीनोंके अवकाशके लिए प्रार्थना करनेके आदी हो गये थे।'* सर विलियम हण्टरने आगे कहा है 'पजाबके मिला लिये जानेपर धर्मान्धताका जोश, जो पहले सिखोपर उतारा जाता था, अब उनके उत्तराधिकारियोपर उतारा जाने लगा। सित्तान दलकी दृष्टिमे हिन्दू और अंग्रेज एक-से काफिर थे और इस कारण बध किये जानेके योग्य थे। सिख-सीमाप्रान्तकी जिस अव्यवस्थाकी ओरसे हम आख मूद लिया करते थे या कमसे-कम उदासीनता दिखलाते थे वही हमलोगोको कड़वे उत्तराधिकारके रूपमे प्राप्त हुई।'† उनके शिष्य देशके भिन्न-भिन्न भागो और एक दूसरेसे बहुत दूर स्थानो—जैसे बगालमे राजशाही, बिहारमे पटना और पजाबके मीमान्तमे राजद्रोहका प्रचार करते देखे गये। 'इस अवधिमे इन धर्मान्धोने सीमाप्रान्तीय जातियोंको बराबर अग्रेजोका कट्टर शत्रु बनाये रखा। सिर्फ इसी बातसे इसका पूरा ज्ञान हो जायगा कि १८५०–५७ के बीच सीमाप्रान्तीय अशान्तिको दबानेके लिए अलग-अलग १६ बार धावा करना पड़ा जिसमें ३३,००० सैनिकोंने भाग लिया और १८५९–६३ के बीच अभियानोकी सख्या बढ़कर २० हो गयी जिनमे अस्थायी सहायको और पुलिसके अलावा ६०,००० सैनिकोने भाग लिया।‡ 'मुजाहिदों' के कार्योका विस्तृत उल्लेख करना अनावश्यक है, सिर्फ इतना ही कहना काफी है कि सैयद अहमद बरेलवीके शिष्य बराबर जेहादियोकी सहायता करते रहे। मौलवी विलायतअली और मौलवी इनायतअली जो उनके प्रधान शिष्योमे थे और भाई-भाई थे, पटनाके थे। पजाबपर अधिकार कर लिये जानेपर अंग्रेजोने मुजाहिदोको हिन्दुस्तान

* डब्ल्यू० डब्ल्यू० हण्टर कृत 'इण्डियन मुसलमान्स', पृष्ठ २० से एम० तुफैल अहमदद्वारा 'मुसलमानोका रोशन मुस्तकबिल' मे उद्धृत, पृष्ठ ११०।

† डब्ल्यू० डब्ल्यू० हण्टर—'इण्डियन मुसलमान्स', पृष्ठ २१–२२।

‡ वही—पृष्ठ २४।

वापस आनेके लिए बाध्य किया। मौलवी विलायतअली भी अपने अनुयायियोंके साथ पटना चले आये। मौलवी विलायतअलीको कुछ वर्ष सीमाप्रान्त न जानेकी प्रतिज्ञा भी करनी पड़ी। अवधि समाप्त हो जानेपर उन्होंने तथा उनके भाईने अपनी सारी सम्पत्ति बेच डाली और सित्तानकी हिजरत की। इस प्रकार उन्होंने हिजरतका आन्दोलन आरम्भ किया जो बहुत दिनोंतक चलता रहा। १८५७ के विद्रोहके बाद इस आन्दोलनको काफी प्रोत्साहन प्राप्त हुआ। १८६४ मे जब अग्रेजोने सीमाप्रान्तमें अपनी अग्र-गामी नीति आरम्भ की तब सीमाप्रान्तसे भारतके लोगोंका सम्बन्ध-विच्छेद आवश्यक हो गया। १८६४ और १८७० के बीच भारतीयोके विरुद्ध पांच बड़े-बड़े मुकदमे चलाये गये जिनके प्रमुख अभियुक्तोमे पटना-परिवारके लोग और कुछ उनके शिष्य भी थे। अभियोग यह था कि उन्होंने सीमाप्रान्तके कुछ सम्बन्धियोके साथ पत्र-व्यवहार जारी रखा और धनसे उनकी सहायता की। उनमेसे कुछको फांसीकी सजा हो गयी, पर बादमे घटाकर आजीवन कालेपानीकी कर दी गयी। यहा यह भी कहा जाता सकता है कि लोगोने जो कुछ किया था, वह उससे बढ़कर या बुरा नही था जिससे सरकारने १८२४ से सिर्फ आंख ही नही मूद रखी थी बल्कि मुजाहिदोकी ओरसे हुण्डिया वसूल कर और रकमें सीमाप्रान्त भेजकर उन्हें प्रोत्साहन भी दिया था। सैयद मुहम्मद बरेलवीद्वारा प्रवर्तित और उनके शिष्योंद्वारा चलाया गया यह आन्दोलन 'वहाबी' आन्दोलनके नामसे प्रसिद्ध हुआ। वहाबियोंने सामाजिक और धार्मिक सुधार सम्बन्धी उपदेशोंमें जेहादके महान् सिद्धान्तका भी प्रचार किया। भारत ईसाई अंग्रेजोंके शासनाधीन हो जानेके कारण दारुल-हर्ब बन गया जिसके विरुद्ध जेहाद करना लाजिमी था। इस सम्प्रदायके सम्पूर्ण साहित्यमें संस्कृतात्माके लिए जेहाद प्रथम कर्तव्यके रूपमें वर्णित है।'* जेहाद असम्भव होनेपर दूसरा मार्ग हिजरतका था।

---

* डब्ल्यू. डब्ल्यू-हण्टर—'दि इण्डियन मुसलमान्स', पृ० ६४-५

वहाबी आन्दोलनद्वारा उत्पन्न परिस्थितिका सामना सरकारने दो उपायोंसे साथ-साथ किया : एक ओर तो सरकारके चलाये हुए संगीन मुकदमोंने वहाबियोंका संघटन भंग कर दिया और दूसरी ओर उनके उपदेशोंके विरुद्ध प्रचार आरम्भ किया गया और जेहादके विरुद्ध फतवे प्राप्त कर उनका वितरण किया गया। सर विलियम हण्टरने लिखा है—'भारतमें हमारे लिए बड़ी दुःखद स्थिति यह रही है कि अच्छे आदमी हमारे पक्षमें नही है। . . .और, यह कोई छोटी बात नही है कि अब पुरानी शत्रुता लाजिमी नही रह गयी है।'* यह सारी कथा 'फूट डालकर शासन करने' की नीतिकी परिचायक है। जबतक सिख लोग अंग्रेजोंके लिए कांटेके रूपमें रहे तबतक मुसलमानोंको उनके विरुद्ध जेहादका प्रोत्साहन दिया गया और जब सिखोंको पराजित कर पंजाब मिला लिया गया तब जेहादी लोग ब्रिटिश सरकारके विद्रोही करार दिये गये, उनको आजीवन कालेपानीकी सजा दी गयी और उनका सारा संघटन भंग कर दिया गया।

४

सर सैयदके आरम्भिक दिन

१८५७ का विद्रोह उन कारणोंका परिणाम था जो सुदीर्घकालसे सक्रिय और पुंजीभूत होते आ रहे थे। यहां इसके कारणोंपर विचार करने या इसकी गति विधिका दिग्दर्शन करनेकी आवश्यकता नही है। हां, एक बात निश्चित है। वह यह कि हिन्दू और मुसलमान दोनों इसमें सम्मिलित हुए और दोनों दिल्ली-सम्राट्के झण्डेके नीचे आ गये। दोनोंको बहुत बड़ी क्षति पहुंची, पर अंग्रेजोंका रुख मुसलमानोंके प्रति अधिक शत्रुतापूर्ण था जिनमें उन्होंने देशका एक बहुत बड़ा भाग जीता था। लार्ड एलेनबराने

---

* डब्ल्यू० डब्ल्तू० हण्टर—'दि इण्डियन मुसलमान्स', पृष्ठ १४४।

१८४८ में लिखा था—'दशमांशकी शत्रुता निश्चित होनेकी स्थितिमें शेष नौ अंशोका, जो विश्वसनीय है, उत्साहपूर्ण समर्थन प्राप्त न करना मेरी समझमें बड़ी मूर्खता है। मै इस बिश्वासकी उपेक्षा नही कर सकता कि इस जाति (मुसलमान) की हमारे प्रति मौलिक शत्रुता है और इसलिए हमारी नीति हिन्दुओंको अपने पक्षमें लानेकी होनी चाहिये।'* यह नीति पूर्णरूपसे सफल नहीं हुई क्योंकि १८५७ के विद्रोहमें हिन्दुओंने जिस उत्साहसे भाग लिया वह मुसलमानोंसे किसी प्रकार कम न था, किन्तु अनुभव प्राप्त कर लेनेपर भी शासकोंकी इस नीतिके प्रति विश्वास नही गया जो निम्न लिखित उद्धरणसे स्पष्ट हो जाता है—

'लार्ड एलेनबराने तो लार्ड कैनिंगपर दोषारोप किया ही, उसके अतिरिक्त कलकत्ता-निवासी यूरोपियनोंने भी अधिकारिवर्गसे लार्ड कैनिंगको वापस बुला लेनेका अनुरोध किया। उन्होंने लार्ड कैनिगपर यह आरोप किया कि सिपाही-विद्रोहके बाद भारतमें मुसलमानोके विरुद्ध यूरोपियन समुदायने जो मांग की थी उसका उसने समर्थन नहीं किया'।† यह विरोध विलायत पहुँचा और इसका असर भी हुआ जैसा कि सर विलियम हण्टरने लिखा है—'विद्रोहके बाद अंग्रेज मुसलमानोके प्रति अपने वास्तविक शत्रुके रूपमें बर्ताव करने लगे'।‡ ऐसा कसकर उनसे बदला लिया गया कि बहुतसे समृद्ध और शक्ति-सम्पन्न परिवार बर्बाद हो गये। सरकारके सभी विभागोंमें उन्हे नीचे गिरानेकी निश्चित नीति बरती गयी। मुसलमान केवल देशके नागरिक शासन-कार्यमें सर्वोच्च पदोंपर नही थे बल्कि सेनामें भी उनका प्राधान्य था। दो कारणोंने एक साथ मिलकर उनको पहलेकी प्रधानतासे वंचित किया। एक तो ब्रिटिश सरकारकी नीति उनके विरुद्ध कार्य कर रही थी और दूसरी यह कि स्वयं मुसलमानोंके ही रुखने इसे और पुष्ट कर दिया क्योंकि वे दुःखद अनुभवोंके बाद खिन्न हो अलग पड़े

---

* अतुलानन्द चक्रवर्ती द्वारा 'काल इट पालिटिक्स' में उद्धृत पृष्ठ ३५।

† डब्ल्यू० डब्ल्यू० हण्टर 'दि इण्डियन मुसलमान्स' पृष्ठ १४७।

‡ ,, ,, ,, ,, ,, ,, ,,

रहे और अंग्रेजी शिक्षासे, जो आरम्भ हो गयी थी, उन्होंने लाभ नहीं उठाया जिसके अभावमें सरकारी पद प्राप्त करना अधिकाधिक कठिन हो गया था। सन् १८७० के आसपास, विशेषकर सर डब्ल्यू० डब्ल्यू०हण्टरकी पुस्तक जिसका हवाला ऊपर दिया गया है, प्रकाशित होनेके बाद सरकारकी नीतिमें परिवर्तन हुआ। उन्होंने अपनी पुस्तकका अन्त करते हुए कहा है—'पूर्वके अध्यायोंसे दो महान् तथ्योंका प्रतिपादन होता है—एक तो सीमाप्रान्तमें विद्रोहियोंका स्थायी पड़ाव और दूसरा साम्राज्यके अन्दर चिरकालागत षड्यन्त्र। ब्रिटिश सरकार खड्गहस्त विद्रोहियोंसे सुलहकी बातचीत नहीं चला सकती। जिन लोगों-ने शस्त्रका सहारा लिया है उनका अन्त शस्त्रसे ही होगा।...लेकिन इस विद्रोह भावके प्रति दृढ़ रहते हुए भी यह देखना आवश्यक है कि असन्तोषका कोई उचित कारण न रह जाय। यह कार्य चिरकालागत यह भाव कि उसने उनका अहित किया है निकाल देनेसे हो सकता है जो ब्रिटिश शासनके सम्बन्धमें मुसल-मानोंके मनमें जम गया है।'* इसके अनन्तर उन्होंने विस्तार पूर्वक यह उल्लेख किया है कि किस प्रकार मुसलमानों, विशेषकर बंगाली मुसलमानोंका ब्रिटिश शासनमें दमन किया गया, किस प्रकार वे अधिकार और पदसे वंचित किये गये, किस प्रकार वे कंगाल बना दिये गये, किस प्रकार उनकी शिक्षाकी उपेक्षा की गयी और किस प्रकार उनकी शिक्षा-संस्थाएँ नष्ट-भ्रष्ट की गयी। अन्तमें उन्होंने उनके प्रति न्याय करते, विशेषकर उनके लिए शिक्षाप्रणालीकी आवश्यकता बतलाते हुए कहा है 'हमें मुसलमान युवकोंको अपनी योजनाके अनुसार शिक्षित बनाना चाहिये। उनके धर्म और धार्मिक शिक्षा प्राप्त करनेके लिए प्रक्रियामें बिना किसी प्रकारका हस्तक्षेप किये उनमें धर्मके प्रति उतना सच्चा विश्वास भले ही हम न रहने दें, पर उनकी धर्मान्धता अवश्य ही कम कर सकेंगे। इस प्रकार मुसलमानोंकी नयी पीढ़ीका हम उस मार्गपर चलानेमें समर्थ हो सकेंगे जिसपर हिन्दुओंको जो

---

* डब्ल्यू डब्ल्यू० हण्टर 'दि इण्डियन मुसलमान्स', पृ० ३५।

संसारमें सबसे कट्टर जाति है, चलाकर सहिष्णुताकी वर्तमान स्थितिमें कुछ ही दिन पहले ला चुके है।'* यह सरकारकी नीतिमें होनेवाले परिवर्तनका अग्र सूचक था। इसी नीतिका परिणाम अलीगढ़ कालेजको प्रोत्साहन देना था। इससे अलीगढ़ कालेजके ब्रिटिश प्रिन्सिपलको उत्साह और कालेजको भौतिक लाभ प्राप्त हुआ।

१८५७ के विद्रोहके पहले अंग्रेजोंकी भारतीय सेना भी सभी प्रकारके लोगोंसे बनी हुई थी—उसमें हिन्दू और मुसलमान, सिख और पूरबिया सभी मिले हुए थे। १८५७ में इसके सर्वसामान्य प्रयत्नसे, जो विदेशी शासकोंके विरुद्ध बढ़ती हुई राष्ट्रीय एकताका परिणाम था, उनकी आंख खुल गयी और बादमे जो नीति अपनायी गयी उसका लक्ष्य इसी दृढ़ताको भंग करना था। सर जान लारेन्सने लिखा है 'विद्रोह-पूर्ण सेनाके दोषोंमें जो सबसे बुरा था और जो हमारे लिए सबसे भयंकर प्रमाणित हुआ वह था बंगाल सेनाका भ्रातृभाव और एक जातीयता। यह दोष एक तो यूरोपीय और दूसरा देशी जातियोंकी आपसकी मुकाबलेकी सेनाएँ रखकर दूर किया जा सकता है।'†

परिणाम यह हुआ कि जाति, सम्प्रदाय और वर्णगत भेदोंके आधारपर सेनाका इस प्रकार पुनस्संघटन किया गया कि सैनिकोंके दल अपनी जाति या सम्प्रदायके प्रति भक्तिभाव बनाये रखें। शक्ति-भेदों और प्रभावोंका आपसमें मुकाबला रहे। चूकि बंगाल-सेनाने, जो विशेषतः आधुनिक बिहार और बंगालके लोगोंसे बनी हुई थी, १८५७ के विद्रोहमें प्रमुख भाग लिया था और नव-विजित पजाबने अंग्रेजोंको संकटसे पार कराया था इसलिए जो नयी सेना बनी उसमें पहले (बिहार और युक्तप्रान्तवाले) उत्तरोत्तर कम कर दिये गये और पंजाबवालोकी प्रधानता बढ़ा दी गयी। यह बात सेनामें लिये गये देशके भिन्न-भिन्न भागोंके लोगोंको प्रतिशत संख्याकी नीचेकी तालिकासे जो 'माडर्न रिव्यू' में प्रकाशित श्री चौधरीके लेखोंसे डाक्टर अम्बेडकरद्वारा उद्धृत की गयी है, बिलकुल स्पष्ट हो जायगी।

---

* डब्ल्यू० डब्ल्यू० हण्टर 'दि इण्डियन मुसलमान्स', पृ० २१४।
† मेहता और पटवर्धनद्वारा 'कम्यूनल ट्रिएंगिल' में उद्धृत, पृष्ठ ५४।

वर्ष	पूर्वोत्तर भारत पंजाब, काश्मीर सीमाप्रान्त	नैपाल गढ़वाल कमायूं	पूर्वोत्तर भारत युक्तप्रान्त और बिहार	दक्षिण भारत	बर्मा
१८५६	१० से कम	नगण्य	९० से कम नही	—	—
१८५८	४७	६	४७	—	—
१८८३	४८	१७	३५	—	—
१८९३	५३	२४	२३	—	—
१९०५	४७	१५	२२	१६	—
१९१९	४६	१४.८	२५.५	१.२	१.७
१९३०	५८.५	२२	११	५.५	३

कहा जाता है कि कुछ वर्ग ऐसे है जिनमें यौद्धिक प्रवृत्ति पायी जाती है और कुछमें नहीं पायी जाती। पश्चिमोत्तर भारतकी जातियां और समुदाय यौद्धिक प्रवृत्तिवाले समझे जाते है और युक्तप्रान्त तथा बिहारके लोग इस श्रेणीमें नहीं गिने जाते। यह बात भुला दी जाती है कि इस दूसरे वर्ग (बिहार और युक्तप्रान्त) के लोगोसे संघटित सेनाने ही अंग्रेजोंके लिए पंजाब और सीमाप्रान्तको जीता था और १८५८ से बरती जानेवाली निश्चित नीतिके ही फलस्वरूप वे यौद्धिक गुणोंसे वंचित किये गये थे। १८५७ के बादकी नीतिका तात्कालिक उद्देश्य युक्तप्रान्त और बिहारके लोगोंका अधिकाधिक वहिष्कार कर उनका स्थान सिखों, गुरखों और गढ़वालियोंको देना था।

विद्रोहियोंने १८५७ में स्वयं सर सैयद अहमदको क्षति-ग्रस्त किया और सर सैयदने भी उनके विरुद्ध अंग्रेजोंको सहायता दी। मुसलमानोंकी तबाहीसे उनको बहुत दुःख हुआ। उन्होंने यह भी देखा कि अंग्रेजी शिक्षा न मिलनेके कारण वे नौकरियोंसे भी वंचित रह जाते है। वे राष्ट्रीय विचारके

थे और हिन्दुओं तथा मुसलमानोंको एक ही राष्ट्रके सदस्य मानते थे जिसे वे हिन्दू राष्ट्र कहते, क्योंकि दोनों हिन्दुस्तानके निवासी थे। इसलिए पहले उनके लेख और भाषण राष्ट्रवादीके-से होते थे और हिन्दू और मुसलमान दोनों उन्हें राष्ट्रीय नेता मानते थे; फिर भी उनका ध्यान मुसलमानोंकी स्थिति उन्नत करने विशेषकर शिक्षा सम्बन्धी सुविधाएँ प्रस्तुत करनेकी ओर अधिक था। नौकरी करते समय वे जिन स्थानोंमें रखे गये वहां उन्होंने स्कूल स्थापित करनेमें सहायता दी जिनमेंसे कुछ स्कूल भी बने हुए है। उनका यह भी विश्वास था कि ब्रिटिश शासनसे भारतीयोंका हित होगा और उसमें जो त्रुटियां या दोष हों उन्हें दूर करनेके लिए उनकी ओर शासकोंका ध्यान आकृष्ट करना चाहिये। इस सम्बन्धमें उनके विचार उस समयके अन्य राजनीतिक नेताओं-जैसे ही थे जिनमें वे लोग भी शामिल थे जिन्होंने कांग्रेसकी स्थापनामें सहायता की थी। सर सैयदकी राजनीतिक आकांक्षाएँ इन्हीकी-सी थीं। उनका कहना था कि सरकारी नौकरी, सामाजिक सम्पर्क, राजनीतिक या वैधानिक अधिकारोंके सम्बन्धमें जाति या रंगके कारण यूरोपियनों और भारतीयोंमें कोई भेदभाव नही होना चाहिये। इसी विचारसे प्रेरित हो उन्होंने वाइसरायकी कौसिलके सदस्यकी हैसियतसे इल्बर्ट बिलका तो समर्थन किया और आगरा-दरबारके अवसरपर वे दरबारसे बाहर चले गये क्योंकि अंग्रेजोंके बैठनेके लिए कुर्सियां चबूतरेके ऊपर और भारतीयोंके लिए नीचे रखी गयी थीं। उन्होंने साइंटिफिक सोसायटी (विज्ञान समिति) की स्थापना की जिसके हिन्दू, मुसलमान और यूरोपियन सदस्य बने और जिसमें निबन्ध पढ़े जाते थे। उन्होंने तहजीबुल अखबार' में लिखा था—

'कोई भी राष्ट्र तबतक प्रतिष्ठा और सम्मान नहीं पा सकता जबतक वह शासक जातिकी समानता नहीं प्राप्त करता और अपने ही देशकी सरकारमें भाग नहीं लेता। दूसरे राष्ट्र हिन्दुओं या मुसलमानोंका उनके क्लर्क बनने या इसी प्रकारके छोटे-मोटे पदोंपर रहनेपर कभी सम्मान नहीं कर सकते बल्कि वह सरकार

भी जो अपनी प्रजाका उचित सम्मान नहीं करती, आदरकी दृष्टिसे नहीं देखी जा सकती। आदर तो तभी प्राप्त किया जा सकता है जब हमारे देशवासी शासक जातिके समकक्ष पदोंपर प्रतिष्ठित हों। सरकारने सचाई, विश्वास और न्यायके साथ प्रत्येक देशके प्रजाजनोंको समानपद प्राप्त करनेका अवसर दिया है, पर भारतीयोके लिए तरह-तरहकी कठिनाइयां और बाधाएँ खड़ी कर रखी है। हमलोगोंको दृढ़ निश्चय और अध्यवसायके साथ कार्य करते जाना चाहिये और किसी संकटमें पड़ जानेकी आशकासे पीछे नही रहना चाहिये।'*

सन् १८५३ में जब लोकल सेल्फ गवर्नमेण्ट बिल (स्थानीय स्वायत्त शासन बिल) कौसिलमें पेश था उस समय उन्होने यह सुझाव रखा कि चूकि भारतमें विभिन्न धर्मों और रीति-रिवाजोंको माननेवाले लोग है इसलिए बोर्डकी कुछ जगहें नामजदगीसे पूरी की जायं, और यह निश्चय हुआ कि एक तिहाई जगहे इस प्रकार पूरी की जायं, जिसमें वे लोग जो विशेष वर्गोंके स्वार्थोका प्रतिनिधित्व करते है न चुने जानेपर सरकारद्वारा मनोनीत किये जा सके। ध्यान देनेकी बात यह है कि उन्होने मुसलमानोके लिए जगहें सुरक्षित रखने या उनके लिए पृथक् निर्वाचनकी मांग नहीं की। वस्तुत: वे ऐसी माग कर भी नहीं सकते थे क्योकि वे हिन्दुओ और मुसलमानोको एक ही राष्ट्रके सदस्य मानते थे जैसा कि उनकी निम्न लिखित बातोसे स्पष्ट है—

'राष्ट्र (कौम) शब्द उन लोगोंके लिए प्रयुक्त होता है जो किसी देशके अधिवासी है।......यह स्मरण रहे कि हिन्दू और मुसलमान धार्मिक शब्द है। इस देशमें बसनेके कारण हिन्दू मुसलमान और ईसाई भी एक ही राष्ट्रके सदस्य है। जब ये सभी समुदाय एक ही राष्ट्रके है तब जिन चीजोसे देशको, जो सबका सम्मान देश है, लाभ होता है उनसे सबको लाभ होना चाहिये।

---

* तुफैल अहमदद्वारा 'मुसलमानोंका रोशन मुस्तकबल' में उद्धृत, पृष्ठ २८१-२

अब वह समय नहीं रहा जब केवल धर्म-भेदके कारण एक ही देशके अधिवासी दो भिन्न राष्ट्र माने जायं।'*

एक दूसरे अवसरपर उन्होंने कहा था 'जिस प्रकार आर्य लोग हिन्दू कहलाते हैं उसी प्रकार मुसलमान भी हिन्दू ही अर्थात् हिन्दुस्तानके निवासी है।'†

पंजाबके हिन्दुओंको सम्बोधित करते हुए उन्होंने कहा था 'जिस हिन्दू शब्दका आपलोगोंने प्रयोग किया है वह मेरी समझमें ठीक नही है। हिन्दुस्तानका प्रत्येक निवासी अपनेको हिन्दू कह सकता है। मुझे खेद है कि आप लोग मुझे हिन्दू नही समझते हालां कि मैं भी हिन्दुस्तानका ही निवासी हूं।‡

इसमें कोई आश्चर्यकी बात नही यदि हिन्दुओंने उन्हे मुसलमानोंसे कम अपना नेता नही माना; कोई आश्चर्य नही यदि उन्होंने सिविल सर्विसकी युगपत् परीक्षाओंके सम्बन्धमें सुरेन्द्रनाथ बनर्जीके व्याख्यानके लिए १८८४ में एक सभाका आयोजन कर स्वयं उसका सभापतित्व किया; कोई आश्चर्य नही यदि वे बंगालियोके जो राष्ट्रीय आन्दोलनका पथ-प्रदर्शन कर रहे थे, प्रशंसक रहे।

५

अलीगढ़ कालेजके यूरोपियन प्रिन्सिपल और वहाँकी राजनीति

यह मनोरंजक और साथ ही उलझनमें डालनेवाला प्रश्न है कि इस प्रकारके विचार रखनेवाला व्यक्ति मुसलमानोको राष्ट्रीय आन्दोलनसे, जो १८८५ में

---

१ 'मजमुआ-इ-लेक्चर्स' 'सर सैयद अहमद', पृष्ठ १६७ से तुफैल अहमदद्वारा 'मुसलमानोंका रोशन मुस्तकबल' में उद्धृत पृष्ठ २८३।

† 'सैयदकी आखिरी मजामीन'से उसीमें उद्धृत, पृष्ठ ५५।

‡ सर सैयदके 'सफरनामा पञ्जाब'से उसीमें उद्धृत, पृष्ठ १३९।

सिविल सर्विसके एक यूरोपीय सदस्य श्री ए० ओ० ह्यूमकी सहायतासे स्थापित राष्ट्रीय महासभाके रूपमें व्यक्त हुआ, पृथक् रहनेकी राय कैसे दे सका। इसका उत्तर उस प्रभावमें ढूंढ़ना पड़ेगा जो अलीगढ़ कालेजके अंग्रेज प्रिंसिपलोंने प्राप्त कर लिया था। बादमें १५–२० वर्षोंका मुसलमानी राजनीतिका इतिहास इन्हीं धूर्त अंग्रेजोंका इतिहास है जो बीच-बीचमें कुछ अन्तरके साथ यह खाई तैयार करते गये जो तबसे बराबर चौड़ी ही होती गयी है।

जैसा कि ऊपर कहा गया है, सर सैयद अहमद मुसलमानोंको अंग्रेजी शिक्षा दिलानेके लिए बहुत इच्छुक थे। उन्होंने १८७५ में एक स्कूल स्थापित किया जो क्रमशः बढ़कर पहले महम्मदन एंग्लो ओरिएण्टल कालेज और फिर, अलीगढ़की मुसलिम यूनिवर्सिटी बन गया। श्री बेक १८८३ में इसके प्रिन्सिपल नियुक्त हुए और १८९९ में अपनी मृत्युके समयतक उसी पदपर बने रहे। वे बहुत अच्छे अवसरपर आये। अंग्रेजी शिक्षाके साथ ही, जिसका हिन्दुओंमें काफी प्रसार हो चुका था, स्वतन्त्रता और जनतन्त्रके विचार भी आये जिनकी भाषणोंमें अभिव्यक्ति भी होने लगी थी। राष्ट्रवाद शीघ्रतापूर्वक बढ़ता जा रहा था। अंग्रेज लोग अब अनुभव करने लगे थे कि बढ़ते हुए राष्ट्रवादके प्रतिरोधके रूपमें मुसलमानोंको, जो तिरस्कारपूर्ण दृष्टिसे देखे जा रहे थे, अपनी ओर लाकर अपने सरक्षणमें कर लेना चाहिये। श्री बेकने धर्म-प्रचारके उत्साहसे इस नीतिको कार्यान्वित किया। 'उन्होंने सर सैयदको राष्ट्रवादसे विलग करने, उनके राजनीतिक झुकावको ब्रिटिश लिबरलोंकी ओरसे हटाकर कंजरवेटिवोंकी ओर करने और सरकारके साथ मुसलमानोंका पुनः मेल करानेका अध्यवसायपूर्वक प्रयत्न किया। उन्हें अपने इस प्रयत्नमें अभूतपूर्व सफलता हुई।* उन्होंने पहले-पहल जो काम किये उनमें एक था इन्स्टीट्यूट गजटपर, जो वर्षोंसे सर सैयद अहमद द्वारा सञ्चालित हो रहा था, सम्पादकीय नियन्त्रण प्राप्त करना। उनसे पहले आये हुए यूरोपीय प्रोफेसर कालेजके छात्रोंसे नहीं मिलते थे, पर श्री बेक

---

* मेहता और पटवर्धन 'कम्यूनल ट्रिएंगिल', पृष्ठ ५८।

मुसलमान छात्रोंसे बेरोक टोक मिलने लगे और उनमें बहुत प्रिय हो गये। दूसरे अंग्रेज प्रोफेसरोंने उनसे संकेत पाकर कालेजमें भिन्न भिन्न संघटन और कार्य आरम्भ किये। उनके प्रभावके कारण जिलेके अधिकारी लोग भी कालेजके कार्यों और खेलोमें इस प्रकार सम्मिलित होने लगे कि सन् १८८८ में प्रान्तके छोटे लाट सर आकलैण्ड काल्विनने कालेजके छात्रोंकी तुलना इंग्लैण्डके सार्वजनिक विद्यालयों और विश्वविद्यालयोके छात्रोंसे की। सर सैयद अहमदखां अंग्रेजोके रहन-सहनके बड़े प्रशंसक थे। उन्होने वहांके छात्रोके रहन-सहनका जो स्तर रखनेकी कोशिश की वह उनके सहयोगियों और समर्थकोंकी समझमें भारत जैसे निर्धन देशके लिए बहुत व्यवसाध्य था। पर यही बात यूरोपीय प्रिन्सिपल और प्रोफेसरोंके सरकारी क्षेत्रोमें प्रभाव और सरकारी नीतिमें परिवर्तनके साथ मिलकर अलीगढ़ कालेजके छात्रोंको सरकारी पद और नौकरियां दिलानेमें सहायक हुई। सर सैयद अहमदपर इन सब बातोंका असर होना अनिवार्य था।

कहने भरके लिए तो इन्स्टीट्यूट गजटके सम्पादक अब भी सर सैयद अहमद ही थे, पर श्री बेकके सम्पादकीय नियन्त्रणमें उसकी नीति परिवर्तित हो गयी। उन दिनों सर सैयद बंगालियोंके बहुत बड़े प्रशंसक थे, 'उस समयतक सर सैयदपर बंगालियोंकी सचाईकी गहरी छाप थी। उनका खयाल था कि उन्हींके कारण शिक्षाकी उन्नति हुई है और देशमें स्वतन्त्रता तथा देशभक्तिके आदेशका प्रचार हुआ है।'* श्री बेकने इन्स्टीट्यूट गजटके सम्पादकीय स्तम्भोंमें बंगालियों और उनके आन्दोलनके विरुद्ध लेख लिखना आरम्भ कर दिया जिन्हें सर सैयदके लेख समझकर बंगालियोंने सर सैयदकी आलोचना शुरू कर दी।† इसी मौकेपर जब कि श्री बेक बंगालियोंके विरुद्ध वातावरण तैयार करनेमें सफल हो चुके थे, १८८५के दिसम्बरमें बम्बईमें श्री डब्ल्यू. सी. बनर्जीकी, जो

---

* तुफैल अहमद 'मुसलमानोंका रोशन मुस्तकबल', पृष्ठ २९१।

† वही— „ „ २९२।

बंगाली थे, अध्यक्षतामें भारतीय राष्ट्रीय महासभाका पहला अधिवेशन हुआ।

कांग्रेसके उद्देश्यमें ऐसी कोई बात नही थी जिसपर किसी भारतीयको आपत्ति हो सकती। पहले अधिवेशनमें जो प्रस्ताव स्वीकार किये गये उनमें भारत-सचिवकी कौसिलके सदस्योंके निर्वाचन, प्रान्तीय व्यवस्थापक कौसिलके निर्वाचित सदस्योंकी संख्या-वृद्धि, पञ्जाब और युक्तप्रान्तमें ऐसी ही कौसिलें कायम करने, इग्लैण्ड और भारतमे साथ ही साथ सिविल सर्विसकी परीक्षा लेने, सैनिक व्ययमे वृद्धि न करने और अपर बर्माको न मिलानेकी मांग की गयी थी। सिविल सर्विसकी साथ-साथ परीक्षा लेने और प्रान्तीय व्यवस्थापक सभाओंकी वृद्धिके प्रश्नोपर १८८४ मे अलीगढ़की एक सार्वजनिक सभामें, जिसका आयोजन और सभापतित्व सर सैयदने किया था, सर सुरेन्द्रनाथ बनर्जी अपने भाषणमे विचार प्रकट कर चुके थे। भारतके गोरे पत्रोने जिनमे श्री बेकके लेख प्रकाशित हुआ करते थे, इसका विरोध किया। उस समय तो सर सैयद अहमदने कुछ नही कहा, पर १८८६ के दिसम्बरमे, महम्मदन एजूकेशनल काग्रेसकी स्थापनाके समय, जो बादमें मुसलिम एजुकेशनल कान्फरेन्सके नामसे विख्यात हुई, उन्होंने कहा कि मै उन लोगोसे सहमत नही हूं जो यह खयाल करते है कि राजनीतिक विषयोकी बहसके जरिये मुसलमान लोग उन्नति कर सकेंगे। मेरे विचारसे तो उनकी उन्नति सिर्फ शिक्षाके द्वारा हो सकती है।

कांग्रेसका दूसरा अधिवेशन दिसम्बर, १८८६ में श्री दादाभाई नौरोजीकी अध्यक्षतामें कलकत्तामे हुआ। इसमे जो प्रस्ताव स्वीकार किये गये उनमें जूरी द्वारा अभियोगोका विचार कराने, शासन और न्यायके कार्योंको पृथक् करने और देशकी रक्षाके लिए स्वयंसेवक भर्ती करनेकी मांग की गयी। प्रथम दोनो अधिवेशनोंमे जो प्रस्ताव स्वीकार किये गये उनमें एक भी ऐसा नही था जो मुसलमानोंके हितोंके विरुद्ध हो। सिविल सर्विसकी परीक्षाएं युगपत् रखनेका समर्थन स्वयं सर सैयदने किया था। शासन और न्यायके पार्थक्यकी मांग मुसलमानी शासनमे व्यवहारमें आनेवाले नियमके अनुकूल ही थी जिसमें

यह पार्थक्य प्रचलित भी था। ये दोनों कार्य कम्पनीके समयमें एकमें मिला दिये गये और कुछ दिन अलग-अलग रखकर १८५७के विद्रोहके बाद फिर मिला दिये गये। लेजिस्लेटिव कौसिलोंमे निर्वाचित सदस्योंकी संख्या-वृद्धि और जिन प्रान्तोमे कौसिल नही थी उनमे स्थापित करनेकी मागका समर्थन वे आरम्भिक दिनोंमे ही कर चुके थे हालां कि १८८३ मे उन्होने चुनावके तरीकेके सम्बन्धमें अवश्य अपना मतभेद प्रकट किया था। इसलिए ऐसा कोई कारण नही था जिससे सर सैयद अहमद काग्रेसका विरोध करते। लेकिन कुछ अधिकारी लोगोंकी दृष्टिमें कांग्रेस—आन्दोलन क्रान्तिकारी आन्दोलन था और जो बात उनके दिल-मे, विशेषकर श्री बेकद्वारा बिठायी गयी उसके प्रभावमें प्रवाहित होनेसे वे अपने-को रोक न सके। उन्हें सुझाया गया कि मुसलमानोकी शिक्षा अभी उस दरजे-तक नही पहुंची है कि उनके वैधानिक आन्दोलनतक ही सीमित रहनेका विश्वास किया जा सके। अगर वे उत्तेजित हो गये तो उनका असन्तोष उसी रूपमे व्यक्त हो सकता है जिस रूपमें १८५७ मे हुआ था। उन्हे इसका पूरा-पूरा विश्वास हो गया कि मुसलमानोका राजनीतिक आन्दोलनमे भाग लेना उनके लिए हानिकारक होगा। श्री ए० ओ० ह्यूमने सर सैयद अहमदको एक खुली चिट्ठी लिखी थी जो १२ दिसम्बर १८८७ के इन्स्टीट्यूट गजटमे सर सैयदके उत्तरके साथ प्रकाशित भी हुई थी।

काग्रेसका तीसरा अधिवेशन दिसम्बर १८८७ मे श्री बदरुद्दीन तैयबजीकी अध्यक्षतामें मद्रासमे हुआ और बहुसंख्यक मुसलमान इसमे सम्मिलित हुए। सरकारके उच्च पदाधिकारियोने अभी दुश्मनीका रुख अख्तियार नही किया था और मद्रासके गवर्नरने काग्रेसके प्रतिनिधियोको दावत भी दी। कांग्रेसके प्रस्तावोंमें भारतीयोको सेनामे कमीशनके पदोंपर नियुक्त करने, भारतमें सैनिक कालेज स्थापित करने, शस्त्र-कानूनका संशोधन करने, एक हजारसे कमकी वार्षिक आय करसे बरी करने और कला-कौशलकी शिक्षाको प्रोत्साहन देनेकी मांग की गयी। लगभग कांग्रेस अधिवेशनके ही समय लखनऊमें महम्मदन

विरोध करने लगे, तो इसमें कोई विचित्रता नहीं है। मार्च, १८८८ में सर आकलैण्ड कालविनने अलीगढ़ कालेज देखा और मानपत्रके उत्तरमें संस्था और छात्रोंकी इतनी प्रशंसा की जितनी पहले किसीने नही की थी। उसी वर्ष अप्रैलमें सर सैयद अहमदने मेरठमें दूसरी बार कांग्रेसके विरोधमें भाषण किया। १८८८ के दिसम्बरमे कांग्रेसका अधिवेशन इलाहाबादमें होनेवाला था। सर आकलैण्ड कालविन तथा उनकी सरकारने इस अधिवेशनको रोकनेकी शक्तिभर कोशिश की पर इसके बावजूद भी अधिवेशन होकर ही रहा। लार्ड डफरिन, जिन्होने कांग्रेसकी स्थापनाके लिए श्री ए० ओ० ह्यूमको प्रोत्साहित किया था, अब इसके विरुद्ध हो गये थे।

लगभग इसी समय गोरक्षाका आन्दोलन चल पड़ा जिसका सरकारके समर्थक मुसलमानोने लाभ भी उठाया। उन्होने इलाहाबादमें एक सभा कर केवल गोरक्षाके ही विरुद्ध नही बल्कि मुसलमानोके कांग्रेसमें सम्मिलित होनेके विरुद्ध भी प्रस्ताव स्वीकार किया। कुछ लोगोने मुसलमानोंके कांग्रेसमें सम्मिलित होनेके विरुद्ध एक फतवा भी निकाला। मौलवी अब्दुल कादिर लुधियानवीने इसके विरोधमे फतवा प्राप्तकर उन्हें लुधियाना, जालन्धर, होशियारपुर, कपूरथला, अमृतसर, दिल्ली, रामपुर, बरेली, मुरादाबाद, मदीनमनौरा तथा बगदाद शरीफके उलेमाओके हस्ताक्षरसे प्रकाशित कराया। इन फतवोंपर हस्ताक्षर करनेवालोमें अधिकांश उस समयके मशहूर उलेमा और धर्मशास्त्री थे। फतवामें कहा गया था कि सांसारिक विषयमें मुसलमान हिन्दुओंके साथ मिलकर कांग्रेसमें काम कर सकते है। इस प्रकार हम देखते है कि एक ओर तो महान् व्यक्तित्ववाले सर सैयद अहमद कांग्रेसके विरोधी थे और दूसरी ओर सर्वश्री तैयबजी, अली मुहम्मद भीमजी और रहीमतुल्ला सयानीके नेतृत्वमें बम्बई और मद्रासके मुसलमान कांग्रेसके समर्थक थे और सभी प्रसिद्ध उलेमाओंने मुसलमानोंके कांग्रेसमें सम्मिलित होनेकी स्वीकृति भी दे दी थी।

१८८८ के अगस्तमें 'यूनाइटेड इण्डियन पेट्रियाटिक असोसिएशन' की अलीगढ़में स्थापना हुई जिसमें हिन्दू और मुसलमान दोनों सम्मिलित हुए। असोसिएशनके उद्धेश्य थे—(१) समाचारपत्रोके जरिये पार्लमेण्टमें सदस्यो और इंग्लैण्डवालोंको यह सूचित करना कि भारतके कुलीन मुसलमान और देशी नरेश काग्रेसके साथ नही है और उसके मन्तव्योका खण्डन करना। (२) पार्लमेण्टके सदस्यों और इंग्लैण्डवालोंको कांग्रेस-विरोधी हिन्दू और मुसलिम संस्थाओके मत अवगत कराना और (३) शान्ति और व्यवस्था बनाये रखने तथा भारतमें ब्रिटिश शासन दृढ़ करनेमें सहायता प्रदान करना। यह सारी योजना श्री बेकके प्रयत्नोका परिणाम थी। संस्थाके संचालनका भार श्री बेक और सर सैयद अहमदको सौपा गया। असोसिएशनकी एक शाखा इंग्लैण्डमें श्री मारिसनके मकानमे खोली गयी। श्री बेकके मरनेपर यही मारिसन साहब अलीगढ़के प्रिन्सिपल बनाये गये। देशी नरेशोको इस सस्थाका संरक्षक बनानेका निश्चय किया गया। कई बड़े-बड़े हिन्दू और मुसलमान जमीदार तथा कुछ यूरोपीय लोग भी असोसिएशनमे सम्मिलित हुए। राजा शिवप्रसादने 'अवध तालुकेदार असोसिएशन'मे यह प्रस्ताव रखा कि 'इण्डियन लायल असोसिएशन' नामकी एक संस्था स्थापित की जाय और 'पेट्रियाटिक असोसिएशन' उसकी शाखाके रूपमें रहे। उन्होने यह भी प्रस्ताव किया कि देशी भाषाओंमें भाषण-लेखन रोक देनेके लिए सरकारसे प्रार्थना करनी चाहिये क्योकि ये संकट और विद्रोहके कारण हो सकते है। उद्देश्य था कांग्रेसको दबाना। सरकार, 'पेट्रियाटिक असोसियेशन' और राजा शिवप्रसाद जैसे व्यक्तियोकी ओरसे विरोध होते हुए भी काग्रेसके गत अधिवेशनके ६०७ प्रतिनिधियोके मुकाबले इलाहाबाद अधिवेशनमें १२४८ प्रतिनिधि सम्मिलित हुए और मुसलमान प्रतिनिधियोंने इस बातका स्पष्ट रूपसे निर्देश किया कि मुसलमान प्रतिनिधियोंकी संख्या-वृद्धि अलीगढ़के नेताओंके विरोधका परिणाम है। उल्लेखनीय बात यह है कि इलाहाबाद-अधिवेशनमें, जिसका इतना अधिक विरोध किया गया था, जो प्रस्ताव स्वीकार किये गये थे उनमें सहिष्णुताका समर्थन, शिक्षापर अधिक व्यय और स्थायी

बन्दोबस्तका विस्तार करनेकी मांग की गयी और नमक-करका विरोध किया गया।

१८८९ में श्री ब्रेडलाने भारतमे लोकतन्त्रात्मक संस्थाएं स्थापित करनेके उद्देश्यसे पार्लमेण्टमें एक बिल पेश किया। श्री बेकने इसके विरोधमें एक स्मरण-पत्र तैयार किया जिसमे कहा गया था कि लोकतन्त्रात्मक संस्थाएं भारतके अनुकूल नहीं पड़ेंगी क्योकि वहा भिन्न भिन्न प्रकारके समुदाय बसे हुए है। उन्होने स्मरण-पत्रपर बहुत बडी सख्यामे हस्ताक्षर भी कराये थे जो अलीगढ़ कालेजके छात्रोंके दल भेजकर प्राप्त किये गये थे। उनका एक दल तो स्वयं बेकके नेतृत्वमे दिल्ली गया था। 'श्री बेक स्वयं जामा मसजिदके दरवाजेपर बैठ गये और छात्र उनके कहनेके मुताबिक नमाज पढनेके लिए अन्दर जानेवालोसे यह कहकर हस्ताक्षर कराते गये कि हिन्दू गायकी कुर्बानी बन्द कराना चाहते हैं, इसीके विरोधमें यह दरख्वास्त सरकारके पास भेजी जा रही है। यह बात श्री विलायत हुसेन साहबने अलीगढके 'कान्फरेन्स गजट'मे लिखी है। इस प्रकार २०,७३५ हस्ताक्षर प्राप्त कर यह विचित्र प्रार्थना-पत्र १८९० मे पार्लमेण्टमें पेश करनेके लिए इंग्लैण्ड भेजा गया।'❀

'यूनाइटेड इण्डियन पेट्रियाटिक असोसियेशन' कुछ वर्षोंतक मुसलमानोके नामपर काग्रेसके विरोधका कार्य चलाता रहा, पर १८९३ मे 'महम्मदन ऐंग्लो ओरिएण्टल डिफेन्स असोसिएशन आव अपर इण्डिया' के नामसे एक नयी संस्था स्थापित हुई। इस असोसिएशनके उद्देश्य थे—(१) अग्रेजों और भारत सरकारके सम्मुख मुसलमानोंका मत रखना और उनके राजनीतिक अधिकारोंकी रक्षा करना, (२) मुसलमानोंमें राजनीतिक आन्दोलनका प्रसार रोकना, और (३) ऐसे साधन काममें लाना जिनसे ब्रिटिश शासनके दृढ़ता प्राप्त करने, शान्ति और व्यवस्था बनाये रखने और लोगोंमें राजभक्तिका भाव बढ़ानेमें सहायता मिले। 'पेट्रियाटिक असोसिएशन' हिन्दू-मुसलमान दोनोंकी संयुक्त संस्था-सी थी, पर श्री बेकको दोनोंका मिलकर ब्रिटिश शासनको बल प्रदान करना

❀ तुफैल अहमद 'मुसलमानोंका रोशन मुस्तकबल', पृष्ठ ३११-१२।

भी सह्य नहीं था, इसलिए उन्होने 'डिफेन्स असोसिएशन'की स्थापना करायी। इसमे मुसलमान अन्य भारतीय समुदायोसे तो पृथक् कर दिये गये पर प्रतिगामी अंग्रेजोके साथ मिला दिये गये और नाम भी 'डिफेन्स असोसिएशन' (रक्षा-संघ) रखा गया। यह नाम 'ऐंग्लोइण्डियन डिफेन्स असोसिएशन'के अनुकरणपर रखा गया जो १८८३ मे लार्ड रिपनके विरुद्ध स्थापित किया गया था, पर कार्य पूरा हो जानेपर उसका अन्त हो गया था। श्री बेक इस नयी सस्थाके मन्त्री बनाये गये।

असोसिएशनके प्रथम अधिवेशनमे श्री बेकने अपने आरम्भिक भाषणमें बतलाया कि यद्यपि 'पेट्रियाटिक असोसिएशन' ने श्री ब्रेडलाके बिलके विरोधमें हस्ताक्षर प्राप्त किये थे, पर उसमे दो बहुत बड़े दोष थे—एक तो यह कि वह संस्था हिन्दू और मुसलमान दोनोकी सयुक्त संस्था थी और उसमे बहुत-सी दूसरी सस्थाएं भी सम्मिलित थी, दूसरा यह कि उसके तत्त्वावधानमें सार्वजनिक सभाए हुआ करती थी और इस प्रकार वह जनतामे अशान्ति उत्पन्न किया करती थी। 'डिफेन्स असोसियेशन' मुसलमानोका असोसियेशन होगा जिससे हिन्दू लोग बिलकुल अलग रखे जायगे और यह न तो सार्वजनिक सभाए करेगा और न किसी तरहकी अशान्ति उत्पन्न करेगा। यह किसी दूसरी संस्थाको भी सम्मिलित नही करेगा। इसकी एक समिति होगी और इसका सारा कार्य साधारण सदस्योके हाथमे न रखकर समितिके ही जिम्मे कर दिया जायगा। श्री बेकके इस आरम्भिक भाषणसे यह महत्त्वपूण अंश यहां उद्धृत करना उपयुक्त जान पड़ता है—'गत कुछ वर्षोसे देशमे दो आन्दोलन जोर पकड़ने जा रहे हैं—एक तो राष्ट्रीय महासभा है और दूसरा गोरक्षाका आन्दोलन। इनमेसे पहला तो सर्वथा अंग्रेजोके विरुद्ध है और दूसरा मुसलमानोके। राष्ट्रीय महासभाका उद्देश्य ब्रिटिश सरकारका राजनीतिक अधिकार हिन्दुओके कुछ दलोको हस्तान्तरित करना, शासक जातिको निर्बल करना, लोगोको हथियार देना, सेनाको शक्तिहीन और इसपर होनेवाला व्यय कम करना है। इस उद्देश्यके प्रति मुसलमानोकी कोई सहानुभूति नही हो सकती। गोरक्षा-आन्दो-

लनका उद्देश्य मुसलमानोंको गायकी कुर्बानी करने और अंग्रेज तथा मुसलमान दोनोंको खानेके लिए गोबध करनेसे रोकना है। गोबध करनेके लिए वे अपने विरोधियोंका बहिष्कार करते हैं जिसमे वे पेटकी ज्वालासे परेशान होकर उनकी अधीनता स्वीकार कर लें। बम्बई, आजमगढ़ आदि स्थानोका भीषण दंगा इसी-का परिणाम है। मुसलमान और अग्रेज इन दोनो आन्दोलनोके लक्ष्य बन गये है। अतः उनका विरोध करनेके लिए मुसलमानो और अग्रेजोका आपसमें मिल जाना आवश्यक है। लोकतन्त्रात्मक संस्थाओंकी स्थापनाका विरोध होना चाहिये क्योंकि वे इस देशके अनुकूल नही है। इसलिए हमलोगोंको सच्ची राजभक्ति और कार्यमे एकता लानेके लिए प्रचार करना चाहिये।*

श्री ब्रेडलाके बिलके विरोधमे लगभग ५० हजार हस्ताक्षरोके साथ श्री बेकके निवेदनपत्र भेजनेका उल्लेख पहले किया जा चुका है। उन्होने मुसलमानोंके हस्ताक्षरोके साथ दूसरा निवेदनपत्र सिविल सर्विसकी परीक्षा युगपत् रखनेके विरोधमे भिजवाया। निवेदनपत्रमें जो प्रार्थना की गयी थी उसके स्वीकार कर लिये जानेका समाचार मिलनेपर 'डिफेंस असोसियेशन'ने धन्यवादका प्रस्ताव स्वीकार किया और उसमें यह भी जोड़ दिया कि एक साथ परीक्षा रखना ब्रिटिश शासनके स्थायित्वमे बाधक सिद्ध होगा, सरकार कमजोर हो जायगी और धन-जनकी रक्षा करना कठिन हो जायगा जिसपर भारतकी नैतिक और भौतिक उन्नति निर्भर है।

श्री बेकने भारतमे प्रतियोगिताद्वारा नियुक्ति करनेका भी विरोध चलाया और यह सुझाया कि नौकरियोंके विषयमें मुसलमानोंको ब्रिटिश सरकारके प्रति भक्तिका ही भरोसा करना चाहिये। 'डिफेंस असोसिएशन'ने इंग्लैण्डमे भी प्रचार कार्य चलाया और स्वयं श्री बेकने १८९५ में वहां एक व्याख्यान दिया जिसका प्रतिपाद्य विषय यह था कि मुसलमानो और अंग्रेजोमे एका होना सम्भव है पर हिन्दुओं और मुसलमानोंकी एकता सम्भव नही है और पार्लमेण्टरी संस्थाएं

---

* सैयद तुफैल अहमद—'मुसलमानोंका रोशन मुस्तकबल' पृष्ठ ३१५।

भारतके लिए सर्वथा अनुपयुक्त होंगी; अगर उनकी स्थापना की गयी तो बहुसंख्यक हिन्दुओके आगे अल्पसख्यक मुसलमानोंका कोई वश न चल सकेगा। अपने इस व्याख्यानमें उन्होंने कभी तो मुसलमानोंकी पीठ ठोंकी और कभी उन्हें धमकी दी कि अगर मुसलमानोंने उचित कार्य नही किया और हिन्दुओंकी नीतिका अनुसरण करते गये तो इसका परिणाम बहुत भयंकर होगा।

इसी समय ब्रिटिश सरकार सीमाप्रान्तमे अग्रगामी नीति बरतनेका विचार कर रही थी और सैनिक व्यय भी बढाना चाहती थी जिसका कांग्रेस विरोध कर रही थी। श्री बेकने 'डिफेस असोसिएशन'की १८९६ की वार्षिक रिपोर्टमें इस बातपर जोर दिया कि सरकारके स्थायित्वके लिए जल और स्थल सेना और भी शक्तिशाली बनायी जानी चाहिये। सर सैयद अहमदने भी असोसिएशनमे इस आशयका एक प्रस्ताव पेश किया कि असोसिएशन सैनिक व्यय कम करनेके विरुद्ध है। प्रस्ताव उपस्थित करते हुए उन्होंने कहा कि मेरी समझमे अंग्रेज सैनिकोंकी संख्या बहुत कम है और लार्ड डफरिनको एक अवसरपर मैंने अच्छी तरह समझा दिया कि सीमाप्रान्तकी रक्षाके लिए सेना पर्याप्त नही।* इसके विरुद्ध कांग्रेसने सीमाप्रान्तमें सरकारकी अग्रगामी नीतिके विरोधमें प्रस्ताव स्वीकार किया और यह सुझाया कि सीमाप्रान्तके लोगोके साथ मैत्रीकी नीति बरती जाय और स्वात घाटीपर किया जानेवाला अत्यधिक व्यय बन्द कर दिया जाय। ध्यान देनेकी बात यह है कि कांग्रेस तो सरकारकी अग्रगामी नीतिका विरोध कर रही थी जो सीमाप्रान्तके लोगोंकी, जो सबके सब मुसलमान थे, मृत्यु और बरबादीका कारण हो रही थी, पर 'डिफेंस असोसिएशन' इसके लिए सेना और व्यय बढ़ानेकी मांग कर रहा था।

इन सब बातोंने उन मुसलमानोंको, जो एक ओर तो सर सैयद अहमदके प्रति भक्ति-भावके कारण खिच रहे थे और दूसरी ओर मुसलमानोंके वास्तविक हितके प्रति भक्तिसे, अपना दिल टटोलनेको विवश कर दिया; जैसा कि नवाब वका-

---

* तुफैल अहमद—'मुसलमानोंका रोशन मुस्तकबल', पृष्ठ ३३०

रुल मुल्ककी निम्नांकित पंक्तियोंमें, जो उन्होंने कुछ वर्ष बाद १९०७ में लिखी थी, प्रकट होता है—'यह सब देखकर जिन लोगोके मनमें सम्प्रदायके हितका ध्यान था उन्हें चिन्ता हुई और वे आपसमें पूछताछ करने लगे। अन्तमें कुछ संरक्षक सर सैयद अहमदकी, जिनका बहुत दिनोंतक कोई सानी नही होगा, शक्ति, प्रतिष्ठा और महत्ताके बावजूद इस परिणामपर पहुंचे कि हमें, अपने नेताके प्रति जो भाव है उसका विचार न कर, अपने सम्प्रदायके हितोंकी ओर ही दृष्टि रखनी चाहिये। लाहौरके 'पैसा अखबार' में एक लेखमाला प्रकाशित करानेका निश्चय किया गया। ये लेख किसी कल्पित नामसे न प्रकाशित कराकर नवाब मोहसिनुल-मुल्क, शम्शुल उलेमा मौलवी ख्वाजा अलताफहुसेन हाली जैसे व्यक्तियोके और मेरे हस्ताक्षरसे प्रकाशित किये जानेवाले थे। इस लेखमालाका पहला लेख लिखकर मैंने नवाब मोहसिनुल-मुल्क बहादुर और शम्शुल उलेमा मौलवी हाली साहबके पास हस्ताक्षरके लिए भेजा जो उस समय सम्भवत: अली-गढ़में रहते थे। इसी समय अचानक सर सैयदके देहावसानका समाचार मिला। मैंने फौरन नवाब मोहसिनुल-मुल्कको लेख वापस कर देनेके लिए तार दे दिया, क्योंकि उनकी मृत्युके बाद उनकी अच्छाई और अनुपम गुणोके अतिरिक्त और किसी बातका विचार ही नही रह गया था। चूंकि लेखमाला निकालनेका विचार छोड़ दिया गया था और मनमें शिकायतोंके लिए कोई स्थान भी नही रह गया था, इसलिए कालेजके हितकी दृष्टिसे मै आज इन बातोंको प्रकट कर रहा हूं।'*

१८९८ में सर सैयद अहमदकी मृत्युके बाद भी श्री बेकने अपनी नीति जारी रखी, पर दूसरे ही वर्ष सन् १८९९ मे उनका भी देहान्त हो गया। इलाहाबाद हाईकोर्टके चीफ जस्टिस सर आर्थर स्ट्राचेके शब्दोंमें उन अंग्रेजोमे वे थे जो संसार-के भिन्न भिन्न भागोंमें साम्राज्य निर्माणके कार्यमें संलग्न है। वे अपने कर्तव्यका पालन करते हुए सैनिककी भांति मरे है।'

---

* 'वाकर-इ-हयात', पृष्ठ ४२० से तुफैल अहमदद्वारा 'रोशन मुस्तकबल' मे उद्धृत, पृष्ठ ३३४।

श्री बेकके बाद श्री थियोडोर मारिसन कालेजके प्रिन्सिपल बनाये गये। यहां यह स्मरण दिलाया जा सकता है कि मारिसन साहबके ही मकानमें इंग्लैण्डमें 'पेट्रियाटिक असोसिएशन' की शाखा खोली गयी थी; इसलिए श्री बेककी जगहपर इनका अलीगढ़ कालेजका प्रिन्सिपल बनाया जाना ही नही, बल्कि राजनीतिमें प्रतिनिधित्व करना भी स्वाभाविक था। ऐसी घटनाएं भी घटित हुईं जिन्होने अलीगढ़ कालेजके अंग्रेज प्रिन्सिपलोको हिन्दुओसे मुसलमानोंको पृथक् करनेके उनके कार्यमें सहायता दी। १९०० मे युक्तप्रान्तीय सरकारने एक निश्चय प्रकाशित किया जिससे प्रान्तमें उर्दू-नागरीका आन्दोलन चल पड़ा। हिन्दुओंने कचहरियोमें नागरी लिपिके प्रयोगकी अनुमति देनेके सरकारी विचारका समर्थन किया और मुसलमानोंने इसका विरोध किया। नागरी लिपिके प्रयोगके लिए हिन्दू कई वर्षोसे आन्दोलन करते आ रहे थे पर सर सैयदके विरोधके कारण उन्हे सफलता नही मिल सकी। १९०० मे प्रान्तमें प्लेगका प्रकोप आरम्भ हुआ। सरकारने पृथक् रखनेका उपाय काममें लाना शुरू किया। इससे कुछ शहरोंमे दंगा हो गया जिसमें हिन्दू-मुसलमान दोनों सम्मिलित हुए। इसी प्रकारका दंगा कानपुरमें १ अप्रैल १९०० को हुआ जिससे सरकारको बड़ी परेशानी और चिन्ता हुई। इस घटनाके एक पक्षके भीतर ही कचहरियों और सरकारी दफ्तरोंमे नागरी लिपिके प्रयोगका निश्चय निकला। इसका परिणाम यह हुआ कि हिन्दू-मुसलमानोंमें संघर्ष प्रारम्भ हो गया। इसके विरोधमें मई १९०० में नवाब छतारीके सभापतित्वमें अलीगढ़में एक सभा हुई। नवाब मोहसिनुल-मुल्कने जोरदार भाषण किया और प्रस्ताव स्वीकार कर सरकारसे यह निश्चय वापस लेनेका अनुरोध किया गया। इससे सरकार सभापतिसे अप्रसन्न हो गयी और इन्होंने सभापतित्वसे इस्तीफा दे दिया। उनके बाद नवाब मोहसिनुल-मुल्क सभापति हुए और उन्होंने इसपर कुछ व्याख्यान भी दिये। लेफ्टिनेण्ट गवर्नर स्वयं अलीगढ़ गये, कालेजके संरक्षकोंसे मिले और उनसे कहा कि नवाब मोहसिनुल-मुल्क दोमेंसे एक अपने लिए चुन लें—या तो वे उर्दू कान्फरेन्सके सभापतिके पदपर रहें या कालेजके मन्त्रीके पदपर। कालेजके मन्त्रीके पदपर रहते

वे राजनीतिक आन्दोलनोमें भाग नही ले सकते। कालेजके कामका महत्व समझकर संरक्षकोंके दबावसे उन्होने उर्दू कान्फरेन्सके सभापतित्वसे इस्तीफा दे दिया। 'पेट्रियाटिक असोसिएशन' और 'डिफेन्स असोशिएशन' का कार्य कांग्रेस और भारतमे लोकतन्त्रात्मक सस्थाओकी स्थापना, सिविल सर्विसकी एक ही समय परीक्षा रखने, सैनिक व्यय घटाने, नमक-कर उठा देने, शस्त्र-कानूनमे संशोधन करने आदिका विरोध करना था। यह सब राजनीतिक काम नही समझा गया। कालेजके मन्त्री सर सैयद अहमद ही नही बल्कि इसके प्रिन्सिपल श्री बेकको भी यह सब कार्य करनेके लिए सरकारने अनुमति तो दी ही, प्रोत्साहन भी देती रही; किन्तु नवाब मोहसिनुल-मुल्कको उर्दू कान्फरेन्सका सभापति बने रहनेकी अनुमति नही दी गयी क्योंकि यह राजनीतिक कार्य समझा गया। कारण स्पष्ट है। पहला काम सरकारके अनुकूल पड़ता था, दूसरा नही।

श्री मारिसनने देखा कि नागरी लिपिके विरुद्ध छिडा हुआ मुसलमानोंका आन्दोलन दबानेमें कठिनाई होगी इसलिए उन्हे राय दी कि कोई कोई भी राजनीतिक सस्था रखना वांछित नही है। उन्होने लोक-तन्त्रात्मक संस्थाओसे होनेवाला हानिकर प्रभाव उन्हें समझाया और उन्हें एक पत्रमे जो इन्स्टीट्यूट गजटमें १९०१ मे प्रकाशित हुआ था, लिखा 'लोक-तन्त्रात्मक शासन अल्प-संख्यकोंको लकडहारा और पनभरा बना डालेगा।'* उन्होने अपनी यह धारणा भी प्रकट की कि मुसलमानोंकी कोई अलग राजनीतिक सस्था रखना वाछनीय नहीं जान पड़ता क्योकि सम्प्रदायके बड़े लोग सरकारको अप्रसन्नताके भयसे इसमें सम्मिलित नहीं होंगे जिससे स्वयं मुसलमानोंमें ही मतभेद उत्पन्न हो जायगा। इसलिए उन्होंने अन्तमें उनको यही राय दी है कि मेरी समझमें राजनीतिक सस्था मुसलमानोंके हितकी दृष्टिसे लाभदायक न होकर हानिकर ही होगी, क्योंकि गत २० या २५ वर्षोंसे सरकार उनके लिए रिआयत करती आ रही है। अगर कांग्रेसकी तरह वे भी कोई संस्था स्थापित कर अधिकारोंकी माग करने लगें

---

* तुफैल अहमद 'मुसलमानोंका रोशन मुस्तकबल' पृष्ठ ३४९।

और पार्लमेंट एक कमीशन बिठा दे तो मुसलमानोंको उतना लाभ कभी न होगा जितना सर अन्थोनी मेकडानलके हाथमें अपना भाग्य सौंप देनेसे होगा।'* उन्होंने इस बातकी ओर भी ध्यान दिलाया कि अगर उन्होंने कोई राजनीतिक मांग की होती तो सरकारी अफसर मुसलमानोंको जो तरजीह देते रहे है वह बन्द कर दी गयी होती। इसलिए उन्होंने यह सुझाया कि मुसलमानोके लिए योग्य व्यक्तियोंद्वारा संचालित और राजनीतिक साहित्यसे सम्पन्न केवल एक समितिकी आवश्यकता है जो व्यवस्थापिका सभाके सदस्योंको परामर्श देती रहे। उन्होने यह भी सुझाया कि मुसलमानोंको राजनीतिक प्रश्नोकी अपेक्षा आर्थिक प्रश्नोंपर अधिक ध्यान देना चाहिये।

धन एकत्र न हो सकनेके कारण यह प्रस्ताव कभी कार्यरूपमे परिणत नहीं हो सका और मुसलमानोमे चलनेवाला है सारा राजनीतिक आन्दोलन, मौलवी तुफैल अहमदके शब्दोमे, उस समय जमीनके अन्दर दफन हो गया।

नागरी-उर्दूके विवादमे, उसके राजनीतिक स्वरूपके कारण सरकार कालेजके मन्त्रीके भाग लेनेके तो विरुद्ध थी पर कालेजके छात्रोका राजनीतिक कार्योंमें उपयोग करनेमे उसे कोई हिचक नही हुई। उन दिनो रूस और इंग्लैण्ड प्रतिद्वन्दी राष्ट्र थे और दोनों ही फारसको अपने-अपने पक्षमें लानेके लिए प्रयत्नशील थे। १९०२ मे लार्ड कर्जनने फारसके कुछ छात्रोंको अलीगढ़ कालेजमें रखकर शिक्षा दिलाना वांछनीय समझा। श्री मारिसनने कालेजका एक प्रतिनिधिमण्डल फारस भेजनेका प्रस्ताव किया। नवाब मोससिनुल-मुल्कने कालेजकी ओरसे प्रतिनिधि मण्डलका व्यय देनेका विरोध किया, पर श्री मारिसनके जबर्दस्ती करनेपर उन्हे दब जाना पड़ा। आखिर प्रतिनिधि-मण्डल फारस गया और उस देशके उच्च घरानोके लड़के आकर अलीगढ कालेजमें भरती भी हुए।

सभी मुसलमान श्री मारिसनका नेतृत्व स्वीकार करनेको तैयार नहीं थे। १९०१ में नवाब मोहसिनुल-मुल्कने 'महम्मदन पोलिटिकल आर्गेनाइजेशन'

---

* तुफैल अहमद—'रोशन मुस्तकबल', पृ० ३५०।

नामकी एक राजनीतिक संस्था स्थापित कर इसे सफल बनानेका यथाशक्ति प्रयत्न भी किया; इसके उद्देश्य भी नरम ही थे, पर सरकारी अफसरोंके इसे स्वीकार न करनेसे सारा प्रयत्न व्यर्थ सिद्ध हुआ। जब सरकारको मुसलमानोंकी एक राजनीतिक संस्थाकी आवश्यकता प्रतीत हुई तब कहीं जाकर एक संस्था स्थापित हुई और वह, जैसा कि शीघ्र ही देख पड़ेगा, सफलतापूर्वक कार्य भी करने लगी।

८

पृथक् निर्वाचनका उद्‌गम

बंगाल प्रान्त सबसे पहले ईस्ट इण्डिया कम्पनीके शासनाधीन हुआ था। अंग्रेजी शिक्षा भी सबसे पहले इसी प्रान्तमें आरम्भ हुई। बंगाली हिन्दुओंने इससे लाभ उठानेमें जरा भी विलम्ब नहीं किया। सरकारने, उस समय जो नीति बरती जाती थी उसके अनुसार, मुसलमानोंको जानबूझकर पीछे रोक रखा। हिन्दुओंने भिन्न भिन्न विभागोंमें सरकारी नौकरियां ही नहीं प्राप्त की बल्कि बहुत बड़े सुधारक, वकील, चिकित्सक, वैज्ञानिक, वक्ता, लेखक और ऐसे मनुष्य उत्पन्न किये जिन्होंने अंग्रेजी साहित्य-सरिताका पर्याप्त अवगाहन किया था और ब्रिटिश संस्थाओं, विशेषकर ब्रिटिश विधानके बहुत बड़े प्रशंसक हो गये थे। ऐसे समुदायसे यह आशा नहीं की जा सकती थी कि वह नीचेकी छोटी-छोटी सरकारी नौकरियोंसे बहुत दिनोंतक सन्तुष्ट रह सकेगा। बहुतोंके मनमें ब्रिटिश संस्थाओंके आदर्शपर प्रगतिशील संस्थाओंकी स्थापनाकी इच्छा बलवती होती जा रही थी। वे सारे देशके शिक्षितवर्गमें जागरण लानेके कार्यमें बहुत बड़े अंशमें सहायक हुए और भारतीय राष्ट्रीय महासभाकी स्थापनाके भी बहुत कुछ वे ही कारण हुए जिसका प्रथम अधिवेशन एक बंगाली, श्री डब्ल्यू० सी० बनर्जीके सभापतित्वमें हुआ। वे स्वभावतः सभी प्रगतिशील विचारवाले व्यक्तियोंके आदर और प्रशंसाके

पात्र हो गये थे और जैसा कि पहले कहा जा चुका है, सर सैयद अहमदखां भी उन्हींमेसे एक थे। पर इन्ही कारणोसे ब्रिटिश अफसर उन्हें सन्देहकी दृष्टिसे देखने लगे, उनके प्रति यह घृणा या भय छिपाकर भी नहीं रखा गया। वे लोग कलकत्ता म्युनिसिपैलिटीके म्युनिसिपल कमिश्नरके पदपर काम करते हुए अपनी योग्यता और कर्तव्यनिष्ठाके कारण सर अन्थोनी मेकडानल-के, जो उस समय बगालके लेफ्टिनेण्ट गवर्नर थे, प्रशसापात्र बन गये थे। प्रभुवत् आचरण करनेवाले लार्ड कर्जनसे यह आशा नही की जा सकती थी कि वे बगालियोंके इस बढ़ते हुए प्रभावको सहन कर सकेगे। इसलिए उन्होने जो काम सबसे पहले किये उनमेंसे एक था निर्वाचित सदस्योकी मंख्या घटाकर कलकत्ता म्युनिसिपैलिटीपर वार करना। उसका अध्यक्ष भी अब कोई सरकारी अफसर ही होता। इस उपायसे म्युनिसिपैलिटी सरकारके नियन्त्रणमे आ गयी। प्रधान नगरपर जो सारे भारतका नही तो कमसे कम पूर्वोत्तर भारतका राष्ट्रवादका केन्द्र और स्रोत था, इस प्रकार वार किया जाना लोगोको बहुत खला। इससे लार्ड कर्जनकी चिढ और बढ गयी और दिसम्बर १९०३ में उन्होने चटगाव और ढाका डिवीजनोंको बंगालसे अलग कर आसाममे मिला देनेकी एक योजना बना डाली। इससे लोगोमे बड़ी खलबली पैदा हुई। ढाकाके नवाब सलीमुल्ला खातकने इसे 'जंगली व्यवस्था' करार दिया। लार्ड कर्जनने कलकत्ता विश्वविद्यालयके दीक्षान्त भाषणमें यह कहनेपर कि प्राच्य लोगोमे सत्यके प्रति कोई आदरभाव नही होता भारतीय लोकमतके साथ उनका संघर्ष और भी बढ़ गया। इसके विरुद्ध लोगोंने आवाज उठायी। लगातार विरोध होनेसे लार्ड कर्जनके क्रोधकी मात्रा बढ़ती ही गयी। उन्होंने ढाकाकी यात्रामें वहांकी एक सार्वजनिक सभामे मुसलमानोंसे कहा कि बंगालके विभाजनका उद्देश्य लेफ्टिनेण्ट गवर्नरका कार्यभार ही नहीं घटाना है जिसके जिम्मे बंगाल प्रान्तमें इतना विस्तृत भूभाग है, बल्कि एक ऐसे प्रदेशका निर्माण भी करना है जिसमें मुसलमानोंका प्राधान्य रहे। इस भाषणसे बहुतसे मुसलमान उनके पक्षमें हो गये। ढाकाके नवाब सलीमुल्ला जो पहले विभाजन-योजनाके विरोधी

थे, इसके कट्टर समर्थकोंमें हो गये, हालां कि उनके भाई ख्वाजा अतीकुल्लाने इसका विरोध जारी रखा। श्री गुरुमुख निहालसिंहका कहना है कि ढाकाके नवाब सलीमुल्लाका समर्थन उन्हें लगभग एक लाख पौण्डका ऋण बहुत कम सूदपर विभाजनके बाद शीघ्र ही देकर प्राप्त किया गया।* हिन्दुओ और श्री ए० रसूल तथा ख्वाजा अतीकुल्लाके नेतृत्वमे बहुतसे मुसलमानोके विरोध करनेपर भी प्रान्तका विभाजन कर दिया गया। सर हेनरी काटनके शब्दोमे इस योजनाका उद्देश्य एकताको छिन्न-भिन्न कर दृढ़ताकी उस भावनाको भग करना था जो प्रान्तमे दृढ हो गयी थी। इसके मूलमे कोई शासन-सम्बन्धी कारण नही था। लार्ड कर्जनकी नीतिका मुख्य उद्देश्य बढती हुई शक्तियोको क्षीण कर देशभक्तिके भावसे अनुप्राणित राजनीतिक प्रवृत्तियोको नष्ट करना था।'† स्टेट्समैनके अनुसार इसका उद्देश्य 'पूर्वी बगालमें मुसलमानोकी शक्ति बढाना था जिससे हिन्दुओंकी शक्तिकी वृद्धिकी रोक होनेकी आशा की जाती है।'‡

विभाजनके प्रश्नके सम्बन्धमे एक अत्यन्त कटु विवादके रूपमे लार्ड कर्जन अपनी विरासत छोड़ गये जिसमे बंगाली ही नही बल्कि देशके दूसरे भागोके लोग भी सम्मिलित हो गये। प्रायः ऐसा होता है कि छोटे दिमागसे निकली हुई योजनाएं उल्टा ही फल लाती है। भारतमे भी यही बात हुई। जो बात राजनीतिक जीवनको कुचलनेका उपाय समझी गयी थी वही बहुत बडी प्रेरणा सिद्ध हुई। विभाजन विरोधी आन्दोलनने सारे देशको इस प्रकार जाग्रत् कर दिया जैसा १८५७ के बाद किसी घटनाने नही किया था।

लार्ड कर्जनका कार्यकाल समाप्त हो जानेपर १९०५के नवम्बरमे जब लार्ड मिण्टोने वाइसरायका पद ग्रहण किया उस समय उनके सम्मुख बड़ी

---

* गुरुमुख निहालसिह—'लैण्डमार्क इन इण्डियन कान्स्टिटयूशनल एण्ड नेशनल डेवलप्मेण्ट', पृष्ठ ३१९।

† 'इण्डिया इन ट्रैन्जीशन' से मेहता और पटवर्धनद्वारा 'कम्यूनल ट्रिएंगल' में उद्धृत, पृष्ठ ६४।

‡ वही पृष्ठ ६४।

गम्भीर स्थिति थी। कार्यभार ग्रहण करनेके कुछ ही महीने बाद उन्होंने श्री जान मार्लेको लिखा—'जहांतक कांग्रेसका सम्बन्ध है......हमें मान लेना चाहिये और उसमें जो अच्छे हैं उनसे मैत्री कर लेनी चाहिये। फिर भी मुझे आशंका है कि आन्दोलनमे बहुत कुछ नितान्त द्रोहात्मक है और भविष्यके लिए खतरा है। मैं कोई ऐसी चीज सोच रहा हूं जो कांग्रेसके उद्देश्यके मुकाबलेमें रखी जा सके। मेरा खयाल है कि इसका हल देशी नरेशोंकी कौंसिल या इस विचारके परिवर्द्धित रूपमे प्राप्त किया जा सकता है—केवल देशी नरेशोकी नहीं बल्कि कुछ अन्य बड़े लोगोकी प्रिवी कौंसिल जैसी कोई चीज हो जिसका सालमे एक सप्ताह या एक पक्ष दिल्लीमे अधिवेशन हुआ करे। विचारका विषय और सचालनविधि खूब सोच-समझकर निर्धारित हो, पर उन लोगोका मत काग्रेसवालोके मतसे भिन्न होगा और यह ऐसे लोगोसे प्राप्त होगा जिनकी पहलेसे ही सुशासनमे गहरी दिलचस्पी है।'*

श्री मार्लेने ६ जूनको लार्ड मिण्टोको लिखा—"प्रत्येक व्यक्ति यह चेतावनी दे रहा है कि भारतमे एक नयी भावना बढ़ती और फैलती जा रही है। लारेन्स, शिरोल, सिडनी लो—सबके सब एक ही राग अलाप रहे है। आप उस पुरानी भावनासे प्रेरित होकर शासन नही करते रह सकते। आपको काग्रेस पार्टी और काग्रेसके सिद्धान्तोसे निपटना पड़ेगा, चाहे उसके विषयमें आप जो भी ख्याल करते हो। 'इस बातका निश्चय जानिये कि कुछ ही दिनोमे मुसलमान लोग आपके विरुद्ध काग्रेसजनोंसे मिल जायंगे' आदि आदि।"†

काग्रेस और साधारणतः प्रत्येक राष्ट्रीय आन्दोलनके मुकाबलेमे नरेशोंकी कौंसिल स्थापित करनेका विचार कार्यान्वित नही हो सका; पर एक अपेक्षाकृत अधिक प्रभावकर उपाय निकाला गया। लार्ड मिण्टोने अपनी कौंसिलकी सलाहसे एक ऐसी सुधार-योजनाकी रूपरेखा तैयार की जो कमसे कम भारतके

---

* लेडी मिण्टो—'इण्डिया, मिण्टो एण्ड मार्ले', पृष्ठ २८–९।

† वही ,, ,, पृष्ठ ३०।

नरम विचारवालोंको सन्तुष्ट कर सके। एक ओर जो योजना प्रस्तुत की गयी और दूसरी ओर मुसलमानोंको देशकी राजनीतिसे विरत करनेका प्रयत्न किया जाने लगा। मौलवी सैयद तुफैल अहमद मंगलोरीने लिखा है—'३० जुलाई १९०६ को अलीगढ़के रईस नवाब हाजी मुहम्मद इस्माइल खा साहबने, जो नैनीतालमे थे और अफसरोसे मिला-जुला करते थे, अलीगढ़ कालेजके मन्त्री नवाब मोहसिनुल-मुल्क बहादुरको इस आशयके एक आवेदनपत्रका मसविदा भेजा कि मुसलमानोको भी अपने अधिकारोंकी मांग करनी चाहिये और साधारणतः शिक्षित मुसलमानोने इधर ध्यान भी दिया। उन दिनों कालेजके प्रिन्सिपल श्री आर्चबोल्ड लम्बी छुट्टीके कारण शिमलामें ठहरे हुए थे और वहाके उच्च अधिकारियोसे मिला करते थे। उन्होने वाइसरायके प्राइवेट सेक्रेटरीसे प्रस्तावित प्रतिनिधि मण्डलके सम्बन्धमें बातचीत की। श्री आर्चबोल्डने नवाब मोहसिनुल-मुल्कसे बात करनेके बाद १० अगस्त १९०६ को वाइसरायको जो पत्र लिखा था वह छापकर प्रतिनिधि मण्डलके सदस्योको बाटा गया। इस पत्रके निम्नलिखित साराशसे पता चल जायगा कि किस प्रकार अलीगढ़ कालेजके प्रिन्सिपल राजनीतिक विषयोमे मुसलमानोका पथ-प्रदर्शन करते रहे और किस प्रकार वे अलीगढ़मे सरकारके रेडिजडेण्टका काम किया करते थे। पत्रका प्रत्येक शब्द सावधानीके साथ मनन करने योग्य है—

"कर्नल डनलप स्मिथ (वाइसरायके प्राइवेट सेक्रटरी) ने मुझे लिखा है कि वाइसरायको मुसलमानोके प्रतिनिधि मण्डलसे मिलना स्वीकार है और मुझे सूचित किया है कि इसके लिए नियमित रूपसे दरख्वास्त भज दी जाय। इस सम्बन्धमें निम्नलिखित बातोंपर विचार करना आवश्यक है—

"पहला प्रश्न दरख्वास्त भेजनेका है। अगर मुसलमानोंके कुछ नता, भले ही वे चुने न गये हों, उसपर हस्ताक्षर कर दें तो मेरी समझमें यह काफी होगा। दूसरा प्रश्न यह है कि प्रतिनिधि मण्डलमें कौन-कौन रहें। उसमें सभी प्रान्तोंके प्रतिनिधि होने चाहिये। तीसरा प्रश्न यह है कि आवेदनपत्रमें कौन-कौनसे विषय रख जायं। इस सम्बन्धमें मेरी राय यह है कि उसमें

राजभक्तिपर जोर दिया जाय, धन्यवाद दिया जाय और यह कहा जाय कि निर्धारित नीतिके अनुसार स्वशासनकी दिशामे अग्रसर होनेकी काररवाई की जा रही है जिससे भारतीय लोग अधिकारके पदोपर पहुंच सकेगे; पर यह आशंका व्यक्त जाय कि निर्वाचन-पद्धति प्रयोगमे लानेपर अल्पसख्यक मुसलमानोको क्षति पहुँचेगी और साथ ही यह आशा भी प्रकट की जाय कि धर्मके आधारपर नामजदगी या प्रतिनिधित्वकी पद्धति प्रयोगमे लाते समय मुसलमानोके मतको उचित महत्व दिया जायगा। उसमे यह भी व्यक्त कर देना चाहिये कि भारत जैसे देशमे जमीदारोके विचारोको महत्व देना आवश्यक है।

"मेरा अपना मत तो यह है कि मुसलमानोके लिए नामजदगीकी पद्धतिको समर्थन करना सबसे अधिक बुद्धिमानीकी बात होगी, क्योकि निर्वाचन पद्धति चलानेका समय अभी नही आया है। इसके अलावा, अगर निर्वाचन पद्धति जारी की गयी तो उनके लिए अपना उचित भाग प्राप्त कर सकना बहुत कठिन होगा।

"पर उन सभी मामलोमे स्वय पर्देकी ओटमे ही रहना चाहता हूँ, यह सब कुछ आपकी ओरसे होना चाहिये। मुसलमानोकी भलाईके लिए मै कितना चिन्तित रहता हूँ, यह बात आपसे छिपी नही है; बड़ी खुशीसे आप लोगोकी यथाशक्ति सहायता करूंगा। मै आपके लिए आवेदनपत्रका मसविदा तैयार कर दूगा। अगर यह मसविदा बम्बईमे तैयार किया जाय तो मै उसे देख लूगा क्योंकि आवेदन पत्र तैयार करनेकी कला मै जानता हूँ। लेकिन, नवाब साहब, अगर आप थोड़े ही समयमे कोई बड़ा और प्रभावकर काम किया जाना चाहते है तो आपको शीघ्रता करनी चाहिये।'*

श्रीमती मिण्टोके शब्दोमें, नवाब मोहसिनुल-मुल्कने इसके अनुसार ही मुसलमानोंका प्रतिनिधि मण्डल भेजनेकी सारी व्यवस्था की ! आवेदनपत्र तैयार कर लिया गया और आगाखांके नेतृत्वमें १ अक्तूबर १९०६ को प्रतिनिधि

---

* मौलवी तुफैल अहमद—'रोशन मुस्तकबल', पृष्ठ ३६०-६१

मण्डल वाइसरायसे मिला। श्रीमती मिण्टोने उस तारीखके अपने रोजनामचेमें लिखा है—"यह दिन महत्वपूर्ण घटनाका था। किसीने तो इसे 'भारतीय इतिहासका एक नया युग' ही करार दे दिया। हमे भारतमें व्याप्त अशान्तिकी भावनाका और सभी वर्गों और मतोके लोगोमे फैले हुए असन्तोषका अच्छी तरह पता है। मुसलमान लोग जिनकी संख्या ६ करोड़ २० लाख है और जो बड़े राजभक्त रहे है, इसलिए चिढ़े हुए है कि उन्हे उचित प्रतिनिधित्व नही मिल रहा है और समझते है कि हिन्दूओको तरजीह देकर कई प्रकारसे हमारी उपेक्षा की गयी है। हलचल मचानेवालोको इस भावनाको उत्तेजन देनेकी बड़ी चिन्ता रही है और स्वभावतः उन्होने इस वृहत् समुदायका सहयोग प्राप्त करनेकी यथाशक्ति चेष्टा भी की है। नयी पीढ़ीके लोग विचलित हो रहे थे और काग्रेसके प्रमुख आन्दोलनकारियोके साथ मिल जाना चाहते थे। चारो ओर यह चिल्लाहट मच रही थी कि राजभक्त मुसलमानोका समर्थन नही किया जायगा आन्दोलनकारियोकी मागे आन्दोलनके जरिये पूरी कर दी जायंगी। मुसलमानोने कोई कार्य आरम्भ करनेके पहले अपनी शिकायतोका उल्लेख करते हुए वाइसरायको एक आवेदनपत्र देनेका निश्चय किया और आजका ही दिन मिलनेके लिए नियत किया गया। भारतके सभी भागोसे लगभग ७० प्रतिनिधि यहां आये हुए है। आज प्रात.काल बाल-रूममे मिलनेका कार्य सम्पन्न हुआ। बगलके दरवाजेसे लड़कियोके साथ काररवाई देखनेके लिए मै अन्दर गयी तबतक मिण्टो अपने सहयोगियोके साथ आगे बढ़े और मंचपर आसीन हो गये। आगाखा मुसलमानोके खोजा सम्प्रदायके आध्यात्मिक गुरु है। वे अपनेको अलीका वंशज बतलाते है और बिना भूभागके ही उन्हे ईश्वरप्रदत्त शासनाधिकार प्राप्त है। वही यह सुन्दर आवेदनपत्र पढ़नेके लिए चुने गये थे जिसमे सारे कष्टों और आकाक्षाओंका उल्लेख किया गया है। मिण्टोने तब अपना सुविचारित उत्तर पढ़ा—'आपका यह कहना अनुचित नही है कि 'युरोपीय ढंगकी प्रतिनिधिमूलक संस्थाए भारतीयोके लिए बिलकुल अजनबी होंगी या यहां उनका आरम्भ करते समय काफी सावधानी बरतने और सोचने समझनेकी जरूरत

पड़ेगी। प्राच्य जातियोंकी परम्परागत प्रथाओं और अन्तःप्रवृत्तियोंके मध्य पाश्चात्य राजनीतिक यन्त्रको लाकर खड़ा कर देना मैं कभी पसन्द न करूंगा। मेरी समझमे आपलोगोके आवेदनपत्रमे यह दावा है कि प्रतिनिधित्वकी किसी भी पद्धतिमे, चाहे उसका सम्बन्ध म्युनिसिपैलिटीसे, डिस्ट्रिक्टबोर्डसे अथवा व्यवस्थापिका सभासे हो, निर्वाचनका आधार रखा या बढ़ाया जाय तो मुसलमानोका प्रतिनिधित्व एक समुदायके रूपमे होना चाहिये। आपलोगोंका यह भी कहना है कि जिस प्रकारके निर्वाचक मण्डल इस समय बने है उससे मुसलमान उम्मेदवारके निर्वाचित किये जानेकी आशा नही है और अगर संयोगसे चुन भी लिया जाय तो उसे बहुमतके, जो उसके समुदायके विरुद्ध होगा, विचारोंकी वेदीपर अपने विचारोंका बलिदान कर देना पड़ेगा और वह अपने समुदायका कभी प्रतिनिधित्व नही कर सकेगा। आपलोगोंका यह दावा करना उचित ही है कि आपलोगोके पदका मान न केवल सस्था-बलपर बल्कि समुदायके राजनीतिक महत्व साम्राज्यकी उसने जो सेवा की है उसके आधारपर भी होना चाहिये। मै आपलोगोसे पूर्णतः सहमत हूं।........आपलोगोकी ही तरह मेरा भी दृढ़ विश्वास है कि इस महादेशके भिन्न-भिन्न समुदायोके विश्वासो और प्रथाओंका विचार न कर व्यक्तिगत मताधिकारके आधारपर जो भी निर्वाचन-मूलक प्रतिनिधि-संस्था बनायी जायगी उसका असफल होना निश्चित है।"*

श्रीमती मिण्टोने अपने रोजनामचेमें उसी दिनके विवरणमें आगे लिखा है—"आज सायंकाल मुझे एक अफसरका यह पत्र मिला है 'मैं आपको इस पत्र द्वारा यह सूचित कर देना आवश्यक समझता हूं कि आज एक बहुत बड़ी घटना घटित हुई है। यह एक ऐसा राजनीतिज्ञतापूर्ण कार्य है जिसका भारत और भारतीय इतिहासपर बहुत दिनोंतक असर पड़ता रहेगा। यह काम ऐसा है जिससे ६ करोड़ २० लाख आदमी राजद्रोहात्मक श्रेणीमें जानेसे रोक दिये

---

* इण्डिया—मिण्टो एण्ड मार्ले, पृष्ठ ४५–४७।

गये हैं।' ह्वाइट हालमें भी यह बहुत कुछ इसी दृष्टिसे देखा गया। सारी कार्य-वाहीका विवरण पानेपर श्री मार्लेने २६ अक्तूबरको मिण्टोको लिखा था—'आपने मुसलमानोंके सम्बन्धमें जो कुछ लिखा है वह सारा दिलचस्पीसे भरा हुआ है। खेद है कि मै आपकी गार्डन पार्टीमें अलक्षित रूपसे इतस्ततः भ्रमण न कर सका होता! सारा काम उतना ही अच्छा हुआ है जितना हो सकता था और निश्चित रूपसे इसने आपके पद और व्यक्तिगत अधिकारपर मुहर लगा दी है। आपके कार्यके जो अच्छे परिणाम निकलेंगे उनमें एक यह भी है कि इसने यहाके आलोचक दलकी सारी योजना और चाल अस्त-व्यस्त कर दी है। कहनेका तात्पर्य यह कि अब वे लोग भारत सरकारको नौकरशाही बनाम जनताके रूपमें कभी प्रदर्शित न करेगे। मुझे आशा है कि मेरे कट्टर रेडिकल मित्रगण भी अब अच्छी तरह समझने लगे है कि समस्या इसीकी तरह बिलकुल आसान नही है।'*

लार्ड मिण्टोके जीवनी लेखक बुचनका कहना है 'इस भाषणने निश्चित रूपसे विद्रोहियोके दलमें मुसलमानोंका प्रवेश रोक दिया जो आरम्भ होते हुए संकटकालमे विचारसे इतना लाभदायक है कि उसका अन्दाजा नहीं किया जा सकता।'† उसने इस भाषणका उल्लेख मुसल्मानोके अधिकारपत्रके रूपमें किया है।

मौलवी तुफैल अहमदने लिखा है कि व्यवस्था इस प्रकारकी की गयी थी कि इंग्लैण्डमे पत्रोद्वारा प्रतिनिधि-मण्डलका खूब प्रचार हो सके। प्रतिनिधि-मण्डल १ अक्तूबर १९०६ को वाइसरायसे मिलनेवाला था और 'लन्दन टाइम्स' के उसी दिनके अंकमें एक लम्बा लेख निकला जिसमें मुसलमानोंकी बुद्धिमत्ताकी बहुत अधिक प्रशंसा की गयी थी। उसमें कहा गया था कि

---

* इण्डिया-मिण्टो-मार्ले', पृष्ठ ४७-४८।

† 'लार्ड मिण्टो', पृष्ठ २४४ से गुरुमुख निहालसिंहद्वारा 'लैण्डमार्क्स इन इण्डियन कन्स्टिट्यूशनल डेवूलप्मेण्ट' में उद्धृत, पृष्ठ ३८०

मुसलमान यूरोपीय ढंगकी प्रतिनिधित्व-मूलक कौसिलोंपर कभी मुग्ध नहीं हुए; भारतमें इंग्लैण्ड-जैसा कोई एक राष्ट्र नही है; वहां कई धर्म प्रचलित है, आदि आदि। और पत्रोने भी इसी प्रकारके लेख निकाले। 'इन लेखोसे प्रकट होता है कि अंग्रेजी पत्रोंको भारतीयोंके एक राष्ट्र होनेकी बातसे कितना उद्वेग और जलन होती थी, इसको छिन्न-भिन्न देखना उनके लिए कितनी प्रसन्नताकी बात होती और धर्मके आधारपर भारतीयोको आपसमे लड़ाने और स्थायी शत्रुता उत्पन्न करनेमें उन्हें कितना गर्व होता था।* योजनाको कार्यान्वित करनेमें समय लगा और वाइसराय तथा भारतमन्त्रीके बीच बहुत लम्बा पत्र-व्यवहार चला। अन्तमे परिणाम यह हुआ कि मुसलमानोके लिए अलग निर्वाचन-क्षेत्र कायम हो गये।

७

मुस्लिम लीगकी स्थापना और लखनऊका समझौता

वाइसरायसे मुसलमानोके प्रतिनिधि मण्डलके मिलनेके बाद शीघ्र ही अखिल भारतीय मुस्लिम लीगकी स्थापना हुई। ९ नवम्बर १९०६ को नवाब सलीमुल्लाने एक गश्ती चिट्ठी निकालकर यह सुझाव रखा कि 'आल इण्डिया मुस्लिम कनफिडरेसी' नामकी एक संस्था स्थापित की जाय। अन्ततः दिसम्बरमे ढाकामे एक कान्फरेन्स हुई जिसमें सारे भारतके प्रतिनिधि और नेता सम्मिलित हुए। नवाब वकारुल-मुल्कने उसका सभापतित्व किया और अखिल भारतीय मुस्लिम लीग स्थापित की गयी। नवाव वकारुल-मुल्क उसके मन्त्री और नवाब मोहसिनुल-मुल्क संयुक्त मन्त्री बनाये गये, पर दुर्भाग्यसे दूसरे महाशयका शीघ्र ही देहान्त हो गया। जो प्रस्ताव स्वीकार किये गये उनमेंसे एकके द्वारा बंग-भंगका

* मौलवी तुफैल अहमद 'रोशन मुस्तकबल', पृष्ठ ३६३

समर्थन और बहिष्कार-आन्दोलनका विरोध किया गया। लन्दनके 'टाइम्स' ने लीगकी स्थापनाका स्वागत किया। आश्चर्यके साथ कहना पड़ता है कि हिन्दू महासभाकी स्थापना भी उसी वर्ष हुई। अधिकारिवर्गने जो कार्य किया था उसका उल्लेख श्री रैमजे मैकडानल्डने 'दि अवेकनिग आव इण्डिया' में इस प्रकार किया है—'कुछ ऐग्लो-इण्डियन अधिकारियोने मुसलमान नेताओंको प्रेरणा दी, शिमला तथा लन्दनमे षड्यन्त्र रचते रहे और बुराई करनेकी नीयतसे जो पहलेसे ही उनके मनमे थी, उन्होने मुसलमानोके प्रति विशेष कृपा प्रदर्शित कर हिन्दू मुसलमान समुदायोके बीच मतभेदका बीज बो दिया।*

मुस्लिम लीगका वार्षिक अधिवेशन होने लगा और प्रस्ताव स्वीकार कर बंग-भगका समर्थन तथा व्यवस्थापिका सभाओके ही लिए नही, स्थानीय संस्थाओके लिए भी पृथक् निर्वाचन क्षेत्र बनाने और नौकरियोमे ही नही प्रिवी-कौसिलमे भी मुसलमानोके प्रतिनिधित्वकी माग की जाने लगी। जनवरी १९१० में दिल्लीमें लीगका जो अधिवेशन हुआ उसके अध्यक्ष श्री आगाखा थे। उन्होने मिले हुए सुधारोपर सन्तोष प्रकट किया और यह चेतावनी भी दी कि इन सुधारोका विरोध नही होना चाहिये अन्यथा सरकार उन्हे वापस ले लेगी। एक ऐसी भी घटना घटित हुई जिससे सरकारकी नीतिपर बहुत अधिक प्रकाश पड़ता है। पाठकोको स्मरण होगा कि सर अन्थोनी मैकडानलके समयमें हिन्दू-उर्दूके झगड़ेमे प्रमुख भाग लेनेके कारण लेफ्टिनेण्ट गवर्नरने नवाब मोहसिनुल-मुल्कके साथ, जो अलीगढ़ कालेजके सेक्रेटरी थे, कड़ाई की थी और यह कहकर कि कालेजका सेक्रेटरी किसी राजनीतिक सस्थामें भाग नही ले सकता, उन्हें अंजुमने हिमायत उर्दू नामक संस्थाके सभापतित्वसे पृथक् होनेके लिए बाध्य किया। यही नही, उन्होने यहातक आदेश दे दिया था कि सरकारी पत्रव्यवहारमे उनके नामके साथ नवाबकी उपाधि, जो निजामसे मिली थी, न जोड़ी जाय; फिर भी सरकारने उनके सेक्रेटरी बने रहते प्रतिनिधि मण्डल भेजनेका आयोजन करनेके

---

* मेहता और पटवर्धनद्वारा 'कम्यूनल ट्रिएंगिल' में उद्धत पृ० ६६

कार्यपर या लीगके संयुक्त मन्त्रीका पद स्वीकार करनेपर कोई आपत्ति नहीं की। नवाब मोहसिनुल-मुल्कके मरनेपर नवाब वकारुल-मुल्क कालेजके सेक्रेटरी बनाये गये जो ढाकावाली कान्फरेन्सके सभापतित्व बनाये गये थे और उसमें लीगकी स्थापना होनेपर उसके मन्त्री बनाये गये। वे लीगमें बराबर भाग लेते रहे जिसका प्रधान कार्यालय अलीगढमें रखा गया था और १९१० तक वहीं रहा। नवाब वकारुल-मुल्क और कालेजके अंग्रेज प्रिन्सिपलमें कुछ अनबन हो गयी। गवर्नरने प्रिंसिपलका पक्ष लिया। नवाब वकारुल-मुल्कके पक्षके समर्थनमे मुस्लिम जनतामें कुछ खलबली मच गयी। लेफ्टिनेण्ट गवर्नर अपना आदेश वापस लेनेके लिए बाध्य किये गये, पर वे हार माननेवाले जीव न थे और बदला लेकर ही छोड़ा। लीगका प्रधान कार्यालय आगाखांने, जो उसके अध्यक्ष थे, अलीगढ़से हटाकर इस आशासे लखनऊमें रखा कि वह अलीगढके प्रभावसे बाहर हो जायगा। इस कार्यका अप्रत्याशित परिणाम यह हुआ कि लीगकी नीति काल्ेजके प्रिन्सिपलोके नियन्त्रणसे बाहर हो गयी।

दिसम्बर १९११ मे दिल्ली-दरबारमें सम्राट्ने बगालका विभाजन मंसूख करनेकी जो घोषणा की उससे बहुतसे मुसलमानोंको गहरा आघात पहुँचा और नवाब सलीमुल्लाकी लिए तो वह इतनी हृदय-विदारक हुई कि मार्च १९१२ में लीगके कलकत्तावाले अधिवेशनका सभापतित्व करनेके बाद उन्होंने सभी सार्वजनिक कार्योंसे पृथक् होनेकी घोषणा कर दी और इसके कुछ ही दिन बाद इस लोकसे भी चल बसे।

कुछ अन्य घटनाएं भी घटित हो रही थीं जिनका मुसलमानोंपर गहरा प्रभाव पड़ा। मौलवी शिबली नौमानी उस समयके सबसे बड़े मुसलमान विद्वानोंमें गिने जाते थे। उन्होंने उर्दूमें पैगम्बर और सर सैयद अहमदकी उच्चकोटिकी जीवनियां लिखी है। आजमगढ़की एकडेमीके वही संस्थापक थे जो उनकी मृत्युके बाद मौलाना सुलेमानके निरीक्षणमें बड़े ऐतिहासिक महत्वके ग्रन्थ प्रकाशित करती रही है। वे जीवन पर्यन्त सर सैयद अहमदके सहयोगी रहे, पर जीवनकें अन्तिम दिमोंनें सर सैयदकी नीतिकी बुद्धिमत्ता और कांग्रेसके प्रति उनके रुखपर

उन्हें सन्देह होने लगा था। वे बराबर मुसलमानोंका ध्यान अधिकतर मौलिक प्रश्न—भारतकी स्वतन्त्रताकी ओर आकृष्ट करते और केवल कांग्रेसके आलोचक बने रहकर सन्तुष्ट न हो जानेकी राय देते रहे। लखनऊके मुसलिम गजटके ९ अक्तूबर १९१७ के अंकमें प्रकाशित एक लेखमें उन्होंने मुसलिम लीगकी राजनीति और नीतिपर विचार करनेके बाद लिखा है 'वृक्षकी पहचान उसके फलसे होती है। अगर हमारी राजनीतिमें गम्भीरता होती तो हममे संघर्षके लिए उमंग और कष्ट तथा त्यागके लिए तत्पर रहनेकी भावना अवश्य जाग्रत् हुई होती।'१

साथ ही कुछ दूसरी घटनाएं भी मुसलमानोको विशेष रूपसे प्रभावित कर रही थीं। 'सुधरी हुई कौसिलोके अमलमें आनेसे, विभिन्न समुदायोके स्वार्थकी अभिन्नता और सारे भारतीयोंकी तात्विक एकता प्रत्यक्ष होने लगी थी। सबसे बढ़कर दूरवर्ती देशो—विशेषकर तुर्की और फारसका राष्ट्रीय आन्दोलन इस देशके मुसलमान नवयुवकोंमें राष्ट्रीय भावनाका सचार कर रहा था। त्रिपोली और बालकन युद्धमे ग्रेट ब्रिटेनने जो नीति बरती उसने अग्रेजोंकी कलई खोल दी और भारतीय मुसलमानोंको अंग्रेजोंकी मैत्रीका खोखलापन और बनावटीपन दिखला दिया। दूसरी ओर भारतके राष्ट्रीय पत्रोंने यूरोपीय राष्ट्रके दुर्व्यवहारके कारण हुए तुर्कीके दु.खमें जो भ्रातृत्वपूर्ण समवेदनाके भाव व्यक्त किये उन्होंने भी मुसलमानोंका मर्म स्पर्श किया।'† सन् १९१२ में डाक्टर एम० ए० अनसारी एक चिकित्सक दल संघटित कर तुर्की ले गये। 'जमीदार' के सम्पादक मौलाना जफरअलीने स्वयं कुस्तुनतुनिया जाकर वजीरको एक थैली भेंट की जो उन्होने तुर्कीके नामपर जमा की थी। मौलाना अबुलकलाम आजादने 'अल्-हिलाल' नामक पत्र निकाला जो अपने राष्ट्रवाद, स्वतन्त्रता और

---

* तुफैल अहमद—'रोशन मुस्तकबल', पृष्ठ ३८९, तथा मेहता और पटवर्धन—'कम्यूनल ट्रिएंगिल', पृष्ठ ३०।

† गुरुमुख निहालसिह—'लैण्डमार्क्स इन इण्डियन कास्टिट्यूशनल ऐण्ड नेशनल डेवलप्मेण्ट' पृष्ठ ४९०–१।

त्यागके ऊंचे आदर्शो और ओजस्वी लेख-शैलीके कारण उर्दू पत्रोंमें सर्वाधिक प्रभावोत्पादक था। मौलाना मुहम्मदअली अंग्रेजीमें 'कामरेड' और उर्दूमें 'हमदर्द' निकाल रहे थे जिन्होने राष्ट्रवादके प्रबल प्रवाहको बढानेमें अच्छी सहायता दी। लीग भी इसके प्रभावसे बची न रह सकी और मार्च १९१३ में लखनऊवाले अधिवेशनमे, जिसके सभापति सर इब्राहीम रहीमतुल्ला थे, इसने अपने विधानमें संशोधन किया। लीगका उद्देश्य ब्रिटिश सम्राट्के सरक्षणमें, और बातोंके साथ-साथ वर्तमान शासन-प्रणालीमें व्यवस्थित सुधार, राष्ट्रीय एकता और भारतीयोमें सार्वजनिक भावनाकी वृद्धि तथा उद्देश्य——प्रगतिके लिए अन्य समुदायोंके साथ सहयोगद्वारा वैध उपायोसे स्वायत्त शासनकी प्राप्ति ठहराया गया। इस प्रकार लीगका उद्देश्य भी भारतीय राष्ट्रीय महासभाकी बराबरीमे आ गया जिससे साम्प्रदायिक एकता और सामान्य कार्यके लिए, जो बादमें देख पड़ा, मार्ग प्रस्तुत हो गया।

अगस्त १९१४ मे प्रथम महासमर आरम्भ हुआ। भारतीयोमे उत्तेजना फैली हुई थी और कुछ लोगोने जिनमे मुसलमानोका प्राधान्य था, भारतके लिए स्वतन्त्र जनतन्त्रकी एक साहसिक योजना बनायी। शेखुल्हिन्द मौलाना महमूदुल हसन अपने सहयोगी मौलाना हुसेन अहमद नदवी और मौलवी अजीजगुलके साथ गिरफ्तार कर माल्टामें नजरबन्द कर दिये गये। मौलाना मुहम्मदअली, मौलाना शौकतअली, मौलाना आजाद और मौलाना हसरत मोहानी तुर्कीके प्रति, जो मित्रराष्ट्रोके विरुद्ध युद्धमें सम्मिलित हुआ था, सहानुभूति प्रदर्शित करने और अपने प्रकट राष्ट्रवादके कारण नजरबन्द कर लिये गये। दिसम्बर १९१५ में लीग और कांग्रेस दोनोंने वम्बईमे अपना अपना अधिवेशन किया। पण्डित मदनमोहन मालवीय, श्रीमती सरोजिनी नायडू, महात्मा गाधी आदि बहुतसे कांग्रेस-नेता लीगके अधिवेशनमें सम्मिलित हुए। आगाखांने लीगके स्थायी सभापतिके पदसे इस्तीफा दे दिया। लीगने कांग्रेससे मिलकर भारतके लिए योजना बनानेके निमित्त एक समिति बनायी। दूसरे वर्ष भी लीग और कांग्रेसके अधिवेशन लखनऊमें एक ही समय और एक ही स्थानपर हुए।

बम्बई और लखनऊमें होनेवाले अधिवेशनोंके बीचकी अवधिमें समितिने योजना तैयार कर ली। ९ वर्ष पहले सूरतमें काग्रेसके नरम दल और प्रगतिशील दलके बीच जो खाई पड़ गयी थी उसके पट जानेसे काग्रेस अब बहुत सबल हो गयी थी इसलिए इस बारके अधिवेशनमें सर सुरेन्द्रनाथ बनर्जी और पण्डित मदनमोहन मालवीय जैसे नरमदलीय नेता ही नही बल्कि लोकमान्य तिलक भी सम्मिलित हुए। लीग और कांग्रेसमे एक समझौता हुआ जिसके अनुसार मुसलमानोंके लिए पृथक् निर्वाचन और पंजाब तथा बंगालके अतिरिक्त अन्य प्रान्तोमें उनकी जनसंख्या-के अनुपातसे बहुत अधिक प्रतिनिधित्व देना स्वीकार किया गया। समझौतेमें यह व्यवस्था भी रखी गयी कि केन्द्रीय या प्रान्तीय कौसिलमें एक या दूसरे सम्प्रदायसे सम्बन्ध रखनेवाले किसी बिल, उसके अंश या गैर-सरकारी सदस्यद्वारा रखे गये प्रस्तावपर अगर उस सम्प्रदायके तीन चतुर्थांश सदस्य विरोध करें तो विचार नही किया जा सकता। इस विषयके अलावा लीग और कांग्रेसने सुधारकी एक योजना बनायी और यह माग रखी कि योजनामे उल्लिखित सुधार स्वीकार कर स्वशासनकी दिशामे निश्चित कदम बढ़ाया जाय और साम्राज्यके पुर्ननिर्माणमे भारतको अधीन राज्यके रूपमे न रखकर ब्रिटिश साम्राज्यके भीतर स्वशासित राज्योकी श्रेणीमें रखा जाय। लीग अधिवेशनके अध्यक्ष श्री एम० ए० जिनाने और कांग्रेसकी ओरसे लोकमान्य तिलक सहित सभी नेताओने समझौतेको स्वीकार किया। दूसरे प्रस्ताव भी कांग्रेसके प्रस्तावों जैसे ही थे और ऐसा जान पड़ा कि कांग्रेस और लीगके बीच आपसका समझौता हो गया।

इस प्रकार लीगने कांग्रेसके अपनाये हुए राजनीतिक कार्यक्रमको बड़े उत्साहके साथ स्वीकार किया। यह नयी भावना दूसरे अधिवेशनमें भी बनी रही जिसके अध्यक्ष मौलाना मुहम्मदअली चुने गये जो नजरबन्द थे। यह अधिवेशन भी पहले दो अधिवेशनोंकी तरह कांग्रेसके ही अधिवेशनके समय और स्थानपर १९१७ के दिसम्बरमें कलकत्तामें हुआ। महात्मा गांधी और श्रीमती सरोजिनी नायडूने लीगके अधिवेशनमें जाकर और अलीबन्धुओंकी रिहाईके प्रस्तावका समर्थन कर काररवाईमें भाग भी लिया।

८

खिलाफत आन्दोलन और उनके बाद

लीगका दूसरा अधिवेशन १९१८ के दिसम्बरमें दिल्लीमे हुआ। कांग्रेसका अधिवेशन भी वही हुआ। इस समयतक देश और संसारमे बहुत-सी घटनाएं घटित हो चुकी थी। श्री मांटेगू भारत आकर तत्कालीन वाइसराय लार्ड चेम्स-फ़ोर्डके साथ १९१७के अगस्तमे उद्घोषित ब्रिटिश नीतिके अनुसार सुधारोके सम्बन्धमें रिपोर्ट तैयार कर चुके थे। युद्धका अन्त हो चुका था जिसमे मित्र-पक्षकी जीत और जर्मनी तथा तुर्कीकी पराजय हुई थी। तुर्कीकी हारसे कुछ ऐसी समस्याएं उठ खड़ी हुई थी जिनका भारतके मुसलमानोपर असर पड़ता था। युद्ध चलते समय अंग्रेज प्रवक्ताओने यह आश्वासन दिया था कि युद्ध-के बाद तुर्कीके साथ अच्छा बर्ताव किया जायगा और ऐसी कोई बात नही की जायगी जिसका अरब और मेसोपोटामियाके मुसलमानोंके पवित्र स्थानोंपर कोई बुरा असर पड़े। तुर्कीपर कौन-सी शर्ते लादी जायंगी, यह स्पष्ट न होते हुए भी अंग्रेजोंके शह देनेसे अरबमें कुछ ऐसी घटनाऐं हुई जिनके फलस्वरूप अरबोंने अपने कन्धेसे तुर्कीका जूआ उतार फेंका। इन घटनाओके कारण मुसलमानोंमें बड़ी उत्तेजना फैल गयी। कानपुरके दंगेका कठोरतापूर्वक दमन और लीगके दिल्ली अधिवेशनके स्वागताध्यक्ष डाक्टर एम० ए० अनसारीका भाषण जब्त किया जाना मुसलमानोकी भावनाको और भी भड़कानेवाला हुआ। भारतीय मुसलमानोंके राजनीतिक मंचपर उलेमा पुनः उपस्थित होकर उनके राजनीतिक आन्दोलनमें प्रमुख भाग लेने लग गये। लीगने भारतके लिए स्वभाग्यनिर्णयका सिद्धान्त काममें लानेकी मांग की।

खलीफा, उनके राज्य और अधिकारके सम्बन्धमें भारतीय मुसलमानोंसे जो वादे किये गये थे वे सबके सब सन्धि-प्रस्तावोंमें झूठे साबित हुए। खलीफाकी शक्ति क्षीण हो जानेके कारण इसलामके सभी पवित्र स्थान

गैर मुसलमानोंके नियन्त्रणमें जाते जान पड़े। भारतका खिलाफत आन्दोलन मित्रराष्ट्रों विशेषकर अंग्रेजोंके प्रति विरोध और खलीफाका समर्थन करनेके लिए चलाया गया था। हिन्दुओंने महात्मा गान्धीके नेतृत्वमें तन-मनसे खिलाफत आन्दोलनका समर्थन किया। ब्रिटिश सरकारकी तुर्की-विरोधी नीतिसे भारत-मन्त्री श्री मांटेगू भी भयभीत हो उठे और वाइसराय लार्ड रीडिंगने तारद्वारा कुस्तुन्तुनियाको खाली करने, पवित्र स्थानोंपर सुलतानका प्रभुत्व मानने और उत्तमान थ्रेस तथा स्मर्ना वापस करनेका आग्रह किया। समझौतेकी बात-चीत चलते समय यह तार प्रकाशित कर दिया गया जिसके कारण श्री माटेगूको अपने पदसे इस्तीफा दे देना पडा। इससे भारतीय भावना उत्तरोत्तर कटु होती गयी। इस प्रश्नपर ध्यान केन्द्रित करनेके लिए केन्द्रीय खिलाफत समिति स्थापित कर सारे देशमें उसकी शाखा एं खोली गयी। उलेमाने मौलाना महमूदुल हसन शेखुल हिन्दके नेतृत्वमें जमैयतुल-उलेमा-इ-हिन्दकी स्थापना की। एक प्रतिनिधिमण्डल अधिकारिवर्गसे मिलनेके लिए इग्लैण्ड भेजा गया जिसका एक उद्देश्य तो यह जतलाना था कि खिलाफतके पक्षमें भारतीय मुसलमानोंकी बड़ी प्रबल भावना है और दूसरा यह स्वीकार कराना था कि ऐसा कोई काम न किया जाय जिससे खिलाफतका अन्त हो जाय या उसका पद ऐसा घट जाय कि वह इस्लामके पवित्र स्थानोंकी रक्षा करने योग्य न रह जाय। प्रतिनिधिमण्डलकी असफलता और समझौतेकी बातचीतकी प्रगतिके साथ यह स्पष्ट होते जानेसे कि मित्र राष्ट्र अपने वचनके विरुद्ध, तुर्कीपर कड़ी शर्तें लादनेके अपने निश्चयसे हटनेवाले नहीं है, देशव्यापी उथल-पुथल दुर्निवार हो गयी। इस समयसे खिलाफत कान्फरेन्स और जमैयतुल-उलेमा-इ-हिन्दके मुसलमानोंकी सर्वाधिक क्रियाशील और प्रभावकारी संस्थाएं बन गयी और कुछ वर्षोंतक इन्हीं संस्थाओंने उनका नेतृत्व किया। लीगका अधिवेशन कांग्रेसके अधिवेशनके साथ-साथ होता गया और उसका सभापतित्व हकीम अजमल खां, डाक्टर एम० ए० अनसारी, मौलाना हसरत मोहानी, अली-बन्धु जैसे प्रगतिशील राष्ट्रवादी मुसलमान करते रहे।

खिलाफत आन्दोलन समय पाकर उस आन्दोलनका सहवर्ती बन गया जो रौलट बिलके कारण सरकारके विरुद्ध चल रहा था। सभी सम्प्रदायोद्वारा सारे देशमे इसका तीव्रतम विरोध हुआ जिसके कारणोकी विशद चर्चा करना आवश्यक नही। इतना कहना ही पर्याप्त होगा कि रौलट बिल सर सिडनी रौलटकी अध्यक्षतामे बनी सेडीशन कमेटीकी रिपोर्टोका परिणाम था और उसका उद्देश्य युद्धकी समाप्तिके कारण शीघ्र समाप्त होनेवाले भारतरक्षा कानूनकी कुछ हानिकर धाराओंको संशोधित रूपमे बनाये रखना था। इस बिलके विरुद्ध जो आन्दोलन छिड़ा उसने देशमे इतनी अधिक जागृति उत्पन्न कर दी जितनी कि अन्य किसी बातके द्वारा अभीतक सम्भव नही हुई थी। पजाब, बम्बई प्रेसीडेन्सी दिल्ली तथा कुछ अन्य स्थानोमे दगे हो गये। दमनचक्र बुरी भाति चल पडा और अमृतसरमे जलियावालाबाग-काण्ड हुआ तथा उसके उपरान्त ही पजावमे मार्शल ला (फौजी कानून) जारी हो गया। 'मार्शल ला' के जमानेमे जो अत्याचार हुए उनका पता जनताको कुछ समय बाद ही लग सका, विशेषतः उस समय जब सरकारद्वारा नियुक्त हण्टर कमेटीने जिसके अध्यक्ष लार्ड हण्टर थे, इन सब घटनाओकी जाच आरम्भ की। काग्रेसने भी अपनी ओरसे पृथक् जाच की। जब इन दोनो कमेटियोकी रिपोर्टे प्रकाशित हुई तो सारे देशमे घृणाकी एक तीव्र लहर दौड़ गयी। इधर यह था, उधर खिलाफतके प्रश्नको लेकर मुसलमानोमें तीव्र विरोध उत्पन्न हो रहा था, अतः एक ओरसे काग्रेसने और दूसरी ओरसे मुस्लिम संस्थाओने सरकारका विरोध आरम्भ किया। दोनोने सयुक्त मोर्चा लेनेका निश्चय किया और दोनोने असहयोगका संयुक्त कार्यक्रम निश्चित किया। जमैयतुल उलेमाने एक 'फतवा' जारी किया जिसपर मुसलमानोके ९२५ प्रमुख धर्मगुरुओके हस्ताक्षर थे। उस फतवामे अहिसक असहयोगके कार्यक्रमकी स्वीकृति दी गयी थी। अनेक उलेमा जेलोंमें बन्द कर दिये गये। यह भावना इतनी तीव्र थी कि मुसलमान 'हिजरत' को चल पड़े और उन्होने अवर्णनीय कष्ट सहन किये।

कांग्रेसने सितम्बर १९२० में कलकत्ताके अपने विशेष अधिवेशनमें अहिसक असहयोगका प्रस्ताव स्वीकार किया जिसपर कि दिसम्बरमे नागपुरवाले उसके वार्षिक अधिवेशनने अपनी मुहर लगा दी। १९२१ का वर्ष अपार सक्रियता, सभी सम्प्रदायोंमें अभूतपूर्व सहयोग और पजाब तथा खिलाफतके अन्यायसे मुक्ति पानेके निमित्त स्वराज्य पानेके लिए संयुक्त राजनीतिक उद्योगका वर्ष था। सविनय अवज्ञा और करबन्दीकी योजनाकी स्वीकृतिके पूर्व ही सभी सम्प्रदायोंके अनेक व्यक्ति जेलोंमे ठूस दिये गये। वर्षान्तके पूर्व ही मौलाना मुहम्मदअली और शौकतअली, हुसेन अहमद, आजाद,* देशबन्धु दास, पण्डित मोतीलाल नेहरू लाला लाजपतराय तथा कांग्रेस और खिलाफतके कितने ही प्रमुख नेता और कार्यकर्त्ता पकड़कर जेलोंमे डाल दिये गये। किन्तु अहमदाबादमें इन सभी संस्थाओके वार्षिक अधिवेशन अत्यधिक उत्साहपूर्वक हुए। वहा करबन्दी और सविनय अवज्ञाका कार्यक्रम स्वीकृत हुआ। किन्तु इसके आरम्भ होनेके पूर्व ही चौराचौरीमें भीषण दंगा हो गया और आन्दोलन बन्द कर दिया गया। इसके बाद ही महात्मा गाधी गिरफ्तार कर लिये गये तथा उन्हे ६ वर्ष कैदकी सजा दी गयी और यह आन्दोलन सर्वथा शान्त हो गया। उसे पुनस्संघटित करनेके प्रयत्न भी किये गये पर वे सब असफल रहे।

दिसम्बर १९२१ में अहमदाबादमें मुस्लिम लीगका जो अधिवेशन हुआ वही अन्तिम अधिवेशन था जो एक ही समय और एक ही स्थानपर कांग्रेसके साथ-साथ हुआ। यद्यपि मौलाना हसरत मोहानी लीगके अध्यक्ष थे तथापि संस्थाके रूपमे लीगने यह प्रदर्शित किया कि वह कांग्रेस, खिलाफत कमेटी अथवा जमैयतुल उलेमाके साथ कदम-ब-कदम चलनेमे असमर्थ है। अन्य संस्थाओने जिस भांति सविनय अवज्ञाके पक्षमें प्रस्ताव स्वीकृत किया उस भांति मुस्लिम लीगने नही किया। जो मुस्लिम लीग ७ वर्षसे कांग्रेसके समानान्तर चलती आ रही थी और जिसने विधानमें भी परिवर्तन कर दिया था उसीने सविनय अवज्ञाकी स्वीकृति होते ही कांग्रेस, खिलाफत कमेटी तथा जमैयतुल उलेमाके साथ अपना वार्षिक अधिवेशन करना बन्द कर दिया।

मौलवी सैयद तुफायल अहमद लिखते हैं—"अब प्रश्न यह है कि मुस्लिम लीग अपनी सहयोगिनी संस्थाओसे पीछे क्यो पड़ गयी ? इसका उत्तर मौलाना शिबलीके इन शब्दोंमे निहित है—'शिमला प्रतिनिधिमण्डल लीगकी नीवका पहला पत्थर था। लीगका चाहे जो विधान बने, शिमला प्रतिनिधिमण्डलकी भावना उसमें निहित रहेगी ही। लीगकी नीवका पहला पत्थर ही गलत रखा गया और इसलिए इस बुनियादपर चाहे जो इमारत खड़ी की जाय उसका टेढा रहना अनिवार्य है। लीगकी राजनीतिका सार केवल यह है कि हिन्दुओ-को जो अधिकार और स्थान मिले उनमे मुसलमानोंका भाग निश्चित कर दिया जाय। यह सच्ची राजनीति नहीं है। सच्ची राजनीति सरकारके सम्मुख जनताकी माग उपस्थित करनेमें है और इस मानीमें राजनीति धर्मके समान ही शक्तिशाली है। इस शक्तिसे वंचित होनेके कारण मुस्लिम लीगका कोई भी सदस्य किसी त्यागके लिए प्रस्तुत नही हो सकता और वह अपने भीतर किसी उच्च आदर्श अथवा साहसका अनुभव नही करता।'*

उत्साहकी अग्नि अधिक समयतक धधकती न रह सकी और सविनय अवज्ञा आन्दोलन बन्द कर देने तथा महात्मा गांधीकी गिरफ्तारीसे लोगोमें निराशा और शैथिल्य आ गया। अन्य संस्थाओंकी अपेक्षा मुस्लिम लीगपर इसका अधिक प्रभाव पड़ा और 'कोरम' पूरा न होनेके कारण उसे १९२३ में लखनऊवाला अपना अधिवेशन स्थगित कर देना पड़ा। १९२४, १९२५ और १९२६ के उसके अधिवेशनोसे यह बात स्पष्ट होती गयी कि लीग और काग्रेसको बीचकी खाई चौड़ी होती जा रही है।

१९२१ में जब कि हिन्दू मुसलमानोका पारस्परिक सम्बन्ध अत्यधिक मैत्री-पूर्ण था और उस वर्ष मुसलमानोंने बकरीदके अवसरपर स्वयं ही अनेक स्थानों-पर गायकी कुर्बानी बन्द कर दी थी तथा खिलाफत आन्दोलनमें हिन्दुओंके भी सम्मिलित होनेके कारण हिन्दू-मुस्लिम ऐक्य निश्चित-सा प्रतीत होता था उसी

---

* मौलवी तुफैल अहमद ; 'रोशन मुस्तकबल', पृष्ठ ४१०

समय कुछ ऐसी घटनाएं घटित हो गयी जिनसे आपसमें दरार पड़ गयी। खिलाफत आन्दोलन मलाबार जिलेमें बड़े जोरपर था। वहांपर मुसलमानोकी भारी आबादी है। वे मोपला कहलाते है। अन्य स्थानोंके हिन्दू जिस भाति खिलाफत आन्दोलनमें सम्मिलित हो गये थे उसी भांति वहांके हिन्दू भी सम्मिलित हुए। अन्य स्थानोमे अहिंसाकी जैसी शिक्षा दी गयी थी वैसी शिक्षा वहा न दी जा सकी। आन्दोलनने हिसात्मक रूप ग्रहण कर लिया। मौलाना मुहम्मद अली मलाबार जा रहे थे। यदि वे उस जिलेमे पहुंच पाते तो वे अवश्य ही स्थितिपर काबू करनेमें समर्थ होते, परन्तु सरकारने उन्हें मार्गमे ही गिरफ्तार कर लिया और अन्य नेताओको भी वहा जानेसे रोक दिया। जनता अनियन्त्रित हो गयी और सरकारी दमनने, जैसा कि ऐसे अवसरोपर होता है, अत्यन्त उग्र रूप धारण कर लिया। यद्यपि कुछ हिन्दू नेताओंको भी मोपलोंकी भाति कड़ा दण्ड दिया गया तथापि ऐसी खबरें मिली कि मोपलोंने हिन्दुओपर बड़े अत्याचार किये। उनका सन्देह था कि हिन्दू सरकारी पक्षमे मिल गये है अथवा कमसे कम उनके पक्षमें तो नही ही है। कहते है कि उन्होने जबरन अनेक व्यक्तियोको मुसलमान बना लिया। इन सब बातोसे हिन्दुओंमें, यहांतक कि उत्तर-भारतके हिन्दुओंमे भी, बड़ी कटुता उत्पन्न हुई। वे लोग ऐसी घटनाओंकी रिपोर्टोंसे, जो निश्चय ही अतिशयोक्तिपूर्ण थी, प्रभावित होते रहे। परन्तु जबतक नेतागण, विशेषतः महात्मा गांधी जेलसे बाहर रहे, तबतक स्थिति काबूमें बनी रही। स्वामी श्रद्धानन्द, जोकि असहयोग आन्दोलनके नेताओंमेंसे एक थे तथा जिन्होने अपने साहसद्वारा मुसलमानोंका इतना अधिक विश्वास प्राप्त कर लिया था कि उन्होंने उन्हें दिल्लीकी जामा मसजिदमें भाषण करनेके लिए आमन्त्रित किया था, इन घटनाओसे बुरी भांति विचलित हो उठे और उन्होने अपनी रिहाईके उपरान्त शुद्धि आन्दोलन आरम्भ कर दिया।

स्वामी श्रद्धानन्दके शुद्धि आन्दोलनकी बड़ी आलोचना हुई है। आलोचकोंमें राष्ट्रीयतावादी हिन्दू भी है और मुसलमान भी। उस अवसरपर यह आन्दोलन उपयुक्त था अथवा नहीं, इस प्रश्नपर कोई चाहे जो कुछ कहे परन्तु यह समझना

बड़ा कठिन है कि ईसाई और मुसलमान ऐसे कार्यकी आलोचना क्यों करते है जब कि वे स्वयं हिन्दुओंको अपने धर्ममे दीक्षित करनेके लिए निरन्तर प्रयत्नशील हैं। यदि हिन्दू भी गैर-हिन्दुओंको अपने धर्मभे दीक्षित करनेका प्रयत्न करते है तो गैर-हिन्दुओको, विशेषत: जो स्वय ऐसा कर रहे है, इसपर आपति करनेका अधिकार ही क्या है ? अन्य धर्मावलम्बियोको यदि अपने धर्मका प्रचार करनेका अधिकार है तो हिन्दुओको भी इसका अधिकार होना चाहिये। किन्तु मनुष्य सदैव तर्क अथवा न्याय और सत् असत्-विवेककी भावनासे प्रभावित नही रहता। मुसलमानोमे शुद्धि आन्दोलन तथा व्यक्तिगत रूपसे स्वामी श्रद्धानन्दके विरुद्ध तीव्र कटुताकी भावना उत्पन्न हो गयी जिसके फलस्वरूप एक मुसलमान हत्यारेने बादमें स्वामीजीकी हत्या कर ही डाली। मुसलमानोने अपनी ओरसे तबलीग और तंजीम आन्दोलन आरम्भ कर दिये।

सन् १९२२ के अन्तमे मुलतानमे भीषण दंगा हुआ जिसमे हिन्दुओंके मन्दिर और पूजास्थल दूषित किये गये, अनेक हिन्दुओकी हत्या कर दी गयी, अनेक हिन्दुओके मकान लूट लिये गये तथा उनमे आग लगा दी गयी। देशके प्राय: सभी भागोमे अगले कई वर्षतक जो अनेक साम्प्रदायिक दगे होते रहे उनमे यह पहला था। इससे कांग्रेस तथा खिलाफतके सभी कार्यकर्ता तथा सभी राष्ट्रीयतावादी, चाहे वे हिन्दू हो या मुसलमान, बुरी भाति विचलित हो उठे। उन्होने इस प्रवाहको रोकनेकी पूरी चेष्टा की परन्तु वे असमर्थ रहे। इसमें सन्देह नही कि कुछ शक्तियां इसके पीछे कार्य कर रही थी। पाकिस्तानके कुछ प्रबल समर्थक कहते है कि हिन्दुओकी ज्यादतियां ही इसके लिए दोषी है। कुछ लोगोंने तो यहांतक कह डाला है कि हिन्दू नेताओंने ही वस्तुत: इस प्रकारके उपद्रवोंका संघटन किया था, कुछ नही तो कमसे कम इसीलिए कि हिन्दू मुसलमानोंका सामना करना सीखें। कारण, पहले तो वे मुसलमानोके आगे भेड़ ही बने रहते थे। इस व्याख्यासे समस्या अत्यधिक सरल हो जाती है और पाकिस्तानके समर्थनका यह उत्तम क्रमबद्ध तर्क बन जाता है। वस्तुत: इसका कोई आधार नही है। यदि गत ३० वर्षके साम्प्रदायिक उपद्रवोंके इतिहासका

निस्पक्ष रूपसे अध्ययन किया जाय तो ज्ञात होगा कि देशके राजनीतिक इतिहासमे जब अत्यन्त महत्वपूर्ण क्षण उपस्थित हुए है तभी ये उपद्रव होते दिखायी पड़ते है। हम देखते है कि जब-जब ब्रिटिश सरकारसे ज।ग्दार शब्दोमें अधिकार प्रदानकी माग की जाती रही है और भारतके दो प्रमुख सम्प्रदायोके लक्ष्य और कार्यमे साम्य हो गया है तब तब ये दगे हुए हैं। हम देख चुके है कि दिसम्बर १९१६ मे काग्रेस तथा लीगके बीच मैत्रीपूर्ण समझौता हो गया था। उसके बाद ही १९१७ मे 'होमरूलके लिए जोरदार आन्दोलन छिड़ा। १९१७ के अन्तमे बिहारके शाहाबाद जिलेमें भयकर उपद्रव हुआ जिसमे मुसलमानोंको हिन्दुओके हाथो क्षति उठानी पडी और हिन्दुओंको उसके बदलेमे सरकारके हाथों उससे भी घोर क्षति सहन करनी पड़ी। दूसरे वर्ष सन् १९१८ में युक्तप्रान्तके कतारपुरमे वैसा ही भीषण उपद्रव हुआ। उसका परिणाम भी पहले ही जैसा हुआ। खिलाफत आन्दोलन तथा पजाबके अत्याचारोंके फलस्वरूप १९१९ से १९२२ तक हिन्दू और मुसलमानोमें पूर्ण मैत्री हो गयी, किन्तु १९२२ मे पुन: हिन्दू-मुस्लिम दंगे आरम्भ हो गये जो कई वर्षतक जारी रहे।

सन् १९२४ मे अपनी भयकर बीमारीके कारण महात्मा गाधी ६ वर्षकी अपनी पूरी सजा काटनेके पहले ही छोड़ दिये गये। छूटते ही उन्होंने देखा कि देशमे साम्प्रदायिक दगोके फलस्वरूप सर्वत्र मारकाट और सर्वनाश दिखायी पड़ रहा है। इससे उन्हे अत्यधिक दु:ख हुआ और अपने स्वभावानुसार उन्होंने २१ दिनका उपवास करनेका निश्चय किया। उनका उद्देश्य हिन्दुओं और मुसलमानोसे यही मार्मिक अपील करनेका था जिससे भाई भाईकी हत्या करना बन्द कर दे और दोनो सम्प्रदायोंमे मैत्री उत्पन्न हो। तत्कालीन राष्ट्रपति मौलाना मुहम्मदअलीने शीघ्र ही देशके सभी सम्प्रदायोके प्रतिनिधियों और नेताओंका एक सम्मेलन बुलाया। जहातक प्रस्तावोंका सम्बन्ध है उक्त सम्मेलन इसमें अवश्य सफल रहा। उसने कई उचित प्रस्ताव स्वीकृत किये जिनमें विभिन्न धार्मिक सम्प्रदायोंके अधिकार और कर्तव्योंकी व्याख्या करते हुए संघर्षमय स्थिति टालनेके लिए कुछ सुझाव रखे गये थे। यह आशा की गयी थी कि इससे

स्थितिमें सुधार होगा। यदि इन प्रस्तावोंका उचित रीतिसे प्रचार किया जाता तथा इनके सुझावोके अनुसार कार्य किया जाता तो इसमें सन्देह नही कि स्थिति काबूमें आ जाती। उपद्रवके लिए किसी विशेष समुदायको दोष देना व्यर्थ है। बात यह है कि अनेक बार साम्प्रदायिक उपद्रवोकी पृष्ठभूमि राजनीतिक होती है, भले ही ऊपरसे धार्मिक मदान्धता उनका कारण प्रतीत होती हो। एक बार यदि साम्प्रदायिक उपद्रव हो जाता है तो वह अपने पीछे बहुत-सी कटुता और सन्देह छोड़ जाता है और ये ही बातें आगे चलकर पुनः सकटका कारण बन बैठती है। वातावरण इतना अधिक विषाक्त हो उठता है कि प्रायः बुद्धिमान व्यक्ति भी अपने मस्तिष्कका सन्तुलन त्यागकर किकर्तव्यविमूढ़ हो जाते है। वे भी सारी घटनाओपर शान्तिपूर्वक विचार कर मैत्रीपूर्ण वातावरण स्थापित करनेका प्रयत्न नही करते। इन दगोकी समाप्तिपर वातावरण इतना क्षुब्ध रहता है कि शान्ति और मैत्रीके लिए किये जानेवाले प्रयत्नोंका भी प्रायः उल्टा अर्थ लगा लिया जाता है। यह स्पष्ट है कि कोई भी समझदार व्यक्ति स्वीकार करेगा कि किसी दगेके सम्बन्धमें अधिक समयतक उसकी चर्चा करते अथवा पुराने जख्मोको ताजा करनेसे कोई लाभ नही। दीर्घकालतक ऐसे मामलोकी जांच तथा मुकदमोसे, जो प्रायः कई वर्षतक चलते है, तनातनी बनी ही रहती है, कारण, केवल लड़नेवाले दल ही नही; उनके गवाहतक साम्प्रदायिक आधारपर बट जाते है और ऐसे भी लोगोकी कमी नही रहती जो अपने सम्प्रदायोके हिमायती बनकर आगे आ खड़े होते है। यदि कुछ लोग व्यक्तिगत तौरपर समझौतेका अथवा मुकदमा उठा लेनेका प्रयत्न करते है तो लोग यह कहकर उसकी निन्दा करते है कि यह अपराधी व्यक्तियोंको बचानेकी चाल है। किन्तु अनेक बार वस्तुतः होता यही है कि अनेक अपराधी, विशेषतः जो ऐसा उत्तेजनापूर्ण वातावरण प्रस्तुत करते है जिसके फलस्वरूप दगे हो जाते है, हाथ झाड़कर अलग हो जाते है। वे दंगेमेंसे साफ बच निकलते है। न पुलिस उन्हें पकड़ पाती है न अदालतें उनका कुछ बिगाड़ पाती है। बेचारे सीधे-सादे, छलछद्म और चालबाजियोंसे शून्य व्यक्ति ही ऐसे मुकदमोंमें फंस जाते है,

जो क्षणिक उत्तेजनाके वशीभूत होकर कुछ कर बैठते हैं और बादमें उसके लिए पश्चाताप करते है। ऐसे लोगोंको बचानेमें न तो नैतिक दृष्टिसे ही कोई दोष है न अन्य ही किसी प्रकारसे; सो भी तब; जब, ऐसा करनेसे तनातनी दूर होती है और चारो ओर बन्धुत्व और सद्भावकी पुनः स्थापना होती है। फिर भी लोग कहते है कि हिन्दू लोग अपने बचावके लिए ऐसी चाल चलते है। यह कहनेकी आवश्यकता नही कि जो लोग इस प्रकारके समझौतेका कोई प्रयत्न करते है वे किसी सम्प्रदाय विशेषके सदस्योके पक्षका समर्थन नही करते, प्रत्युत् दोनोके हितकी दृष्टिसे ऐसा प्रयत्न करते है। प्रायः ही तो ऐसे मुकदमोंमें दोनो सम्प्रदायोके व्यक्तियोपर दोनो ओरसे मुकदमे चलते है और इस प्रकारके समझौतेसे दोनो सम्प्रदायोका हित होता है। ऐसे कुछ दंगोके कारणोकी जांच से यह बात स्पष्ट हो गयी है कि सरकार यदि आरम्भसे ही मुस्तैदीसे काम करती तो दगे ही न हो पाते और यदि होते भी तो बहुत शीघ्र उनका अन्त हो जाता और वे व्यापक रूप ग्रहण न कर पाते। बम्बईमें भारी दंगा हुआ जिसमें ८९ हिन्दू, ५४ मुसलमान, १ यूरोपियन और १ पारसीकी मृत्यु हुई और ६४३ व्यक्ति घायल हुए। उक्त दगेकी जांच बैठी और दगा-जाच-कमेटीने अपनी रिपोर्टमें लिखा—'हमारे मतसे इस तर्कमे पर्याप्त बल है कि पुलिस कमिश्नरका कर्तव्य था कि वे सेनाको और कुछ पहले बुला लेते। जो हो, हालके दंगोंसे यह निष्कर्ष निकलता है कि किसी भी दगेका आरम्भ होते ही पर्याप्त सेना बुला लेनी चाहिये और तत्काल कड़ी कारररवाई आरम्भ कर देनी चाहिये।......'❀

सन् १९३१ में कानपुरमें भाषण दंगा हो गया था। "कानपुरके दंगोंके जांच-कमीशनकी रिपोर्टमें कहा गया है—एक गवाहने मेरे सम्मुख अपने बयानमें कहा कि 'यहांपर ऐसी आम धारणा है कि दंगेको रोकनेके लिए स्थानीय अधिकारियोने शीघ्र और कड़ी कारररवाई इसलिए नहीं की कि वे कांग्रेस-कार्योमें सहयोग देनेके कारण यहांके व्यापारी वर्गसे चिढ़े हुए थे और वे

❀ के० बी० कृष्ण : 'दि प्राब्लेम आव माइनारिटीज', पृष्ठ २७२।

यह दिखाना चाहते थे कि अधिकारियोंकी सहायताके बिना वे अपने जान-मालकी रक्षा नही कर सकते।' दंगेके समय पुलिसका ऐसा रवैया सर्वथा निन्दनीय और अक्षम्य है। सभी श्रेणी और वर्गोंके गवाहोंने एक स्वरसे यह बात स्वीकार की कि पुलिसने दंगेकी विभिन्न घटनाओके सम्बन्धमे तटस्थता और निष्क्रियता दिखायी, मानो उसे इन बातोसे कोई मतलब ही न था। इन गवाहोमें यूरोपियन व्यापारी, सभी मतो और विचारोके मुसलमान और हिन्दू, सैनिक अधिकारी अपर इण्डियन चेम्बर आव कामर्सके मन्त्री, भारतीय ईसाई सम्प्रदायके प्रतिनिधि तथा भारतीय अधिकारीतक थे। गवाहीमें कही गयी बातोंमें इन सबकी एक स्वरसे कही गयी इस बातकी उपेक्षा करना असम्भव है।.....हमे इस बातमें भी लेशमात्र सन्देह नही कि दंगेके आरम्भिक तीन दिनोमे पुलिसने अपने कर्तव्यपालनमें वह तत्परता नही दिखायी जो उसे दिखानी चाहिये थी।........अनेक गवाहोने ऐसी भीषण घटनाओंके विवरण दिये है जो पुलिसकी आंखोके सम्मुख घट रही थी परन्तु पुलिस चुप बैठी तमाशा देख रही थी। अनेक गवाहोने हमें बताया है तथा जिला मजिस्ट्रेटने भी अपने बयानमे कहा है कि पुलिसकी तटस्थता और निष्क्रियताकी उस समय शिकायतें की गयी थीं। खेदकी बात है कि ऐसी शिकायतोंकी ओर कोई ध्यान नही दिया गया।"*

९

त्रिभुजके आधारकी वृद्धि

दिसम्बर १९२६ में कांग्रेसके गोहाटी अधिवेशनके ठीक पूर्व दिल्लीमें एक धर्मान्ध मुसलमानने जाकर मुलाकातके बहाने रोगशय्यापर पड़े स्वामी

---

* के० बी कृष्ण : 'दि प्राब्लेम आव माइनारिटीज', पृष्ठ २७२–२७३

श्रद्धानन्दकी निर्दयतापूर्वक हत्या कर डाली। इससे स्वभावतः सारे देशमें आतंककी एक लहर फैल गयी और यह बात महसूस करने लगे कि हिन्दुओं और मुसलमानोंके बीच फैले हुए राजनीतिक, सामाजिक और धार्मिक सभी प्रकारके मतभेद मिटानेका प्रयत्न करनेकी आवश्यकता है। यहां यह बात स्मरण रखनी चाहिये कि १९२० में मांटेगू चेम्सफोर्ड सुधार जारी होनेपर भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस तथा खिलाफत कमेटीने कौसिलोंका बहिष्कार कर दिया था और १९२० के चुनावमें कोई भाग नही लिया। १९२२ में सविनय अवज्ञा आन्दोलन बन्द कर दिये जानेपर दोनों संस्थाओंके नेताओंमें मतभेद उत्पन्न हुआ जिसके फलस्वरूप बहिष्कार बन्द कर दिया गया तथा १९२३ के अन्तमें जो चुनाव हुआ तथा उसके बादके चुनावोमें भी काग्रेसजनोंने तथा खिलाफत आन्दोलनके कार्यकताओंने भाग लिया। स्वराज्य पार्टी स्थापित हो गयी थी और असेम्बलियोंमे कांग्रेसकी ओरसे स्वराज्य पार्टी ही कांग्रेस कार्य कर रही थी। स्वराज्य पार्टी सुधारोको कार्यान्वित करनेके पक्षमें न थी और वह असेम्बलियोंमे सरकारके साथ असहयोग करनेके पक्षमे थी। अतः केन्द्रीय असेम्बलीके काग्रेसी सदस्योंने विधानमें परिवर्तनकी मांगका प्रस्ताव रखा और अर्थ बिल अस्वीकार कर दिया ताकि गवर्नर जनरल जो कुछ करें वह अपने विशेषाधिकारसे करें, असेम्बलीकी स्वीकृतिसे नही। असेम्बलीके अनेक गैर कांग्रेसी मुसलमान सदस्योंने भी इस कार्यमें कांग्रेसजनोंका साथ दिया। इससे स्पष्ट है कि देशमें तनातनी होते हुए भी केन्द्रीय असेम्बलीके हिन्दू और मुसलमान सदस्योंमें किसी अशमें सहयोग था।

वैधानिक प्रश्नपर लेशमात्र भी आगे बढ़नेके किसी भी प्रस्तावका सरकार जान बूझकर विरोध कर रही थी। परन्तु यह बात महसूस की जाने लगी कि सरकारका यह विरोध अधिक समयतक नहीं चल सकता और किसी प्रकारके साम्प्रदायिक समझौतेके बिना कोई भी प्रगति सम्भव नहीं। अतः गोहाटी कांग्रेसने अपनी कार्यसमितिको यह अधिकार दिया कि वह हिन्दुओं और मुसलमानोंके पारस्परिक मतभेदको दूर करनेके लिए हिन्दू और मुसलमान नेताओंसे परामर्श

निर्वाचन केवल तभी त्याग सकते है जब उनकी अन्य शर्ते स्वीकार कर ली जायं। प्रस्तावमे मद्रास कांग्रेसका वह समझौता भी शामिल था जो आत्म-स्वातन्त्र्य, धार्मिक कानून, गौ तथा बाजेके प्रश्न और मत परिवर्तनके सम्बन्ध-मे हुआ था। यहा यह स्मरण रखना चाहिये कि अखिल भारतीय मुस्लिम लीगमें दो दल हो गये थे। एक कलकत्तेमें अपना अधिवेशन कर रहा था और दूसरा लाहौरमें, सर मिया मुहम्मद शफीकी अध्यक्षतामे। उपर्युक्त प्रस्ताव कलकत्ते-वाले अधिवेशनमे स्वीकृत हुए जिसके अध्यक्ष थे मौलवी मुहम्मद याकूब। श्रीमुहम्मदअली जिना इसके प्रमुख पथप्रदर्शक थे।

यहां उन थोड़ी-सी बातोंका जिक्र करना अनुचित न होगा जिनके कारण लीगके एक दलमें और काग्रेसमें पुन. एकता हो गयी थी और दूसरी ओर लीगमें ही फूट होकर दो दल हो गये थे। ऊपर कहा जा चुका है कि सरकार वैधानिक प्रगतिके सभी प्रस्तावोका विरोध कर रही थी। उस समय लार्ड बर्कनहेड भारतमन्त्री थे। उन्होने १० दिसम्बर १९२५ को तत्कालीन वाइसराय लार्ड रीडिगको उस 'स्टेट्यूटरी कमीशन' की नियुक्तिकी तारीख बढ़ानेके सम्बन्धमे लिखा कि सुधारोंकी प्रगतिपर अपना मत प्रकट करनेके लिए सुधार लागू होनेके अधिकसे अधिक दस वर्षके अन्तमें नियुक्त करनेका १९२० के भारत शासन विधानमे आयोजन था। उन्होने लिखा—

'अतः यदि आप कभी इस (स्टट्यूटरी कमीशन) के द्वारा लाभदायक सौदा पटानेका अवसर देखें अथवा स्वराज्य पार्टी और अधिक फूट डालनेका मौका पाये तो मै आपकी सलाहका स्वागत करूँगा......यदि ऐसी शीघ्रतासे आपको सौदा पटानेका अवसर मिले तो आप उसका यह विश्वास रखते हुए भरपूर उपयोग करे कि सरकार आपका हृदयसे समर्थन करेगी।'*

अस्तु १९२७ में इंग्लैण्डकी स्थितिके कारण वे विवश हो गये। "ब्रिटेनके भावी चुनावके लक्षण अच्छे न थे। मजदूर दलीय सरकार बननेकी सम्भावना

---

* बर्कनहेड: 'दि लास्ट फेज'—श्री के० बी० कृष्णकी 'दि प्राब्लेम ऑव माइनारिटीज', पृ० ३०७ में उद्धृत।

थी। वे नहीं चाहते थे कि १९२८ वाले कमीशनकी नियुक्तिमें मजदूर दलकी सरकारका कर्नल वेजउड और उनके साथियोंका,. . .थोड़ा-सा भी हाथ हो।. . .कारण, इससे तो 'स्वराज्य पार्टीमें और अधिक मतभेद उत्पन्न करनेकी' (बर्केनहेड : 'दि लास्ट फेज', पृष्ठ २५०-५१ में वर्णित) उनकी योजना ही उलट जायगी।'❀

आपने नवम्बर १९२७ में 'स्टेट्यूटरी कमीशन' की नियुक्तिकी घोषणा की। कमीशनमे ७ सदस्य थे जिनमें सर जान साइमन उसके अध्यक्ष थे। उसमें भारतीय सदस्य एक भी न था। केन्द्रीय व्यवस्थापिका सभासे कहा गया था कि वह एक संयुक्त विशेष समिति नियुक्त करे जो कमीशनकी जांचके लिए उसके सम्मुख अपने विचार उपस्थित करे। कमीशनमें एक भी भारतीय सदस्यके न रखे जानेकी बातको भारतीयोंने अपना घोर अपमान समझा और केवल कांग्रेस तथा खिलाफत कमेटीने ही उसका बहिष्कार करनेका निश्चय नहीं किया, अपितु अनेक मुसलमानोंने और यहांतक कि लिबरल दलके व्यक्तियोंने भी ऐसा निश्चय किया, जिनके बारेमें ऐसा समझा जाता था कि राजनीतिक मामलोंमें उनके विचार बडे नरम हैं और कांग्रेसके बहिष्कार करनेपर भी देशके विभिन्न राजनीतिक दलोंमे लिबरल दल ही ऐसा दल था जिसने माटेगू चेम्स-फोर्ड सुधारोंको कार्यान्वित करनेकी चेष्टा की थी। अखिल भारतीय मुस्लिम लीगमें साइमन कमीशनसे सहयोग करने तथा पृथक् निर्वाचनके प्रश्नपर मतभेद उत्पन्न हो गया था। लार्ड बर्केनहेड भारतके विभिन्न दलोंके बीच फूट डालनेके महत्वको भली भांति समझते थे और "भारतमन्त्रीकी हैसियतसे उन्होंने वाइसराय लार्ड रीडिंगको अपनी यह सलाह भेजी कि 'जितना ही अधिक यह दिखाया जा सकेगा कि लोगोंमें मतभेद बहुत बढ़ा हुआ है तथा इसके कारण जनतामें अत्यधिक फूट फैली है उतना ही अधिक यह प्रदर्शित किया जा सकेगा कि हम और केवल हम ही सबमें झगड़े मिटा सकते

❀ अतुलानन्द चक्रवर्ती : 'काल इट पालिटिक्स' पृ० ५८

है' (बर्केनहेड : 'दि लास्ट फेज' पृष्ठ २४५-२४६)"* जब भारतमें कमीशन-का बहिष्कार हुआ तो उन्होंने लार्ड अरविनको पुनः लिखा कि बहिष्कारका रुख मिटानेके लिए हम सदा ही अबहिष्कारी मुसलमानों, दलित वर्ग, व्यापारी वर्ग तथा ऐसे ही अन्य अनेक वर्गोंपर निर्भर रहते आये हैं। आपको और साइमनको इस दौरेके समय ही इस प्रश्नपर विचार करना चाहिये कि इसी समय ब्रिटिश सरकारके प्रति विरोधकी दीवारमें दरार डालनेका प्रयत्न करना उपयुक्त होगा अथवा नहीं (बर्केनहेड : 'दि लास्द फेज', पृष्ठ २५३)।"†

कुछ दिन बाद फरवरी १९२८ में उन्होंने वाइसरायको पुनः लिखा कि "मैं साइमनको सलाह दूगा कि वे हर हालतमें ऐसे महत्वशाली व्यक्तियोसे मिलें जो कमीशनका बहिष्कार नही कर रहे है, विशेषतः मुसलमानों और दलित वर्ग-के लोगोंसे। लोकप्रतिनिधि विशिष्ट मुसलमानोंसे उनकी जो मुलाकातें होंगी उनका मै व्यापक प्रचार करूंगा। अब सारी नीति स्पष्ट है। वह नीति यह है कि विशाल हिन्दू जनताके मस्तिष्कमें यह भय उत्पन्न कर दिया जाय कि कमीशनपर मुसलमान लोग हाबी हो गये है और वह ऐसी रिपोर्ट दे सकता है जो हिन्दू हितोंके लिए पूर्णतः घातक हो और इस प्रकार मुसलमानोंका ठोस समर्थन प्राप्त किया जाय तथा जिनाको निर्बल बनाकर छोड़ दिया जाय।" (बर्केनहेड : 'दि लास्ट फेज', भाग २, पृष्ठ २५५)‡

तब इसपर आश्चर्य करनेकी आवश्यकता नही कि सर मुहम्मद शफीनें लाहौरमें लीगकी एक पृथक् बैठक की और श्री जिना 'बैंध' लीगका पथ-प्रद-र्शनके लिए निर्बल बनाकर अलग छोड़ दिये गये। लाहौरमें जिस समय शफी लीगकी बैठक हो रही थी उसी समय दिसम्बर १९२७ में श्री जिना कलकत्तेमें अपनी लीगकी बैठक कर रहे थे।

---

* अतुलानन्द चक्रवर्ती : 'काल इट पालिटिक्स', पृष्ठ ५७।

† वही, पृष्ठ ५९।

‡ के० बी० कृष्ण : 'दि प्राब्लेम आव माइनारिटीज', पृष्ठ ३०८।

साइमन कमीशनकी नियुक्तिद्वारा भारतीयोका जो अपमान किया गया था और लार्ड बर्कनहेडने भारतवासियोंको सभी भारतीयोके लिए ग्राह्य विधान बनानेकी जो चुनौती दी थी उसका परिणाम यह हुआ कि १९२८ के आरम्भमे कांग्रेस, अखिल भारतीय मुसलिम लीग तथा अन्य संस्थाओने मिलकर भारतके लिए एक विधान बनाया। उपर्युक्त प्रस्तावोके अनुसार सर्वदलीय सम्मेलन हुआ। उसने विधान निर्माणका कार्य आगे बढाया और तदुपरान्त यह कार्य एक कमेटी-के सिपुर्द किया गया। पण्डित मोतीलाल नेहरू उक्त कमेटीके अध्यक्ष थे। उक्त कमेटीने 'नेहरू रिपोर्ट' तैयार की। लखनऊमे सर्वदलीय सम्मेलनकी बैठक हुई जिसमें उक्त रिपोर्ट कुछ संशोधनोके साथ स्वीकृत हुई। दिसम्बर १९२८ मे कलकत्तेमें सभी दलोका एक संयुक्त अधिवेशन बुलाया गया जिसमे उक्त स्वीकृत रिपोर्ट पेश की गयी। इस बीच पर्देमे कुछ अन्य शक्तिया कार्य कर उठी थीं और अखिल भारतीय मुसलिम लीगके प्रतिनिधियोंके साथ मतभेद उत्पन्न हो चला था। मतभेद मुख्यतः इन तीन बातोपर अत्यधिक था—(१) केन्द्रीय असेम्बलीमें मुसलमान प्रतिनिधियोकी सख्या एक तिहाईसे कम न हो। (२) नेहरू रिपोर्टमे प्रस्तावित बालिग मताधिकार स्वीकृत न होनेपर पजाब और बंगालमें आबादीके अनुपातसे स्थान मिले और दस वर्षके उपरान्त उसमे हेरफेर हो, (३) अवशिष्ट अधिकार प्रान्तोंमें रहे, केन्द्रमे नही। ये सारी बाते श्री जिनाने एक प्रस्तावके रूपमें अधिवेशनके सम्मुख उपस्थित की। इनपर इसी कार्यके लिए नियुक्त एक कमेटीमें बहुत देरतक विचार होता रहा परन्तु लोग किसी निर्णयपर न पहुंचे और अन्तमे अधिवेशनने इन्हे अस्वीकृत कर दिया। इसके बाद लीग व्यवहार्यतः अधिवेशनसे पृथक् हो गयी और कलकत्तेमें होनेवाला उसका अधिवेशन इस स्थितिपर बादमे विचार करनेके लिए स्थगित कर दिया गया।

लीगका वह दल जिसने पिछले वर्ष लाहौरमे अपना अधिवेशन किया था, अब-तक चुप नहीं बैठा था। उसने उस अधिवेशनमें कांग्रेसके मद्रासवाले अधिवेशनमें स्वीकृत प्रस्तावोंको अस्वीकार कर लाहौर अधिवेशनमें स्वीकृत सिद्धान्तोंके आधार-

पर अन्य संस्थाओंके सहयोगसे 'स्टेट्यूटरी कमीशनके' समक्ष उपस्थित करनेके निमित्त वैधानिक योजना तैयार करनेके लिए एक कमेटी नियुक्त कर दी थी। उसने एक प्रस्ताव स्वीकृत कर अध्यक्षको यह अधिकार दिया कि वे मुसलमानोंके विभिन्न वर्गोको एक सूत्रमें बाधनेके उद्देश्यसे मुसलमानोका एक गोलमेज सम्मेलन बुलाये। अतः ३१ दिसम्बर १९२८ को दिल्लीमे मुसलमानोका एक सर्वदलीय सम्मेलन बुलाया गया। आगाखासे, जो १९०६ मे मुसलमानोंका एक प्रतिनिधिमण्डल लेकर लार्ड मिण्टोसे मिले थे, यह अनुरोध किया गया कि वे उक्त सम्मेलनकी अध्यक्षता स्वीकार कर ले। उन्होने उक्त निमन्त्रण स्वीकार कर लिया। कलकत्तेमें जो सर्वदलीय अधिवेशन हुआ था उससे कुछ मुसलमानोंके हृदयमे अत्यन्त कटुताकी भावना उत्पन्न हो गयी थी। उनमेसे कुछ व्यक्ति, जिनमे मौलाना मुहम्मदअली और मौलवी शफी दाउदी मुख्य थे, इस सम्मेलनमे सम्मिलित हुए। कलकत्तेवाली अखिल भारतीय मुसलिम लीगने मुसलिम सर्वदलीय सम्मेलनका निमन्त्रण अस्वीकार कर दिया था। सम्मेलनने इस आशयका प्रस्ताव स्वीकृत किया कि (१) भारतीय स्थितिमे केवल संघ प्रणालीकी ही शासन पद्धति उपयुक्त हो सकती है जिसमे सभी सम्बद्ध इकाइयोको पूर्ण स्वशानका और अवशिष्ट अधिकार रहे। केन्द्रीय सरकारका सयुक्त हितके केवल ऐसे मामलोंपर नियन्त्रण रहे जो कि विधान उसे विशेष रूपसे सौपे। (२) किसी भी प्रान्तीय या केन्द्रीय असेम्बलीमे अन्तर्साम्प्रदायिक मामलोपर, यदि प्रभावित सम्प्रदायके तीन चौथाई सदस्य उसका विरोध करें तो न केवल कोई बिल, प्रस्ताव या सशोधन उपस्थित किया जाय और न वह स्वीकृत किया जाय। (३) असेम्बलियों तथा अन्य स्वायत्त संस्थाओंमे मुसलमानोंके प्रतिनिधि उनके पृथक् निर्वाचनकी पद्धतिद्वारा चुने हुए रहे। इस अधिकारसे उन्हें केवल तभी वंचित किया जाय जब वे स्वयं इसके लिए अपनी इच्छा प्रकट करें। केन्द्रीय और प्रान्तीय मन्त्रिमण्डलोंमें मुसलमानोका उचित प्रतिनिधित्व रहे। मुसलिम बहुमतवाले प्रान्तोंमें, प्रान्तीय कौन्सिलोंमें मुसलमानोंका बहुमत हो। और जहा वे अल्पसंख्यक हो वहां वर्तमान कानूनके अनुसार उनका जितना प्रतिनिधित्व हो उसमें

कोई कमी न की जाय। केन्द्रीय असेम्बलीमें मुसलमानोंका ३३ प्रतिशत प्रतिनिधित्व रहे। (४) सिन्ध पृथक् प्रान्त बना दिया जाय। और (५) सीमाप्रान्त तथा बिलोचिस्तानमें अन्य प्रान्तोंके अनुसार ही वैधानिक सुधार हों, नौकरियोमें मुसलमानोको उचित प्रतिनिधित्व मिले, मुसलिम संस्कृतिकी रक्षा तथा मुसलिम शिक्षा, भाषा, धर्म, व्यक्तिगत कानून, धर्मार्थ संस्थाओं और उनको मिलनेवाली सरकारी सहायतामें उन्नति और वृद्धिके लिए उचित संरक्षण मिलने चाहिये।

प्रस्तावमें अत्यन्त जोरदार शब्दोमे यह घोषणा की गयी थी कि भारतीय मुसलमानोंको कोई भी विधान, चाहे उसे किसीने भी क्यो न बनाया हो, उस समयतक स्वीकार्य न होगा जबतक वह उपयुक्त प्रस्तावको स्वीकार न कर ले।

श्री जिनाने मुसलिम सर्वदलीय सम्मेलन तथा मुसलिम लीगके दो भागोके बीच मैत्री स्थापित करनेके लिए एक बार प्रयत्न किया। उन्होने प्रमुख व्यक्तियोसे परामर्श करके एक मसविदा तैयार किया जिसके आधारपर आपसमे कोई समझौता हो सके। इस मसविदेमें आपने मुसलमानोके हितो और अधिकारोकी रक्षाके लिए निम्नलिखित १४ बाते आवश्यक बतायी—

(१) भावी विधानका रूप सघ-प्रणालीका हो जिनमे अवशिष्ट अधिकार प्रान्तोके हाथमें रहे।

(२) सभी प्रान्तोंमें एक समान स्वायत्त शासनाधिकार रहे।

(३) सभी प्रान्तोंमें असेम्बलियों और लोक प्रतिनिधि संस्थाओमें निश्चित रूपसे अल्पसख्यक सम्प्रदायोका उचित और पर्याप्त प्रतिनिधित्व रहे। जहां उनका बहुमत हो वहा वह घटाकर समान या अल्पमत न कर दिया जाय।

(४) केन्द्रीय असेम्बलीमें मुसलमानोंका प्रतिनिधित्व एक तिहाईसे कम न रहे।

(५) साम्प्रदायिक वर्गोका प्रतिनिधित्व पृथक् निर्वाचनकी पद्धतिसे हो परन्तु कोई भी सम्प्रदाय जब चाहे तब संयुक्त निर्बाचनकी पद्धति स्वीकार कर सकता है।

(६) किसी भी प्रादेशिक पुनर्विभाजनद्वारा पंजाब, बंगाल और पश्चिमोत्तर सीमाप्रान्तमें मुसलमानोंके बहुमतपर कोई प्रभाव न पड़ना चाहिये।

(७) सभी सम्प्रदायोंको अपने धार्मिक विश्वास, उपासना, उत्सव, प्रचार सम्मेलन और शिक्षाकी पूर्ण स्वाधीनता रहनी चाहिये।

(८) किसी भी असेम्बली अथवा लोकप्रतिनिधि संस्थामें ऐसा कोई भी बिल या प्रस्ताव स्वीकृत न होना चाहिए जिसका कि किसी भी सम्प्रदायके तीन चौथाई सदस्य अपने सम्प्रदायके हितोका विरोध बताते हुए विरोध करें।

(९) सिन्ध बम्बई प्रेसिडेन्सीसे पृथक् कर दिया जाय।

(१०) अन्य प्रान्तोमें जिस प्रकारके सुधार किये जायं उसी प्रकारके सुधार सीमाप्रान्त और बिलोचिस्तानमें किये जायं।

(११) विधानमें सभी नौकरियोंमें योग्यताकी आवश्यकताके अनुरूप मुसलमानोको उचित भाग मिले।

(१२) मुस्लिम संस्कृति, शिक्षा, भाषा, धर्म, व्यक्तिगत कानून और धार्मिक संस्थाओंकी रक्षा और उन्नतिके लिए उचित संरक्षण मिले तथा पर्याप्त सरकारी सहायता मिले।

(१३) केन्द्रीय अथवा प्रान्तीय मन्त्रिमण्डलोमें कमसे कम तिहाई मन्त्री मुसलमान रहें।

(१४) केन्द्रीय असेम्बलीको विधानमें कोई परिवर्तन करनेका केवल तभी अधिकार रहे जब भारतीय संघमें आबद्ध सभी इकाइया उसे स्वीकार कर लें।

यह बात उल्लेखनीय है कि श्री जिना जिस लीगके अध्यक्ष थे उसमें राष्ट्रीय मुसलमानोंका प्राधान्य था। शफी लीग अपने लाहौरवाले प्रस्तावसे चिपटी हुई थी और व्यवहार्यतः मुस्लिम सर्वदलीय सम्मेलनका ही एक अंग बन गयी थी। श्री जिनाने १४ बातोंवाला जो मसविदा तैयार किया वही राष्ट्रीय दलके अतिरिक्त और सभी मुसलमानोंकी मांग बन गया। ये चौदह बातें इसलिए और भी अपना विशेष महत्व रखती है कि श्री मेकडानेल्डके साम्प्रदायिक निर्णयमें ये प्रायः मान ली गयी थीं। राष्ट्रीय मुसलमानों और मुस्लिम सर्व-

दलीय सम्मेलनमें नेहरू रिपोर्टकी स्वीकृतिके प्रश्नपर मतभेद था। राष्ट्रीय मुसलमान चाहते थे कि नेहरू रिपोर्ट स्वीकार कर ली जाय।

दिसम्बर १९२८ मे कलकत्तेमे काग्रेसका जो अधिवेशन हुआ उसने यह प्रस्ताव स्वीकार किया कि ब्रिटिश सरकार यदि नेहरू रिपोर्टको जिसमें औपनिवेशिक पदकी मांग की गयी है, एक वर्षके भीतर अर्थात् ३१ दिसम्बर १९२९ तक स्वीकार नही कर लेती तो कांग्रेस उक्त रिपोर्टकी माग छोड़कर पूर्ण स्वाधीनताकी माग करेगी। १९२९ मे देशमे बडी जागृति दीख पड़ी। ३१ अक्तूबर १९२९ को वाइसराय लार्ड अरविनने जो इस बीच इग्लैण्ड जाकर परामर्श कर आये थे, यह घोषणा की कि साइमन कमीशन जब अपनी रिपोर्ट दे देगा तब ब्रिटिश सरकार भारतीय समस्यापर विचार करनेके लिए ब्रिटिश और भारत और देशी रियासतोके विभिन्न दलो और हितो-के प्रतिनिधियोका एक गोलमेज सम्मेलन बुलायेगी। घोषणामे यह भी कहा गया कि 'मुझे स्पष्ट शब्दोमे यह घोषणा करनेका अधिकार मिला है कि ब्रिटिश सर-कारकी १९१७ की घोषणामें यह बात शामिल है कि औपनिवेशिक पदकी प्राप्ति भारतीय वैधानिक प्रगतिका लक्ष्य है।' घोषणाके इस अशसे यह बात स्पष्ट नही हुई कि गोलमेज सम्मेलनमे भारतके लिए औपनिवेशिक विधानकी योजना तैयार की जायगी या नही, इसलिए घोषणापर विचार करनेके लिए दिल्लीमे जो नेता सम्मेलन हुआ उसने इस बातका स्पष्टीकरण मांगा। काग्रेसके लाहौर अधि-वेशनके पूर्व २३ दिसम्बरको महात्मा गाधी, पण्डित मोतीलाल नेहरू, अध्यक्ष पटेल, सर तेजबहादुर सप्रू और श्री जिना इस सम्बन्धमें वाइसरायसे मिले, वाइ-सराय यह आश्वासन देनेके लिए प्रस्तुत नही हुए कि उक्त सम्मेलनका उद्देश्य औपनिवेशिक पदकी योजना तैयार करना है। कांग्रेसने कलकत्तेवाले अपने अधि-वेशनमे स्वीकृत प्रस्तावके अनुसार यह घोषणा की कि कांग्रेस विधानकी पहली धारामें जो 'स्वराज्य' शब्द आया है उसका अर्थ पूर्ण स्वाधीनता होगा और अब नेहरू कमेटीकी रिपोर्टकी सारी योजना समाप्त हो गयी। काग्रेसने अखिल भारतीय काग्रेस कमेटीको यह अधिकार दिया कि वह सविनय अवज्ञा आन्दोलन,

जिसमें कर-बन्दीका कार्यक्रम भी सम्मिलित था, आरम्भ करे। आगामी मार्चमें सविनय अवज्ञा आन्दोलन आरम्भ कर दिया गया जो कि एक वर्षतक जारी रहा। साइमन कमीशनकी रिपोर्ट १९३० के मध्यमें उपस्थित की गयी और प्रथम गोलमेज सम्मेलन आगामी शरद ऋतुमे लन्दनमें बुलाया गया। उक्त सम्मेलनमे काग्रेसका कोई प्रतिनिधित्व न था। उसमे देशी रियासतोंके प्रतिनिधि थे और ब्रिटिश भारतके। ब्रिटिश भारतके प्रतिनिधियोंमे मुसलमान थे। उसने भारतके लिए ऐसे संघ विधानके पक्षमें अपना निर्णय दिया जिसमें भारतके प्रान्त तो रहें ही इसके अतिरिक्त ऐसी रियासतें या उनके समूह भी सम्मिलित रहें जो उसमें सम्मिलित होनेकी इच्छा प्रकट करे। उसने सिन्धको पृथक् प्रान्त बनाने तथा सीमाप्रान्तमे सुधार कार्यान्वित करनेके पक्षमें अपना मत दिया। सयुक्त अथवा पृथक् निर्वाचन पद्धतिपर लोगोने जो मत व्यक्त किया वह पृथक् निर्वाचन पद्धति रखने और सम्बन्धित दलोंकी स्वीकृतिद्वारा ही उसे रद्द करनेके पक्षमें जान पड़ा। संघशासन तथा उसकी इकाइयोके क्या अधिकार रहे इसपर विस्तारपूर्वक विचार किया गया और दोनोको अधिकारोकी अलग-अलग सूची बना ली गयी, परन्तु अवशिष्ट अधिकारोके प्रश्नका पूर्णतया निर्णय नही किया गया और न यही निश्चित हुआ कि संघ असेम्बलीमे मुस्लिम प्रतिनिधियोकी संख्या कितनी रहे।

प्रथम गोलमेज सम्मेलनके उपरान्त लार्ड अरविनने भारत-सरकारकी ओरसे और महात्मा गांधीने काग्रेसकी ओरसे समझौता कर लिया जिसके कारण द्वितीय गोलमेज सम्मेलनमें जो कि १९३१ की शरद ऋतुमें होनेवाला था, कांग्रेसके सम्मिलित होनेका द्वार खुल गया। ठीक इसी समय काशी, कानपुर तथा अन्य स्थानोंमे भीषण हिन्दू-मुस्लिम दंगे हो गये। राष्ट्रीय मुसलमानोमें, जो कि इस समयतक 'राष्ट्रीय मुस्लिम सम्मेलनोके रूपमें संघटित हो गये थे तथा मुस्लिम सर्वदलीय सम्मेलनमे, जिसमे कि जहांतक कार्यक्रमका प्रश्न था, भारतीय मुस्लिम लीग और खिलाफत सम्मेलन मिलकर एक हो गये थे, मुख्य मतभेद निर्वाचन पद्धतिका था। पहला जहां संयुक्त निर्वाचन पद्धतिके पक्षमें था वहां दूसरा पृथक्

निर्वाचन पद्धतिके पक्षमें था। अप्रैल १९३१ में लखनऊमें सर अली इमामकी अध्यक्षतामे राष्ट्रीय मुस्लिम सम्मेलन हुआ जिसमें उन्होने घोषणा की कि 'यद्यपि एक ममय मै स्वयं पृथक् निर्वाचन पद्धतिके पक्षमें था और उसी उद्देश्यसे उस प्रतिनिधि मण्डलमें सम्मिलित हुआ था जिसने लार्ड मिण्टोसे इस सम्बन्धमें भेंट की थी तथापि इस विषयपर गम्भीरतासे विचार करनेके उपरान्त मैं इसी निर्णयपर पहुँचा कि पृथक् निर्वाचन पद्धति केवल भारतीय राष्ट्रीयताके ही विरुद्ध नही है अपितु वह स्वय मुसलमानोके लिए घातक है। सम्मेलनने इस आशयका प्रस्ताव स्वीकृत किया कि विधानमें मौलिक अधिकारोकी घोषणा होनी चाहिये, संस्कृति, भाषा और व्यक्तिगत कानूनो आदिकी रक्षाका पक्का आश्वासन मिलना चाहिये, विधान संघ प्रणालीका होना चाहिये जिसमें सम्बद्ध इकाइयोके हाथमें अवशिष्ट अधिकार रहे, सरकारी नौकरियोके लिए योग्यताके न्यूनतम मानके अनुसार पब्लिक सर्विस कमीशन चुनाव करे जिसमे किसी सम्प्रदायविशेषको वचित न किया जाय, सिन्ध पृथक् प्रान्त बना दिया जाय और सीमाप्रान्त तथा बिलोचिस्तानमें अन्य प्रान्तोके समान ही शासन पद्धति रहे। संघ और प्रान्तीय असेम्बलियोंमें प्रतिनिधित्वके सम्बन्धमें उक्त प्रस्तावमे कहा गया कि सर्वत्र बालिग मताधिकार रहे, संयुक्त निर्वाचन हो और ३० प्रतिशतसे कम अल्प मतवालोके लिए जनसख्याके आधारपर कुछ स्थान सुरक्षित रहे तथा उन्हें यह छूट रहे कि वे चाहे तो अन्य स्थानोके लिए भी चुनाव लड़ सकते है। मुस्लिम सर्वदलीय सम्मेलन तथा मुस्लिम राष्ट्रीय सम्मेलनके बीच समझौता करानेका एक प्रयत्न किया गया। किन्तु वह असफल रहा। शिमलामें २२ जून १९३१ को दोनोंका एक संयुक्त अधिवेशन होनेको था जिसमें समझौतेके लिए उपस्थित किये जानेवाले प्रस्तावोंपर विचार विमर्ष होता। इस विषयमे डाक्टर अनसारीने यह वक्तव्य दिया कि शिमला पहुँचने पर हमने देखा कि यहांका वातावरण समझौतेके लिए सर्वथा अनुपयुक्त है। दुर्भाग्यकी बात है कि हमारे सन्देह ठीक निकले। यहांका वातावरण और प्रभाव इतना दूषित है कि ऐक्यकी बातोके लिए कोई गुंजाइश ही नहीं रह गयी है। उनका जिक्र करना व्यर्थ है, कारण, जनता

उनसे भलीभांति परिचित है। दोनों दलोंको संयुक्त करनेके सभी प्रयत्नोंपर पानी फेर दिया गया है।'*

द्वितीय गोलमेज सम्मेलनके लिए कांग्रेसकी ओरसे महान्मा गाधी एकमात्र प्रतिनिधि चुने गये। ब्रिटिश-सरकारने ब्रिटिश-भारतसे कितने ही प्रतिनिधि नामजद किये थे जिनमे कितने ही मुसलमान थे; परन्तु डाक्टर अनसारी-को आमन्त्रित करनेका महातमा गांधीका सुझाव ब्रिटिश-सरकारने ठुकरा दिया। गोलमेज सम्मेलनमे एक कमेटी 'अल्पमत-कमेटी' चुनी गयी थी जिसे अल्पमतवालोंकी समस्या हल करनेका कार्य सौपा गया था। यह कमेटी किसी सर्वसम्मत निर्णयपर पहुचनेमे असमर्थ रही और इस तथा अन्य अनेक प्रश्नोंपर बिना किसी निर्णयपर पहुँचे ही गोलमेज सम्मेलन समाप्त हो गया। गोलमेज-सम्मेलनकी असफलतापर किसी भारतीयको आश्चर्य नही हुआ। ऐसे किसी भी समझौतेके प्रयत्नको विफल करनेके लिए कुछ शक्तियां बड़ी मुस्तैदीसे अपने कार्यमें संलग्न थी। श्री एडवर्ड थामसन लिखते है कि 'जिन दिनों गोलमेज सम्मेलन हो रहा था उन दिनो समझौतेका तीव्र विरोध करनेवाले मुसल-मानों तथा कुछ विशेष अलोकतन्त्रवादी ब्रिटिश राजनीतिक क्षेत्रोंमे कुछ स्पष्ट मैत्री और समझौता हो गया था। यह मैत्री भारतमे अकसर कहा जाता है कि अब भी बनी है और उन्नतिके मार्गमें सबसे बड़ी बाधा है। मेरा विश्वास है कि मै प्रमाणित कर सकता हूँ कि यह बात अनेकाशोमें सत्य है। इस बातमें तो सन्देह करनेके लिए स्थान है ही नही कि पुराने जमानेमे हमलोगोंने भारतमें 'भेद डालो और राज करो' की स्पष्ट नीति बना ली थी। वारेन हेस्टिंग्सके जमानेसे लेकर अबतक हिन्दुओं और मुसलमानोके संघर्षोसे अधिकारियोंको बड़ा आनन्द मिलता आया है, यहांतक कि एलिफिन्स्टन, मेलकम और मेटकाफ जैसे व्यक्तियोंने भी स्वीकार किया है कि अग्रेजोंके लिए इसका कितना महत्व है।'†

---

* 'ऐनुअल रजिस्टर फार १९३१'; पृष्ठ ३०५।

† एडवर्ड थामसन : 'एनलिस्ट इण्डिया फार फ्रीडम' पृष्ठ ५०।

प्रधानमन्त्री श्री रेमजे मेकडानल्डने द्वितीय गोलमेज सम्मेलनकी काररवाई समाप्त करते हुए घोषणा की कि ब्रिटिश सरकार, विशेष स्थितिमे सरक्षण रखते हुए, उत्तरदायी संघशासनके सिद्धान्तको स्वीकार करती है ; गवर्नरी प्रान्तोमें बाहरी हस्तक्षेपसे रहित पूर्ण उत्तरदायी शासन रहेगा और विभिन्न प्रान्त अपने यहां मनोनुकूल नीति चला सकेंगे ; सीमाप्रान्त गवर्नरी प्रान्त रहेगा और अन्य प्रान्तोके समान ही उसका पद रहेगा ; सिन्धकी आयके लिए पर्याप्त साधन निकल आयेगे तो वह पृथक् प्रान्त कर दिया जायगा। साम्प्रदायिक समस्याके विषयमे आपने कहा कि 'साम्प्रदायिक गत्यवरोध प्रगतिके मार्गमे बहुत बड़ी बाधा है किन्तु ब्रिटिश सरकार इस बातके लिए कृतसंकल्प है कि यह बाधा भी उन्नतिके मार्गमे बाधक न बनने दी जायगी। इसका अर्थ यह होगा कि ब्रिटिश सरकारको केवल इतना ही न करना होगा कि वह आपके प्रतिनिधित्व-की समस्या हल करे अपितु अपनी सारी बुद्धिमत्ता लगाकर उसे यह भी निश्चय करना होगा कि विधानमे कैसे क्या प्रतिबन्ध और कैसा सन्तुलन रहे जिससे अल्प मतवालोकी रक्षा हो सके और बहुमतद्वारा व्यक्त होनेवाले लोकतन्त्रके सिद्धान्तका अल्पमतवालोके सम्बन्धमे अबाध और अनुचित प्रयोग न हो।'*

इस घोषणाके उपरान्त साम्प्रदायिक निर्णयका आना स्वाभाविक था। अगस्त १९३२ मे वह आया। इस योजनाका क्षेत्र जान बूझकर ब्रिटिश-भारतके निवासी विभिन्न सम्प्रदायोके प्रान्तीय असेम्बलियोमे प्रतिनिधित्वतक सीमित रखा गया। केन्द्रीय असेम्बलीके लिए प्रतिनिधित्वकी समस्या यह कहकर आगेके लिए टाल दी गयी थी कि उसमें देशी रियासतोंकी भी समस्या शामिल है और बिना भलीभांति विचार विनिमय किये उसपर कोई निर्णय देना सम्भव नहीं। यह आशा प्रकट की गयी थी कि एक बार प्रतिनिधित्वके तरीके और अनुपातके मूल प्रश्नके सम्बन्धमें घोषणा हो जानेसे अन्य साम्प्रदायिक समस्याओपर विभिन्न सम्प्रदाय स्वयं ही कोई हल ढूढ निकालेगे। नये

---

* 'ऐनुअल रजिस्टर' १९३१, भाग २, पृष्ठ ४४६।

भारत-शासन विधानके कानून बननेके पूर्व यदि सरकारको यह विश्वास हो जायगा कि विभिन्न सम्प्रदायोंको कांग्रेसकी योजना स्वीकार है तो वह पार्लमेण्टसे सिफारिश करेगी कि साम्प्रदायिक निर्णयमें रखी गयी योजनाके बदलेमें नयी योजना स्वीकार कर ली जाय। उक्त निर्णयमें मुसलमानों, यूरोपियनो और सिखोंको पृथक् साम्प्रदायिक निर्वाचन पद्धतिद्वारा अपने प्रतिनिधि चुननेका अधिकार दिया गया था। बम्बईमें कुछ विशेष साधारण निर्वाचन क्षेत्रोंमे मरहठोके लिए कुछ स्थान सुरक्षित रखे गये थे। हरिजनोके लिए कुछ स्थान रखे गये थे जिनके लिए विशेष निर्वाचन क्षेत्रोमें चुनाव होता और वहां केवल वे ही अपना मत दे सकते थे। साधारण निर्वाचन-क्षेत्रोंमें भी उन्हे मत देनेका अधिकार था। भारतीय ईसाइयों और ऐंग्लो-इण्डियनोके लिए भी कुछ स्थान रखे गये थे जिनके लिए मतदाता पृथक् साम्प्रदायिक निर्वाचन पद्धतिद्वारा ही मत देते। महिलाओके लिए भी विशेष रूपसे कुछ स्थान सुरक्षित रखे गये थे। और यह निर्णय कर दिया गया था कि अमुक-अमुक सम्प्रदायकी इतनी महिलाएँ रहेंगी। मजदूरोंके निर्वाचन क्षेत्रोंसे मजदूरोके प्रतिनिधियोंके लिए भी कुछ स्थान रखे गये थे। उद्योग, व्यवसाय, खानों आदिके लिए कुछ विशेष स्थान रखे गये थे जिनका चुनाव व्यापार-मण्डल तथा अन्य संघोंद्वारा होता। इसी भांति जमीदारोंके निर्वाचन क्षेत्रसे जमीदारोके लिए कुछ स्थान रखे गये थे। इससे यह स्पष्ट है कि मार्ले-मिण्टो सुधारोंमें जनताको साम्प्रदायिक टुकड़ोंमें विभक्त करनेका जो सिद्धान्त आरम्भ किया गया था वह और अधिक, यहांतक कि मांटेगू चेम्सफोर्ड सुधारोंसे भी अधिक, व्यापक बना दिया गया था। '१९१९ में मतदाता दस भागोंमें विभक्त किये गये थे, इस बार वे १७ असमान टुकड़ोंमें विभक्त कर दिये गये। महिलाओं और भारतीय इसाइयोंपर जबरन उनकी इच्छाके विरुद्ध पृथक् निर्वाचन लाद दिया गया। दलित वर्गको पृथक् प्रतिनिधित्व प्रदान कर हिन्दू सम्प्रदाय और अधिक निर्बल बना दिया गया। धर्म, व्यवसाय और नौकरीके आधारपर विभाजन किया गया। जनताको जितने टुकड़ोंमें बांटना सम्भव था उसमें कोई कमी नही की गयी।'*

* मेहता और पटवर्द्धन : 'दि कम्यूनल ट्रिएंगिल इन इण्डिया' पृष्ठ ७२

विभिन्न सम्प्रदायोंमें स्थानोंका बंटवारा भी कम महत्वपूर्ण न था। साम्प्रदायिक समस्यापर जब कभी विवाद हुआ है तब बगाल और पजाबके मामलेमे कठिनाई होती रही है। दोनों प्रान्तोमे मुसलमानोका बहुमत है पर अल्प बहुमत है, लगभग ५५ तका बहुमतप्रतिश है। इन दोनों प्रान्तोमे मुसलमानोकी ओरसे यह मांग की गयी कि हमारे लिए पृथक् निर्वाचन भी रहे और कुछ स्थान भी सुरक्षित रहे, यद्यपि दोनों प्रान्तोमे उनका बहुमत था। बंगालमे ब्रिटिश सरकारने यूरोपियनोको अत्यधिक स्थान देकर समस्या और अधिक उलझा दी तथा पंजाबमें गैर मुसलमान—हिन्दुओं और सिखोंमें बाट दिये। सिखोने इस बातपर जोर दिया कि यदि पृथक् निर्वाचन और कुछ स्थान सुरक्षित रखनेकी नीति हो तो हमे महत्त्वपूर्ण अल्पमत सम्प्रदाय होनेके नाते उतना ही महत्त्व और स्थान मिलने चाहिये जितने मुसलमानोंको उन प्रान्तोमे मिले जहा वे अल्पमत है। साम्प्रदायिक निर्णयमे मुसलमानोको दिये गये स्थानोका अनुपात, बंगाल और पंजाबको छोडकर अन्य प्रान्तोमे लगभग वैसा ही था जैसा माटेगू चेम्सफोर्ड सुधारोमे रखा गया था। उसमें यत्रतत्र थोड़ा-सा परिवर्तन किया गया था। बंगालमे हिन्दुओका अल्पमत था। वे सारी जनसख्याके ४४.८ प्रतिशत थे। उन्हे २५० मेंसे केवल ८० स्थान दिये गये अर्थात् कुलमे केवल ३२ प्रतिशत। मुसलमानोंको, जो कि जनसंख्याके ५४.८ प्रतिशत थे, ११९ स्थान दिये गये अर्थात् कुलमें ४७.६ प्रतिशत। यूरोपियनोंको जो कि जनसंख्याके .०१ प्रतिशत थे, २५ स्थान दिये गये अर्थात् कुल स्थानोमेंसे १० प्रतिशत स्थान उन्हें दे दिये गये। इससे यह स्पष्ट है कि मुसलमान, जिनका कि बहुमत था, अल्पमत कर दिये गये, और हिन्दू जो कि पहले ही अल्पमत थे उन्हें उनका उचित भाग भी नही दिया गया ताकि यूरोपियनोको २५०००० गुना अधिक प्रतिनिधित्व दिया जा सके। यहां यह बात उल्लेखनीय है कि जहां हिन्दुओं और मुसलमानों—दोनोंके प्रतिनिधित्वमें कमी की गयी वहां उपेक्षाकृत अधिक कमी हिन्दुओके ही प्रतिनिधित्वमें की गयी। इसका अर्थ यह हुआ कि अन्य प्रान्तोंके विपरीत बंगालमें सबसे छोटे सम्प्रदायको अत्यधिक महत्व देनेके

लिए बहुमतवाले सम्प्रदायकी नहीं, अल्पमतवाले सम्प्रदायकी बलि दी गयी और उसे बहुमतवाले सम्प्रदायकी उपेक्षा कही अधिक त्याग करना पड़ा। पंजाबमें भी सिखोंको अधिक महत्व प्रदान करनेके लिए हिन्दुओंकी ही बलि चढ़ायी गयी यद्यपि वे अल्पमतमे थे और न्यायकी दृष्टिसे उन्हें अधिक स्थान मिलना उचित था। यहा यह बात स्मरण रखनी चाहिये कि इन दोनों प्रान्तोंमे साम्प्रदायिक निर्णयने मुसलमानोका प्रतिनिधित्व इतना घटा दिया कि वह कुलमे अल्पमत बन गया यद्यपि ऐसा होनेपर भी असेम्बलीमें मुसलमानोंका दल ही सबसे बड़ा रहा और उनके स्थान पृथक् निर्वाचनद्वारा उनके लिए सुरक्षित रखे गये थे। ऐसी स्थितिमें हिन्दुओने यदि निर्णयका तीव्र विरोध किया तो इसमे आश्चर्यकी बात ही क्या है। जहा वे बहुमतमें थे वहा भी, और जहा अल्पमतमे थे वहा भी उनसे अत्यधिक त्याग करनेके लिए कहा गया था और बंगालमे तो उनसे बहुमतवाले सम्प्रदायसे भी अपेक्षाकृत अधिक—लगभग दूना त्याग करनेके लिए कहा गया था। सरकार पहलेसे ही जानती थी कि इसका विरोध होगा। इस सम्बन्धमे भारत सरकारकी ओरसे प्रकाशित विज्ञप्तिमें कहा गया कि 'विवादग्रस्त प्रत्येक दलने अपने जितने प्रतिनिधित्वकी माग की है उसे दूसरे दल स्वीकार न करेंगे अतः यह अनिवार्य है कि समझौतेमे प्रत्येकका जितना प्रतिनिधित्व रखा जाय वह उसकी मागसे कम हो। वस्तुतः बात यह है कि समझौता जितना ही उचित और न्यायपूर्ण होगा उतना ही अधिक सम्बन्धित दलोंके लिए वह निराशाजनक होगा। किन्तु चूकि ब्रिटिश सरकार इस मामलेमें सर्वथा उदासीन है और निर्णयद्वारा वह सबसे अधिक कठिन समस्याका ऐसा हल करनेके लिए प्रयत्नशील है जो सबके लिए हितकर हो अतः उसने यह आशा की कि भारतीय उसे उसी सद्भावपूर्वक ग्रहण करेंगे और ईमानदारीसे व्यवहृत करेंगे जिस सद्भावसे सरकारने उसे भारतीय जनताके सम्मुख उपस्थित किया है। अन्तमें यह बता देना उपयुक्त होगा कि भारतमन्त्रीने यह वचन दिया है कि नये भारत शासन-विधानके स्वीकृत होनेके पूर्व यदि भारतके विभिन्न सम्प्रदाय एकमत होकर इससे भिन्न,कोई आम समझौता कर लेगे तो भारतमन्त्री उसे सहर्ष स्वीकार कर लेगे।'

ब्रिटिश सरकार अवश्य ही इस मामलेमें 'सर्वथा उदासीन' है! तभी तो उसने सर्वत्र हिन्दुओंको दण्ड देनेका निश्चय किया, बंगालमें उनका अल्पमत होते हुए भी उनका प्रतिनिधित्व कम कर दिया और उनके मामलेमें मुसलमानोंसे भी अपेक्षाकृत अधिक कटौती कर दी और वह इसलिए कि यूरोपियनोंको २५०००० प्रतिशत प्रतिनिधित्व मिल सके। इसी उदासीनताके कारण पंजाबमें सिखोको उतने स्थान नही दिये गये जितने मुसलमानोको अन्य प्रान्तोंमे दे दिये गये और इसीसे मुसलमानोंको पृथक् निर्वाचन ही नही दिया गया अपितु उनके लिए स्थान भी सुरक्षित कर दिये गये, और ऐसा उन प्रान्तोंमे भी किया गया जहां मुसलमान बहुमतमे थे! इस प्रकार ऐसी स्थिति उत्पन्न करनेके उपरान्त, जिसमें किसी भी प्रकारका साम्प्रदायिक समझौता सर्वथा असम्भव है, सरकारने यह वादा कर दिया कि वह ऐसे किसी भी समझौतेको सहर्ष स्वीकार कर लेगी जो सभी सम्प्रदाय आपसमें मिलकर कर लेगे।

१९३५ के विधानमे जहातक ब्रिटिश भारत और देशी रियासतोका प्रश्न है, उक्त विधान देशी रियासतोके प्रति अधिक उदार है और उसने यह उदारता ब्रिटिश भारतकी बलि चढ़ाकर प्रदर्शित की है। देशी रियासतोमे कुल भारतकी जनसंख्याकी २३ प्रतिशत आबादी है किन्तु उनके शासकोंके संघकी असेम्बलीमें ३३ प्रतिशत और कौसिलमें ४० प्रतिशत मत देनेका अधिकार दिया गया है। यहां यह स्मरण रखना आवश्यक है कि संघ असेम्बलीमे प्रतिनिधि भेजनेका अधिकार देशी रियासतोंकी प्रजाको न होकर शासकोको है। इस भांति संघकी असेम्बलीमें ३३ प्रतिशत स्थान देशी नरेशो द्वारा नामजद करानेकी प्रथा बना रखी गयी है। एक हाथसे दी जानेवाली वस्तु दूसरे हाथसे छीन लेनेका इससे सुन्दर उपाय और क्या हो सकता है?

इतना होनेपर भी, साम्प्रदायिक निर्णयके उपरान्त भी भारतमें साम्प्रदायिक समझौतेके लिए एक प्रयत्न किया गया। वह लगभग पूरा भी हो चला था कि ब्रिटिश सरकारने पुनः उसमें हस्तक्षेप कर उसे असम्भव बना दिया। निम्नलिखित घटनाचक्रसे यह बात स्पष्ट हो जायगी। १६ अगस्त १९३२ को

साम्प्रदायिक निर्णयकी घोषणा की गयी। महात्मा गांधीके अनशन तथा पूना समझौतेके अनुसार हरिजनोंवाले अंशमें संशोधन होनेके उपरान्त पण्डित मालवीय और मौलाना शौकतअलीके बीच सर्वसम्मत साम्प्रदायिक निर्णय तैयार करनेकी बातचीत चली। आरम्भिक वार्ता अत्यन्त आशाजनक प्रतीत हुई। ६ अक्तूबर १९३२ को मौलाना शौकतअलीने वाइसरायसे अपील की कि वे इस वार्तामें सहायता पहुँचानेके लिए या तो महात्मा गाधीको जेलसे मुक्त कर दें अथवा इस सम्बन्धमें उनसे बातचीत करनेकी सुविधा प्रदान करें। ७ अक्तूबर १९३२ को मुस्लिम सर्वदलीय सम्मेलनके अध्यक्षकी ओरसे एक वक्तव्य प्रकाशित किया गया जिसमें यह बात कही गयी कि पृथक् अथवा संयुक्त निर्वाचनका प्रश्न नये सिरेसे खड़ा करनेके लिए यह अवसर सर्वथा अनुपयुक्त है और मुस्लिम सम्प्रदाय इस संरक्षणका त्याग करनेके लिए प्रस्तुत नही है; किन्तु यदि बहुमतवाला सम्प्रदाय अपनी ओरसे ऐसी वार्ता चलाये जिसमे सभी महत्वकी समस्याओपर विचार हो तो ऐसे निश्चित प्रस्तावोपर विचार करनेके लिए मुस्लिम सम्प्रदाय प्रस्तुत है। यह वक्तव्य शिमलासे प्रकाशित हुआ। ९ अक्तूबरको वाइसरायके प्राइवेट सेक्रेटरीने मौलाना शौकतअलीके तारके उत्तरमें उन्हे लिखा कि 'आप जो कार्य करनेकी बात सोच रहे है उसके लिए आपको सबसे पहले स्वयं इस बातका निश्चय कर लेना होगा कि मुस्लिम सम्प्रदाय आमतौरसे आपके साथ है। इस सम्बन्धमे आपका ध्यान उस वक्तव्यकी ओर आर्षित किया जा रहा है जो गत ७ अक्तूबरको अखिल भारतीय मुस्लिम सम्मेलनके अध्यक्ष तथा अन्य लोगोंकी ओरसे प्रकाशित किया गया है।'※ यहां इस बातकी ओर ध्यान दिलानेकी कोई आवश्यकता नहीं प्रतीत होती कि वाइसरायके प्राइवेट सेक्रेटरीने मौलाना शौकतअलीके ६ अक्तूबरके तारका तबतक कोई उत्तर नहीं दिया जबतक ७ अक्तूबरको मुस्लिम सर्वदलीय सम्मेलनका वक्तव्य प्रकाशित नहीं हो गया, जिसका कि उल्लेख उन्होंने ९ अक्तूबरको भेजे गये अपने उत्तरमें

※ 'ऐनुअल रजिस्टर' १९३२, भाग २, पृष्ठ २८१–२८२.

किया। २६ अक्तूबरको मौलाना शौकतअलीने अपना अनुरोध पुनः दोहराया और वाइसरायसे निवेदन किया कि वे सभी सम्बन्धित व्यक्तियोंपर अपना प्रभाव डालकर ऐसा प्रयत्न करें जिससे सबमे समझौता हो जाय, इससे सभीका हित होगा। इसका उत्तर तत्काल, दूसरे ही दिन २७ अक्तूबरको मिला। उसमें कहा गया था कि गांधीजी सविनय अवज्ञा आन्दोलनसे जबतक स्पष्टतः अपनेको पृथक् नही कर लेते तबतक यह अनुरोध स्वीकार नही किया जा सकता। तब यह अनुरोध किया गया कि गांधीजीसे मुलाकातकी ही सुविधा प्रदान कर दी जाय पर उसका भी यही उत्तर मिला कि २७ अक्तूबरवाले उत्तरसे यह बात स्पष्ट है कि गाधीजीसे मुलाकातोकी भी सुविधा नही दी जा सकती।

सरकारी रुखसे हतोत्साह न होकर १६ अक्तूबरको लखनऊमे सर्वदलीय मुसलिम सम्मेलनका आयोजन किया गया। उसमे सर्वसम्मतिसे एक प्रस्ताव स्वीकृत हुआ जिसमें हिन्दुओ तथा सिखोके प्रतिनिधियोसे परामर्श करनेके लिए सम्मेलनकी एक समिति नियुक्त करनेके पण्डित मालवीयके प्रस्तावका स्वागत किया गया और वस्तुतः साम्प्रदायिक समस्याका सर्वसम्मत हल खोजनेके उद्देश्यसे एक समिति संघटित भी कर ली गयी। ३ नवम्बर १९३२ को प्रयागमें ऐक्य सम्मेलनकी बैठक आरम्भ हुई। इसमे ६३ हिन्दू, ११ सिख, ३९ मुसलमान और ८ भारतीय ईसाई सम्मिलित हुए। सम्मेलनने समझौता करने और रिपोर्ट देनेके लिए दस व्यक्तियोकी एक समिति नियुक्त कर दी। इस समितिकी बैठकें प्रतिदिन होने लगी और इसने ऐसी अनेक बातोंपर कितने ही प्रस्ताव स्वीकृत किये जिनपर मतभेद होते थे या हो सकते थे। यहांतक कि बगाल और पंजाबके सबसे अधिक विवादास्पद प्रश्नपर भी, हिन्दुओं और मुसलमानोंमे एक समझौता हो गया। हिन्दू संयुक्त निर्वाचन पद्धतिद्वारा मुसलमानोके लिए ५१ प्रतिशत स्थान सुरक्षित रखनेके लिए प्रस्तुत हो गये। अवशिष्ट अधिकार केन्द्रमें रहें अथवा संघकी विभिन्न इकाइयोंके हाथमें, इस प्रश्नपर भी सर्वसम्मत उपाय खोज लिया गया जिससे सभी दल सन्तुष्ट हो गये। सयुक्त निर्वाचन-पद्धति भी स्वीकार कर ली गयी थी परन्तु उसमें यह शर्त थी कि उम्मेदवारको

अपने सम्प्रदायके कमसे कम ३० प्रतिशत मत प्राप्त करने होंगे अन्यथा उनके स्थानपर वे उम्मेदवार चुने जायंगे जिन्हें अपने सम्प्रदायके सबसे अधिक मत प्राप्त होंगे। केन्द्रीय असेम्बलीमें मुसलिम प्रतिनिधित्वका प्रश्न भी हल हो गया था। वहां ३२ प्रतिशत प्रतिनिधित्व स्वीकार कर लिया गया था। दोनों दल स्थान-स्थानपर झुक गये थे और दूसरे-दूसरे स्थानोपर उन्हें उसके बदलेमें अधिक लाभ मिल गया था।

बस एक ही प्रश्न रह गया था जिसपर केवल हिन्दुओं और मुसलमानोंका समझौता ही पर्याप्त नही था। वह प्रश्न था बंगालमें यूरोपियनोंको अत्यधिक स्थान देनेका। हिन्दू और मुसलमान प्रतिनिधियोके समझौतेके अनुसार बंगालमें इन दोनों सम्प्रदायोने मिलकर कुल ९५.७ प्रतिशत स्थान लेनेका निश्चय किया था। उस स्थितिमें यूरोपियनोको १० प्रतिशत स्थान नही मिल सकते थे। अतः यह निश्चित हुआ कि हिन्दू और मुसलमान दोनों ही कलकत्ते जाकर यूरोपियनोंसे इस विषयपर विचार-विमर्श करें। इतनी कारखाईके उपरान्त सम्मेलनका प्रयागवाला अधिवेशन समाप्त हुआ।

पाठकोको स्मरण होगा कि साम्प्रदायिक निर्णयमें केन्द्रीय असेम्बलीमें मुसलिम प्रतिनिधित्वकी बात भविष्यमें निर्णय करनेके लिए छोड़ दी गयी थी तथा सिन्धके विषयमे यह कहा गया था कि यदि उसकी आयके समुचित साधन निकल आयेंगे तो वह पृथक् प्रान्त बना दिया जायगा। जिस समय पण्डित मालवीयजी अन्य मुसलिम प्रतिनिधियोंके साथ यूरोपियनोंके प्रतिनिधित्वकी समस्या हल करनेके लिए कलकत्ते जा रहे थे, ठीक उसी समय समाचारपत्रोंमें यह समाचार प्रकाशित हुआ कि सर सेमुएल होरने यह घोषणा की है कि ब्रिटिश सरकारने केन्द्रीय असेम्बलीमें ब्रिटिश भारतीय स्थानोंमें ३३ प्रतिशत स्थान मुसलनानोंको देनेका निश्चय किया है। उसने सिन्धको केवल पृथक् प्रान्त बनानेका ही नहीं, केन्द्रीय सरकारसे पर्याप्त आर्थिक सहायता दिलानेका भी निश्चय किया है। इस प्रकार ऐन मौकेपर सर सेमुएल होरकी घोषणाने उस ऐक्य सम्मेलनके सारे प्रयत्नोंपर पानी फेर दिया, जिसकी सप्ताहों बैठक हुई

थी और बड़ी कठिनाईसे जिसने सभी प्रश्नोंको हल कर हिन्दुओं, मुसलमानों, सिखों, ईसाइयों तथा अन्य भारतीय सम्प्रदायोंमें सर्वसम्मत समझौता करा पाया था। ऐसी स्थितिमें किसी सर्वसम्मत समझौतेकी आशा करना सर्वथा व्यर्थ था, जब कि यह स्पष्ट हो गया कि किसी भी सर्वथा उचित और संगत समझौतेमें अड़ंगा लगानेके लिए एकाध दल सदैव प्रस्तुत बना रहेगा और ब्रिटिश सरकार ऐसे ऊंचीसे ऊंची बोलीपर गिरनेवाले दलको न्यायोचित समझौतेसे भी अधिक अच्छी शर्तें देनेके लिए सदा प्रस्तुत है।

१०

अन्तरका विस्तार

हमलोगोंने देखा है कि साम्प्रदायिक निर्णयने दलित जातियोंके लिए भी अलग प्रतिनिधित्व और जगहें सुरक्षित कर दी थी। इस निर्णयमें पूना समझौता के बाद सुधार हुआ। पूना समझौतेका आधार महात्मा गांधीका ऐतिहासिक उपवास था। इस समझौतेके अनुसार दलित जातियोंको उससे कही अधिक जगहें मिलीं, जितनी उनके लिए साम्प्रदायिक निर्णय द्वारा सुरक्षित थी और जिनकी चुनावके विशेष तरीके द्वारा पूर्ति की जानेवाली थी। पूना समझौते-का आधार ब्रिटिश प्रधान मन्त्रीकी यह घोषणा थी कि यदि वे दल जिनका साम्प्र-दायिक निर्णयसे किसी तरहका सम्बन्ध हो, नये शासन विधानके निर्माणके पहले आपसमें किसी तरहका समझौता कर लें तो वह शासन विधानके लिए मान्य होगा। इलाहाबादमें जो एकता सम्मेलन हुआ था उसका यही उद्देश्य था कि मुसलमानों तथा भिन्न-भिन्न चातियोंमें समझौतेद्वारा साम्प्रदायिक निर्णयमें सुधार करा दिया जाय। हमलोगोंने देखा कि ऐन मौकेपर जब सफलता सामने दीख पड़ती थी, वह भंग हो गया। इससे हिन्दुओं और सिखोंका विरोध

किसी भी प्रकार शान्त नहीं हो सका। एक ओर तो इनका विरोध उत्तरोत्तर उग्ररूप धारण कर रहा था और दूसरी ओर शासन-सुधारका काम अबाध गतिसे आगे बढ़ रहा था। ब्रिटिश सरकारने साफ कह दिया था कि भारतकी भिन्न भिन्न जातियोंमें यदि समझौता न भी हुआ तो भी शासन-सुधारका काम नहीं रुकेगा। तदनुसार अगस्त १९३२ में उसने साम्प्रदायिक निर्णयकी घोषणा भी कर दी। लेकिन शासन-सुधार बिल स्वीकृत करानेमें उसे तीन साल लग गये। १९३५ के जूनमे यह पूरा हुआ, इस बीच कांग्रेस दूसरी अग्निपरीक्षासे निकल चुकी थी। उसने अपना मत स्पष्ट शब्दोमें प्रकट किया। दोनों जातियों—हिन्दू और मुसलमान—में मतभेद होनेके कारण साम्प्रदायिक निर्णयको न तो उसने स्वीकार ही किया और न अस्वीकार ही। यह निर्णय १९३४ में बम्बईकी बैठकमे हुआ था। इससे कुछ ही दिन बाद केन्द्रीय व्यवस्थापक सभाका चुनाव हुआ और काग्रेसकी इस तटस्थताकी नीतिको उसपर आक्रमण करनेका साधन बनाया गया। इतनेपर भी अधिकांश प्रान्तोमें कांग्रेसको चुनावमें सफलता मिली। बगालके सदस्योको यह सुविधा दे दी गयी थी कि अन्य विषयोंमें कांग्रेसके आदेशका पालन करते हुए साम्प्रदायिक निर्णयके सम्बन्धमें अपना मत प्रकट करनेके लिए वे स्वतन्त्र हैं। साम्प्रदायिक निर्णयके कारण वाद-विवाद उत्पन्न होने तथा ब्रिटिश सरकारकी नीतिके कारण परस्पर वैमनस्य खूब बढा। १९३५ में काग्रेसके अध्यक्षने मुस्लिम लीगके अध्यक्षसे भेंट की और किसी निर्णयपर पहुँचनेका यत्न किया, लेकिन सफलता नही मिली।

जून १९३५ मे भारत शासन-विधान स्वीकृत हुआ। १९३६-३७ के जाड़ेमे नये शासन-सुधारके अनुसार प्रान्तीय व्यवस्थापक सभाओका चुनाव हुआ। १९३६ के अप्रलमे मुसलिम लीगका अधिवेशन बम्बईमे हुआ। इस अधिवेशनमें इस आशयका प्रस्ताव पास हुआ कि ब्रिटिश सरकारको कोई अधिकार नहीं है कि वह भारतीय जनताकी इच्छाके विरुद्ध कोई भी शासन-सुधार उसपर लादे ; तो भी उसमें जो भी उपयोगी बातें हैं उन्हें दृष्टिमें रखते हुए उनपर अमल किया जाय। यद्यपि इसमें इस तरहकी बाधाएँ है जिससे मन्त्रिमण्डल तथा

व्यवस्थापककी जिम्मेदारियां नगण्य हो जाती है। साथ ही संघशासनका घोर विरोध किया गया। कहा गया कि संघशासन अनुदार, प्रतिक्रियावादी, तथा हानिकर है और ब्रिटिश भारतीय जनता एवं देशी नरेशोके स्वार्थोंका घातक है—स्वाधीनता प्राप्त करनेकी भारतीयोकी आकाक्षाके मार्गमे सबसे बड़ा बाधक है। भारतके कल्याणकी दृष्टिसे यह किसी भी तरह ग्राह्‌य नही हो सकता। स्मरण रखनेकी बात है कि भारतके स्वायत्त शासनकी प्राप्तिके मार्गमें सघशासनको बहुत बड़ा बाधक समझकर ही उसकी निन्दा की गयी। भारतके कल्याणकी दृष्टिसे भी वह ग्राह्य नही हो सकता था, न कि इसलिए कि सघ शासनका निर्माण अथवा अन्य किसी प्रकारसे वह मुसलमानोके हितोको हानि पहुँचानेवाला था। इसके बाद लीगने पार्लमेण्टरी बोर्ड बनाया। इसने जो घोषणापत्र जारी किया उसीके आधारपर लीग चुनाव लडी। उस घोषणापत्रमें कहा गया था—"भिन्न-भिन्न व्यवस्थापक सभाओमे हमारे प्रतिनिधि जिन सिद्धान्तोके आधारपर काम करेंगे वे निम्न प्रकार होगे:—

(१) यह कि वर्तमान प्रान्तीय शासन-विधान तथा प्रास्तावित केन्द्रीय शासन-विधानके स्थानपर शीघ्रातिशीघ्र लोकतान्त्रिक स्वायत्त शासन स्थापित किया जाय।

(२) यह कि भिन्न-भिन्न व्यवस्थापक सभाओंके लीगी प्रतिनिधि राष्ट्रीय जीवनके विविध अगोकी पूर्तिके लिए तबतक व्यवस्थापक सभाओंका प्रयोग करेंगे जबतक वे उससे अधिकसे अधिक लाभ प्राप्त कर सकेंगे। जबतक कि पृथक् निर्वाचन प्रणाली कायम रहती है तबतक मुसलमान प्रनितिधियोका अलग दल रहेगा। लेकिन दलका उद्देश्य मुसलिम लीगके उद्देश्यके समान होगा उसके साथ लीगके प्रतिनिधि सहयोग करनेके लिए पूर्ण स्वतन्त्र होगे" घोषणापत्रमें जो कार्यक्रम दिया गया था उसमें मुख्यत: मुसलमानोंके लिए दो ही धाराएँ थी:—(१) मुसलमानोंके धार्मिक अधिक़ारोंकी रक्षा, तथा (२) मुसलमानोकी साधारण अवस्थाके सुधारका यत्न। इनके अलावा अन्य जो बातें थी उनका सम्बन्ध बिना किसी धार्मिक भेद भावके सर्वसाधारणसे था ; जैसे,

दमनकारी कानूनों, भारतीयोंकी आकांक्षाओंके प्रतिरोधक, नागरिक स्वतन्त्रताके बाधक तथा देशका आर्थिक शोषण करनेवाले कानूनोंका अन्त, शासन और सेना-के व्ययमे कमी, राष्ट्रीय निर्माण कार्य तथा औद्योगिक उन्नतिके लिए अधिक धनकी स्वीकृति, देशके हितकी दृष्टिसे करेन्सी और एक्सचेञ्जकी नीतिका निर्धारण और देहातोंका उत्थान। चुनावमें या तो लीगने सभी प्रान्तोंकी मुसलिम सीटोके लिए उम्मेदवार नही खड़े किये या हार गयी। इसके प्रतिकूल कांग्रेसने प्रायः सभी गैर-मुसलिम सीटो तथा चन्द मुसलिम सीटोके लिए उम्मेदवार खड़े किये। चुनावका निम्नलिखित परिणाम हुआ:—

प्रान्त	कुल सीटें	कांग्रेसने जीता	कुल मुस्लिम सीटें	लीगने जीता	दूसरे मुसलमानोंने जीता
मद्रास	२१५	१५९	२८	११	१७
बम्बई	१७५	८६	२९	२०	९
बंगाल	२५०	५४	११७	४०	७७
संयुक्तप्रान्त	२२८	१३४	६४	२७	३७
पंजाब	१७५	१८	८४	१	८३
बिहार	१५२	९८	३९	०	३९
मध्यप्रान्त	११२	७०	१४	०	१४
सीमाप्रान्त	५०	१९	३६	०	३६
आसाम	१०८	३३	३४	९	२५
उड़ीसा	६०	३६	४	०	४
सिन्ध	६०	७	३६	०	३६
	१५८५	७१४	४८५	१०८	३७७

इस तालिकासे स्पष्ट है कि पांच प्रान्तोंमें कांग्रेसका बहुमत था। बम्बई और सीमाप्रान्तमें कतिपय स्वतंत्र दलके उम्मेदवारोने चुने जानेके बाद कांग्रेसका साथ दिया।

इस तरह उन प्रान्तोंमें भी कांग्रेसका बहुमत हो गया और वह अपना मन्त्रिमण्डल बना सकी। जिन प्रान्तोंमें मुसलमानोंकी जनसंख्या अधिक है उन प्रान्तोंमें भी लीगको बहुमत प्राप्त नहीं हो सका। जैसे बंगाल, पंजाब, सीमाप्रान्त तथा सिन्धमें भी लीगको बहुमत नहीं प्राप्त हो सका। इसलिए वह मुसलिम या गैर-मुसलिम अन्य दलोंकी सहायता बिना लीगी मन्त्रिमण्डल नही बना सकती थी। चार प्रान्तोंमें तो लीगको एक भी सीट नही मिली। पंजाबमें केवल एक सीट मिली। जब मन्त्रिमण्डल बनानेका समय आया तो कांग्रेसने मन्त्रिमण्डल बनाना यह कहकर इनकार कर दिया कि जबतक सरकारकी ओरसे यह आश्वासन नही मिलता कि अपने हस्तक्षेपके विशेषाधिकारका प्रयोग गवर्नर नही करेंगे और वैधानिक मामलोंमें अपने मन्त्रिमण्डलकी सलाहको अस्वीकार नही करेंगे तबतक कांग्रेस मन्त्रिमण्डल संघटित करनेके लिए तैयार नही है। चूंकि गवर्नरोंने आवश्यक आश्वासन नही दिया इसलिए कांग्रेसने पदग्रहण नहीं किया। जिन बातोंके लिए कांग्रेस आश्वासन माग रही थी उनका सम्बन्ध गवर्नरकी खास जिम्मेदारियोंसे था अर्थात् वे मामले जिनके बारेमें अपने मन्त्रियोंसे सलाह लिये बिना ही गवर्नर अपना निर्णय दे सकता था अथवा वे मामले जिनके बारेमें अपने मन्त्रियोंसे सलाह लेनेके बाद भी वह अपना स्वतन्त्र निर्णय दे सकता था। गवर्नरकी कुछ जिम्मेदारियोंको एकत्र करके देखा जाय तो सर सेमुएल होरके शब्दोंमें शासनका सम्पूर्ण क्षेत्र उसके अन्दर आ जाता है जैसे प्रान्तकी शान्तिको खतरेमें डालनेवाली व्यवस्थाको रोकना, अल्पसख्यक समुदायके वास्तविक स्वार्थोंकी रक्षा, पबलिग सर्विसके सदस्यों और उनके आश्रितोंके अधिकारों और उचित स्वार्थों, चाहे वे जो भी हों—की रक्षा, शासनके क्षेत्रमें रोकटोक, ब्रिटिश जनता और ब्रिटिश कारबारके प्रति विशेष व्यवहार, आंशिक सुरक्षित क्षेत्रोंके सुशासन तथा शान्तिकी व्यवस्था, देशी राज्यों तथा उनके शासकोंके अधिकारोंकी रक्षा और बड़े लाटके आदेशों और आज्ञाओंका अपने विचारके अनुसार पालन।*

---

* चिन्तामणि एण्ड मसानी—इण्डियाज कान्स्टिट्यूशन ऐट वर्क, पृष्ठ ९१-९२

अल्पसंख्यकोंके उचित स्वार्थोंकी रक्षाका प्रश्न ही एक ऐसी बात है जो शासनके सम्पूर्ण क्षेत्रको घेर लेती है और मुसलमानोंको छोड़कर भी अल्पसंख्यक समुदायमें ब्रिटिश जनता तथा अनेक अन्य अल्प समुदाय आ जाते है। इतनेपर भी भारत-मन्त्री लार्ड जेटलैण्डने यह कहते हुए कि शासन विधानमें संशोधन किये बिना इस तरहका कोई आश्वासन नही दिया जा सकता, उस अवस्थाको उदाहरणके रूपमें पेश किया जो उस हालतमे उत्पन्न हो सकती थी यदि कांग्रेस मन्त्रिमण्डल अल्प समुदायके स्वार्थके विरुद्ध आचरण करे। आपने कहा—"अल्प संख्यक समुदायके स्कूलोकी संख्या घटा देना कांग्रेसके मन्तव्यके भीतर ही होगा क्योकि वह वैधानिक ही होगा। और वंधानिक कार्यके बाहर उसकी गिनती नही हो सकेगी। इस तरह गवर्नर अल्प संख्यकोकी रक्षा नही कर सकेंगे। पार्लमेण्ट इस बातको समझती थी कि इस तरहकी काररवाइया विधानके अन्दर हो सकती है इसलिए उसने संरक्षण लगा दिये।"* अल्पसंख्यक समुदायका हवाला देना स्पष्ट मतलब रखता था और उसका पूरा असर भी हुआ। काग्रेसने यह आश्वासन केवल काग्रेसी मन्त्रिमण्डलके लिए नही मागा था। अन्य प्रान्तोके बहुसख्यक दल भी कांग्रेसकी इस मांगका समर्थन कर सकते थे और इस तरह वैधानिक कार्योमे गवर्नरोके हस्तक्षेपसे मन्त्रियोको बहुत अंशतक स्वतन्त्र कर सकते थे। लेकिन उन लोगोंने साथ नही दिया और बिना किसी आश्वासनके मन्त्रिमण्डलका संघटन कर लिया। इसके बाद जो वादविवाद चला उससे इतना तो स्पष्ट हो गया कि काग्रेस-मन्त्रियोके कामोमें आसानीसे और बार बार हस्तक्षेप नही किया जायगा। राजनीतिक जीवनके ये विचित्र अनुभव है जहां अविवेककी प्रधानता दिखायी देती है। आश्वासनकी यह माग सभी मन्त्रिमण्डलके लिए समान रूपसे थी तो भी यह कहा गया कि यह मांग केवल काग्रेसी मन्त्रिमण्डलोंके लिए है। भारत-मन्त्रीने इस बातपर विशेष जोर दिया कि कांग्रेसी मन्त्रिमण्डल अपने अधिकारोंका प्रयोग अल्पसंख्यक

---

* चिन्तामणि एण्ड मसानी—इण्डियाज कान्स्टिट्यूशन ऐट वर्क, पृष्ठ १०६।

समुदायोंके स्वार्थोंके विरुद्ध कर सकता है और लीगने भी इसे स्वीकार कर लिया कि इसी हेतु आश्वासन मांगा जा रहा है। लीग इससे भी आगे बढ़ गयी। लीगके हिमायतियोंने यहातक कहना शुरू किया कि कांग्रेस इसलिए आश्वासन चाहती है कि वह अपने अधिकारोका दुरुपयोग कर मुसलमानोंको सतावे। लीग-के हिमायतियोने यहा एक बात तो सामने रखी और शासनकी अन्य बाते जिनके लिए आश्वासन मागा जा रहा था, पर्देकी ओटमें कर दी। जहा जहा जरूरत पड़ी काग्रेस-मन्त्रिमण्डलने त्यागपत्र देकर अथवा त्यागपत्रकी धमकी देकर गवर्नरोको उनकी सलाह मानकर काम करनेके लिए बाध्य किया लेकिन इस तरहके एक भी ऐसे अवसर नही बतलाये जा सकते जहां काग्रेसी मन्त्रि-मण्डलने अल्पसख्यक समुदायके स्वार्थोको हानि पहुंचानेके लिए इस तरहकी धमकीसे गवर्नरोको बाध्य करनेका यत्न किया हो। वाद-विवादके फलस्वरूप आगे चलकर १९३७ के जुलाई मासमें काग्रेसने मन्त्रिमण्डल बनानेका निश्चय किया। प्रश्न यह उठा कि लीगको साथ लेकर वह संयुक्त मन्त्रिमण्डल कायम करे। जिन प्रश्नोमें लीगके एक भी सदस्य व्यवस्थापक सभाओमें नही थे, वहां लीगको साथ लेनेका प्रश्न ही नही उठता था, जैसे बिहार, उड़ीसा और मध्यप्रान्त। बम्बई और युक्तप्रान्तमें इसके लिए यत्न किया गया लेकिन फल कुछ नही हुआ। काग्रेस एक निश्चित ध्येय और उद्देश्य लेकर व्यवस्थापक सभामे गयी थी। इसलिए जो लोग उस उद्देश्य और कार्यक्रमको स्वीकार करनेके लिए तैयार नहीं थे उनके सहयोगसे मन्त्रिमण्डल संघटित करना कांग्रेसने मतदाताओंके प्रति विश्वासघात समझा।

कांग्रेसका कार्यक्रम भी ऐसा नही था जिसका साम्प्रदायिक आधारपर विरोध किया जाता। यद्यपि कार्यक्रमके कुछ अंशोपर सभी मत और धर्मवालोंका सामूहिक मतभेद हो सकता था। तात्पर्य यह है कि कांग्रेसका कार्यक्रम साम्प्र-दायिक कार्यक्रम नहीं था जिससे मुसलमानोंसे किसी तरहका मतभेद होता। कांग्रेसका कार्यक्रम पूर्ण राजनीतिक और आर्थिक था और इस कार्यक्रमको जिन मुसल्मानोंने अपनाया वे महज उसके कारण गैर-मुसलमान नहीं हो गये।

स्वभावतः कांग्रेसने उन मुसलमानोंकी अपेक्षा जिन्होंने इस कार्यक्रमको नही अपनाया, उन्हें ज्यादा पसन्द किया जिन्होने इसे अपनाया। कांग्रेसने इस वैधानिक सिद्धान्तपर अटल रहना निश्चय किया कि मन्त्रिमण्डल मेल खानेवाले तत्वोसे ही बनाया जाना चाहिये। इसलिए उसने मन्त्रिमण्डलमे उन्ही लोगोंको रखा जिनका काग्रेस कार्यक्रममे विश्वास था। इसमे मुसलमान भी शामिल थे। उसने उन्ही मुसलमानोको मन्त्रिमण्डलमें शामिल किया जो कांग्रेस-दलके थे। यही काग्रेसका सबसे बडा अपराध था। लार्ड जेटलैण्डने जिस बातकी ओर संकेत किया था उसका काग्रेसके विरुद्ध प्रचारके लिए पूरा उपयोग किया गया। मन्त्रिमण्डलमे मुसलमानों तथा अन्य अल्पसंख्यक समुदायोको उनके अनुपातसे ज्यादा प्रतिनिधित्व दिया गया। ११ प्रान्तोमे कुल मिलाकर ७१ मन्त्री थे। इनमे २६ मुसलमान १० अन्य अल्प-सख्यक समुदाय तथा ३५ हिन्दू थे। जिन प्रान्तोमे कांग्रेस मन्त्रिमण्डल था उनमे कुल ३५ मन्त्री थे। इनमे ६ मुसलमान, ५ अन्य अल्प-सख्यक समुदायके मन्त्री थे। आगे चलकर काग्रेसने दो प्रान्तोंमे सयुक्त मन्त्रिमण्डल बनाया। इससे मुस्लिम मन्त्रियोंकी संख्या और भी बढ गयी। सीमाप्रान्तमे प्रधानमन्त्री डाक्टर खां साहबको लेकर चार मन्त्री थे। इनमे तीन मुसलमान थे। आसाममें सातमेसे तीन मुसलमान और पांच गैर-मुसलमान मन्त्री थे। ये आकड़े लीगी प्रचारकोंकी झुठाई प्रत्यक्ष साबित कर देते है।*

१९३७ की जुलाईके मध्यमें कांग्रेसने पद ग्रहण किया। कांग्रेस मुश्किलसे आठ महीनेतक अधिकारपर रही होगी कि ३० मार्च १९३८ को अखिल भारतीय मुसलिम लीगकी कौंसिलने इस आशयका प्रस्ताव पास किया कि केन्द्रीय कार्यलयमे इस तरहकी अनेक शिकायतें पहुँची है कि कांग्रेस-मन्त्रिमण्डलके भिन्न-भिन्न प्रान्तोंमें मुसलमानों, खासकर लीगके कार्यकर्ताओंको अनेक तरहसे सताया और तंग किया जा रहा है। इसलिए लीगकी यह कौंसिल निम्नलिखित

---

* अशोक एण्ड पटवर्धन—कम्यूनल ट्रिएंगिल, पृ० ११४।

सदस्योंकी एक जांच-समिति बनाती है जो आवश्यक जांच कर सामग्री संग्रह कर उचित काररवाई करे और समय समयपर कौसिलको रिपोर्ट देती रहे। इस कमेटीके अध्यक्ष पीरपुरके राजा साहब थे। इसने १५ नवम्बर १९३८ को अपनी रिपोर्ट पेश की। इस रिपोर्टमे जो शिकायतें की गयी थी उनका विस्तृत विवेचन करना सम्भव नही है। यहा इतना ही कह देना उचित होगा कि रिपोर्टके प्रकाशित होनेपर काग्रेस मन्त्रिमण्डलोने उनकी छानबीन की और विज्ञ-प्तिके रूपमें विस्तृत उत्तर दिया। कुछ शिकायतोपर तो व्यवस्थापिका सभाओ-तकमें बहस हुई। इन अभियोगोके स्वतन्त्र जांचकी कसौटीपर नही कसने दिया गया। श्री फजलुलहकने जो उस समय लीगके प्रधान सदस्य थे पण्डित जवाहरलाल नेहरूको खुला चैलेंज दिया। पण्डितजीने उनका चैलेज स्वीकार किया और उनके साथ यात्रा कर उन अभियोगोकी जाच करनेके लिए तैयार हो गये ; लेकिन श्री हक उसे पूरा करनेके लिए कभी खड़े नही हुए। १९३९ में मै ही काग्रेसका अध्यक्ष था। मैंने श्री जिनाको १९३९ के अक्तूबरमे लिखा कि कांग्रेस मन्त्रिमण्डलपर जो अभियोग लगाये गये है उनकी निष्पक्ष जाच करायी जाय और उसके लिए मैंने फेडरल कोर्टके चीफ जस्टिस श्री मारिस ग्वायरका नाम भी पेश किया। लेकिन श्री जिनाने इसे कबूल नही किया। उत्तरमें उन्होने लिख भेजा:—अब वह मामला बड़े लाटके हाथमे है। वही उपयुक्त व्यक्ति हैं जो काररवाई कर सकते है और जिन प्रान्तोमे कांग्रेस मन्त्रिमण्डल है उन प्रान्तोंके मुसलमानोंकी रक्षाका समुचित प्रबन्ध कर सकते है। लेकिन न तो बड़े लाटने, न किसी प्रान्तके गवर्नरने और न स्वयं लार्ड जेटलैण्डने ही जो कांग्रेस-मन्त्रिमण्डलके जीवनकालतक भारतमन्त्री थे, मुसलमानों अथवा अन्य अल्पसंख्यक समुदायपर कांग्रेस मन्त्रिमण्डलद्वारा किये गये किसी अत्याचारका अभियोग लगाया। जहांतक मुझे मालूम है न तो बड़े लाटने ही श्री जिनाद्वारा भेजे गये अभियोगोंकी जांचकी और न श्री जिनाने ही उस सम्बन्धमें बड़े लाटसे किसी तरहकी दोबारा लिखा पढ़ी की। आगे चलकर श्री जिनाने इन अभियोगोंकी जांचके लिए रायल कमीशनकी मांग की लेकिन यह

भारत सरकारको कबूल नही हुआ, इसलिए वह ज्योंका त्यों पड़ा रह गया।
पद-त्यागके पहले पार्लमेण्टरी बोर्डके आदेशसे प्रत्येक प्रान्तके कांग्रेसी मन्त्रि-मण्डलने अपने प्रान्तोके गवर्नरोसे पूछा था कि काग्रेस मन्त्रिमण्डलने मुसलमानों अथवा अन्य अल्पसख्यक समुदायोके साथ जो ज्यादतियां की है उनका उल्लेख हो जाना चाहिये। लेकिन किसी प्रान्तके गवर्नर एक भी ऐसा उदाहरण पेश नहीं कर सके। अपने पदसे अलग हो जानेके बाद सयुक्तप्रान्तके गवर्नर सर हेरी हेगने काग्रेस मन्त्रिमण्डलके विवेक और विचारपूर्ण नीतिकी प्रशसा अवश्य की। सर हेग कभी भी कांग्रेसके हिमायती नही थे। इस तरह कांग्रेस मन्त्रिमण्डलपर लगाये गये अभियोग केवल कागजी रह गये जो कभी भी साबित नही किये जा सके। लेकिन वे लीगके प्रचारके प्रधान अग बन गये और लीगने उनका मनमाना उपयोग किया।

उस अभियोगकी मुख्य बाते यहा दे देना अनुचित नही होगा। दोनों प्रमख सम्प्रदायोके बीच कलहका एक कारण वन्देमातरम् राष्ट्रीय गान बतलाया गया है। वन्देमातरम् गीत १९वी सदीके अन्तिम भागमें बनाया गया था। इस सदीके आरम्भिक कालतक यह गीत केवल बगालमें ही नहीं, बल्कि अन्य प्रान्तोमे भी सर्वप्रिय बना रहा। तबसे यह केवल कांग्रेसमें ही नही, बल्कि दूसरे जलसोमे भी बराबर गाया जाता रहा है। स्वयं श्री जिना कमसे कम १५ सालतक कांग्रेसके प्रधान नेता थे और यह गीत वहां बराबर गाया जाता था। लेकिन तब उन्हे मुसलिम दृष्टिकोणसे एतराजकी कोई बात उस गीतमे दिखायी नही पड़ी। खिलाफत आन्दोलनके समय यह अनेकों जलसोंमें गाया गया जब कांग्रेसको मुसलमानोका सहयोग उस तरहका प्राप्त था जैसा कभी प्राप्त नही हुआ। उस समय किसीने इसका विरोध नही किया। लेकिन कांग्रेस-मन्त्रिमण्डलकी स्थापनाके बाद ही यह गीत मुस्लिम वैमनस्यका प्रधान कारण बन गया और इस अभियोगकी पहले पहल चर्चा भी पीरपुर रिपोर्टमें हुई। कांग्रेसने उस शिकायतको भी दूर करनेका यत्न किया और एतराजका शमन करनेके लिए उसने निश्चय किया कि उस गीतके केवल दो ही पद गाये

जायं। इस तरह धार्मिक आधारपर जो एतराज हो सकता था उसे दूर कर दिया गया। तब यह कहा जाने लगा कि उस गीतके पीछे जो इतिहास है उसे मुसलमान नही भूल सकते। यह स्मरण रखनेकी बात है कि बंगालके बाहर कोई भी यह नही जानता था कि इस गीतके पीछे कौनसा इतिहास छिपा है जबतक कि इसे एतराजका कारण बनानेके लिए उसे प्रकट करनेका प्रयास नही किया गया।

दूसरा अभियोग तिरगा झण्डा है। यह तिरंगा झण्डा उस समय प्रकट हुआ जब खिलाफत आन्दोलनके युगमें कांग्रेसको मुसलमानोंका सहयोग प्राप्त था। उस समय हिन्दू और मुसलमान दोनोंने इसे राष्ट्रीय झण्डाके रूपमें स्वीकार किया। वन्देमातरम् गीतकी तरह यह भी ब्रिटिश सरकारके कोपका भाजन बन गया क्योकि दोनोंको उसने क्रान्तिका प्रतीक माना और दोनोंको मटियामेट कर देना चाहा। इसलिए यह उन समस्त हिन्दुओं और मुसलमानोका प्रिय पात्र बन गया जिन लोगोंको इसकी मर्यादाकी रक्षाके लिए जेल जाना पड़ा, लाठियां खानी पड़ी और गोलीतकका शिकार होना पड़ा। कांग्रेस-मन्त्रिमण्डलके संगटनके पहले मुसलमानोकी तरफसे कभी कोई एतराज इसके खिलाफ नही पेश किया गया। यहां यह भी बतला देना चाहिये कि हिन्दू इसे अपना हिन्दू झण्डा नही मानते क्योंकि उनका झण्डा अलग ही है।

तीसरा अभियोग कांग्रेसका मुसलिम जनसम्पर्कका प्रस्ताव है। कमसे कम पचीस वर्षोंसे कांग्रेसका कार्यक्रम सार्वजनिक आन्दोलन रहा है जो अनेक सत्याग्रह आन्दोलनोंसे प्रकट है। इसकी पुकारपर देशको आजाद करनेके लिए जनसाधारणने अनेक तरहकी यातनाएं सही हैं। इन आन्दोलनोमें मुसलमान भी शामिल रहे हैं और कष्ट झेले है। इन आन्दोलनोंका विस्तृत वर्णन यहां आवश्यक नहीं। यदि कांग्रेस मुसलिम जनतातक देशकी दशाका सन्देश पहुंचाकर उन्हें जाग्रत करना चाहती है तो यह अपराध किस तरह हुआ, यह समझमें नहीं आता। जबतक यह न मान लिया जाय कि मुस्लिम लीगको छोड़कर अन्य किसी समाज या व्यक्तिको यह अधिकार ही प्राप्त नहीं है कि वह मुस्लिम

जनताके साथ सम्पर्क स्थापित करे और उनसे राजनीति या अर्थनीतिकी बात करे। प्रत्येक देशके नागरिकको इस बातकी आजादी प्राप्त है कि वह अपना कार्यक्रम उस देशके जनसाधारणके सामने पेश करे। आशा तो यही की जाती है कि पाकिस्तानमें भी जनसाधारणका यह अधिकार उनसे छीना नही जायगा। कांग्रेस ही क्या कोई भी संस्था—चाहे वह राजनीतिक हो, सामाजिक हो, धार्मिक या साम्प्रदायिक हो——अपने इस अधिकारका त्याग नही कर सकती और इसके विरुद्ध आवाज उठानेका यही मतलब हो सकता है कि विरोधी दल लोगोंको बोलने, लिखने और भाषणकी स्वतन्त्रता नही देना चाहता। साम्प्रदायिक पृथक् निर्वाचन प्रणाळीने साम्प्रदायिक आधारपर दोनो जातियोंको अलग कर दिया है। इसका प्रभाव सांप्रदायिक और धार्मिक भेदभावपर जोर देना हुआ है इसे मुसलमानोंने भी कबूल किया है और इसपर खुद लीगमें मतभेद उपस्थित हो गया था और श्री जिना उस दलके नेता थे जो साम्प्रदायिक पृथक् निर्वाचन प्रणालीका विरोधी था। लेकिन लोगोंने उनका नेतृत्व स्वीकार नही किया इससे उन्हें झुक जाना पड़ा। यदि काग्रेस आज भी यही कहती है कि साम्प्रदायिक पृथक् निर्वाचन प्रणाली गलत है तो उसे क्यों दोष दिया जाता है। लेकिन आज तो लीग यहांतक करनेके लिए तैयार हो गयी है कि सम्प्रदायिक पृथक् निर्वाचन प्रणाली तो क्या दूसरी जातियोंको यह भी अधिकार नही है कि वे मुसलमानोके बीच किसी तरहका प्रचार कर सकें या उनसे सम्पर्क स्थापित कर सकें। यह मांग पृथक् निर्वाचन प्रणालीके दूषित प्रभावको पुष्टि ही प्रदान नही करती बल्कि मुसलमानोंको अन्य जातियोंके सम्पर्कमें आनेसे स्पष्ट रोकती है। यह स्थिति कैसे कबूल की जा सकती है। इसे तो नष्ट करना ही है।

दूसरी बात जो लीगके कोपका भाजन बनी वह है, वर्धा बुनियादी तालीमकी योजना। उस योजनाका एकमात्र उद्देश्य यही है कि शिक्षाकी व्यवस्था पुस्तकोंद्वारा न होकर कला और कारीगरीद्वारा होनी चाहिये। पश्चिमके शिक्षा-विशेषज्ञोंने इसी प्रणालीको अपनाया है और सार्जेण्ट योजनामें भी इसको आधारभूत माना गया है। इस योजनाको तैयार करनेवाली कमेटीके अध्यक्ष प्रसिद्ध शिक्षाविशेषज्ञ

डाक्टर जाकिर हुसेन थे, और उनके सहायक तथा सलाहकार थे ख्वाजा जी० सयीदैन। आप किसी समय अलीगढ़ युनिवर्सिटीमें प्रोफेसर थे और बादमें काश्मीर राज्यके शिक्षा-विभागके डाइरेक्टर हो गये। यह समझना कठिन है कि जिस शिक्षाप्रणालीकी योजनाको दो मुसलमान शिक्षा विशेषज्ञोंने तैयार किया वह हिन्दुओंद्वारा मुसलिम स्वार्थोंको धक्का पहुँचानेवाला कैसे हो सकता है। वर्धा-योजनामें एक ही दोष हो सकता है। वह यह कि इस विचारको महात्मा गान्धीने जनताके सामने रखा और उन्होंने ही कमेटी बिठायी। डाक्टर जाकिर हुसेनने दिल्लीके जामा मिलियामें इस प्रणालीको जारी कर दिया है और वहा इसी प्रणालीके अनुसार शिक्षा दी जा रही है। मुझे नही मालूम कि इसके अनुसार और भी कहीं शिक्षाकी व्यवस्था की गयी है, लेकिन पीरपुर रिपोर्टमे इसकी भी चर्चा है और कांग्रेसपर जो अभियोग लगाये गये हैं उनमे एक यह भी है। सबसे अधिक आपत्ति मध्यप्रान्तके विद्यामन्दिर योजनापर की गयी थी। १७ फरवरी १९३९ को मध्यप्रान्तके प्रीमियरने व्यवस्थापक सभाके मुसलमान सदस्योंकी एक बैठक बुलायी थी। उस बैठकमें लीगके मन्त्री नवाबजादा लियाकत अलीखांको भी निमन्त्रण देकर बुलाया गया था। प्रधानमन्त्रीने विद्या-मन्दिर योजनाको समझाते हुए कहा था कि 'इसका उद्देश्य बिना किसी तरहके साम्प्रदायिक भेदभावके देहातोंमें शिक्षाका प्रचार कर निरक्षरताको दूर करना है और इसका काम उदार दानियोंके चन्देद्वारा चलाया जायगा।' इसके लिए एक अलग संस्था कायम की गयी थी जिसकी बाजाब्ता रजिस्टरी करा ली गयी थी और सरकारद्वारा केवल सहायतामात्र इसे दिया जानेवाला था। उन्होंने यह भी कहा था कि 'यदि मुसलमान भाई चाहें तो वे इस तरहकी अपनी अलग संस्था भी कायम कर सकते है। नवाबजादा लियाकतअलीने कहा था कि मुसलमान लोग इस संस्थाका नाम मदीनतुल-इल्म और योजनाका नाम मदीन-तुल प्रणाली रखेंगे। प्रधान मन्त्रीने कहा कि सरकारकी ओरसे जो सहायता विद्यामन्दिरको दी जायगी वही इस संस्थाको भी दी जायगी। मध्यप्रान्तकी व्यवस्थापक सभाके समस्त मुसलमान सदस्यों तथा लीगके मन्त्रीके साथ पूर्ण

सद्भावके साथ सारी बातोंपर विस्तारसे विचार विनिमय हुआ था और वह व्यवस्था तै पायी थी। राजीनामेपर मध्यप्रान्तके प्रधान मन्त्री और नवाबजादा लियाकत अलीखाके हस्ताक्षर हुए थे। इसके फलस्वरूप जिन मुसलमानोंने इस योजनाके खिलाफ सत्याग्रह आरम्भ कर दिया था, वे रोके गये और जिन सत्याग्रही मुसलमानोंपर मुकदमा चल रहा था वह उठा लिया गया। १९ फरवरीको इसपर सरकारी वक्तव्य भी प्रकाशित कर दिया गया। तो भी विद्यामन्दिर शिक्षा-योजनाने लीगके अभियोगोकी तालिकामे स्थान प्राप्त कर ही लिया। जब श्री फजलुल हकने इस गड़े मुर्देको उखाडा तो मध्यप्रान्तके प्रधान मन्त्रीको मजबूर होकर नवाबजादा लियाकत अलीखाकी आज्ञा लेकर वह शर्तनामा प्रकाशित करना पड़ा। २२ दिसम्बर १९३९ के नागपुरके हितवादमे वह प्रकाशित हुआ था। यह काग्रेस-मन्त्रिमण्डलके पदत्याग करनेके एक मास बादकी घटना है।

कांग्रेस-मन्त्रिमण्डलके खिलाफ यह भी अभियोग है कि उनके समयमें हिन्दू मुसलिम दंगे हुए। दुर्भाग्यकी बात है कि ये दंगे काग्रेस मन्त्रिमण्डलके पहलेसे ही होते आये है और उसके पदत्याग करनेके बाद भी होते रहे। यह भी अस्वीकार नही किया जा सकता कि जबसे इस देशमें मार्ले-मिण्टो शासन-सुधारके अनुसार पृथक् निर्वाचन प्रणालीका जन्म हुआ है तभीसे साम्प्रदायिक दंगे अधिकाधिक होने लगे है। प्रत्येक दंगेकी मीमांसा करना यहां सम्भव नही। अदालतमे तो उनका विवेचन हुआ ही होगा। श्री दुर्रानीने अपनी पुस्तकमे बरारके एक दंगेपर बहुत जोर दिया है जो कांग्रेस-मन्त्रिमण्डलके शासनकालमें हुआ था। हाईकोर्टके फैसलेसे अवतरण देकर आपने उस प्रान्तके प्रधान मन्त्रीको फटकारते हुए लिखा है कि या तो उन्हें आत्महत्या कर लेनी चाहिये या मुहमें कालिख पोतकर सार्वजनिक जीवनसे हट जाना चाहिये। इसलिए यहां उस दंगेका विवरण देना आवश्यक है। घटना यों है—एक प्रतिष्ठित हिन्दू मारा गया और कई घायल हुए। इसकी जांच एक अंग्रेज डी० आई० जी० श्री टेलरकी देखरेखमें हुई। अभियुक्तोंकी दरखास्तपर मुकदमेका विचार जिला अदालतमें न होकर नागपुरमें हुआ। जिस सेशन जजके इजलासमें यह

मुकदमा था वह भी यूरोपियन था। श्री क्लार्क पुराने अनुभवी जज थे। इसके थोड़े ही दिन बाद वह नगरपुर हाईकोर्टके जज बना दिये गये। कांग्रेस-मन्त्रिमण्डलके पदत्याग करनेके बाद उस मुकदमेपर विचार हुआ और पदत्यागके कई मास बाद सेशन जज तथा हाईकोर्टका फैसला हुआ। अदालतमें यह प्रति-दिनका धन्धा है कि एक अदालतका फैसला अपीलमें प्रायः टूट जाता है। इस मुकदमेमें भी यही हुआ। यही वहांके प्रधान मन्त्रीके खिलाफ बहुत बड़ा अभियोग बताया गया। कहा जाता है कि उन्होंने उस समय कही भाषण दिया था जिसका प्रभाव जाचपर पड़ा। यह स्मरण रखनेकी बात है कि यह भाषण उस प्रान्तकी व्यवस्थापक सभामें एक काम रोको प्रस्तावके सिलसिलेमे दिया गया था। यह काम रोको प्रस्ताव उस मुकदमेके विवरणके लिए लाया गया था। घटनाके तीन दिन बाद ही यह प्रस्ताव असेम्बलीमे उपस्थित किया गया था और तबतक वह मामला किसी अदालतमे नही गया था। उस इलाकेमें संगीन साम्प्रदायिक तनातनीका समाचार पाकर प्रधान मन्त्री वहां स्वयं गये थे और अपने साथ प्रान्तीय व्यवस्थापक सभाके तीन मुसलमान सदस्योंको भी लेते गये थे। उनमेंसे एक उस प्रान्तकी मुस्लिम लीगके प्रधानमन्त्री श्री अब्दुर्रहमान खां थे। खाम गांवकी सार्वजनिक सभामें उन्होंने भी भाषण दिया था। प्रधान मन्त्रीके खिलाफ यह अभियोग है कि उन्होंने अपने भाषणमें यह कह दिया था कि यह निर्मम हत्या जान बूझकर की गयी है और इसके लिए पहलेसे ही तैयारी हो रही थी। ये बातें उन्होंने ऐसे समय कही जब जांचका काम जारी था। व्यवस्थापक सभामे काम रोको प्रस्तावपर जो बहस हुई थी उसमे मुसलमान सदस्योंने भी इस हत्याकी दिन्ना की थी। उसी 'काम रोको' प्रस्तावपर बहसके सिलसिलेमें श्री अब्दुर्रहमान खांने प्रधान मन्त्रीके सम्बन्धमे निम्न लिखित प्रशंसात्मक बाते कही थीं। "खाम गांवमें प्रधान मन्त्रीका भाषण सुनकर मैं बागबाग हो उठा था। क्या ही अच्छा होता यदि हमारे भाई उनकी भावनाके अनुसार काम करते और उनके विचाररोसे सबक लेते।"* हाईकोर्टने

---

* मध्यप्रान्तीय व्यवस्थापक सभाकी कार्यवाही सन् १९३९ पृ० ३०७-३०८।

अपने फैसलेमें जांच करनेवाले अफसरके खिलाफ बातें लिखी थीं इसलिए उस प्रान्तकी सरकारने बम्बई हाईकोर्टके जज जस्टिस ए० एस० आर० मैकलिनको इस बातकी जांच करनेके लिए नियुक्त किया कि पुलिसकी रिपोर्टमें जांचकी काररवाईमें क्या गलती हुई है और इसकी जिम्मेदारी किसपर है। कहा जाता है कि मुसलमानोंके साथ दुर्व्यवहार और ज्यादती की जानेकी शिकायतें की गयी थी। जस्टिस मैकलिनने लिखा है कि मध्यप्रान्तकी सरकारने इस मामलेको तुरत अपने हाथमें लिया और जिला मजिस्ट्रेट श्री हिलद्वारा जांच करवायी। लेकिन अभियोग झूठा साबित हुआ। इससे जस्टिस मैकलिनको सन्तोष हो गया कि मुसलमानोपर किसी तरहका अत्याचार नही हुआ था। उन्होंने अपनी जांचकी रिपोर्टमें यह भी लिखा है कि झूठे गवाह पेश करने या झूठा बयान दिलवानेकी जिम्मेदारी पुलिसपर नहीं है। इस तरह उन्होंने इस मामलेमें पुलिसको भी बरी कर दिया। एक अदालतके फैसलेको यदि दूसरी अदालत उलट दे और यदि इस तरहके प्रत्येक मुकदमेके लिए किसी प्रान्तका प्रधान मन्त्री जिम्मेदार समझा जाने लगे तो किसी प्रान्तका शासन एक दिन भी नही चल सकता। यह कही नही कहा गया है कि सेशन जजके ऊपर प्रधान मन्त्रीका प्रभाव पड़ सकता था—खासकर जब मुकदमेका विचार उनके पद त्यागके बाद हुआ और उनकी हैसियत एक साधारण नागरिककी रह गयी थी।

कांग्रेसके अत्याचारोमें हिन्दी उर्दूका झगड़ा भी शामिल है। यह झगड़ा बहुत पुराना है और आज भी उसी तरह कायम है। जहातक मुसलमानोंका सम्बन्ध है कांग्रेसने इस कलहको संगीन बनानेके लिए कुछ नही किया है। वास्तवमें कांग्रेसने यदि इस सम्बन्धमें कुछ किया तो उसका प्रयास दोनोंके बीच समन्वय स्थापित करनेके लिए था। लेकिन कुछ करनेके पहले ही वे शासनसे अलग हो गये।

१९३७ से आजतककी साम्प्रदायिक समस्याका इतिहास यही है कि एक ओर तो कांग्रेस इसे सुलझानेके लिए लगातार प्रयत्न करती आयी है और दूसरी

और लीगकी मांग बराबर बढ़ती गयी है। इसमें कभी ब्रिटिश सरकारने उनको प्रोत्साहन दिया है और कभी निराश किया है। इस तरह देशको सदा हुक (कँटिया) मे लटकाकर रखा गया है। लोगोने देख लिया है कि जुल्मोंकी विभीषिका किस तरह उत्पन्न हुई। १९३८ मे महात्मा गांधी तथा कांग्रेसके अध्यक्ष श्री सुभासचन्द्र बसुने यह जानना चाहा कि उसे किस तरह सन्तुष्ट किया जा सकता है ताकि देश और कांग्रेस उनकी मागपर विचार करे और यदि सम्भव हो तो उन्हे पूरा करनेका प्रयत्न करे। यह इसलिए आवश्यक था कि श्री जिनाकी चौदह शर्तोको सरकारने पूरा कर दिया था और १९३५ के शासन-सुधारमें उन्हे शामिल भी कर दिया था। १९३५ मे मैं ही काग्रेसका अध्यक्ष था। उस सन्के आरम्भमे ही मैने साम्प्रदायिक समस्याके विषयमें श्री० जिनासे बातचीत आरम्भ की। संयुक्त निर्वाचन प्रणाली इस बातचीतका आधार थी। उस समयतक १९३५ का शासन-सुधार कानून स्वीकृत नही हुआ था। शासन-सुधारके स्वीकृत होनेके बाद हम लोगोने देखा कि मुसलमानोंको पृथक् निर्वाचन ही नही बल्कि अन्य अनेक तरहकी रिआयते भी दे दी गयी हैं। लीगने जिन संरक्षणोकी माग की थी उनके मिल जानेके बाद यह आशा करना कि लीग पृथक् निर्वाचन प्रणाली तथा प्राप्त अन्य अधिकारोको त्याग देगी, व्यर्थ था। यद्यपि पंजाब, सिन्ध, सीमाप्रान्त, बंगाल तथा कभी-कभी आसाम सरीखे मुस्लिम बहुमतवाले प्रान्तोंमे मुस्लिम मन्त्रिमण्डल शासन कर रहा था तो भी लीगने इस आवाजको बुलन्द रखा कि मुसलमानोंको सताया जा रहा है और ब्रिटिश सरकारके सारे संरक्षण और गवर्नरोंके विशेष अधिकारोद्वारा संरक्षणके वादे व्यर्थ हो रहे हैं। यह धारणा जिसका आधार कल्पित भय और अविश्वास था सही थी या गलत। अगर यह विभीषिका सही है तब तो इसका प्रतिकार हिन्दुस्तानसे उन प्रान्तोंको जहां मुसलमानोंका बहुमत है, अलग कर स्वतन्त्र मुस्लिम राष्ट्र कायम करनेपर भी नहीं हो सकता, जैसा कि हम आगे देखेंगे। मुस्लिम अल्पमत प्रान्तोंकी तो बात ही न्यारी है। यदि यह कोरी कल्पना है तब तो इसकी कोई

दवा नही है। केवल समय ही धीरे-धीरे इस तरहके अविश्वासको दूर कर सकता है। जो भी हो लीगकी माग बराबर बढ़ती गयी और समझौता असम्भव हो गया। महात्मा गाधी, पण्डित जवाहरलाल नेहरू, श्री सुभाषचन्द्र वसु तथा श्री जिनाके बीच जो लम्बे पत्रव्यवहार हुए है उन्हे पढ़नेसे प्रकट होता है कि समझौता करनेवाले दलके अधिकारकी चर्चाके आगे वह नही बढ़ सका है। श्री जिना इसी बातपर अड़े रहे कि काग्रेस यह घोषणा कर दे कि वह हिन्दुओंकी प्रतिनिधि सस्था है और उनकी ओरसे बातचीत कर रही है तथा यह बात स्वीकार कर ले कि लीग ही मुसलमानोकी एकमात्र प्रतिनिधि सस्था है। लेकिन काग्रेस इन दोनों बातोमेसे एकके लिए भी तैयार होनेमें असमर्थ थी और है। इसलिए समझौतेके प्रयासका इतना भी फल निकल नहीं सका कि लीगकी मांगकी एक तालिका बन जाती।

यह नही भूला जा सकता कि देशमे और भी मुस्लिम सस्थाएँ है और वे लीगका यह दावा कबूल नही करती। भारतके राष्ट्रीय मुसलमानोंकी जमात है। अहरार मुसलमान है जिन्होने त्यागद्वारा अपनी दृढ़ताका परिचय दिया है। जमैयतुल-उलेमा है जिन्होने देशकी आजादीके लिए त्याग किया है और सकट झेले है। धर्माधिकारी होने तथा अपनी विद्वत्ताके प्रभावसे इस संस्थाका मुसलमानोमे काफी प्रभाव है। इनके अलावा शिया मुसलमान है जिनकी अलग ही जमात है। इन्होने लीगसे अलग अपने प्रतिनिधित्वकी मांग की है यद्यपि स्वय श्री जिना तथा लीगके कतिपय प्रमुख सदस्य शिया है। मुसलमानोमें मोमिनोंकी एक बड़ी तादात है। इन्होंने अपनी अलग जमात कायम की है और खुलेआम लीगके इस दावेका खण्डन करते है कि वह भारतके समस्त मुसलमानोकी एकमात्र प्रतिनिधि संस्था नही है। बलूचिस्तानके राष्ट्रीय मुसलमान, सीमाप्रान्तके खुदाई खिदमतगार, बंगालका कृषक प्रजादल तथा श्री अलामा मशरकीके खाकसार हैं जिनका मत अनेक बातोंमे लीगसे नहीं मिलता है। इनका अलग-अलग सघटन है और इन लोगोका दावा है कि लीगकी अपेक्षा इनका बहुमत है।

"मुसलमानोंकी एकमात्र प्रतिनिधि संस्था लीग तथा कांग्रेसके बीच हिन्दू मुस्लिम समस्या सुलझानेके लिए निम्न लिखित बातें तै पायी।" लीगकी कार्य-समितिने निम्न लिखित प्रस्ताव पास किया:—"अखिल भारतीय मुस्लिम लीगके लिए यह असम्भव है कि वह कांग्रेसके साथ हिन्दू-मुस्लिम प्रश्नपर किसी तरहकी बातचीत इस आधारके बिना करे कि वह भारतके मुसलमानोंकी एकमात्र प्रतिनिधि संस्था है। तारीख २ अगस्त १९३८ को श्री जिनाने श्री सुभाषचन्द्र बसुको जो पत्र लिखा उसमें वह एक कदम और आगे बढ़ गये।—"लीगकी कार्य-समिति आपको बतला देना चाहती है कि कांग्रेस जो कमेटी बनाने जा रही है उसमें वह मुसलमानोंका नाम शामिल करना वाञ्छनीय नही समझती क्योंकि उस कमेटीका काम हिन्दू-मुस्लिम प्रश्नका निपटारा करना होगा।" फरवरी १९४१ मे सर तेजबहादुर सप्रूने श्री जिनाको लिखा कि हिन्दू-मुस्लिम प्रश्नके निपटारेके लिए वह महात्मा गांधीसे बातचीत क्यों न करें। उसके उत्तरमें १९ फरवरीको श्री जिनाने उनके पास लिखा था:—"मै महात्मा गांधी या हिन्दुओकी तरफसे अन्य किसी नेतासे बातचीत करनेके लिए सदा तैयार हूं और हिन्दू-मुस्लिम प्रश्न हल कलनेके लिए जो सम्भव है, करनेके लिए तैयार हू।"

यह स्पष्ट है कि यह मांग एकदम नयी थी क्योंकि इससे पहले यह कभी पेश नहीं की गयी थी। जिस बातचीतके आधारपर लखनऊका समझौता हुआ था उसमें भी इस तरहकी कोई चर्चा नही थी कि लीग हिन्दुस्तानके मुसलमानोंकी एकमात्र प्रतिनिधि संस्था है और कांग्रेस भारतके हिन्दुओंका प्रतिनिधित्व करती है। १९३५ में कांग्रेसके अध्यक्षकी हैसियतसे मेरी जो बाते श्री जिनाके साथ हुई थीं उस समय भी इस तरहका कोई प्रश्न नहीं उठा था। श्री जिनाने केवल इसी बातपर जोर दिया था कि जबतक हिन्दू महासभाकी ओरसे मालवीयजी इस समझौतेपर हस्ताक्षर नहीं कर देंगे तबतक यह मान्य नही होगा। उस समयकी विफलताका यही कारण था कि मै मालवीयजीसे समझौतेपर हस्ताक्षर करानेकी जिम्मेदारी नहीं ले सकता था।

श्री जिना केवल इतनेसे ही सन्तुष्ट होनेवाले नहीं थे कि कांग्रेस मुस्लिम लीगको मुसलमानोंकी एकमात्र प्रतिनिधि संस्था मान ले और अपनेको हिन्दुओं-की प्रतिनिधि संस्था करार दे, बल्कि वे यह भी तय कर लेना चाहते थे कि हिन्दू मुस्लिम प्रश्न हल करनेके लिए काग्रेसका प्रतिनिधित्व कौन करेगा। क्योंकि जब एक बार श्री जिनाके साथ बातचीतके समय महात्मा गांधीने अपने साथ मौलाना आजादको रखना चाहा तो उन्होने साफ इनकार कर दिया।

अपने लम्बे पत्रव्यवहार और बातचीतमे पण्डित जवाहरलाल नेहरूने यह निश्चित करना चाहा कि लीग किन विषयोपर बातचीन कर समझौता करना चाहती है। लेकिन उन्हे सफलता नही मिली। पण्डित नेहरूने बड़ी नम्रतासे श्री जिनाको लिखा था कि आप कमसे कम इतना तो स्पष्ट कर दे कि आप किन विषयोंपर बातचीत और बहस करना चाहते है। इसके उत्तरमे श्री जिनाने १७ मार्च १९३८के पत्रमे लिखा—"शायद आपने १४ शर्तोंके सम्बन्धमे सुना होगा" और १२ जुलाई १९३८ के स्टेट्समैनमें प्रका-शित लेख 'मुसलमानोके दृष्टिकोणसे' तथा १ मार्च १९३८ के न्यू टाइम्समे प्रकाशित लेखोकी ओर उनका ध्यान आकृष्ट करते हुए लिखा कि "उन लेखोंमे वे सारी बाते आ गयी है जिनपर बातचीत होगी।" इसके उत्तरमे जब पण्डित नेहरूने अपने ६ अप्रैल १९३८ के पत्रमें उन सब बातोंको छांटकर एकत्र किया और उनपर काग्रेसका दृष्टिकोण व्यक्त किया तो श्री जिनाने अपने १३ अप्रैल १९३८ के पत्रमे यह लिखा कि "आपने अपने पत्रमें चन्द बातें लिख भेजी हैं और आप चाहते है कि मै अपनेको उनमें बांध दू कि ये ही मेरे प्रस्ताव हैं।" असल बात यही है कि लीग किन प्रश्नोपर विचार करना चाहती है इसका पता किसीको नही लग सका।

यूरोपीय युद्ध छिड़ जानेके बाद १९३९ के दिसम्बरमें महात्मा गांधी तथा पण्डित जवाहरलाल नेहरूने एक बार फिर समझौतेके लिए यत्न किया, लेकिन कोई फल नही निकला। निराश होकर १६ दिसम्बर १९३९ को पण्डितजीने यहांतक लिख दिया कि "खेद तो इस बातका है कि हमलोग उन प्रश्नोंके

ऊपर उचित विचार करनेकी अवस्थातक भी नही पहुंच पाते क्योंकि अनेक तरह-की शर्तें बाधाके रूपमें आकर खड़ी हो जाती है।....एक बाधा दूर भी नहीं होने पाती कि शर्तके रूपमें दूसरी आकर खड़ी कर दी जाती है। इसलिए मेरी समझमें तो यही आता है कि हमलोगोका राजनीतिक दृष्टिकोण ही भिन्न-भिन्न है।"

लीगके अध्यक्ष कांग्रेसके साथ बातचीत करनेके लिए तो उन शर्तोको स्पष्ट नही करना चाहते थे लेकिन समय-समयपर बड़े लाटके सामने प्रकट करनेमें वे कभी भी नही हिचके। इस मतभेदसे लाभ उठानेमें ब्रिटिश सरकार भी कभी नहीं हिचकी और उसने इस मतभेदको कायम रखनेके लिए लीगको मजबूत बनाते जाना आवश्यक समझा। स्मरण रखनेकी बात है कि भारतमें संघशासन स्थापित करनेकी चर्चा आल पार्टी मुसलिम कान्फरेन्सने ही की थी। जब १९३५ के शासन-विधानमे संघशासनकी व्यवस्था की गयी तबतक लीग और खासकर श्री जिनाका दृष्टिकोण एकदम बदल गया था और शासन-सुधारका वह अंश आक्रमणका प्रधान लक्ष्य बन गया। ता० ११ सितम्बरको बड़े लाटने यह घोषणा की कि युद्धतक सघशासनके लिए कोई व्यवस्था नही होगी। इसपर लीगकी कार्यकारिणीने सन्तोष और प्रसन्नता प्रकट की और यह इच्छा प्रकट की कि संघशासनकी व्यवस्था सदाके लिए त्याग दी जाय। उसने ब्रिटिश सरकारसे यह भी प्रार्थना की कि भारतकी शासन व्यवस्थाकी एकदम नये सिरेसे जांच हो और साथ ही ब्रिटिश सरकार इस बातका आश्वासन दे कि लीगकी स्वीकृति और अनुमोदन प्राप्त किये बिना भारतके लिए कोई भी शासनविधान तैयार न किया जायगा।

तारीख २३ दिसम्बर १९४० को इसके उत्तरमें लार्ड लिनलिथगोने कहा था कि सम्राट्की सरकार इस बातको भलीभाति समझती है कि भारतके वैधानिक विकास और सफलताके लिए मुसलमानोको सन्तुष्ट रखना कितना आवश्यक है। इसलिए आपको इस तरहकी कोई शका मनमें नहीं रखनी चाहिये कि भारतके किसी भी भावी विधानमें आपके जातिकी महत्ताकी अवज्ञा की जायगी।"
ता० ६ फरवरी १९४० को श्री जिनाने बड़े लाटसे मुलाकात की थी। उसके

बाद जो सरकारी वक्तव्य प्रकाशित किया गया था उसमें कहा गया था—'बड़े लाटने श्री जिनाको इस बातका पूरा आश्वासन दिया है कि अल्पसंख्यकोंके स्वार्थोंकी रक्षाकी ओर सम्राट्की सरकारका पूरा ध्यान है। इसलिए उन्हें (श्री जिनाको) इस बातकी लेशमात्र भी आशंका नहीं होनी चाहिये कि सरकारकी दृष्टिसे यह बात ओझल रहेगी।' लेकिन इसीसे लीगको सन्तोष नही हुआ। इस-लिए ऊपरका अवतरण उद्धृत करके उसपर लीगकी कार्यसमितिके मनकी व्याख्या करते हुए श्री जिनाने बड़े लाटको ता० २३ फरवरी १९४० को लिखाः—"मुझे यह लिखते खेद होता है कि इससे लीगकी शकाओंका पूरा समाधान नहीं होता; क्योंकि इससे ९ करोड़ भारतवासियोके भाग्यका निपटारा ब्रिटेनके ही हाथमें रह जाता है जिसका फैसला विचार-विमर्शके आधारपर ही होगा। मुझे यह स्थिति स्वीकार नही है। मुझे इस बातका पक्का आश्वासन मिलना चाहिये किः—"हमलोगोकी स्वीकृति या रजामन्दीके बिना भारतके भावी शासन-विधानके लिए किसी तरहका समझौता किसी दलके साथ नही किया जायगा और इस सम्बन्धमे कोई अस्थायी व्यवस्था नही की जायगी।" ब्रिटिश सरकारने दूसरा प्रयास किया और भारतके बड़े लाट तथा भारत मन्त्रीने १ अप्रैल १९४१ को लार्ड-सभामें घोषणा की जिसे बड़े लाटने श्री जिनाके पास लिख भेजा। वह इस प्रकार थीः—"भारतके भावी शासन-विधानके बारेमें भिन्न-भिन्न समुदायो और स्वार्थवालोंसे सलाह लेनेका जो वादा सम्राट्की सरकारने किया है वह किसी दलके आदेशसे नही बल्कि परस्पर बातचीतसे पूरा किया जायगा। भारतके भिन्न-भिन्न सम्प्रदायोंके बीच बहुत अंशोंमें मतैक्य होना आवश्यक है। यदि उस संयुक्त भारतकी कल्पना जिसके लिए इतने अधिक भारतीयों और अंग्रेजोंने सतत प्रयत्न किया है—वास्तविकताका रूप ग्रहण नहीं कर सकती, तो मुझे यह विश्वास नहीं है कि कोई भी सरकार या पार्लमेण्ट सम्राट्की सरकारकी ८ करोड़ प्रजाके ऊपर ऐसा कोई भी शासन जबर्दस्ती लाद देगी जिसमें वे सुख और शान्तिसे नहीं रह सकते।" इस स्पष्टीकरणसे भी लीगकी कार्य-समितिको सन्तोष नहीं हुआ और श्री जिनाने २५ जून १९४० को बड़े लाटसे

फिर भेंट की और जिन बातोंपर उनके साथ विचार विमर्ष किया उसे १ जुलाई १९४० के पत्रमें लिख भेजा। उस पत्रमें ये बाते थीः—

१—सम्राट्की सरकार ऐसी कोई घोषणा नही करेगी जो लीगके लाहौर-वाले उस प्रस्तावके आशयके किसी तरह विरुद्ध हो, जिसके द्वारा भारतके विभाजन और उत्तर-पश्चिम तथा उत्तर-पूर्वीय क्षेत्रोमे मुसलमान राष्ट्रकी स्थापना की मांग की गयी है।

२—सम्राट्की सरकार भारतके मुसलमानोको इस बातका पक्का विश्वास दिला दे कि मुसलमानोंकी अनुमति और स्वीकृतिके बिना भारतके लिए कोई भी अस्थायी या स्थायी शासन-विधानकी व्यवस्था वह नही करेगी ।

३—युद्धके लिए प्रयत्नो और युद्धके लिए भारतीय उपकरणोकी प्राप्तिमे पूरी सफलता तभी मिल सकती है जब भारत-सरकार इस बातका भरोसा दे कि प्रान्तीय तथा केन्द्रीय शासन व्यवस्थामें मुसलमानोको बराबरका हक प्राप्त होगा। अर्थात् मुसलमानोसे यह कह दिया जाय कि उनका बराबरीका दावा सही है और भारतके भावी शासनमे केन्द्रीय और प्रान्तीय व्यवस्थामे उन्हे बराबरीका हक दिया जायगा ।

४—युद्धके दिनोमें अस्थायी रूपसे यह व्यवस्था हो जानी चाहियेः—

(क) वर्तमान शासन-विधानके अन्तर्गत बड़े लाटकी कार्यसमितिका विस्तार कर दिया जाय और यदि कांग्रेस भाग लेना स्वीकार करे तो हिन्दुओं और मुसलमानोंको बराबरका प्रतिनिधित्व मिले, अन्यथा नयी नियुक्तिमे मुसल-मानोको प्रधानता दी जाय क्योकि ऐसी हालतमे सारी जिम्मेदारीका भार मुसल-मानोको ही उठाना पड़ेगा।

(ख) बड़े लाटकी अध्यक्षतामें १५ सदस्योकी एक युद्ध-समिति बनायी जाय। यदि काग्रेस सहयोग करे तब तो हिन्दुओ और मुसलमानोंका प्रतिनिधित्व बराबर बराबर रहे अन्यथा मुसलमानोंको प्रधानता दी जाय।

(ग) युद्ध-समिति, बड़े लाटकी कार्यसमिति तथा प्रान्तीय गवर्नरोंके बढ़ाये जानेवाले सलाहकारोंके पदके लिए मुस्लिम सदस्योंको चुननेका एकमात्र अधि-कार लीगको हो।

बड़े लाटको यह बात समझनेमें देर नही लगी कि इस मांगका यह अभिप्राय है कि सारे अधिकार लीगके हाथमें सौप दिये जायं। श्री जिनाके इस पत्रका उत्तर देते हुए उन्होंने अपने ६ जुलाई १९४० के पत्रमे लिखा—"मै मुसलमानोके उचित प्रतिनिधित्वके महत्वको भलीभांति समझता हूँ। लेकिन किसी एक समुदायपर जिम्मेदारीका बोझ कम या हलका पड़नेका प्रश्न ही नहीं उठता। जिम्मेदारी तो सपरिषद बड़े लाटकी होगी। इसके साथ ही वर्तमान कानून और व्यवहारमे यही होता है कि भारत-मन्त्री तथा बड़े लाट नामोंको चुनते है और सम्राट्के पास स्वीकृतिके लिए भेजते है। इसलिए बड़े लाटकी कार्यसमितिके सदस्य किसी राजनीतिक दलके प्रतिनिधि नही हो सकते चाहे वह दल कितना भी महत्वपूर्ण क्यो न हो। अन्तमे मै यह भी स्पष्ट कर देना चाहता हूँ कि मेरी विस्तृत कार्यसमिति या प्रान्तीय गवर्नरोके सलाहकारोके पदके लिए जो मुसलमान सदस्य चुने जायंगे उनके चुननेकी जिम्मेदारी भी लीगको नही सौपी जा सकती। लेकिन इसका अभिप्राय यह नही है कि यदि आप कोई सलाह देना चाहेगे तो उसपर विचार नही किया जायगा।"

७ अगस्त १९४० को सरकारकी नीतिकी घोषणा करते हुए बड़े लाटने एक वक्तव्य प्रकाशित किया। उस वक्तव्यमें १९३५ के शासन-विधानकी पूरी तरहसे जांचकी सरकारकी पुरानी घोषणाको दोहराते हुए उन्होंने कहा कि भारतमें सुख, शान्ति और सुव्यवस्था कायम रखनेकी जो जिम्मेदारी उनके ऊपर है उसे सरकार किसी ऐसी व्यवस्थाको नहीं सौप देना चाहती जो भारतके अधिकांश निवासियोंको कबूल न हो और न तो वे ऐसी कोई व्यवस्था उनके ऊपर जबर्दस्ती लादनेका इरादा रखते है। उन्होंने सरकारकी ओरसे इस बातका वचन दिया कि युद्धके बाद भारतके राष्ट्रीय-जीवनके भिन्न-भिन्न तत्वोंके प्रतिनिधियोंको आमन्त्रित किया जायगा कि ये लोग आपसमें मिलकर नये विधानका ढाचा तैयार करें। उन्होंने सरकारके इस इरादेको भी व्यक्त किया कि बड़े लाटकी कार्यसमितिमें भाग लेनेके लिए कतिपय भारतीयोंको आमन्त्रित किया जायगा। साथ ही उन्होंने युद्ध सलाहकार समितिकी स्थापनाकी भी चर्चा की।

बड़े लाटकी इस घोषणापर कामन्स सभाकी बहसमे भारत-मन्त्री श्री एमरीने भारतमे विभिन्न दलोंके परस्पर वैमनस्यका वही पुराना राग अलापा। उन्होने कहा—"भारतमें राजनीतिक गतिरोध सम्राट्की सरकार और सचेतन भारतीय विरोधके बीच उतना नही है जितना भारतके राष्ट्रीय जीवनके प्रधान तत्त्वोके बीच है। इसलिए यह गतिरोध सम्राट्की सरकार और भारतीयोके बीच समझौतेद्वारा दूर नही हो सकता। इसे दूर करनेके लिए भारतके विभिन्न दलोके बीच समझौता होना आवश्यक है जिसमे सम्राट्की सरकार केवल एक फरीकके रूपमे रहेगी।" उन्होने अन्य दलोमे मुसलमान, दलितवर्ग तथा देशी नरेशोका नाम लिया। इसके साथ ही साथ उन्होने यह भी कहा कि भारत हर तरहसे सयुक्त और विश्वका प्रधान देश है। उसकी सभ्यता बहुत पुरानी है और सारी जनताका सर्वसाधारण इतिहास भी पुराना है। इस तरह हम देखते है कि इस त्रिभुजकी तीसरी भुजा धीरे-धीरे पर साथ ही स्थिर रूपसे बढ़ती जा रही है। एक ओर तो मुहसे स्वराज्य और उदार शासनकी लम्बी-लम्बी बाते की जाती है और दूसरी ओर भारतके राष्ट्रीय जीवनके उन तत्त्वोको आवश्यकतानुसार पुचकारा या ठुकराया जाता है। कहा जाता है कि किसी भी वैधानिक सुधारके लिए यह आवश्यक है कि राष्ट्रीय जीवनके इन विभिन्न दलोके बीच अधिकाश बातोपर समझौता हो और गतिरोधके विषयमें कहा जाता है कि इसका कारण ब्रिटेन और भारतीयोके बीचका मतभेद नही है बल्कि भारतके विभिन्न दलोके ही बीचका मतभेद है। जब मुस्लिम लीग यह मांग पेश करती है कि उसकी अनुमति बिना कोई वैधानिक सुधार न किया जाय और भिन्न-भिन्न समितियोके लिए मुसलिम सदस्य नामजद करनेका एकमात्र अधिकार उसे ही प्राप्त हो तब पहली मांग तो सार्वजनिक घोषणाद्वारा टाल दी जाती है और दूसरीको साफ अस्वीकार कर दिया जाता है। जब लीग यह मांग पेश करती है कि उत्तर-पश्चिमी और उत्तर-पूर्वी प्रदेश पृथक् कर दिये जायं तो उससे यह कहा जाता है कि भारत एक सम्पूर्ण इकाई है, उसकी सभ्यता बहुत प्राचीन है और उसके इतिहासमें यहांकी सभी प्राचीन जातियोंके

इतिहासका समावेश है। भारतके भावी सुधारमे बड़े लाटकी घोषणाका जहां तक सम्बन्ध था उसे तो लीगकी कार्यसमितिने सन्तोषप्रद बतलाया लेकिन कार्य-कारिणी समितिके विस्तारके सम्बन्धकी बातोको नितान्त असन्तोषपूर्ण। बड़े लाटका प्रस्ताव था कि लीग चार व्यक्तियोंका नाम क्रमके हिसाबसे पेश करे। उनमेसे कार्यसमितिके लिए दो नाम चुन लिये जायगे। यही बात सलाहकारोके लिए भी थी। लेकिन लीगको यह बात मान्य नही हुई। इसके बाद फिर बातचीतका सिलसिला जारी हुआ लेकिन कोई फल नही निकला। अन्तमे लीगकी कार्यसमितिकी २० सितम्बर १९४० की बैठकमे श्री जिनाने यह वक्तव्य दिया कि ब्रिटिश सरकार अधिकार छोडना नही चाहती और वह ९ करोड़ मुसलमानोकी अवज्ञा कर रही है जो एक स्वतन्त्रराष्ट्र हैं। इस तरह ब्रिटिश सरकार और श्री जिनाके बीच जो युद्धकालीन समझौता हो रहा था वह कुछ समयके लिए असफल हो गया।

१९४० के अन्तमे काग्रेसने व्यक्तिगत सत्याग्रह आरम्भ किया। यह सत्या-ग्रह भाषणकी स्वतन्त्रता व्यक्त करनेके लिए था। यह स्पष्ट है कि उस सत्या-ग्रहसे मुसलमान अथवा लीगसे कोई मतलब नही था और जिस अधिकारकी प्राप्तिके लिए वह आरम्भ किया गया था उसका लाभ अन्य लोगोके साथ मुस-लमानोको भी होता। तो भी लीगने उसे मुसलमानोके विरुद्ध बतलाया। लीगकी कौसिलने प्रस्ताव पास किया कि श्री गाधीने जिस उद्देश्यसे यह सत्याग्रह जारी किया है ओर उसे इतने जोरसे चला रहे हे, वह लीगसे छिपा नही है। लीग ब्रिटिश सरकारको चेतावनी देती है कि यदि काग्रेसको ऐसी कोई रिआयत दी गयी जिसका असर मुसलमानोके स्वार्थके खिलाफ हो या मुसलमानोकी मागको किसी तरह घटाये तो लीग अपनी पूरी ताकतके साथ उसका विरोध करेगी और लीग यह स्पष्ट कर देना चाहती है कि इस देशके मुसलमानोके हको और स्वार्थो-की रक्षाके लिए यदि आवश्यक प्रतीत हुआ तो वह हस्तक्षेप करने और तदर्थ संग्राम करनेके लिए भी नही हिचकेगी।

१९४१ के अप्रैलमें लीगका अधिवेशन मद्रासमें हुआ। उस अधिवेशनमे

लीगके विधानमे आवश्यक संशोधन किया गया और पाकिस्तानकी प्राप्ति उसके ध्येयमे शामिल कर लिया गया।

क्रिप्स प्रस्तावके समय फिर ब्रिटिश सरकार और लीगके बीच सौदा होने लगा। ब्रिटिश युद्ध-समितिके सदस्य सर स्टेफर्ड क्रिप्स १९४२ के मार्चमें सम्राट्की सरकारकी नीति और प्रस्तावोंका मसविदा लेकर भारत आये। उसके अनुसार भारतमे एक नये संघकी स्थापना करने तथा साम्राज्यके भीतर अन्य उपनिवेशोकी भाति औपनिवेशिक स्वराज्य देनेका प्रस्ताव था। उस प्रस्तावमें भारतके लिए नया शासन-विधान तैयार करनेकी व्यवस्था दी गयी थी और सम्राट्की सरकारने क्रिप्स प्रस्तावके अनुसार निर्मित शासन-विधानको स्वीकार करने तथा कार्यमे परिणत करनेका वादा इस शर्तके साथ किया था कि यदि ब्रिटिश भारतका कोई प्रान्त इस नये विधानको कबूल न करना चाहे तो वह अपनी वैधानिक स्वतन्त्रता कायम रखनेके लिए स्वतन्त्र है और उसे अधिकार है कि जब वह चाहे इस सघमे शामिल हो जाय। इसके साथ ही साथ सम्राट्की सरकारने उस प्रान्तको भी वही शासन-विधान देनेका वादा किया था जो भारतीय सघको दिया जायगा। घोषणापत्रमें भारतीय नेताओसे अपील की गयी थी कि भारतकी रक्षाके लिए वे लोग कार्यसमितिमे शामिल होकर युद्धके संचालनमें सहायता प्रदान करे।

इस तरह क्रिप्स प्रस्तावके अनुसार किसी भी प्रान्तको भारतीय संघसे अलग होनेका पूरा अधिकार दे दिया गया था। प्रकारान्तरसे अलग मुस्लिम स्वतन्त्र राष्ट्र स्थापित करनेकी लीगकी मांग स्वीकार कर ली गयी थी। कांग्रेस कार्यसमितिने इस आधारपर क्रिप्स प्रस्तावको अस्वीकार नही किया कि उसमें भारतकी इकाईको खण्डित करनेकी योजना थी, जैसी उससे आशा की जाती थी बल्कि कांग्रेसने इस बातको एकदम स्पष्ट कर दिया कि—"वह इस बातकी कल्पना नही कर सकती कि भारतके किसी भी प्रान्तवासीको भारतीय संघके अन्दर रहनेके लिए बाध्य किया जाय, लेकिन साथ ही साथ उस इकाईको तोडनेका कोई भी प्रस्ताव इस देशमें रहनेवाली प्रत्येक जातिके लिए अहितक

है।" कांग्रेसकी अस्वीकृतिका दूसरा कारण यह भी था कि रक्षाविभागको भारतीयोके अधिकारके बाहर रखा गया था और इस तरह क्रिप्स प्रस्ताव एक तरहका तमाशामात्र रह गया था। लीगकी कार्यसमिति चुपचाप बैठकर कांग्रेस कार्यसमितिके निर्णयकी प्रतीक्षा करती रही। कांग्रेस कार्यसमितिके निर्णयके प्रकाशित होनेके बाद उसने भी प्रस्ताव पास किया कि वर्तमानरूपमे क्रिप्स प्रस्ताव स्वीकार्य नही है। लीगकी कार्यसमितिने इस बातपर सन्तोष प्रकट किया कि सम्राट्की सरकारने प्राकारान्तरसे पाकिस्तानके सिद्धान्तको कबूल कर लिया लेकिन साथ ही यह भी निश्चय किया कि भारतीय संघ—जो सम्भवतः हिन्दू और मुसलमानोका सघ होगा—मे दोनो जातियोको शामिल होनेके लिए बाध्य करना देशके सुख और शान्तिके लिए हितकर नही होगा, जो घोषणाका प्रधान उद्देश्य प्रतीत होता है। लीगकी कार्यसमितिने अपने प्रस्तावमे इस बातकी भी चर्चा की थी कि यदि सुदूर भविष्यमे सम्भव हुआ तो एकसे अधिक सघकी स्थापना हो सकेगी ; किन्तु वह कोरी कल्पनामात्र थी। विधान निर्मातृ समितिके निर्माणके तरीकेसे भी लीगका विरोध था क्योकि पृथक् निर्वाचन प्रणालीके आधारपर मुसलमानोको अपने प्रतिनिधि चुननेके अधिकारसे यह सिद्धान्ततः भिन्न था। भारतीय संघमें रहने या न रहनेके लिए प्रान्तोसे मत लेनेका जो तरीका क्रिप्स प्रस्तावमे दिया गया था उससे भी लीग सहमत नहीं थी। लीगका कहना था कि जिन प्रान्तोंमें मुसलमानोंका बहुमत होगा उन प्रान्तोंकी सारी बालिग जनताकी राय संघमें रहने या न रहनेके लिए न ली जाय, बल्कि केवल बालिग मुसलमानोंकी राय ली जाय। अन्यथा आत्म-निर्णयके नैसर्गिक अधिकारसे उन्हें वंचित करना होगा। इससे यह स्पष्ट हो गया कि ब्रिटिश सरकारने ब्रिटिश प्रान्तोंको यह अधिकार दे दिया कि यदि वे चाहें तो भारतीय संघसे अलग हो सकते हैं और यह भी तै कर दिया कि इसके निर्णयका अधिकार व्यवस्थापक सभाको ६० फीसदीके बहुमतसे होगा। यदि यह बहुमत प्राप्त न हो सके तब उस प्रान्तके अल्पमतकी मांगपर वहांके बालिग मताधिकारके आधारपर निर्णय किया जाय। लीगका मत था कि उस प्रान्तके मुसलमानोंकी वास्तविक मंशा जाननेके लिए व्यवस्था-

पक सभाका मत वास्विक आधार नहीं हो सकता और साथ ही साथ मांग भी पेश की कि केवल मुसलमानोंका ही मत लिया जाना चाहिये और अन्य अल्प सम्प्रदायोंको एकदम छोड़ देना चाहिये चाहे उनकी संख्या ४५ फीसदीके लगभग क्यों न हो, जैसा कि बंगाल ओर पजाबमे है। अर्थात् भारतीय सबसे अलग होनेके महत्वपूर्ण प्रश्नपर और अपने उन देशवासियोसे जिनके साथ वे पुश्त दर पुश्तसे रहते आये हैं—सम्बन्ध विच्छेद किये जानेके प्रश्नपर उन्हें कुछ करनेका अधिकार ही न दिया जाय। क्रिप्स प्रस्तावके असफल होनेके बाद अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटीने अपनी १९४२ की ६ से ८ अगस्तकी बैठकमें वह ऐतिहासिक प्रस्ताव पास किया जो "भारत छोड़ो" प्रस्तावके नामसे प्रसिद्ध है। हमेशाकी भांति अधिवेशनके आरम्भमे ही कांग्रेसने यह स्पष्ट कर दिया था कि वह अपने लिए नही, बल्कि भारतीय जनताके लिए अधिकार चाहती है और उसे परम सन्तोष होगा यदि वास्तविक अधिकारके साथ लीग ही शासनारूढ़ हो जाय। लेकिन इसके बाद उसी सालमें १६ से २० तककी लीगकी कार्यसमितिकी बैठकमे जो प्रस्ताव पास हुआ, उसमे निम्न लिखित बाते थीं—

लीगकी कार्यसमितिका यह दृढ मत है कि वर्तमान आन्दोलन केवल ब्रिटिश सरकारके खिलाफ इसलिए नही चलाया जा रहा है कि वह मजबूर होकर निरंकुश हिन्दुओंको अधिकार सौप दे और इस तरह मुसलमानो तथा अन्य सम्प्रदायोको समय समयपर उन्होंने जो वचन दिये है तथा उनकी जो नैतिक जिम्मेदारी है उसका पालन वे न कर सके बल्कि इसका उद्देश्य यह भी है कि वह मुसलमानोको बाध्य करें कि वे कांग्रेसकी शर्ते और उसका आदेश स्वीकार करें. . .ब्रिटिश सरकारके सामने यह मांग पेश करनेके बाद कि यदि लीगका दावा स्वीकार कर लिया जाय तो बराबरीके हकपर लीग जिम्मेदारी लेनेके लिए तैयार है लीगकी कार्यसमितिने मुसलमानोंको यह आदेश दिया कि कांग्रेसद्वारा आयोजित किसी आन्दोलनमें वे भाग न लें। उसके बादसे सत्याग्रह आन्दोलन मुसलमानोके खिलाफ समझा गया और लीगके प्रचारक सदा इस बातपर जोर देते रहे कि अगस्त प्रस्ताव वापस लेनेके बाद ही कांग्रेसवालोको जेलसे रिहा

किया जा सकता है और तभी गतिरोधको दूर करनेके लिए कांग्रेसके साथ किसी तरहके समझौतेकी बातचीत हो सकती है। इतना ही नही ब्रिटिश सरकार-द्वारा खण्डन किये जानेके बाद भी वे बराबर इस बातपर जोर देते रहे कि कांग्रेस जापानके साथ मिली हुई है।

१९४४ के सितम्बरमें महात्मा गाधी श्री जिनासे फिर मिले। कई दिनतक वार्तालाप हुआ, लेकिन कोई फल नही निकला। श्री जिना स्पष्ट रूपसे इतना भी नही बतला सके कि उनके पाकिस्तानकी रूप-रेखा क्या है, उसकी सीमाएँ क्या है, उसके विधान क्या होगे और उसमें अल्पदलवालोके सरक्षणकी क्या व्यवस्था होगी।

जून १९४५ मे लार्ड वेवलने यह मसविदा उपस्थित किया कि बीचके समयके लिए कोई अस्थायी समझौता कर लिया जाय। इस समझौतेका भावी शासन-विधानपर जो युद्ध के बाद तैयार किया जायगा—कोई असर नही पड़ेगा। बड़े लाटके मसविदेकी एक शर्त यह थी कि दलित जातियोको छोड़कर हिन्दू और मुसलमानोको समान प्रतिनिधित्व दिया जायगा। इस तरह लीगकी यह मांग कि अस्थायी शासनमे हिन्दुओ और मुसलमानोको बराबरका प्रतिनिधित्व मिले, पूरी हो गयी। १९३७ से ही लीग और श्री जिनाने भारतके अल्पसंख्यक समुदायको अपने विशेष सरक्षणमे ले लिया है और अपनी मागोपर जोर डालते हुए लोगोसे यह कहनेमे कभी नही चूके कि हिन्दू-बहुमत खासकर कांग्रेस—जो हिन्दुओकी सघटित और प्रतिनिधि सस्था है—अल्प समुदायोके सताने और दबानेके लिए कमर कसकर तैयार है। उन्होंने दलित जातियोको हिन्दुओसे अलग अल्पसंख्यक मान लिया है जिसे संरक्षणकी आवश्कता है। ब्रिटिश सरकार जनताकी प्रतिनिधि संस्था कांग्रेसकी बढती शक्तिका मुकाबला करनेके लिए मुस्लिम लीगको सदा मिलाये रखनेके लिए चिन्तित रही है और लीगकी बढती मागको पूरा करते रहनेके लिए उसे रिआयतपर रिआयत देती गयी है। दलित जातियोको छोड़कर हिन्दू और मुसलमानोंको समान प्रतिनिधित्व देनेका उनका अन्तिम प्रस्ताव लीगको खुश करनेको प्रयासके एकदम अनुकूल

था। लेकिन पहली बारकी भाति इस बार भी वह नीति सफल नही हो सकी क्योकि श्री जिना इस बातपर अड़े ही रह गये कि मुस्लिम सदस्योके नामजद करनेका अधिकार एकमात्र लीगको मिलना चाहिये। इस असफलताकी सारी जिम्मेदारी लार्ड वेवलने अपने ऊपर ले ली। यह उचित भी था। लेकिन इस असफलतासे एक विचित्र परिणाम निकल आया। लीगने एक नयी माग यह पेश कर दी कि मुसलमानोको केवल हिन्दुओके ही बराबर प्रतिनिधित्व नही मिलना चाहिये बल्कि दलितवर्ग तथा अल्पसख्यक जातियोके प्रतिनिधियोको भी हिन्दुओमे मिलाकर कुल सख्याके बराबर मुसलमानोको प्रतिनिधित्व मिलना चाहिये। शिमला अधिवेशनके बाद १८ जुलाई १९४५ को श्री जिनाने प्रेस-प्रतिनिधियोके सामने निम्नलिखित बाते कही —

(बडे लाटकी) प्रस्तावित कार्यसमितिमे मुसलमान एक तिहाई अल्पसख्यकके रूपमे हो जायगे क्योकि दलितवर्ग, सिख तथा ईसाइयोका ध्येय काग्रेसके ध्येयके समान ही है। अल्पसख्यकोके रूपमे उनकी शिकायते जरूर है लेकिन उनका ध्येय और आदर्श अखण्ड भारतके अतिरिक्त दूसरा कुछ नही हो सकता। उनकी सस्कृति और सदाचार हिन्दुओसे बहुत कुछ मिलते-जुलते है। मै यह नही चाहता कि सभी अल्पसख्यक समुदायोके साथ पूरा न्याय न हो। अल्पसख्यक होनेके नाते हर जगह उनके साथ पूरा न्याय और सरक्षण होना चाहिये लेकिन व्यवहार और क्रियामे उनके मत (वोट) हमलोगोके खिलाफ जायगे और बडे लाटकी अस्वीकृति (वीटो) के अतिरिक्त हम लोगोके लिए कोई सरक्षण नही है। विधानके सभी विशेषज्ञ इस बातको जानते है कि शासन तथा व्यवस्थाके लिए बहुमतसे जो नीति और सिद्धान्त प्रति दिनकी कारगुजारीके लिए निश्चित किये जायगे उनके खिलाफ इस (वीटो) अधिकारका अनवरत प्रयोग नही किया जा सकता, इससे इतना तो स्पष्ट होता जाता है कि (मुस्लिम) अल्पदलकी तबतक रक्षा नही हो सकती जबतक कि उन्हे बहुमत दल अथवा अन्य सभी सयुक्त दलोके बराबर न बना दिया जाय। यहा आकर श्री जिना अल्पसख्यक समुदायके सरक्षक होनेका आडम्बर तो कमसे कम उतार

फेकते ह और इस बातको स्वीकार कर लेते है कि केवल सिखों तथा दलित जातियो-का ही नही, जिसे वे अभी भी अल्पसख्यक समुदाय मानते है, बल्कि ईसाइयोका भी वही ध्येय और आदर्श है जो काग्रेसका ह, और उन्हे इस बातकी आशंका है कि कार्य और व्यवहारमे उनके मत (वोट) काग्रेसके पक्षमे और लीगके खिलाफ रहेगे और बडे लाटकी अस्वीकृति (वीटो) जो मुसलमानोके लिए केवल मात्र रक्षाका साधन है, व्यर्थ और निष्क्रिय प्रमाणित होगा। लीगकी नीतिकी हीनताका इससे बढकर दूसरा प्रमाण क्या हो सकता है कि उसे किसीसे भी समर्थन पानेकी आशा नही है, उन मुसलमानोसे भी नही जो उसके नामजद नही है।

११

सारांश

साम्प्रदायिक समस्याके इतिहासका, खासकर जहांतक मुसलमानोका प्रश्न है और ब्रिटिश सरकारने जो भाग लिया है, हमने सविस्तार वर्णन किया है। उस विस्तृत इतिहासको कई भागोमे बाटकर हम यहा उसका सक्षेप दे देना चाहते है--

पहला युग वह है जब ईस्ट इण्डिया कम्पनी अधिकार प्राप्त कर भारतमे ब्रिटिश शासनकी जड़ जमा रही थी। उसने स्पष्टत: फूटकी नीतिसे काम लिया ताकि इस विदेशी ताकतके खिलाफ भारतीय सयुक्त मोरचा कायम न कर सकें। इसके लिए उसने कभी इस राजाका साथ दिया और कभी उस राजाका। १९वी सदीके प्रथम चरणतक प्राय सभी भारतीय नरेश दबा दिये गये या दोस्त बना लिये गये ओर मुगल सम्राट् दिल्लीमे अग्रेजोके हाथके खिलौना मात्र रह गये थे। जो देशी राज्य बचे रह गये थे उन्हे शीघ्र ही खतम कर दिया गया।

दूसरा युग वह है जब एक या दूसरे बहानेसे देशी राज्य कम्पनीके राज्यमे मिला लिये गये और कम्पनीका शासन दृढ बनाया गया। इस समय विदेशी शासनके खिलाफ असन्तोषकी भावना घनी और बलिष्ठ हो गयी थी। प्रतिष्ठा अधिकारका ही अपहरण नही बल्कि सुख-समृद्धिका भी अपहरण मुसलमानोको बहुत खटकता था। इसके खिलाफ सुधारका आन्दोलन जारी किया गया लेकिन

इसने सिखोंके खिलाफ जो उस समय पञ्जाबके शासक थे, जेहादका रूप धारण कर लिया। ब्रिटिश सरकारने यदि उसे प्रोत्साहन नही दिया तो उसे उपेक्षासे अवश्य देखा। लेकिन सिखोंने पञ्जाब जीत लेनेके बाद उसे निर्दयतासे दबा दिया गया।

असन्तोषकी जो आग भीतर ही भीतर सुलग रही थी वह १८५७ में विद्रोहका रूप धारण कर भभक उठी। इस विद्रोहमें हिन्दू और मुसलमान सभी शामिल थे और वे सब दिल्लीके सम्राट्के झण्डेके नीचे इकट्ठे हुए। विद्रोह असफल हुआ और इसके साथ ही मुगल साम्राज्यका अन्त भी हो गया और भारतका शासन इंग्लैण्डकी रानीके अधीन हो गया। विद्रोहके बाद भयानक दमनचक्र चला। इसमे मुसलमान सबसे ज्यादा पीसे गये। दमनचक्रके बाद होश संभालनेमे देशको कई साल लग गये।

कम्पनीके शासनके साथ ही भारतमें अंग्रेजी शिक्षाका समावेश हुआ था। हिन्दुओने इससे लाभ उठाया। मुसलमानोने उपेक्षा की, इससे पीछे रह गये। सर सैयद अहमदखाने मुसलमानोमे शिक्षा-प्रचारके लिए आन्दोलन शुरू किया। इसी निमित्त उन्होने अलीगढ़ कालेजकी स्थापना की। राजनीतिक क्षेत्रमें १८८५ मे काग्रेसका जन्म हुआ। प्रत्येक प्रान्तके अग्रेजी शिक्षित भारतीयोको यह मच मिल गया जहा एकत्र होकर वे लोग सार्वजनिक महत्त्वके मामलोपर बहस करने थे ओर लोगोकी शिकायते दूर करनेके लिए सरकारसे सिफारिशे करते थे। इसी समय श्री बेक अलीगढ कालेजके प्रिन्सिपल होकर आये। उन्होने अलीगढ कालेजके छात्रोंका ही भार नही सभाला बल्कि मुस्लिम राजनीतिकी बागडोर भी अपने हाथमे ले ली। उनके प्रभावमे आकर सर सैयद अहमदने मुसलमानोको सलाह दी कि वे कांग्रेससे अलग रहे। तो भी बहुतसे मुसलमान काग्रेसके साथ रहे, लेकिन अलीगढ़ कालेजकी ओरसे सदा इसी बातकी चेष्टा होती रही कि मुसलमानोंकी उन्नतिके लिए इंग्लैण्डके अनुदार दल तथा भारतके सरकारी अधिकारियोसे मेलजोल रखना ही श्रेयस्कर होगा। इस उद्देश्यकी पूर्तिके लिए पैट्रियाटिक असोसियेशन तथा मुहम्मदन डिफेंस असोसिएशन नामक संस्थाओ-

की स्थापना की गयी जिनका कार्य-संचालन अलीगढ़ कालेजके प्रिंसिपल श्री बेक तथा श्री (बादमे सर) थियोडोर मारिसनकी देखरेखमे होता रहा।

बीसवी सदीके प्रथम दशकमे लार्ड कर्जनने बग-भग किया। उनका उद्देश्य एक ऐसा प्रान्त कायम करना था जिसमे मूसलमानोका बहुमत हो। इसके खिलाफ भीषण आन्दोलन शुरू हुआ और जैसी आशा की जाती थी बगालके हिन्दू और मुसलमानोके बीच घोर विद्वेष पैदा हो गया यद्यपि उस समय भी अनेक ऐसे मुसलमान थे जो बग-भगके खिलाफ थे। लार्ड कर्जनके बाद लार्ड मिण्टो भारतके बड़े लाट होकर आये। भारत-मन्त्री लार्ड मार्लेके परामर्शसे उन्होने शासन-सुधारका एक मसविदा तैयार किया। शासन-सुधारकी प्रत्याशामे अलीगढ़ कालेजके उस समयके प्रिंसिपल श्री आर्चबाल्डकी सलाहसे—जिनका सम्पर्क बड़े लाटके प्राइवेट सेक्रेटरीसे था—मुसलमानोका एक प्रतिनिधि मण्डल सघटित किया गया। इस डेपुटेशनके अगुआ श्री आगाखा थे। बड़े लाटने मुसलमानोके विशेष दावाको कबूल किया और व्यवस्थापक सभाके लिए उन्हे पृथक् निर्वाचन प्रणालीके आधारपर प्रतिनिधि चुननेका हक दे दिया। बड़े लाटने मुसलमानोकी यह बहुत बड़ी सेवा समझी क्योकि इसके द्वारा मुसलमानोको राजद्रोहियोके साथ सम्पर्क स्थापित करनेसे रोका जा सका। इस तरह जो बीज बोया गया वह आज बहुत बड़ा पेड़ बन गया है। उसकी जड़ गहराईतक पहुच गयी है और उसके डारपात दूर-दूरतक फैल गये है। इससे भारतका सबसे अधिक अहित हुआ है और ब्रिटिश सरकारको सबसे ज्यादा नफा, क्योकि इसीकी आड़मे वह भारतकी स्वाधीनताका रास्ता रोककर खडी है।

मजबूर होकर काग्रेसने पृथक् निर्वाचन प्रणालीको ही स्वीकार नही कर लिया बल्कि उन प्रान्तोमे जहा मुसलमानोका अल्पमत था, उनकी जनसख्याके अनुपातसे बहुत अधिक प्रतिनिधित्व भी दिया। १९१६ मे लखनऊमे काग्रेस और लीगके बीच समझौता हुआ और ब्रिटिश सरकारके सामने सयुक्त माग पेश की गयी। इसके दो भाग थे। पहले भागमे व्यवस्थापक सभाओमे मुसलमानोके प्रतिनिधित्व और पृथक् निर्वाचन-प्रणालीकी बात थी और दूसरे भागमे यह नरम माग

की गयी थी कि देशके शासनमें यहाके निवासियोंको भी कुछ हिस्सा दिया जाय। ब्रिटिश सरकारने ऐलान किया कि उसकी यह हार्दिक इच्छा है कि भारतीयोको धीरे-धीरे स्वायत्त शासन दे दिया जायगा। इसके बाद माण्ट-फोर्ड शासन-सुधार आया। इसमें मुसलमानोसे सम्बन्ध रखनेवाली पृथक् निर्वाचन प्रणाली और प्रतिनिधित्वकी बात तो पूरी तरह स्वीकार कर ली गयी लेकिन राजनीतिक अधिकारकी बात एकदम उड़ा दी गयी और उसके स्थानपर प्रान्तोमे द्वैध शासनकी स्थापना की गयी।

यूरोप तथा भारतमे होनेवाली घटनाओके फलस्वरूप भारतके प्रत्येक समाज और जातिमे बहुत अधिक जागृति हुई। पञ्जाबके हत्याकाण्ड तथा खिलाफतके प्रश्नने हिन्दू, मुसलमान तथा अन्य जातियोको सामूहिक आन्दोलनकी ओर खीचा। काग्रेस, खिलाफत कमेटी, जमैयतुल-उलेमा तथा अन्य सस्थाओने साथ मिलकर काम करना आरम्भ किया और लार्ड लायडके शब्दोमे "सफलताके एकदम निकट पहुच गये।" भारतके बडे लाट घबरा गये और उलझनमे पड़ गये। बड़े-बडे हिन्दू तथा मुसलमान नेताओको जेल भेज देने तथा चौरीचोरा काण्डके कारण सविनय अवज्ञा आन्दोलन स्थगित कर देनेके बाद हिन्दू-मुस्लिम दगे आरम्भ हुए जिन्होने कई सालतक देशकी उज्ज्वल कीर्तिको कलकित किया। भ्रातृभाव और मेलजोलके उत्साहवर्द्धक दृश्यका स्थान परस्पर वैमनस्य और मारपीटने ग्रहण किया। अहिंसात्मक असहयोगका कार्यक्रम जिसे हिन्दू और मुसलमनोने एकमतसे स्वीकार किया था और कार्यरूपमे परिणत किया था, कमजोर होकर छिन्न-भिन्न हो गया।

गोहाटी काग्रेसके बाद हिन्दू-मुस्लिम समस्याओको हल करनेका यत्न किया गया। १९२७ के आरम्भमे कतिपय हिन्दू और मुसलमान नेताओमे परस्पर बातचीत हुई और मुसलमान नेताओने अपना मन्तव्य तैयार किया। उसमे चार शर्ते थी। समझदार भारतीयोने पृथक् निर्वाचन प्रणालीकी हानिको समझ लिया था। इसलिए मुसलमान नेता नीचे लिखी चार शर्तोके मान लेनेपर उसका अन्त करनेके लिए तैयार थे। वे शर्ते ये थी—(१) सिन्धको स्वतन्त्र प्रान्तका

रूप दिया जाय। (२) अन्य प्रान्तोंकी भांति सीमाप्रान्त और बलूचिस्तानमें भी सुधार जारी किया जाय। (३) पंजाव और बंगालमे मुसलमानोकी जन-संख्याके अनुसार प्रतिनिधित्व दिया जाय तथा (४) केन्द्रीय व्यवस्थापक सभामें उन्हे कमसे कम एकतिहाई प्रतिनिधित्व मिले।

बातचीत और सलाह मशविरेके फलस्वरूप ऐसा प्रतीत होने लगा कि काग्रेसके मद्रास आन्दोलनके बाद इन शर्तोपर काग्रेसके साथ मुसलमानोंका समझौता हो जायगा।

काग्रेस तथा लीग दोनोने १९२० के शासन-सुधारका बहिष्कार किया था। उससे किसी दलको सन्तोष नही था। नरम दलके लोगोने उसे अपनाया था। १९२० के विधानमे सुधारकी लगातार मांग की गयी थी और ब्रिटिश सरकारने लगातार उस मागको अस्वीकार कर दिया था लेकिन १९२७ में उसने उनके व्यावहारिकताकी जाचके लिए एक वैधानिक कमीशन नियुक्त किया। कमीशनके बहिष्कार और पृथक् निर्वाचन प्रणालीका अन्त करनेके प्रश्नको लेकर लीगमे फूट पैदा हो गयी। मद्रास अधिवेशनमे स्वीकृत प्रस्तावके अनुसार काग्रेसने अन्य दलोके सहयोगसे शासन सुधारका एक मसविदा तैयार किया जो नेहरू रिपोर्टके नामसे प्रसिद्ध है। यह रिपोर्ट कलकत्तामे अखिल भारतीय समझौता सम्मेलनके सामने उपस्थित की गयी। लीगकी ओरसे इसमे अनेक सशोधन उपस्थित किये गये। लीगकी मागे ये थी:—केन्द्रीय व्यवस्थापक सभामे मुस्लिम प्रतिनिधित्व एकतिहाईसे कम नही होना चाहिये। यदि बालिग मताधिकार स्वीकार न किया जाय तो बगाल और पजाबमे मुसलमानोको अपनी जनसंख्याके अनुसार जगहे मिलनी चाहिये और केन्द्रमे उन्हें अवशिष्टाधिकार प्राप्त हो। इसे स्वीकार न किये जानेके कारण लीग इससे हट गयी। उसके बाद ही आल पार्टी मुस्लिम कानफरेन्सका जन्म हुआ और थोड़े ही दिनोके बाद मुस्लिम लीगके दोनो ही दल इसमे समा गये और साथ ही श्री जिनाकी १४ शर्ते मुसलमानोकी मांग बन गयीं।

सलमानोकी मागोमे दो प्रधान मांगें ये थी:—भारतका शासन विधान

संघ-शासनके आधारपर होना चाहिये और व्यवस्थापक सभाओ तथा अन्य प्रति-निधि सस्थाओका संगठन इस प्रकार होना चाहिये कि प्रत्येक प्रान्तमे वहुमतको अल्पमत या बरावरीका बनाये बिना ही अल्पमतको उचित और प्रभावशाली प्रतिनिधित्व दिया जाय। प्रथम गोलमेज कान्फरेन्सने सघ-शासनको स्वीकार-कर लिया। गोलमेज कान्फरेन्सकी माइनारिटी कमेटी किसी निर्णयपर न पहुँच सकी इसलिए ब्रिटिश प्रधान मन्त्री सर रेमजे मैडानल्डको अपना निर्णय देना पड़ा जो "साम्प्रदायिक निर्णय" के नामसे प्रसिद्ध है। इसमे मुसलमानोकी चौदह मागोके अधिकाश अशका समावेश कर दिया गया। केवल केन्द्रीय व्यवस्थापक सभामे मुस्लिम प्रतिनिधित्वके प्रश्नको भविष्यके लिए छोड़ दिया गया और सिन्धको स्वतन्त्र प्रान्तका रूप इस शर्तपर देना स्वी-कार किया गया कि वह अपना खर्च आप सँभाल ले। साम्प्रदायिक निर्णयमे हिन्दू और सिख दोनोके साथ अन्याय किया गया है। जिन प्रान्तोमे मुसल्मानोका अल्पमत है उन प्रान्तोमें उन्हे जो विशेष प्रतिनिधित्व दिया गया था उसे तो कायम रहने दिया गया लेकिन बगालमे हिन्दुओके विशेष प्रतिनिधित्वकी चर्चा कौन करे उन्हें जनसख्याके अनुसार भी प्रतिनिधित्व नही दिया गया। ०१ फीसदी यूरोपियनोको १० फीसदी प्रतिनिधित्व देनेकी व्यग्रतामे हिन्दुओ-को केवल ३२ फीसदी प्रतिनिधित्व दिया गया हालां कि उनकी जनसख्या ४४.८ फीसदी है। बंगालके मुसलमानोके प्रतिनिधित्वमे भी कटौती की गयी लेकिन मुसलमानोकी अपेक्षा हिन्दुओके प्रतिनिधित्वमे बहुत अधिक कटौती की गयी। पजाबमें भी यही बात हुई। अल्पमत हिन्दुओको विशेष प्रतिनिधित्व देने-के बदले सिखोको विशेष प्रतिनिधित्व देनेके लिए उनका उचित प्रतिनिधित्व भी काट लिया गया। अन्य प्रान्तोंमें मुसलमानोंको जो विशेष प्रतिनिधित्व मिला वह पंजाबमे सिखोंको नही मिल सका। हिन्दुओ और सिखोने साम्प्रदायिक निर्णयका घोर विरोध किया लेकिन उसे १९३५ के शासनविधानमे सम्मिलित कर लिया गया। इलाहाबादके समझौता-सम्मेलनमें उनकी जगहपर दूसरा निर्णय रखवानेका प्रयत्न हो रहा था लेकिन ब्रिटिश सरकारने उसमें विघ्न

उपस्थित कर दिया और जो समझौता हुआ था वह रद्द कर दिया गया।

संघशासनकी लगातार मांग मुसलमानोकी ओरसे ही हुई थी। उनके आग्रहपर ही ब्रिटिश सरकारने १९३५ के शासन-विधानमे उसका समावेश किया था। लेकिन १९३५ के शासन-विधानके बाद न जाने किस कारणवश मुस्लिम लीग सघशासनका सबसे बड़ा शत्रु बन गयी। १९३५ के शासन-विधानके अनुसार जो चुनाव हुआ उसमे चार प्रान्तमे लीगको एक भी जगह नही मिली और जिन प्रान्तोमे मुसल्मानोका बहुमत था उनमे भी लीगको वहुमत नही प्राप्त हो सका। इसलिए अन्य दलोके साथ मिले बिना वह किसी भी प्रान्तमे मन्त्रिमण्डल कायम नही कर सकती थी। कांग्रेस लीगके साथ नही मिल सकती थी क्योंकि अनेक प्रान्तोमे लीगके प्रतिनिधि चुने ही नही गये थे और एक ही प्रान्त ऐसा था जहां मुस्लिम प्रतिनिधियोका बहुमत था। इससे लीग चिढ गयी और कांग्रेसका कट्टर शत्रु वन गयी। कांग्रेस-मन्त्रियोके अधिकार-पदपर आरूढ होते ही लीग कांग्रेस-मन्त्रिमण्डलद्वारा मुसलमानोके ऊपर किये गये कल्पित अत्याचारोकी एक तालिका लेकर सामने आयी। यह स्मरण रखनेकी बात है कि जिन गवर्नरोपर अल्पसंख्यकोकी रक्षाका भार था उनमेसे एकने भी कही कांग्रेस-मन्त्रिमण्डलको दोषी नही ठहराया, बल्कि उनके अधिकार पदपर रहते तथा उनके पद त्याग करनेके बाद भी उनके शासनकी प्रशसा ही की है। कांग्रेसने यह भी चाहा कि इन अभियोगोकी जांच भारतके चीफ जस्टिसद्वारा करायी जाय लेकिन श्री जिना राजी नही हुए। कांग्रेसने लगातार इस बातका यत्न किया कि बातचीतके द्वारा यदि सम्भव हो तो कांग्रेस और लीगके भेदभावको मिटाया जाय लेकिन श्री जिनाने यह कहकर रास्ता भी बन्द कर दिया कि कांग्रेसको सबसे पहले यह स्वीकार कर लेना चाहिये कि वह एकमात्र हिन्दुओकी प्रतिनिधि सस्था है और लीग मुसलमानोंकी एकमात्र प्रतिनिधि संस्था है अर्थात् कांग्रेसमें जो मुसलमान शामिल है उन्हे ही नहीं, बल्कि अन्य मुस्लिम संस्थाओको भी छाट दिया जाय। विश्वयुद्धके आरम्भ होते ही कांग्रेस-मन्त्रियोने पद त्याग कर दिया और उसके बाद ही लीगने 'मुक्तिदिवस'

मनाया। काग्रेसने ब्रिटिश सरकारसे यह जाननेकी लगातार कोशिश की कि जहा-तक भारतका सम्बन्ध है इस युद्धका क्या ध्येय है। साथ ही यह वचन भी लेना चाहा कि युद्धके बाद भारतको पूर्ण स्वाधीनता दे दी जाय तथा युद्धकालतकके लिए राष्ट्रीय सरकारकी स्थापना कर दी जाय। ब्रिटिश सरकारने इन मागो-को तो ठुकरा दिया, लेकिन लीगकी मांगके अनुसार १९३५ के संघशासनवाले अशको स्थगित कर दिया और साथ ही यह भी घोषणा कर दी कि भारतके राष्ट्रीय जीवनके प्रधान तत्वो—जिनमे मुसलमान, दलितवर्ग तथा देशी नरेश शामिल है—की रजामन्दी बिना शासनमे किसी तरहका सुधार नही किया जायगा। लेकिन लीगको इतनेसे भी सन्तोष नही हुआ। उसने १९३० मे लाहौरके अधिवेशनमे पाकिस्तानका प्रस्ताव पास किया और मद्रासके अधिवेशनमे उसकी प्राप्तिको अपने ध्येयका एक अग बनाया।

उस समयतक लीग तथा अन्य मुस्लिम संस्थाएँ अपनेको अल्पसंख्यक समु-दाय मानती थी जिन्हे सरक्षणकी आवश्यकता थी। सरक्षणके अनेक उपाय पेश किये गये, जैसे पृथक् निर्वाचन प्रणाली, विशेष प्रतिनिधित्व और श्री जिनाकी १४ शर्ते। ब्रिटिश सरकारने एक-एक करके इन्हे स्वीकार किया। मुस्लिम मागोमे यह भी माग थी कि भारतीय-शासन सघशासनके आधारपर होना चाहिये। ब्रिटिश सरकारने इसे भी स्वीकार कर लिया। जब इतनेसे भी लीगको सन्तोष नही हुआ तब उसने उत्तर-पश्चिम तथा उत्तर-पूरबके इलाकोमे, जहा मुसलमानोका बहुमत है, स्वतन्त्र मुस्लिम राष्ट्रकी स्थापनाकी माग पेश की। द्वितीय विश्वयुद्धके दिनोमे लीग तथा ब्रिटिश सरकारके साथ जो बातचीत चल रही थी उसमे लीगकी मांग इस प्रकार थी :—(१) पाकि-स्तानकी मांग पूरी की जाय और जबतक वैधानिक समस्या पूरी तरह हल न हो जाय तबतक इस सम्बन्धमे कोई ऐसी बात न कही जाय जिसका इसपर बुरा असर पड़े। (२) इस अवधिमे यदि बड़े लाटकी कार्यसमितिका विस्तार हो और यदि कांग्रेस शामिल होना स्वीकार करे तो लीगको हिन्दुओके समान प्रतिनिधित्व मिले और यदि काग्रेस शामिल न हो तो मुसलमानोको अधिक

प्रतिनिधित्व मिले। (३) मुस्लिम प्रतिनिधि केवलमात्र लीगके नामजद हो। हिन्दुओं और काग्रेसोके अत्याचारोसे अन्य अल्पमतकी रक्षाका ठेकेदार लीग बन बैठी। दलितवर्गको उसने हिन्दुओसे अलग एक अल्पसंख्यक माना। प्रान्तोको केन्द्रीय शासन-व्यवस्थासे अलग हो जानेके अधिकारको स्वीकार कर ब्रिटिश सरकारने लीगकी पहली मागको कबूल कर लिया। दूसरी मागको उसने यद्यपि उसी रूपमे स्वीकार नही किया पर कार्यसमितिमें मुसलमान सदस्योको बराबरीकी सख्यामें नियुक्तकर प्रकारान्तरसे स्वीकार कर लिया। हिन्दू सभाने अपने सदस्योको कार्यसमितिमे शामिल होनेकी अनुमति देकर इस व्यवस्थाको कबूल भी कर लिया। लीगकी केवल तीसरी मागको ब्रिटिश सरकारने कबूल नही किया और अपने इच्छानुसार सदस्य नियुक्त करनेका हक अपने हाथमे रखा। काग्रेस इस बातपर बराबर जोर डालती रही कि भारतको आजादीका वचन मिल जाना चाहिये। युद्धके सचालनका काम छोड़कर शेष सब अधिकार भारतीयोको सौप दिया जाना चाहिये। ब्रिटिश साकारद्वारा इन मागोके स्वीकार न किये जानेके फलस्वरूप ८ अगस्त १९४२ का कांग्रेस प्रस्ताव और उसके बाद नेताओकी गिरफ्तारी तथा अन्य घटनाएँ है। ८ अगस्त के प्रस्तावको लीगने मुसलमानोके विरुद्ध माना और उसके वापस लिये जाने-पर जोर देना आरम्भ किया। १९४५ मे ब्रिटिश सरकार नया प्रस्ताव लेकर सामने आयी जो वेवल प्रस्तावके नामसे प्रसिद्ध है और इसपर विचार करनेके लिए काग्रेसने नेताओंको जेलसे मुक्त कर दिया। लार्ड वेवलने एक कान्फ-रेंशका आयोजन किया। इस कान्फरेन्समे उन्होने कांग्रेस तथा लीगके प्रति-निधियो, केन्द्रीय व्यवस्थापक सभाके भिन्न-भिन्न दलोके नेताओं तथा प्रान्तके प्रधान मन्त्रियोंको निमन्त्रण देकर बुलाया। इस प्रस्तावका एक महत्वपूर्ण अग यह था कि बड़े लाटकी कार्य-समितिमें दलितवर्गको छोड़कर हिन्दू और मुसलमान मानोंको बराबर प्रतिनिधित्व दिया जायगा। जैसा ऊपर कहा गया है बराबरीका प्रतिनिधित्व व्यवहारमें १९४१ से ही जारी है। इस समय ब्रिटिश सरकारने उसे प्रस्तावके रूपमें भी पेश कर दिया था; किन्तु कान्फरेन्स असफल रही क्योंकि

श्री जिना इस बातपर अड़े रह गये कि मुसलमान सदस्योंके नामजद करनेका एकमात्र अधिकार लीगको होना चाहिये। श्री जिना इसलिए भी असन्तुष्ट थे कि व्यवहारमें लीगकी स्थिति एकतिहाई अल्पमतकी हो जायगी क्योंकि दलित जाति ईसाई आदि सभी अल्प-संख्यक सम्प्रदायोका आदर्श और ध्येय कांग्रेससे मिलता जुलता है और उनके मत (वोट) सदा कांग्रेसको मिलेंगे। मुसलमानोंकी रक्षा एकमात्र बड़े लाटके अधिकारसे हो सकती है जिसका प्रयोग सदा नहीं हो सकता। हिन्दू और मुसलमानोके बराबरके प्रतिनिधित्वको चरितार्थ करनेके लिए श्री जिनाकी अगली मांग यह है कि हिन्दुओं तथा अन्य जातियोंके प्रतिनिधियोंकी संख्याके बराबर मुसलमानोको प्रतिनिधित्व मिले। सम्भव है इससे भी मुसलमानोंकी पूरी तरह रक्षा न हो सके और श्री जिनाकी अगली मांग मुसलमानोको बहुमत प्रदान करनेकीहो।

इस तरह १९३० से लीगकी माग और ब्रिटिश सरकारकी रिआयतोंकी तीन अवस्थाएँ देखी जाती है। पहली अवस्थामें संघ-शासन तथा अल्पसंख्यकोंके लिए व्यवस्थापक सभाओंमें सन्तोषप्रद और पुरअसर मांगपर जोर दिया गया। चूंकि कतिपय प्रान्तोमे मुसलमानोंका बहुमत है और अन्य सम्प्रदायोंका अल्पमत, इसलिए इस बातकी आशका स्वभावतः की जा सकती है कि उन प्रान्तोके गैरमुसलिम अल्पसंख्यक भी उसी तरहकी माग पेश कर सकता है जिस तरहकी माग मुसलिम अल्पसंख्यक प्रान्तोमें लीग कर रही है। उसके बचावके लिए यह शर्त भी लगा दी गयी है कि किसी प्रान्तका बहुसंख्यक किसी भी दशामें अल्पसंख्यक या बराबरीका नही बनाया जायगा। ब्रिटिश सरकार संघ-शासनको कबूल कर लेती है, मुसलमानोको उन प्रान्तोंमें जहां उनकी अल्पसंख्या है विशेष प्रतिनिधित्व देती है किन्तु वही प्रतिनिधित्व हिन्दुओको बंगाल और पंजाबमें नहीं देती जहां वे अल्पसख्यक समुदाय है; बगालमें तो उन्हें उतना भी प्रतिनिधित्व नही देती जितनी उनकी वास्तविक संख्या है। बंगालमें यूरोपियनोंको विशेष प्रतिनिधित्व देनेके लिए हिन्दुओंके प्रतिनिधित्वमेंसे जितना काटती हैं उससे कही कम मुसलमानोके प्रतिनिधित्वमेंसे काटती है। दूसरी अवस्थामें

ब्रिटिश सरकारद्वारा संघ-शासनकी मांग १९३५ के शासनविधानद्वारा पूरी होते ही लीग उसका विरोध करती है और उत्तर-पश्चिम तथा उत्तर-पूरबके इलाकोंके लिए स्वतन्त्र मुसलिम मांग पेश करती है। जब गैर-मुसलिम बहुसंख्यकका प्रश्न आता है तब अपनी उस शर्तपर जोर नहीं देती कि किसी भी अवस्थामें किसी बहुसंख्यक प्रान्तको अल्पसंख्यक या बराबरीका स्थान नही दिया जायगा बल्कि यह मांग पेश करती है कि यदि कांग्रेस शामिल हो जाय तो हिन्दू बहुसंख्यक और मुस्लिम अल्पसंख्यकको बराबरीका स्थान मिले और यदि कांग्रेस शासक न हो तब हिन्दू बहुसंख्यक अल्पसंख्यक और मुस्लिम अल्पसंख्यकको बहु-संख्यक बना दिया जाय। ब्रिटिश सरकार संघ-शासनको स्थगित कर देती है और वादा करती है कि मुसलमानोंकी स्वीकृति बिना कोई भी शासन-विधान नहीं बनाया जायगा। व्यवहारमें वह हिन्दू और मुसलमानोंके बीच समान प्रतिनिधित्वको स्वीकार करती है। तीसरी अवस्थामे ब्रिटिश सरकार हिन्दू और मुसलमानोका समान प्रतिनिधित्व अपने प्रस्तावका आवश्यक अंग मानकर चलती है। लीग सर-कारके इस प्रस्तावको ठुकरा देती है क्योकि उस समय उसे मुस्लिम सदस्योको नाम-जद करनेका अधिकार नही मिलता। तब तो वह यह दिखलानेका प्रयास करती है कि दलितवर्ग, तथा ईसाई प्रतिनिधि बहुमत हिन्दुओका ही साथ देंगे इसलिए मुसलमान सदा अल्पमत बने रहेंगे और अपने स्वार्थोंकी रक्षा नही कर सकेंगे—यदि कार्य-समितिमें अल्पमत मुसलमानोंको केवल हिन्दुओके ही मुकाबले नही बल्कि हिन्दू बहुमतके साथ-साथ अन्य समुदायोके प्रतिनिधियोको मिलाकर, बहुमत नही दिया जायगा। लीगकी मांग और ब्रिटिश सरकारद्वारा उसकी पूर्तिकी घुड़दौड़में लीग सदा चार कदम आगे ही रही है लेकिन हिन्दू बहुसंख्यक तथा अन्य अल्पसंख्यक समुदायोंको इसमें प्रवेश करनेकी भी गुजाइश नही है। कोई आश्चर्यकी बात नही है यदि साम्प्रदायिक त्रिभुजकी आधार-रेखा बढ़ती जाती है और तद-नुसार ही साम्प्रदायिक मतभेदका कोण चौड़ा होता जाता है।

———————

तृतीय भाग

विभाजनकी योजनाएँ

१

भारतके लिए स्वतन्त्र राष्ट्रोंका संघ

हिन्दू और मुसलमान दो भिन्न राष्ट्र है, इस सिद्धान्तकी बहुत अधिक विवेचना की गयी। इसमें हमलोगोंने यह भी देखा कि भारतमें मुस्लिम शासनकी लम्बी अवधिमें दोनों जातियोंके सचेतन प्रयास तथा आर्थिक, राजनीतिक, सामाजिक और धार्मिक कारणोंसे—जिनकी क्रिया और प्रतिक्रिया अनवरत होती रही—एक संस्कृतिका उदय हुआ था जिसे न तो पूर्णतः हिन्दू संस्कृति कह सकते हैं और न मुस्लिम संस्कृति ही। उसे हिन्दुस्तानी संस्कृति भले ही कहें। हमलोगोंने यह भी देखा है कि भारतको मुस्लिम और गर-मुस्लिम भागोंमें बांटनेके प्रस्तावके समर्थनमें दो राष्ट्रोंके सिद्धान्तका उदय अभी हालमें ही हुआ है। इस बातको अस्वीकार नही किया जा सकता कि लीगने १९४० से इस विभाजनको प्राप्त करनेका अनेक बार निश्चय किया। इसलिए इस मांगके गुणदोषोंका विवेचन आवश्यक प्रतीत होता है क्योंकि लीग बहुत अधिक मुसलमानोंका प्रतिनिधित्व करती है।

इस प्रस्तावके पक्षमें और विपक्षमें बहुत कुछ लिखा गया है। दोनों तरफसे जोशपूर्ण बहस उपस्थित की गयी है और भावुकताको प्रश्रय दिया गया है। भावुकता मूल्यवान वस्तु है और उसे यों ही नही टाला जा सकता और न तो मुकावला किये बिना उसे छोड़ा ही जा सकता है। लेकिन वास्तविकताके सहारे उसका नियन्त्रण हो सकता है क्योंकि वास्तविकता ऐसे नाजुक स्थलोंपर अपना प्रभाव दिखाये बिना अनेक व्यवस्थाओंको जिन्होंने उसकी पूरी अवज्ञा की हो—व्यर्थ सिद्ध किये बिना नहीं रह सकती। इसलिए मैं उन सभी लोगोंके समक्ष—जो योजनाके पक्ष या विपक्षमें हों—कुछ स्थूल बातें उपस्थित करना चाहता हूं। यह करनेके पहले मैं उन योजनाओंका संक्षिप्त वर्णन कर देना

चाहता हूँ जो सांस्कृतिक आधारपर या सांस्कृतिक आवश्यकताके लिए समस्त भारत या उसके किसी अंशको स्वतन्त्र राष्ट्रोंमें बांटना चाहती है। यह करना इसलिए भी आवश्यक है क्योंकि अभीतक अखिल भारतीय मुस्लिम लीगने कोई व्यवस्थित ढांचा नही पेश किया है बल्कि कुछ थोड़े साधारण सिद्धान्त जिनके आधारपर प्रस्तावित बंटवारा निर्भर है--पेश करके ही सन्तोष कर लिया है।

१९४० के मार्चमे लाहौरके अधिवेशनमे इस विषयपर प्रस्ताव पास करनेके पहले ही इस सम्बन्धमें कई योजनाएँ प्रकाशित हो चुकी थी। लीगने न तो उन योजनाओंमेंसे ही किसीको अपनाया और न अपनी ही कोई विस्तृत योजना प्रकाशित की बल्कि बटवारेके सिद्धान्तका प्रस्तावमात्र पास कर लिया और विस्तृत योजनाका ढाचा तैयार करनेका काम आगेके लिए छोड़ दिया। आजतक उसने कोई योजना प्रकाशित नही की यद्यपि उस प्रस्तावके स्वीकृत हुए पांच सालसे ज्यादा हो गये। इसलिए जो लीगके प्रस्तावके गुणदोषोंका अध्ययन करना चाहते है उन्हें बड़ी कठिनाईका सामना करना पड़ता है और वे उन योजनाओंकी ही छानबीन करते है जिन्हे समय समयपर किसी दल या व्यक्तिने उपस्थित किया है लेकिन जिन्हें लीगसे ऐसा करनेके लिए कोई अधिकार प्राप्त नहीं है। यहां यह लिख देना भी आवश्यक है जैसा आगेकी विवेचनासे प्रकट होगा, कि इन प्रकाशित योजनाओमे एक भी ऐसी नहीं है जिसका उन बुनियादी सिद्धान्तोसे मेल खा सके जो लीगके लाहौरवाले प्रस्तवामें दिये गये है। तो भी इनपर विचार करना आवश्यक है क्योंकि इससे यह दिखलानेमें सहूलियत होगी कि लीगकी शर्तोंसे उनका कहां मतभेद है।

पञ्जाबीकी योजना

यह योजना श्री पञ्जाबीकी है जो उनकी लिखी पुस्तकमें प्रकाशित हुई है। उन्होंने इसका वर्णन कुछ विस्तारसे किया है। उनके अनुसार भारत उपद्वीपका बँटवारा कई संघोंमें हो सकता है और उसके बाद सबको एक संघशासनमें मिला लिया जा सकता है।

(१) इण्डस प्रदेशीय संघमें पञ्जाब (इसमें पञ्जाबके वे पूर्वी हिस्से—अम्बाला कमिश्नरी,कांगड़ा जिला और होशियारपुर जिलेकी उना तथा गढ़शंकर तहसील शामिल नही रहेंगी क्योंकि यहां हिन्दुओंकी आबादी अधिक है) सिन्ध, उत्तर पश्चिमी सीमाप्रान्त, बलूचिस्तान, बहावलपुर, अम्ब, धीर, स्वात, चित्राल, खैरपुर, केलात, लासबेला, कपूरथला, मलेरकोटाके इलाके शामिल रहेंगे। इस योजनाके जनकका अन्दाज है कि इस प्रदेशमें,जिसका नाम वे इण्डस्तान रखना चाहते है, ३, ९८, ८३८ वर्गमील भूमि और ३,३०,००,००० जनसंख्या शामिल होगी। इसमे ८२ फीसदी मुसलमान ६ फीसदी सिख और ८ फीसदी हिन्दू होंगे।

(२) हिन्दू भारतके संघमे सयुक्तप्रान्त, मध्यप्रान्त, बिहार, बंगालप्रान्तके कुछ हिस्से, उड़ीसा, आसाम, मद्रास, बम्बई तथा राजिस्थान और दक्खिनकी रियासतोको छोड़कर देशी राज शामिल होगे। दक्खिनकी रियासतोका एक अलग संघ होगा। उन्होने इन क्षेत्रोके क्षेत्रफल और जनसख्याकी गणना नही की है। केवल बंगाल सघका दिया है जो इस प्रकार होगा :—

क्षेत्रफल—७,४२,१७३ वर्गमील।

जनसख्या २१,६०,४१,५४१।

हिन्दू ८३.७२ फीसदी।

मुसलमान ११ फीसदी।

(३) राजिस्तान संघ—इसमें राजपूताना और मध्यभारतके अनेक देशी राज्य शामिल होंगे। इस संघका क्षेत्रफल १,८०,६५६ वर्गमील, जनसंख्या १,७८,५८,५०२ होगी। इसमें हिन्दू ८६.३९ और मुसलमान ८.०९ फीसदी होंगे।

(४) दक्खिन रियासत संघमें हैदराबाद, मैसूर और बस्तरकी रियासते शामिल होंगी।

क्षेत्रफल १,२५,०८६ वर्गमील।

जनसंख्या २,१५,१८,१७१।

हिन्दू	८५·२८ फीसदी।
मुसलमान	८·९ ,, ।

(५) बंगाल-संघ—इस संघमें पूर्वी बंगालके मुस्लिम-प्रधान क्षेत्र, आसाम के ग्वालपुर और सिलहट जिले इसकी प्रान्तीय इकाई होंगें। त्रिपुरा तथा अन्य-देशी रियासतोंके वे हिस्से भी इसमे शामिल रहेगे जो इसकी प्रान्तीय इकाईके अन्दर आ जायँगे या जो हिन्दू इकाईसे छांटे हुए रहेंगे।

इस संघका क्षेत्रफल ७०,००० वर्गमील।

जनसंख्या	३,१०,००,०००।
मुसलमान	२,०५,००,००० या ६६·१ फीसदी।
हिन्दू	१,०१,००,००० या ३२·६ फीसदी।

पञ्जाबीने इस बातको स्वीकार किया है कि इन क्षेत्रोंकी पूरी जानकारी न होनेके कारण उनके इस सुझावमे स्थानीय मुसलमानोंमे आवश्यकताके अनुसार उलट फेर हो सकता है। पञ्जाबीके आंकड़े भी सही नहीं प्रतीत होते यद्यपि उनसे किसी तरह औसतका अन्दाज लग जाता है। बंगालके जिन जिलोंको उन्होंने शामिल किया है, वे ये है—दिनाजपुर, रंगपुर, मालदा, बोगरा, राजशाही, मुर्शिदाबाद, पबना, मैमनसिह, नदिया, जैसोर, फरीदपुर, ढाका, त्रिपुरा, नोआखाली, बाकरगंज, खुलना तथा चटगांव।

इस तरह जिन पांच राष्ट्रोंमें भारतका बॅटवारा किया गया है उनमें दो मुस्लिम राष्ट्र होंगे जिनमें मुसलमानोंका बहुमत होगा और बाकी हिन्दू राष्ट्र जिनकी जनसंख्यामें अत्यधिक हिन्दू बहुमत होगा। यह स्मरण रखनेकी बात है कि इण्डस्तान राष्ट्रमें हिन्दू ८ फीसदी और सिख ६ फीसदी होंगे अर्थात् १४ फीसदी आबादी गैर-मुसलमानोंकी होगी। बंगाल राष्ट्रमें हिन्दुओंकी जनसंख्या ३२·६ फीसदीसे कम नही होगी। तीन. हिन्दू राष्ट्रोंमें मुसलमानोंकी जनसंख्या क्रमशः ११ फीसदी ८·०९ फीसदी तथा ८·९ फीसदी होगी।

इन पांच राष्ट्रोंका एक स्वतन्त्र संघराष्ट्र कायम होगा। "ऊपरकी व्यवस्थाके अनुसार इसमें जो राष्ट्र शामिल होगे उनमेंसे प्रत्येकके लिए एक गवर्नर जेनरल

और उनके प्रत्येक प्रान्तके लिए एक एक गवर्नर नियुक्त किये जायंगे। जिन विषयोंसे संघराष्ट्रका सम्बन्ध होगा तथा संघके अन्तर्गत देशी राज्योंसे सम्बन्ध रखनेवाले मामलोंके लिए ये राष्ट्र केन्द्रीय संघ या संघराष्ट्रके प्रति उत्तरदायी होंगे। संघराष्ट्र सम्बन्धी अधिकार वाइसरायके हाथमें रहेगा। उनकी सहायताके लिए संघ राष्ट्रीय समिति रहेगी। इसके सदस्य भिन्न-भिन्न राष्ट्रोंके प्रतिनिधि होंगे। प्रत्येक राष्ट्रके प्रतिनिधियोकी संख्या उसके भौगोलिक महत्व, जनसंख्या, क्षेत्रफल आर्थिक स्थिति आदिके आधारपर नियत होगी। वैदेशिक सम्बन्ध, रक्षा, समान नैसर्गिक आधारसे जलकी व्यवस्था तथा देशी राज्योंके प्रति साम्राज्यके अधिकार और कर्तव्य (यदि कोई राज्य ब्रिटिश प्रान्तीय राष्ट्रोमें शामिल न हो) की जिम्मेदारी गवर्नर जनरलोके हाथमें होगी जो वाइसरायके प्रति उत्तरदायी होगे। जो राष्ट्र इस राष्ट्रसघमे शामिल होगे वे इसके व्ययके लिए या तो नकद रकम दे दिया करेंगे या अपनी आमदनीका कुछ अंश इसके व्ययकी मदोंके लिए निर्धारित कर देंगे। लेकिन सीमाप्रान्तके मुसलमान इसकी आमदनीके लिए चुंगीकी रकम नही निर्धारित करेगे।*

इस योजनाके जनक दो बातोंको स्पष्ट कर देनेके लिए बड़े व्यग्र दिखायी देते हैं। सबसे पहले तो यह कि यह राष्ट्रसंघ किसी भी प्रकार भारतीय उपद्वीपकी भौगोलिक इकाईको तोड़कर उसका बँटवारा भिन्न-भिन्न सम्प्रदायोंकी जनसंख्या और सांस्कृतिक आधारपर नहीं करना चाहता। जिस तरह एक परिवारके लोग परस्पर सम्बन्ध विच्छेदके बिना आपसी बँटवारा कर लेते हैं, उसी तरहके बँटवारेकी योजना पञ्जाबीने पेश की है। अर्थात् भारतीय उपद्वीपके भिन्न भिन्न भागोंको सांस्कृतिक आधारपर भिन्न-भिन्न सम्प्रदायोमें बांटकर राष्ट्रीय संघमें वह उन्हें फिर एकत्र कर लेना चाहते है।† दूसरे—'हमलोग उन मुसलमानोंको जो इसलिए विभाजन चाहते है ताकि भारतके बाहरके मुसलमान-राष्ट्रोंके

---

* पञ्जाबी लिखित 'कान्फेडरेसी आव इण्डिया' पृ० १२-१३।
† ,, ,, पृ० १५।

साथ वे अपना सम्बन्ध स्थापित करें—स्पष्ट बतला देना चाहते है कि इस तरहकी कोई भी आकांक्षा इस विभाजनका आधार नही हो सकती। हमलोग अलग होकर फिर राष्ट्रसंघके रूपमें एक हो जायंगे। यदि हिन्दू भारत तथा मुस्लिम भारतके संघराज्य हिन्दुओको स्वीकार न हों तो हमलोग उनसे अलग होकर हिन्दू भारतसे अपना हर तरहका सम्बन्ध तोड़ लेगे।'* लेकिन उस पुस्तकके अन्तमे जो कुछ लिखा गया है उसे देखनेसे स्पष्ट हो जाता है कि वही अन्तिम ध्येय नही बना रह सकता। "यह स्पष्ट कर देना आवश्यक है कि हिन्दू भारतसे अपनेको अलग कर लेनामात्र हमलोगोका अन्तिम ध्येय नही है बल्कि एक आदर्श इस्लामिया राजकी प्राप्तिका यह साधन है। विभाजनसे कमसे कम हमलोग हिन्दुओंकी आर्थिक गुलामीसे तो मुक्त हो जायंगे। चूंकि हमलोगोंका ध्येय आदर्श इस्लामिया राजकी स्थापना है जिसका मतलब पूर्ण स्वाधीनता है। स्वाधीनताकी प्राप्तिके बाद इस्लामिया राजका आदर्श लेकर गैर-इस्लामिया राष्ट्रोके साथ अधिक कालतक रहना असम्भव हो जायगा। हमलोगोको तो इस्लामी आधारपर विश्वक्रान्तिके लिए प्रचार करना होगा। इस तरह हमलोगोंका अन्तिम ध्येय इस्लामी आधारपर विश्वक्रान्ति है। विभाजन, हिन्दुओकी आर्थिक गुलामीसे मुक्ति, ब्रिटिश शासनकी वैधानिक गुलामीसे छुटकारा आदि तो उस महान ध्येयकी प्राप्तिके लिए साधनमात्र है।"† उक्त पुस्तकके लेखक आबादीका आदान-प्रदान नही चाहते। वे लिखते है—"जन-संख्याके आदान-प्रदानकी अपेक्षा हमलोग हिन्दू भारतसे उन क्षेत्रोका अलग किया जाना ही पसन्द करेगे जहां मुसलमानोका बहुमत है। उत्तर पश्चिममें पंजाबकी अम्बाला कमिश्नरी तथा अन्य हिन्दू इलाके इण्डस प्रदेशसे तथा पूरबमें बंगालकी चटगांव, राजशाही और ढाका कमिश्नरियां और आसामके ग्वालपाड़ा और सिलहट ज़िले उत्तर-पूर्वी प्रदेशसे आसानीसे अलग कर स्वतन्त्र मुस्लिम-राष्ट्र

---

* पन्जाबी लिखित 'कान्फेडरेसी आव इण्डिया' पृ० १७।

† ,, ,, पृ० २६९-७०।

स्थापित किये जा सकते हैं। इस विभाजनसे कमसे कम इण्डस प्रदेशके २५७, १४,६५७ और बंगाल तथा आसामके २३०,००,००० मुसलमानोंका हिन्दुओंकी प्रधानतासे उद्धार हो जायगा। केवल २८९६३३४३ मुसलमान हिन्दू प्रदेशमें रह जायंगे।* दूसरे शब्दोंमें पञ्जाबीके अनुसार ६३ फीसदी मुसलमानोंका हिन्दुओसे उद्धार हो जायगा और ३७ फीसदी इनके चंगुलमे फँसे रह जायंगे।

मुस्लिम लीगके प्रस्तावसे यह योजना एकदम भिन्न है क्योंकि इसमें स्वतन्त्र राष्ट्रोंके संघकी स्थापनाकी चर्चा है। इसके अनुसार एक संघ या केन्द्रीय सरकार होगी जो अपने प्रत्येक अंगकी देखभाल करेगी—'खासकर विदेशी सम्बन्ध, रक्षा, पानीके समान नैसर्गिक स्रोत तथा देशी राज्योके प्रति संघके कर्तव्य और अधिकारकी।'† इस योजनाके अनुसार मुस्लिम प्रदेश पूर्ण स्वतन्त्र राष्ट्र नही होगा अर्थात् रक्षा, वैदेशिक सम्बन्ध, यातायात, चुगी तथा अन्य आवश्यक बातोंपर उसका पूरा अधिकार नहीं रहेगा। वास्तवमें मुस्लिम तथा गैर-मुस्लिम दो स्वतन्त्र राष्ट्रोंकी स्थापना इस योजनाका उद्देश्य नहीं है, बल्कि इसका उद्देश्य देशके भिन्न भागोंको पांच ऐसे हिस्सोमें बाट देना है जिनमेंसे प्रत्येकके अधीन कई प्रदेश होगे। इन मातहत प्रदेशोंको प्रान्तीय स्वराज्य प्राप्त होगा और ये सब मिलकर एक राष्ट्र कायम करेंगे और इन स्वतन्त्र राष्ट्रोंको मिलाकर समूचे देशका एक राष्ट्रसंघ कायम किया जायगा।

जैसा आगे दिखलाया जायगा लीगका प्रस्ताव देशी राज्योंके बारेमें कुछ नहीं कहता लेकिन इस योजनामें देशी राज भी शामिल है और उन्हें भी संघमे शामिल करनेकी व्यवस्था है।

इस योजनामें भारत या उसके किसी भागको ब्रिटिश साम्राज्यसे मुक्त करनेकी व्यवस्था नही है बल्कि गवर्नर जनरल वाइसराय तथा गवर्नरोंके पदोंको ज्योंका त्यों कायम रहने देनेपर ही इसमें जोर दिया गया है।

---

* पञ्जाबी लिखित 'कान्फेडरेसी आव इण्डिया' पृ० २०४। † पृ० १३।

यह योजना मुस्लिम लीगने ,इस प्रस्तावको जहांतक सम्भव है पूरा करनेकी चेष्टा करती है कि जिस क्षेत्रमें—जैसे उत्तर-पश्चिमी तथा उत्तर-पूर्वी मुसलमानोंकी जनसंख्या अपेक्षाकृत अधिक है वहां जरूरतके अनुसार प्रदेशोंको एकत्र करके एक स्वतन्त्र राष्ट्र कायम कर दिया जाय। इसे पूरा करनेके लिए यह योजना पञ्जाब तथा बंगालके उन हिस्सोंको भी मुस्लिम राष्ट्रके लिए ले लेती है जहां मुसलमानोंका अल्पमत है। लेकिन व्यवहारमें यह सही नही उतरती क्योंकि उसी आधारपर मुस्लिम राष्ट्रसे कुछ क्षेत्रोंको अलग भी करना पड़ेगा। उदाहरणके लिए पंजाबकी जालन्धर कमिश्नरीको इण्डस्तान संघसे अलग कर देना होगा क्योंकि वहां मुसलमानोंका अल्पमत है और प्रत्येक जिलेमे हिन्दुओं तथा सिखोंका बहुमत है। यदि उस कमिश्नरीके प्रत्येक जिलेकी अलग अलग समीक्षा की जाय तो कागडा तथा होशियारपुर जिलोमें हिन्दुओका अत्यधिक बहुमत पाया जायगा। लुधियाना जिलेमें मुसलमानोंकी अपेक्षा सिख अधिक है। केवल जालन्धर और होशियारपुर जिलोमें हिन्दुओं और सिखोंकी अलग-अलग जनसंख्याकी अपेक्षा मुसलमानोंकी संख्या अधिक है। लेकिन हिन्दू और सिखोंकी कुल संख्या मिला देनेपर मुसलमानोंकी संख्या कम हो जाती है। लाहौर कमिश्नरीके अमृतसर जिलेमें भी मुसलमानोंकी अपेक्षा हिन्दुओं और सिखोंका संयुक्त बहुमत है, मुसलमानोंका अल्पमत। इस जिलेमें सौमे ५४ गैर-मुसलमान और ४६ मुसलमान हैं। बंगालमें भी ग्वालपाड़ा जिलामें मुसलमानोंकी अपेक्षा गैर-मुसलमानोंका बहुमत है इसलिए इस जिलेको भी मुस्लिम राष्ट्रमें शामिल करना उचित नहीं होगा। विभाजनका मतलब मुस्लिम इकाई कायम करना है, इसलिए जिन क्षेत्रोंमें गैर-मुसलमानोंकी अपेक्षा मुसलमान कम है उन क्षेत्रोंको शामिल करनेके लिए कोई यथेष्ट कारण नहीं है।

विभाजनकी योजनाओंकी जो आलोचना आगे की गयी है उससे स्पष्ट प्रकट होगा कि कोई भी योजना सार्थक नहीं है, लेकिन पंजाबीने अपनी योजनामें जिन बातोंका समावेश किया है वे तो और भी विचित्र है। जिन पांच संघोंमें वे देशका विभाजन करना चाहते हैं वह किसी भी सिद्धान्तपर अवलम्बित नहीं

है। इसका केवल मात्र आधार यही है कि इनमेंसे दो मुसलिम संघोंमें मुसलमानों-का बहुमत है। दूसरे संघोंके बीचमें आ जानेसे हिन्दू संघोंमें छः प्रदेश इनसे एक-दम कटकर अलग हो जाते हैं। हिमालयसे कन्याकुमारी अन्तरीपतक तथा अरब सागरसे चीन और बर्माकी सीमातक यह फैला हुआ है। इसलिए एक भागको दूसरे भागसे जोड़नेके लिए अनेक पगडण्डियां निकालनी होंगी। कितने ही प्रदेशोंको उनके पुराने साथियोंसे अलग कर उन्हें ऐसे इलाकोंमें मिला दिया जायगा जिनसे वे बहुत दूर है। सिन्धी, वलूची और पश्तोको छोड़-कर भारतमें बोली जानेवाली सभी भाषाओंका प्रयोग इस विस्तृत प्रदेशमें पाया जायगा। साथ ही इस क्षेत्रके लोग देशके भिन्न-भिन्न धर्मोके माननेवाले भी पाये जायंगे, केवल इनकी संख्यामें फर्क होगा। इसमें ब्रिटिश भारत तथा देशी राजोंके हिस्से पाये जायगे। यदि अन्य भेदभावोके रहते हुए भी केवल दो करोड़ मुसल-मानोके कारण इस विस्तृत क्षेत्रका एक संघ राष्ट्र कायम हो सकता है तब कोई कारण नही है कि समूचे भारतका एक संघ राज कायम न हो सके। यदि राज-पूताना और मध्यभारतके देशी राज्योंका एक संघ बन सकता है तब कोई कारण नही है कि बस्तारको जो भाषाके कारण स्वभावतः छत्तीसगढ़ या उड़ीसा-की रियासतोंका अंग है—उससे काटकर हैदराबाद संघमें मिला दिया जाय। इसी तरह ट्रावंकोर और कोचीनके देशी राज्योंको जो कम या बेशी मैसूरके निकटवर्ती हैं, दक्खिनके देशी राज्यसंघसे काटकर हिन्दू राष्ट्रसंघमें मिलाये जायं। हैदराबादके निवासी उर्दूके अतिरिक्त जो वहांके शासनकी भाषा है, मराठी, तेलगू और कनारी तीन भाषा बोलते है। यदि इस संघमें मैसूर, कोचीन और ट्रावंकोरको मिला दिया जाता है तब इस संघको एक ही नयी भाषा अर्थात् मलया-लमका—जो कोचीन और ट्रावंकोरमें बोली जाती है—समावेश करना पड़ता है क्योंकि मैसूरकी भाषा कन्नड़ है।

श्री ए० आर० टी०ने भी एक योजनाका खाका तैयार किया था जो ईस्टर्न टाइम्समें प्रकाशित हुआ था और जिसका 'इण्डियाज प्राब्लम आव हर फ्यूचर कांस्टिट्यूशन' नामक पुस्तकमें समावेश है। चूंकि इस योजनाका बहुत

कुछ आधार पञ्जाबकी योजना है इसलिए यहां उसकी अलग मीमांसा नहीं की जाती।

अलीगढ़ योजना

दूसरी योजना अलीगढ़के प्रोफेसर सैयद जफरुल हसन और मुहम्मद अफजल हुसेन कादिरीकी है। इस योजनाके अनुसार हिन्दुस्तानका विभाजन अनेक पूर्ण स्वतन्त्र राष्ट्रोंमें इस प्रकार होगा :—

(१) पाकिस्तान—इसमें पञ्जाब, सीमाप्रान्त, सिन्ध, बलूचिस्तान, तथा जम्मू, काश्मीर, मण्डी, चम्बा, सकित, सुमीन, कपूरथला, मलेरकोटा, चित्रल, धीर, कलास, लोहारू, बिलासपुर, शिमलाके पहाड़ी राज्य तथा बहावलपुरके राज शामिल होंगे।

कुल जनसंख्या ३९२,७६,२४४।

मुसलमान २,३६,९७,५३८ अर्थात् ६०·३ फीसदी।

(२) बगाल—हबड़ा तथा मिदनापुर जिलोंको छोड़कर समूचा बंगाल तथा बिहारका पूर्णिया जिला तथा आसामकी सिलहट कमिश्नरीके जिले इसमें शामिल होंगे।

कुल जनसंख्या ५,२५,७१,२३२।

मुसलमान ३,०१,१८,१८४ अर्थात् ५७·० फीसदी।

(३) हिन्दुस्तान—हैदराबाद, पाकिस्तान तथा बंगाल और उसके अन्तर्गत जिलों तथा रियासतोंको छोड़कर बाकी सब ब्रिटिश भारत तथा देशी राज।

कुल जनसंख्या—२१,६०,००००० ।

मुसलमान—२०,६०,००० अर्थात् ९·७ फीसदी।

(४) हैदराबाद—हैदराबाद, बरार तथा करनाटक (मद्रास तथा उड़ीसा)।

कुल जनसंख्या—२,९०,६५,०९८।

मुसलमान—२१,४४,०१० अर्थात् ७·४ फीसदी।

(२) दिल्ली प्रान्त—दिल्ली, मेरठ कमिश्नरी, रुहेलखण्ड कमिश्नरी तथा आगरा कमिश्नरीका अलीगढ़ जिला।

कुल जनसंख्या—१,२६,६०,०००।

मुसलमान—३५,२०,००० अर्थात् २८·० फीसदी।

(६) मलावार प्रान्त—मलावार तथा इसके आसपासके प्रदेश जैसे दक्षिण कनारा।

कुल जनसंख्या—४९,००,०००।

मुसलमान—१४,४०,००० अर्थात् २७.० फीसदी।

इसके अलावा भारतके जिन शहरोंकी आबादी ५० हजार या इससे अधिक होगी उन्हें बारो या स्वतन्त्र नगरकी हैसियत प्राप्त होगी और इन्हें स्वायत्त शासनके बहुत कुछ अधिकार प्राप्त होंगे। इसमें मुसलमानोंकी आबादी प्रायः १३,८८,६९८ होगी। हिन्दुस्तानके देहातोंमे रहनेवाले मुसलमानोंसे आग्रह किया जायगा कि नगण्यकी भांति छिटफुट न बसकर जैसा कि इस वक्त है, वे उन गांवोंमे जाकर बसें जिनमे मुसलमानोंका बहुमत है।

पाकिस्तान, बंगाल तथा हिन्दुस्तानके ये तीन राष्ट्र निम्नलिखित आधारपर आपसमें रक्षात्मक और आक्रमणात्मक सन्धि कर लेंगे—

(१) एक दूसरेकी स्वतन्त्र सत्ता स्वीकार करते हुए एक दूसरेकी सहायता करें।

(२) पाकिस्तान और बंगाल मुसलमानोंकी तथा हिन्दुस्तान हिन्दुओंकी जन्मभूमि (होमलैण्ड) मान ली जाय और जो मुसलमान या हिन्दू चाहें इन राष्ट्रों-में क्रमशः जाकर बसें।

(३) हिन्दुस्तानमें बसनेवाले मुसलमान पाकिस्तान तथा बंगालके नाग-रिकके रूपमें अल्पसंख्यक राष्ट्र माने जायं।

(४) हिन्दुस्तानके मुसलमान अल्पसंख्यकों तथा पाकिस्तानके गैरमुसलमान अल्पसंख्यकोंको (क) जनसंख्याके अनुसार प्रतिनिधित्व (ख) तीनों राष्ट्रोंद्वारा

कर्नाटक और बरारको हैदराबादमें मिलाकर उसे खुदमुख्तार स्वतन्त्र राज कायम करता है। हैदराबादकी आबादीमें अत्यधिक हिन्दू हैं। मुसलमान केवल १०.४ फीसदी हैं, फिर भी हैदराबादको मुसलिम राष्ट्र माना गया है, यह समझमें नही आता। हैदराबादका शासक मुसलमान होनेके नाते यदि इसे मुसलिम राष्ट्र माना गया है तो काश्मीरको पाकिस्तानमे कैसे लिया जा सकता है, क्योंकि काश्मीरका शासक हिन्दू राजा है।

समस्त भारतमें अनेक स्वतन्त्र नगरोंकी स्थापनाकर वह इस विभाजनको पुष्ट बनानेका यत्न करता है। इस योजनाके जनकोंने भारतके हिन्दू और मुसलमानोंकी तुलना जर्मनीके जेक और सुडेटनसे की है इसलिए इन नगरोंकी तुलना डैजिगसे की जा सकती है। तब क्या भारतमें भी उस इतिहासकी पुनरावृत्ति होगी कि भारतीय जेकों (हिन्दुओं) द्वारा भारतीय सुडेटन (मुसलमानों) के ऊपर अत्याचारकी आड़ लेकर भारतके डैजिग—उन स्वतन्त्र नगरोको मुक्त करनेके लिए जेक (हिन्दुओ) और जेकोस्लोवाकिया (हिन्दुस्तान)के खिलाफ युद्धकी घोषणा की जाय।

हिन्दू और मुसलिम राष्ट्रोंके बीच संरक्षणात्मक और आक्रमणात्मक सन्धिके आधारकी व्याख्या करते हुए इस योजनाके रचयिता दोनों राष्ट्रोंमें परस्पर सहयोग और सद्भावनाकी आशा प्रकट करते है। वे कहते है कि हिन्दुस्तानमें बसनेवाले मुसलमान स्वतन्त्र बड़े राष्ट्रके अंग और अल्पसंख्यक स्वतन्त्र राष्ट्र समझे जायगे, लेकिन पाकिस्तान और बंगालमे बसनेवाले हिन्दुओंको इसी तरहके अधिकार देनेकी वे चर्चातक नही करते। वे यह भी कहते है कि हिन्दुस्तानमे बसनेवाले मुसलमानोंका प्रतिनिधित्व एकमात्र प्रामाणिक मुसलिम राजनीतिक संस्था करेगी लेकिन पाकिस्तान तथा बंगालमें बसनेवाले हिन्दू तथा अन्य अल्पसंख्यक समुदायको वे इस तरहका कोई हक नही देते।

तात्पर्य यह कि इस योजनाका उद्देश्य स्वतन्त्र मुसलिम राष्ट्र कायम करनेका है जिसका एकमात्र यही आधार है कि चित्त पड़ा तो तुम खोये, पट पड़ा तो हम जीते।

रहमतअलीकी योजना

तीसरी योजना चौधरी रहमतअलीकी है। इस योजनाका समावेश उनकी पुस्तक "दी मिल्लत आव इसलाम ऐण्ड दि मिनास आव इण्डियनिज्म" में है। यह पुस्तक १९४० मे लिखी गयी थी। इसके लेखक पाकिस्तान राष्ट्रीय आन्दोलनके जन्मदाता और अध्यक्ष है। इस संस्थाका जन्म १९३३ मे हुआ था। इसका उद्देश्य पाकिस्तानकी मांगको स्थूल रूप देना था अर्थात् उन पांच प्रदेशोंको अलग करनेके लिए जिनके नामके प्रथम अक्षरके संयोगसे 'पाकिस्तान' शब्दका निर्माण होता है, पंजाबसे 'प' अफगानिया (उत्तर पश्चिमी सीमाप्रान्त जिसके निवासी अफगान कहलाते है) से 'अ' काश्मीरसे 'क' सिन्धसे 'स' और बलूचिस्तानसे 'तान'। १९४० में उन्हें यह प्रतीत हुआ कि उनकी योजनाका जिस तरहसे स्वागत हुआ है, उससे "हमलोगोंको केवल इतना ही प्रोत्साहन नही मिलता है कि हम लोग अपनी मांग जारी रखें, बल्कि उसे बंगाल तथा उस्मानिस्तान (हैदराबाद दक्खिन) की ओरसे भी बढ़ायें।"* "क्योंकि इतना तो निश्चित रूपसे कहा जा सकता है कि यदि हमलोग भारतके अन्दर रहनेके लिए राजी हो जायं तो हमलोगोको भारतीयताके अन्दर सड़ना पड़ेगा जिसके धूर्त अनुयायी—भारतीय राष्ट्रवादी—इसे नया रूप प्रदान करनेके लिए तुले है जिन राष्ट्रसवादियोंको तुच्छ अवसरवादी मुसलमानों तथा ब्रिटिश साम्राज्यवादियोंने इसी रूपमे स्वीकार कर लिया है।"† मुसलिम लीगसे भी वे इसलिए नाराज है कि उसने नामके साथ 'अखिल भारतीय' शब्द जोड़ लिया है। क्योंकि मिल्लतकी राष्ट्रीयताको भारतीय राष्ट्रीयतासे भिन्न मानते हुए भी लीग 'अखिल भारतीय' शब्दके साथ सटा हुआ है और भारतको अपनी 'समान मातृभूमि' मानता है।"‡ "भारतकी भौगोलिक इकाईको स्वीकार करनेका अर्थ होगा मिल्लतके गलेमें भारतीयताका

---

* दि मिल्लत आव इस्लाम ऐण्ड दि मिनास आव इण्डियनिज्म—पृ० १।
† ,, ,, ,, पृ० ४।
‡ ,, ,, ,, पृ० ६।

जालिम जुआ डाल देना। लीगको दृढ़ निश्चयी होकर 'भारत' शब्दका परित्याग कर देना चाहिये अर्थात् भारतके साथ हर तरहका सम्बन्ध विच्छेद कर लेना चाहिये। इसीसे भारतीयतासे मिल्लत और पान-इसलामकी रक्षा हो सकती है।* चौधरी रहमतअली पाकिस्तान, बंगाल तथा उस्मानिस्तानके खुदमुख्तार राष्ट्रपर बहुत अधिक जोर देते हैं। आसाम तो बंगालका पुछल्ला है और उसके अनुसार इस क्षेत्रका नाम बंग-इ-इसलाम होगा। "इस स्थूल सत्यको कह देना उचित है कि हमलोगोंको उस्मानिस्तानके लिए उसी अन्तर्राष्ट्रीय विधानके अनुसार हक प्राप्त है जिसके अनुसार अन्य राष्ट्रोंको अपनी जन्मभूमि-पर वह अधिकार प्राप्त होता है। यह अधिकार उसे वैधानिक मालिकाना हक प्रदान करता है जिसे उन सन्धियोमें भी कबूल किया गया है जो ब्रिटिश सरकार तथा उस्मानिस्तानके आला हजरतके बीच हुई है। उस्मानिस्तानको इस उप-द्वीपमें जो अधिकार प्राप्त है वे असाधारण है क्योंकि वे दूसरोंको प्राप्त नही हैं। यह हो जानेके बाद हमलोग पाकिस्तान, बंगाल और उस्मानिस्तानका निर्माण ऐसे दृढ़ नीवपर करेंगे कि इतिहासमें उसकी मजबूती, शक्ति और विशालताका कोई मुकाबला नही कर सकेगा। यदि हमलोग 'भारतीयता'से अपना गला छुड़ाना चाहते है, भारतसे पृथक् अपनी राष्ट्रीयता कायम करना चाहते है और अपने राष्ट्रीय प्रदेशोंको एशियायी मुल्कोंके रूपमें एक सूत्रमें बांधना चाहते है तो हमें अखिल भारतीय मुसलिम लीगको मिटा देना होगा और उसके स्थानपर उपर्युक्त तीनों राष्ट्रोंका एक संगठन कायम करना होगा।"†

"इतनेसे ही भारतसे अलग होनेकी हमलोगोंकी आकांक्षापर अन्तिम मुहर पड़ जायगी, मिल्लतको प्रोत्साहन मिलेगा और संसारपर व्यापक प्रभाव पड़ेगा। इतना हो जानेका यह मतलब होगा कि हमलोग कसौटीपर उतर चुके और अपना अन्तिम निर्णय कर लिया, हमलोगोंके उद्देश्यकी सिद्धि निश्चय होगी और दक्षिण एशियामें हमलोग एक पवित्र उद्देश्यका जन्म देंगे। इसके

---

* वही पृष्ठ ११–१४। † वही पृष्ठ १५।

बाद अपने ऐतिहासिक उद्देश्यमें विश्वास रखते हुए, चांद और सितारेके झण्डेके नीचे खड़े होकर हमलोग अवश्य विजयी होंगे।*

इससे स्पष्ट है कि इस योजनाके जनक दो राष्ट्र अथवा मुसलिम राष्ट्रके सिद्धान्तके कट्टर हिमायती है चाहे जहां भी उसकी स्थापना हो सके। जिस समय उन्होंने अपनी यह पुस्तक लिखी उन्हें यह आवश्यक प्रतीत नहीं हुआ कि वे इसका भी विवेचन करें कि मुसलिम राष्ट्रमे कौन-कौनसे क्षेत्र होंगे, उनमें बसने-वाले गैर-मुसलमानों तथा भारतमें बसनेवाले अन्य मुसलमानोके क्या अधिकार होंगे। उन्होंने जिस आदर्शका स्वप्न देखा उसके सामने इन छोटी-छोटी बातोंकी चर्चा उन्हें तुच्छ प्रतीत हुई। यदि मुसलिम राष्ट्रकी स्थापना हो गयी तो सब कुछ ठीक है अन्यथा सब कुछ गलत।

पाकिस्तान, बंगिस्तान और उस्मानिस्तानके कायम करनेकी इस योजनासे भी रहमतअलीको पूरा सन्तोष नही हुआ। १९४२ में उन्होने 'पाक योजना'के सात फर्मान निकाले। वे फर्मान पुस्तिकाके रूपमें है जिसका नाम है "दि मिल्लत ऐण्ड दि मिशन।" वे फर्मान इस प्रकार है—

१—अल्पमतसे बचो।
२—राष्ट्रीयताका मन्त्र जपो।
३—अनुपातके अनुसार देशपर कब्जा करो।
४—एक-एक मुसलिम राष्ट्रको दृढ़ बनाओ।
५—'पाक' इन राष्ट्रोंको पाक राष्ट्रसंघके (कामनवेल्थ आव पाक नेशन्स) के अन्दर बांधकर रखो।
६—भारतको 'दीनिया' बना डालो।
७—'दीनिया' और उसके अधीन प्रदेशोंको पाकिस्तानमें संगठित करो।

---

* दि मिल्लत आव इस्लाम ऐण्ड दि मिनास आव इण्डियनिज्म–पृष्ठ १६।

१—अल्पमतसे बचो—अर्थात् हिन्दू यदि और ब्रिटिश सरकार वैधा-निक संरक्षण दें तो अल्पसंख्यक मुसलमानोंको हिन्दू प्रदेशमें मत रहने दो।

२—राष्ट्रीयताका मन्त्र जपो—यह फरमान पहले फरमानका अंगीभूत है। इसका अभिप्राय यह है कि हिन्दू राष्ट्रमें बसनेवाले मुसलमान अल्पसंख्यक समुदायके लिए राष्ट्रीय पदकी मांग करें और उसपर जोर दें। पाकिस्तान, बंगिस्तान और उस्मानिस्तानमें बसनेवाले हिन्दुओं और सिखोंको भी वही अधिकार बदलेमे दो। इसका अधिार यह सिद्धान्त है कि व्यक्तिके लिए जो अभिप्राय जवानीका है जातिके लिए वही अर्थ बहुमतका है। १९४० तक इस तरहकी माग पेश करनेमें जो औपनिवेशिक कठिनाई थी वह अब दूर हो गयी क्योंकि सिखोने पाकिस्तानमें स्वतन्त्र राष्ट्रीयताकी मांग पेश कर दी है। इसलिए इस दावेका हमलोगोको ज्यादासे ज्यादा उपयोग करना चाहिये और पटियाला, नाभा और झींद सिख रियासतोंमें अनुपातके अनुसार सिखोंकी इस शर्तपर मांग पूरी कर देनी चाहिये कि हिन्दू बहुमतवाले सातो इलाकोंमे हमें भी वही अधिकार सिखोके समर्थको हिन्दू और ब्रिटिश सरकारद्वारा मिल जायगा और हमलोग सिदिकिस्तान, फरूकिस्तान, हिन्दुस्तान, मोमिनिस्तान, मोप्लाइस्तान, सफीइस्तान नासिरिस्तानकी स्थापना कर सकेगे। इन लोगोंने सिखोके दावेका भय दिखलाकर विगत ८५ सालोंसे हम लोगोके जायज हकोंसे वंचित रखनेका यत्न किया है।"*

३—ऊपर लिखे सातो 'स्तानो' को कायम करनेके लिए अनुपातके हिसाबसे इलाके प्राप्त करो। इसका अभिप्राय यह है कि दीनिया तथा उसके मातहत इलाकोमे अपने अनुपातके हिसाबसे प्रदेश प्राप्त करो और उसे मुसलमानी राष्ट्रमें बदल दो।...उदाहरणके लिए हिन्दुइस्तान अर्थात् संयुक्तप्रान्त आगरा-अवधमे हमारा अल्पसंख्यक समुदाय प्रायः १५ प्रतिशत है इसलिए इस प्रान्तकी १५ फीसदी भूमि अर्थात् प्रायः १७००० वर्गमील भूमिपर हमलोगोंका

---

* श्री रहमतअली लिखित "दि मिल्लत ऐण्ड दि मिशन।"पृष्ठ १३-१४।

हक है इसे प्राप्तकर हमें अपने राष्ट्रको हिन्दुस्तानमें बदल देना चाहिये। ईसी तरह मध्यप्रदेश, बुन्देलखण्ड, मालवा, बिहार, उड़ीसा, राजिस्तान, बम्बईप्रान्त दक्षिण भारत, पश्चिमी लंका तथा पूर्वी लंकामे भी हमलोगोको अपना यह दावा पेश करना चाहिये और हम लोगोको अपना बिदिकिस्तान, फरूकिस्तान, मोमिनिस्तान, मोप्लाइस्तान, सफीइस्तान तथा नासिरिस्तान स्वतन्त्र राष्ट्र कायम करना चाहिये।*

४——एकाकी राष्ट्रोको संगठित करो——इस फरमानका अभिप्राय यह है कि दीनिया और लकाके हिन्दू बहुमत प्रदेशोंमे छिटफुट रहना हमारे अल्पसंख्यक समुदायके लिए खतरनाक है इसलिए इन बिखरी हुई शक्तियोंको सगठित कर मजबूत ब्रनानेका यत्न करो।

५——इन राष्ट्रोंको पाच राष्ट्रसघके अन्दर गूथकर रखो। इस फरमानका आशय यह है कि कमसे कम अपने दसो प्रदेशोंको तो एक अन्तर्राष्ट्रीय संगठनी के अन्दर कर लेना चाहिये अर्थात् उन 'स्तानो' को जिनकी कल्पना लेखकने दीनियाके अन्तर्गत तथा इस राष्ट्रसंघके अन्दर की है।

६——भारत उपनिवेशको दीनिया बना डालो——इस फर्मानका अभिप्राय यह है कि भारत-भूमि और उसकी आत्माका भारतीयतासे उद्धारकर हमे उसपर दीनियाकी प्रभुता स्थापित करनी चाहिये और इस तरह उसे विश्वमे उचित और मान्य स्थान दिलाना चाहिये जो इसकी विरासत है। इसलिए हमलोगोको एक बार पुनः अपने उस प्राचीन आदर्शको सामने खड़ा करना चाहिये और उसके लिए इन तीन सिद्धान्तोंपर अमल करना चाहिये——

(१) संसारमें जो यह भ्रान्त धारणा फैली हुई है कि भारत भारतीयोंका है, उसका अन्त कर देना चाहिये।

(२) संसारमें हमें यह सचाई फैलानी चाहिये कि भारत दीनियोंका है।

---

* वही पृ० १७।

(३) और साथ ही हमें यह भावना भी फैलानी चाहिये कि भारत उपद्वीपका असली नाम दीनिया उपद्वीप है।

(४) दीनिया और उसके अधीन प्रदेशोंको पाकिस्तानमें संगठित करो।

चौधरी रहमतअलीको पाकिस्तान, बंगिस्तान और उस्मानिस्तानसे ही सन्तोष नही है बल्कि हिन्दू प्रदेशमे भी वे सात मुसलिम राष्ट्रोंकी स्थापनाकी कल्पना करते है और ये राष्ट्र मुसलमानोकी आबादीके अनुपातमें होंगे जो कि सबके-सब पाकिस्तान राष्ट्रसंघके अंग होगे। वे भारत नाम भी उड़ा देना चाहते है और इसकी जगह दीनिया नाम रखना चाहते है। इस तरह पाक राष्ट्रसंघ पाकेशियाके अन्दर आपसे आप आ जायगा।

पाकिस्तानकी भावना तथा इस नामके जन्मदाता चौधरी रहमतअली पहले मुसलमान है जिन्होने मुसलमानोंकी स्वतन्त्र राष्ट्रीयताका दावा गोलमेज कान्फरेन्सके उन मुसलिम प्रतिनिधियोके विश्वासघातके विरोधमे पेश किया जिन्होंने संघ-शासन कबूलकर मिल्लतको धक्का पहुंचाया। आपका खयाल है कि उनके विचारोको लीगने अंशत: कबूल कर लिया है और धीरे-धीरे लीग उनके उन मन्तव्योंको भी स्वीकार कर लेगी जो प्रकाशित या अप्रकाशित है। इसलिए भारतको उस दिनके लिए तैयार रहना चाहिये जब 'भारत' नाम ही उड़ जायगा और समस्त देशमें मिल्लत कायम होकर इसका नाम दीनिया हो जायगा।

डाक्टर लतीफकी योजना

चौथी योजनाके जनक डाक्टर एस० ए० लतीफ है। इस योजनाका विस्तृत वर्णन उन्होंने अपनी पुस्तक "दि मुसलिम प्राब्लम इन इण्डिया" में की है। भारतके विभाजनको अपनी योजनाका आधार बनाकर उन्होंने उसमें जटिलता उत्पन्न करनेका यत्न नहीं किया है, बल्कि प्राकृतिक आधारपर भारतको एक सूत्रमें बांधनेकी यह योजना एक प्रयासमात्र है, इसलिए इस योजनाका दृष्टिकोण सर्वथा भारतीय है। जिस तरह कनाडा आदि उपनिवेशोंमें दो विभिन्न जातियां अपने अपने क्षेत्रोंमें रहकर एक ही कनाडा राष्ट्रके कल्याणके लिए यत्न करती

हैं उसी तरह हिन्दुस्तानमें भी वे चाहते हैं कि सांस्कृतिक साम्य रखनेवाली जातियोंके अलग अलग राष्ट्र हो जायं। उनका दावा है कि यह योजना मेलके लिए है विभाजनके लिए नहीं।*

इस योजनाके अनुसार सांस्कृतिक साम्यके खयालसे भारतका विभाजन १५ प्रधान क्षेत्रोंमें होगा। चार क्षेत्र मुसलमानोंके लिए और कमसे कम ११ हिन्दुओंके लिए। देशके कोने-कोनेमें बिखरी देशी रियासतोंको उनकी प्राकृतिक अवस्थाके अनुसार भिन्न-भिन्न क्षेत्रोके अन्तर्गत कर दिया जायगा। इस तरहके प्रत्येक क्षेत्रमें एक सांस्कृतिक राष्ट्रकी स्थापना होगी और जिस क्षेत्रमें एकसे अधिक राष्ट्र होंगे वहांका अन्तरंग शासन पूर्णरूपसे विकेन्द्रित होते हुए भी अन्य क्षेत्रोंकी तरह भारतीय संघराष्ट्रके अनुकूल होगा।†

मुसलिम सांस्कृतिक क्षेत्र

(१) उत्तर-पश्चिमी गुट—इसमें सिन्ध, बलूचिस्तान, पंजाब, सीमाप्रान्त तथा खैरीपुर और बहावलपुरकी रियासतें शामिल होंगी। संघ व्यवस्थाके अनु-सार इन छहोंका एक स्वतन्त्र राष्ट्र होगा इसमें २५० लाख मुसलमानोंको अपना स्वतन्त्र निवास प्राप्त होगा।

(२) उत्तर-पूर्वी गुट—पूर्वी बंगाल, कलकत्ता तथा आसामको मिला-कर यह गुट बनेगा। इसमे ३ करोड़ मुसलमानोंको स्वतन्त्र राजनीतिक सत्ता प्राप्त होगी।

(३) दिल्ली-लखनऊ गुट—ऊपर दोनों गुटोंमें मुसलमान तितर-बितर बसे हुए है। इसलिए इस गुटमे बसनेवाले मुसलमानोंको प्राकृतिक (आदि) निवासका हक प्राप्त करनेके लिए इन दोनोंमेसे अपने निकटवर्ती गुटमें बस जाना जाहिये। बाकी जिनकी तादाद भी काफी है, जो इस समय संयुक्तप्रान्त, बिहारमें बसते हे और जिनकी संख्या १२० लाखके लगभग होगी, इन्हें मिलाकर अलग एक गुट बना दिया जायगा जो एक सीधमें पटियालाकी पूर्वी

---

* श्री एस० ए० लतीफ लिखित "मुस्लिम प्राब्लम इन इण्डिया" पृ० २८-३८।
† ,, ,, ,, पृष्ठ ३८।

सीमासे रामपुर, आगरा दिल्ली, कानपुर, और लखनऊको शामिल करते दिल्ली-तक चला जायगा। बनारस, हरद्वार, प्रयाग और मथुरा सरीखे हिन्दू तीर्थ क्षेत्रोंको इससे अलग कर दिया जाय।

(४) दक्खिनका गुट—इसमे हैदराबाद, बरार तथा दक्षिणी भूभागका वह पतला रेखानुमा प्रदेश जो कर्नूल, कुडप्पा, चिमूर उत्तरी अर्काट तथा चिंगल-पेठ जिलोसे होता हुआ मद्रास शहरमें समुद्री किनारेतक चला गया है। प्राय-द्वीप, मध्यप्रान्त, बम्बई, मद्राससूबा, मैसूर, कोचीन तथा ट्रावंकोरके मुसलमान इस गुटमें बटोरे जायगे। उत्तर-पूर्वी तथा दिल्ली-लखनऊ गुटके फाजिल मुसल-मान भी इसी गुटमें बसाये जायंगे। इन चार गुटोके अतिरिक्त राजपूताना, गुजरात, मालवा पश्चिमी भारतीय रियासतोमें बसनेवाले मुसलमानोंको भोपाल, टोंक, जूनागढ़ तथा जाओनकी मुस्लिम रियासतोंमें एवं अजमेरके स्वतन्त्र नगरमें आबादीके बदलनेके आधारपर बसानेका प्रबन्ध किया जायगा।

हिन्दू सांस्कृतिक क्षेत्र

(१) बंगालके निकटवर्ती बिहारका हिस्सा बंगालमें मिलाकल बंगाली हिन्दुओंका एक गुट बन जायगा।

(२) उड़िया बोलनेवालोंका उड़ीसामें एक गुट होगा।

(३) पश्चिमी बिहार और लखनऊ-दिल्ली गुटतक संयुक्तप्रान्त जो हिमालयसे लेकर विन्ध्यपर्वत शृंखलातक फैला हुआ है, इसमें मध्यभारतकी कई देशी रियासतें भी शामिल रहेंगी; यही गुट मुख्य हिन्दुस्तान नवोदित हिन्दीका गढ़ होगा जो नया जोश और नया उत्साह प्रदान करेगा।

(४) राजपूतानाकी राजपूत रियासतें।

(५) गुजरात तथा काठियावाड़की हिन्दू रियासते जहां गुजराती संस्कृति अपना विकास कर सकेगी।

(६) द्राविड़ संस्कृतिके गुट, जैसे, कन्नडी, आन्ध्र, तामिल और मल-याली संस्कृतियोका अपना स्वतन्त्र अस्तित्व होगा।

(७) काश्मीरके एक अंशको लेकर उत्तर पश्चिम मुस्लिम गुटमें हिन्दू सिख गुट। काश्मीर मुस्लिम-प्रधान प्रदेश है। आपसकी रजामन्दीसे उसे पंजाबमें मिला दिया जायगा और उसके बदलेमे वर्तमान पंजाबका उत्तर पूर्वी भाग कागड़ाघाटी सहित महाराज काश्मीरको दे दिया जायगा। सिन्धके हिन्दुओको पड़ोसी गुजरात या राजपूतानामे स्थान दे दिया जायगा। पजाब स्टेट एजेंसीके अन्तर्गत सभी गैर-मुस्लिम रिआसते तथा हिन्दू रियासते काश्मीरके एक भाग सहित हिन्दू सिख गुटमे शामिल कर दी जायंगी।

विभाजनकी इस रूपरेखामे केवल आभास मात्र दे दिया गया है। जरूरत पड़नेपर रायल कमीशन नियुक्त कर इसकी निश्चित रूपरेखा तैयार की जा सकती है।

इस योजनाके अनुसार प्रत्येक गुटमें एक जातीयता कायम करनेके लिए उन गुटोमे बसनेवाले हिन्दू और मुसलमानोंको अपने पड़ोसी हिन्दू और मुस्लिम प्रदेशोमे जाकर बसना होगा। हरिजनोको इस बातकी स्वतन्त्रता रहेगी कि वे अपने इच्छानुसार हिन्दू या मुस्लिम क्षेत्रको अपना निवास स्थान बनावे। आबादीका अदला-बदला धीरे-धीरे कई वर्षोंमे पूरा किया जायगा। इस तरह आबादीको स्थानान्तरित करनेका परिणाम देखनेके लिए पहले कुछ ऐसे लोगोको तैयार करना होगा जो स्वेच्छासे स्थानान्तरित हो सके।

विधानमें निम्नलिखित व्यवस्थाएँ होगी:—

भारतीय राष्ट्रोके सार्वजनिक कानून :—(१) एक या दूसरी जातिका कोई व्यक्ति किसी विशेष कारणसे उस क्षेत्रमे रह सकता है जो सांस्कृतिक आधारसे उसका नही है। उसे जान और मालकी रक्षा तथा नागरिक अधिकारकी पूरी व्यवस्था प्राप्त होगी।

तीर्थस्थान:—(२) धार्मिक प्रतिमा, स्मारक चिह्न तथा कब्रिस्तानोंकी रक्षा केन्द्रीय सरकारकी देखरेखमें प्रत्येक राष्ट्रको करनी होगी।

ईसाई, बुद्ध तथा पारसी:—(३) अल्पसंख्यक जातियोंके स्वतन्त्र अस्तित्वके लिए उनके धार्मिक तथा सांस्कृतिक स्थानोंकी रक्षाका पूरा प्रबन्ध प्रत्येक

राष्ट्रको करना होगा। उन्हें इस बातका अधिकार होगा कि यदि वे चाहें तो अन्त-र्देशीय आजादीकी मांग किसी भी समय कर सकते हैं।

हरिजन :—(४) इन्हें इस बातकी स्वतन्त्रता रहेगी कि वे अपने निवासके लिए हिन्दू या मुसलिम क्षेत्र चुन लें। वहां उन्हें नागरिक अधिकार पूर्ण रूपसे प्राप्त होंगे।

इस योजनाके लेखकने विधान भी तैयार किया है जो १९३५ के शासन-विधानका स्थान ले सकता है।

इसके अनुसार प्रत्येक प्रान्तीय सघको अधिकसे अधिक स्वायत्त शासन प्राप्त होगा और संघके अन्दर आनेवाले विषयोकी सूचीको न्यूनतम बनाकर देशी रियासतो तथा उनके शासकोके अधिकारोकी रक्षाकी पूरी व्यवस्था की जायगी।

जिन संघोमें विचार व्यवहारकी समानता हो, उनके लिए एक प्रादेशिक बोर्डकी व्यवस्था की जायगी जो उनके समान सास्कृतिक और आर्थिक विषयोंके लिए समान नियम निर्माण करेगा और प्रत्येक प्रदेशको यह अधिकार दिया जायगा कि इन नियमोंके आधारपर वह अपने लिए कानून बनावे।

इसमें प्रत्येक प्रान्तीय इकाई और केन्द्रके लिए पार्लमेण्टरी शासनके स्थान-पर एक सर्वानुमोदित संयुक्त और स्थायी शासनकी व्यवस्था की गयी है।

इसमें ऐसे अधिकारकी व्यवस्था है जिसके द्वारा केन्द्रमें तथा संघमें भी मुसल-मान तथा प्रत्येक अल्पमतको आर्थिक और सांस्कृतिक संरक्षण प्राप्त होंगे।

इस योजनाके अनुसार भारत एक संघराष्ट्रके रूपमें बदल जायगा जिसकी प्रत्येक इकाईको अधिकसे अधिक स्वाधीनता—केवल उन बातोंको छोड़कर जो सबके लिए समान है, जैसे रक्षा, विदेशी सम्बन्ध, व्यवसाय, यातायात—प्राप्त होगी तथा प्रत्येक इकाईको अविशिष्टाधिकार प्राप्त होगा।

भारतमें अनेक संस्कृतियां है। प्रत्येकको अपने स्वतन्त्र विकासका अवसर मिलना चाहिये। प्रत्येककी रक्षा इस प्रकार होनी चाहिये कि वह संघमें सन्तुष्ट और निश्चिन्त रह सके। ऐसा अवसर कभी भी नहीं आने देना चाहिये

कि केन्द्रको सांस्कृतिक विषयपर किसी तरहका कानून बनानेके लिए बाध्य होना पड़े।

प्रत्येक संघको पूर्ण स्वायत्त शासन दे देनेपर और इसके परिणामस्वरूप समान सूचीके हटा देनेपर प्रत्येक क्षेत्रको मिलाकर रखनेके लिए एक संस्थाकी आवश्यकता होगी। उसको पूरा करनेके लिए संघीय बोर्डके निर्माणकी बात कही गयी है जो सभी संघोंके लिए राजनीतिक तथा आर्थिक दृष्टिकोणके समान कानून बनावेगी और प्रत्येक संघ—हिन्दू या मुसलमान—इसीके अनुसार अपने कार्यके सञ्चालनके लिए कानून बना लेंगे। इस बोर्डके बन जानेके बाद प्रत्येक गुटके लिए उपसघ बनानेकी आवश्यकता नही रह जायगी जिससे शासन और व्यवस्थापक यन्त्र बहुत अधिक बढ़ जायंगे।

एक बहुसंख्यक समुदाय दूसरे समुदायपर जुल्म या ज्यादती न कर सके, इसकी देखभाल तथा इसे रोकनेके लिए मजबूत संयुक्त शासनकी व्यवस्था की गयी है जिसमें सभी दलोके प्रतिनिधि रहेंगे। इसकी नीति सभी गुटोके अखिल भारतीय प्रतिनिधित्वके आधारपर परस्पर समझौतेके द्वारा स्थिर होगी। तो भी शासन-व्यवस्था सम्मिलित दलकी नही होगी क्योंकि यह सदा अस्थायी रहती है, बल्कि अमेरिकाकी तरह पूर्ण स्थायी शासन-व्यवस्थाका प्रबन्ध किया जायगा। प्रत्येक प्रान्तका प्रधान मन्त्री उस प्रान्तकी व्यवस्थापक सभाके जीवनकालतक काम करनेके लिए उसके सम्पूर्ण सदस्योद्वारा चुना जायगा। अखिल भारतीय आधारपर परस्पर समझौताद्वारा निश्चित किये हुए अनुपातके अनुसार वह अपने सहायक मन्त्रियोंको चुनेगा। निर्वाचित प्रधान मन्त्रीद्वारा नामजद मन्त्रीगण व्यवस्थापक सभाके निर्णय द्वारा नही हटाये जा सकेंगे।

मुसलमानोके लिए विधानमे निम्नलिखित संरक्षण रहेंगे—

क — व्यवस्थापक सभामें प्रतिनिधित्व

(१) प्रत्येक व्यवस्थापक सभामें मुसलमानोंका वर्तमान प्रतिनिधित्व तथा पृथक् निर्वाचन-प्रणाली कायम रखी जायगी।

(२) देशी रियासतोंको केन्द्रीय व्यवस्थापक सभाके लिए अपने प्रतिनिधित्वका कमसे कम एक तिहाई मुसलमान प्रतिनिधि चुनना होगा।

(३) प्रत्येक संघकी व्यवस्थापक सभामें मुसलमानोको उन प्रान्तीय व्यवस्थापक क्षेत्रोंके कुल मुसलमान प्रतिनिधियोंकी संख्याके अनुपातसे प्रतिनिधित्व दिया जायगा जिन्हें मिलाकर वह संघ बना हो।

ख—कानून निर्माण

(१) मुसलमानोंके धार्मिक, सास्कृतिक तथा जातीय कानून बनानेका एकमात्र अधिकार व्यवस्थापक सभाके मुसलमान सदस्योको होगा। इसके लिए मुसलिम धर्म और कानूनको जाननेवाले व्यवस्थापक सभाके एक तिहाई सदस्यों-की एक समिति बना दी जायगी। इस समितिका निर्णय व्यवस्थापक सभाको स्वीकार कर लेना होगा। यदि इस तरहकी कमेटीके निर्णयोका कोई बुरा असर दूसरे सम्प्रदायोपर पड़ता हो तो उस निर्णयपर पुनः विचार करनेका पूरा अधिकार व्यवस्थाबपक सभाको होगा लेकिन उसके आधारमे किसी तरहके संशोधनका अधिकार व्यवस्थापक सभाको नही होगा।

ग—शासन

(१) शासन-विभाग हिन्दू और मुसलमान दोनोको मिलाकर बनाया जायगा जो परस्पर समझौतेसे तै किया जायगा। लेकिन व्यवस्थापक सभाका उसपर कोई अधिकार नहीं होगा। इसका प्रधान मन्त्री अमेरिकाकी तरह जनताद्वारा न चुना जाकर व्यवस्थापक सभाके सदस्योंद्वारा चुना जायगा। व्यवस्थापक सभाके सदस्योमें सभी दलोके प्रधान मन्त्री अपने सहकर्मियोंको चुनेगे। इसमें मुसलमानोंकी उपयुक्त संख्या रहेगी। मुसलिम सहकर्मी ऐसे होंगे जिनपर मुसलमान सदस्योंका पूरा विश्वास हो और जो मुसलिम सदस्योंद्वारा बनायी गयी तालिकामे हों। कानून, शान्ति और शिक्षा-विभागकी देखरेखके लिए एक मन्त्री और एक सहायक मन्त्री रहेगे। इनमेसे कोई एक पद मुसलमानोंको दिया जायगा।

घ—पब्लिक सर्विस कमीशन

जिस प्रान्तमें मुसलमान अल्पसंख्यक होंगे उस प्रान्तके पब्लिक सर्विस कमीशनके सदस्योंमें कमसे कम एक मुसलमान अवश्य होगा। उसका कर्तव्य होगा कि वह इस बातकी देखरेख करता रहे कि मुसलमानोके लिए सरकारी नौकरीमें जो अनुपात निश्चित किया गया है वह पूरा होता रहता है।

च—अदालत

मुसलमानोंके जातीय कानूनकी व्यवस्था मुसलमान जजोंद्वारा होनी चाहिये।

छ—आर्थिक उत्थान तथा शिक्षाके लिए मुसलिम बोर्ड

मुसलमानोंकी धार्मिक और सांस्कृतिक शिक्षा, सामाजिक तथा आर्थिक उत्थान, टेकनिकल ट्रेनिंगकी व्यवस्थाके लिए एक मुसलिम बोर्ड रहेगा जो इन कामोंकी देखरेख करेगा।

ज—अतिरिक्त कर

यदि किसी विशेष उद्देश्यके लिए मुसलमान अपने ऊपर अतिरिक्त कर बिठाना चाहें तो उसके लिए विशेष कानूनका निर्माण कर देना होगा।

आरम्भिक कालमें एक प्रान्तसे दूसरे प्रान्तमें जाकर बसनेका कार्य स्वेच्छासे होना चाहिये। इसके लिए प्रत्येक रीजन (खण्ड) में विशेष कानून बनाय जायंगे और आबादीके अदल-बदलमें भी व्यवस्थाके लिए रायल कमीशन तैनात किया जायगा। आरम्भिक कानूनका निर्माण ऐसा होना चाहिये कि वह भाविष्यमें संघके भावी विधानमें एकदम मिल जाय। इसके लिए आबादीके तात्कालिक बदलैनको रोककर संस्कृति तथा भाषाके आधारपर कई नये प्रान्तोंके निर्माणकी आवश्यकता पड़ेगी। ये नये प्रान्त धीरे-धीरे बनाये जा सकते हैं, लेकिन संयुक्तप्रान्तमें तो इस तरहके एक प्रान्तके तुरत बनानेकी आवश्यकता पड़ेगी क्योंकि संयुक्तप्रान्तके मुसलमानोंकी यही जन्मभूमि होगी। इस नवनिर्मित प्रान्तका प्रधान मन्त्री मुसलमान होगा ताकि मुसलिम क्षेत्र बनानेकी दृष्टिसे वह इसका सञ्चालन करे।

इस योजनामें दो बड़े दोष हैं। पहला दोष तो यह है कि इसमें आबादीको स्थानान्तरिक करनेकी व्यवस्था है। यह स्थानान्तर केवल आसपास या पड़ोसके प्रान्तोंके बीच ही नहीं, बल्कि दूर दूरके प्रान्तोके बीच भी होगा। आबादीको स्थानान्तरित करनेकी यह व्यवस्था केवल ब्रिटिश भारतके लिए नही बल्कि देशी रियासतोके लिए भी समान रूपसे होगी, यह काम चाहे कितने ही वर्षोमें क्यों न पूरा हो। इसमें इतना ज्यादा खर्च पड़ेगा और इसके लिए इतना अधिक श्रम उठाना पड़ेगा कि यह कदापि व्यावहारिक नही कहा जायगा। जो लोग सदियोसे एक जगह बसते आये है, उन्हे उस जलवायु, पड़ोस, और वातावरणसे हटाकर दूसरी जगह बसानेकी व्यवस्था करना उनके लिए नितान्त दुखदायी और हानिकर होगा। यह स्थान-परिवर्तन आरम्भमें तो ऐच्छिक होगा लेकिन आगे चलकर अनिवार्य हो जायगा। जबतक यह ऐच्छिक रहेगा तबतक कोई हिन्दू या मुसलमान इसपर अमल नही करेगा क्योकि अपना जन्मस्थान छोड़कर कोई भी कही अन्यत्र जाना नही चाहेगा। अनिवार्य हो जानेपर इसके कारण लोगोको असीम यातनाएँ भोगनी पड़ेंगी। पंजाबीने जैसा लिखा है कि भारतीय राष्ट्रसंघमें इसका असर कमसे कम दो तिहाई आबादीपर पड़ेगा। आबादीको इस व्यापक रूपसे स्थानान्तरित करनेका प्रयास इतिहासमें न तो कभी देखा गया है और न सुना गया है।

दूसरा दोष इसमे यह है कि इस योजनाके अनुसार वर्तमान प्रान्तोंकी भांति राष्ट्र होंगे और ब्रिटेनके अधीन उनका एंक संघ होगा। ऐसा प्रतीत होता है कि ब्रिटिश भारत तथा देशी राज्य दोनोंमें शासक और शासितके राजनीतिक सम्बन्धको आपसमें तै कर लेनेके खयालसे अछूता छोड़ दिया गया है। लेकिन इस तरहके विधानकी व्यवस्था करते समय इस तरहके महत्वपूर्ण प्रश्नको अछूता छोड़ देना और केवल साम्प्रदायिक पहलूको दृष्टिकोणमें रखना कभी भी वांछनीय नहीं है। भारतके सभी राजनीतिक दलोने प्रस्तावद्वारा व्यक्त किया है कि भारतकी पूर्ण स्वाधीनता उनका ध्येय है केवल नरमदल अपवाद है क्योंकि उसका खयाल है कि औपनिवेशिक स्वराज्य ही पर्याप्त है। भारतकी पूर्ण

स्वाधीनताके लिए सबसे पहले उस निरंकुश शासनको हटाना होगा जो यहां जड़ जमाये हुए है और इसके स्थानपर प्रतिनिधि शासन कायम करना होगा। इस व्यवस्थामें देशी नरेशोके अधिकारोको इंग्लैण्डके राजाकी भांति सीमित कर दिया जायगा और सारा अधिकार जनताके प्रतिनिधियोके हाथमें दे दिया जायगा।

इस योजनाके जनकने यह भी लिखा है कि वे भिन्न-भिन्न राष्ट्रोंकी सीमाका आभासमात्र दे देते हैं, इसकी निश्चित रूपरेखाके लिए रायल कमीशन तैनात किया जायगा। इसलिए इसकी कोई भी आलोचना अस्थायी ही होगी। सबसे पहले दक्षिणके गुटको ही ले लीजिये। यह हैदराबाद और बरारसे लेकर अनेक जिलोंको चीरता हुआ मद्रासमें समुद्रके किनारेतक चला जाता है। क्या इस खण्डनके निर्माणका कोई उचित आधार है? इस प्रदेशके समस्त मुसलमानोंमें मध्यप्रदेश, बम्बई, मद्रास सूबा, मैसूर, कोचीन तथा ट्रावंकोरके मुसलमानोंको मिलाकर भी अन्य गैर-मुस्लिम क्षेत्रोकी अपेक्षा इस क्षेत्रकी आबादी बहुत कम रहेगी। भाषाकी समानता भी यहां नही रहेगी। मराठी, तामिल, तेलगू तथा कन्नडी भाषा बोलनेवालोका यह प्रान्त होगा। जब आबादीका बंटवारा नये सिरेसे करना है तब हैदराबादमें इन भाषाओके बोलनेवालोंको भारतके उन प्रदेशोंमें क्यों न बसाया जाय जहा इन्ही भाषाओके बोलनेवाले हों। लेकिन इसके लिए हैदराबाद राज्यको तोड़ना होगा। यदि इसे बचाना है तो समस्याको अधिक जटिल न बनाकर ब्रिटिश भारतके अन्य क्षेत्रोंको काट-कर इसमें मिलाना होगा। अन्य प्रान्तोंकी आबादी काटकर इस क्षेत्रमे मिला देनेके बाद भी यहां मुसलमानोंका बहुमत हो सकेगा या नहीं, यह सन्देहात्मक है।

प्रत्येक खण्डके लिए बोर्ड बनानेकी व्यवस्था बे-मतलब प्रतीत होती है। प्रत्येक गट पूर्ण स्वतन्त्र है या नहीं, लेकिन केन्द्रीय सरकार तथा उसके बीच एक और शासन-व्यवस्था कायम करनेमें कोई विशेष लाभ तो नही प्रतीत होता।

यदि इन गुटोंके आग्रह करनेपर भी केन्द्रीय सरकारके जिम्मे वह काम नहीं सौंपा जा सकता तो भिन्न-भिन्न गुटोंके समान स्वार्थ और लाभकी बातोंको

इसी कामके लिए एक कमेटी बनाकर तै किया जा सकता है। विधानके लिए अन्य जो शर्तें दी गयी हैं उनकी चर्चा करना यहां सम्भव नहीं है क्योंकि उनमेंसे कईपर विस्तारके साथ विचार करनेंकी आवश्यकता होगी। हमलोग भारतके लिए अमेरिका या स्विटजरलैण्डके शासन-विधानके आधारपर हिन्दुस्तानकी स्थितिके अनुकूल उसमें आवश्यक संशोधन और सुधार कर विधान बना सकते हैं, यदि यह मुसलमानोंको पसन्द हो। लेकिन इस विषयकी आलोचना यहां नहीं हो सकती क्योंकि आबादीके स्थानान्तरित करनेके प्रश्नको तथा इलाकोंके पुनः विभाजनके प्रश्नको इसमें शामिल करनेपर इसकी उपादेयताकी ठीक जांच नहीं हो सकगी।

सर सिकन्दर हयातखांकी योजना

चौथी योजना स्वर्गीय सर सिकन्दर हयातखांकी है। 'आउट लाइन आव इण्डियन फेडरेशन' नामसे यह योजना पुस्तक-रूपमें प्रकाशित की गयी है। इस योजनामें केवल ब्रिटिश भारत ही नहीं, बल्कि देशी राज्योंके लिए भी व्यवस्था है।

(१) अखिल भारतवर्षीय संघ कायम करनेके लिए इस योजनामें प्रादेशिक आधारपर समूचे भारतवर्षको सात खण्डोंमें बांटा गया है—

खण्ड १—आसाम और बंगाल, बंगालकी देशी रियासतें तथा सिक्किम (इस खण्डका आकार घटानेके लिए इसमेंसे एक या दो पश्चिमी जिले निकाल दिये जायंगे।)

खण्ड २—बिहार और उड़ीसा तथा उड़ीसामें बंगालसे मिलाये गये जिले।

खण्ड ३—संयुक्तप्रान्त तथा यहांकी देशी रियासतें।

खण्ड ४—मद्रास और ट्रावंकोर तथा मद्रास सूबेकी देशी रियासतें और कुर्ग।

खण्ड ५—बम्बई सूबा, हैदराबाद, पश्चिमी भारतके देशी राज्य, बम्बई सूबेके देशी राज्य, मैसूर तथा मध्यप्रदेशके देशी राज्य।

खण्ड ६—(बीकानेर तथा जैसलमेरको छोड़कर) राजपूतानाकी सभी देशी रियासतें, ग्वालियर, मध्यभारतकी देशी रियासतें, बिहार और उड़ीसाकी देशी रियासतें, मध्यप्रदेश तथा बरार।

खण्ड ७—पञ्जाब, सिन्ध, सीमाप्रान्त, काश्मीर, पञ्जाबकी देशी रियासतें, बलूचिस्तान, बीकानेर तथा जैसलमेर।

ये खण्ड स्थायी रूपसे बनाये गये हैं। आवश्यकतानुसार इनमें रद्दोबदल हो सकता है।

(२) प्रत्येक खण्डके लिए एक व्यवस्थापक सभा होगी जिसमें उस खण्डके ब्रिटिश भारत तथा देशी रियासतोके प्रतिनिधि रहेंगे।

प्रत्येक खण्डको संघ व्यवस्थापक सभामें प्रतिनिधि भेजनेका अधिकार होगा। १९३५ के भारतीय शासन विधानमें जिस प्रान्तको जितना प्रतिनिधित्व दिया गया है उतना ही प्रतिनिधित्व यहां भी उसे प्राप्त होगा।

(३) पैराग्राफ २१ में दी गयी बातोंको ध्यानमें रखते हुए प्रत्येक खण्डकी व्यवस्थापक सभाके प्रतिनिधि मिलकर केन्द्रीय संघ व्यवस्थापक सभाका निर्माण करेंगे। इसमें कुल ३७५ प्रतिनिधि रहेंगे (२५० ब्रिटिश भारतसे और १२५ देशी रियासतोंसे)।

(४) संघ व्यवस्थापक सभामें एक तिहाई मुसलमान प्रतिनिधि होंगे।

(५) अन्य अल्पसंख्यक समुदायको १९३५ के भारतीय शासन विधानके अनुसार संघ व्यवस्थापक सभामें प्रतिनिधित्व दिया जायगा।

(६) प्रत्येक खण्डको केवल अपने क्षेत्रकी तालिकाके लिए विधान निर्माण करनेका अधिकार होगा लेकिन उस खण्डके एक या दो इकाईकी प्रार्थनापर प्रान्तीय तालिकाके लिए भी वह विधान बना सकता है। किसी भी खण्डमें इस तरहके विधानोंके प्रयोगके लिए, उस इकाईको अपनी सरकारकी अनुमति प्राप्त कर लेनी होगी, जहां इसका प्रयोग करना होगा। इसके बाद उस स्थानके लिए उस विषयपर बना प्रान्तीय या राजका विधान रोक दिया जायगा।

(७) किसी खण्डकी व्यवस्थापक सभामें स्थानीय तालिकाके लिए कोई भी विधान तबतक स्वीकृत नहीं समझा जायगा जबतक दो तिहाई प्रतिनिधि उसके पक्षमें मत न दें। छोटी इकाइयोके सरक्षणके लिए यह नितान्त आवश्यक है।

(८) किसी खण्डकी व्यवस्थापक सभा प्रस्तावद्वारा खण्ड तालिका या प्रान्तीय तालिकाके लिए संघ व्यवस्थापक सभासे प्रार्थना कर सकती है। लेकिन इस तरहकी प्रार्थना तबतक स्वीकार नही की जायगी जबतक सातमेंसे कमसे कम चार खण्ड उस प्रार्थनाका अनुमोदन न करें। और जबतक सातों खण्ड उसका समर्थन न करें तबतक उनका प्रयोग केवल उन्ही ४ खण्डोंमें होगा जिन्होंने ऐसी प्रार्थना की थी।

(९) खण्डोके आवेदनपर संघ व्यवस्थापक सभाद्वारा तथा इकाईके आवेदनपर खण्ड व्यवस्थापक सभाद्वारा निर्मित कोई भी विधान तभी रद्द कर दिया जायगा जब कमसे कम संघ व्यवस्थापक सभाके लिए ३ खण्ड और खण्ड व्यवस्थापक सभाके लिए कमसे कम आधे इकाई आवेदनपत्र दें।

(१०) संघ शासन सभामें सम्राट्के प्रतिनिधि वाइसराय तथा कमसे कम ७ और अधिकसे अधिक ११ सदस्योंकी कार्यसमिति रहेगी। संघके प्रधान मन्त्री इसीमेंसे होगे।

(११) संघ व्यवस्थापक सभाके प्रतिनिधियोंमें संघ प्रधान मन्त्रीकी नियुक्ति वाइसरायद्वारा होगी और शेष मन्त्रियोंकी नियुक्ति भी फेडरल प्रधान मन्त्रीकी सलाहसे निम्नलिखित शर्तोंके साथ संघ व्यवस्थापक सभाके सदस्योंमेंसे ही होगी।

(क) शासनसभामें प्रत्येक खण्डके कमसे कम एक प्रतिनिधि रहेंगे।

(ख) कमसे कम एक तिहाई मन्त्री मुसलमान होंगे।

(ग) यदि मन्त्रियोंकी संख्या ९से अधिक न हो तो कमसे कम दो और यदि ९से अधिक हो तो ३ मन्त्री देशी रियासतोंके प्रतिनिधियोंमेंसे चुने जायंगे।

यदि (ख) और (ग) परस्पर टकरा जायं तो कोई आपत्ति नहीं होगी। अन्य प्रभावशाली अल्पसंख्यक समुदायोंको भी उपयुक्त प्रतिनिधत्व देनेका यत्न किया जायगा।

(घ) संघ व्यवस्था कायम होनेके प्रथम १५ या २० सालतक वाइसराय अपने रक्षा और वैदेशिक मन्त्रीको व्यवस्थापक सभाके प्रतिनिधियोमेंसे या बाहर-से नामजद कर सकते हैं। उसके बाद सभी मन्त्री व्यवस्थापक सभाके प्रतिनिधि-योंमेंसे ही चुने जायंगे।

मन्त्रियोंके निम्नलिखित पद और अधिकार होंगे—(१) संघका प्रधान मन्त्री। (२) रक्षा मन्त्री। (३) वैदेशिक मन्त्री, देशी राज्योंकी देखरेखका भार भी इनपर ही रहेगा। (४) संघ अर्थ मन्त्री, (५) गृह मन्त्री, (६) यातायात मन्त्री, (७) अल्पसंख्यक समुदायके हितोंकी देखरेख करनेवाले मन्त्री, (८) मेलजोल संस्थापक मन्त्री, इनका काम होगा प्रत्येक खण्डके सम्पर्कमें रहकर समान हितके विषयोंपर परस्पर मेलजोल स्थापित करते रहनेका यत्न करना। (९) व्यवसाय और उद्योग मन्त्री।

(१२) क—मन्त्रियोंके पदकी अवधि साधारणतः व्यवस्थापक सभाकी अवधिके बराबर ही होगी (अर्थात् ५ साल)।

ख—वाइसरायकी इच्छाके अनुसार ही कोई मन्त्री अपने पदपर कायम रहेगा।

ग—किसी भी खण्डका प्रतिनिधि मन्त्री अपने खण्डकी व्यवस्थापक सभा-का विश्वास खो देनेपर अपने पदसे हटा दिया जायगा।

घ—अगर संघ व्यवस्थापक सभामें मन्त्रियोंके ऊपर अविश्वासका प्रस्ताव पास हो जाय तो ११ (घ) के अनुसार नियुक्त मन्त्रियोंको छोड़कर सभी मन्त्रियों-को पदत्याग कर देना होगा।

(१३) खण्ड व्यवस्थापक सभाके प्रतिनिधियोंका चुनाव नीचे लिखे अनुसार होगा—

(१) ब्रिटिश भारतखण्डके लिए प्रान्तीय व्यवस्थापक सभाद्वारा उस

तरीकेसे जो तरीका संघ व्यवस्थापक सभाके प्रतिनिधियोंके चुनावके लिए १९३५ के शासम विधानमें दिया गया है।

(२) देशी रियासतोंके लिए जहांतक सम्भव हो नीचे लिखे तरीकेके अनुसार—

(क) खण्ड और संघ व्यवस्थापक सभाकी स्थापनाके १० साल बादतक तीनचौथाई सदस्य शासकद्वारा नामजद किये जायगे और एकचौथाई उस तालिकामें चुने जायंगे जो इस कामके लिए बनायी गयी राजसभा या इसी तरह्की किसी संस्थाद्वारा पेश की गयी हो।

(ख) अगले पांच सालतक दोतिहाई शासकद्वारा नामजद किये जायंगे और एकतिहाई (क) के अनुसार चुने जायंगे।

(ग) १५ सालके बाद (क) के अनुसार आधे प्रतिनिधि नामजद किये जायंगे और आधे चुने जायंगे।

(घ) २० सालके बाद (क) के अनुसार एक तिहाई नामजद किये जायंगे और दोतिहाई चुने जायंगे।

अगर किसी देशी रियासत या अनेक देशी रियासतोंको दोसे कम जगहें मिली हों तो प्रथम १५ सालतक शासक नामजद करेगा और उसके बाद (क) के अनुसार चुनाव होगा।

(१४) रक्षाके विषयमें सलाह देनेके लिए एक कमेटी होगी। इस कमेटीके अध्यक्ष वाइसराय होंगे तथा इसमें निम्नलिखित सदस्य होंगे—

संघके प्रधान मन्त्री, रक्षा मन्त्री, वैदेशिक मन्त्री, अर्थ मन्त्री, यातायात मन्त्री, प्रधान सेनापति, सेण्ट्रल स्टाफके अध्यक्ष, नौ-सेना तथा हवाई बेड़ेके सीनियर अफसर, प्रत्येक खण्डके एक-एक प्रतिनिधि, वाइसरायद्वारा नामजद ५ सरकारी पक्ष दो गैर-सरकारी नामजद तथा रक्षा विभागके सेक्रेटरी।

(१५) वैदेशिक विभागके लिए एक कमेटी होगी। इस कमेटीके अध्यक्ष वाइसराय होंगे तथा इसके निम्नलिखित सदस्य होंगे—

संघके प्रधान मन्त्री, वैदेशिक मन्त्री, प्रत्येक खण्डके एक-एक प्रतिनिधि ज़ो खण्ड व्यवस्थापक सभाके प्रतिनिधियोंमेंसे अध्यक्षद्वारा चुने जायंगे, वाइस-

रायद्वारा नामजद दो सरकारी तथा दो गैर-सरकारी सदस्य तथा वैदेशिक विभागके सेक्रेटरी।

यदि इन समितियोंमें देशी रियासतोके प्रतिनिधियोंकी संख्या ३ से कम होगी तो इस कमीको इस प्रकार पूरी करेगे कि नरेन्द्र मण्डलतक तालिका बनाकर भेजेगा और उसी तालिकामेंसे सदस्य चुन लेंगे।

(१६) संघ रेलवे प्रबन्ध विभागमे प्रत्येक खण्डके कमसे कम एक प्रतिनिधि अवश्य रहेगें।

(१७) शासन विधानमें निम्नलिखित बातोंके लिए अनुकूल संरक्षणकी व्यवस्था रहेगी—

(क) अल्पसंख्यक समुदायके उचित हितोंकी रक्षाके लिए,

(ख) ब्रिटिश पैदाइश प्रजाके प्रति जातीय भेदभाव रोकनेके लिए,

(ग) देशी नरेशोंके साथ की गयी सन्धि तथा उनके अन्य अधिकारोंकी रक्षाके लिए,

(घ) संघशासन सभा अथवा सघ या खण्ड व्यवस्थापक सभाद्वारा ब्रिटिश भारत तथा देशी रियासतोकी आन्तरिक स्वाधीनता तथा इकाईमे किसी तरहका हस्तक्षेप रोकना,

(च) किसी तरहके विदेशी आक्रमणसे देश या उसके खण्डकी रक्षाका प्रवन्ध करना,

(छ) अल्पसख्यकोकी सास्कृतिक तथा धार्मिक अधिकारोकी रक्षा करना।

(१८) भारतीय सेनाका संघटन उसी तरहका रहेगा जैसा ता० १ जनवरी १९३७ को था। यदि किसी समय शान्तिकालमे उसमें परिवर्तनकी आवश्यकता प्रतीत हो तो प्रत्येक सम्प्रदायकी संख्याका वही अनुपात होगा जो १ जनवरी १९३७ को था। देशकी रक्षामें संकट उपस्थित हो जाने या अन्य अनिवार्य कारण आ जानेपर इसमें परिवर्तन हो सकेगा।

(१९) केन्द्रीय सरकारके अधिकारमें वे ही विषय रहेंगे जो समस्त देशकी सुचारु व्यवस्थाके लिए आवश्यक होंगे, जैसे—रक्षा, वैदेशिक विषय, यातायात,

चुंगी, सिक्का और नोट। इनके अतिरिक्त वर्तमान संघ तालिकाके सभी विषय खण्ड तालिकामें मिला दिये जायंगे। संघ तालिकामें जिन विषयोंका समावेश नहीं है उनके अवशिष्टाधिकार खण्डोके हाथमें होगा और खण्ड तालिकाके लिए यह अधिकार खण्ड व्यवस्थापक सभाको होगा।

(२०) यदि किसी विषयके लिए विवाद उठ खड़ा हो कि यह किसकी अधिकार-सीमाके अन्दर है तो उसपर वाइसरायका निर्णय अन्तिम माना जायगा।

(२१) संघ व्यवस्थामे एक ही सभा होगी। लेकिन विशिष्ट स्वार्थोंके लिए संघ व्यवस्थापक सभामें आन्तरिक प्रतिनिधित्व दिया जा सकता है जिस तरह वर्तमान राज्य-परिषद्को प्राप्त है, जो सभी खण्डोंमें बराबर बांट दिया जायगा।

(२२) अल्पसंख्यक समुदायके स्वार्थोंकी देखरेख तथा रक्षाके लिए उपयुक्त साधनका प्रबन्ध किया जायगा।

इस योजनाके अनुसार ब्रिटिश भारत तथा देशी रियासतोंका प्रवेश संघके अन्दर दो भिन्न दलकी भांति नही होगा बल्कि उनके प्रवेशकी व्यवस्था क्षेत्रके आधारपर होगी। यह कहा जाता है कि इससे केन्द्रीय सरकारको बल मिलेगा और देशका संगठन मजबूत होगा। खण्डोंमें जिन इलाकोका समावेश किया जायगा उनकी भौगोलिक तथा आर्थिक समानता आदि रहनेके कारण वे आपसमे हिलमिलकर अपने स्वार्थोंकी रक्षाके लिए उचित व्यवस्था करेंगे जिससे उनकी औद्योगिक आदि उन्नति हो सके। इससे ब्रिटिश भारत तथा देशी रियासतोके मनमें किसी तरहकी आशंका उत्पन्न नही होगी और वे लोग निश्चित होकर संघमें प्रविष्ट कर सकेंगे क्योकि अन्दरूनी मामलोंमें संघका अधिकार सीमित रहेगा। साथ ही जहां अल्पसंख्यक समुदायोके हितोकी रक्षाका पूरा प्रबन्ध रहेगा वहां प्रत्येक खण्डके स्वायत्त अधिकारोंकी रक्षाका भी प्रबन्ध रहेगा।

इस योजनाके पढ़ जानेपर इसी निष्कर्षपर पहुँचा जाता है कि यह योजना भारतको आजाद करनेके लिए न होकर केवल १९३५ के शासन विधानमे संशोधन मात्रके लिए है। इस योजनाके अनुसार देशी रियासतोंमें स्वतन्त्र चनाव कभी हो ही नहीं सकता। संघ तथा खण्ड व्यवस्थापक सभाके लिए

यह दो तरहके सदस्योंका प्रस्ताव करता है:—ब्रिटिश भारतके प्रतिनिधि जो जनताके चुने प्रतिनिधि होंगे, लेकिन देशी रियासतोंके अधिकांश प्रतिनिधि शासकोंद्वारा नामजद और कुछ थोड़े प्रजाद्वारा उपस्थित तालिकामेंसे चुने हुए होंगे। देशके दो महत्वपूर्ण विभाग—रक्षा और वैदेशिक विभाग—के पदपर इस योजनाके अनुसार वाइसरायको ऐसे व्यक्तियोके नियुक्त करनेका अधिकार मिल जाता है जो प्रजाके चुने प्रतिनिधि नहीं है। इस योजनाके अनुसार प्रत्येक मन्त्री अपनी खण्ड-व्यवस्थापक-सभाके प्रति जिम्मेदार समझा जाता है। इससे मन्त्रियोंकी संयुक्त जिम्मेदारी नष्ट हो जाती है। साथ ही अविश्वासका प्रस्ताव पास हो जानेके बाद इस योजनामे दोनों बाहरी मन्त्रियोंके पदपर कायम रह जानेकी व्यवस्था है। साम्प्रदायिक, खण्ड तथा देशी रियासत क्षेत्रोंमेसे मन्त्रियोकी नियुक्तिकी व्यवस्था कर यह योजना योग्यताको सर्वथा गौण स्थान देती है और साथ ही परस्पर सद्भावकी वृद्धिमें भी बाधा उपस्थित करती है। इस योजनामें केवलमात्र एक ही गुण है, वह यह है कि यह भारतको एक सम्पूर्ण इकाई मानती है और राजनीतिक, सांस्कृतिक या धार्मिक आधारपर इसके विभाजनका प्रस्ताव नहीं करती।

सर अब्दुल्ला हारून कमेटीकी योजना

फरवरी १९४० में अखिल भारतीय मुस्लिम लीगकी वैदेशिक समितिने भिन्न-भिन्न योजनाओंके निर्माताओंको निमन्त्रित कर इस आशयसे एकत्र करनेका यत्न किया था कि सबलोग एक साथ मिलकर प्रत्येक योजनाकी जांच करें और सबको मिलाकर एक योजना तैयार करें। निमन्त्रित सज्जन एकत्र हुए और एक समितिके रूपमें परिवर्तित हो गये। इस समितिकी कई बैठकें हुईं और लीगके लाहौरवाले उस प्रस्तावके आधारपर, जिसका ढांचा लीगके वैदेशिक मन्त्री सर अब्दुल्ला हारूनने तैयार कर लीगके अध्यक्ष श्री जिनाको दिया था—एक योजना तैयार की। समितिने जो योजना तैयार की उसमें देशी रियासतोंका भी समावेश कर दिया। इसलिए वह पाकिस्तानवाले प्रस्तावकी अपेक्षा कहीं अधिक पूर्ण मानी जाती है।

समितिकी सिफारिश है कि (१) उत्तर-पश्चिममें एक मुस्लिम राजकी स्थापना हो सकती है जिसमें मुसलमानोंकी जन-संख्या ६३ फीसदीके लगभग होगी और (२) उत्तर-पूर्वमें जिसमें मुसलमानोंकी जन-संख्या ५४ फीसदीके करीब होगी।

उत्तर-पश्चिमी राज

प्रान्त	कुल जन-सख्या	मुसलमान
पजाब	२३५ ८० ८५२	१ ३३ ३२ ४६०
सिन्ध	३८ ८७ ०७०	२८ ३० ८००
सीमाप्रान्त	२४ २५ ०७६	२२ २७ ३०३
ब्रिटिश-शासित आदिवासी क्षेत्र	१३ ६७ २३१	१३ १७ २३१
ब्रिटिश बलूचिस्तान	४ ६३ ५०८	४ ०५ ३०९
दिल्ली प्रान्त	६ ३६ २४६	२ ०६ ९६०
जोड़—	३ २३ ६० ०६३(?)	२०३ २० ०६३

मुसलमानोकी सख्या ६२.७९ फीसदी (ये आकड़े सन् १९३१ की जन-संख्याके है।

उत्तर-पूर्वी क्षेत्रमें आसाम, बंगाल (बांकुड़ा तथा मिदनापुर जिला छोड़कर) और बिहारका पूर्णिया जिला होगा।

कुल जन-संख्या	५७०१०९४६		
मुसलमान	३०८७६४२१	—	५४ फीसदी
गैर मुसलमान	२६१३४५२५	—	४६ ,,

गैर मुसलमानोंमें औसतन ८५००,००० अर्थात् ३२ फीसदी दलितवर्ग १५००,००० अर्थात् ६ फीसदी आदिवासी, ४ लाख ईसाई और बाकी सवर्ण हिन्दू है।

(३) "समिति यह प्रकट कर देना अपना कर्त्तव्य समझती है कि मुसलमानोंके स्वार्थमें यह आवश्यक है कि गैर-ब्रिटिश भारतमें जहां कहीं मुसलमानोंकी प्रधानता हो, वहां उन्हें मुस्लिम प्रभावको स्थायी बना देनेका यत्न करना चाहिये। इसलिए यह आवश्यक है कि प्रत्येक छोटी बड़ी मुस्लिम देशी रियासतोंको—मुस्लिम वैधानिक व्यवस्थाके लिए—खुदमुख्तार मुस्लिम राष्ट्र मान लेना चाहिये। इस मागको सभी मांगोंका आधार बनाना चाहिये।...यह सर्वथा उपयुक्त होगा कि लीग हैदराबाद रियासतके विस्तार तथा पूर्ण आजादीपर खूब जोर देती रहे और समुद्रके किनारेतक उसे रास्ता दिलानेका यत्न करती रहे। इससे भारतके मुसलमानोंको बड़ी ताकत मिलेगी। कौन जानता है कि एक दिन ऐसा भी आ सकता है जब भारतके मुसलमानोको हैदराबादको ही अपनी बढती शक्तिका केन्द्र और अपना गढ बनाना पडे।"* इस तरह यह मुसलमानोके प्रभावका तीसरा बड़ा क्षेत्र होगा।

समितिने इस बातकी सम्भावनापर भी जांच की कि क्या मुसलिम देशी रियासतोके आसपासकी देशी रियासते किसी समान उद्देश्यके लिए एक दूसरेके साथ सघटित हो सकती है। यदि इस तरहकी कोई व्यवस्था हो सके तो निम्नलिखित स्थिति तैयार हो सकती है—

नाम	कुल आबादी	मुसलमान
ब्रिटिश भारत	३२३६००६३	२०३२००६३
सीमाप्रान्तकी रियासतें		
धीर, खान, चित्रल	९०२०७५	८५२०००
बलूचिस्तानके राज		
कलात	३४२१०१	३३१२३४
लासबेला	६३००–	६१५५०

* दि पाकिस्तान इशू पृष्ठ ७९–८०

नाम	कुल आबादी	मुसलमान
सिन्धकी रियासतें		
खैरपुरमीर	२२७१८३	१८६५७७
पञ्जाबकी रियासतें		
बहावलपुर	९८४६१२	७९११७६
कपूर्थला	३१६७५७	१७९२५१
पटियाला	१६२५५२०	३६३९२०
नाभा	२८७५७४	५७३९३
फरीदकोट	१६४३६४	४९९१२
झींद	३२४६७६	४६००२
मलारकोटा	८३०७२	३१४१७
लोहारू	२३३३८	३११९
पटौदी	१८८७३	३१६८
दुयाना	२८२१६	५८६३
चम्बा	१४६८७०	१०८३९
मण्डी	२७०४६५	६३५१
सुकेत	५८४०८	७३३
कलसिया	५९८४८	२१७९७
शिमला हिल्स स्टेट	३३०८५०	१००१७
शरमुर	१४८५६३	७०२०
बिलासपुर	१००९९४	१४५८
काश्मीर	३६४६२४३	२८१७६३६
बीकानेर तथा जैसलमेरके शामिल होनेपर—		
बीकानेर	९३६२१३	१४१५७८
जैसलमेर	७६२५५	२२११६
	४३५२६१५१	२६३३०१९०
		या ६९.४९ फीसदी

बीकानेर और जैसलमेरको बाद देकर	४२५१३६७८	२६१६६५२६
		या ६१.५४ फीसदी

कमेटीने उत्तर-पश्चिमी क्षेत्रमे बसनेवाले विविध अल्पसंख्यक समुदायों-की आबादीका पता लेनेका भी यत्न किया और वह इस परिणामपर पहुंची कि इस क्षेत्रके ब्रिटिश भारत प्रान्तोंमें दलित जातिया १४१३५३२ अर्थात् ४.३६ फीसदी, सिख ३१३९९६४ अर्थात् ९.७० फीसदी और सवर्ण हिन्दू ७०१९२७८ अर्थात् २१.६९ फीसदी हैं। देशी रियासतोकी तालिका भी कमेटीने बनायी है। वहां सवर्ण हिन्दू २४९४०९३ या २२.३३ फीसदी, और सिख १०५८१४२ या १०.४२ फीसदी है (देशी रियासतोंमें सवर्ण हिन्दुओका औसत निकालनेमे भूल प्रतीत होता है। वह २४.५६ होना चाहिये २२.३३ नही)।

पूर्वी मुसलिम क्षेत्रमें निम्नलिखित देशी रियासतोको शामिल होनेके लिए राजी किया जा सकता है—

बंगालसे	**आबादी**	**मुसलमान**
कूच बिहार तथा त्रिपुरा	९७३३१६	३१२४७६
आसामसे		
मनीपुर तथा खासी पहाड़ी	६२५६०६	२४६००
ब्रिटिश प्रान्त	५७०१०९४६	३०८७६४२१
कुल जोड़	५८६०९८६८	३१२१३४९७
		या ५३.१५ फीसदी

अल्पसंख्यक समुदायोकी जनसख्या इस क्षेत्रकी समूची जनसंख्याके मुका-बले इस प्रकार है—

	सवर्ण हिन्दू	दलितवर्ग	आदिवासी	ईसाई
ब्रिटिश बंगाल	२९.९	१३.७	१.५	—

बंगालकी रियासतें	६४.९	२.७	—	—
ब्रिटिश आसाम	३६.६	२१.०	८.२	२.५
आसामकी रियासतें	४३.७	—	४४.९	७.४

इन दोनों क्षेत्रोंमें आनेवाले प्रदेशोंका क्षेत्रफल वर्गमीलमें इस प्रकार है—

	ब्रिटिश भारत	देशी रियासत	जोड़
उत्तर पश्चिमी क्षेत्र	२२५३५२	२१३३७०	४३८७२२
पूर्वी क्षेत्र	१२९६३७	१७७५४	१४७३९१
जोड़	३५४९८९	२३११२४	५८६११३

समस्त भारतकी जनसंख्यासे यदि इसकी तुलना करें तो इसकी स्थिति इस प्रकार होगी:—

समस्त भारतकी कुल जनसंख्या— ३५०५२९५५७

मुसलमान ७७६७८२४५

पश्चिमी और पूर्वीक्षेत्रके (देशी रियासतों सहित)

मुसलमान ५७५४२७८७

अर्थात् ७४.०७ फीसदी

इस तरह अपने मन्तव्यद्वारा कमेटी ७४.०७ फीसदी मुसलमानोंकी रक्षाकी व्यवस्था कर देती है।

"लीगका लाहौरवाला प्रस्ताव इस बातसे सहमत नहीं है कि इन नवनिर्मित राष्ट्रोंकी रक्षा और वैदेशिक विषय तुरन्त सौंप दिये जायं। उसके अनुसार अस्थायी अवधिके लिए ऐसी शक्तिके हाथमें अधिकार रहना चाहिये जो सबके लिए समान हो। इस विचारके अलावा भी मेल कायम रखनेवाली एक समान शक्तिकी आवश्यकता होगी क्योंकि प्रस्तावकी तीसरी धाराके अनुसार अल्पसंख्यकोंके लिए संरक्षणकी जो व्यवस्था की जायगी उसका समुचित पालन तबतक सम्भव नहीं है जबतक मुसलिम प्रभाव तथा हिन्दू प्रभावके क्षेत्रोंके बीच सम्बन्ध कायम रखनेवाली कोई शक्ति न हो। संघराष्ट्र मुसलमानोंके अनुकूल

नही है क्योंकि उन्हें इस बातकी आशंका है कि अपने बहुमतके कारण हिन्दू सदा मुसलमानोंपर हावी रहेंगे। लेकिन प्रस्तावके मन्तव्यको पूरा करनेके लिए एक समान व्यवस्था आवश्यक है, इसलिए कोई सर्वसम्मत तरीका तैयार करना होगा जिसके अनुसार गैर-मुसलमानोके साथ मुसलमानोंको केन्द्रमें बराबरका नियन्त्रण प्राप्त हो।"*

तदनुसार कमेटीने यह मन्तव्य उपस्थित किया कि सभी प्रस्तावित राष्ट्रोको खुदमुख्तारकी उपाधि मिल जाय और सभी मिलकर एक ऐसी शक्तिका निर्माण करे जो सबके संयुक्त नामपर (१) रक्षा, (२) वैदेशिक विभाग, (३) यातायात, (४) चुगी, (५) अल्पसंख्यकोका सरक्षण तथा (६) इच्छानुसार एक स्थानसे दूसरे स्थानपर जाकर बसनेके कामको निम्नलिखित शर्तोंके साथ देखें—

(क) रक्षा—प्रत्येक राष्ट्रको अपने व्ययसे सेना रखनी होगी। प्रत्येक राष्ट्रके सामूहिक महत्वके अनुसार सेनाकी सख्या नियत की जायगी। सैनिक व्ययमें अनुपातके हिसाबसे केन्द्रको हिस्सा लेना होगा। साधारण स्थितिमे सेनाका नियन्त्रण प्रत्येक राष्ट्र करेंगे, लेकिन युद्धकालमें समस्त सेनाओपर केन्द्रीय सरकारका अधिकार होगा।

(ख) नौ-सेनापर केन्द्रका ही अधिकार होगा। राष्ट्रोको जो विषय दे दिये जायंगे उनके अलावा सभी विषयोपर केन्द्रका शासन होगा। अवशिष्टाधिकार राष्ट्रोको प्राप्त होगा। शासन तथा अन्य समितियोंमे मुसलमानोंको आधी जगहे मिलेगी।

जिस कमेटीने यह योजना बनायी उसमें ९ सदस्य थे। यह उनके बीच घूम ही रही थी कि अचानक स्टेट्समैनमें असमय प्रकाशित हो गयी। इस कमेटीके एक सदस्य तथा एक योजनाके जनक (जिसपर ऊपर विचार किया जा चुका है) प्रो० अफजल हुसेन कादिरीका खयाल था कि राष्ट्रोको इसमे शामिल

* पाकिस्तान इशू पृ० ८७-८८।

क,रने तथा शेष भारतके साथ मुसलिम राष्ट्रोंका सम्बन्ध स्थापित करनेकी व्यवस्था देकर यह योजना लाहौरवाले प्रस्तावसे आगे बढ जाती है। मुसलमानोंकी मांगों-के बीचमे वे किसी केन्द्रीय व्यवस्थाको लानेके विरुद्ध थे, क्योकि इससे अखिल भारतीय संघ या हिन्दू राजकी स्थापनाकी सम्भावना हो जायगी। एक दूसरी योजनाके जनक डाक्टर सैयद अब्दुल लतीफ उत्तर-पश्चिमी और उत्तर-पूर्वी क्षेत्रके बनावटसे सन्तुष्ट नही थे। इस क्षेत्रको पजाब, सिन्ध और सयुक्तप्रान्तके सदस्योने बनाया था। क्योंकि यह काम इन्ही लोगोंको सौपा गया था। डा० लतीफने सर हारूनको लिखा था कि लाहौरवाले प्रस्तावकी यह मंशा है कि जिन प्रदेशोमे मुसलमानोका अत्यधिक बहुमत हो उन्हे मिलाकर समान विचार रखनेवाले प्रदेशोका गुट बनाया जाय, लेकिन आपकी कमेटीके पञ्जाबी और अलीगढी सदस्य गैर-मुसलिम क्षेत्रोपर साम्राज्यवादी प्रभाव रखनेके उद्देश्य-से ऐसे वृहत्तर पञ्जाबका निर्माण करना चाहते है जो अलीगढतक फैलकर जैसल-मेरसे काश्मीरतकके सभी गैर-मुसलिम राज्योंको अपने अन्तर्गत कर लेता है। इससे मुसलमानोंकी सख्या केवल ५५ फीसदी ही हो जाती है। इसी तरह उत्तर पूर्वी क्षेत्रमे वे समूचा बगाल, आसाम और बिहारका भी एक जिला मिला देना चाहते है। इससे वहा भी मुसलमानोकी आबादी ५४ हो जाती है। मेरी समझमे इस तरहका क्षेत्र बनाना लाहौरके प्रस्तावकी मशाके एकदम विरुद्ध है। क्योकि उत्तरमे ४६ और पूरबमे ४२ सैकडे गैर-मुसलिम आबादीके रहते आप इन क्षेत्रों-को मुसलिम राष्ट्र कभी नही कह सकते और न किसी भी प्रकार इन्हे मुसलिम क्षेत्र ही कहा जा सकता है।*

श्री जिनाने इस कमेटी तथा इसकी सिफारिशोको एक दल या एक व्यक्ति-की सिफारिशोके अलावा और कुछ माननेसे साफ इनकार कर दिया।

ऊपर जिन योजनाओंकी चर्चा की गयी है उसके अतिरिक्त अन्य योजनाएं भी है। एक योजना सर फीरोज खां नूनकी है जिसका उल्लेख उन्होंने १९४२ में

* दि पाकिस्तान ईशू, पृष्ठ ९८–९९।

अपने अलीगढ़के भाषणमें किया था, और दूसरी योजना श्री रिजवेन्नुला की है। चूकि इन दोनों योजनाओंको देखनेका अवसर नहीं मिला है, इसलिए प्रस्तुत पुस्तकमें उनका उल्लेख नहीं है।

विभाजनकी भावनाका उदय

ये सभी योजनाएं मुसलिम लीगके लाहौरवाले प्रस्तावके बाद अर्थात् १९३९ के बाद ही तैयार की गयी है। कुछ लोगोंका कहना है कि १९३० मे मुसलिम लीगके इलाहाबादवाले अधिवेशनके अध्यक्षपदसे भाषण करते हुए स्वर्गीय डाक्टर इकबालने पहले पहल स्वतन्त्र मुसलिम राष्ट्रकी मांग पेश की थी। इस लिए उस भाषणसे कुछ अंश उद्धृत कर देना आवश्यक होगा।' "मुसलमानोंका धार्मिक आदर्श उसी सामाजिक संघटनपर निर्भर करता है जिसका उसके ही द्वारा निर्माण हुआ है। यदि आप एकको ठुकरा देते है तो दूसरेको भी ठुकरा देना होगा। इसलिए जिस राष्ट्रीयतामे मुसलमानोंको इसलामके सिद्धान्तोंकी हत्या करनी पड़े उसपर तो उन्हें विचारतक नही करना चाहिये। इसलिए भारतीय राष्ट्रकी एकताका आधार बहुतोंके साथ मेल और संघटन होना चाहिये न कि उसका विरोध। इसी तरहकी एकतापर भारत और उसके साथ ही समस्त एशियाका भविष्य निर्भर करता है।"

हमें यंह कहते खेद होता है कि इस दिशामें हमारा अबतकका प्रयास हर तरहसे असफल रहा। वे क्यों असफल हुए? कदाचित् हमलोग एक दूसरेकी नीयतपर सन्देह करते है और एक दूसरेपर हावी होकर रहना चाहते है। परस्पर सहयोगके ऊंचे आदर्शके लिए भी शायद हमलोग उन विशेषाधिकारोंका त्याग नहीं करना चाहते, जो भाग्यसे हमारे हाथ आ गये है और अपनी स्वार्थपरताको राष्ट्रीयताके आवरणसे ढँककर रखना चाहते हैं। बाहरसे तो हमलोग उदार राष्ट्रीयताकी डींग हांकते हैं लेकिन अन्दरसे कट्टर साम्प्रदायिक हैं। कदाचित् हमलोग यह स्वीकार करनेके लिए तैयार नहीं हैं कि प्रत्येक दलको अपनी सांस्कृतिक परम्पराके अनुसार अपना विकास करनेका पूरा

अधिकार है। हमारी असफलताका चाहे जो भी कारण हो, पर मै अभी भी आशान्वित हूं। घटनाओंके क्रमसे प्रतीत होता है कि हमलोगोके बीच किसी तरह-का समझौता हो जायगा। जहातक मुसलमानोकी विचारधाराका मैंने अध्ययन किया ै मुझे यही प्रकट हुआ है कि यदि मुसलमानोंकी यह विश्वास हो जाय कि अपने घरमे रहकर उन्हे अपनी परम्परा और अपनी संस्कृतिके अनुसार अपना विकास करनेका अवसर मिलेगा तो वे देशको आजाद करनेके लिए अपना सब-कुछ निछावर कर सकते है। यह कहना कि प्रत्येक समुदायको अपने विश्वास-के अनुसार अपने विकासका अधिकार है, सकीर्ण साम्प्रदायिकता नही है ...अन्य जातियोके धार्मिक विश्वास, सामाजिक आचार, व्यवस्था और रीति-रिवाजके मेरे हृदयमें यथेष्ट आदर है। इतना ही नही, कुरानकी शिक्षाके अनुसार उनके मजहबी तीर्थोंकी रक्षा करना भी मैं अपना कर्तव्य समझता हू।

"यूरोपीय देशोकी तरह भारतीय समाजकी इकाई भौमिक नही है। इस-लिए साम्प्रदायिक गरोह क़ायम किये बिना, यूरोपीय लोकतन्त्र शासनका सिद्धान्त यहा लागू नही रो सकता। इसलिए भारतके अन्दर मुसलमानोकी मुस्लिम भारत-की मांग सर्वथा उचित है। मै चाहता हूं कि पञ्जाब, सिन्ध, सीमाप्रान्त और बलूचिस्तान एक राष्ट्रमे शामिल कर दिये जाय..... अम्बाला कमिश्नरी तथा उन जिलोको जिनमे गैर-मुसलमान अधिक है—इसमेंसे निकाल देनेसे इसका विस्तार भी कम हो जायगा और मुस्लिम आबादीका अनुपात भी बढ़ जायगा। .. .इस तरह भारत राष्ट्रके अन्दर विकासका पूरा अवसर पाकर उत्तर पश्चिमके मुसलमान किसी भी विदेशी आक्रमणके मुकाबले भारतकी रक्षा सबसे अधिक कर सकेंगे, चाहे वह आक्रमण विचारोका हो या शस्त्रोका। ......मेरा अपना खयाल है कि स्वतन्त्र भारतके शासनके लिए एक ही शासन-व्यवस्था अनुकूल नही हो सकती। अवशिष्टाधिकार स्वतन्त्र राष्ट्रोके लिए छोड़ देना चाहिये। सघशासन केवल उन्ही अधिकारोंकी देखभाल करे जो उसे संघ-राष्ट्रोकी सर्वसम्मतिसे प्राप्त हों।"*

---

* एफ० के० खां दुर्रानी—'दि मीनिंग आव पाकिस्तान', पृष्ठ २०५—२१३।

इससे स्पष्ट प्रकट है कि डाक्टर इकबालने ऐसी किसी योजनाकी चर्चा नहीं की थी जिसमें बिना किसी केन्द्रीय शासनके मुसलमानोके अलग स्वतन्त्र राज कायम किये जायं। वे एक ऐसा संघ चाहते थे जिसकी प्रत्येक इकाई स्वायत्त हो और साथ ही उत्तर-पश्चिमी क्षेत्रका निर्माण इस तरह करना चाहा था जिससे सउका शासन ठीक तरहसे हो सके और वहा मुसलमानोंकी प्रधानता रहे। १९२५ में 'नेशन' पत्रके प्रतिनिधिके साथ बातचीतमें भारतकी रक्षाके सम्बन्धमें उन्होंने जो विचार प्रकट किये थे वे भी उनके पहले विचारके सर्वथा अनुकूल हैं। उन्होंने कहा था—"कुछ ऐसे बुजदिल हिन्दू भी है जिन्हें यह भय बना रहता है कि अफगानोंकी चढ़ाई होनेपर मुसलमान देशद्रोह करेंगे। यदि भारतके लोग संगठित हो जायं और एक दूसरेका विश्वास करने लगें तो वे लोग प्रत्येक आक्रमणकारीका मुकाबला करेंगे चाहे वह मुसलमान हो या गैर-मुसलमान। जो आक्रमणकारी मेरा घर और मेरी आजादी मुझसे छीनना चाहता है, उससे मैं अपनी और अपने घरकी रक्षा हर तरहसे करूंगा। जेहादका तो प्रश्न ही नहीं उठता क्योंकि जेहाद तो राजनीतिक आकांक्षाके लिए आड़मात्र है। यदि हमलोगोंमें सामूहिक चेतनाका उदय हो जाय तो हमलोगोंकी सारी कठिनाई हल हो जाय। मेरा विचार है कि यदि सौदा करके भी हमलोग राष्ट्रीय एकता स्थापित कर लें तो इस तरहकी विचारधाराका उदय और विकास सम्भव है।"*

गोलमेज कान्फरेन्सके बादतक भारतके मुसलमानोंकी माग केवल इतनी ही थी कि अल्पसंख्यक सम्प्रदायके नाते उन्हें पर्याप्त संरक्षण मिलना चाहिये। विभाजनकी भावना उनमें किस प्रकार उदय हुई, इसका विवरण डाक्टर शौकतुल्ला अन्सारीने अपनी पुस्तक "पाकिस्तान दि प्राब्लम आव इण्डिया" मे दिया है। यहां उससे अवतरण दे देना उचित होगा:—

"१९३०–३१ में शासन-सुधार खरादपर चढ़ चुका था और प्रथम तथा द्वितीय गोलमेज कान्फरेन्समें मुसलमानोंने संघशासनकी स्थापनाके लिए

---

* सर्चलाइट, ३० अप्रैल १९२६।

वचन दे दिया था। तृतीय गोलमेज कान्फरेन्सके समय १९३२ में श्री जे० कोटमैन सी. आई. ई. ने लिखा था—'दृढ़ और संयुक्त भारत—जिसमें समस्त ब्रिटिश भारत, देशी रियासतें, उत्तर-पश्चिमकी सीमाप्रान्तीय भूमि—जिसका कि भारतीय राजके लिए भारतमें मिलना आवश्यक है—की स्थापना दिनपर दिन असम्भव ोती जा रही है और ऐसा प्रतीत होता है कि उसके स्थानपर उत्तर-पश्चिममें एक शक्तिशाली मुसलमानराजकी स्थापना होगी जिसकी आंखें सदा भारतसे बाहरकी ओर लगी रहेंगी अर्थात् विश्वके उन मुसलमान राजोंकी ओर जिसका वह अपनेको अंग समझता है। इसके साथ ही सुदूर दक्षिण और पूर्वमें क्या ोगा? हिन्दू भारत, एक जातीय औरसंयुक्त? शायद! अथवा एक विस्तृत क्षेत्र जिसमें पुराने युगकी तरह एक जाति या देशी नरेश दूसरी जाति या नरेशके साथ युद्ध करते रहेंगे। भविष्यमें इसकी बहुत कुछ सम्भावना दिखायी देती है....।"

"यह बीज कुछ उन मुसलमान युवकोंके दिमागमें बैठ गया जो संघराष्ट्रके विरोधी थे और जिनकी यह धारणा थी कि शासन-विधानमें जो संरक्षण दिये जा रहे ह वे व्यर्थ है और बहादुर तथा मूक मुसलमान जाति हिन्दू राष्ट्रीयताकी वेदीपर बलिदान की जा रही है। १९३३ में पहले-पहल एक पञ्जाबी मुसलमान, चौधरी रहमतअलीने मुसलमानोंको एक स्वतन्त्र राष्ट्र कहना आरम्भ किया जो अबतक एक अल्पसंख्यक समुदाय माने जाते थे। इन्होंने ी इसे आन्दोलनका रूप दिया। इन्होंने इस विचारको जन्म दिया कि पञ्जाब, सीमाप्रान्त (अफगान प्रान्त), काश्मीर, सिन्ध तथा बलूचिस्तानको मिलाकर एक स्वतन्त्र मुस्लिम राज—पाकिस्तान—की स्थापना की जाय। डाक्टर इकबालके मन्तव्यसे यह एकदम भिन्न था। डाक्टर इकबालका प्रस्ताव था कि इन प्रन्तोंको मिलाकर एक राज कायम किया जाय जो अखिल भारतीय संघ राजका एक अंग हो और चौधरी रहमतअलीका प्रस्ताव था कि इन प्रान्तोंका अपना अलग संघ शासन ही हो। चौधरी रहमतअलीने अपनी 'योजना छपवाकर पार्लमेण्ट तथा गोलमेज कान्फरेन्सके सदस्योंके पास भेजी

लेकिन किसी भारतीय—हिन्दू या मुसलमान—ने उसमें दिलचस्पी न ी ली। ज्वायण्ट पार्लमेण्टरी सेलेक्ट कमेटीके समक्ष बयान देते हुए अगस्त १९३३ में मुस्लिम गवाहोने पाकिस्तान-योजनाके बारेमे निम्नलिखित मत प्रकट किया था—

'ए० यूसुफअली—जहातक मेरी धारणा है, यह कच्चे मस्तिष्कवाले विद्यार्थियोकी योजना है। इसे किसी भी सम्भ्रान्त व्यक्तिने पेश नही किया है।

'डा० खलीफा शुजा-उद्दीन—शायद इतना ही कह देना पर्याप्त होगा कि उस तरहकी किसी भी योजनापर किसी भी संस्था या प्रतिनिधि जमातने विचार नही किया है।

"यह ध्यान देनेकी बात है कि इस कान्फरेन्समे पाकिस्तानके सम्बन्धमे प्रश्न पूछे गये थे। इससे भी अधिक ध्यान देने योग्य बात यह है कि इस तरहके प्रश्नकी प्रेरणा ब्रिटेनकी ओरसे आयी थी। कागजातोमे प्रकट होता है कि भारतीय मुस्लिम प्रतिनिधि इस तरहके सवालोमे किसी तरहकी दिलचस्पी नही ले रहे थे और आगे बढनेके लिए सदा उतावले रहते थे; लेकिन कमेटीके ब्रिटिश सदस्य इस प्रश्नपर बहुत अधिक जोर देते थे...यद्यपि भारतमे उस समयतक किसीने पाकिस्तानकी चर्चातक नही की थी और मुसलमान प्रतिनिधियोने उसमे किसी तरहकी रुचि भी नही दिखायी तो भी अनुदार दलके समाचारपत्र तथा चर्चिल और लायड जार्जके दलने गला फाड़-फाड़कर उसपर जोर दिया और उसे बहुत ही आशयभरी बात समझा। उसका परिणाम यह हुआ कि कामन्स सभामे इसपर अनेक बार सवाल किये गये।"*

विभाजनकी भावनाका उदय और विकास चाहे किसी भी प्रकार हुआ हो, लेकिन डा० अन्सारीके शब्दोंमें यह निःसन्देह कहा जा सकता है कि इस बीजको उपजाऊ भूमि मिल गयी और अपनी ओर इसने जबर्दस्ती ध्यान आकृष्ट कर लिया।

---

* शौकतुल्ला अन्सारी—पाकिस्तान दि प्राब्लम आव इण्डिया, पृष्ठ ४–७।

चतुर्थ भाग

अखिल भारतीय मुस्लिम लीग का पाकिस्तानका प्रस्ताव

१

अनिश्चितता और व्यापकता

अखिल भारतीय मुस्लिम लीगने मार्च १९४० में अपने लाहौरवाले अधिवेशनमें यह प्रस्ताव स्वीकार किया—

१—अखिल भारतीय मुस्लिम लीगकी कौंसिल और कार्यसमितिके २७ अगस्त, १७-१८ सितम्बर, २२ अक्तूबर और ३ फरवरीके प्रस्तावोंमें वैधानिक प्रश्नके सम्बन्धमें जिस बातका निर्देश किया गया है उसको मानते और स्वीकार करते हुए अखिल भारतीय मुस्लिम लीगका यह अधिवेशन जोर देकर दुहराता है कि १९३५ के भारत शासन-विधानमें जो संघ योजना रखी गयी है वह इस देशकी विचित्र स्थितिके विचारसे पूर्णतः अनुपयुक्त और अव्यावहारिक है तथा मुस्लिम भारतके लिए सर्वथा अग्राह्य है।

२—यह अपना यह दृढ विचार भी प्रकट कर देना चाहता है कि सम्राट्की सरकारकी ओरसे १८ अक्तूबर १९३९ को वाइसरायने जो घोषणा की उसमें यह आश्वासन पुनः दिये जानेपर भी कि जिस नीति और ढांचेके आधारपर १९३५ का भारत शासन-विधान बना है उनपर भारतके विभिन्न दलो, स्वार्थो और सम्प्रदायोकी राय लेकर पुनः विचार किया जायगा, जबतक सारे ढाचेपर नये सिरेसे विचार न किया जायगा तबतक मुस्लिम भारत सन्तुष्ट न होगा और मुसलमानोंकी स्वीकृति और सम्मति लिए बिना जो भी संशोधित ढाचा तैयार किया जायगा वह मुसलमानोको कभी स्वीकार न होगा।

३—निश्चय हुआ कि अखिल भारतीय मुस्लिम लीगके इस अधिवेशनका यह सुविचारित मत है कि ऐसा कोई भी वैधानिक ढांचा इस देशके लिए व्यावहारिक या मुसलमानोके लिए स्वीकार न होगा जिसमे भौगोलिक दृष्टिसे संलग्न इकाइयोंको, आवश्यकतानुसार घटा-बढ़ाकर, इस प्रकारके सीमाबद्ध प्रदेशोका

रूप देनेका मौलिक सिद्धान्त न बरता गया हो जिससे भारतके पश्चिमोत्तर और पूर्वी क्षेत्र—जैसे संख्याकी दृष्टिसे मुसलमान-प्रधान क्षेत्र आपसमे मिलकर 'स्वतन्त्र राज' बन सकें और सम्मिमिलित होनेवाली इकाइयोंको स्वायत्त शासन और प्रभुसत्ता प्राप्त हो।

४—इन इकाइयो और प्रदेशोके अल्पसख्यकोके धार्मिक, सास्कृतिक आर्थिक, राजनीतिक, शासन-सम्बन्धी तथा अन्य अधिकारो और स्वार्थोकी रक्षाके लिए उनकी रायसे पर्याप्त, प्रभावपूर्ण तथा आदिष्ट सरक्षणोकी विधानमे विशेष रूपसे व्यवस्था की जाय ; और भारतके जिन भागोमे मुसलमान अल्पसंख्यक हो वहा उनके तथा अन्य अल्पसंख्यकोके धार्मिक, सास्कृतिक, आर्थिक, राजनीतिक, शासन-सम्बन्धी तथा अन्य अधिकारो और स्वार्थोकी रक्षाके लिए पर्याप्त, प्रभावपूर्ण तथा आदिष्ट सरक्षणोकी विशेष रूपसे * व्यवस्था की जाय।

यह अधिवेशन कार्यसमितिको इन्ही मौलिक सिद्धान्तोके आधारपर विधानकी एक ऐसी योजना प्रस्तुत करनेका अधिकार देता है जिसमे उक्त प्रदेशोके लिए सभी अधिकार—यथा, रक्षा, बाहरी विषय, यातायात सम्बन्ध, चुगी तथा अन्य आवश्यक विषय—अन्ततः ग्रहण कर लेनेकी व्यवस्था हो।

प्रस्तावसे यह प्रकट होता है कि इसका सम्बन्ध १९३५ के भारत शासन-विधानमे सन्निविष्ट संघ-योजनासे है जो भारतकी विचित्र स्थितिके विचारसे पूर्णतः अनुपयुक्त और अव्यवहारिक है और इस कारण मुस्लिम भारतके लिए सर्वथा अग्राह्य है। यह दृढ़ मत प्रकट करनेके अनन्तर कि जबतक सारे वैधानिक ढाचेपर नये सिरेसे विचार न होगा तबतक भारतके मुसलमान सन्तुष्ट न होगे और ऐसा कोई भी सशोधित ढाचा जो मुसलमानोकी स्वीकृति और सम्मतिसे तैयार न किया जायगा उनको ग्राह्य न होगा, वह मौलिक सिद्धान्त निर्दिष्ट किया गया है जिसपर व्यवहार्य और मुसलमानोके ग्राह्य होने योग्य ढांचा आधृत होना चाहिये।

---

* 'इडियाज प्राब्लम आव हर फ्यूचर कान्स्टिट्यूशन' में (खासकर) और 'मुस्लिम इण्डिया' तथा 'पाकिस्तान आर पार्टीशन आव इण्डिया' में 'Specifically' (निश्चित रूपसे शब्द) है।

मौलिक सिद्धान्त यह रखा गया है कि भौगोलिक दृष्टिसे सलग्न इकाइयां, आवश्यकतानुसार घटा-बढ़ाकर, इस प्रकारके सीमाबद्ध प्रदेश बना दी जायें जिससे सीमाप्रान्त और पूर्वीभारत जैसे मुसलमान-प्रधान क्षेत्र आपसमे मिलकर 'स्वतन्त्र राज' बन जायें और सम्मिलित होनेवाली इकाइयोको स्वायत्तशासन और प्रभुसत्ता प्राप्त हो। इसके बाद प्रस्तावमे कहा गया है कि इन प्रदेशोमें बसनेवाले अल्पसंख्यकोके धार्मिक, सास्कृतिक, आर्थिक, राजनीतिक, शासन-सम्बन्धी तथा अन्य अधिकारों और स्वार्थोकी रक्षाके लिए उनकी रायसे विधानमे संरक्षणोकी विशेष रूपसे व्यवस्था की जाय और भारतके जिन भागोमे मुसलमानोका अल्पमत हो वहा उनकी तथा अन्य अल्पसख्यकोकी रक्षाके लिए ऐसे ही सरक्षणोंकी व्यघस्था की जाय। लीगने अपनी कार्यसमितिको इन्ही सिद्धान्तोके आधारपर विधानकी एक ऐसी योजना प्रस्तुत करनेका अधिकार दिया जिनमे उक्त प्रदेशोके लिए सभी अधिकार—यथा रक्षा, वाहरी विषय, यातायात-सम्बन्ध, चुगी तथा अन्य आवश्यक विषय—अन्तत. ग्रहण कर लेनेकी व्यवस्था हो।

इस प्रस्तावके द्वारा लीगकी कार्यसमितिको जो योजना प्रस्तुत करनेका अधिकार दिया गया था वह, अगर तैयार भी की गयी ो तो, अभीतक प्रकाशित नही की गयी। मुसलिम लीगके अध्यक्ष श्री जिनाने मद्रासमें कहा था—

"यथासम्भव स्पष्ट शब्दोमे मै आपलोगोको बतला देना चाहता हूँ कि अखिल भारतीय मुस्लिम लीगका लक्ष्य उत्तर-पश्चिम और भारतके पूर्वी क्षेत्रोमें रक्षा, मुद्रा, विनिमय आदिपर पूर्ण अधिकारके साथ सर्वथा स्वतन्त्र राज स्थापित करना है। हम किसी भी हालतमे ऐसा विधान नही चाहते जो एक केन्द्रीय सरकारके साथ सारे भारतके लिए हो।'

जब उनसे योजनाकी व्याख्या करने और उक्त प्रदेशोमे सम्मिलित किये जानेवाले स्थानों तथा अन्य विषयोके सम्बन्धमें ब्योरेकी बाते बतानेको कहा गया तब उन्होने यह आग्रह करते हुए ऐसा करनेसे इनकार कर दिया कि पहले सिद्धान्त स्वीकार कर लिया जाय तब, और सिर्फ तभी व्याख्या या ब्योरेकी बातें प्रकट करनेको मै प्रस्तुत होऊँगा।

कुछ ही दिन पहले, १९४४ के अप्रैलके अन्तिम सप्ताहमे, जब श्री जिना और पंजाबके प्रधान मन्त्री मलिक खिजिर हयातखांके बीच पंजाबमें यूनियनिस्ट दलके मन्त्रिमण्डलके स्थानपर मुस्लिम लीग या मुस्लिम लीगका संयुक्त मन्त्रिमण्डल स्थापित करनेके श्री जिनाके प्रस्तावपर बात चल रही थी, गैर-मुसलमान मन्त्रियों-ने यह इच्छा प्रकट की कि योजनाके राजनीतिक और वैधानिक स्वरूपकी पूरी-पूरी व्याख्या कर दी जाय और पाकिस्तान योजनाके अनुसार पंजाबकी भौगोलिक सीमा क्या होगी और सीमा-निर्धारणमें कौन-सा सिद्धान्त बरता जायगा इन बातोंको स्पष्ट कर दिया जाय जिसमें जिन लोगोंका सम्बन्ध है वे योजनाके गुण-दोषोंपर विचार कर सकें। इसपर श्री जिनाने सिर्फ यह टिप्पणी की कि 'यह तो अखिल भारतीय प्रश्न है, प्रस्तावित संयुक्त मन्त्रिमण्डलकी स्थापनाके विषयसे इसका कोई सम्वन्ध नही।'*

अगर सचमुच कोई योजना तैयार हो तो लीगके अध्यक्ष उसका पूरा स्वरूप प्रकट करनेमें क्यों हिचकते है, यह समझ सकना कठिन है। ऐसा मानना कभी युक्ति-युक्त न होगा कि एक जिम्मेदार संस्था जो भारतके मुस्लिम-सम्प्रदायका प्रतिनिधित्व करनेका दावा करती है, देशके विभाजनके लिए कोई ऐसा सिद्धान्त प्रतिपादित करेगी जिसकी व्यापकतापर उसने पूर्णरूपसे विचार न कर लिया हो अथवा ऐसी योजना रखेगी जिसकी तफसील न तैय्यार कर ली गयी हो। दूसरी ओर प्रत्येक व्यक्ति स्वभावतः यह आशा करेगा कि यदि लीग अपनी योजनापर विचार और उसकी विशेषताके बलपर उसे स्वीकार कराना चाहती है तो दूसरोंके इच्छा प्रकट करनेपर उसे इसकी व्याख्या करनेके लिए इच्छुक नहीं तो कमसे कम राजी तो होना ही चाहिये जिसमें वे इसपर बुद्धिमत्ता और समझदारीके साथ तर्क कर इसे ग्रहण कर सकें। उसपर उचित रूपसे विचार करनेके लिए उसके ब्योरेका ही नहीं बल्कि उसके मूलभूत स्वरूप-

* 'अमृतबाजार पत्रिका' के ३-५-४४ के अंकमें प्रकाशित गैर-मुसलमान मन्त्रियोंका वक्तव्य।

का भी परिचय और व्याख्या आवश्यक है। उदाहरणार्थ, यह जानना आवश्यक है कि लीगकी योजनाके अनुसार कौनसे भू-भाग पाकिस्तानमें और कौनसे उसके कल्पित हिन्दुस्तानकी सीमामें पड़ेंगे। इसी प्रकार यह जानना भी आवश्यक है कि पाकिस्तानमें अल्पसंख्यक गैर-मुसलमानोंका और हिन्दुस्तानमें अल्पसंख्यक मुसलमानोंका क्या परिणाम होगा और हिन्दुस्तानके अल्पसंख्यक मुसलमानोंके लिए लीग कौनसे संरक्षण और आश्वासन दिलानेका प्रयत्न करेगी। लीगके लिए सिर्फ यह कह देना पर्याप्त न होगा कि हिन्दुस्तानमें अल्पसंख्यक मुसलमानोंके लिए जो संरक्षण रखे जायँगे वे ही संरक्षण अल्पसंख्यक गैर-मुसलमानोंको प्रदान किये जायँगे। किसी दूसरे दलने न तो विभाजनकी योजना पेश की है और न अल्पसंख्यक सम्बन्धी अधिकार देने-दिलानेकी बात कही है; इसलिए लीगको ही चाहिये कि वह मुसलमानोंकी तरह दूसरोंके विचार करनेके लिए भी अपने प्रस्तावोंको निश्चित रूप दे। इसके अतिरिक्त एक बात यह भी है कि दूसरे भागमें अल्पसंख्यक समुदायके परिणामके कारण बाध्य-बाधकताकी—एकके सम्बन्धमें प्रयुक्त होनेवाला सिद्धान्त दूसरी जगह प्रयोगमें लानेकी—योजना अव्यावहारिक सिद्ध हो सकती है। उदाहरणार्थ, यदि एक भागमें अल्पसंख्यक जातिकी संख्या कुल आबादीपर ४० और ५० के बीच हो और दूसरे भागमें १० या इसके आसपास, तो यह बिलकुल स्पष्ट है कि ४०-४५ वाली अल्पसंख्यक जातिकी स्थिति १० या इसके आसपासवाली अल्पसंख्यक जातिकी स्थितिसे कहीं अच्छी होगी, क्योंकि ४०-४५ वाली अपनी अन्तरस्थ शक्तिके सहारे प्राप्त आश्वासनोंको कार्यान्वित करा ले सकेगी। यह भी हो सकता है कि परस्पर बाध्य-बाधकता सिद्धान्त स्वीकार न हो क्योंकि जो कुछ दिया जाता हो वह इतना सामान्य हो सकता है कि उस समुदायके लिए उसमें कोई आकर्षण ही न हो।

यही विषय उदाहरणद्वारा स्पष्ट किया जा सकता है। मान लीजिये कि पश्चिमोत्तर और पूर्वी क्षेत्रोंके विशेषकर पंजाब और बंगालके हिन्दू यह कहें कि अपने प्रान्तमें अल्पसंख्यक होते हुए भी हम अपने लिए व्यवस्थापिका सभा या

नौकरियोंमें प्रतिनिधित्वके विषयमे कोई रिआयत या अतिरिक्त संख्या (वेटेज) नहीं चाहते, जन-संख्याके अनुपातसे जो प्रतिनिधित्व मिले उसीसे हम सन्तुष्ट ै और ईसाई सरीखे अन्य अल्पसंख्यकोके लिए, मांग करनेपर या अपनी ओरसे जो रिआयत या अतिरिक्त सख्या रखना स्वीकार किया जाय वह बहु-संख्यक सम्प्रदाय अपने हिस्सेमेसे दे ; यह भी मान ले कि वे करे कि हम अपने लिए रिआयत या अतिरिक्त संख्या न ी चाहते इसलिए जिन प्रान्तोमें मुसलमानोंका अल्पमत है उनमे मुसलमानोके लिए रिआयत या अतिरिक्त सख्या न रखी जाय, पर उन प्रान्तोके वहुसंख्यक हिन्दू, ईमाई सरीखे दूसरे अल्प-सख्यकोके लिए जरूरत होनेपर इस प्रकारकी रिआयत या अतिरिक्त सख्या स्वीकार करनेके लिए तैयार हों। यही बात हिन्दू बहुमतवाले प्रान्तोंके हिन्दुओं-द्वारा दूसरे प्रकारसे भी रखी जा सकती है। मान लीजिये वे यह करे कि हम अपने प्रान्तमें अल्पसख्यक मुसलमानोके लिए अतिरिक्त सख्या रखनेके लिए तैयार नही है और मुसलमान-प्रधान प्रान्तोमें भी अल्पसख्यक हिन्दुओके लिए कोई अतिरिक्त सख्या स्वीकार करनेकी जरूरत नही है। हम यह भी मान ले कि उक्त दोनों परिस्थितियोमे सारे देशके हिन्दू, चाहे उनका वहुमत हो या अल्पमत, यही रुख अख्तियार करे तो यह स्थिति पूर्णरूपसे वाध्य-वाधकतापर आश्रित होगी और इसलिए इसपर कोई आपत्ति नही की जा सकती। ऐसा कोई कारण नही देख पड़ता जिससे हिन्दू यह रुख अख्तियार न करे। बंगालके हिन्दू इससे फायदेमें रहेंगे। १९३५ के विधानके अनुसार व्यवस्थापिका सभामें मिली ३२ प्रतिशत जगहोके बदले उन्हे ४४ प्रतिशत जगहें मिल जायँगी। पंजाबमें भी उनकी स्थिति कुछ अंशोंमें उन्नत हो जायगी। उन्हें बंगालमे ५० प्रतिशतकी जगह ४४ प्रतिशत नौकरियां मिलेगी और पजाबमें उनकी स्थितिमें कोई विशेष अन्तर नही पड़ेगा। पश्चिमोत्तर सीमाप्रान्त, सिन्ध और बलूचि-स्तानके हिन्दू काफी घाटेमें रहेंगे, पर उनकी कुल आबादी सिर्फ १४।। लाख है और व्यवस्थापिका सभा तथा नौकरियोंमें जितनी जगहोंसे वे वचित होंगे वे बिलकुल नगण्य होंगी। अब बिहार जैसे किसी प्रान्तमें ही देखें कि वहांके मुसल-

मानोंको इसकी तुलनामें क्या क्षति पहुँचती है। वहां व्यवस्थापिका सभा तथा नौकरियोंमें उनका प्रतिनिधित्व २५ प्रतिशतसे घटकर १२ प्रतिशत हो जायगा और हाथसे निकल जानेवाली जगहो और नौकरियोकी सख्या बहुत बड़ी होगी और उक्त दोनो मुस्लिम क्षेत्रोमें कुल जितनी जगहोसे हिन्दू वंचित होगे उससे वह अधिक ही होगी। इस कमीका असर जहां सिर्फ एक प्रान्तमें ४७ लाख मुसलमानोपर होगा वहा पश्चिमोत्तर क्षेत्रमे सिर्फ १४॥ लाख हिन्दुओं-पर होगा। अन्य हिन्दू क्षेत्रोमे मुसलमानोंकी स्थिति क्या होगी उसका आसानीसे अनुमान किया जा सकता है। इस प्रकार बाध्य-बाधकताके सिद्धान्तके प्रति हिन्दुओंके लिए कोई आकर्षण नही हो सकता और न वह उनको मुसलमानोंके लिए कोई रिआयत या अतिरिक्त प्रतिनिधित्व स्वीकार करनेको प्रवृत्त कर सकेगा।

फिर प्रत्येक पक्षको यह अच्छी तरह समझ लेना चाहिये कि वह कौन-सी शक्ति होगी जो आश्वासनोंको कार्यान्वित करा सकेगी। मैंने तो उन बहुसख्यक प्रश्नोमेसे केवल कुछका उल्लेख किया है जो इस योजनामे स्पष्ट रूपसे उठते है और जिनका इस योजनापर उचित रूपसे विचार करने और समझदारीके साथ स्वीकार करनेके लिए स्पष्टीकरण और व्याख्या आवश्यक है।

दो राष्ट्रोके सिद्धान्तके साथ भी बहुतसे प्रश्न लगे हुए है जिन्हें समझ लेना आवश्यक है। देखा जाता है कि पाकिस्तानके प्रमुख समर्थक इस्लामधर्म और उससे उद्भूत सामाजिक और राजनीतिक पद्धतिको ही मुसलमानोके पृथक् राष्ट्र होनेका आधार मानते है। दूसरी विशेषताएँ जो राष्ट्रके लिए आवश्यक उपादान मानी जाती है, मुसलमानोंमें मुसलमान होनेकी वजहसे ही पायी जाती हो, ऐसी कोई बात नही है। भारतके खास-खास क्षेत्रों–हिन्दू मुसलमान दोनों–में समान रूपसे पायी जाती है। यदि भाषाकी ही बात ले ली जाय तो देख पड़ेगा कि धर्ममें भिन्नता होते हुए भी पंजाबके हिन्दू, मुसलमान और सिख एक ही भाषा बोलते है। पश्चिमोत्तर सीमाप्रान्तमें भी यही बात है—हिन्दू और मुसलमान दोनों पश्तो भाषा बोलते है। बंगाली भी—हिन्दू हो या मुसलमान—बँगला ही बोलता है। उक्त सभी क्षेत्रोंमें वे एक ही भूभागपर बसे

हुए हैं, इन सभी स्थानोंमें, यदि मुसलमानोंका सुदीर्घ शासनकाल छोड़ दें, तो भी ब्रिटिश शासनमें, कमसे कम, सौ वर्षसे अधिक ही शेष ब्रिटिश भारतके साथ वे एक ही सरकारकी अधीनतामें रहे हैं।

धर्म ही एकमात्र लक्षणके रूपमें रखा जाता है, अतः यह स्मरण रखनेकी बात है कि ऐसे लोग जो महत्वकी अधिकांश नहीं तो बहुत-सी बातोंमें एक जैसे पर धर्ममें भिन्न हैं, देशके एक छोरसे दूसरे छोरतक बसे हुए हैं। कहा जाता है कि प्रश्नके इस पहलूपर टीका करते हुए श्री एडवर्ड थामसनने श्री जिनासे कहा था कि इसका अर्थ तो यह होगा कि गाव और गली-गलीमें दो परस्पर विरोधी राष्ट्र होंगे जिसका ध्यानमात्र भी हृदयको दहला देनेवाला है। कहते हैं कि इसके उत्तरमें श्री जिनाने कहा था कि यह दृश्य भयंकर जरूर है पर दूसरा कोई मार्ग भी नहीं है।* हालमें ही श्री जिनाने प्रेसको दिये गये एक वक्तव्यद्वारा मुलाकातमें श्री थामसनको प्रेसके लिए इस तरहका कोई वक्तव्य देने या ऐसी बात कहनेका खण्डन किया है। पर श्री जिनाने थामसन साहबसे प्रेस-प्रतिनिधि या किसी और रूपमें यह बात कही हो या न कही हो, उससे इस स्थितिमें कोई अन्तर न ी आता कि धर्मके आधारपर दो राष्ट्रोंका सिद्धान्त मान लेनेका परिणाम यही होगा कि भारतके गांव-गांव और गली-गलीमें दो राष्ट्र प्रस्तुत और स्थापित हो जायँगे। अगर भारतके किसी भागका कोई मुसलमान केवल अपने धर्मके कारण उन सारे मुसलमानोंसे बने हुए राष्ट्र-का सदस्य हो जो भारतके प्रत्येक कोनेमें बसे हुए पर वह अपने पड़ोसी गैर-मुसलमानसे पृथक् हो तो स्वभावतः यह प्रश्न उठता है कि उस मुसल-मानका किस राजके प्रति भक्तिभाव होगा—उस राजके प्रति जिसमें वह रहता है और जो पाकिस्तानके अन्दर न होनेसे मुस्लिम राज नहीं भी हो सकता या उस दूरवर्ती मुस्लिम राजके प्रति जिसके साथ उसका इसके अतिरिक्त और

---

* 'एनलिस्ट इण्डिया फार फ्रीडम', पृष्ठ ५२ से डाक्टर अन्सारीद्वारा 'पाकिस्तान दि प्राब्लम आव इण्डिया', पृष्ठ ७१–७२ में उद्धृत।

कोई सम्बन्ध नहीं हो सकता कि उस राजका बहुसंख्यक दल उसका सहधर्मी है? मुसलिम राजमें बसनेवाले गैर-मुसलमानके सम्बन्धमें भी यही प्रश्न उपस्थित ोगा यदि यह पहले ी मान लें कि मुसलमानोंका एक राष्ट्र बन सकता है और बनता है और राष्ट्र-निर्माणके लिए सिर्फ एक गुण ——धर्म——की आवश्यकता है, उसके अभावमें अन्य सारी बातें निरर्थक हैं। अथवा अन्य प्रकारके मुसलमान या गैर-मुसलमानका दोहरा व्यक्तित्व और विभक्त राजभक्ति होगी? इस प्रकारकी विभक्त राजभक्तिवाला व्यक्ति युद्ध जैसे सकटकालमे कैसा आचरण करेगा?

भिन्न राष्ट्रके इस प्रकारके सदस्यके पदके सम्बन्धमें कुछ और प्रश्न भी उत्पन्न होते है। साधारणतः किसी राज-विशेषके भूभागमें बसनेवाला मनुष्य, उसकी राष्ट्रीयता पहले जो भी रही हो, कुछ शर्तोंको पूरा करनेपर उस राजका नागरिक बन जाता है। इस प्रकार उसे एक पद प्राप्त हो जाता है जिससे उसे कुछ विशेष अधिकार मिल जाते हैं और उसपर कुछ जिम्मेदारियां भी आ जाती है। यदि भारतका कोई मुसलमान इस बातपर ध्यान न देकर कि वह मुस्लिम राजका अधिवासी है या गैर-मुस्लिम राजका, मुस्लिम राजका सदस्य हो तो क्या वह गैर-मुसलिम राजके, जिसमें वह बसा हुआ है, नागरिकका पद पानेका अधिकारी है और उसे यह पद देना उचित और न्याय्य होगा? क्या वहा अधिकतर विजातीयके ही रूपमें रहते हुए रक्षाके लिए और नागरिकतासे प्राप्त अधिकारोद्वारा लाभान्वित करनेके लिए अपने राजकी ओर उसका ध्यान नहीं रहेगा जो उसका राष्ट्रीय राज होगा? वह विजातीयोंको मिलनेवाले अधिकारो और यदि सुविधाएँ दी जाती हों तो उनका भी दावा करेगा। दूसरे राष्ट्रके राजके भूभागमें काम करने या कारबार चलानेवाले विजातीयों और अपने ही राष्ट्रके भूभागमें उसी राष्ट्रके अन्य दलोंकी तुलनामें अल्पमत होते हुए भी काम करने या कारबार चलानेके लिए सदस्योंमें अन्तर हुआ करता है जो दृष्टिसे ओझल या विस्मृत नहीं किया जा सकता। अल्पमत-वाले भी उसी राष्ट्रके सदस्य होते है और उनके अधिकार भी स्वीकृत रहते है। विजातीयोंको, अल्पमतवालोंको मिलनेवाले अधिकार नहीं दिये जा सकते।

इसलिए उन प्रान्तो या राजोके मुसलमान जहां गैर-मुसलमानोंका बहुमत हैं, अगर दूसरे राष्ट्रके सदस्य बने रहनेका दावा करे तो वे अल्पमतवालोके हकदार न ी माने जा सकते।’मुस्लिम राजोके गैर-मुसलमानोके राष्ट्रीय सदस्य होनेका दावा करनेपर भी यही बात चरितार्थ होगी क्योकि गैर-मुसलमान होनेके कारण वे दूसरे राष्ट्रके सदस्य माने जायँगे।

यदि मुस्लिम लीग भारतके पश्चिमोत्तर और पूर्वी क्षेत्रोंमें मुसलमानोंकी राजसम्बन्धी कल्पनाके अनुसार मुस्लिम राज रखना चाहती है तो प्रश्न यह उठता है कि उन राजोमे गैर-मुसलमानोका क्या पद होगा? क्या राजमें वे समानरूपसे नागरिक समझे जायँगे या उनका पद कुछ नीचा ेगा? मुसल-मानी आमकानूनीमे मुसलमान और धिम्मीके बीच कुछ अन्तर माना जाता है।

मुस्लिम युनिवर्सिटी, अलीगढके श्री ए. एस. ट्रिटनने ‘दि खलीफस एण्ड देयर नन-मुस्लिम सब्जेक्ट्स’ (खलीफा और उनके गैर-मुसलमान प्रजाजन) नामक एक पुस्तक लिखी है जिसमे उन्होने खलीफाके अधीन राजोके गैर-मुसलमानोकी स्थितिपर विस्तारके साथ विचार किया है। इस स्थलपर उक्त अवतरण देकर सन्तोष करना पड़ता है। श्री ट्रिटनका कहना है ‘इस्लामका शासन प्रायः भार-स्वरूप था जो मिस्रके विद्रोहसे प्रमाणित है। द्वितीय उमर मुसलमानोकी आवश्यकता पूरी हो जानेपर खजानेकी बची हुई रकम धिम्मियोमें वितरण कर देनेका आदेश गवर्नरको दे सकता था, पर नियमतः राजके लिए आवश्यक धन उन्हे प्रस्तुत करना पड़ता है और इसके बदलेमे उन्हे कुछ भी नही मिलता था। पहले पहल तो प्रजाजनोंने पूर्ववर्ती सरकारको जितना कर दिया था उससे अधिक कर शायद नही दिया, पर किसी न किसी रूपमें उनका भार धीरे-धीरे बढ़ता गया। इसमे कोई सन्देह नही कि प्रथम शताब्दीका अन्त होते होते, द्वितीय उमरके शासनकालमें ही धिम्मियोंकी असमर्थता निश्चित रूपसे आरम्भ हो गयी थी। उनकी पोशाकपर प्रतिबन्ध लगा दिया गया था और सरकारी पदोसे भी उनका बहिष्कार होने लगा था!....दूसरी शताब्दीमें

मुसलमानोंका रुख और भी कडा पड़ गया......पोशाक सम्बन्धी कानून और भी कड़े कर दिये गये और यह विचार भी स्पष्ट होता जा रहा था कि गिरजा-घर बनवानेकी कोई जरूरत नही।...यही कहना उचित होगा कि कानूनकी तुलनामें शासकका आचरण अच्छा था।..... विधान-पुस्तकमे उनके लिए (धिम्मियोके लिए) बहुत-सी चीजो—विवाह या अन्त्येष्टि संस्कारके सार्व-जनिक रूपमे सम्पादन, भोज, गिरजाघरकी विधियो आदि—की मनाही थी। मुसलमानकी पोशाककी कोरपर जान-बूझकर पैर रखना दण्डनीय अपराध था और उन्हें मार्गका मध्यभाग मुसलमानोके लिए छोड देना पडता था।......

मुतसिमने समाराका मठ खरीद लिया जिसके स्थानपर वह प्रासाद बनवाना चाहता था। दूसरे खलीफोने अपनी इमारतोके सामानके लिए गिरजे ढहवा डाले और जन-समूह भी गिरजो और मठोको लूटनेके लिए हमेशा तैयार रहता था। धिम्मी बहुत कुछ उन्नति कर सकते थे पर उन्हे शासककी सनक और जनसमूहके भावोन्मादका शिकार बनकर बराबर कष्टका ही सामना करते रहना पड़ा। अल्-हकीमके कार्य तो इस्लामके अनुयायीके रूपमे न होकर पागलकी करतूतसे होते थे। आगे चलकर धिम्मियोकी स्थिति और भी बुरी हो गयी। भीड़द्वारा सताये जानेकी सम्भावना और भी बढ गयी। और लोगोके धर्मोन्मादके साथ शिक्षितवर्गका कट्टरपन भी आ मिला। इस्लामका आध्यात्मिक अलगाव पूरा हो गया। दुनिया दो वर्गो, मुसलमानों और गैर-मुसलमानोमें बँट गयी और गणना केवल इस्लामकी रह गयी। कुछ उल्लेखनीय अपवाद भी थे, पर यह साधारण कथन सत्य है। अगर कोई मुसलमान धिम्मीके धर्मको साहाय्य प्रदान करता तो वह तीन बार पश्चात्ताप करनेके लिए बुलाया जाता और यदि वह अड़ा रह जाता तो मार डाला जाता था। साधारणतः धारणा यही थी कि मुसलमान जिस चीजको खराब समझकर छोड़ देते है वही धिम्मियोंके लिए बढ़िया चीज है।'*

---

* ए० एस० ट्रिटन—'दि कलीफ्स ऐण्ड देयर नन-मुस्लिम सब्जेक्ट्स' पृष्ठ २३०-३३

क्या गैर-मुसलमानको धिम्मियोंका दरजा दिया जायगा या किसी आधुनिक जनतन्त्र राजके समान नागरिकोंका ? पाकिस्तानके समर्थक कुछ लेखकोंने स्पष्ट रूपसे कहा है कि जिस राजकी कल्पना उन्होंने की है वह मुस्लिम राज होगा। उनकी समझमें इसका अर्थ सबके प्रति न्याय है लेकिन ऊपर जो उद्धरण दिया गया है उसका विचार करते हुए, सम्भव है, गैर-मुसलमान यह बात माननेको तैयार न हो इसलिए ठीक-ठीक राय कायम करनेके लिए योजनाकी स्पष्ट और पूरी आवश्यकता है। इस प्रकार स्पष्ट है कि गोल-मटोल लाहौर-प्रस्तावके स्पष्टीकरण और व्याख्याकी मांग सर्वथा उचित है। दो राष्ट्रोंका सिद्धान्त प्रचारित करने और विभाजनकी योजना रखनेके पहले लीगने इन तथा ऐसे अन्य प्रश्नोपर अवश्य विचार किया होगा और यदि वह चाहती है कि जो उसमे नही हैं वे भी चाहे मुसलमान हो या गैर-मुसलमान—उसके कार्यक्रमको स्वीकार करें तो उसे इन तथा समान उलझनवाली अन्य समस्याओंके समाधानमें सम्मिलित होनेके लिए तैयार रहना चाहिये; अगर वह यह चाहती हो कि लोग अपनी आखोपर पट्टी बांधकर विभाजनके पक्षमे हाथ उठा दें तो बात दूसरी है।

यह कहना कुछ कटु होगा कि लीग दूसरोसे अस्पष्ट साधारण सिद्धान्त और गोल-मटोल योजना पहले स्वीकार करा लेना चाहती है और तब उनपर सम्बद्ध बातों और तफसीलोंको कबूल करानेके लिए जोर डालेगी जिन्हें वह धीरे-धीरे प्रकट करती जायगी और यदि वे सिद्धान्त और योजनाको मानते हुए भी सम्बद्ध बातो और तफसीलोको माननेसे इनकार करेंगे तो उनपर बदनीयती और वादेसे मुकर जानेका दोषारोप करेगी।

लेकिन जिस रूपमे यह विषय सर्वसाधारणके सम्मुख प्रस्तुत किया जा रहा है उससे तो इसी कटु अनुमानका समर्थन होता है। आरम्भमें तो लीगके अध्यक्षने पहले विभाजनका सिद्धान्त ही मनवानेका आग्रह करते हुए सम्मिलित हिन्दू परिवारका उदाहरण दिया जिसमें पहले बँटवारेका सिद्धान्त मान लिया जाता है और तफसीलकी वाते बादमें तै कर ली जाती है; पर बादमें उनकी

बातका रूप बदल गया। जब श्री राजगोपालाचारीने गांधीजीकी सहमति और स्वीकृतिसे मूर्त रूपमें योजना प्रस्तुत की जिससे, उनके कथनानुसार,लीगके लाहौर प्रस्तावकी शर्तें पूरी हो जाती थी, तब श्री जिनाने कुछ बेसिर-पैरकी बातें पेशकर इसे ठुकरा दिया। स्थिति किस प्रकार बदलती रही है, इसका यहां निर्देश किया जा सकता है। जब श्री जिनाने बम्बईमें अपने मकानपर महात्माजीसे मिलनेका निश्चय प्रकट किया तब उन्होने राजाजीका सिद्धान्त अस्वीकृत करते हुए कहा था—'श्री गांधीने किसी प्रकार अपनी व्यक्तिगत हैसियतमे देशके बँटवारे या त्रिभाजनका सिद्धान्त स्वीकार कर लिया है। अब शेष यही रह गया है कि यह कब और कैसे कार्यान्वित किया जाय।'* इस घोषणाके बाद लोगोंने यही खयाल किया होगा कि तफसीलकी बाते प्रकट करने या तै करनेके पूर्व बँटवारे या विभाजनके जिस सिद्धान्तपर जोर दिया जा रहा था उसके स्वीकार कर लिये जानेपर अब दूसरा कदम तफसीलकी बाते तै करनेकी दिशामे होगा और श्री जिना अपनी योजना प्रस्तुत कर यह बतलायेगे कि वह श्री राजगोपालाचारीके 'भग्नांग, खण्डित और दीमक चाटे हुए पाकिस्तान' से कहां और कैसे भिन्न है। पर बादमें चलनेवाली लम्बी बहसमें जिसका परिणाम गाधीजी और श्री जिनामें हुए लम्बे पत्र-व्यवहारमें सन्निविष्ट है, योजनाकी तफसीलकी बातोंको आरम्भ करनेके पहले ही दो राष्ट्रोंका सिद्धान्त और लाहौर प्रस्ताव ज्योंका त्यों मान लेनेकी नयी मांगें पेश कर दी गयी। बँटवारेके निरे सिद्धान्तसे भिन्न जिसे स्वयं श्री जिनाके कथनानुसार गांधीजीने स्वीकार कर लिया था, विभाजनका नग्न साधारण सिद्धान्त और नग्न साधारण प्रस्ताव स्वीकार करनेका आग्रह किया जाने लगा। तफसीलपर विचार करनेके पहले ही विभाजनका सिद्धान्त मान लेनेका प्रस्ताव स्वीकार कर लेनेसे तफसीलपर विचार करनेकी बात तो ताकपर धर दी गयी, दो राष्ट्रोका सिद्धान्त स्वीकार करनेकी एक नयी

---

* अखिल भारतीय मुस्लिम लीगकी कौसिलकी ३०-७-४४ की बैठकमें दिया गया वक्तव्य।

मांग सामने आ गयी जो विभाजन और लाहौर प्रस्तावका मूलाधार कहा जाता है। अगर ये दोनो भी मान लिये गये तो पता नही और कौन-सी मांग सामने आ जायगी। विभाजनकी योजना और उसके मूलभूत सिद्धान्तके एक टुकडेपर विचार करनेके आग्रहका यह स्वाभाविक परिणाम है।

२
अनिश्चितताजन्य असुविधाएँ

पाकिस्तानमे कौन-कौनसे भूभाग सम्मिलित किये जायँगे, इस प्रश्नका भी एक इतिहास है जिसका बहुतोको साधारणतः कम पता होगा जैसा कि अन्यत्र लिखा जा चुका है, भारतके मुस्लिम और गैर-मुस्लिम क्षेत्रोमे भिन्न-भिन्न व्यक्तियोद्वारा तरह-तरहकी योजनाएँ प्रस्तुत की गयी थी। उनमेसे कुछमे इन क्षेत्रोकी आवश्यकता सास्कृतिक प्रयोजन और शासनके सम्बन्धमे मुसलमानोका स्तर केवल मुस्लिम क्षेत्रोमे नही बल्कि सारे देशमे ऊपर उठानेके लिए बतलायी गयी थी और शेषमे स्पष्ट शब्दोमे स्वतन्त्र मुस्लिम राजोकी स्थापनाकी बात थी। ऐसा प्रतीत होता है कि १९४० की फरवरीमे, अखिल भारतीय मुस्लिम लीगके लाहौरवाले अधिवेशनके कुछ ही दिन पूर्व, जिसमे मार्च महीनेके अन्तमे पाकिस्तानका प्रस्ताव स्वीकार किया गया, लीगकी विदेश-समितिने भारतके वैधानिक सुधार सम्बन्धी विभिन्न योजनाओके निर्माताओको समितिके तत्वावधानमे एक बैठक करनेके लिए आमन्त्रित किया जिसमे सभी योजनाओंकी एक साथ जाच की जा सके और यह देखा जा सके कि अन्ततः कोई ठोस योजना प्रस्तुत की जा सकती है या नही।'* अखिल भारतीय मुस्लिम लीगकी विदेश-उपसमितिके सभापति सर अब्दुल्ला हारूँने अध्यक्ष श्री जिनाको एक स्मरण-पत्र दिया, और उपर्युक्त पत्रमे लिखा कि—'स्पष्टतः यह प्रस्ताव (लीगका लाहौर,प्रस्ताव) मैने जो स्मरणपत्र गत फरवरीमें आपको (श्री जिनाको) दिया था उसीके

---

* 'दि पाकिस्तान इशू' पृष्ठ ७३–४ में प्रकाशित विदेश-उपसमितिके सभापति सर अब्दुल्लाका १३-१२-४० का पत्र।

आधारपर कार्यसमितिद्वारा तैयार किया गया है।'* यह स्मरणपत्र प्रकाशित नही हुआ है इसलिए यह कह सकना असम्भव है कि उसमे क्या था।

उपर्युक्त योजनाओमे, जिनके निर्माता विदेश-समितिके निमन्त्रणपर एकत्र हुए थे, दो सर्वथा भिन्न और परस्पर विरोधी विचार थे। एक विचार तो यह था कि मुस्लिम क्षेत्र ठोस होना चाहिए और जिन क्षेत्रोमे मुसलमानोका अल्पमत हो उनको पृथक् कर देना चाहिए जिसमे उसकी आबादीमे मुसलमानोका अनुपात यथासम्भव अधिक हो जाय और अधिक बहुमतवाले मुसलमान कुछ थोड़े से अल्पसंख्यक गैर-मुसलमानोके साथ क्षेत्रकी व्यवस्था अपनी इच्छाके अनुसार कर सके। अगर मुसलमानोका बहुमत कम होगा तो यह कार्य कठिन हो जायगा और स्थिति अनिश्चित हो जायगी तथा इस प्रकार पृथक् मुस्लिम क्षेत्र बनानेका उद्देश्य अगर विफल नही तो संकटापन्न अवश्य हो जायगा। दूसरा विचार, भारतका अधिकसे अधिक भाग मुस्लिम क्षेत्रमे, अगर उसमे मुसलमानोका बहुमत होता हो तो, ले लेनेके पक्षमे था, चाहे वह बहुमत थोड़ा ही क्यो न हो। विदेश-उपसमितिद्वारा विचारोमे सामञ्जस्य स्थापित करना भी रहा होगा। लीगके वार्षिक अधिवेशनके समयतक समिति अपना कार्य पूरा नही कर सकी और उस समयके समितिके अध्यक्ष सर अब्दुल्ला हारूनने वह स्मरणपत्र लीगके अध्यक्षको दे दिया। लाहौर-प्रस्ताव, जो सर अब्दुल्लाके कथनानुसार स्मरण-पत्रके आधारपर तैयार किया गया था, मामूली तौरसे इस अस्पष्ट रूपमे था—'भौगोलिक दृष्टिसे सम्बद्ध इकाइयोको आवश्यकतानुसार घटा-बढ़ाकर इस प्रकारके सीमाबद्ध प्रदेशोंका रूप देनेका मौलिक सिद्धान्त बरता जाय जिससे सीमाप्रान्त और पूर्वी भारत जैसे मुसलमान-प्रधान क्षेत्र आपसमे मिलकर स्वतन्त्र राज बन जायँ और सम्मिलित होनेवाली इकाइयोको स्वायत्त शासन और प्रभुसत्ता प्राप्त हो। मुस्लिमराज या राजोंमें सम्मिलित किये जानेवाले भूभागोंका विस्तार सूचित करनेके लिए अब इकाई,

---

* वही पृष्ठ ७५

प्रदेश, भूभाग, क्षेत्र आदि कई शब्दोंका प्रयोग किया जाता है। देशके वर्तमान वैधानिक तथा शासन-सम्बन्धी कागजोंमें इनमेंसे एक भी शब्द नही पाया जाता। जिला, तहसील, तालुका, प्रान्त आदि शब्द ही प्रयुक्त किये जाते हैं। यदि अस्पष्टता, दुर्बोधता और अनिश्चितता न लाकर स्पष्टता, बोधगम्यता और निश्चितता लाना अभिप्रेत होता तो उक्त प्रचलित और परिचित शब्दोका प्रयोग कही अधिक सरल हुआ होता। कही यह बात तो नही थी कि उस समय निश्चित और स्पष्ट रूप देना उचित न समझा गया हो, क्योंकि ऐसा करनेसे स्वयं लीगमें उपर्युक्त दोनों पत्रोंका अन्तर बढ़कर सबके सामने आ जाता? बात जो भी रही हो, हमें तो सिर्फ यह देखना है कि इन शब्दोंद्वारा किस अर्थका द्योतन करना अभिप्रेत था।

दुर्बोधता और अनिश्चितताके बावजूद भी ये शब्द अपने रूपमें काफी निश्चित हैं और स्वयं लीगके अध्यक्षने प्रकारान्तरसे इसकी व्याप्तिद्वारा इन्हें निश्चित अर्थ प्रदान कर दिया है और यह प्रदत्त अर्थ अत्यधिक मुस्लिम बहु-मतके साथ छोटे मुस्लिम क्षेत्रके पक्षमें और अल्प बहुमतवाले बड़े मुस्लिम क्षेत्रके विपक्षमें है।

इस विचारके समर्थनमें कुछ प्रसंगोंका यहां उल्लेख किया जा सकता है। अमेरिकाकी इण्टरनेशनल न्यूजसर्विसके सम्वाददाता श्री डब्ल्यू चैपमैन-के मुलाकात करनेपर श्री जिनाने कहा था 'सच्ची स्वतन्त्रता तो पाकिस्तानके द्वारा ही प्राप्त हो सकती है जिसमें पश्चिमोत्तर और पूर्वी क्षेत्रोंमें जहां लगभग ७५ प्रतिशत मुसलमान हैं, एक या अधिक मुस्लिम राजोका अस्तित्व होगा।'*
यदि पंजाबके वे जिले जिनमें गैर-मुसलमान बहुसंख्यक हैं, पृथक् कर दिये जायें तो यह बात पश्चिमोत्तर क्षेत्रके सम्बन्धमें ठीक है जो १९४१ की जनगणनाके निम्नलिखित अंकोसे स्पष्ट है—

---

* जमीलुद्दीनद्वारा संगृहीत और सम्पादित 'सम रीसेण्ट स्पीचेज ऐण्ड राइटिंग्स आव मि० जिना', तीसरा संस्करण (१९४३), पृष्ठ ३६६

क्षेत्र	कुल आबादी (हजारमे)	मुसलमान (हजारमें	गैर-मुसलमान (हजारमें)
पश्चिमोत्तर सीमान्त	३०,३८	२७,८८	२,४९
सिन्ध	४५,३५	३२,०८	१३,२७
ब्रिटिश बलूचिस्तान	५,०२	४,३९	६३
पंजाब (गैर-मुस्लिम जिले छोड़कर)	१,६८,७१	१,२३,६४	४५,०७
जोड़	२,४९,४६	१,८७,९९	६१,४६

इस प्रकार आबादीके हिसाबसे मुसलमानोंकी संख्या ७५.३० प्रतिशत और गैर-मुसलमानोंकी २४.७० प्रतिशत होती है। दूसरी ओर यदि पृथक् किये गये गैर-मुस्लिम जिलोंको सम्मिलित कर सारे पंजाब प्रान्तकी आबादी ली जाय तो स्थिति यह होगी—

	कुल आबादी (हजारमे)	मुसलमान (हजारमें)
ऊपरका कुल जोड़	२,४९,४६	१,८७,९९
छोड़े हुए भागकी आबादी	१,१५,४८	३८,५४
कुल जोड़	३,६४,९४	२,२६,५३

इस हिसाबसे मुसलमानोंकी संख्या ६२ प्रतिशत ठहरती है। १९३१ की जन-गणनाके अनुसार पंजाब, सिन्ध, पश्चिमोत्तर सीमान्त और ब्रिटिश बलूचिस्तान—इन सभी प्रान्तोंकी आबादीका योग ३.०३५६,५०६ था जिसमे १, ८७, ९५, ८७२ या ६१.९ प्रतिशत मुसलमान थे। इसलिए श्री चैंपमैनको दिये गये वक्तव्यमें श्री जिनाने सम्भवतः पश्मिमोत्तर मुस्लिम क्षेत्रमें सारे पंजाब प्रान्तको सम्मिलित न कर केवल उस भागको सम्मिलित किया होगा जिसमें मुसलमानोंकी प्रधानता है।

एक और भी लिखित प्रमाण है जिससे इसी तथ्यकी पुष्टि होती है। श्री एम. आर. टी. ने मुस्लिम क्षेत्रोके शेष भारतसे पृथक् किये जानेके सम्बन्धमे

'ईस्टर्न टाइम्स' में बहुत कुछ लिखा है। १९४० के मार्चमे लाहौरवाले लीगके अधिवेशनके बाद श्री एम. एच. सईदने श्री जिनाकी ओरसे माउण्ट प्लीजेंट रोड, मालाबार हिल, बम्बईसे "इण्डियाज प्राब्लम आव हर फ्यूचर कान्स्टिट्यूशन' नामक एक पुस्तक प्रकाशित की जिसकी भूमिका स्वयं श्री जिनाने लिखी। उसमें उन्होंने कहा है 'जो लोग भारतके भावी विधानकी वस्तुत: परीक्षा करना चाहते हैं उनके लिए यह सग्रह उपयोगी सिद्ध होगा। इसी उद्देश्यको सामने रखकर मैंने' कुछ सुविचारित मतोको चुनकर सुविधाके विचारसे पुस्तिकाका रूप दे दिया है।' वे आगे कहते हैं 'मुझे आशा है कि यह पुस्तिका अखिल भारतीय मुस्लिम लीगके लाहौर-प्रस्तावके स्पष्टीकरणमे विशेष रूपसे सहायक होगी जिसमे एक मौलिक प्रश्न उठाया गया है, और मुझे विश्वास है कि इस विशाल देशका प्रत्येक हितेच्छु इस विषयपर राग-द्वेष और भावनासे रहित होकर विचार करेगा।' पुस्तकमे सन्निविष्ट मतोमे, जिनका चुनाव स्वय श्री जिनाने किया था, श्री एम. आर टी का भी एक लेख है जो लीगके अधिवेशनके पहले ही, ५ जनवरी १९४० के 'ईस्टर्न टाइम्स' मे प्रकाशित हुआ था। इस लेखमे 'रक्षा बनाम पार्थक्य' के प्रश्नपर विचार करते हुए श्री एम. आर. टी. ने लिखा है—'पश्चिमोत्तरके पाच आसन्न क्षेत्रो—पजाब, काश्मीर, सिन्ध, सीमाप्रान्त और बलूचिस्तान—मे कुल ४ करोड़ २० लाखकी आबादीमे उनकी (मुसलमानोकी) संख्या २ करोड ८० लाख है। मुस्लिम जनसख्याका अनुपात पजाबकी पूर्वी सीमापरका भाग मिलाकर और बढ़ाया जा सकता है।

'अगर अम्बाला डिवीजन और पूर्वी हिन्दू और सिख रियासतें अलग कर दी जायँ तो इसकी २ करोड़ ८५ लाखकी वर्तमान जनसंख्या घटकर २ करोड़ १० लाख हो जायगी, पर मुसलमानोंकी संख्या ५५ से बढ़कर ७० प्रतिशत हो जायगी। अगर पश्चिमोत्तर मुस्लिम क्षेत्र पूराका पूरा ले लिया जाय तो यह सख्या और भी बढ़ जायगी। अगर पूर्वी सीमाप्रान्तका उक्त प्रस्तावके अनुसार सुधार कर दिया जाय तो पश्चिमोत्तर क्षेत्रकी सारी आबादी ३ करोड़ ५० लाख हो जायगी जिसमें मुसलमान २ करोड़ ७० लाख और

गैर-मुसलमान ८० लाख होंगे। मुसलमानोका ७७ प्रतिशत अनुपात सरकारकी दृढता और स्थायित्वके लिए पर्याप्त रूपमे शक्तिशाली होगा और यह फल आबादीकी अदला-बदलीके किये बिना ही प्राप्त किया जा सकता है।'* इस प्रकार यह योजना जो श्री जिनाकी इस स्वीकारोक्तिके साथ प्रकाशित हुई कि इससे लाहौर-प्रस्तावके स्पष्टीकरणमे काफी मदद मिलेगी, पजावके उस भागके अलग किये जानेके ही पक्षमे है जिसमे उनके कथनानुसार मुसलमानोकी प्रधानता नही है।

एक और भी बात है जिससे इस दृष्टिकोणका प्रकारान्तरसे समर्थन होता है। मैं ऊपर उस समितिका उल्लेख कर चुका हूँ जिसे लीगकी विदेश-समितिने सर अब्दुल्ला हारूँकी अध्यक्षतामे बनायी थी। लीगके लाहौरवाले अधिवेशनके बाद भी समितिका कार्य चलता रहा और इसने पश्चिमोत्तर क्षेत्रमें सम्मिलित किये जानेवाले भूभागोके ब्योरेके साथ एक योजना तैयार भी की। समितिने भी इस योजनामे पूरा पंजाब, काश्मीर और पजाबकी हिन्दू रियासते, दिल्ली प्रान्तकी पूर्वी सीमासे कुछ आगेतक ब्रिटिश भारतका एक भाग, अलीगढ जिलेका कुछ भाग जिसमे अलीगढ मुस्लिम क्षेत्रके भीतर आ जाय और राजपूतानाकी बीकानेर और जेसलमेर रियासते भी सम्मिलित कर ली। यह योजना समयके पूर्व और अधिकारी व्यक्तिसे स्वीकृति लिये बिना ही १८ फरवरी, १९४१ के 'स्टेट्समैन (दिल्ली) मे प्रकाशित करा दी गयी और दिल्ली-स्थित प्रान्तीय पत्रोके सम्वाददाताओने अपने-अपने केन्द्रोको इसका सारांश फौरन तार द्वारा यह सूचित करते हुए भेज दिया कि लीगकी विदेश-समितिने १७ फरवरीको रिपोर्ट प्रकाशित कर दी। सैय्यद अब्दुल्ला हारूनने सैय्यद अब्दुल-लतीफसे सारी योजना देखकर अपने वक्तव्यके साथ इसे भेजनेका अनुरोध किया। सैयद अब्दुल लतीफने ८ मार्च, १९४१ को इसे अपने वक्तव्यके साथ भेज दिया और अपने वक्तव्यकी एक प्रति श्री जिनाको भी भेज

---

* 'इण्डियाज प्राब्लम आव हर फ्यूचर कान्स्टिट्यूशन' पृ० ३३-३४।

दी। मालूम होता है इससे श्री जिना नाराज हो गये और १५ मार्चको डाक्टर लतीफको लिखा—'मैं आपको स्पष्ट और आमतौरसे बतला देना चाहता हूँ कि मुस्लिम लीगने इस प्रकार कोई समिति नही बनायी है जिसका आप राग अलापते जा रहे हैं और इसके सिवा जैसा कि मैं कह भी चुका हूँ कि व्यक्तियों और दलोके सुझावोपर उचित ध्यान दिया जायगा, इन तथाकथित योजनाओके सुझावो और प्रस्तावोंको माननेके लिए न तो लीग ही तैयार है और न मैं ही। इसलिए मैं हमेशाके लिए यह स्पष्ट कर देना चाहता हूँ कि सर अब्दुल्ला या आप इस या उस समितिकी बात चलाते रहकर व्यक्तियो या दलोद्वारा प्रस्तुत किये गये प्रस्तावोके साथ लीग या उसके अधिकारिवर्गको न समेटें।'*

संक्षेपमें परिस्थिति इस प्रकार है। लीगके अध्यक्ष भी एक अन्तर्राष्ट्रीय समाचार-समितिके सम्वाददातासे यह कहते है कि पश्चिमोत्तर क्षेत्रके मुसलमानोकी आबादी कुल आबादीपर ७५ प्रतिशत होगी—यह स्थिति पंजाबके गैर-मुस्लिम जिलोंको उक्त क्षेत्रसे अलग कर लायी जा सकती है। वे कुछ मतोको चुनकर प्रकाशित करते है जिनसे 'लाहौर-प्रस्तावके स्पष्टीकरणमें काफी मदद मिलती है।' इस मत-संग्रहमे वे श्री एम. आर. टी. की योजना सम्मिलित करते है जिसमे पंजाबके पूर्वी जिलोको अलग कर देनेका प्रस्ताव किया गया है, और उन लोगोके मतका परित्याग कर देते है जिन्होने पूरी योजना बनाकर उसे प्रकाशित किया था और कुछ देशी रियासतोके साथ-साथ पूरा पंजाब और ब्रिटिश भारतका भी कुछ भाग सम्मिलित कर लिया था। जब लीगकी विदेश-समितिद्वारा लीगके प्रमुख सदस्य सर अब्दुला हारूनकी अध्यक्षतामें नियुक्त समिति एक योजना तैयार करती है और उसमें सारा पंजाब, अलीगढ़-तक ब्रिटिश भारतका कुछ भाग और कुछ भारतीय रियासतोंको भी सम्मिलित-कर लेती है तब श्री जिना समितिके कार्यको ही नहीं स्वयं समितिको भी माननेसे

* 'दि पाकिस्तान इशू', पृष्ठ १००

इनकार कर देते हैं। इस सबका अनिवार्य परिणाम यही निकलता है कि लीगके अध्यक्ष भी ऐसी योजनाके पक्षमें थे जिसमे पंजाबके पूर्वी जिले पश्चिमोत्तर क्षेत्रसे अलग रखे गये हों, और सारा पंजाब उसमें सम्मिलित करनेके पक्षमें नही था। इन बातोपर ध्यान देते हुए यह आवश्यक जान पड़ता है कि लीग या उसके अध्यक्ष भारतके मुसलमानों और गैर-मुसलमानोसे स्पष्ट और नपे-तुले शब्दोंमें कह दे कि ब्रिटिश भारतके कौन कौनसे जिले और प्रान्त पश्मिोत्तर क्षेत्रमे सम्मिलित करना उन्हें अभिप्रेत है। पर जैसा कि पहले कहा जा चुका है, उन्होंने ऐसा करनेसे इनकार कर दिया और १९४४ के अप्रैलतक, जब पंजाबके गैर-मुसलमान मन्त्रियोंने योजनापर विचार करनेकी गरजसे तफसीलकी बाते जाननेकी इच्छा प्रकट की, इनकारपर ी डटे रहे। श्री राजगोपालाचारीके ऐसे शब्दोंमें जो वैधानिक और शासन सम्बन्धी कागजोमे प्रयुक्त होते है और इस कारण सरलतापूर्वक समझ लिये जाते है और उनकी स्पष्ट व्याख्या भी हो जाती है, मूर्त्तरूप देनेके बाद और महात्मा गांधीके साथ चलनेवाली बातचीतके दौरानमे और एक पत्र-प्रतिनिधिके मिलनेके समय श्री जिना पहले पहल यह बतलानेको तैयार हुए कि लाहौर प्रस्तावमे जिन इकाइयोंको मुस्लिम क्षेत्रमे शामिल करनेका अभिप्राय निहित है वे जिले न होकर वर्तमान रूपमे प्रान्त है। इसका अर्थ यह हुआ कि पश्चिमोत्तर क्षेत्रमे सारा पंजाब सम्मिलित हो और पूर्वी क्षेत्रमें पूरा-पूरा बगाल और आसाम। पर हम देख चुके है कि किस प्रकार अध्यक्षके अपने ही कार्योद्वारा सारा पजाब सम्मिलित करनेके विचारका खण्डन ोता है।

अब पूर्वी क्षेत्रके सम्बन्धमें देखें कि स्थिति क्या है। बंगालकी आबादी ६०,३०,६५,२५ है जिसमें मुसलमानोकी सख्या ३,३०,०५,४३४ या ५४·७३ प्रतिशत है; आसामकी आबादी १,०२,०४,७३३ है जिसमें ३४,४२,४७९ या ३३.७३ प्रतिशत मुसलमान है। यदि दोनों प्रान्त सम्पूर्णतः पूर्वी क्षेत्रमें सम्मिलित कर लिये जायँ, जैसा कि लाहौर-प्रस्तावका अभिप्राय होनेका दावा किया जाता है, तो स्थिति यह होगी कि दोनों प्रान्तोंकी सम्मि-

लित जनसंख्या ७,०५,११,२५८ होगी और मुसलमानोंकी संख्या ३,६४, ४७,९१३ या ५१.६९ प्रतिशत। ऊपर उद्धृत श्री जिनाका श्री चैपमैनको दिया गया वह वक्तव्य कि मुसलमानोकी सख्या लगभग ७५ प्रतिशत होगी, निश्चय ही वास्तविकतासे बहुत दूर है। यदि पूर्वी क्षेत्रसे गैर-मुस्लिम भाग पृथक् कर दिया जाय और मस्लिम जिले सम्मिलित कर लिये जायें तो भी मुसलमानोकी संख्या ६८ या ६९ प्रतिशतसे अधिक न होगी। श्री एम. आर. टी. ने 'इण्डियाज प्राब्लम आव हर फ्यूचर कन्स्टिट्यूशन' मे उद्धृत अपने लेखके ३४ वे पृष्ठमे कहा है "पंजाबकी तरह बगालमे भी सीमावर्ती भागोको घटा-बढ़ाकर ठीक कर लेनेपर आबादीमे मुसलमानोका अनुपात ८० प्रतिशत या इससे अधिक ही रहेगा। सम्प्रति पूर्वी बगाल और पश्मिी बगालके ग्वालपारा और सिलहट जिलोमे, जो पूर्वी बगालसे मिले हुए है, मस्लिम जनसख्या बहुत अधिक, ७५ प्रतिशत ह। अगर यह सारी मुस्लिम आबादी एक साथ मिलाकर पूर्वी बगाल और आसामके एक नये प्रान्तके अन्तर्गत हो जाय तो ४ करोड़की कुल आबादीमें मुसलमानोको ८० प्रतिशतका स्थायी बहुमत प्राप्त हो जाय।' श्री एम. आर टी. के दिये हुए ये अक ठीक नही हैं—यह तो आगे चलकर दिखलाया जायगा, पर यहा जिस विषयका निर्देश करना है वह यह है कि उसकी कल्पनामे मुसलमानोका पूर्वी क्षेत्र निर्माण करनेके लिए पूरा बंगाल और पूरा आसाम मिलानेकी बात नही है, केवल उन्ही भागोको लेनेकी बात कही गयी है जिनकी आबादीमें मुसलमानोंका प्राधान्य है। हारून-कमेटीकी सिफारिश यह थी कि 'पूर्वोत्तर क्षेत्रमे वर्तमान आसाम और बंगालप्रान्त (बाकुडा और मेदिनीपुर जिले छोड़कर) तथा बिहारका पूर्णियां जिला, जिसकी आबादी जाति और संस्कृतिकी दृष्टिसे बगालकी-सी है, सम्मिलित होंगी इस समितिने भी बगालके कुछ जिलोको छोड़ दिया था। इस प्रकार पश्चिमोत्तर क्षेत्रमें सम्मिलित किये जानेवाले भूभागोके सम्बन्धकी लीगकी बदलती हुई मांगके विषयमें जो बात कही गयी वह पूर्वी क्षेत्रके विषयमे भी समानरूपसे लागू होती है।

३

प्रस्तावका विश्लेषण

हम देख चुके हैं कि लाहौर प्रस्तावमे प्रयुक्त अस्पष्ट और गोल-मटोल शब्दोसे पूर्वी और पश्चिमोत्तर क्षेत्रोमे सम्मिलित किये जानेवाले भूभागोके सम्बन्धमे किस प्रकार भिन्न-भिन्न अर्थ निकाले जाते रहे है। इसलिए योजनाका नपी-तुली और विस्तृत ब्योरे और स्पष्ट व्याख्याके साथ होना आवश्यक है जिसमे मुसलमान और गैर-मुसलमान दोनो समानरूपसे उसपर समझदारीके साथ उचित विचार कर सके। पर लीगने इस तरहका ब्योरा प्रस्तुत करनेसे इन्कार कर दिया है। फिर भी हमे शब्दोका साधारण और स्वाभाविक अर्थ ग्रहण करते हुए लाहौर-प्रस्तावपर विचार करना है और यह पता लगाना है कि प्रस्तावको स्वीकार करते समय लीगका अभिप्राय और उद्देश्य क्या था। अतः प्रस्तावका विश्लेषण कर देखा जाय।

प्रस्तावके तीन भाग है। पहले भागमे यह बात दुहरायी गयी है कि १९३५ के भारत शासनविधानमे जो सघ-योजना रखी गयी है वह इस देशकी विचित्र स्थितिके विचारसे पूर्णतः अनुपयुक्त और अव्यवहार्य है तथा मुस्लिम भारतके लिए सर्वथा अग्राह्य है। दूसरे भागमे यह दृढ विचार प्रकट किया गया है कि सम्राट् सरकारकी ओरसे १८ अक्टूबर १९३९ को वाइसरायने जो घोषणा की उसमे इस बातका आश्वासन पुनः दिये जानेपर भी कि जिस नीति और ढांचेके आधारपर भारत शासनविधान बना है उनपर भारतके विभिन्न दलो, स्वार्थो और साम्प्रदायोंकी राय लेकर पुनः विचार किया जायगा। जबतक सारे ढांचेपर नये सिरेसे विचार न किया जायगा तबतक मुस्लिम भारत सन्तुष्ट न होगा और मुसलमानोंकी स्वीकृति और सम्मति लिये बिना जो भी संशोधित ढांचा तैयार किया जायगा वह मुसलमानोंको कभी ग्राह्य न होगा।

इस प्रकार ये दोनों भाग ब्रिटिश सरकारके लिए है और उन वैधानिक प्रस्तावोंके सम्बन्धमें लीगका मत ऐलान करते है जिनपर सरकार विचार कर

रही हो। सम्प्रति जिस विषयपर विचार करना है उसके सम्बन्धमें इनका महत्व सिर्फ इतना ही है कि ये तीसरे भागके लिए पृष्ठभूमि प्रस्तुत करते हैं जिसका विषय भारतके पश्चिमोत्तर और पूर्वी क्षेत्रोंमें स्वतन्त्र मुस्लिम राजोंके निर्माणका प्रश्न है।

तीसरे भागके पहले खण्डमें लीगका यह सुविचारित मत व्यक्त किया गया है कि 'ऐसा कोई भी वैधानिक ढांचा इस देशके लिए व्यवहार्य या मुसलमानोंके लिए ग्राह्य न होगा जिसमें भौगोलिक दृष्टिसे संलग्न इकाइयोंको, आवश्यकतानुसार घटा-बढ़ाकर इस प्रकारके सीमाबद्ध प्रदेशोंका रूप देनेका मौलिक सिद्धान्त बरता गया हो जिसमें भारतके पश्चिमोत्तर और पूर्वी क्षेत्र जैसे मुसलमान-प्रधान क्षेत्र आपसमें मिलकर स्वतन्त्र राज बन सकें और सम्मिलित होनेवाली इकाइयोंको स्वायत्त शासन और प्रभुसत्ता प्राप्त हो।'

दूसरे खण्डमें कहा गया है कि मुस्लिम तथा गैर-मुस्लिम क्षेत्रोंमें अल्पसंख्यकोंके धार्मिक, सांस्कृतिक, आर्थिक, राजनीतिक, शासन-सम्बन्धी तथा अन्य अधिकारों और स्वार्थोंकी रक्षाके लिए उनकी रायसे पर्याप्त प्रभावकारी तथा आदिष्ट संरक्षणोंकी विधानमें विशेषरूपसे व्यवस्था की जाय।

तीसरे खण्डमें लीगकी कार्यसमितिको इन्हीं मौलिक सिद्धान्तोंके आधारपर एक ऐसी योजना प्रस्तुत करनेका अधिकार दिया गया है जिसमें उक्त प्रदेशोंके लिए सभी अधिकार—यथा, रक्षा, बाहरी विषय, यातायात सम्बन्ध, चुंगी तथा अन्य आवश्यक विषय—अन्ततः ग्रहण कर लेनेकी व्यवस्था है।

अब प्रश्न ये उठते हैं—(१) विधान कौन बनायेगा? (२) जिस विधानका विचार किया गया है वह किस प्रकारका होगा—पुरोहिततन्त्र, लोकतन्त्र, दलतन्त्र, अधिनायकतन्त्र या और किसी प्रकारका? (३) इन स्वतन्त्र राजोंका ब्रिटिश साम्राज्य और गैर-मुस्लिम क्षेत्रोंसे क्या सम्बन्ध होगा? (४) अल्प संख्यकोंकी रक्षा-सम्बन्धी किसी आदिष्ट संरक्षणके भंग होनेकी दशामें वह संरक्षण कैसे, किसके द्वारा और किस बलके सहारे कार्यान्वित कराया जायगा? (५) मुस्लिम राज या राजोंमें कौनसे भूभाग सम्मिलित किये जायेंगे? (६) उनके साधन और पद क्या होंगे? (७) रक्षा, परराष्ट्र-सम्बन्ध, चुंगी

तथा इस प्रकारके अन्य विषय विधानके कार्यान्वित होने और अन्तमें स्वतन्त्र राजद्वारा इनके ग्रहण किये जानेके बीचकी अवधिमें किसके हाथमें होंगे।

ला ेर प्रस्ताव मनवानेके लिए श्री 'जिनाके हकका खयालकर मुस्लिम क्षेत्रमें सम्मिलित किये जानेवाले भूभागोंमें प्रश्नके सिवा भी प्रस्तावकी व्यापकतासे सम्बन्ध रखनेवाले उक्त प्रश्नोंपर भली भांति विचार कर लेना आवश्यक है।

(१) विधान कौन बनायेगा? प्रस्तावकी रूप-रेखा और प्रसंगसे, जिसमें नया वैधानिक ढांचा तैयार करनेका प्रस्ताव रखा गया है, यह प्रकट होता है कि विधानकी रचना ब्रिटिश पार्लमेण्ट ही करेगी जैसे उसने १९३५ के विधानकी की थी जिसका प्रस्तावके पूर्वांशमें तिरस्कार किया गया है। भारतीयों औ रइस विचारसे मुसलमानोंका विधानकी रचनामें कोई हाथ न होगा, हालांकि इसे ग्रहण करनेके योग्य बनानेके लिए ढांचा तैयार होनेपर उनकी स्वीकृति और सम्मति ले लेनी चाहिये। प्रस्तावके इस अंशको स्वीकार कर लेनेपर हम बहुत पीछे, यहांतक कि क्रिप्स-प्रस्तावसे भी पीछे चले जायँगे जिसमें अपने लिए शासन-विधान स्वयं तैयार कर लेनेका भारतीयोंका अधिकार स्पष्ट-रूपसे स्वीकार किया गया था। ब्रिटिश अधिकारियोंके अन्य वक्तव्योंमें भी यह अधिकार देनेका उल्लेख ह जिससे भारतके मुसलमान, हिन्दू तथा अन्य लोग लीगके प्रस्तावका यह अंश स्वीकार कर लेनेपर बंचित हो जायँगे।

(२) जिस विधानका विचार किया गया है वह किस प्रकारका होगा—पुरोहिततन्त्र, लोकतन्त्र, दलतन्त्र, अधिनायकतन्त्र या और किसी प्रकारका? इस विषयपर प्रस्ताव बिलकुल मौन है। लीगकी समझमें लोकतन्त्र सरकार भारतके लिए अनुकूल न होगी, लीगके अध्यक्ष कई अवसरोंपर यह मत प्रकट कर चुके हैं। श्री जिनाके भाषणों और लेखोंसे इस बातके परिचायक कुछ अवतरण यहां दिये जा सकते हैं—

'३½ करोड़ वोटरोंका खयाल करते हुए, जिनमें अधिकतर बिलकुल अज्ञान, मूर्ख और अशिक्षित, सदियों पुराने भद्दे अन्धविश्वासोंसे अभिभूत,

सांस्कृतिक और सामाजिक दृष्टिसे परस्पर विरोधी है, इस विधानकी कार्य-प्रणालीसे यह बिलकुल साफ हो गया है कि भारतमे लोकतन्त्रीय पार्लमेण्टरी सरकारका चलना असम्भव है।'*

'भारतकी स्थितिके सम्बन्धमे पार्लमेण्टके सदस्य भी अभी इतने अन्धकारमें है कि अतीतके सारे अनुभवोके बावजूद भी यह नहीं महसूस किया जाता कि इस प्रकारकी सरकार भारतके लिए सर्वथा अनुपयुक्त है। इग्लैण्ड सरीखे एक जातीय राष्ट्रकी दृष्टिसे बनी हुई लोकतन्त्र पद्धति भिन्नजातीय देशोके लिए उपयुक्त हो ही नही सकती। यही मामूली बात सारी वैधानिक बुराइयोका मूल कारण है।...पाश्चात्य लोकतन्त्र भारतके लिए नितान्त अनुपयुक्त है और भारतपर इसका लादा जाना इसके राजनीतिक शरीरके लिए रोग स्वरूप है।'†

इसलिए जिस प्रकारका राज कायम करनेका विचार किया गया हो उसकी स्पष्ट व्याख्या कर देना आवश्यक है जिसमे लोग उसपर विचारकर निश्चय कर सके कि उस प्रकारकी सरकार उन्हे स्वीकार होगी या नही। पाश्चात्य लोक-तन्त्रका साधारणत: जो रूप समझा जाता है उस रूपमे वह भारतके लिए अनुपयुक्त और मुस्लिम लीगको अग्राह्य है, फिर कौन-सा दूसरा रूप या पाश्चात्य लोकतन्त्रकी रूप-कल्पनामे कौनसे सशोधन लीगको ग्राह्य होगे—इस बातकी जानकारी मुस्लिम और गैर-मुस्लिम क्षेत्रोके लिए अल्पसख्यकोके लिए भी उतनी ही आवश्यकता है जितनी बहुसख्यकोके लिए। पाकिस्तानके प्रमुख समर्थक लोकतन्त्र-को इसलिए स्वीकार नही करते कि भारतकी आबादी एकजातीय नही है जिसमें मुसलमानोका बहुत बडा अनुपात है। विभाजनके बाद भी मुस्लिम क्षेत्रोमें

---

* 'मैंचेस्टर गार्जियन' से 'रीसेंट स्पीचेज एण्ड राइटिंग्स आव मि० जिना', पृष्ठ ८९ मे उद्धृत वक्तव्य।

† १९ जनवरी १९४० के 'टाइम ऐण्ड टाइड' से 'रीसेंट स्पीचेज ऐण्ड राइटिंग्स आव मि० जिना', पृष्ठ १११, ११३ में उद्धृत लेख।

यही स्थिति बनी रहेगी क्योंकि उन क्षेत्रोंमें हिन्दुओं तथा अन्य गैर-मुसलमानोंका आबादीपर जो अनुपात होगा वह सारे भारतमें मुसलमानोंका जो अनुपात है उससे किसी भी हिसाबसे कम न होगा। ब्रिटिश भारतमें मुसलमानोका अनुपात २६.८३ प्रतिशत है। पश्चिमोत्तर क्षेत्रमें गैर-मुसलमानोंका अनुपात यदि सारा पंजाब मिला लिया जाय तो, ३७.९३ प्रतिशत और गैर-मुस्लिम जिले छोड दिये जायँ तो २४.६४ प्रतिशतहोगा। उसी प्रकार, पूर्वी क्षेत्रमें गैर-मुसलमानोका अनुपात गैर-मुसलिम जिलोंको सम्मिलित करनेपर ४८.३१ और पृथक् कर देनेपर ३०.५८ सैकडे होगा। सगति, समझदारी और न्यायके साथ ऐसा तो नही कहा जा सकता कि भारतके लिए लोकतन्त्र इसलिए अनुपयुक्त है कि मुसलमान उसमे अल्पसख्यक है और स्थिति पलट जानेपर, अलग किये गये मुस्लिम क्षेत्रोमें उनके बहुसख्यक और गैर-मुसलमाननोके अल्पसंख्यक बन जानेपर वह उपयुक्त हो जायगा। इसलिए यह निष्कर्ष निकालना आधार-रहित न होगा कि जब लीगके अध्यक्ष यह कहते है कि लोकतन्त्र भारतके लिए अनुपयुक्त है तब वह अनुपयक्त है ही और उसी तरह पाकिस्तान-के लिए भी अनुपयुक्त रहेगा, इसलिए दृष्टि विधानके किसी और रूपकी ओर है। उस विधानका स्पष्ट रूप सम्बद्ध लोगोके सम्मुख क्यो न रखा जाय जिसमें वे लोग इसके गुण-दोषोका बिचारकर खुली आंखोसे इसे अपना सकें।

(३) इन स्वतन्त्र राजोंका ब्रिटिश साम्राज्य और गैर-मुस्लिम राजोसे क्या सम्बन्ध होगा? यह तो स्पष्ट है कि वे गैर-मुस्लिम राजोंसे स्वतन्त्र होगे, लेकिन यह स्पष्ट नही है कि वे ब्रिटिश साम्राज्यसे भी स्वतन्त्र होंगे। यदि उन्हें ब्रिटिश साम्राज्यसे स्वतन्त्र होना है तो ब्रिटिश पार्लमेंटसे उनके या शेष भारतके लिए विधान बनानेके लिए कहने या आशा करनेका कोई अर्थ ही नहीं होगा। तीसरे भागके अन्तिम वाक्यसे पता चलता है कि पूर्ण स्वतन्त्रता प्राप्त करनेकी बात नहीं सोची गयी है, बीचकी कोई अवधि होगी जब रक्षा, परराष्ट्र सम्बन्ध, यातायात, चुगी तथा इस प्रकारके अन्य

२२

विषय किसी दूसरे अधिकारीके हाथमें होंगे। चूंकि लीमने ये अधिकार किसी भारतीय संस्थाके हाथमे दिये जानेके विचारको अस्वीकार कर दिया है इसलिए यही निष्कर्ष निकलता है कि वे इस बीचकी अवधिमें ब्रिटिश सरकारके ही हाथमें बने रहेगे। प्रस्तावके तीसरे भागके उत्तरार्द्धमें आया हुआ 'अन्ततः' शब्द बिलकुल स्पष्ट कर देता है कि इन स्वतन्त्र राजोकी आरम्भिक स्वतन्त्रता परिमित होगी। स्वतन्त्र राजोंकी स्थापना और पूर्ण अधिकार ग्रहण करनेके बीच जो समय व्यतीत होगा उसका निर्देश नही किया गया है। यह स्पष्ट ही परिस्थितियोपर निर्भर होगा जिनका हिसाब लगा सकना प्रस्तावकी रूप-रेखा तैयार करते समय सम्भव नही समझा गया होगा। इस प्रकार आरम्भमें स्वतन्त्र मुस्लिम राजोंका पद वेस्ट मिनिस्टर विधानके अनुसार संघटित संघराज्यके उपनिवेशसे नीचा ही होगा। यह भी स्पष्ट नही है कि ये राज अगर कभी ब्रिटिश नियन्त्रणसे मुक्त होंगे भी तो कब होगे। यहां जो अर्थ निकाला गया है वह निराधार नही है, यह बात 'अमृतबाजार पत्रिका' के ४ मार्च १९४४ के अंकमे प्रकाशित एक 'इण्टरव्यू' (मुलाकात) से प्रत्यक्ष हो जायगी जो श्री जिनाने लन्दनके 'न्यूज क्रानिकल'-को दी थी।

प्रश्न—'तब तो निश्चय ही गृह-युद्ध होगा। आप भारतीय अलस्टरका सर्जन करेंगे जिसपर कभी हिन्दू संयुक्त भारतके नामपर आक्रमण कर बैठेंगे।'

श्री जिना—में इससे सहमत नही हूँ, लेकिन विधानमें प्रबन्ध और व्यवस्थाके लिए जो संक्रमणकाल रखा जायगा उसमें सेना और परराष्ट्र विषयपर, ब्रिटिश अधिकारियोंका प्रभुत्व रहेगा। संक्रमणकी अवधि दोनों समुदाय और ग्रेट ब्रिटेन नये विधानके अनुसार अपनी-अपनी व्यवस्था ठीक करनेके कार्यमें जैसी प्रगति करेंगे उसपर निर्भर होगी।

प्रश्न—अगर ब्रिटेन इस बिनापर भारत छोड़नेसे इनकार कर दे कि हिन्दुस्तान और पाकिस्तानका सम्बन्ध इतना अच्छा नहीं है कि वे पड़ोसियोंकी तरह रह सकें, तब क्या होगा?

श्री जिना—ऐसा हो तो सकता है, पर इसकी सम्भावना नहीं है। अगर हो तो भी कुछ अंशोंमें हम स्वशासनाधिकारका उपभोग तो कर ही सकेंगे जिससे आज हम वञ्चित हैं। पृथक् राष्ट्र और उपनिवेशके रूपमें हमारी स्थिति ब्रिटिश सरकारसे निपटने और समझौता करनेके लिए आजकी अपेक्षा अधिक अनुकूल होगी, क्योंकि जिचकी वर्तमान अवस्थामें तो हम यह भी नही कर सकते।

इस सिलसिलेमें यह भी ध्यान देनेकी बात है कि ऊपरके उद्धरणमे 'उपनिवेश' शब्दका जो प्रयोग किया गया है वह ठीक नही है, क्योकि जहां बीचकी अवधिमें पाकिस्तानमें रक्षा और परराष्ट्र सम्बन्धके विषयोंपर ब्रिटिश सरकारका प्रभुत्व रहेगा वहा ब्रिटिश उपनिवेशोमे ब्रिटिश सरकारका प्रभुत्व नही है और इन विषयोमें भी उपनिवेश सरकारका ही सर्वोपरि अधिकार है। जिस प्रसंगमे 'स्वतन्त्र' शब्दका प्रयोग किया गया है उससे, ब्रिटिश नियन्त्रणसे पूर्णतः स्वतन्त्र होने या सम्बद्ध प्रदेशकी जनताके हाथमे सारा अधिकार सौप देनेकी बात तो दूर रही, औपनिवेशिक पदका भी द्योतन नही होता और न हो ही सकता है। यदि शेष भारत या उसका कोई भाग ब्रिटिश सरकारके नियन्त्रणसे पूर्ण स्वतन्त्रता प्राप्त कर ले तोभी उसे इन भागोंमे, बहुसंख्यक मुसलमानोके होते हुए, ब्रिटिश सरकारसे निपटना पड़ेगा। ये भूभाग स्वतन्त्र भारतमे ब्रिटिश द्वीपोंके समान होंगे इस प्रकार जिस स्वतन्त्रताकी कल्पना की गयी है वह शेष भारतसे है, ब्रिटिश साम्राज्यसे जरा भी नही, कमसे कम, आरम्भिक अवस्थामें तो नही ही।

विभाजनसे बननेवाले नये राजोंके पदके सम्बन्धमें दिये गये श्री जिनाके एक दूसरे वक्तव्यका भी कुछ अंश यहां उद्धृत किया जा रहा है। १ अप्रैल १९४० को लाहौर-प्रस्तावके बाद तुरन्त ही प्रेसको दिये गये एक वक्तव्यमें ग्रेट-ब्रिटेनके साथ मुसलमानोंके स्वदेशके सम्बन्धके विषयमें लाहौर-प्रस्तावका हवाला देते हुए श्री जिनाने कहा था 'शेष भारतमें जो क्षेत्र बनेंगे उनके साथ हमारा सम्बन्ध अन्तर्राष्ट्रीय ढंगका होगा। भारतके साथ बर्मा और लंकाका सम्बन्ध पहलेसे ही

उदाहरणके रूपमें मौजूद है।'* इससे स्पष्ट है कि पाकिस्तानको ही नहीं, हिन्दुस्तानको भी ब्रिटिश साम्राज्यका अंग और उसी पदका उपभोक्ता बनाये रखनेका विचार किया गया है जो भारत, बर्मा और लकाका ब्रिटिश सरकारके और आपसके सम्बन्धके विचारसे आज है।

फिर, श्री जिनाने उक्त 'इण्टरव्यू' में जहां सिर्फ सेना और परराष्ट्र सम्बन्धका हवाला दिया है वहां प्रस्तावमें 'यातायात, चंुगी और अन्य आवश्यक विषयों' का भी उल्लेख है। शेष भारतको किसी भी विषयमें किसी प्रकारका अधिकार न होगा और मुस्लिम क्षेत्रभी बीचकी अवधिमें इन विषयोका अधिकार ग्रहण नही करेगा। इसका एक ही परिणाम सम्भव हो सकता है और वह यह कि यातायात, चुगी और अन्य आवश्यक विषयोके सम्बन्धमें भी ब्रिटिशसत्ता ही सर्वोपरि बनी रहेगी। ये विषय बहुत बड़ा क्षेत्र घेर लेगे और यह भी खयालके बाहरकी बात नही है कि कुछ विषयोमे मुस्लिम क्षेत्रोके अधिकार १९३५ के शासन-विधानके अन्तर्गत मिले प्रान्तीय सरकारोंके अधिकारोसे भी कम होगे।

कहा गया है कि स्वतन्त्र मुस्लिम क्षेत्र शेष भारतसे वैसी ही सन्धि करेगा जैसी दो स्वतन्त्र राजोंमे होती है। यदि मुस्लिम क्षेत्रोमे परराष्ट्र सम्बन्धपर ब्रिटिश प्रभुत्व बना रहा तो ऐसे क्षेत्रोकी सरकार शेष भारतके साथ कैसे सन्धि कर सकेगी? इसलिए यदि कोई सन्धि हो भी तो वह शेष भारत और ब्रिटिश सरकारके अधीन और आज्ञानुवर्ती मुस्लिम क्षेत्रोके बीच ठीक वैसी हो जैसी वर्तमान भारत सरकार और अफगानिस्तान जैसे स्वतन्त्र राजके बीच हो सकती है।

(४) अल्पसख्यकोंकी रक्षाके सम्बन्धमे आदिष्ट सरक्षणोका पालन न किये जानेकी दशामे वे कैसे, किसके द्वारा, किस बलके सहारे कार्यान्वित कराये जायँगे?

इस विषयके सम्बन्धमें मुस्लिम लीगका प्रस्ताव बिलकुल मौन है। चूकि दोनो—मुस्लिम और गैर-मुस्लिम राष्ट्र एक दूसरेसे स्वतन्त्र होगे इसलिए ऐसी कोई सामान्य केन्द्रीय सत्ता नही देख पड़ती जो किसी कानूनी या शासनकी

---

* 'इण्डियन प्राब्लम आव हर फ्यूचर कान्स्टिट्यूशन,' पृष्ठ ३१

प्रक्रियाद्वारा इन आदिष्ट संरक्षणोंको कार्यान्वित करा सके। इनका उल्लंघन एक राष्ट्रका दूसरे राष्ट्रके विरुद्ध शत्रुवत् कार्य समझा जायगा और मेलसे काम न चलनेपर दौत्य-प्रणालियो या अन्तर्राष्ट्रीय पंचायतद्वारा अन्तर्राष्ट्रीय झगड़े तै करानेके तरीकेसे निपटारा कराना पड़ेगा। क्या किसी राष्ट्रके अल्पसंख्यकोके लिए दूसरे स्वतन्त्र राष्ट्रमे रहनेवाले सहराष्ट्रियोको इस तरहके झगडोमें सहायताके लिए आह्वान कर सकना सम्भव या किसी प्रकार आसान है? भारतमें जो मुस्लिम राज बनाये जायँगे, ससारमे सिर्फ वे ही मुस्लिम राज न होगे। भारतके पास-पड़ोसमे ही और मुस्लिम राज है। क्या भारतके अल्पसख्यक मुसलमानोके लिए गैर-मुसलमानोके अनाचार और उत्पीड़नके विरुद्ध सहायताके लिए इन मुस्लिम राजोंको आह्वान करना कभी सम्भव हुआ है? यदि कांग्रेस मन्त्रि-मण्डलोद्वारा मुसलमानोके साथ अनाचार और उत्पीड़नकी कहानीमें कोई सचाई और उससे नये मुस्लिम राज कायम करनेका औचित्य सिद्ध होता हो तो यह वर्तमान मुस्लिम राजोके, अगर हस्तक्षेप नही तो दौत्य-प्रणालीके द्वारा विरोध प्रकट करनेका उचित कारण हुआ होता, विशेषकर उस हालतमे जबकि मुसलमान चाहे जहा रहते हों और अन्य कोई बात भले ही न हो पर सिर्फ धर्मके आधारपर वे सभी एक राष्ट्रके है। क्या भारतके अल्पसख्यक मुसलमानोने इस प्रकारकी सहायताके लिए कभी प्रयत्न किया है? चूकि इन स्वतन्त्र राजोके बीच ऐसी कोई चीज नही होगी जो दोनोंके लिए सामान्य हो इसलिए अगर पाकिस्तानमें अल्पसख्यक गैरमुसलमानोका उत्पीड़न हो तो 'हिन्दुस्तानके लिए हस्तक्षेप कर सकना असम्भव नही तो कठिन अवश्य होगा ; उसी प्रकार हिन्दुस्तानके अल्पसख्यक मुसलमानोंका उत्पीड़न होनेपर उनके पक्षमें पाकिस्तानका हस्तक्षेप कर सकना असम्भव नही तो कठिन अवश्य होगा।

इस स्थलपर यूरोपके अल्पसंख्यकोके सम्बन्धमें प्राप्त अनुभवका उल्लेख कर देना अप्रासंगिक न होगा, जिन्हें अल्पसंख्यक जातिकी सन्धियोंके अनुसार मिले अधिकारोंके संरक्षणके लिए राष्ट्रसघका आश्वासन था। 'नये और पुराने दोनों प्रकारके राजोमें कुछ प्रशंसनीय अपवाद पाये गये हैं, पर साधारणतः

अल्पसंख्यकोंके भाग्यमें कष्ट ही बदा था। प्रायः प्रत्येक राजने अल्पसंख्यक जातिकी सन्धियोंको भंग किया है और इसके फलस्वरूप प्रत्येक अल्पसंख्यक जातिको कष्ट सहन करना पड़ा है और वे दुष्कृत्य हर तरहसे निडर होकर किये गये है।......इन गुणोंके होते हुए भी इस बातसे इनकार करना असम्भव है कि संघका आश्वासन अल्पसंख्यकोके लिए डूबतेको तिनकेका सहारा ही हुआ है। जिन मामलोंमें संघके प्रति हस्तक्षेपके लिए आह्वान कुछ प्रभावकर हुआ है उनकी संख्या अत्यल्प है और उनमें भी अल्पसंख्यक जातिके प्रति न्याय करानेका संकल्प नही, बल्कि और ही विचार कारण थे।'*

पाकिस्तान और हिन्दुस्तानके स्वतन्त्र राजोंके अल्पसख्यकोके साथ उचित बर्ताव कैसे हो सकेगा, इसके लिए यह सुझाया गया है कि हिन्दू भारत और मुस्लिम राज-दोनोमे ही अल्पसंख्यकोका अस्तित्व होगा, इसलिए दोनोके लिए कोई सामान्य कार्यविधि अपनाना और अल्पसख्यकोमे विश्वास उत्पन्न करना सम्भव हो सकेगा जिससे अन्ततः वे अपनी स्थितिके साथ सामंजस्य स्थापित कर लेंगे,† भारतका विभाजन होनेपर अल्पसंख्यकोमे अपनेको सुरक्षित समझनेका भाव उत्पन्न करने और उनका विश्वास प्राप्त करनेका बहुत बड़ा दायित्व उन क्षेत्रोके बहुसंख्यकोंपर आ जायगा।'‡ अल्पसंख्यकोके प्रति बहुसंख्यकोमे दायित्वका भाव उत्पन्न करने या अल्पसंख्यकोंका विश्वास प्राप्त करनेके लिए पार्थक्य आवश्यक नही है; दायित्वके भावकी वृद्धिके लिए तो वस्तुतः एकताका ही वातावरण अधिक अनुकुल होता है। विभाजन हो या न हो, यह भाव लाया जा सकता है और लाना चाहिये भी। ऊपरके उद्धरणमें वस्तुतः शुद्ध भाव उतना नही है जितना एक राजके बहुसख्यकका दूसरे राजके बहुसंख्यक-

---

* सी० बी० मेकार्टनी—'नेशनल स्टेट्स ऐण्ड नेशनल माइनारिटीज' तीसरा संस्करण, पृ० ३९०।

† एम० आर० टी०—'इण्डियाज प्राब्लम आव हर फ्यूचर कान्स्टिट्यूशन,' पृष्ठ ४१।

‡ वही—श्री जिना, पृष्ठ ३०।

पर होनेवाली प्रतिक्रियाका भय है। यह भय दो कारणोंसे उत्पन्न हो सकता है। एक कारण तो यह है कि दूसरे स्वतन्त्र राजकी ओरसे सक्रिय हस्तक्षेपकी आशंकासे अच्छा बर्ताव किया जाय; पर जैसा कि ऊपर कहा जा चुका है, इस प्रकारके हस्तक्षेपकी बहुत कम सम्भावना रहती है। दूसरा यह हो सकता है कि एकके अल्पसंख्यक जातिके प्रति बुरा बर्ताव करनेपर दूसरा स्वतन्त्र राज भी अपने अल्पसंख्यकोके प्रति वैसा ही बर्ताव कर सकता है दूसरे शब्दोमें, अल्पसंख्यक अपनी सरकारके हाथमें इसलिए प्रतिभूकी स्थितिमें रहेंगे कि दूसरी सरकार भी अपने अल्पसंख्यकोके साथ अच्छा बर्ताव करे। कोई राज अपने प्रजाजनोंके साथ, जिन्होंने कोई बुराई नही की है और जो भले नागरिकोकी तरह आचरण करते है, इसलिए दुर्व्यवहार करनेको उद्यत होगा कि किसी अन्य सरकारने, जिससे कोई सम्बन्ध नही है, दुर्व्यवहार किया है, यह विचार ही न्यायकी भावनाके लिए इतना उद्वेगजनक है कि पाकिस्तान या हिन्दुस्तान दूसरी स्वतन्त्र सरकारके कार्यके लिए अपने ही प्रजाजनोके विरुद्ध बदलेकी काररवाई करेगा, इसका खयाल भी नही किया जा सकता। यदि कांग्रेसके अत्याचारकी कथाका वस्तुतः कोई आधार होता तो मुस्लिम प्रान्तोके मुस्लिम मन्त्रिमण्डलोने अपने प्रान्तोमें अवश्य ही बदला लिया होता, क्योंकि भारत-शासन-विधानके अन्तर्गत सभी मन्त्रिमण्डलोंको समान अधिकार प्राप्त थे, और विधानके अन्तर्गत यदि कांग्रेसी मन्त्रिमण्डल मुसलमानोका उत्पीड़न कर सकते थे तो मुस्लिम मन्त्रिमण्डल भी उन्ही अधिकारोका उपयोग कर अपने अधीनस्थ अल्पसंख्यक हिन्दुओंका उत्पीड़न कर सकते थे। क्योकि १९३५ के शासन विधानमें सभी मन्त्रिमण्डलोको समान हक प्राप्त था। शासन विधानके अन्दर यदि कांग्रेस मन्त्रिमण्डल मुसलमानों पर अत्याचार कर सकता था तो मुस्लिम मन्त्रिमण्डल भी उन्हीं अधिकारोंका प्रयोग कर सकता था और अपने अधीन हिन्दू अल्पसंख्यकोंको सता सकता था। कमसे कम उन्होंने गवर्नरके द्वारा मुस्लिम अल्पसंख्यकोंकी रक्षा करनेके लिए केन्द्रीय सरकारपर तो अपने अधिकारका प्रयोग करनेके लिए दबाव डाला ही होता। पर मुस्लिम

मन्त्रिमण्डलोंने बदलेके विचारसे कुछ किया हो या विशेषाधिकारके प्रयोगके लिए गवर्नरसे अनुरोध किया हो, ऐसी कोई बात नही नजर आयी। ऐसी बात नहीं है कि गैर-मुसलमानोको मुस्लिम मन्त्रिमण्डलोके खिलाफ कोई शिकायत न रही हो। उनकी शिकायते संगीन थी और व्यवस्थापिका सभाओ तथा पत्रोंमें प्रकट भी की गयी थी; पर कभी किसीने यह नही कहा कि ये कार्य अन्य प्रान्तोमे अल्पसख्यक मुसलमानोकी रक्षाके लिए प्रतिशोध-स्वरूप किये गये है। दर असल बात तो यह थी कि उत्पीड़न सम्बन्धी आरोपोका कोई उचित आधार नही था या, कमसे कम वे इतने गम्भीर नही थे कि मुस्लिम मन्त्रिमण्डल उनके लिए कोई काररवाई करनेको तैयार होते, हाला कि भारतके विभाजनकी जो माग की जा रही है उसके वे एक प्रमुख कारण हो रहे है। भारतके पश्चिमोत्तर और पूर्वी क्षेत्रोमे, जहां 'अत्याचार और उत्पीड़न' की सारी अवधिमें मुस्लिम मन्त्रिमण्डल कार्य कर रहा था, स्वतन्त्र मुस्लिम राजोकी स्थापना हो जानेपर स्थिति सुधर कैसे जायगी? अगर कुछ होगा भी तो यही कि शेष भारतसे उनका विच्छेद इस विषयमें उनके लिए साधक न होकर बाधक ही विशेष होगा। पार्थक्यकी मागके मूलमे एकमात्र यही आशका है कि भारतके एक रहनेपर बहुसख्यक हिन्दू अल्पसख्यक मुसलमानोका दमन और उत्पीड़न करेंगे। जब भारतकी आबादीमे मुसलमानोका इतना अधिक अनुपात होनेपर बहुसंख्यक हिन्दू ऐसा कर सकते है तब हिन्दुस्तानमें मुसलमानोका समुदाय और छोटा और फलस्वरूप अन्यायी बहुसंख्यकको अच्छा बर्ताव करनेके लिए बाध्य कर सकनेमें कम समर्थ होनेपर वे अच्छा बर्ताव करेगे, ऐसी आशा करनेका कोई युक्तियुक्त कारण नही देख पड़ता। अधिकांश स्थितियोंमें अन्य स्वतन्त्र मुस्लिम राजोका हस्तक्षेप असम्भव या, कमसे कम कठिन होनेके कारण स्वतन्त्र राजके विधानमे रखे गये संरक्षणोका उसी अंशमे पालन होगा जिस अंशमें बहुसंख्यक जातिको उनका आदर करनेकी इच्छा होगी या अल्पसंख्यक जाति पालन करा सकनेकी स्थितिमें होगी। उपरोक्त धारण का आधार यह है कि बहुसंख्यक हिन्दू समुदायसे न्याय और औचित्यकी आशा

नहीं की जा सकती। पर हिन्दुस्तानके अल्पसंख्यक मुसलमान तो अच्छा बर्ताव करनेके लिए बाध्य करनेकी दृष्टिसे आजसे और कमजोर ही होंगे। संरक्षण देखनेमे भले ही आकर्षण हों लेकिन स्वतन्त्र राज, यदि वे वस्तुतः स्वतन्त्र हो तो उनमें परिवर्तन तो कर ही सकते है; यदि वे विधानमें बने भी रहे तो वे उपर्युक्त कारणोसे मृगमरीचिका ही सिद्ध होंगे और अल्पसख्यकोकी रक्षामें सहायक न हो सकेंगे, जैसा कि राष्ट्रसंघका आश्वासन होते हुए भी अल्पसख्यक जाति सम्बन्धी अधिकारोके पालनके सम्बन्धमे प्राप्त उपर्युक्त अनुभवसे प्रकट होता है।

नीचेकी तालिकामें ब्रिटिश भारतके विभिन्न प्रान्तोमे बसनेवाले सम्प्रदायोंकी आबादी सन् १९४१ की जनगणनाके अनुसार दी जा रही है; इसका अध्ययन देशके विभाजनका दावा समझनेमें विशेष उपयोगी होगाः—

सम्प्रदायोंकी आबादी प्रतिशत अनुपातके साथ (लाखमें)।

प्रान्त	कुल आबादी	हिन्दू (हरिजनोंको छोड़कर)	हिन्दू (हरिजन)	कुल हिन्दू	मुसलमान	ईसाई	सिख	आदिम जातियां	अन्य
मद्रास	४९३.४२	३४७.३१	८०.६८	४२७.९९	३८.९७	२०.४६	०.०४	५.६२	०.३६
		७०.४	१६.३	८६.७	७.९	४१	०.०	१.१	
बम्बई	२०८.५०	१४७.००	१८.५५	१६५ ५५	११.२०	३.७५	०.८	१६.१४	३ ७६
		७०.५	८.९	७९ ४	९.२	१.८	०.०४	७.७	
बंगाल	६०३.०७	१७६.८०	७३.७९	२५०.५९	३३०.०५	१.६६	०.१६	१८.८९	१.७०
		२९.३	१२.२	४१.५	५४.७	०.२८	०.०३	३.१	
सयुक्तप्रान्त	५५०.२१	३४०.९५	११७.१७	४५८.१२	८४.१६	१.६०	२.३२	२.८९	१.११
		६२.२०	२१.१	८३.२	१५.३	०.२९	०.४२	०.५३	
पञ्जाब	२८४.१९	६३.०२	१२.४९	७५.५१	१६२.१७	५.०५	३७.५७	—	३.८९
		२२.१	४.४	२६.५	५७.०	१.७	१३.२		
बिहार	३६३.४०	२२१.७४	४३.४०	२६५.१४	४७.१६	०.३३	०.१३	५०.५६	०.०६
		६१.०	११.९	७२.९	१२.९	.१०	०.०४	१३.९	
मध्यप्रदेश और बरार	१६८.१४	९८.८१	३०.५१	१२९.३२	७.८४	०.५८	०.१५	२९.३७	०.८७
		५८.८	१८.१	७६.९	४ ६	०.३५	०.०९	१७.४	
आसाम	१०२.०५	३५.३७	६ ७६	४२.१३	३४.४२	०.४१	०.०३	२४.८५	०.२०
		३४.६	६ ६	४१.२	३३.७	०.४०	०.०३	२४.३	

पश्चिमोत्तर	३०.३८	१.८०	—	१.८०	२७.८९	०.११	०.५८	—	०.००१
सीमान्त		५.९		५.९	९१.७	०.३६	१.९		
उड़ीसा	८७.२९	५५.९५	१२.३९	६८.३४	१.४६	०.२८	०.०२	१७.२१	०.००६
		६४.१	१४.१	७८.२	१.६	०.३२	०.००	१९.७	
सिन्ध	४५.३५	१०.३८	१.९२	१२.३०	३२.०८	०.२०	०.३१	०.३७	०.०१
		२२.९	४.२	२७.१	७०.७	०.४५	०.६८	०.८१	
अजमेरमारवाड़ा	५.८४	३.७६	—	३.७६	०.९०	०.०६	०.००९	०.९१	०.१९
		६४.५		६४.५	१५.४	०.९९	०.१५	१५.६	
अन्दमान और	०.३४	०.०८	—	०.०८	०.०८	०.०३	०.००७	०.११	०.०३
निकोबार		२४.९		२४.९	२३.७	७.७	२.२	३२.८	
बलूचिस्तान	५.०२	०.४०	०.०५	०.४५	४.३९	०.०६	०.१२	—	
		७.९	०.९	८.८	८७.५	१.२	२.३		
कुर्ग	१.६९	१.०५	०.२६	१.३१	०.१५	०.०३	—	०.२०	—
		६२.१	१५.३	७७.४	८.७	२.०		११.६	
दिल्ली	९.१८	४.४५	१.२३	५.६८	३.०५	०.१७	०.१६	—	०.१५
		४८.४	१३.४	६१.७	३३.२	१.९	१.७		
पंथपिपलोदा	०.०५२	०.०३७	०.००९	०.९५	०.००३	०.००२	—	०.०००१२	०.००१
		७१.२	१७.३	८९.७	४.७	४.१		०.२२	
योग	२९५८.००	१५०८.९०	३९९.२०	१९०८.१२	७९३.९०	३४.८२	४१.६०	१६७.१०	१२.४०
		५१.०	१३.५	६४.५	२६.८	१.१९	१.४१	५.६५	०.४२

१९४४ के सितम्बरमें अपनी बातचीतके दौरानमें जब महात्मा गाधीने यह जानना चाहा कि मूल प्रस्तावकी ही तरह पाकिस्तानमे काश्मीर सम्मिलित है या नही, तब श्री जिनाने कहा कि पाकिस्तानसे केवल चार प्रान्तों—सिन्ध, बलूचिस्तान, पश्चिमोत्तर सीमान्त और पञ्जाबका बोध होता है। इसलिए मुस्लिम क्षेत्रोका सीमा-निर्धारण करते समय देशी रियासतोंके सम्बन्धमे हमें विचार नही करना पड़ा है।

मुस्लिम क्षेत्रमें सम्मिलित किये जानेवाले भूभागोंके सम्बन्धका वाक्य कुछ उलझा हुआ है और जो भाग सम्मिलित किये जायंगे उनके लिए प्रयुक्त शब्द भी अनेक तो है ही, वे ब्रिटिश सरकारके कागजोंमे प्रयुक्त होनेवाली वैधानिक और शासन सम्बन्धी भाषामे देख भी नही पड़ते। उसमे इकाई, क्षेत्र, प्रदेश आदि शब्द प्रयुक्त किये गये है जिनमेसे कोई भी प्रचलित वैधानिक या शासन-सम्बन्धी साहित्यमे नही देख पड़ता। प्रान्त, जिला, तहसील, तालुका, थाना आदि शब्द ही प्रचलित है। यदि प्रस्ताव बनानेवालोने उन्हें ठीक-ठीक समझा था, यदि वे उन्हे हिन्दू-मुसलमान दोनोके लिए समानतः और साथ ही ब्रिटिश सरकारके लिए भी इसे स्पष्ट करना अभिप्रेत था तो इन शब्दोके प्रयोगद्वारा सरलतासे अर्थ व्यक्त किया जा सकता था। सन्दिग्ध भाषाका प्रयोग तथा प्रस्तावका ब्योरा बतलाने और इसकी व्यापकता स्पष्ट करनेकी अनिच्छाका परिणाम बुरा ही हुआ है। इन बातोने लोगोको योजनापर ध्यान केन्द्रित करनेसे रोककर तरह-तरहके मनमाने अर्थ ही लगानेको नही बाध्य किया है बल्कि बहुतसे लोगोके मनमें सन्देह उत्पन्न कर दिया है जिससे वे लोग इस तरह-के बहुतसे प्रश्न करने लगे है—इस तरहकी सन्दिग्ध भाषाका प्रयोग क्यो किया गया? क्या इसका उद्देश्य विभाजनके समर्थकोका आपसका मतभेद अनिर्णीत छोड़ देना था जिनमे एक पक्ष तो पश्चिमोत्तर और पूर्वी भारतमे बहुत अधिक नही तो बड़े बहुमतके साथ एकजातीय मुस्लिम राजका आग्रह कर रहा था और दूसरा अगर देशका अधिक भाग स्वतन्त्र मुस्लिम राजके अन्दर आना हो तो अत्यल्प नही तो थोड़ेसे मुस्लिम बहुमतसे भी सन्तुष्ट था? अथवा

सर्वसाधारणकी नजरोंमें लाना और टीका-टिप्पणीके भयसे सारी योजना प्रकट करना ठीक नही समझा गया? कौनसा भूभाग सम्मिलित होगा और कौन पृथक् किया जायगा, यह स्पष्ट करनेमें क्यों टाल-मटोल की गयी? कही यह तो नहीं कि यह चीज इसलिए गोलमटोल छोड़ दी गयी है जिसमें मौका देकर जो सबसे अच्छा और ठीक जान पड़ेगा वह पेश कर दिया जायगा? कही ऐसा तो नही है कि गैर-मुसलमानोद्वारा विभाजनका सिद्धान्त स्वीकार कर लिये जानेपर सीमा-निर्धारणके समय यदि उनकी ओरसे कोई आपत्ति हो तो बदनीयतीका दोषारोप करनेका भय दिखलाकर लीग उनसे मनमाने भूभागकी मांग मञ्जूर कराना चाहेगी? प्रचलित शब्दोंको छोड़कर इस तरहकी अस्पष्ट भाषाका प्रयोग करनेका चाहे जो भी अभिप्राय या उद्देश्य रहा हो, पर प्रयत्न सफल नही हो सका है। यदि स्पष्ट वाक्य-रचना हो तो सारे प्रस्तावसे एक ही अर्थका ग्रहण होगा। जैसा कि ऊपर कहा गया है, ऐसा कोई भूभाग, जिसमे मुसलमानोंका संख्याकी दृष्टिसे प्राधान्य न होगा, मुस्लिम राजमे सम्मिलित नही किया जा सकता; इसके अलावा वह भूभाग ऐसे भूभागसे मिला हो जिसमे उसी प्रकारका मुसलमानोका बहुमत हो।

पश्चिमोत्तर क्षेत्र

जांचकी इन शर्तोंका प्रयोग कर देखा जाय कि कौनसे भूभाग पश्चिमोत्तर और पूर्वी क्षेत्रोंमें सम्मिलित किये जा सकते हैं जहां स्वतन्त्र मुस्लिम राज बननेवाले हैं। इसके लिए जिलोंके साथ प्रत्येक प्रान्तपर विचार करना होगा।

१९४१ की गणनाके अनुसार जनसंख्या इस प्रकार है—

सिन्ध

जिले	क्षेत्रफल (वर्गमीलमें)	कुल आबादी	हिन्दू	मुसलमान	भारतीय ईसाई	आदिम जातियां	अन्य
दादू	७,३७०	३,८९,३८०	५८,३७२	३,२९,९११	७४	१५४	७८९
			१४.९९	८४.७४		(०.२६)	
हैदराबाद	४,४७६	७,५८,७४८	२,४५,८४९	५,०७,६२०	४९०	७६९	४,०२०
			३२.४०	६६.९०		(०.६९)	
करांची	८,३५७	७,१३,९००	२,२२,५९७	४,५७,०३५	११,३१०	८८४	२२,०७४
			३१.१८	६४.००		(४.८०)	
लरकाना	२,८५७	५,११,२०८	९१,०६२	४,१८,५४३	४९		१,५५४
			१७.८१	८१.८५		(०.३१)	
नवाबशाह	३,९०८	५,८४,१७८	१,४०,४२८	४,३६,४१४	२१२	१३२६	५,७९८
			२४.०४	७४.७२		(१.२५)	
सक्खर	५,५५०	६,९२,५५६	१,९५,४५८	४,९१,६३४	२७७	५१	५१३६
			२८.२२	७०.९८		(०.७८)	
थारपरकर	१३६४९	५,८१,००४	२,४७,४९६	२,९२,०२५	८००	३३,६३५	७,०४८
			४२.५८	५०.२६		(७.१४)	
अपर सिन्ध सीमान्त	१,९६९	३,०४,०३४	२८,६६४	२,७५,०६३	२०		२८७
			९.४२	९०.४७		(०.१०)	
जोड़	४८,१३६	४५,३५,००८	१२,२९,९२६	३२,०८,३२५	१३,२३२	३६,८१९	४६,७०६
			२७.१२	७०.७५		(२.१३)	

ऊपरके अंकोमे 'अन्य' शीर्षकके अन्तर्गत सिख, ३१,०११ या ०.६८ प्रतिशत है, ईसाई (भारतीय ईसाइयोसे भिन्न) ६,९७७, जैन ३,६८७, पारसी ३,८३८, बौद्ध १११ और यहूदी १,०८२—कुल ४६,७०६ है जो जिलेवार नही दिये गये है।

पश्चिमोत्तर सीमाप्रान्त

जिले	क्षेत्रफल (वर्गमीलमें)	कुल आबादी	हिन्दू	मुसल्मान	भारतीय ईसाई	अन्य
हजारा	३,०००	७,९६,२३०	३०,२६७	७,५६,००४	३१४	९,६४५
			३ ८०	९४.९४	(१.२५)	
मरदान	१,०९८	५,०६,५३९	१०,६७७	४,८३,५७५	३७६	११,९११
			२.१०	९५ ४६	(२.४२)	
पेशावर	१,५४७	८,५१,८३३	५१,२१२	७,६९,५८९	३,३९७	२७,६३५
			६.०१	९० ३४	(३.६४)	
कोहात	२,७०७	२,८९,४०४	१७,५२७	२,६६,२२४	५.९६	५,०५७
			६.०६	९१.९९	(१ ९५)	
बन्नू	१,६९५	२,९५,९३०	३१,४७१	२,५७,६४८	४६७	६,३४४
			१०.६३	८७ ०६	(२.३०)	
डेराइस्माईलखां	८,२१६	२,९८,१३१	३९,१६७	२,५५,७५७	२७६	२,९३१
			१३.१४	८५ ७८	(१.०७)	
जोड़	१४,२६३	३०,३८,०६७	१,८०,३२१	२७,८८,७९७	५,४२६	६३,५२३
			५ ९८	९१ ७९	(२.२६)	

ऊपरकी तालिकामें 'अन्य' शीर्षकमें ५७,९३९ या १.९१ प्रतिशत सिख, ५,४६३ ईसाई (भारतीय ईसाइयोंसे भिन्न), २५ बौद्ध, ७१ यहूदी, १ जैन, २४ पारसी—कुल ६३,५२३ सम्मिलित हैं।

बलूचिस्तान

जिले	क्षेत्रफल (वर्गमीलमे)	कुल आबादी	हिन्दू	मुसलमान	भारतीय	ईसाई	अन्य
क्वेटा	५,३१०	१.५६,२८९	२८,६२९	१,१३,२८८	२,२९६		१२,०७६
पिशिन			१८.३२	७२.४८		९.१९	
लोरालाई	७,३७१	८३,६८५	३,१२९	७९,२७३	११८		१,१६५
			३.७४	९४.७३		१.५३	
झोब	१०,६७८	६१,४९९	४,२८६	५५,९८७	७८		१.१४८
			६.९७	९१.०४		१.९९	
बोलन	४०७	६,००९	९५०	४,८१२	२२		२२५
			१५.८१	८०.०८		४.११	
चगाई	१९,४२९	२९,२५०	१,२०४	२७,८६४	१		१८१
			४.१२	९५.२६		०.६२	
सिबी	११,४५७	१,६४,८९९	६,४२५	१,५७,७०६	११८		६५०
			३.८९	९५.६३		०.४६	
जोड़	५४,४५६	५,०१,६३१	४४,६२३	४,३८,९३०	२,६३३		१५,४४५
			८८.९	८.७५१		.६०१	

ऊपर-की तालिकामें 'अन्य' शीर्षकमें ११,९१८ या २.३८ प्रतिशत सिख, ३,३६९ ईसाई (भारतीय ईसाइयोंसे भिन्न), ७ जैन, ७५ पारसी, ४३ बौद्ध, १९ यहूदी और १४ अन्य—कुल १५,४४५ सम्मिलित है।

ऊपरकी तालिकाओंपर दृष्टिपात करनेपर ज्ञात होगा कि सिन्धके किसी भी जिलेमें गैर-मुसलमानोंकी प्रधानता नही है। दूसरी ओर प्रत्येक जिलेमें मुसलमानोंकी प्रधानता है। उनका सबसे अधिक अनुपात अपर सिन्ध सीमान्तमें ९०.४७ प्रतिशत है और सबसे कम थारपरकरमें ५०.२६ है। सारे प्रान्तपर साम्प्रदायिक अनुपात मुसलमानोंका ७०.७५ प्रतिशत, हिन्दुओंका २७.१२ और अन्य-लोगोंका, जिनमें सिख, ईसाई, जैन, बौद्ध, यहूदी, आदिम जातिया सम्मिलित हैं, २.१३ प्रतिशत है जिसमे सिखोंका सारी आबादीपर ०.६८ है। सारा प्रान्त वलूचिस्तान, पश्चिमोत्तर सीमान्त और पश्चिम पंजाबसे मिला हुआ है।

इसी प्रकार पश्मिोत्तर सीमाप्रान्नके जिलेमें मुसलमानोंकी प्रधानता है—उनका सबसे अधिक अनुपात मरदान जिलेमें ९५.४६ प्रतिशत और सबसे कम ८५.७८ डेराइस्माइलखां जिलेमें है। सारे प्रान्तपर मुसलमानोंका अनुपात ९१.७ प्रतिशत, हिन्दुओंका ५.९४ प्रतिशत और शेषका २.२६ प्रतिशत है जिसमें सिख भी शामिल हे जिनका अनुपात सारे प्रान्तपर १.९१ प्रतिशत है। यह प्रान्त वलूचिस्तान, सिन्ध और पश्चिमी पंजाबसे मिला हुआ है।

वलूचिस्तानके भी प्रत्येक जिलेमें मुसलमानोंका ही बहुमत है। इनका सबसे अधिक अनुपात सिबी जिलेमें ९५.६३ प्रतिशत और सबसे कम क्वेटा-पिशिनमें ७२.४८ प्रतिशत है। सारे प्रान्तपर मुसलमानोंका अनुपात ८७.५१ प्रतिशत, हिन्दुओंका ८.८९ प्रतिशत और अन्य लोगोका ३.६० प्रतिशत है जिसमें सिख भी शामिल हैं जो सारी आबादीपर २.३८ प्रतिशत है। यह प्रान्त भी सिन्ध, सीमाप्रान्त और पंजाबसे मिला हुआ है।

इस प्रकार ये तीनों ब्रिटिश प्रान्त पश्चिमोत्तर भारतके स्वतन्त्र मुस्लिम राजमें सम्मिलित किये जानेके सम्बन्धमें मुस्लिम लीगके लाहौर प्रस्तावकी शर्तोंको पूरा करते हैं।

पञ्जाबकी स्थिति इससे भिन्न है जो नीचे दी गयी तालिकासे स्पष्ट है—
(१९४१ की जनगणना)

अम्बाला डिवीजन—

जिला या डिवीजन	क्षेत्रफल (वर्गमीलमें)	कुल आबादी	हिन्दू	मुसलमान	ईसाई	सिख	अन्य
हिसार	५,२१३	१०,०६,७०९	६,५२,६७६	२,८५,२०८	१,२९२	६०,७३१	६,८०२
			६४.८३	२८.३३	०.१३	६.०३	०.६७
रोहतक	२,२४६	९,५६,३९९	७,८०,४७४	१,६६,५६९	१,०४३	१,४६६	६,८४७
			८१.६१	१७.४२	०.११	०.१५	०.७१
गुरगांव	२,२३४	८,५१,४५८	५,६०,४९८	२,८५,९९२	१,६७३	६३७	२,६५८
			६५.८५	३३.५६	०.२०	०.०७	०.३१
करनाल	३,१२६	९,९४,५७५	६,६६,०३६	३,०४,३४६	१,२४९	१९,८८७	३,०५७
			६६.९७	३०.६८	•.१३	२.००	०.३०
अम्बाला	१,८५१	८,४७,७४५	४,१०,३३३	२,६८,९९९	६,०६५	१,५६,५४३	५,८०५
			४८.४०	३१ ७३	०.७१	१८.४६	०.६८
शिमला	८०	३८,५७६	२९,४६६	७,०२२	९३४	१,०३२	१२२
			७६.३८	१८.२०	२.४२	२.६७	०.३२
जोड़	१४,७५०	४६,९५,४६२	३०,९९,४८३	१३,१८,१३६	१२,२५६	२,४०,२९६	२५,२९१
			६६.०१	२८.०७	०.२६	५.१२	०.५४

जालन्धर डिवीजन

जिला या डिवीजन	क्षेत्रफल (वर्गमीलमें)	कुल आबादी	हिन्दू	मुसलमान	ईसाई	सिख	अन्य
कांगड़ा	९,९७९	८,९९,३७७	८,३८,४७९	४३,२४९	७८८	४,८०९	१२,०५२
			९३.२३	४.८१	० ०९	०.५३	१.३४
होशियारपुर	२,१९५	११,७०,३२३	४,६८,२५५	३,८०,७५९	६,१६५	१,९८,११४	१,१६,९८०
			४०.०१	३२ ५३	०.५३	१६.९४	९.९९
जालन्धर	१,३३४	११,२७,१९०	१,९८,१६०	५,०९,८०४	६,२३३	२,९८,७४१	१,१४,२५२
			१७ ५९	४५.२३	०.५५	२६ ५०	१०.१३
लुधियाना	१,३३९	८,१८,६१५	१,६६,६७८	३,०२,४८२	१,९१३	३,४१,१७५	६,३६७
			२०.३६	३६.९५	० २३	४१.६८	०.७८
फीरोजपुर	४,०८५	१४,२३,०७६	२,७९,२६०	६,४१,४४८	१२,६०७	४,७९,४८६	१०,२७५
			१९.६२	४५.०७	०.८९	३३.६९	०.७२
जोड़	१८,९९२	५४,३८,५८१	१९,५०,८०२	१८,७७,७४२	२७,७०६	१३,२२,४०५	२,५१,१२६
			३५ ८७	३४.५३	०.५१	२४.३१	४.७८

लाहौर डिवीजन—

जिला या डिवीजन	क्षेत्रफल (वर्गमीलमें)	कुल आबादी	हिन्दू	मुसलमान	ईसाई	सिख	अन्य
अमृतसर	१,५७२	१४,१३,८७६	२,१६,७७८	६,५७,६९५	२५,९७३	५,१०,८४५	२,५८५
			१५.३३	४६.५२	१.८४	३६.१३	०.१८
लाहौर	२,५९५	१६,९५,३७५	२,८४,३५१	१०,२७,७७२	७०,१४७	३,१०,६४६	२, ४५९
			१६ ७७	६०.६२	४.१४	१८.३२	०.१५
गुरदासपुर	१,८४६	११,५३,५११	२,८३,११२	५,८९,९२३	५१,५२२	२,२१,२६१	७,६१३
			२४ ५५	५१ १४	४.४७	१९.१८	०.६६
स्यालकोट	१,५७६	११,९०,४९७	२,३१,११४	७,३९,२१८	७५,८३१	१,३९,४०९	४,९२५
			१९.४१	६२ ०९	६ ३७	११.७१	०.४१
गुजरानवाला	२,३११	९,१२,२३४	१,०७,८८७	६,४२,७०६	६०,८२९	९९,१३९	१,६७३
			११ ८३	७०.४५	६.६७	१०.८७	०.१८
शिकारपुर	२,३०३	८,५२,५०८	७७,७४०	५,४२,३४४	६०,०५४	१,६०,७०६	११,६६४
			९.१२	६३ ६२	७.०४	१८.८५	१.३७
जोड़	१२,२०३	७२,१८,००१	१२,०१,०६२	४१,९९,६५८	३,४४,३५६	१४,४२,००६	३०,९१९
			१६.६४	५८.१८	४.७७	१९.९८	०.४३

रावलपिण्डी डिवीजन--

जिला या डिवीजन	क्षेत्रफल (वर्गमीलमे)	कुल आबादी	हिन्दू	मुसलमान	ईसाई	सिख	अन्य
गुजरात	२,२६६	११,०४,९५२	८४,६४३	९,४५,६०९	४,४४९	७०,२३३	१८
			७.६६	८५.५८	०.४०	६.३६	०.००
शाहपुर	४,७७०	९,९८,९२१	१,००,७०८	८,३५,९१८	१२,७७०	४८,०४६	१,४७९
			१०.०८	८३.६८	१.२८	४.८०	०.१५
झेलम	२,७७४	६,२९,६५८	४०,८७९	५,६३,०३३	८९३	२४,६८०	१७३
			६.४९	८९.४२	०.१४	३.९२	०.०२
रावलपिण्डी	२,०२२	७,८५,२३१	८२,४६३	६,२८,११३	९,०१४	६४,१२७	१,४३४
			१०.५०	८०.००	१.१५	८.१७	०.१८
अटक	४,१४८	६,७५,८७५	४३,११०	६,११,१२८	१,३१२	२०,१२०	४५
			६.३९	९०.४२	०.२१	२.९७	०.०१
मियांवाली	५,४०१	५,०६,३२१	६२,७८७	४,३६,२६०	३५८	६,८६५	५१
			१२.४०	८६.१६	०.०७	१.३६	०.०१
जोड़	२१,३८१	४७,००,९५८	४,१४,६७०	४०,२०,१४१	२८,८७६	२,३४,०७१	३,२००
			८.८२	८५.९२	०.६१	४.९८	०.०७

मुलतान डिवीजन—

जिला या डिवीजन	क्षेत्रफल (वर्गमीलमे)	कुल आबादी	हिन्दू	मुसलमान	ईसाई	सिख	अन्य
मांटगोमरी	४,२०४	१३,२९,१०३	१,९१,१८२	९,१८,५६४	२४,४३२	१,७५,०६४	१९,८६१
			१४.३८	६९.११	१.८४	१३.१७	१.४९
लायलपुर	३,५२२	१३,९६,३०५	१,६२,२९५	८,७७,५१८	५१,९४८	२,६२,७३७	४१,८०७
			११.६२	६२.८५	३.७२	१८.८२	२.९९
झंग	३,४१५	८,२१,६३१	१,२९,७११	६,७८,७३६	७६३	१२,२३८	१०३
			१५.८०	८२.६१	०.०९	१.४९	०.०१
मुलतान	५,६५३	१४,८४,३३३	२,४२,९८७	११,५७,९११	१४,२९०	६१,६२८	७,५१७
			१६.३७	७८.०१	०.९६	४.१५	०.५१
मुजफ्फरगढ़	५,६०५	७,१२,८४९	९०,५४७	६,१६,०७४	२२७	५,८८२	११९
			१२.७०	८६.४२	०.०३	०.८२	०.०२
डेरागाजीखां	९,३६४	५,८१,३५०	६७,३९३	५,१२,६७८	८७	१,०७२	१२०
			११.५९	८८.१९	०.०१	.१८	०.०२
बलूचपारसीमान्त —		४०,२४६	१६०	४०,०८४	—		२
			०.३९	९९.६०		०.००	
जोड़	३१,७६३	६३,६५,८१७	८,८४,३५५	४८,०१,५६५	९१,७४७	५,१८,६२३	६९,५२७
			१३.८९	७५.४३	१.४४	८.१५	१.०९
प्रान्तका जोड़	९९,०८९	२,८४,१८,८१९	७५,५०,३७२	१,६२,१७,२४२	५,०४,९४१	३७,५७,४०१	३,८८,८६३
			२६.५७	५७.०६	१.७८	१३.२२	१.३७

पञ्जाबके मुस्लिम और गैर-मुस्लिम बहुमतवाले जिले

मुस्लिम बहुमतवाले डिवीजन	क्षेत्रफल (वर्ग-मीलमें)	कुल आबादी	हिन्दू	मुसलमान	ईसाई	सिख	अन्य	गैर-मुसलमानों-का योग
रावलपिंडी	२१,३८१	४७,००,९५८	४,१४,६७०	४०,२०,१४१	२८,८७६	२,३४,०७१	३,२००	६,८०,८१७
			८.८२	८५.५२	०.६१	४.९८	०.०७	१४.४८
मुलतान	३१,७६३	६३,६५,८१७	८,८४,३५५	४८,०१,५६५	९१,७४७	५,१८,६२३	६९,५२७	१५,६४,२५२
			१३.८९	७५.४३	१.४४	८.१५	१.०९	२४.५७
लाहौर	१०,६३०	५८,०४,१२५	९,८४,२८४	३५,४१,९६३	३,१८,३८३	९,३१,१६१	२८,३३४	२२,६२,१६२
			१६.९६	६१.०२	५.४९	१६.०४	०.४९	३८.९८
जोड़	६३,७७४	१,६८,७०,९००	२२,८३,३०९	१,२३,६३,६६९	४,३९,००६	१६,८३,८५५	१,०१,०६१	४५,०७,२३१
			१३.५३	७३.२९	२.६०	९.९८	०.६०	२६.७१

गैर-मुस्लिम बहुमतवाले जिले या डिवीजन—

अम्बाला	१४,७५०	८६,९५,८६२	३०,९९,४८३	१३,१८,१२६	१२,२५६	२,४०,२९६	२५,२९१	३३,७७,३२६
डिवीजन			६६.०१	२८ ०७	० २६	५.१२	०.५४	७१.९३
जालन्धर	१८,९९२	५४,३८,५८१	१९,५०,८०२	१८,७७,७४२	२७,७०६	१३,२२,४०५	२,५९,९२६	३५,६०,८३९
डिवीजन			३५.८७	३४.५३	०.५१	२४.३१	४.७८	६५.४७
अमृतसर	१,५७२	१४,१३,८७६	२.१६,७७८	६,५७,६९५	२५,९७३	५,१०८४५	२,५८५	७,५६,१८१
जिला			१५.३३	४६ ५२	१.८४	३६.१३	०.१८	५३.४८
जोड़	३५,३१४	१,१५,४७,९१९	५२,६७,०६३	३८,५३,५७३	६५,९३५	२०,७३,५४६	२,८७,८०२	७६,९४,३४६
			४५ ६१	३३.३५	० ५७	१७ ९६	२ ४९	६६.६३

ऊपरकी तालिकामें दिये गये अंशोंका विश्लेषण करनेके पूर्व यह कह देना आवश्यक जान पड़ता है कि अन्य लोगोंमे आदिधर्मी, जैन, पारसी, यहूदी और ऐसे लोग भी सम्मिलित है जिनके सम्बन्धमें किसी विशेष धर्म या सम्प्रदायका उल्लेख नही है। इनमें सबसे बड़ी सख्या आदिधर्मियोकी है जो सेंसस-कमिश्नरके कथनानुसार, दलितवर्गमे सम्मिलित कर लिये गये है पर अपनेको हिन्दू नही मानते, इसलिए उन्होने हिन्दुओंसे ही नही बल्कि दलितवर्गसे भी अपनेको पृथक् लिखाया। उनकी संख्या ३,४३,६८५ अर्थात् पञ्जाबकी कुल आबादीपर १.२१ प्रतिशत है। वे विशेषतः जालन्धर डिवीजनमे केन्द्रित है जहा उनकी आबादी २,५०,२६७ या डिवीजनकी कुल आबादीपर ४.६० प्रतिशत है। उनके दूसरे बड़े केन्द्र मुलतान और लाहौर डिवीजनमे है जहा उनकी संख्या क्रमशः ६८,६४१ और २०,४८८ है। अम्बाला और रावलपिण्डी डिवीजनमें उनकी संख्या नगण्य—क्रमशः २,७९५ और १,५३४—है। जैसा कि १९३१ की सेंसस रिपोर्टमें कहा गया है, 'धर्मकी दृष्टिसे वर्तमान जनगणना (१९३१) की विशेष उल्लेखनीय बात यह है कि चमारों, चुबरों तथा अन्य अछूतोंने अपने लिए 'आदिधर्मी' शब्दको अपनाया। पहलेकी जनगणनाओमें चुबरा लोग कोई खास धर्म न लिखानेपर हिन्दुओमें सम्मिलित कर लिये जाते थे। १९४१ की सेंसस रिपोर्टमें यह भी कहा गया है कि वे सभी जो आदिधर्मी लिखे गये हैं, दलित जातियोके हैं पर हिन्दू होनेका दावा नही करते। इस प्रकार अन्तकी दोनों जनगणनाएं आदिधर्मियोको हिन्दुओसे पृथक् कर उक्त प्रान्तमे हिन्दुओंकी संख्या घटानेमे कृतकार्य हुई है।

पञ्जाबकी जनगणनाका अध्ययन करनेपर हम देखते है कि सिन्ध, पश्चिमोत्तर सीमाप्रान्त और बलूचिस्तानकी स्थितिसे भिन्न जहां मुसलमानोंका अत्यधिक बहुमत—सारी आबादीपर क्रमशः ७०.७५, ९१.७९ और ८७.५१ प्रतिशत—है, पञ्जाबमें उनका बहुमत सिर्फ थोड़ा-सा—पूरी आबादीपर ५७.०६ प्रतिशत—है। उन प्रान्तोंकी तरह पञ्जाबके प्रत्येक जिले या डिवीजनमें भी उनका बहुमत नहीं है। इसके विपरीत कुछ ऐसे जिले और डिवीजन भी

हैं जिनमें गैर-मुसलमानोंका अत्यधिक बहुमत है। लीगके लाहोर-प्रस्तावमें सिर्फ 'संख्या-प्रधान' शब्दका प्रयोग किया गया है, उसमें ऐसा कोई शब्द नहीं है जिससे यह व्यक्त हो कि वह संख्या कितनी हो। इसलिए इससे 'अत्यधिक' और 'अल्प' बहुमत—दोनों अर्थ ग्रहण किये जा सकते हैं। लेकिन विभाजनके उद्देश्य और कारणपर ध्यान देनेपर इसी परिणामपर पहुंचना पड़ता है कि अत्यधिक बहुमतकी ही बात सोची गयी होगी, अल्प बहुमतकी नहीं। पार्थक्यका उद्देश्य मुसलमानोके लिए ऐसा अवसर प्रस्तुत करना है जिसमे वे अपनी धारणाके अनुसार अपनी प्रगति कर सकें। कारण यह है कि वे भिन्न राष्ट्रके हैं और उनकी संस्कृति, सामाजिक जीवन, दृष्टिकोण और धर्म इस देशके अन्य निवासियोसे भिन्न है, इसलिए उनके लिए पृथक् देश होना चाहिये जिसमे वे ही सर्वेसर्वा हो। जब कि बलवती अल्पसंख्यक जाति बहुसंख्यकमें मिल जानेके लिए तैयार न होकर अपनी धारणाके अनुसार अपनी उन्नति करनेके लिए निश्चित अधिकारका प्रयोग करनेको उद्यत होगी उस हालतमे अल्प बहुमत होनेपर मुसलमान अपनी धारणाके अनुसार अपनी प्रगति करनेमे समर्थ न हो सकेंगे। भिन्न धर्म और उसके फलस्वरूप सस्कृति, सामाजिक जीवन और दृष्टिकोण भिन्न होनेके कारण यदि अल्प बहुमतवाली जातिको अपने लिए एक पृथक् स्वदेशका अधिकार है तो नाममात्रके लिए अल्प-मतवाली जातिको इस अधिकारसे वञ्चित रखना न्याय्य और उचित नही कहा जा सकता। यह भी ध्यान देनेकी बात है कि यह मानते हुए कि चारो पश्चिमोत्तर प्रान्तोंमें परस्पर भिन्नता है, लाहौर-प्रस्तावमें कहा गया है कि स्वतन्त्र राजमें सम्मिलित होनेवाली इकाइयां स्वशासित और प्रभुसत्तायुक्त होगी। सम्प्रति यदि इस प्रश्नपर विचार न कर कि बड़े बड़े राजमे सम्मिलित होनेवाली इकाई किस सीमातक और किस रूपमें प्रभुसत्तायुक्त होगी, हम अपनेको केवल सम्मिलित होनेवाली इकाइयोंके आपसके सम्बन्धके प्रश्नतक ही सीमित रखें, तो इसमे कोई सन्देह नही रह जाता कि प्रत्येक इकाईको आन्तरिक शासनके सम्बन्धमे अपने ही ऊपर निर्भर करना पड़ेगा। दूसरे शब्दोमें, अगर स्वतन्त्र मुस्लिम राजोंके विधानका स्वरूप लोकतन्त्रमूलक अर्थात् ऐसा हो कि राजके नागरिकोको

जाति, मत और रंगका कोई भेद-भाव न कर अपना शासक चुनने और इस प्रकार अपने विचारों और इच्छाके अनुसार शासन-व्यवस्था करनेका अधिकार प्राप्त हो तो राजमें कुछ ही अधिक संख्यावाले मुसलमानोंकी धारणाके अनुसार अल्प बहुमतवालेके लिए शासन चला सकना व्यवहारतः असम्भव नही तो अत्यन्त कठिन अवश्य होगा। इसलिए यह दावा न्याय्य और उचित ही है कि वर्तमान पञ्जाब प्रान्त, जिसमे मुसलमानोका अल्प बहुमत—५७ प्रतिशत—है, लाहौर-प्रस्तावकी शर्तको पूरा नही करता और उसे पश्चिमोत्तरके स्वतन्त्र मुस्लिम राजमे न तो सम्मिलित करना चाहिये और न वह किया ही जा सकता है। यदि यह शर्त स्वीकार कर ली जाय कि कोई भू-भाग पृथक् किया जा सकता है या नही, इसका निश्चय करते समय आबादीपर विचार करनेके लिए सारा प्रान्त इकाईके रूपमें लिया जाय, तब हम इसी परिणामपर पहुंचते है, इसीलिए 'एक पञ्जाबी' ने अपनी 'कन्फेडेरेसी आव इण्डिया' नामक पुस्तकमे और श्री एम० आर० टी० ने अपने लेखमे गणना करते समय पञ्जाबके सारे प्रान्तको न लेकर उसके कुछ ऐसे भाग पृथक् कर दिये है जिनमे उनके अनुसार मुसलमानोका अल्पमत है।

'अगर अम्बाला डिवीजन और पूर्वी हिन्दू और सिख रियासतें पञ्जाबसे अलग कर दी जाय तो इसकी आबादी २ करोड़ ८५ लाखसे घटकर २ करोड़ १० लाख हो जायगी, पर मुसलमानोकी संख्या ५५ से बढ़कर ७० प्रतिशत हो जायगी। अगर पश्चिमोत्तर प्रान्तका सारा मुस्लिम क्षेत्र एक साथ मिलाकर देखा जाय तो यह सख्या और भी बढ जायगी। अगर प्रस्तावित विधिसे पूर्वी सीमाका सुधार कर दिया जाय तो पश्चिमोत्तर क्षेत्रकी कुल आबादी ३॥ करोड़ हो जायगी जिसमें २ करोड़ ७० लाख मुसलमान और ८० लाख गैर-मुसलमान होगे। मुसलमानोंका ७७ प्रतिशत अनुपात स्थायी और दृढ़ सरकार बनाये रखनेके लिए पर्याप्त होगा; और यह उद्देश्य आबादीकी अदला-बदली किये बिना ही सिद्ध हो सकता है।'*

---

* 'इण्डियाज प्राब्लम आव हर फ्यूचर कान्स्टिट्यूशन'' पृष्ठ ३३-४।

'पञ्जाबकी पूर्वी सीमाका प्रश्न बहुत महत्त्वपूर्ण विषय है, और हो सकता है कि इस सम्बन्धमें कभी मुसलमानोंमें मतभेद भी उत्पन्न हो जाय। कुछ लोग तो यमुना नदी या गंगा और सिन्धके मैदानोको पृथक् करनेवाली उच्च भूमिको सिन्दिस्तानकी इस इकाई और पूर्वमें हिन्दू भारतके बीचकी प्राकृतिक सीमा मान सकते है, और कुछ लोग उक्त सीमा इस प्रकार निर्धारित करना चाहेंगे जिसमें कांगड़ाका सारा पूर्वी हिन्दू भाग होशियारपुर जिलेके कुछ भाग और सारा अम्बाला डिवीजन पञ्जाबसे अलग हो जायं। पहले मतके सम्बन्धमें कहा जा सकता है कि भौगोलिक दृष्टिसे यमुना नदी या उक्त उच्च भूमि हिन्दुस्तान और सिन्दिस्तानके बीच प्राकृतिक सीमाका काम दे सकता है, पर चूंकि 'इण्डस रीजन्स फेडरेशन' (सिन्ध-प्रदेश-सघ) का आन्तरिक अभिप्राय हिन्दू तत्वको कम कर साम्प्रदायिकताको घटाना और मुसलमानोंका कृषि, व्यवसाय और संस्कृति सम्बन्धी हित संरक्षित करना है इसलिए यमुना नदी या उक्त उच्च भूमिको जो दक्षिण-पूरबकी ओर दिल्ली होते हुए अरावली पहाड़ीतक चली जाती है, सीमा माननेसे इस उद्देश्यकी सिद्धि न हो सकेगी, क्योकि इससे बहुत अधिक हिन्दू जनसंख्यावाले चीफ कमिश्नरका दिल्ली प्रान्त और अम्बाला डिवीजन आदि हमारे प्रदेशमें चले जायगे जिससे आबादीमे हिन्दुओका अनुपात बढ जायगा जो हमारे हितोके लिए घातक सिद्ध होगा। इस प्रकारकी सीमा होनेपर हिन्दू भारतसे हमारा सांस्कृतिक बिलगाव नही हो सकेगा। हिन्दू-भारतके हिन्दुओंके साथ हमारे प्रदेशके अन्दर बहुत बड़ी हिन्दू आबादीका प्राकृतिक सम्बन्ध होनेके कारण हमारी कठिनाइया बढ़ जायंगी। हिन्दू-भारतके अपने भाई-बन्धुओके साथ उनकी सहानुभूति बराबर बनी रहेगी। इस महत्वपूर्ण तथ्यके विचारसे हमलोगोके लिए दूसरा मत, जिसके अनुसार अत्यधिक हिन्दू बहुमतवाले भूभाग सम्मिलित नही किये जायगे, मान लेना अधिक निरापद होगा।'* 'मुसलमानोको पहले पञ्जाबकी पूर्वी सीमा प्रदेशके लिए दबाव डालना और उपर्युक्त पूर्वी हिन्दू भूभागसे इसे अलग कर देनेकी आवश्यकतापर जोर देना चाहिये।'†

---

* 'एक पञ्जाबी'—'कनफेडेरेसी आव इण्डिया' २४३—४। † वही—२४६

दूसरे प्रकारसे विचार करें तो पाकिस्तानका कट्टरसे कट्टर समर्थक भी गम्भीरतापूर्वक यह नहीं चाहेगा कि ऐसा भूभाग जिसमें संख्याकी दृष्टिसे मुसलमानोंका प्राधान्य नहीं है, पाकिस्तानमें सम्मिलित किया जाना उचित और न्याय्य होगा। इस प्रकारकी मांग लाहौर-प्रस्तावके स्पष्ट शब्दो—जिस भागमें संख्याकी दृष्टिसे मुसलमानोंका प्राधान्य है—के विरुद्ध असंगत ही नही होगी, बल्कि उन भूभागोके बहुसंख्यक हिन्दुओके प्रति भी अन्याय्य होगी और वे इसका यही अर्थ लगावेंगे कि यह गैर-मुसलमानोपर मुसलमानोंका शासन लादनेका प्रयत्न है। डाक्टर सैयद अब्दुल लतीफने, जिन्होने सर्वप्रथम भारतका सांस्कृतिक क्षेत्रोमें विभाजन करने और मुसलमानोके अधिकारो और स्वार्थोंको विधानद्वारा सरक्षित करनेकी योजना प्रस्तुत की थी, सर अब्दुल्ला हारूं कमेटीकी योजनाके सम्बन्धमें, जिसमे पश्चिमोत्तर मुस्लिम राजमे सारा पञ्जाब ही नहीं बल्कि दिल्लीका प्रान्त और अलीगढ़ जिलेका कुछ हिस्सा भी सम्मिलित कर लिया गया था, १९४१ में लिखा था—

‘समितिकी रिपोर्टमें पश्चिमोत्तर और पूर्वोत्तर खण्डोंके सीमा-निर्धारणके सम्बन्धमें जो सुझाव रखा गया है उससे मै सन्तुष्ट नही हूं। लाहौर-प्रस्तावका लक्ष्य एक जातीय और ठोस खण्ड या अत्यधिक मुस्लिम बहुमतवाले राज है। लेकिन आपकी समितिके पञ्जाब और अलीगढ़वाले सदस्य तत्वत: गैर-मुस्लिम क्षेत्रोंमें साम्राज्य-विस्तारकी भावनासे पञ्जाबको अलीगढ़तक बढ़ाकर काश्मीरसे जैसलमेरतककी सारी गैर-मुस्लिम रियासतें छेंक लेना चाहते हे जिससे मुसलमानोंका अनुपात घटकर ५५ प्रतिशतपर आ जायगा। इसी प्रकार पूर्वोत्तर खण्डमें वे पूरा बंगाल, आसाम और बिहारका एक जिला सम्मिलित कर लेना चाहते हैं जिससे मुसलमानोंका अनुपात घटकर ५४ प्रतिशत हो जायगा। मेरी समझमें इस प्रकारकी सीमाबन्दी लाहौर-प्रस्तावके भाव और लक्ष्यके विपरीत है, क्योंकि पूर्वोत्तर-खण्डमें ४६ प्रतिशत और पश्चिमोत्तर खण्डमें ४२ प्रतिशत गैर-मुसलमानोंके होनेपर उन राजोंको मुस्लिम राज कहनेका कोई अर्थ नहीं होता और न उनको मुस्लिम क्षेत्र ही कह सकते हैं। इस सीमाबन्दीके लिए

में जिम्मेदार नहीं हूं, क्योंकि यह विषय पूराका पूरा पञ्जाब, सिन्ध और युक्तप्रान्तके सदस्योंपर छोड़ दिया गया था; मैं तो बल्कि छोटे राजोसे ही सन्तोष कर लूंगा जिसमें मुसलमानोंका ८० प्रतिशत बहुमत रहेगा और जिन्हें अपना राज कह सकूंगा।'*

हालांकि यह समिति, जिसने प्रकाश रूपसे लीगके लाहौर-प्रस्तावके अनुसार यह योजना प्रस्तुत की थी, लीगकी परराष्ट्र-उपसमितिके अध्यक्ष हाजी सर अब्दुल्ला हारूं केण्टी. एम. एल. ए. द्वारा संघटित की गयी थी जो बराबर इसके सभापतिके रूपमें कार्य करते रहे और इसने २३ दिसम्बर १९४० को नियमित रूपसे अपनी रिपोर्ट लीगके अध्यक्षको दी थी, फिर श्री जिनाने डाक्टर लतीफ-को लिखे गये अपने १५ मार्च १९४१ के पत्रमे इस समिति और इसकी योजनाको माननेसे इनकार कर दिया।

चाहे मुसलमानोके स्वार्थकी दृष्टिसे विचार किया जाय, जैसा कि श्री एम. आर. टी. और 'एक पञ्जाबी' के ऊपरके अवतरणोंमें स्पष्ट किया गया है, चाहे गैर-मुसलमानोंकी दृष्टिसे जिनका उन क्षेत्रोमे, जिन्हे मुस्लिम राजमे मिलानेकी बात कही जाती है, बहुमत है और जो इस प्रकारके किसी भी प्रयत्नको तत्वतः गैर-मुस्लिम क्षेत्रमे मुसलमानोंकी साम्राज्य-विस्तारकी भावना माननेके लिए बाध्य हे, मुसलमानोंके अल्पमतवाले किसी क्षेत्रको मिलानेके प्रस्तावका विभाजन स्वीकार कर लेनेपर भी, न्याय और औचित्यकी दृष्टिसे न तो अनुमोदन किया जा सकता है, और न स्वीकार हो सकता है।

अब हम पञ्जाबकी स्थितिपर इसी दृष्टिकोणसे विचार करें जो तत्त्वतः लीगके लाहौर-प्रस्तावका दृष्टिकोण है। हम देखते है कि पञ्जाबके मुसलमान डिवीजनमें, जो सिन्ध और बलूचिस्तानसे मिला है, मुसलमानोंका अधिक बहुमत—७५.४१ प्रतिशत—है। इस डिवीजनके प्रत्येक जिलेमें मुसलमानोंका बहुमत है; अगर बलूच-पार-सीमान्त भागको छोड़ दें जिसकी कुल आबादी

* 'दि पाकिस्तान इशू', पृष्ठ ९८–९९।

४०,२४६ है और ९९.६० प्रतिशत मुसलमान है, तो डेरागाजीखां, जिसमें उनका सबसे अधिक अनुपात—८८.१९ प्रतिशत है और लायलपुर जिलेमें सबसे कम ६२.८५ प्रतिशत है। इसी प्रकार रावलपिण्डी डिवीजनमे भी जो पश्चिमोत्तर सीमाप्रान्तसे मिला हुआ है, मुसलमानोका अत्यधिक बहुमत आबादीपर ८५.५२ प्रतिशत है। उनका सबसे अधिक अनुपात अटक जिलेमें ९०.४२ प्रतिशत और सबसे कम रावलपिण्डी जिलेमें ८०.०० प्रतिशत है। अगर विभाजन हुआ तो लाहौर-प्रस्तावके आधारपर ये दोनों डिवीजन पूर्णतः पश्चिमोत्तर मुस्लिम राजमें ले लिये जायगे।

लाहौर डिवीजनकी स्थिति कुछ जटिल है। सारी आबादीपर मुसलमानोंका अनुपात सिर्फ ५८.१८ प्रतिशत है जो किसी भी प्रकार अत्यधिक बहुमत नही कहा जा सकता और इस प्रकार यह मुस्लिम क्षेत्र नही करार दिया जा सकता। इसके सिवा अमृतसर जिलेमे तो वे अल्पसंख्यक है क्योकि वहां उनका अनुपात आबादीपर सिर्फ ४६.५२ प्रतिशत है और गुरुदासपुरमे उनका अनुपात लगभग बराबर—५१.१४ प्रतिशत—है। इस डिवीजनमे उनकी सबसे अधिक आबादी गुजरानवाला जिलेमें ७०.४५ प्रतिशत है तथा लाहौर, सियालकोट और शेखूपुरामें क्रमशः ६० ६२, ६२.०९ और ६३.६२ प्रतिशत है। जिन शर्तों-पर ऊपर विचार किया गया है उन्हें लागू करनेपर मुस्लिम अल्पमतवाला अमृतसर जिला किसी भी हालतमें मुस्लिम क्षेत्र नही माना जा सकता। गुरुदासपुरके सम्बन्धमें मुसलमानो और हिन्दुओं दोनोंका दावा समान रूपसे न्याय्य होगा। अगर अत्यधिक बहुमतका आग्रह न हो और संख्या ही निर्णायक हो तो ६० से ७० प्रतिशततक मुस्लिम बहुमतवाले अन्य जिले मुस्लिम राजकी परिधिमें आ सकते हैं।

जालन्धर डिवीजनकी स्थिति बिलकुल स्पष्ट है। यहां आबादीपर मुसलमानोंका अनुपात सिर्फ ३४.५३ प्रतिशत है और इसके किसी भी जिलेमे संख्याकी दृष्टिसे उनका प्राधान्य नहीं है। उनकी सबसे अधिक संख्या जालन्धर जिलेमें ४५.२३ प्रतिशत है और कमसे कम संख्या कांगड़ा जिलेमें सिर्फ

४.८१ है। सारे डिवीजनमे मुसलमानोंके ३४.५३ प्रतिशतके मुकाबलेमें हिन्दू अकेले ३५.८७ प्रतिशत है हालां कि डिवीजनके ५ जिलोंमेंसे दो जिलों—जालन्धर और फीरोजपुर—मे मुसलमानोंका सबसे अधिक अनुपात—क्रमशः ४५.२३ और ४५.०७ प्रतिशत—है; फिर भी इन जिलोंमें वे अल्पसंख्यक ही है। इसलिए जालन्धर डिवीजनके सम्बन्धमे लीगके लाहौर प्रस्तावकी शर्ते पूरी नही होती और वह मुलतान और रावलपिण्डी डिवीजनोंके साथ (मुस्लिम-क्षेत्रमे) नही जा सकता। लाहौर डिवीजनके जिलोंमें आ जानेसे यह उनसे विलग भी हो गया है।

अम्बाला डिवीजनमे मुसलमानोका अनुपात सिर्फ २८.७ प्रतिशत है और डिवीजनके किसी भी जिलेमे उनका अनुपात ३३.५६ प्रतिशतसे अधिक नहीं है जो गुरगाव जिलेका है। **जहां उनकी आबादी सबसे ज्यादा है।** इसके मुकाबलेमे हिन्दुओका अनुपात डिवीजनमे ६६.०१ प्रतिशत है, सबसे अधिक अनुपात रोहतकमे ८१.६१ प्रतिशत और सबसे कम अम्बालामे ४८.४० प्रतिशत है। इस प्रकार यह स्पष्ट है कि यदि लीगकी शर्त लागू की गयी तो यह डिवीजन और इसका कोई भी जिला पश्चिमोत्तर मुस्लिम राजमें नही आ सकता।

अब सारे पश्चिमोत्तर क्षेत्रपर सामूहिक रूपसे विचार किया जा सकता है। उपर्युक्त कथनानुसार जिन क्षेत्रोको पृथक् करना पड़ेगा उन्हें छोड़ देनेपर स्थिति इस प्रकार होगी—

प्रान्त	कुल आबादी	मुसलमान	प्रतिशत मुस्लिम संख्या
सिन्ध	४५,३५,००८	३२,०८,३२५	७०.७५
पश्चिमोत्तर सीमाप्रान्त	३०,३८,०६७	२७,८८,७९७	९१.७९
बलूचिस्तान	५,०१,६३१	४,३८,९३०	८७.५१

पञ्जाब (जालन्धर और अम्बाला डिवीजन तथा लाहौर डिवीजनका अमृतसर जिला छोड़कर)	१,६८,७०,९००	१,२३,६३,६६९	७३.२८
पश्चिमोत्तर क्षेत्रका योग	२,४९,४५,६०६	१,८७,९९,७२१	७५.३६

पञ्जाबके **गैर**-मुस्लिम क्षेत्रोंको अलग न करनेपर स्थिति यह होगी कि पश्चिमोत्तर स्वतन्त्र राजकी कुल आबादी ३,६४,९३,५२५ में मुसलमानोंकी संख्या २,२६,५३,२९४ या ६२.०७ प्रतिशत होगी। प्रश्न यह होता है कि इतना कम बहुमत होनेपर क्या यह क्षेत्र वस्तुतः मुस्लिम क्षेत्र कहा जा सकता है?

पूर्वी क्षेत्र

अब हम पूर्वी क्षेत्रकी ओर दृष्टिपात करें। पहले बंगालकी स्थितिपर विचार किया जाय।

बर्द्वान डिवीजन—

डिवीजन या जिला	क्षेत्रफल (वर्गमीलमें)	कुल आबादी	मुसलमान	हिन्दू	भारतीय ईसाई	आदिमजातियां	अन्य
बर्द्वान	२,७०५	१८,९०,७३२	३,२६,६६५	१३,९३,८२०	३,२८०	१,५१,३५५	५,६१२
			१७.८१	७३.७२	०.१७	८.००	०.३०
बीरभूम	१,७४३	१०,४८,३१७	२,८७,३१०	६,८६,४३६	३४४	७४,०८४	१४३
			२७.४१	६५.४८	०.०३	७.०७	०.०१
बांकुड़ा	२,६४६	१२,८९,६४०	५५,५६४	१०,७८,५५९	१,२१६	१,५४,२४६	५५
			४.३१	८३.६३	०.०९	११.९७	०.००
मेदिनीपुर	५,२७४	३१,९०,६४७	२,४६,५५९	२६,८१,९६३	३,८३४	२,५३,६२५	४,६६६
			७.७३	८४.०६	०.१२	७.९५	०.१४
हुगली	१,२०६	१३,७७,७२९	२,०७,०७७	१०,९९,५४४	५४३	६९,५००	१,०६५
			१५ ०३	७९.८१	०.०४	५.०४	०.०८
हवड़ा	५६१	१४,९०,३०४	२,९६,३२५	११,८४,८६३	९९४	३,९११	४,२०३
			१९.८८	७९.५०	०.०७	०.२६	०.२९
जोड़	१४,१३५	१,०२,८७,३६९	१४,२९,५००	८१,२५,१८५	१०,२११	७,०६,७२९	१५,७४४
			१३.९०	७८.९८	०.१०	६.८७	०.१५

प्रेसीडेन्सी डिवीजन—

डिवीजन या जिला	क्षेत्रफल (वर्गमीलमे)	कुल आबादी	मुसलमान	हिन्दू	भारतीय ईसाई	आदिमजातियां	अन्य
२४ परगना	३,६९६	३५,३६,३८६	११,४८,१८०	२३,०९,९९६	२०,८२३	५१,०८५	६,३०२
			३२ ४७	६५.३२	०.५९	१.४४	०.१८
कलकत्ता	३४	२१,०८,८९१	४,९७,५३५	१५,३१,५१२	१६,४३१	१,६८८	६१,७२५
			२३.५९	७२.६२	०.७८	०.०८	२.९३
नदिया	२,८७९	१७,५९,८४६	१०,७८,००७	६,५७,९५०	१०,७४९	१२,६७१	४६९
			६१.२६	३७.३८	० ६१	०.७२	०.०३
मुर्शिदाबाद	२,०६३	१६,४०,५३०	९,२७,७४७	६,८४,९८७	३९४	२६,१३८	१,२६४
			५६.५५	४१.७५	०.०२	१.५९	०.०८
जैसोर	२,९२५	१८ २८,२१६	११,००,७१३	७,२१,०७९	१,०५७	४,९७८	३८९
			६०.२१	३९.४८	०.०६	०.२७	०.०२
खुलना	४,८०५	१९,४३,२१८	९,५९,१७२	९,७७,६९३	३,५३८	२,६७५	१४०
			४९.३६	५० ३१	०.१८	०.१४	०.०१
जोड़	१६,४०२	१,२८,१७,०८७	५७,११,३५४	६८,८३,२१७	५२,९९२	९९,२३५	७०,२८९
			४४.५६	५३.७०	० ४१	०.७७	०.५५

राजशाही डिवीजन—

डिवीजन या जिला	क्षेत्रफल (वर्गमीलमे)	कुल आबादी	मुसलमान	हिन्दू	भारतीय ईसाई	आदिमजातिया	अन्य
राजशाही	२,५२६	१५,७१,७५०	११,७३,२८५	३,२९,२३०	१,१६६	६७,२९८	७७१
			७४.६६	२०.९५	०.०७	४.२८	०.०५
दीनाजपुर	३,९५३	१९,२६,८३३	९,६७,२४६	७,७४,६२२	१,८८८	१,८२,८९२	६२५
			५०.२०	४०.२०	०.०८	९.४९	०.०३
जलपाईगोड़ी	३,०५०	१०,८९,५१३	२,५१,४६०	५,५१,६६७	२,५८९	२,७९,२९६	४,५२१
			२३.०८	५०.६३	०.२४	२५.६३	०.४१
दार्जिलिग	१,१९२	३,७६,३६९	९,१२५	१,७८,४९६	२,५९९	१,४१,३०१	४४,८४८
			२.४२	४७.४३	०.६९	३७.५४	११.९२
रंगपुर	३,६०६	२८,७७,८४७	२०,५५,१८६	८,०२,८४९	३८९	१८,२००	१,२२३
			७१.४१	२७.९०	०.०१	०.६३	०.०४
बोगरा	१,८७५	१२,६०,४६३	१०,५७,९०२	१,८७,५३२	२८६	१४,३८७	३५६
			८३.९३	१४.८८	०.०२	१.१४	०.०३
पबना	१,८३६	१७,०५,०७२	१३,१३,९६८	३,८३,७५५	२८५	६,९०६	१५८
			७७.०६	२२.५१	०.०२	०.४०	०.०१
मालदा	२,००४	१२,३२,६१८	६,९९,९४५	४,६५,६७८	४६६	६६,४४९	८०
			५६.७८	३७.७८	०.०४	५.३९	०.०१
जोड़	१९,६८२	१,२०,४०,४६५	७५,२८,११७	३६,७३,८०९	९,२२८	७,७६,७२९	५२,५८२
			६२.५२	३०.५१	०.०८	६.४५	०.४४

ढाका डिवीजन—

डिवीजन या जिला	क्षेत्रफल (वर्गमीलमे)	कुल आबादी	मुसलमान	हिन्दू	भारतीय ईसाई	आदिम जातियां	अन्य
ढाका	२.७३८	४२,२२,१४३	२८,६१,२६१	१३,६०,१३२	१५,८४६	४,०२९	८७५
			६७.२९	३२ २१	०.३८	०.१०	०.०२
मैमनसिह	६,१५६	६०,३३,७२८	४६,६४,५४८	१२,९६,६३८	२,३२२	५९,७२२	५२८
			७७.४४	२१.५२	०.०४	०.९९	०.०१
फरीदपुर	२,८२१	२८,८८,८०३	१८,७१,३३६	१०,०६,२३८	९,५४९	१,३६३	३१७
			६४.७८	३४.८३	०.३३	०.०५	०.०१
बाकरगञ्ज	३,७८३	३५.४९,०१०	२५,६७,०२७	९,५८,६२९	९,३५७	२८४	१३,७१३
			७२.३३	२७.०१	०.२६	०.०१	०.३९
जोड़	१५,४९८	१,६६,८३,७१४	१,१९,४४,१७२	४६,२१,६३७	३७,०७४	६५,३९८	१५,४३३
			७१.५९	२७.७०	०.२२	०.३९	०.०९

चटगांव डिवीजन—

डिवीजन या जिला	क्षेत्रफल (वर्गमीलमे)	कुल आबादी	मुसलमान	हिन्दू	भारतीय ईसाई	आदिमजातिया	अन्य
त्रिपुरा	२,५३१	३८,६०,१३९	२९,७५,९०१	८,७९,९६०	४२८	१,५२४	२,३२६
			७७.०१	२२.८०	०.०१	०.०४	०.०६
नवाखाली	१,६५८	२२,१७,४०२	१८,०३,९३७	४,१२,२६१	५३५	३४	६३५
			८१.३५	१८.५९	०.०२	०.००	०.०३
चटगाव	२,५६९	२१,५३,२९६	१६,०५,१८३	४,५८,०७४	३९५	६,३४८	८३,२९६
			७४.५५	२१.२७	०.०२	०.२९	३.८७
चटगांव पहाड़ी भूभाग	५,००७	२,४७,०५३	७,२७०	४,८८१	६०	२,३३,३९२	१,४५०
			२.९४	१.९८	०.०२	९४.४७	०.५९
जोड़	११,७६५	८८,७७,८९०	६३,९२,२९१	१७,५५,१७६	१,४१८	२,४१,२९८	८७,७०७
			७५.४०	२०.७०	०.०२	२.८४	१.०३
कुल जोड़ बंगाल	७७,४४२	६,०३,०६,५२५	३,३०,०५,४३४	२,५०,५९,०२४	१,११,९२३	१८,८९,३८९	२,४१,७५५
			५४.७३	४१.५५	०.१८	३.१३	०.४०

बंगालके मुस्लिम और गैर-मुस्लिम बहुमतवाले जिले—

डिवीजन या जिला	क्षेत्रफल (वर्गमीलमे)	कुल आबादी	मुसलमान	हिन्दू	भारतीय ईसाई	आदिमजातियां,	अन्य	कुल गैर-मुस्लिम
नदिया	२,८७९	१७,५९,८४६	१०,७८,००७	६,५७,९५०	१०,७४९	१२,६७१	४६९	६,८१,८३९
			६१.२६	३७.३८	०.६१	०.७२	०.०३	३८.७४
मुर्शिदा-बाद	२,०६३	१६,४०,५३०	९,२७,७४३	६,८८,९८७	३१४	२६,१३८	१,२६४	७,१२,७८३
			५६.५५	४१.७५	०.०२	१.५९	०.०८	४३.४४
जैसोर	२,९२५	१८,२८,२१६	११,००,७१३	७,२१,०७९	१,०५७	४,९७८	३८९	७,२७,५०३
			६०.२१	३९.४८	०.०६	०.२७	०.०२	३९.७९
राजशाही डि. (जलपाईगोड़ी और दार्जिलिग छोड़कर)	१५,४००	१,०५,७४,५८३	७२,६७,५३२	२९,४३,६६६	४,०४०	३,५६,१३२	३,२१३	३३,०७०.५१
			६८.७२	२७.८८	०.०८	३.३७	०.०३	३१.२८
ढाका डिवी-जन	१५,४९८	१,६६,८३,७१४	१,१९,४४,१७२	४६,२१,६३७	३७,०७४	६५,३९८	१५,४३३	४७,३९,५४२
			७१.५९	२७.७०	०.२२	०.३९	०.०९	२८.४०
चटगाव डिवीजन	११,७६५	८८,७१,८९०	६३,९२,२९१	१७,५५,१७६	१,४१८	२,८१,२९८	८७,७०७	२०,८५,५९९
			७५.४०	२०.७०	०.०२	२.८४	१.०३	२४.५९
मुस्लिम बहुमतवाले जिलोका जोड	५०,५३०	४,०९,६४,७७९	२,८७,१०,४१२	१,१३,८४,४९५५	८,७३२	७,०६,६१५	१,०८,४७५	१,२२,५४,३१७
			७०.०९	२७.७९	०.१३	१.७२	०.२६	२९.९०

डिवीजन या जिला	क्षेत्रफल (वर्गमीलमे)	कुल आबादी	मुसलमान	हिन्दू	भारतीय ईसाई	आदिम जातिया	अन्य	कुल गैर-मुस्लिम
बर्दवान	१४,१३५	१,०२,२७,३६९	१४,२९,५००	८१,२५,१८५	१०,२११	७,०६,७२९	१५,७४४	८८,५७,८६९
डिवीजन			१३ ९०	७८ ९८	० १०	६ ८७	० १५	८६.१०
२४परगना	३,६९६	३५,३६,३८६	११,४८,१८०	२३,०९,९९६	२०,८२३	५१,०८५	६,३०२	२३,८८,२०६
			३२ ४७	६५ ३२	० ५९	१ ४४	० १८	६७.५३
कलकत्ता	३४	२१,०८,८९१	४,९७,५३५	१५,३१,५१२	१६,४३१	१,६८८	६१,७२५	१६,११,३५६
			२३ ५९	७२ ६२	० ७८	० ०८	२ ९३	७६ ४१
खुलना	४,८०५	१९,४३,२१८	९,५९,१७२	९,७७,६९३	३,५३८	२,६७५	१४०	९,८४,०४६
			४९ ३६	५० ३१	०.१८	० १४	० ०१	५०.६४
जलपाई-गोड़ी	३,०५०	१०,८९,५१३	२,५१,४६०	५,५१,६४७	२,५८९	२,७९,२९६	४,५२१	८,३८,०५३
			२३ ०८	५० ६३	० २४	२५ ६३	० ४१	७६.९१
दार्जिलिंग	१,१९२	३,७६,३६९	९,१२५	१,७८,४९६	२,५९९	१,४१,३०१	४४,८४८	३,६७,२४४
			२.४२	४७.४३	० ६९	३७ ५४	११ ९२	९७.५८
गैरमुस्लिम बहुमतवाले जिलोंका जोड़	२६९१२	१९३४१७४६	४२९४९७२	१३६७४५२९	५६१९१	११८२७७४	१३३२८०	१५०४६७७४
			२२ २१	७० ७०	० २९	६ ११	०.६९	७७.७९

ऊपरकी तालिकापर दृष्टिपात करनेपर देख पडेगा कि बर्दवान डिवीजनमे मुसलमान थोडेसे ही है—आबादीपर उनका अनुपात डिवीजनमे १३.९० प्रतिशतसे अधिक नही है और किसी भी जिलेमे उनकी संख्या २७ ४१ प्रतिशतसे अधिक नही है और सबसे कम तो ४ ३१ प्रतिशत है। बीरभूम और बर्दवानको छोड़कर डिवीजनके सभी जिले बिहार, बगाल और उडीसाके गैर-मुस्लिम बहुमतवाले जिलोसे घिरे हुए है और पहले दो जिलोके भी एक तरफ तो बंगालके मुस्लिम बहुमतवाले जिले और दूसरी तरफ गैर-मुस्लिम बहुमतवाले जिले हैं। यह डिवीजन लाहौर प्रस्तावकी किसी शर्तको पूरा नही करता और किसी भी हालतमे पूर्वी मुस्लिम क्षेत्रमे नही माना जा सकता।

कलकत्ता नगर सहित प्रेसिडेन्सी डिवीजनमे मुसलमानोंका अल्पमत है—हिन्दुओके ५३.७० प्रतिशतके मुकाबलेमे वे सिर्फ ४४ ५६ प्रतिशत है, पर इसके कुछ जिलोमें मुसलमानोका बहुमत है। ये जिले नदिया, मुर्शिदाबाद और जैसोर है जहा उनकी सख्या क्रमश: ६१ २५, ५६.५५ और ६०.२१ प्रतिशत है। २४ परगना और खुलना जिलोमे क्रमश. ३२.४७ और ४९ ३६ प्रतिशत मुसलमानोके मुकाबलेमे अकेले हिन्दू ६५.३२ और ५० ३१ प्रतिशत है। कलकत्तेमे अकेले ७२ ६२ प्रतिशत हिन्दुओके मुकाबलेमे मुसलमानोकी संख्या सिर्फ २३ ५९ प्रतिशत अर्थात् कुल आबादीका चतुर्थांश ही है। आबादीके बलपर यह डिवीजन मुस्लिम क्षेत्रोमे नही जा सकता। अगर जिलेके विचारसे देखा जाय तो भी २४ परगना, कलकत्ता और खुलना उस क्षेत्रमे नही जाते। जहातक कलकत्तेका सम्बन्ध है, यह चारो ओरसे गैर-मुस्लिम बहुमतवाले क्षेत्रोमे घिरा हुआ है और सीमा सम्बन्धी कोई परिवर्तन इसे मुस्लिम क्षेत्रमे परिवर्तित नही कर सकता। इस डिवीजनके सभी जिले गैर-मुस्लिम और मुस्लिम जिलोमे भी मिले हुए है, पर कलकत्ता इसका अपवाद है जिसका किसी भी मुसलमान क्षेत्रमे सम्पर्क नही है।

राजशाही डिवीजनमें जलपाईगोडी और दार्जिलिंग जिलोमे मुसलमानोकी संख्या कम ही है—आबादीपर उनका अनुपात क्रमशः २३.०८ और २.४२

प्रतिशत है। पर उनकी सीमापर दीनाजपुर जिला है जिसमें सिर्फ ५०.१९ प्रतिशत मुसलमान है। डिवीजनके दूसरे जिलोमें मुसलमानोका बहुमत है। उनकी अधिकसे अधिक सख्या बोगरा जिलेमे है जो प्रतिशत ८३.९३ है और कमसे कम मालदा जिलेमे है जो प्रतिशन ५६ ७८ है। मुसलमानोंकी इतनी कम आवादीवाले जलपाईगोडी और दार्जिलिग जिलोको मुस्लिम क्षेत्र कहना उचित न होगा और दीनाजपुर जिला भी, जिसमे मुसलमान सिर्फ ५० प्रतिशत है, मुस्लिम क्षेत्र नही समझा या करार दिया जा सकता।

ढाका डिवीजनकी स्थिति भिन्न है। यहा मुसलमानोकी सख्या ७१ ५९ प्रतिशत है और डिवीजनके प्रत्येक जिलेमे बहुसख्यक मुसलमान ही है। उनकी सबसे अधिक सख्या मैमनसिह जिलेमे ७७ ४४ प्रतिशत और कमसे कम संख्या फरीदपुर जिलेमे ६४.७८ प्रतिशत है।

इसी प्रकार चटगाव डिवीजनमे भी बहुसख्यक मुसलमान ही है, उनकी संख्या ७५ ४० प्रतिशत है। चटगावमे पहाडी भूभागको छोडकर जहा उनकी सख्या सिर्फ २ ९४ प्रतिशत है, सभी जिलोमे वे ही बहुसख्यक ह। पहाडी भूभागमें आदिम जातिया बहुसख्यक है जिनकी सख्या ९४ ४७ प्रतिशत है।

अगर सारे बगाल प्रान्तकी दृष्टिसे विचार किया जाय , जैसा कि इस समय वह पाच डिवीजनो——बर्दवान, प्रेसीडेन्सी, राजशाही, ढाका और चटगावसे—— बना हुआ है——तो मुसलमानोकी सख्या ५४ ७३ प्रतिशन होती है जो इतनी अधिक नही है कि मुसलमान इसे मुस्लिम क्षेत्र कह सके और स्वतन्त्र मुस्लिम राज बनानेका दावा कर सके। लोकतन्त्रात्मक ढगकी कोई सरकार इस राजमे अस्थायी नही हो सकती और ऐसा कोई कारण नही देख पडता जिससे ५४ ७३ प्रतिशत आबादी शेषपर अपनी इच्छा लाद सके, सो भी ऐसे एक क्षेत्रको पृथक् करने जैसे महत्वपूर्ण विषयके सम्बन्धमे जिसका मनुष्यके स्मृतिकालमे कभी भारतसे विच्छेद हुआ ही नही।

अगर हम जिलोपर विचार करें तो बर्दवान डिवीजनके जिलोको मुस्लिम क्षेत्रसे अलग कर देना पड़ेगा और उसी प्रकार प्रेसिडेन्सी डिवीजनके २४ परगना,

खुलना और कलकत्तेको भी जलपाईगोड़ी और दार्जिलिंगके गैर-मुस्लिम बहुमत-वाले जिले भी छोड देने पड़ेगे और सीमावर्ती दीनाजपुर जिलेपर हिन्दू-मुसल्मान दोनोंका बराबर हक है। ढाका तथा चटगांव पहाडी भूभागको छोडकर-चट-गांव डिवीजनके जिले, जिममे मुसलमान बहुसख्यक है, लीगके प्रस्तावके अनुसार मुस्लिम क्षेत्रके भीतर समझे जा सकते है।

सन्दिग्ध स्थितिवाला दीनाजपुर तथा चटगाव पहाडी भूभाग यदि मुस्लिम क्षेत्रमें मान लिये जाय तो बगालके मुस्लिम और गैर-मुस्लिम जिलोका जो रूप होगा वह ऊपरकी तालिकासे स्पष्ट हो जायगा।

यदि दीनाजपुर और चटगावके पहाड़ी भूभागके जिले मुस्लिम क्षेत्रसे पृथक् रखे जायं तो दोनो क्षेत्रोकी स्थितिमे कुछ अन्तर आ जायगा।

जैसा कि ऊपर दिखलाया जा चुका है, मुस्लिम क्षेत्रमे आबादीपर मुसल-मानोंकी सख्या ७० ०९, हिन्दुओकी २ ३ ७९ और आदिम जातियोकी १.७२ प्रतिशत होगी; गैर-मुस्लिम क्षेत्रोमे हिन्दुओकी सख्या ७० ७० या मुस्लिम क्षेत्रके मुसलमानोसे थोडा अधिक, मुसलमानोकी २२ २१ या मुस्लिम क्षेत्रके हिन्दुओसे बहुत कम और आदिम जातियोकी ६ ११ प्रतिशत होगी, सारे प्रान्तमे आदिम जातियोकी कुल आबादी १८,८९, ३८९ या कुल आबादीपर ३.१३ प्रतिशत है, उनकी स्थितिपर पृथक् विचार करना पड़ेगा। आसामके आकड़ोपर विचार करते समय उनकी इस स्थितिपर भी साथ ही विचार किया जायगा क्योकि बगालकी अपेक्षा वहां इनकी समस्या और भी प्रधानता ग्रहण कर लेती है और दोनोंपर एक ही सिद्धान्त लागू होता है।

अब देखा जाय कि आसामकी स्थिति क्या है:—

सुरमा घाटी और पहाड़ी डिवीजन

डिवीजन या जिला	क्षेत्रफल (वर्गमीलमे)	कुल आवादी	मुसलमान	हिन्दू	ईसाई	आदिम जातिया	अन्य
कचार	३,८६२	६,४१,१८१	२,३२,९५०	२,२५,८१६	३,९७१	१,७८,२६४	१७२
			३६.३३	३५.२२	०.६२	२७.८०	०.०३
सिलहट	५,४७८	३१,१६,६०२	१८,९२,११७	११,४९,६१४	३,०५५	६९,९०७	२,००९
			६०.७१	३६.८८	०.०९	२.२४	०.०६
खासी और जैंनिया पहाड़िया	२,३५३	१,१८,६६५	१,५५५	१२,७३९	४२४	१,०३,५६७	३८०
			१.३१	१०.७४	०.३६	८७.२७	०.३२
नागा पहाडिया	४,२८९	१,८९,६४१	५३१	४,१९८	३०	१,८४,७६६	११६
			०.२८	२.२१	०.०२	९७.४३	०.०६
लुसाई पहाड़िया	८,१४२	१,५२,७८६	१०१	२,४४७	५१	१,४७,०४२	३,१४५
			०.०६	१.६०	०.०३	९६.२४	२.०६
जोड़	२४,१२४	४२,१८,८७५	२१,२७,२५४	१३,९४,७१४	७,५३९	६,८३,५४६	५,८२२
			५०.४२	३३.०६	०.१८	१६.२०	०.१४

आसाम घाटी डिवीजन—

डिवीजन या जिला	क्षेत्रफल (वर्गमीलमे)	कुल आबादी	मुसलमान	हिन्दू	ईसाई	आदिम जातियां	अन्य
ग्वालपारा	३,९६९	१०,१८,२८५	४,६८,९२८	३,०६,२२३	२८५	२,३७,९९३	८६०
			४६.२३	३०.१९	०.०३	२३.४६	०.०८
कामरूप	३,८४०	१२,६४,२००	३,६७,५२२	६,९६,५४९	१,१६८	१,९७,९२६	१,०३५
			२९ ०७	५५ ०९	०.०९	१५.६५	०.०८
दरांग	२,८०४	७,३६,७९१	१,२०,९९५	३,४७,७५८	६,६४३	२,६०,७४८	६४७
			१६.४२	४७ १९	० ९०	३५.३८	०.०९
नवगांव	३,८९८	७,१०,८००	२,५०,११३	२,८८,३५१	४,१४७	१,६६,५२५	१,६६४
			३५ १८	४०.५६	० ५८	२३.४२	०.२३
शिवसागर	५.१२८	१०,७४,७४१	५१,७६९	६,६३,१९१	१५,७०७	३,६०,७६८	३,३०६
			४.८१	५९ ८४	१ ४६	३३.५६	०.३१
लखीमपुर	४,१५६	८,९४,८४२	४४,५७९	५,०१,०३६	४,७८५	३,३५,२३०	९,२५२
			४.९८	५५ ८८	० ५३	३७ ४६	१.०३
गारो-पहाड़ियां	३,१५२	२,२३,९६९	१०,३९८	१४,३०७	२९	१,९८,४७४	३६१
			४.६५	६ ३९	० ०१	८८ ७७	०.१६
जोड़	२६,९४७	५९,११,२२८	१३.१३,३००	२७,९७,४१५	३२,७२४	१७,५७,६६४	१७,१२५
			२२.१२	४७.२६	०.५५	२९ ७०	०.२९

डिवीजन या जिला	क्षेत्रफल (वर्गमीलमे)	कुल आबादी	मुसलमान	हिन्दू	ईसाई	आदिम जातियां	अन्य
सदिया सीमान्त	३,३०९	६०,११८	८६४	१८,५०६	५१६	३९,९७४	२५८
भूभाग			१.४३	३०.७८	०.८६	६६.४९	०.४३
बालीपारा	५७१	६,५१२	६१	२,५८८	३१	३,८१२	२०
सीमान्त भूभाग			०.९४	३९.७४	०.४८	५८.५३	०.३१
कुल आसामका	५४,९५१	१,०२,०४,७३३	३४,४२,४७९	४२,१३,२२३	४०.८१०	२४,८४,९९६	२३,२२५
जोड़			३३ ७३	४१.२९	०.४०	२४.३५	०.२३

आसामके मुस्लिम और गैर-मुस्लिम जिले—

जिला या	क्षेत्रफल	कुल आबादी	मुसलमान	हिन्दू	ईसाई	आदिम जातियां	अन्य	कुल गैर-मुसलमान
मुस्लिम बहुमतवाला जिला—								
सिलहट	५,४७८	३१,१६,६०२	१८,९२,११७	११,६९,५१८	३,०५५	६९,९०७	२,००९	१२,२८,४८५
			६०.७१	३६.८८	०.०९	२.२४	०.०६	३९.२७
गैर-मुस्लिम बहुमतवाले जिले—								
सिलहटको	४९,४७३	७०,८८,१३१	१५,५०,३६२	३०,६३,७०९	३७,७५५	२४,१५,०८९	२१,२१६	५५,३७,७६९
छोड़कर सारा आसाम			२१.८७	४३.२२	०.५३	३४.०७	०.३०	७८.१३

ऊपरकी तालिकापर ध्यान देते हुए यह समझना कठिन हो जाता है कि किस आधारपर आसाम प्रान्तके मुस्लिम क्षेत्र होनेका दावा किया जाता है। जहां सारे प्रान्तमें मुसलमानोंकी आबादी सिर्फ ३३.७३ प्रतिशत है वहा हिन्दुओंकी आबादी ४१.२९ प्रतिशत है। अगर जिलोकी दृष्टिसे विचार करें तो सिर्फ एक सिलहट ऐसा जिला है जहां मुसलमानोकी संख्या ६०.७१ प्रतिशत है। दूसरे किसी भी जिलेमें 'वे बहुसख्यक नही है—हालां कि कचार और ग्वालपाड़ा जिलोमें उनकी सख्या अन्य किसी भी सम्प्रदायसे अधिक क्रमशः ३६.३३ और ४६ २३ प्रतिशत है। इसलिए अधिकसे अधिक सिर्फ सिलहट जिलेके मुस्लिम क्षेत्रमे होनेका दावा किया जा सकता है, हाला कि ६०.७१ प्रतिशतका बहुमत अत्यधिक बहुमत नही है। कुछ छोटे जिलोमे आदिम जातियोका अत्यधिक बहुमत है और जिन जिलोमे हिन्दू बहुसख्यक नही हैं वहा वे आदिम जातियोके साथ मिलकर बहुसख्यक हो जाते हैं। प्रान्तके १४ जिलोमेंसे ८ जिलोमे मुसलमानोकी सख्या ५ प्रतिशतसे कम और तीनमे तो १ से भी कम है। किसी क्षेत्रके मुस्लिम क्षेत्रमें होनेका दावा लीग उसी हालतमे कर सकती है जब कि वहां मुसलमान बहुसख्यक हो, पर जहा ऐसा बहुमत नही है वहा यह दावा, अकेले अन्य किसी भी सम्प्रदायसे सख्यामे अधिक होते हुए भी, नही टिक सकता, क्योकि वहा अन्य समुदाय आपसमे मिलकर बहुसंख्यक बन जाते हैं। अन्य किसी सम्प्रदायने भारतसे पृथक् होनेका दावा नही किया है, बल्कि औरोने इस प्रकारके पार्थक्यका विरोध ही किया है। इसलिए केवल मुस्लिम बहुमतके बलपर लीग यह दावा कर सकती है।

इस सम्बन्धमे आदिम जातियोकी स्थितिपर भी विचार करना आवश्यक है। निम्नांकित तालिकासे यह स्पष्ट हो जायगा कि किस प्रकार धर्मके आधार-पर इस बहुत बड़ी संख्याका वर्गीकरण करनेके स्थानपर जातीय मल दिखलाकर हिन्दुओंकी संख्या इस प्रान्तमे घटायी गयी है। उसमें हम यह भी देखेंगे कि किस प्रकार इस प्रान्तमे मुसलमानोकी सख्या बढ़ गयी है।

इसमे देख पड़ेगा कि जहां हिन्दुओंकी आबादी ब्रिटिश आसाममे १९३१ के ५७.२० प्रतिशतसे घटकर १९४१ मे ४१ २९ प्रतिशत और रियासतों सहित सारे आसाममे ५६.२८ प्रतिशतसे घटकर ४१,५४ प्रतिशत हो गयी है वहा आदिम जातियोंकी सख्या १९३१ और १९४१ की जनगणनाओके बीच ब्रिटिश आसाममे ८.२५ प्रतिशतसे बढकर २४.३५ और रियासतों सहित सारे आसाममे १० ७३ प्रतिशतसे बढ़कर २५,८४ प्रतिशत हो गयी है। इस अचानक और महान् अन्तरका कारण बतलाते हुए जनगणनाके आसामके सुपरिण्टेण्डेण्ट श्री० के० डब्ल्यू० पी० माररने लिखा है—

'तथ्य तो यह है कि इस तालिकासे केवल मूल समुदायका पता चलेगा, धर्मका नही। अगर समय और धन पर्याप्त होता तो और ब्योरे भी १९४१ से सम्बन्ध मिलानेके लिए दिये गये होते ; पर इस कटी-छँटी जनगणनामें यह सम्भव नही था। बहुतसे लोग समुदाय और धर्मको एक ही और परस्पर अभेद्य सम्भव नही था। बहुतसे लोग समुदाय और धर्मको एक ही और परस्पर अभेद्य समझते हैं और प्रायः ऐसा होता भी है। पर आदिम जातियोंके सम्बन्धमें धर्म और समुदायका एक होना कोई जरूरी नही है। वर्तमान जनगणनामें उनका वर्गीकरण धर्मके आधारपर न कर समुदायके ही आधारपर किया गया है। गत जनगणनामें जहा किसी खासियाने अपने धर्मके अनुसार हिन्दू, ईसाई, मुसलमान या अनीमीके खानेमे अपना नाम दर्ज कराया होगा, वहा इस बार वह खासीके ही वर्गमे रखा गया है। ईसाइयो और कुछ कम अंशोमें हिन्दुओं और बौद्धोंकी आमदनीमे जो प्रकाश रूपसे इनकी कमी आ गयी है उसका यही कारण है। साथ ही उस अनुपातसे कुछ अधिक ही आदिम जातिवालोंकी आबादीमें वृद्धि हो गयी है।......अगर उपर्युक्त बातोंको ध्यानमे रखकर अंगोकी जांच की जाय तो पता चल जायगा कि इसमे कोई 'भयंकर' प्रवृत्ति नही है। सभी समुदायोंमें भिन्न-भिन्न अंशोमें स्वाभाविक वृद्धि हुई है और किसी भी जिलेमें प्रवासके अतिरिक्त और किसी कारणसे साम्प्रदायिक अनुपातमें उल्लेखनीय परिमाणमें अन्तर नही पड़ा है।

'हिन्दुओं या ईसाइयोंके हटाये जानेका कोई प्रश्न नहीं है। ईसाइयोंके

सम्बन्धमें एक अलग नोट दिया जा रहा है। हिन्दुओंका अनुपात पहले ही जैसा बना हुआ है। वर्ण या धर्मके अभावमें १९३१ की विधि काममें लाने-का यही अर्थ होता है कि आदिम जातियोंकी संख्याका, जो आसामके लिए महत्वपूर्ण विषय है और प्रान्तमें विस्तृत भूभाग संरक्षित रखे जानेका एक प्रधान कारण है, कोई लेखा प्रस्तुत नही है।'*

आदिम जातियोंको अलग खानेमे दर्ज करनेके विचारसे, अगर साथ ही उनका धर्म भी दर्ज कर दिया जाता तो, किसीको झगड़नेकी जरूरत नही थी। सेंसस-सुपरिण्टेडेण्टका कहना है कि 'हिन्दुओका अनुपात पहले ही जैसा बना हुआ है। पर तालिकामे अंकित उनकी सख्या और अनुपातपर दृष्टिपात करने-पर स्थितिका जो चित्र प्राप्त होता है वह नितान्त अशुद्ध और भ्रमोत्पादक है। सेंसस-सुपरिटेण्ट्ने ईसाइयों और हिन्दुओकी सख्याके अधिक ह्रासपर उक्त विवरण देनेके अनन्तर १९४१ की इस कटी-छॅटी जनगणनामें भी ईसाइयोंकी संख्या निश्चित करनेका भरसक प्रयत्न किया है। उन्होने सारे आसाम—ब्रिटिश और रियासती—मे ईसाइयोंकी संख्या ३,८६,००० होनेका अनुमान लगाया है। ईसाइयोंकी जो सख्या दर्ज है वह सिर्फ ६७,१८४ है; शेष ३,१९,००० ईसाई आदिम जातिवाले होंगे जिनकी संख्याका अनुमान १९३१ की जनगणनाके आधार-पर किया गया होगा। इस प्रकार जहां रिपोर्टमे ईसाइयोकी संख्या अल्पा-धिक शुद्ध रूपमें देनेका प्रयत्न किया गया है वहा हिन्दुओकी सख्याके सम्बन्धमे नोटमे दिये गये इन अस्पष्ट शब्दोसे ही पाठकको सन्तोष करना पड़ता है कि हिन्दुओका अनुपात पहले ही जैसा बना हुआ है।'

भारतकी १९४१ की सेंससके कमिश्नर श्री एम. डब्ल्यू, एम. यीट्स, सी. आइ. ई., आइ. सी. एस. ने आदिम जातिवालोका धर्म न दर्ज कर मूल-जाति दर्ज करनेका जो १९४१ में नियम बदला गया, उसकी आवश्यकता बत-लाते हुए लिखा है—'इस्लाम या ईसाई धर्म और अन्य धर्मोंके बीच एक निश्चित दीवार या घेरा होता है जिसे धर्म परिवर्तन करनेवालोंको पार करना ही

---

* सेंसस आव इण्डिया, १९४१, खण्ड ९, आसाम टेबल्स, पृष्ठ २१-२२।

पड़ता है पर अनीमी (प्रेतवादी) और वैसे ही अस्पष्ट हिन्दू धर्मके बीच ऐसी कोई रोक नही है। दोनोके बीच एक चौड़ा भू-भाग है जो किसीका भी नहीं कहा जा सकता। आदिम जातियोको हिन्दू धर्मंमे प्रविष्ट होनेके लिए न तो धर्म-का परिवर्तन करना पडता है न किसी विशेष मतका ग्रहण और न अलग समझे जानेवाले किसी विशेष मतका ग्रहण और न अलग समझे जानेवाले किसी विशेष समाजमे प्रवेश; उसे क्रमशः उक्त भू-भागसे गुजरना पड़ता है जिसमे प्राय. एकसे अधिक पीढिया लग जाती है। कोई विशेषज्ञ ही बतला सकता है कि किस काल या किस पीढीमे कोई व्यक्ति उस स्थानपर पहुँच जायगा जहा वह कह सके कि अर्द्धाधिक भाग पार कर चुका।...इसी दृष्टिसे यह समुदाय इस रूपमे दर्ज किया गया है और उसके सहायकोकी जाच भी इसी दृष्टिसे होनी चाहिये। इस प्रकार ब्रिटिश भारतमे कुल आबादीपर ६४॥ प्रतिशत हिन्दू, २७ प्रतिशत मुसलमान और १ प्रतिशत भारतीय ईसाई है। आदिम जातिया ५$\frac{1}{2}$ प्रतिशत है, पर इस ५$\frac{1}{2}$ प्रतिशतका अनुमानतः २० वा हिस्सा धर्मके विचारसे ईसाई होगा और शेष अल्पाधिक मात्रामे हिन्दुओका-सा रहन-सहन होनेके कारण हिन्दू धर्मकी ओर पड़ेगा। इनमे एक छोरपर तो आदिम जातियोका जीवन बना हुआ है और दूसरे छोपर पूर्ण रूपसे हिन्दुत्वका रंग है। दोनो रूपोके बीचमे सक्रमणकी प्रायः प्रत्येक अवस्था या दरजा है। प्रत्येक प्रान्त या रियासतमे यह अवस्था भिन्न-भिन्न है और वस्तुतः परिणति किस सीमातक हुई है इसका ठीक-ठीक अन्दाजा स्थानीय व्यक्ति ही लगा सकते है।'*

वे पुनः कहते है 'आदिम जातियोके वर्गीकरणका यह सिद्धान्त मान लेनेपर बंगालमे हिन्दुओ और मुसलमानोका अनुपात बहुत कुछ १९३१ जैसा ही है।...बिहार, मध्यप्रान्त और आसामके अकोंसे आदिम जाति-वालोके वर्गीकरण और हिन्दू धर्म ग्रहण करनेका प्रश्न स्पष्ट रूपसे सामने आ जाता है। लेकिन अगर वर्गीकरणमें १९३१ का धार्मिक आधार रखा

---

* 'संसस आव इण्डिया, १९४१, जिल्द १, इण्डिया पृ० २८–२९।

जाता तो इसके फलस्वरूप हिन्दुओके अनुपातमें कुछ भिन्नांशकी कमी पड़ जाती ।❀

विशेषज्ञोके मतानुसार आदिम जातिवालोंका रहन-सहन जितना हिन्दुओसे मिलता है उतना अन्य किसी धार्मिक दलसे नही और हिन्दुत्व ग्रहण करनेकी उनकी प्रकिया भी न जाने किस युगसे चली आ रही है। आदिम जातिवालोंको हिन्दू धर्ममे आत्मसात् करनेका कार्य गत सदियो और सहस्राब्दोमे बड़े पैमानेपर हुआ है और अतीतसे प्रत्यक्ष या विषम रूपमे उनका सम्बन्ध-विच्छेद भी नहीं हुआ है। इसलिए उनका हिन्दुओके साथ गिना जाना उचित ही है, कम-से कम उन्हें तो हिन्दूवर्गमें रखना ही चाहि े जो अपनेको हिन्दू कहते हैं। जैसा कि १९४१ के पहलेकी गणनाओमे होता रहा है।

श्री वेरियर एलविन एम. ए. (आक्सन), एफ. आर. ए. आइ., एफ. एन. आइ, जो कई वर्षोंसे मध्यप्रान्तमे आदिम जातिवालोके साथ रहकर उनकी संस्कृतिका अध्ययन करते रहे है, साइन्स कांग्रेस (विज्ञान सम्मेलन) के १९४४ मे दिल्लीमे हुए ३१ वें अधिवेशनके जाति-विज्ञान और पुरातत्व विभागके अध्यक्ष थे। उन्होने अपने अभिभाषणका विषय 'जातीय विज्ञानमे सत्य' रखा था और कार्यक्षेत्रमे सत्यको ऊँचा स्थान देनेकी आवश्यकता बतलायी थी जिसमें जाति-विज्ञानकी स्थापना हो सके। उनका कहना है 'इसपर जोर देना आवश्यक है क्योंकि भारतमे जाति-विज्ञान सन्देहकी दृष्टिसे देखा जाता है। इसके कई कारण है। जनगणनाके अवसर-पर कुछ विद्वानों और राजनीतिज्ञोके आदि-वासियोको हिन्दुओसे पृथक् करनेके प्रयत्नसे लोगोकी यह धारणा हो गयी है कि विज्ञान राजनीतिक और साम्प्रदायिक प्रयोजनोंकी सिद्धिकी दिशामें लगाया जा सकता है। पूर्वकालमे जन-गणनाके अधिकारी अनीमी हिन्दुत्वको विभिन्न धर्म बतलानेका प्रयत्न कर चुके है। बादमे 'आदिवासीय धर्मानुयायी' का प्रयोग किया जाने लगा और इस समुदायके व्यक्तिसे धर्म-निर्णयके लिए यह प्रश्न करनेका प्रस्ताव किया

❀ वही, पृ० ३०।

गया कि वह हिन्दू देवताकी पूजा करता है या आदिवासियोंके देवताओंकी। यह जांच बिलकुल अर्थहीन थी। कमसे कम दक्षिण भारतके आदिवासियोका धर्म तो प्रत्यक्ष ही वही है जो किसी हिन्दू परिवारका है। हिन्दुत्वमें ऐसे कई तत्व है जिन्हें धर्म-विज्ञानी प्रतवाद (अनीमी) कह सकता है। इसलिए आरम्भसे ही आदिवासियोंको हिन्दू धर्मके खानेमे दर्ज करना चाहिये था। और किसी प्रकारका वर्गीकरण बिलकुल बुरा होगा। भिन्न-भिन्न आदिवासियोके धर्मका ठीक रूप निश्चित कर सकना अनुभवी धर्म-विज्ञोनीके लिए भी कठिन ही होगा, जन-गणनाके समय गिनती करनेवाले मूर्ख और अज्ञान व्यक्तिके लिए तो यह कार्य असम्भव ही है। हम यह जानना चाहते है कि भारतमे कितने आदिवासी है जिसमें हम इस बातपर जोर दे सके कि देशके सम्बन्धमें उनकी भी राय समानरूपसे ली जानी चाहिये। पर हमे न तो धर्मके आधारपर उनकी वास्तविक स्थितिका पता है और न जातिके आधारपर। दुर्भाग्यकी बात तो यह है कि बहुतसे जाति-विज्ञानवेत्ता आदिवासियोंका हिन्दूधर्मसे अन्तर ठीक-ठीक कैसे दिखलाया जाय, इस जटिल प्रश्नमे ही उलझ गये जिससे लोगोंकी दृष्टिमे हमारे विज्ञानका आदर घट गया है।'*

जनगणनाके अधिकारियोने जो सारी गडबड़ी की है, जेसा कि ऊपरके उद्धरणोंमें उन्होने स्वीकार भी किया है, उसके फलस्वरूप कुछ प्रान्तो और रियासतोंकी, और इस प्रकार सारे भारतकी आबादीमे हिन्दुओकी सख्या और अनुपात बहुत घट गया है। भारतके मेंसस कमिश्नर श्री यीट्सका कहना है, 'आदिम जातिवालोकी जाति दर्ज करनेके कारण मुसलमानोंकी संख्यामे प्रायः कोई फर्क नही पड़ा है। गत दशाव्दोंकी तरह ही उनकी सख्यामें क्रमशः वृद्धि ही देख पड़ती है जिसके कारणोपर उन वर्षोकी रिपोर्टोमे कुछ विस्तारके साथ विचार भी किया गया है। बंगालके अशमें कोई खास परिवर्तन नही हुआ है, पजावमें ½ या १ प्रतिशतकी वृद्धि हुई है। सवसे अधिक वृद्धि

---

* साइन्स कांग्रेसके ३१ वें अधिवेशनका कार्यविवरण पृष्ठ ९१।

आसाममें देख पड़ती है जो मैमनसिह या पूर्वी बंगालसे लोगोके प्रवास करनेका सूचक है।*

ऊपरकी तालिकामें आसामकी आबादीके प्रमुख तत्वोकी प्रतिशत संख्या दी गयी है। हिन्दुओकी संख्यामे एकाएक कमी आ जानेका कारण भी ऊपर बतलाया गया है। इसमे देख पड़ेगा कि मुसलमानोका अनुपात निश्चित रूपसे बढ़ता ही गया है। १९११ मे ब्रिटिश आसाममे जहा उनका अनुपात सिर्फ २६·८९ प्रतिशत था, वहा १९४१ मे वह बढकर ३३·७३ हो गया। इस वृद्धिका कारण पूर्वी बगाल, विशेषकर मैमनसिह जिलेसे आसामके जिलोमे मुसलमानोका प्रवास है। १९३१ की सेन्सस-रिपोर्टमे पूरे एक अध्यायमे इस प्रवासके प्रश्नपर विचार किया गया है और यह दिखलाया गया है कि आसाम प्रवासके तीन मुख्य प्रवाह रहे है—(१) आसामके चायके बागीचोमे प्रवास, (२) पूर्वी बगालवालोका प्रवास, (३) नेपालियोका प्रवास। १९३१ की गणनासे आसामके सुपरिण्टेण्डेण्ट श्री सी० एस० मुल्लान एम० ए० आइ० सी० एस० का कहना है 'वर्तमान जन-गणनामे काफी अन्तर पड़ा है। बंगालसे आसाममे प्रवास करनेवालोका सिलसिला तो पहले दशाब्दक जैसा ही रहा है, पर कुलियोकी भर्तीवाले प्रान्तोसे बहनेवाला स्रोत पहलेसे कुछ मन्द पड़ गया है।'† पूर्वी बंगालसे आसाममे प्रवास करनेवालोके सम्बन्धमे आसामकी सेन्सस-रिपोर्टसे एक विस्तृत उद्धरण देना यहा आवश्यक जान पड़ता है।

"गत २५ वर्षोंके अन्दर इस प्रान्तमे जो शायद सबसे महत्वपूर्ण घटना घटित हुई है—ऐसी घटना जो आसामके भविष्यको ही स्थायी रूपसे बदल दे सकती है और आसामी सस्कृति और सभ्यताके ढांचेको १८२० के बर्मी आक्रामकोसे भी अधिक चकनाचूर कर दे सकती है—वह है जमीनके भूखे बगाली प्रवासियोंके, जिनमे अधिकाश पूर्वी बंगाल और विशेषकर मैमनसिह जिलेके मुसलमान है, विशाल झुण्डका हमला। यह हमला १९११ के पहले

---

* सेन्सस आव इण्टिया, १९४१ जिल्द १ इण्डिया टेबल्स पृष्ठ २९

† सेसस आव इण्डिया, १९३१, जिल्द ३ आसाम रिपोर्ट भाग, १ पृष्ठ ४४।

ही आरम्भ हो गया था और पहले पहल उसी सालकी सेन्सस-रिपोर्टमें इस आनेवाले दलका उल्लेख है। लेकिन, जैसा कि हमे अब विदित है, १९११ की गणनामे ग्वालपाडाकी चर-भूमिसे पहले पहल अपना नाम दर्ज करानेवाले ये बगाली प्रवासी पीछे पीछे आनेवाली एक बड़ी सेनाके अग्रसैनिक या स्काउट थे। १९२१ तक पहली सेना आसाममे प्रविष्ट हो गयी थी और ग्वालपाड़ा जिले-पर प्राय: कब्जा भी कर चुकी थी। १९११ और १९२१ के बीचमे घटनाक्रमका १९२१ की सेसस-रिपोर्टमे इस प्रकार वर्णन किया गया है—

"१९११ मे पूर्वी बगालसे आनेवाला शायद ही कोई कृषक ग्वालपाडाके बाहर गया हो, आसाम-घाटीके दूसरे जिलोमे गणनामे जिन लोगोने अपना नाम दर्ज कराया उनकी सख्या सिर्फ कुछ हजार ही थी और उनमे अधिकाश किरानी, व्यापारी और पेशेवर लोग ही थे। गत दशाब्द (१९११–१९२१) मे ये लोग ऊपरकी घाटीमे दूरतक फैल गये तथा निम्न और मध्यभागके चार जिलोमे आबादीका एक विशिष्ट अग हो गये है। ऊपरके दो जिले (शिव-सागर और लखीमपुर) अभी अछूते है। ग्वालपाड़ाकी आबादीमे ये प्रवासी लगभग २० प्रतिशत हो गये है। इनका दूसरा प्रिय जिला नवगाव है जहा इनकी सख्या आबादीपर १४ प्रतिशत है। कामरूपमे, विशेषकर बारपेटा सब-डिवीजनमे परती बड़ी तेजीसे जोतमे लायी जा रही है। दरागमे खोज और बसनेका कार्य अभी आरम्भिक अवस्थामे है, ब्रह्मपुत्रके तटसे वे अभी बहुत दूरतक नही बढ़े है। ......लगभग प्रत्येक ट्रेन और स्टीमरसे इन प्रवासियो-का दल पहुचता है और ऐसा जान पड़ता है कि कुछ ही दिनोके अन्दर ये प्रवासी ऊपरकी घाटीमे नदीसे दूरतक फैल जायंगे।"

"अब हम १९२१ के बादकी हमलेकी प्रगतिकी छान-बीन करे। स्मरण रखनेकी पहली बात तो यह है कि इन प्रवासियोके बच्चे, जिनका जन्म आसाम-मे हुआ, 'आसाममे उत्पन्न' दर्ज किये गये है, इसलिए अकोमे उनका कोई अलग उल्लेख नही है और नीचेकी तालिकामें उन लोगोंकी कुल संख्या दी गयी है जो बंगालमें पैदा हुए थे, केवल प्रवासियोंकी नही।"

"आसाम घाटीके प्रत्येक जिलेमे बसनेवाले बंगालमें उत्पन्न व्यक्तियोंकी १९११, १९२१, और १९३१ की सख्याओंका सूचक चक्र। (म = मैमनसिंह जिला; अन्तके ००० छोड़ दिये गये है।)

वर्ष	ग्वालपाड़ा	कामरूप	दरांग	नवगाव	शिवसागर	लखीमपुर
१९११	७७ (म३६)	४ (म१)	७(म१)	४(म१)	१४ (म ०)	१६ (म ०)
१९२१	१५१(म७८)	४६(म३०)	२०(म१२)	५८(म५२)	१६(म ०)	१४(म ०)
१९३१	१७०(म ८०)	१३४(म ९१)	४१(म ३०)	१२०(म १०८)	१२(म ०)	१९(म ०)

"ऊपरकी तालिकामे मैमनसिह जिलेके अंक कोष्ठकोके भीतर रखे गये हैं क्योंकि यही एक जिला है जो बहुत बडे प्रवासका मुख्य कारण हुआ है।"

"ये अंक विस्मयजनक है और इस बातके सूचक है कि किस आश्चर्यजनक शीघ्रताके साथ आसाम घाटीके निचले जिले मैमनसिहके उपनिवेश बनते जा रहे है।.. मै पहले ही कह चुका हू कि १९२१तक आक्रमणकारियोंके पहले दलने ग्वालपाडापर कब्जा कर लिया था। १९२१–३१ मे आनेवाले दूसरे दलने उस जिलेमे अपनी जड़ मजबूत कर ली है और चटगांवपर कब्जा करनेका काम भी पूरा कर लिया है। कामरूपके बारपेटा सब-डिवीजनका भी पतन हो चुका है और दरांगापर हमला जारी है। शिवसागर अभी पूरा-पूरा बचा हुआ है, पर ऊपर लखीमपुरके कुछ हजार मैमनसिहिया अगली चौकीके रूपमे है जो अगले दशाब्दमे बड़े पैमानेपर काररवाई करनेके लिए आधारका काम दे सकते हैं।"

"पूर्वी बगालके इन प्रवासियो (आसाममें उत्पन्न बच्चों सहित) की, जो इस समय आसामघाटीमे आबाद है, संख्याका ठीक-ठीक अनुमान कर सकना कठिन है। १९२१ मे श्री लायडने उनकी सख्या, आसाममे उत्पन्न बच्चोंके साथ, कमसे कम ३ लाख होनेका अनुमान किया था। मेरे अनुमानसे इस समय यह संख्या ५ लाखसे अधिक ही होगी, सिर्फ मैमनसिहके नये प्रवासियोकी संख्या १ लाख ४० हजार है, पहले आये हुए लोगोकी संख्या बढ़ती ही रही होगी। जैसा कि १९२१ की सेसस-रिपोर्टमे कहा गया है, ये प्रवासी एकाकी नही बल्कि सपरिवार आकर बसे है। यह बात इससे स्पष्ट हो जाती है कि ३ लाख ३८ हजार व्यक्तियोमे जो मैमनसिहमे उत्पन्न और आसामकी गणनामे लिये गये, १ लाख ५२ हजारसे अधिक स्त्रिया है। भविष्यमें क्या होगा? लक्षण तो यही देख पड़ता है कि अभी आक्रमणका अन्त नही हुआ है। अभी आसाममें, विशेषकर उत्तर लखीमपुर सब-डिवीजनमें बहुत-सी जमीन खाली पड़ी हुई है, और काम-रूपमें बहुत बड़ी सख्यामे प्रवासियोके आबाद हो जानेपर भी अभी बहुतोके लिए गुन्जाइश है। मगलादाई सब-डिवीजनमे भी बहुत कुछ प्रगति हो सकती है। ग्वालपाड़ा और नवगांवकी अधिकाश परती अब आबाद हो चुकी

है इसलिए प्रवासियोका रुख कामरूप, मंगलादाई और उत्तर लखीमपुरकी ही दिशामे अधिक होगा। यदि प्रवासियोके मुख्य दलको इस बादवाले सब-डिवीजनकी गैर-आबाद जगहोका पता चला तो उसकी प्रतीक्षा करते हुए हलोके लिए वे सचमुच 'स्वर्णभूमि' सिद्ध होगी।

"यह बात दुःखद तो अवश्य है पर किसी प्रकार असम्भव नही कि अगले ३० वर्षोमे केवल शिवसागर एक ऐसा जिला बच रहेगा जहा आसामीको चैन और आराम मिल सकेगा।"*

'१९४१ की सेसस-रिपोर्टके एक छोटे पर अर्थ-गर्भ वाक्यसे उपर्युक्त कथाका अन्त होता है 'सबसे अधिक वृद्धि (मुसलमानोकी आबादीमे) आसाममे हुई है है और यह मैमनसिह तथा पूर्वी बगालसे होनेवाले प्रवासको प्रकट करती है।'†

आसामको बगालके मुसलमानोका उपनिवेश बनानेकी नीति आसामके सादुल्ला लीगी मन्त्रिमण्डल और बगालके नाजिमुद्दीन लीगी मन्त्रिमण्डलके सरक्षणमे बराबर जारी रही है जो अक्तूबर १९४४ के अन्तिम सप्ताहमे प्रकाशित निम्नलिखित प्रेस-विज्ञप्तिसे स्पष्ट हो जाता है।

"आसाम सरकारने अपने २१ जून १९४० के निश्चयद्वारा १ जनवरी १९३८ के बाद बाहरसे प्रान्तोमे आये हुए लोगोके साथ जमीन बन्दोबस्त करनेपर रोक लगा दी है। इस निश्चयका मैमनसिह जैसे सीमावर्ती जिलोपर गहरा असर पड़ा है जहासे इस प्रान्तमे खेतीके लायक जमीनकी तगी होनेके कारण बहुतसे किसान जमीनकी तलाशमें आसाम जाया करते है। बंगालकी व्यवस्थापिका सभाके गत अधिवेशनमे गवर्नरको इस आशयका आवेदन-पत्र देनेका निश्चय किया गया है कि वे भारत सरकारपर फौरन ऐसी काररवाई करनेके लिए दबाव डाले कि आसाम सरकार यहांसे जानेवाले किसानोके साथ आसाम घाटीमे जमीन बन्दोबस्त करनेपर जो

---

* सेसस आव इण्डिया, १९३१, जिल्द ३, आसाम रिपोर्ट, भाग १, पृष्ठ ४९–५२।

† सेसस आव इण्डिया, १९४१, इण्डिया टेबल्स, पृष्ठ २९।

पाबन्दियां लगायी गयी है उन्हे उठा ले। इसके अनुसार, बंगाल सरकारने अन्तःप्रान्तीय सद्भावना तथा बंगालकी पीड़ित जनताको सहायता पहुँचानेकी दृष्टिसे लगी पाबन्दिया उठा लेने या स्थगित करनेकी प्रार्थना की।

"इसके उत्तरमे आसाम सरकारने कहा कि प्रवासियोके साथ जमीन बन्दोबस्त करनेकी नीति पहलेसे कुछ नरम कर दी गयी है और आम चरागाहोके रूपमे कुछ जिलोमे जो जमीने सुरक्षित है उनमेकी फाजिल जमीन लेकर इस कार्यमे और शीघ्रता लानेका प्रयत्न किया जा रहा है। फिर भी आसाम सरकार इन पाबन्दियोको, कमसे कम उन क्षेत्रोमे जहा जरायम पेशावाले बहुत बडी सख्यामे बिलकुल उठा लेनेमे है असमर्थ है, क्योकि इन लोगोको आशका है कि वहा प्रवासियोका कुछ ही दिनोमे आगमन हो जायगा जिसके कारण वे पहले कष्ट सह चुके है। पर उस सरकारने आश्वासन दिया है कि पाबन्दिया धीरे-धीरे उठाते रहने और अपने प्रान्तके निवासियोके लिए जमीनकी आवश्यकता और आदिम जातियोकी रक्षाका खयाल करते हुए आगन्तुकोको नयी जमीनें देते रहनेका कार्य चलता रहेगा।"

यहा सिर्फ इतना स्पष्ट कर देना आवश्यक है कि इस प्रकारके कार्यद्वारा सादुल्ला-मन्त्रिमण्डल लौटकर पुनः आसामके भूतपूर्व गवर्नर सर राबर्ट रीडके ही निर्णय पर पहुँच गया जिन्होंने बन्दोबस्त-सम्बन्धी नीतिपर पुनः विचार कर सर सादुल्लाके पूर्वगामी मन्त्रिमण्डलकी एक उन्नति-योजना वापस ले ली। हालके एक लेखमें सर राबर्ट रीडने लिखा है—'आसामके आदिवासियोने, जो इस क्षेत्र (आसामघाटी) मे आरम्भमें बसे हुए थे, बगालके मैमनसिह जिलेसे चलनेवाली मुसलमान प्रवासियोकी शक्तिशाली धारासे दबनेके बजाय नयी शक्ति प्राप्त कर ली है। इससे मुसलमानोको तो सन्तोष है पर हिन्दू-समुदायको नही ; क्योकि आसाममें मुसलमानोकी संख्या जितनी बढेगी, पाकिस्तानका पक्ष उतना ही प्रबल होता जायगा।'* प्रचलित सीमापद्धति-(लाइन सिस्टम)

---

* १९ दिसम्बर १९४४ के 'हिन्दुस्तान स्टैण्डर्ड' मे प्रकाशित 'दि बैक ग्राउण्ड आव इमिग्रेशन इन टू आसाम' शीर्षक लेखमें उद्धृत।

के अनुसार आगन्तुक उन्ही क्षेत्रोंतक सीमित रखे गये थे जहाके स्थायी-निवासियोके स्वार्थोंको किसी तरहकी आच न पहुँचती, पर अब उक्त पद्धति-वाली सीमाके बाहर पड़नेवाली जमीनोपर ही नही बल्कि उन सुरक्षित आम चरागाहोंपर भी उनके हिस्से ले लेकर हमला शुरू कर दिया गया है जिनकी पवित्रताकी रक्षा ब्रिटिश शासनके आरम्भसे अभी हालतक होती आयी है। उन्ही सुरक्षित स्थानोको लक्ष्यकर विज्ञप्तिमे कहा गया है कि आसाम सरकारने धीरे-धीरे प्रतिबन्धोको हटाने और आगन्तुकोके लिए नयी जमीने प्रस्तुत करते जानेका आश्वासन दिया है।

इस प्रकार आसामके हिन्दुओके विरुद्ध दोतरफा हमला जारी है—जिसका परिणाम हिन्दू और आदिम जाति दोनोके लिए एकसा होगा—जिनमेसे एकमें तो पूर्वी बगाल, विशेषकर मैमनसिह जिलेके मुसलमानोको आसाममें प्रवास करने और उन जमीनोको लेनेके लिए प्रोत्साहन दिया जाता है जो स्वयं वहांके निवासियोके प्रसारके लिए आवश्यक है और जिन्हे पृथक् कर देनेपर उनका काम चल सकना मुश्किल है, और दूसरेमे आदिम जातियोको पृथक् किया जाता है जिससे हिन्दुओकी सख्याका ह्रास हो जाय और आगे चलकर वे अल्प-संख्यक हो जायें, या कमसे कम ऐसी स्थिति प्रस्तुत हो जाय जिसमे प्रान्तमे कोई समुदाय बहुसख्यकके रूपमे न रह जाय। स्थितिका विपर्यय तो यह है कि १९४१ के सेंसस-कमिश्नर श्री यीट्स आदिम जातियोकी पृथक् गणना इस बिना-पर उचित ठहराते है कि आदिमजातियोकी पूरी सख्या प्राप्त करना आवश्यक था जिनके हितके लिए भारत-शासन-विधानमे धारा ९१ और ९२ की व्यवस्था की गयी और उन सुरक्षित या अशतः सुरक्षित क्षेत्रोका निर्माण किया गया जिनका विशेष दायित्व गवर्नरोपर है।* पर आसामके क्षेत्रोके सम्बन्धमे इस दायित्वका निर्वाह कैसा किया जा रहा है यह आसामके एक अनुभवी आई. सी. एस., श्री एस. पी. देसाईकी रिपोर्टके निम्नलिखित अवतरणसे स्पष्ट हो जायगा।—

"आसामका जोत और माल-सम्बन्धी कानून, जहांतक आगन्तुक दखलकारोका

---

* सेसन आव इण्डिया, १९४१, इण्डिया टेबल, पृष्ठ २८

सम्बन्ध है वस्तुत: उठसा गया है। आगन्तुक स्थानीय कर्मचारियों और अफसरोको अपनी मुट्ठीमे कर लेनेकी बात खुल्लमखुल्ला कहते है। सुरक्षित क्षेत्रोमे रोज ही नये-नये बासके टट्टर और स्थायी झोपडे खडे किये जाते देख पड़ते है। मैने देखा कि आगन्तुक लोग स्थानीय अफसरो (सब-डिवीजनल अफसरसे लेकर नीचेतक) की जरा भी परवाह नही करते, यहांतक कि प्रश्न करनेपर उत्तरतक नही देते। जो थोड़ेसे नेपाली चरवाहे और आसामी पामुआ है वे कही बचावकी सूरत न देखकर सम्राट्के नामकी दोहाई देते है। कहा जाता है कि इसके उत्तरमे कुछ नासमझ आगन्तुकोने कहा था कि राजा तो मै ही हू। वस्तुत: आसामियोके निर्दलनका घड़ा भर गया है, वे यही महसूस करते है कि सारे कानून उन्हीके लिए है, आगन्तुकोके लिए एक भी नही; और सरकार जो उनके हितोकी देखभाल और रक्षा करनेवाली है, अपने कर्तव्यका पालन नही कर सकी। वहाके सभी वर्गोके लोग अधीर हो गये और उनकी बातोसे गहरी कटुता व्यक्त होती है।"*

लीगी मन्त्रिमण्डलकी नीतिसे प्रोत्साहन और व्यवस्थापिका सभाके प्रवासी प्रतिनिधियोंकी सहायता पाकर आगन्तुकोके ये आक्रमणकारी दल तरह-तरहके गैर-कानूनी और उत्पीड़नके काम—ढोरो और भैसोके अग-भग करने और चरवाहोपर हमले और कभी-कभी हत्यातक कर देने जैसे—करने लगे। इसमें स्वभावत: सारे प्रान्तमे क्षोभ और क्रोधकी लहर फैल गयी। नवम्बर १९४४ के व्यवस्थापिका सभाके अधिवेशनमे विरोध पक्षने जो ढाई वर्षके बाद पहले पहल पूर्ण रूपसे शामिल हुआ, अन्य सहयोगियोसे मिलकर इस सरकारकी कड़ी आलो- चना की। सर सादुल्लाके सामने यह सुझाव रखा गया कि एक कान्फरेन्स कर बन्दोबस्तकी सारी समस्याओपर विचार कर लिया जाय और जनताका गहरा असन्तोष दूर करनेके लिए सरकार उचित काररवाई करे। गवर्नरने समुदायोंमे

---

* १९ दिसम्बर, १९४४ के 'हिन्दुस्तान स्टैण्डर्ड'में प्रकाशित 'दि बैक ग्राउण्ड आव इमिग्रेशन इन् टू आसाम' शीर्षक लेखमे उद्धृत।

परस्पर सद्भाव और शान्तिकी इच्छा प्रकट करते हुए इस विषयपर व्यवस्थापिका सभामे भाषण किया। सर साडुल्लाने विरोध-पक्षका सुझाव मान लिया और उसके अनुसार १९४४ के दिसम्बरमे एक कान्फरेन्स की गयी जिसमे दो बातोंके बिचारसे बन्दोबस्तके सारे प्रश्नपर विचार किया गया। एक बात तो प्रवासियोके साथ-साथ, जिनके प्रति पक्षपात होता रहा था, प्रान्तके भूमि- हीन निवासियोके साथ योजनानुसार परती बन्दोबस्त करने और आदिमजातियोके निमित्त पट्टीनुमा जमीन (बेल्ट) सुरक्षित रखनेकी नीति अपनानेकी थी और दूसरी, रक्षित चरागाहोसे दखलकारोको निकाल बाहर कर उनकी अखण्डता बनाये रखनेकी थी। पर कान्फरेन्सके बाद जनवरी १९४५ मे सरकारने जो निश्चय किया उनमें कान्फरेन्समे स्वीकृत सरक्षण सम्मिलित नही किये गये थे और कुछ बातें तो कान्फरेन्सद्वारा निर्धारित मौलिक सिद्धान्तोके ही विपरीत थी। उदाहरणार्थ, कान्फरेन्सने निश्चय किया था कि परती जमीनपर उन्ही प्रवासियोका हक होगा जो १९३८ के पहले आसाममें आये होगे पर सरकारके निश्चयमें रक्षित चरागाहोके कुछ ऐसे दखलकार बरी कर दिये गये थे जो १९३८ के भी बाद आये थे और रक्षित चरागाहोंपर जो दखलकार तीन सालतक काबिज रहकर खेती कर रहे थे उनका कब्जा बनाये रखनेके सम्बन्धमे निश्चय करनेका काम स्थानीय अधिकारियोंको सौप दिया गया। परती जमीनके बन्दोबस्तके सम्बन्धमे यह निश्चय हुआ कि जिन लोगोके पास ५ बीघे जमीन है वे बन्दोबस्तके हकदार न माने जायँ। वहाके पुराने कृषकोमे अधिकांशके पास इतनी जमीन होते हुए भी उन्हें कोई आर्थिक लाभ नही था, पर इस नियमके अनुसार वे बन्दोबस्तके हकसे वंचित रह गये। इसी तरह आदिम जातिवालोंके लिए जो जमीन रक्षित रखी जानेको थी उसका स्पष्ट उल्लेख नही किया गया, इसलिए अनिश्चित गड़बड़ीकी गुजाइश बनी रही। मार्च १९४५ मे व्यवस्थापिका सभाके वजटवाले अधिवेशनमें यह विषय फिर पेश हुआ। इस समयतक विरोध पक्ष कुछ और सबल हो गया था और सर मुहम्मद सादुल्लाको हार और पदत्यागकी आशंका होने लगी थी, इसीलिए उन्होने विरोध-पक्षसे समझौता कर लिया। उन्होंने लीगी माल-मन्त्रीको पृथक् करना स्वीकार कर लिया और विरोध पक्ष

द्वारा चुने गये व्यक्तिको उनके स्थानपर मन्त्रिमण्डलमें रख भी लिया। पर व्यवस्थापिका सभाका कार्यकाल बढ़ जानेपर सर सादुल्लाने समझौतेको शीघ्र कार्यान्वित करनेके बजाय नये निश्चयकी शब्दावली ठीक कर उसे प्रकाशित करनेमें ही तीन महीने लगा दिये। सुनते हैं कि वे तथा मन्त्रिमण्डलके अन्य लीगी सदस्य उनके द्वारा स्वीकृत नीतिके कार्यान्वित किये जानेमें हर तरहके अड़ंगे लगाते रहे और यह भी पता चला है कि मुस्लिम लीगके नेता श्री मुहम्मद-अली जिनाने मन्त्रिमण्डलद्वारा प्रयुक्त किये जानेके लिए कुछ आदेश भी निकाले थे जो समझौतेकी मूलनीतिके विरुद्ध थे। मार्च, १९४५ में सादुल्ला मन्त्रिमण्डल-की प्रवास-सम्बन्धी नीतिपर हार हो गयी और संयुक्त मन्त्रिमण्डल बनाया गया जिसने इस नीतिमे सुधार करनेका वचन दिया। इधर व्यवस्थापिका सभा भी भंग हो गयी है। कहा नही जा सकता, बादमें यह सारी स्थिति क्या रूप ग्रहण करेगी।

इन सब बातोके बावजूद भी प्रान्तमें हिन्दुओंकी सख्या मुसलमानोसे अधिक है। अगर आदिमजातिवालोको भी हिन्दुओके साथ जोड़ लिया जाय तो हिन्दुओं-का और अधिक बहुमत हो जाता है। लीगके प्रस्तावमें कहा गया है कि दोनों क्षेत्रोंमें सम्मिलित होनेवाली इकाइयां स्वशासित और प्रभुसत्तायुक्त होंगी। यह बात समझमे नही आती कि किस प्रकार आसाम, जिसमें बहुसंख्यक समुदाय गैर-मुसलमान और सिर्फ ३३.७३ प्रतिशत मुसलमान होगे, 'स्वशासित और प्रभुसत्तायुक्त' मुस्लिम राज बन सकेगा। अगर कुछ हो सकता है तो वह पूर्वी क्षेत्रमें स्वशासित और प्रभुसत्तायुक्त गैर-मुस्लिम राज हो सकता है। अगर बहु-संख्यक मुसलमानवाला सिलहट जिला पृथक् कर दिया जाय तो प्रान्तके अन्य जिलों और सिलहटका जो रूप होगा वह ऊपरकी तालिकासे स्पष्ट है।

लेकिन पाकिस्तानके समर्थकोंकी सूझका अन्त होनेवाला नही है, और भिन्न-भिन्न कारणोंके आधारपर आसामका दावा किया जाने लगा है। वे है—(१) आसाम उस क्षेत्रकी परिधिके भीतर है जहां मुसलमान बहुसंख्यक हैं। (२) गैर-मुसलमानोमें आदिमजातियोवालोंका प्राधान्य है। (३) प्रान्तमें

मुसलमान बहुसंख्यक हैं। वे इस प्रकार इस परिणामपर पहुँचते हैं—आसाम प्रान्तकी आबादी १ करोड़ ९ लाख है जिसमे हिन्दू केवल ४५ लाख या ४१.५ प्रतिशत है। इस प्रकार सारी आबादीके लिहाजसे हिन्दू अल्पसंख्यक है। कुल आबादीमें २९ लाख या २६.७ प्रतिशत आदिमजातिवाले है जो सभ्य राजके सदस्योंकासा जीवन नहीं व्यतीत कर सकते इसलिए सारे वैधानिक विषयोके विचारमें उन्हें छोड़ देना पड़ेगा। अल्पसंख्यकका वैधानिक अधिकार आबादीमे जो सभ्य वर्ग है उसके हाथमें होना चाहिये जो हिन्दुओ या मुसलमानोका है जिनकी सम्मिलित संख्या ८० लाख है। आसामके बागों और तेलकी खानोमे मजदूरोंकी बहुत बड़ी आबादी है पर वे प्रान्तके निवासी नही है और स्थायी भी नहीं हैं। इस अनिधिवासी और विजातीय आबादीको वैधानिक दृष्टिसे छोड़ ही देना पड़ेगा। इन लोगोंकी कुल संख्या १५.२ लाख है। इस सख्याको अलग कर देनेपर राजनीतिक अधिकार केवल ६५ लाख व्यक्तियोतक सीमित रह जाता है। इस प्रकार प्रान्तमें मुसलमान ही, जिनकी संख्या ३४.७५ लाख है, बहुसख्यक ठहरते है। (४) 'बंगालके सीमावर्ती जिलोके किसान अपर आसामके जोतमें न आये हुए भूभागमें आकर बसते जा रहे है। ये किसान अधिकाशतः मुसलमान हैं उन्हें धन देने और उनकी आवश्यकताओंकी पूर्ति करनेके निमित्त मध्यम वर्गके लोग, जो हिन्दू है, दूकानदार, व्यापारी, महाजन, डाक्टर आदिके रूपमे उनके मध्य बसते जा रहे हैं। संक्षेपमें, पूर्वी बंगालके जिले आसामतक फैलते जा रहे हैं। (५) सारे प्रान्तकी ही दृष्टिसे नही बल्कि उसके हर डिवीजनमें मुसलमान बहुसंख्यक है। सुरमाघाटी डिवीजनमे सारी आबादीपर मुसलमानोका अनुपात ५१ प्रतिशत है। यदि आदिमजातियोंको छोड़ दिया जाय तो राजनीतिक अधिकारोंके हकदार लोगोंमें मुसलमानोंका अनुपात ६५ प्रतिशतसे अधिक ही होता है। आसाम घाटीमें कुल आबादीपर हिन्दुओंका अनुपात ४७ प्रतिशत है इसलिए वे वहां स्पष्ट ही अल्पसख्यक है। लगभग सारे अस्थायी श्रमिक आसाम घाटीमें काम करते है और वे सबके सब हिन्दू है, इसलिए वास्तविक साधारण हिन्दू निवासियोंकी संख्या सिर्फ १२.९८ लाख होती है। यहां भी

सारी आबादीके लिहाजसे मुसलमान ही बहुसंख्यक हैं और वे ही राजनीतिक अधिकारोंके हकदार हैं।'*

(६) पूर्वी पाकिस्तानकी बहुत बड़ी आबादीके लिए पर्याप्त भूभाग होना चाहिये, इसके विस्तारके लिए आसाममें क्षेत्र मिल सकेगा।

(७) आसाममे जंगल और खनिज पदार्थ—कोयला, पेट्रोल आदि—बहुतायतसे प्राप्य हैं, इसलिए पूर्वी पाकिस्तानमें आसामको सम्मिलित करना पड़ेगा जिसमे वह आर्थिक और साम्पत्तिक दृष्टिसे शक्तिशाली हो सके।

(८) आसामकी अधिकाश जनता बॅंगला-भाषी है।

अब इन कारणोंपर विचार किया जाय—

संख्या १—खयाल यह किया गया होगा कि मुस्लिम क्षेत्र वही होगा जिसमें मुसलमान बहुसख्यक होगे। पर ऐसा प्रतीत होता है कि मुस्लिम क्षेत्र इससे भिन्न कोई चीज है और उसमें एक ऐसा प्रान्त है जिसमे वे अल्पसंख्यक हैं पर चूकि वह मुस्लिम क्षेत्रके अन्दर पड़ता है इसलिए वह पाकिस्तानमें सम्मिलित कर लिया जाना चाहिये।

संख्या २—दलीलके लिए मानकर पर किसी प्रकार यह स्वीकार न कर कि आदिमजातियां हिन्दू नही है, आसाममे बहुसंख्यक गैर-मुसलमान आदिमजातियां नही बल्कि हिन्दू है।

संख्या ३ और ५—श्री मजीबुर्रहमानके दिये हुए आंकड़ोंसे यह स्पष्ट हो जाता है कि किस प्रकार २९ लाख आदिमजातियाके लोग केवल हिन्दुओंसे पृथक् नही किये जाते बल्कि सभ्य राजके सदस्य होनेके अयोग्य घोषित किये जाते हैं जिसमें सभ्य भागकी सख्या १०९ लाखसे घटकर ८० लाख हो जाय। तिसपर भी हिन्दुओंकी संख्या ४५ लाख होती है और उनका पूरा बहुमत ठहरता

---

* 'एच० एन० बरुआद्वारा 'रिफ्लेक्शन्स आन आसाम कम पाकिस्तान' पृष्ठ ८२-८३ मे मुजीबुर्रहमानके ईस्टर्न पाकिस्तान, इट्स पॉपुलेशन, डिलिमिटेशन एण्ड इक्नामिक्स' का उद्धरण।

है और मुसलमानोंसे तो उनकी संख्या कहीं अधिक है जो सिर्फ ३४.७५ लाख है। जो हिन्दू चायके बागों या तेलकी खानोंमें काम करते हैं और जिनकी संख्या १५.२ लाख है, उनको भी पृथक् कर देना चाहिये जिसमें मुसलमानोंके बारेमें यह घोषित किया जा सके कि वे बहुसंख्यक है। इससे बढ़कर आंकड़ोंकी भूल-भुलैयाकी कल्पना भी कर सकना कठिन है।

इस तर्कमें दोष सिर्फ यह है कि अगर हिन्दुओंकी संख्या घटानेके निमित्त यही या इसी प्रकारकी प्रक्रिया प्रयोगमें लायी जाय तो भारतमे ही हिन्दू घट-कर अल्पसंख्यक हो जायँगे और इस प्रकार सारा भारत ही पाकिस्तान बन जायगा, पश्चिमोत्तर या पूर्वोत्तर क्षेत्रोंको शेष भारतमेंसे पृथक् कर पाकिस्तानके निमित्त सीमित करनेकी कोई बात ही नही रह जायगी।

संख्या, ४,६ और ७—आसाममें जमीन है और मुसलमानोंको जमीनकी जरूरत है। आसाममें जंगल, खानें, पेट्रोलियम, कोयला तथा अन्य प्राकृतिक साधन है और पाकिस्तानको इनकी आवश्यकता है। क्या यही काफी नही है? पाकिस्तानकी जरूरतोंको पूरा करनेके लिए ही क्यों न आसाम पाकिस्तानमें मिला लिया जाय? किसी साम्राज्यवादी और औपनिवेशिक राष्ट्रने किसी दूसरे आधारपर किसी दूसरे देशपर अधिकारका दावा नही किया है। पाकिस्तान ऐसा क्यों न करे? हमें यह भी मालूम हुआ कि भारतको केवल विभाजन नहीं स्वीकार करना है बल्कि पाकिस्तानके लिए आवश्यक पदार्थोंको प्राप्त और प्रस्तुत भी करना है।

अब यो दावा किया जाता है उसके मुताबिक बंगाल आसाम दोनो ब्रिटिश प्रान्त एकमें मिला दिये जायँ तो पूर्वी मुस्लिम क्षेत्रकी साम्प्रदायिक स्थिति इस प्रकार होगी—

नाम	कुल आबादी	मुसलमान	हिन्दू	ईसाई	आदिम जातियां	अन्य	कुल गैरमुसलमान
बंगाल	६,०३,०६,५२५	३,३०,०५,४३४	२,५०,५९,०२४	१,६६,५०९	१८,८९,३८९	१,८६,१६९	२,७३,०१,०९१
		५४.७२	४१.५५	०.२८	३ १३	०.३१	४५.२७
आसाम	१,०२,०४,७३३	३४,४२,४७९	४२,१३,२२३	४०,८१०	२४,८४,९९६	२३,२२५	६७,६२,२५४
		३३.७३	४१.२९	० ४०	२४.३५	०.२३	६६.२७
जोड़	७,०५,११,२५८	३,६४,४७,९१३	२,९२,७२,२४७	२,०७,३१९	४३,७४,३८५	२,०९,३९४	३,४०,६३,३४५
		५१.६९	४१.५१	०.२९	६.२०	०.३०	४८.३०

अगर दोनों प्रान्तोंके सिर्फ मुस्लिम बहुमतवाले जिले लिये जायं तो पूर्वी मुस्लिम क्षेत्रकी साम्प्रदायिक स्थिति इस प्रकार होगी—

नाम	कुल आबादी	मुसलमान	हिन्दू	भारतीय ईसाई	आदिमजाजियां	अन्य	कुल गैर-मुसलमान
बंगाल—							
गैरमुस्लिम	४,०९,६४,७७९	२,८७,१०,४६२	१,१३,८४,४९५	५४,७३२	७,०६,६१५	१,०८,४७५	१,२२,५४,३१७
बहुमतवाले		७०.०९	२७.७९	०.१३	१.७२	०.२६	२९.९०
जिले छोड़कर							
आसाम—							
गैर-मुस्लिम							
बहुमतवाले	३१,१६,६०२	१८,९२,११७	११,४९,५१४	३,००५	६९,९०७	२,००९	१२,२४,४८५
जिले छोड़कर		६०.७१	३६.८८	०.०९	२.२४	०.०६	३९.२७
(सिलहट जिला)							
जोड़							
प्रत्येक जिले	४,४०,८१,३८१	३,०६,०२,५७९	१,२५,३४,००९	५७,७८७	७,७६,५२२	१,१०,४८४	१,३४,७८,८०२
में मुस्लिम बहुमतवाले		६९.४२	२८.४३	०.१३	१.७६	०.२५	३०.५७
पूर्वी क्षेत्रका—							

यदि बंगाल और आसाम पूर्णतः ले लिये जायं तो इसका परिणाम यह होगा कि बंगालमें मुसलमानोंको जो थोड़ो-सा ५४.७३ प्रतिशत—बहुमत है वह घटकर नाममात्रका बहुमत—५१.६९ प्रतिशत—हो जायगा और यदि गैर-मुस्लिम बहुमतवाले क्षेत्र अलग कर दिये जायं तो बंगाल और आसाममें प्रत्येक जिलेमे मुसलमानोके वहुमतके साथ, मुसलमानोंका बहुमत ६९.४२ प्रति-शत हो जायगा; इस प्रकार यदि दोनों प्रान्त पूर्णतः पूर्वी मुस्लिम क्षेत्रमें सम्मिलित कर लिये जाते है तो वह वस्तुतः मुस्लिम क्षेत्र नहीं कहा जा सकता। पूर्वी क्षेत्रमें मुसलमानोकी ६९.४२ प्रतिशत संख्या किसी भी हालतमें ५१.६९ प्रतिशतसे, जो गैर-मुस्लिम भागको पृथक् किये बिना दोनों प्रान्तोंको मिलानेपर होती है, ७५ प्रतिशतके अधिक निकट तो है ही जो श्री जिनाने ऊपर उद्धृत श्री चैपमैनकी मुलाकातमे बतलायी थी।

जनगणनाके आधारपर जो स्थिति प्रकट होती है वह संक्षेपमें इस प्रकार है—

(१) सिन्ध, पश्चिमोत्तर सीमान्त और बलूचिस्तान प्रान्तोमें प्रत्येक प्रान्त और प्रत्येक जिलेमे संख्याकी दृष्टिसे मुसलमानोका प्राधान्य है।

(२) पञ्जाबके रावलपिण्डी और मुलतान डिवीजनोके प्रत्येक जिलेमें और फलतः दोनो डिवीजनोके—जिनमे १२ जिले और यदि बलूच सीमान्त भाग भी एक जिला मान लिया जाय तो १३ जिले है, प्रत्येक जिलेमे संख्याकी दृष्टिसे मुसलमानोंका प्राधान्य है।

(३) लाहौर डिवीजनमे संख्याकी दृष्टिसे मुसलमानोंका प्राधान्य है, पर अमृतसर जिलेमे वे अल्पसख्यक है—उनकी आबादी सिर्फ ४६.५२ प्रतिशत है और गुरुदासपुर जिलेमे उनका नाममात्रका बहुमत है।

(४) जालन्धर डिवीजनमें वे अल्पसंख्यक है; ३५.८७ प्रतिशत हिन्दुओं और २४.३१ प्रतिशत सिखोके मुकाबलेमें उनकी सख्या सिर्फ ३४.५३ प्रति-शत है। यदि आदिधर्मी, जो दलित जातियोमें है, हिन्दुओके साथ गिने जायं तो हिन्दुओंकी सख्या बहुत अधिक हो जायगी।

(५) अम्बाला डिवीजनमें मुसलमान अल्पसंख्यक हैं, ६६.०१ प्रतिशत हिन्दुओंके मुकाबलेमें वे सिर्फ २८.०७ प्रतिशत हैं।

(६) अगर पश्चिमोत्तर क्षेत्रमें सिन्ध, पश्चिमोत्तर सीमान्त, बलूचिस्तान और पञ्जाब—ये चारो प्रान्त पूर्णतः सम्मिलित किये जायं तो मुसलमानोंकी संख्या ६२.०७ प्रतिशत होगी।

(७) अगर अम्बाला और जालन्धर डिवीजन और लाहौर डिवीजनका अमृतसर जिला छोड़ दिये जायं और पश्चिमोत्तर क्षेत्र सिन्ध, पश्चिमोत्तर सीमान्त और बलूचिस्तान—इन तीन प्रान्तों और मुस्लिम बहुमतवाले पञ्जाबके भागों—रावलपिण्डी और मुलतान डिवीजन और अमृतसर जिलेको छोड़कर लाहौर डिवीजन—को मिलाकर बनाया जाय तो मुसलमान ७५.३६ प्रतिशत होंगे।

(८) पूर्वी क्षेत्रमें मुसलमान आसाम प्रान्तमें अल्पसंख्यक हैं। ४१.२९ प्रतिशत हिन्दुओं और २४.३५ प्रतिशत आदिमजातियोंके मुकाबलेमें उनकी संख्या सिर्फ ३३.७३ प्रतिशत है। यदि आदिमजातियोंका सिर्फ वह भाग जिसने हिन्दुत्वको अपना लिया है और अपनेको हिन्दू कहता है, हिन्दुओंके साथ जोड़ दिया जाय तो हिन्दुओंकी संख्या ५० प्रतिशतसे बहुत अधिक हो जायगी। सिर्फ सिलहट जिलेमें मुसलमान ६०.७१ प्रतिशत हैं, अन्य सभी जिलोंमें वे अल्पसंख्यक हैं।

(९) सारे बंगाल प्रान्तकी आबादीमें मुसलमान ५४.७३ प्रतिशत हैं।

(१०) चटगांव और ढाका डिवीजनमें मुसलमान बहुसंख्यक हैं और चटगांव पहाड़ी भू-भागको छोड़कर इन डिवीजनोंके प्रत्येक जिलेमें भी वे बहुसंख्यक हैं।

(११) पूरे राजशाही डिवीजनके विचारसे वे बहुसंख्यक हैं, पर डिवीजनके जलपाईगोड़ी और दार्जिलिंग जिलोंमें वे अल्पसंख्यक हैं—इन जिलोंमें वे क्रमशः २३.०८ और २.४२ प्रतिशत हैं। दीनाजपुर जिलेमें वे सीमान्त रेखापर—सिर्फ ५०.२० प्रतिशत हैं।

(१२) कलकत्ता सहित सारे प्रेसिडेन्सी डिवीजनमें वे अल्पसंख्यक हैं—

५३.७० प्रतिशत हिन्दुओंके मुकाबलेमें वे सिर्फ ४४.५६ प्रतिशत हैं। किन्तु नदिया, मुर्शिदाबाद और जैसोर जिलोंमें वे बहुसंख्यक हैं और खुलना जिलेमें वे आधेसे कुछ ही कम, ४९.३६ प्रतिशत है।

(१३) अगर बंगालके मुस्लिम क्षेत्रमें सिर्फ वे ही जिले हों जिनमें मुसलमानोंका बहुमत है तो उनकी संख्या ७०.०९ प्रतिशत होगी।

(१४) जिन जिलोमें वे अल्पसंख्यक है वहा उनकी संख्या २२.२१ प्रतिशत होगी।

(१५) यदि बंगाल और आसाम प्रान्त सम्पूर्णतः पूर्वी क्षेत्रमें सम्मिलित किये जायं तो मुसलमान कुल आबादीपर ५१.६९ प्रतिशत होंगे।

(१६) यदि उन जिलोंको जिनमे मुसलमान अल्पसख्यक है, पूर्वी क्षेत्रसे अलग रखें तो उनकी संख्या ६९.४२ प्रतिशत होगी।

४

विभाजन : सिख और बंगाली

विभाजनका दावा इस आधारपर किया जाता है कि भारतके कुछ खण्डोंकी आबादीमें मुसलमान बहुसंख्यक हैं। यदि भारतको एक अखण्ड रूपमें देखें, जैसा कि प्रकृतिको भी अभिप्रेत जान पड़ता है और अबतकके ज्ञान और इतिहाससे भी जिसका समर्थन होता है, तो देशी रियासतोंको मिलाकर भारतकी कुल आबादीमें मुसलमानोंकी संख्या २३.८ प्रतिशत और गैर-मुसलमानोंकी ७६.८ प्रतिशत है, और रियासतोको छोड़कर ब्रिटिश भारतकी आबादीमें मुसलमान २६.८ प्रतिशत और गैर-मुसलमान ७३.२ प्रतिशत हैं। यदि पश्चिमोत्तर और पूर्वी क्षेत्रोंके गैर-मुसलमानोंसे, जिनकी संख्या मुस्लिम अल्पमतवाले जिलोंको मिलाकर क्रमशः ३८ और ४८ तथा उन्हें छोड़कर २५ और ३२ प्रतिशत है, उक्त क्षेत्रोंका शेष भारतसे पृथक् किया जाना मान लेनेको कहा जाता है, तब क्यों न मुसलमानोंसे, जो सारे भारतकी आबादीमें सिर्फ २३.८ प्रतिशत और ब्रिटिश

भारतकी आबादीमें सिर्फ २६.७ प्रतिशत है, भारतके अन्दर ही रहनेको कहा जाय जैसे वे इतने दिनोंसे रहते आये है? अगर मुसलमान, जो कुछ भागोंमें ७५ प्रतिशत या इससे भी कम हैं, उन भागोंको जिनमें उनका प्राधान्य है, शेष भारतसे पृथक् करनेकी माग न्याय्य और उचित ठहराते हुए उसे मान लेनेको बाध्य कर सकते है तो गैर-मुसलमान जिनकी आबादी सारे भारतमें ७६.२ और ब्रिटिश भारतमें ७३.२ प्रतिशत है, इस न्याय और औचित्यके आधारपर विभाजनको और किसी दृष्टिसे नही तो शासनगत ऐतिहासिक सम्बन्धकी ही दृष्टिसे क्यों न माननेसे इनकार कर दे?

पूर्वके पृष्ठोंमें मैंने उन भूभागोकी सीमा निर्धारित करनेका प्रयत्न किया है जो लीगके मार्च, १९४० के लाहौर-प्रस्तावमे रखी गयी शर्तोंके मुताबिक पश्चिमोत्तर और पूर्वी मुस्लिम क्षेत्रोंमें पड़ सकते हैं। कोई यह न समझ ले कि मैं अपनी धारणाके अनुसार सीमा-निर्धारण कर रहा हूं। यह तो तभी हो सकता है जब पार्थक्यके लिए प्रस्तावित क्षेत्रोंके अधिवासी विभाजन स्वीकार कर लें, पर अधिवासीका अभिप्राय उक्त क्षेत्रोके केवल मुसलमानोसे नही बल्कि गैर-मुसलमानोसे भी है। तर्कके लिए मैंने मान लिया है कि पश्चिमोत्तर और पूर्वके उक्त क्षेत्रोके बहुसंख्यक मुसलमान विभाजनके पक्षमें है, इसलिए मैंने सिन्ध, पश्चिमोत्तर सीमान्त और बलूचिस्तान प्रान्तोको पूरा-पूरा और पञ्जाबके पश्चिमी जिलों, बंगालके पूर्वी और उत्तरी जिलो और आसामके सिलहट जिलेको मुस्लिम क्षेत्रोंके अन्तर्गत माना है। पर जबतक वे किसी उपायसे स्पष्ट और असन्दिग्ध शब्दोंमे विभाजनके पक्षमें अपनी इच्छा नही प्रकट करते तबतक यह कहना बिलकुल अकारण और बिना बलके नही होगा कि हो सकता है कि इन क्षेत्रोंके बहुसंख्यक मुसलमान भी विभाजनके पक्षमे न हों। मुसलमानोंकी बात अगर अलग छोड़ दें तो भी ऐसे और लोग है जो उपेक्षित होनेके लिए तैयार नही है।

सिखोंका ही प्रश्न ले लिया जाय जो ब्रिटिश पञ्जाब और पञ्जाबकी रियासतोंमें केन्द्रित हैं। उन्होंने पञ्जाबके किसी भागको शेष भारतसे पृथक् करनेकी जो भी योजना हो उसका विरोध किया है और सर्वस्वकी बाजी लगाकर इसका

प्रतिरोध करनेका संकल्प घोषित कर दिया है। पर यदि विभाजन और पार्थक्यके लिए मुसलमानोंने बाध्य किया तो उनका यह आग्रह है कि जिन क्षेत्रोंमें उनकी आबादी और उनके पवित्र स्थान हैं जिनके साथ उनका धार्मिक और ऐतिहासिक सम्बन्ध हैं, वे पृथक् राज बना दिये जायं। उनका दावा है कि यह क्षेत्र पश्चिममें चनाब नदीतक, पूरबमें यमुना नदीतक, दक्षिणमें राजपूतानाकी सीमातक और उत्तरमें काश्मीर राज तथा पर्वतीय भूभागोतक विस्तृत है – श्री वी० एस० भट्टी खालिस्तान नामक पुस्तिकामे इस राजको जो पश्चिममे पाकिस्तान और पूरबमें हिन्दुस्तानके बीच पड़ता है, निवारक राज (बफरस्टेट) मानते हुए इसकी सीमा यह रखते हैं—'प्रस्तावित सिख राज उत्तरमें काश्मीर उत्तर-पश्चिम, पश्चिम और दक्षिण-पश्चिममें चनाब नदी और मुलतानके पीछेके पञ्जाब, दक्षिणमें राजपूताना और कच्छकी खाड़ी और पूरबमें यमुना तथा उत्तर-पूरबमें शिमला पहाड़ीकी रियासतों और कुल्लूतक विस्तृत होगा। चूंकि यह सिख राज खालसाका निवासस्थान होगा इसलिए इसे खालिस्तान कहना अनुपयुक्त न होगा। इसमें मोटे तौरसे पटियाला, नाभा, झींद, फरीदकोट, कपूरथला, कलसिया, मालेरकोटला, शिमला पहाडीकी सिख रियासतें और लुधियाना, जालन्धर, कुल्लू, अम्बाला, फीरोजपुर, लाहौर, अमृतसर, लायलपुर, गुजरानवाला, शेखूपुरा, मांटगोमरी, हिसार, रोहतक, करनाल, मुलतानके डिवीजन या जिले और दिल्ली सम्मिलित होंगे। एक गलियारा भी होगा जिसमें सिन्धकी, बहावलपुर और राजपूतानाकी पतली पट्टियां होंगी जिसमें कच्छकी खाड़ीतक सिखोंके पहुंचनेका मार्ग मिल जाय, क्योंकि बन्दरगाह न होनेपर वे अपने देशमें बन्द हो जायंगे और व्यापारके लिए उन्हे दूसरोंपर निर्भर रहना पड़ेगा।'* श्री सन्तनिहालसिंहने 'हिन्दुस्तान रिव्यू' मे प्रकाशित 'ए प्रोजेक्ट फार पार्टीशनिग दि पञ्जाब' (पञ्जाबके विभाजनकी योजना) शीर्षक लेखमे यह निर्देश किया है कि सिखोंका आग्रह है कि यदि पाकिस्तान बनेगा तो सिखोंका आजाद पञ्जाब भी बनेगा जिसमें इसके उद्भावकोंके अनुसार

* वी० एस० भट्टी 'खालिस्तान', पृष्ठ ४।

३५ लाख सिख ब्रिटिश भारतके और १२॥ लाख रियासतोंके अर्थात् १९४१ की गणनाके अनुसार ५१ लाख सिखोंमेंसे लगभग ४८ लाख सिख होंगे। इस योजनाके अनुसार आजाद पञ्जाबकी सीमाकी तफसील भी बना ली गयी है पर अभी उसका रूप निश्चित नही हुआ है। कहा जाता है कि सीमा निर्धारणका कार्य एक कमीशनको सौपा जाय जिसमे ऐसे व्यक्ति हो जो ऐसे अत्यधिक विवादग्रस्त प्रश्नपर निष्पक्ष होकर विचार कर सकें। ५ जून १९४३ को इस निश्चयकी घोषणा करते समय इस योजनाके जनक—अकाली दलने यह शर्त रखी है कि सीमाका निश्चय करते समय आबादी, सम्पत्ति, लगान, सांस्कृतिक परम्परा और ऐतिहासिक सम्बन्धोपर उचित रूपसे विचार करना आवश्यक होगा। इस योजनाके अनुसार इस राजमें चार कमिश्नरियां होंगी—मुलतान (केवल कुछ हिस्सा), लाहौर, जालन्धर और अम्बाला।

जिन जिलोपर इसका असर होगा वे है—

मुलतान डिवीजन—मुलतान (कुछ हिस्सा), माण्टगोमरी, लायलपुर, झंग और मुजफ्फरगढ़।

लाहौर डिवीजन—लाहौर, शेखूपुरा, गुजरानवाला, अमृतसर, गुरुदासपुर और स्यालकोट।

जालन्धर डिवीजन—जालन्धर, होशियारपुर, कांगड़ा, लुधियाना और फीरोजपुर।

अम्बाला डिवीजन—अम्बाला, करनाल, हिसार, रोहतक, गुरगांव और शिमला।

आजाद पञ्जाब—माण्टगोमरी जिलेसे मिले हुए मुलतान जिलेके कुछ भागको छोड़कर—बसनेवाले लगभग २ करोड मनुष्योंमें भिन्न-भिन्न समुदायोंकी संख्या इस प्रकार होगी—

मुसलमान	...	....	९१,९१,६०८
सिख	...	....	३४,४२,५०८
अन्य गैर-मुसलमान (अधिकांशतः हिन्दू)			७२,४५,३३६
जोड़	....	....	१,९८,७९,४५२

श्री सन्तनिहालसिंहका कहना है "हिन्दुओंके अविश्वाससे मुसलमानोंका मस्तिष्क विषाक्त हुआ।—'पाकिस्तान' सामने आया।"

मुसलमानोके अविश्वाससे सिखोंका मस्तिष्क विषाक्त हुआ—पञ्जाबके विभाजनकी योजना सामने लायी जा रही है। योजनाके मूलमें जो लोग हैं वे दृढ़ संकल्प भी उतने ही हैं जितने राजनीतिक भावनासे अनुप्राणित और संघटन-शक्तिसे सम्पन्न हैं।"

इसलिए अगर पाकिस्तानके लिए आग्रह किया जाता है तो सिख भी उपेक्षित होनेसे इनकार करते हैं और अपनी ही शर्तोंपर विभाजन करानेपर तुले हुए हैं।

स्मरण दिलाया जा सकता है कि १९०५ मे लार्ड कर्जनने बगालका विभाजन कर दो प्रान्तीय सरकारे बनायी—एक आसाम और बंगालके पूर्वी और उत्तरी ज़िलोंको मिलाकर और दूसरी बगालके शेष जिलो, बिहार और उड़ीसाको मिलाकर। इस विभाजनसे साधारणतः बगालके हिन्दुओं और कुछ प्रभावशाली मुसलमानोंको बड़ा क्षोभ हुआ जिससे वर्तमान शताब्दीके प्रथम दशाब्दमे बड़ी खलबली मच गयी। इसका परिणाम यह हुआ कि सारे देशमे राष्ट्रीय चेतना जाग्रत हो गयी और ब्रिटिश वस्तुओका वहिष्कार कर स्वदेशी वस्तुएं अपनानेका आन्दोलन चल पड़ा। ब्रिटिश सरकारने अन्ततः विभाजन रद्द कर दिया, हाला कि वह घोषित कर चुकी थी कि यह बात पक्की हो चुकी है। इससे मुसलमानोमें असन्तोष उत्पन्न हो गया जिनके लिए यह विभाजन उस समय लाभदायक घोषित किया गया था जब कि इसके विरोधमें उठा आन्दोलन एक सीमातक पहुंच चुका था। इस स्थलपर निर्देश यह करना है कि मार्च १९४० के मुस्लिम लीगके प्रस्तावके आधारपर जो विचार हुआ है उसमें बंगालका जो भू-भाग अलग किया जानेवाला है वह १९०५ के विभाजनवाले पूर्वी बंगालसे न्यूनाधिक रूपमे मिलता-जुलता है। जिन बंगाली

हिन्दुओंने अपने जोरदार आन्दोलनके बलपर १९११ में बंग-भंग रद्द कराया, वे सम्भवतः अब भी इसे चुपचाप नही स्वीकार कर लेंगे। इसकी तो और भी सम्भावना नही है कि वे बंगालका भारतसे बिलकुल पृथक् किया जाना सहन कर लेंगे, और इसमें तो उन्हें भारतके अन्य भागोंके हिन्दुओंका भी समर्थन प्राप्त होगा। इसलिए मैंने लीगके लाहौर-प्रस्तावकी व्यापकताका निर्देश भद करके सन्तोष कर लिया है।

पंचम भाग

मुस्लिम राजोंकी उत्पादक योग्यता

१

कृषि

अब हमें मुस्लिम राजोंकी उत्पादक योग्यताके बारेमे विचार कर लेना चाहिये। भारत कृषि-प्रधान देश है और जनसंख्याके बहुसंख्यक लोग—चाहे वे मुस्लिम क्षेत्रके निवासी हों या गैर-मुस्लिम क्षेत्रके—अपने भरण-पोषण और जीविकाके लिए कृषिपर ही निर्भर करते है। इसलिए सबसे पहले दोनो क्षेत्रोकी कृषिकी अवस्थापर ही विचार कर लेना उचित होगा।

क—पूर्वी क्षेत्र—

हम पहले पूर्वी क्षेत्रकी समीक्षा करेंगे। यह क्षेत्र उपजाऊ तो है पर साथ ही इसकी आबादी बहुत घनी है। इसमें प्रति वर्गमील ७८७ व्यक्ति बसते हैं। इसका परिणाम यह है कि जमीन उपजाऊ होते हुए भी इतनी आबादीके भोजनकी पूरी सामग्री नही पैदा करती, जैसा कि नीचे दिखलाया जायगा।

१९४१ मे बंगालकी कुल आबादी ६ करोड़ ३ लाखसे कुछ अधिक थी और जंगल तथा ऊसर और बंजर भूमिको छोड़कर १९३६–३७ में ३५,१०७०,४९ एकड़ खेती लायक जमीन थी। इसमेंसे २४,४६६,३०० एकड़ भूमिमें फसल पैदा हुई थी। यदि खेतीके लायक सभी जमीन जोती-बोयी जाय तो १०,६४०,७४९ एकड़ भूमि और मिल सकती है जो परती रह जाती है। जितनी जमीनमें अभी खेती होती है वह प्रति व्यक्ति ०.४० एकड़ पड़ती है और यदि परती जमीनको भी जोता-बोया जाय तो ०.१७ एकड़ प्रति व्यक्ति और मिल सकती है। इस तरह यदि कुल जमीन जोती बोयी जाय तो भी १९४१ की जनसंख्याके अनुसार प्रति व्यक्ति ०.५७ एकड़ जमीनसे ज्यादा नहीं मिल सकती। यदि मुस्लिम और गैर-मुस्लिम क्षेत्र अलग कर दिये जायँ तो इस परिणामपर पहुँचा जाता है।

	खेतीके योग्य कुल जमीन		जो जोतमें है		जो जोतमें आ सकती है		जोतमें जमीनका औसत	जोतमें आने लायक जमीनका औसत
	एकड़	प्रतिव्यक्ति	एकड़	प्रतिव्यक्ति	एकड़	प्रतिव्यक्ति		
मुस्लिम क्षेत्र	२,३९,४८,४६२	०.५८	१,७८,३३,६००	०.४३	६१,१४,८६२	०.१४	७४.४	२५.६
गैर-मुस्लिम क्षेत्र	१,११,५८,५८७	०.५७	६६,३२,७००	०.३४	४५,२५,८८७	०.२३	५९.४	४०.६

इस तालिकासे प्रकट होता है कि मुस्लिम और गैर-मुस्लिम दोनों क्षेत्रोंमें खेतीके लायक जमीन करीब-करीब बराबर है। लेकिन गैर-मुस्लिम क्षेत्रकी अपेक्षा मुस्लिम क्षेत्रमें खेती योग्य जमीनका अधिकांश भाग काममें लाया जा रहा है परती जमीन बहुत कम है; पर गैर-मुस्लिम क्षेत्रमें परती जमीन बहुत अधिक है। यह स्थिति उस हालतकी है जब हम चटगांव पहाड़ी इलाकोंको भी शामिल कर लेते हैं। यह इलाका बीडर बसा हुआ है और यहां ज्यादातर आदिम जातिया रहती है। इनके पास आबाद खेत अनुपातसे कही ज्यादा है और परती खेत तो २४७,०५३ की आबादीपर १४२२०१७ एकड़ है। अर्थात् इस जिलेमें प्रत्येक निवासीको ५·७५ एकड़ जमीन और मिल जाती है जहां मुस्लिम क्षेत्रमें प्रति व्यक्तिको केवल ०·१४ एकड़ मिल सकती है। यदि यह जमीन यहांके निवासियोंके लिए ही सुरक्षित कर दी जाय, जिसकी बहुत अधिक सम्भावना है, तब तो खेतीके काममे लायी जानेवाली जमीनका औसत ऊपरकी तालिकाकी अपेक्षा और भी कम हो जायगा।

यह खयाल रखनेकी बात है कि जनसंख्या बराबर बढ़ती जा रही है और सबसे ज्यादा वृद्धि पूर्वी क्षेत्र अथवा मुस्लिम क्षेत्रमें हुई है। ढाका (१,५४५ प्रति वर्गमील) मैमनसिंह (९७९ प्रति वर्गमील) फरीदपुर (१,०२४ प्रति वर्गमील) त्रिपुरा (१,५२५ प्रति वर्गमील) नोआखाली (१,३३७ प्रति वर्ग-मील) जिलोंकी आबादी सबसे घनी है। १९३६-३७ मे इन जिलोंमें क्रमशः ९५·६ प्रतिशत ८४ प्रतिशत, ५९ प्रतिशत, ९३ प्रतिशत और ९२ प्रतिशत खेत जोतके अन्दर थे। ढाका और चटगांव कमिश्नरिया पूर्णरूपसे मुस्लिम क्षेत्रमें पड़ती है। १८८१ और १९३१ के बीच यहांकी आबादीमें क्रमशः ६० और ८८ प्रतिशत और १९३१ तथा १९४१ के बीच क्रमशः १९·९ तथा २५.२ की वृद्धि हुई है। राजशाही कमिश्नरीकी भी यही हालत है। इसके दो जिलोंको छोड़कर बाकी सब जिले मुस्लिम क्षेत्रमे पड़ते है। १८८१ और १९३१ के बीच यहांकी आबादीमें २६ फीसदी और १९३१ तथा १९४१ के बीच १२·८ फीसदी वृद्धि हुई है। कलकत्ता और २४ परगनाको छोड़कर

प्रेसिडेंसी कमिश्नरीमें भी इसी तरहकी वृद्धि हुई है यानी १९३१ और १९४१ के बीच १५.६ फीसदी।

इससे स्पष्ट है कि बंगालमें खेतीके लिए और जमीन मिलनेकी सम्भावना अत्यन्त सीमित है। मुस्लिम क्षेत्रमें तो प्रायः शून्य है। इसलिए आबादीकी वृद्धिका साथ खेती नही दे सकती। यदि सम्प्रति जन-संख्याकी भावी वृद्धिके प्रश्नको अलग रख दे तो भी क्या खेतीकी पैदावारसे वर्तमान जनसंख्याका पूरी तरह भरण-पोषण हो सकता है?

नीचे यह दिखलाया गया है कि खाद्य सामग्रीकी बगालमे हमेशा कमी रहती है और इसका करुणाजनक अभाव १९४३ के अकालमें हुआ था। उस महासंकटके अन्य कारणोके अतिरिक्त एक कारण यह भी था। इसमे किसी तरहकी गलतफहमी नहीं होनी चाहिये। सर अजीजुल हकने 'मैन बिहाइण्ड दि प्लाउ' में लिखा है:—'इस प्रान्तके निवासियोंका प्रधान खाद्य चावल है। इनका मुख्य भोजन चावल और मुट्ठी भर दाल तथा लेशमात्र तरकारी, मछली या मांस है। इनका भोजन, जलपान सब कुछ चावल ही है। बंगालकी राष्ट्रीय रक्षा और स्वास्थ्यके लिए चावलकी पैदावार आवश्यक है। लेकिन खेद है कि बंगालकी आवश्यकताभरके लिए भी चावल यहां नही पैदा होता।'*

१९३१ की जनसंख्याके आधारपर उन्होंने यह दिखलानेका यत्न किया है कि यदि भात न खानेवाली जातियोंको छांट दें और बच्चोंके लिए कम हिस्सा रखें, क्योंकि वे बालिगोंकी अपेक्षा कम खाते है—तो भी बंगालमें चावल खाने-वालोंकी संख्या ५,१८,७३,४३६ होगी जिन्हें दोनों वक्त पूरी खूराक चाहिये। "यदि प्रति व्यक्ति प्रतिदिन १४ छटांक चावल भी लगे तो कुल ३१९ लाख मन चावल सालभरके लिए चाहिये। यदि जेलका हिसाब याने १२ छटांक प्रति व्यक्ति ले लें तो भी सालभरके लिए २७३ लाख मन चावल चाहिये। इतने चावलके लिए क्रमशः ४७९ तथा ४१० लाख मन धान १४ छटांक

---

* 'दि मैन बिहाइण्ड दि प्लाउ' पृष्ठ ५१

प्रति व्यक्तिकी पूर्तिके लिए चाहिये।"* १९३६–३७ में २२ लाख एकड़ जमीन आबाद हुई थी। उनके लिए प्रति एकड़ एक मनके हिसाबसे २२ लाख मन बीज भी चाहिये। इस तरह यदि प्रत्येक बालिगका भोजन १४ छटांक माना जाय तो ५०१ लाख मन और यदि १२ छटांक माना जाय तो ४३२ लाख मन धान सालभरके लिए चाहिये। १९२७–२८ से १९३६–३७ तकके आंकड़ोंका हिसाब लगाकर सर अजीजुल हक इस परिणामपर पहुँचे हैं कि १४ छटाक चावल प्रतिदिनके हिसाबसे १६१ और १२ छटांक चावल प्रतिदिनके हिसाबसे ९३ लाख मनका घाटा पैदावारमें रहा। अर्थात् बंगालमें जितने चावलकी जरूरत है उसमे हरसाल कमी रहती है। इस पैदावारमेंसे पुनः निर्यात निकालकर यदि वार्षिक आयातको जोड़ दे तो हमें ढाई लाख टन चावल अर्थात् ३॥। लाख टन धान और मिलता है जो १० लाख मन धानके बराबर है अर्थात् १६१ लाख मनकी कमीको पूरा करनेके लिए १० लाख मन मिलता है। इससे स्थितिमें कोई आशाजनक सुधार नही होता।†

श्रीकालीचरण घोषने अपनी पुस्तक "फेमिन्स इन बंगाल १७७०-१९४३" में हिसाब लगाकर दिखलाया है कि बंगालको प्रतिवर्ष २५७ लाख मन या ९३ लाख ७०, हजार टन चावलकी जरूरत पड़ती है। यह आंकड़ा प्रति-व्यक्ति प्रतिवर्ष ५.५ मनके हिसाबसे है। इस आंकड़ेमें लड़कों, विद्यार्थियों तथा अन्य उन लोगोका हिस्सा कम कर दिया गया है जिन्हे दोनों वक्त चावलकी जरूरत नही पड़ती। इस आवश्यकताकी पूर्ति करनेके लिए केवल ८५ लाख टन ही चावल हरसाल पैदा होता है। इस तरह १० लाख ४६ हजार टन या ३६७ हजार मन चावलकी कमी हरसाल पड़ती

---

* वही पृष्ठ ५२ सर अजीजुल हक।

† सर अजीजुल हक—'दि मैन बिहाइण्ड दि प्लाउ' पृष्ठ ५५–५६। ऊपरके आंकड़ेमे छपाईकी स्पष्ट भूल मालूम होती है। १० लाख मन धानकी जगहपर १ करोड़ मन धान होना चाहिये।

है। सर अजीजुल हकके अनुसार १६०० या ९२० लाख मन चावलकी कमी पड़ती है। उससे तो ये आकड़े कम ही है। इसका कारण यह है कि जहां सर अजीजुल हकने प्रत्येक बालिगके लिए १४ या १२ छटाक चावल प्रति दिन माना है वहां श्री घोषने १० ही छटांक रखा है।

हमलोग ऊपर देख आये है कि बंगालमें खासकर मुस्लिम क्षेत्रमें जन-संख्याकी वृद्धिके अनुपातसे नये खेतोंकी वृद्धि नही हो सकती। इसलिए बगालमें अन्नकी कमी पूरी करनेके लिए एक ही उपाय है कि खेतोकी पैदावार बढ़ायी जाय। वर्तमान अवस्थामें मुस्लिम क्षेत्रमे नहर या अन्य तरीकोसे सिचाईकी सुविधा नहीं है क्योंकि इस प्रान्तकी दोनों नहरें बर्दवान तथा मिदनापुर जिलोमें है। इसलिए मुस्लिम क्षेत्रकी खेती मौसिम और वर्षापर ही निर्भर करती है। पूर्वी मुस्लिम क्षेत्रमें सिचाईका कोई प्रबन्ध हो सकता है या नही, यह भी सन्देहास्पद है। यदि कोई प्रबन्ध किया भी जाय तो उससे समुचित लाभ होनेकी कम ही आशा है; क्योंकि इस क्षेत्रकी अधिकांश भूमि नम है और बाढ़ तथा तूफान यहां ज्यादा आया करते है, सूखा कम पड़ता है। लेकिन विज्ञानके इस युगमें यह आशा करना व्यर्थ नहीं होगा कि जो नदिया संकटका कारण बन रही है उन्हें वशमें लाकर पैदावार बढ़ानेकी कोशिश की जायगी।

खेतीकी पैदावार बढ़ानेके मार्गमें एक दूसरी कठिनाई भी है। खेत छोटे छोटे टुकड़ोंमें बँटे है और उनका बॅटवारा भी होता ही रहता है। सर अजीजुल हकने दिखलाया है कि ५ व्यक्तियोके परिवारके पास औसतन ७ एकड़ जमीन है उसमेंसे ५.३ एकड़ जोतमें है और १.७ एकड़ परती है। कुछ खेत ऐसे भी है जिनमें दो फसलें पैदा की जाती है। दोफसिला खेतोकी गिनती दूने खेतोंमे कर देनेसे प्रति परिवार ६.५ एकड़ भूमि जोतमे आती है। इसमेसे ५ एकड़ धान, ½ एकड़में पाट तथा १ एकड़में अन्य फसले बोयी जाती है।* एक परिवारके पास ७ एकड़ जमीन होनेपर भी वह छोटे-छोटे

* दि मैन बिहाइण्ड दि प्लाउ पृ० ९३-९४।

कई टुकड़ोंमें बँटी है और इन टुकड़ोंके बीचमें अन्य किसानोंके खत भी है। खादके अलावा और कोई दूसरा उपाय नही दिखायी देता जिससे इन छोटे टुकड़ोंकी पैदावार बढ़ायी जा सके। अधिक वर्षाके कारण हरसाल खादका अधिक अंश बह जाता है और बहुत-सी जमीनें अधिक कालतक पानीके अन्दर पड़ी रहती है। इसलिए खादसे उत्पादन बढ़ानेकी गुजायश भी कम ही है। यदि खेती बड़े पैमानेपर की जाय तो खादद्वारा पैदावार बढ़ानेकी अपेक्षा इससे कही अधिक पैदावारकी गुजायश है क्योकि यहाके किसान खेतोके मालिक हैं और उन्हें नियत मालगुजारी देनी पड़ती है। लेकिन इसके लिए सामूहिक खेतीका प्रचार करना होगा। यह सहज काम नही है क्योकि भारतीय किसानोंको—चाहे वे हिन्दू हों या मुसलमान—अपने खेतोसे इतना प्रेम रहता है कि वे दूसरोंके खेतोमें उसे मिला देनेके लिए जल्दी राजी नही होंगे।

ऊख, दाल, तेलहनकी पैदावारके बारेमे विशेष लिखनेकी जरूरत नही है क्योकि इनकी पैदावार यहा बहुत कम होती है और प्रान्तकी आवश्यकता पूरी करनेके लिए दूसरे स्थानोसे ये सामान मँगाने पड़ते है।

मनुष्यके भोजनमें चीनीका प्रमुख स्थान है। एक समय था जब बंगालमें बहुत ज्यादा चीनी पैदा होती थी। लेकिन अब बात वह नही रही। भारतमे जो चीनी पैदा होती है या बाहरसे आती है उसका १३ फीसदी भाग बगालमें खर्च होता है लेकिन बंगालमें केवल २.८ फीसदी चीनी पैदा होती है। १९३५–३६ में इस प्रान्तमें २०,७९,४९४ मन गुड़, और २९,४३,३११ मन सफेद चीनी बाहरसे आयी थी। १९३६-३७ में यहां चीनीकी पैदावार ६,२५,१७५ मन थी लेकिन खर्च ३५,३९,२५० मन।*

समुचित खुराकके लिए तेल भी बहुत आवश्यक पदार्थ है। सर अजीजुल हकने लिखा है—बंगालमे आज सबसे अधिक सरसोके तेलकी खपत है। तो भी १९१४-१५ में केवल १४,५०,१०० एकड़ भूमिमें तेलहनकी खेती की गयी थी और १९३४-३५ में यह घटकर ७२३८०० एकड़ हो गयी अर्थात्

* सर अजीजुल हक—'मैन बिहाइण्ड दि प्लाउ' प० ९१।

२० सालमें आधा घट गयी।* इसलिए यह अचरजकी बात नहीं है यदि १९३०–३१ से १९३९–४० तक तेलहनकी पैदावार केवल २०५००० टन हुई। तेलहनसे एक तिहाई तेल निकलता है। इस हिसाबसे कुल १८,६५५०० मन तेल निकला अर्थात् प्रान्तकी पैदावारसे प्रति व्यक्ति प्रतिवर्ष सिर्फ सवासेर तेल मिला। इस तरह प्रति व्यक्ति प्रतिवर्ष करीब १० सेर तेलकी कमी रह गयी। यह आकड़ा प्रतिदिन प्रति व्यक्तिके लिए आधी छटांकसे कम-पर ही निकाला गया है जो जेलोमें कैदियोंको प्राप्त तेलसे कम है। कहनेका मतलब यह कि बंगालमें आवश्यकताके अनुसार केवल १२.५ प्रतिशत तेल पैदा होता है और पैदावारका अठगुना तेल बाहरसे मंगाना पड़ता है।

दालका हिसाब लगाया जाय तो मालूम होगा कि जरूरतसे पैदावारमे ८० फीसदीकी कमी रहती है और यह बाहरसे मंगानी पड़ती है। यदि १९४३ के अकालसे इस बातका थाह लग सका कि भोजनकी सामग्रीके मामलेमें बंगालकी हालत बड़ी नाजुक है तो उसके साथ ही यह भी प्रकट हुआ कि बिहारके १९३४ के भूकम्पके समान सारा भारत बगालकी मददके लिए किस तरह दौड़ पड़ा। बंगालके अकालकी यह दर्दनाक क़हानी बिहारके भूचालकी भीषणतासे कही क्रूर थी। जो कुछ करना था भूचालने दो मिनटमें ही कर डाला यद्यपि उसका असर बहुत दिनोतक रहा, लेकिन इस अकालमे तो कलकत्ता नगरकी सड़को तथा गलियोमें और देहातोंमें महीनोंतक लोग अन्नके अभावमें भूखकी ज्वालासे तड़प-तड़पकर मर रहे थे। अभी भी बंगाल उस संकटके प्रभावसे मुक्त नही हुआ है और उससे जो शिक्षा हमलोगोको मिली है उसे भूल जाना हानिकर होगा। संकटकालमें जिस तरहकी तात्कालिक सहायता बंगालके आसपास तथा दूरके नगरोंसे मिली उस तरहकी तात्कालिक सहायता शायद किसी स्वतन्त्र देशमे भी नही पहुँच पाती। इस सहायताके कार्यमे हमने सरकारी और गैरसरकारी दोनों सहायक समितियोकी गणना की है।

२४ जुलाई १९४४ को बंगाल लेजिस्लेटिव कौंसिलमें एक प्रश्नका उत्तर

---

* सर अजीजुल हक—'मैन बिहाइण्ड दि प्लाउ' पृष्ठ ३९।

देते हुए खाद्य-मन्त्री श्री सुहरावर्दीने कहा था कि १९४३ की जनवरी और दिसम्बरके बीचमें ५४३३४३७ मन चावल तथा ५२७९३४ मन धान अन्य प्रान्तोंसे बंगालमें आया। इसमेंसे २६१८००९ मन चावल और ३३८५३२ मन धान केवल बिहार और उड़ीसासे आया। १९४३ के अप्रैल और दिसम्बरके बीच बंगालमें २१,१८,७४,१६५ रुपयेकी हर तरहकी खाद्य सामग्री आयी।

केन्द्रीय असेम्बलीमें २८ फरवरी १९४५ के अधिवेशनमें श्री ए. एन. चट्टोपाध्यायके प्रश्नका उत्तर देते हुए खाद्य विभागके सदस्य सर जे० पी० श्रीवास्तवने कहा था कि '१९४४में बंगालकी सरकारने कुल १० लाख टन चावल खरीदा था और नवम्बर १९४३ तथा नवम्बर १९४४ के बीच २३५४७० टन चावल तथा १९४३ की पहली अप्रैल १९४४ की ३० अप्रैलके बीच ४६९,१२७ टन गेहूँ देनेका प्रबन्ध भारत-सरकारने किया था।'*

भारतका एक अंग होने तथा एक केन्द्रीय शासनके अधीन रहनेका लाभ तो बंगालको इस घोर संकट-कालमें मिला। भविष्यमें भी इसी तरहकी सहायताकी आशा की जा सकती है।

'बंगालमें पाट खूब पैदा होता है। पाटसे नगदी आमदनी अच्छी होती है। १९३६-३७ में बंगालमें २१, ५४,८०० एकड़ खेतोंमें पाटकी खेती की गयी थी उसमें २०,११,८०० एकड़ भूमि केवल पूर्वी बंगाल अर्थात् मुस्लिम क्षेत्रमें पड़ती है। १९३६-३७ में पाटकी कुल पैदावार ४०० पौण्डकी १०४ लाख गांठें हुई थी। इनमेंसे ५९ लाख गांठें देशी जिलोंमें खप गयीं और बाकी विदेश भेजी गयी। १९३६-३७ के पहलेके १५ सालोंकी औसत पैदावार प्रायः ९५ लाख गाठ रही है। भारतीय मिलों तथा निर्यातका औसत भी प्रायः वही रहा है लेकिन इन पन्द्रह सालोंके बीच पाटके मूल्यमें अत्यधिक अन्तर रहा है। जहा १९२५-२६ में पाटका मूल्य प्रतिमन १८।।।=) था वहां

---

* हिन्दुस्तान स्टैण्डर्ड २-३-४५

१९३३-३४ में यह गिरकर ३।।) प्रतिमन हो गया था।'* पाट बेची जाने-वाली फसल है। इसीकी आमदनीसे किसानका सारा खर्च—मालगुजारी कपड़ा-लत्ता तथा अन्य आवश्यक खर्च–चलता है, इसीलिए देहातोंके लिए यह महत्वपूर्ण मद है। लेकिन जैसा देखा गया है इसके मूल्यमें बहुत ज्यादा चढ़ाव-उतार हो सकता है और इस विषयमें चढ़ाव-उतारका कारण आमद और मांगकी घटा-बढ़ी नहीं है बल्कि व्यापारियोंकी चालें है। किसान गरीब है। उनके पास साधन नहीं है कि वे अपने मालको अत्यधिक दिनतक रोक कर रख सकें। इसलिए उनकी लाचारीसे फायदा उठाकर देशी मिलोके मालिक तथा विदेशी खरीददार जो भी दाम लगाते है उसीपर गरीब किसानोको पाट बेच देना पड़ता है। इसलिए पाट किसानोंकी आमदनीका एकदम अनिश्चित जरिया रह गया है और वर्तमान अवस्थामे यह आशा नही की जा सकती कि उसकी आमदनीसे किसान अपने भोजनकी सामग्रीकी कमी पूरी कर लेगे, जिसके वे शिकार बने हुए है जैसा कि ऊपर दिखलाया गया है। देशी मिलें और विदेशी खरीददार दोनो पूर्बी मुस्लिम क्षेत्रके दायरेसे बाहर है। ऐसी अवस्थामे यह प्रश्न उठना स्वाभाविक है कि यह स्वतन्त्र मुस्लिम राज यदि वह पूर्वी क्षेत्रमें स्वतन्त्र खुदमुख्तार राज भी बन जाय तो पाटका मूल्य नियत कर किसानोकी सहायता किस प्रकार करेगा।

यदि पाटसे इतनी आमदनी न हो कि किसान उससे कम-से-कम उतना गल्ला भी खरीद सके जितना कम-से-कम गल्ला वह उस खेतमे पैदा कर सकता है जिसमे वह पाटकी खेती करता है, तब तो अधिक गल्ला पैदा करनेकी आव-श्यकताके कारण पाटकी खेती निश्चय ही बन्द हो जायगी। सर अजी-जुल हकके हिसाबके अनुसार—'यदि वर्तमान बाजारकी अवस्थामे ५) फी मन भी पाटका दाम न मिले तो उसके उपजानेमें किसानको नुकसान है।" (१९३६–३७)† उन्होंने यह भी साबित किया है कि १९२८–२९

---

* दि मैन बिहाइण्ड दि प्लाउ पृ० ६६-६८
† 'दि मैन बिहाइण्ड दि प्लाउ' पष्ठ ६२

तथा १९३४–३५ के बीच पाटकी खेतीसे किसानोंको बड़ी हानि उठानी पड़ी है।

ऊपर दिखलाया गया है कि आसामका एक ही जिला सिलहट, पूर्वी मुस्लिम क्षेत्रमें पड़ता है। १९४१ की गणनाके अनुसार इसका क्षेत्रफल ५४७८ वर्ग-मील तथा जनसंख्या ३१,१६०२ अर्थात् प्रति वर्गमील ५६९ है। १९३१ मे इसकी आबादी ४९७ प्रति वर्गमील थी अर्थात् पिछले दस सालमें १४.४ प्रति-शतकी वृद्धि हुई है। इस प्रान्तके किसी भी जिलेकी जन-संख्या ३२९ प्रति वर्गमीलसे कम नहीं है। प्रान्तभरकी औसत आबादी प्रति वर्गमील १८६ है। इससे स्पष्ट है कि बंगालकी भांति आसामके सिलहट जिलेकी आबादी भी घनी है। १९३६–३७ में आसाम प्रान्तमें कुल ५६,८३,७७४ एकड़ भूमिमे खेती हुई थी। इसमें हर तरहकी फसलोके खेत शामिल हैं। इसका औसत प्रति व्यक्ति १.८ एकड़ हुआ। उसी साल सिलहट जिलेमें ९९,८२,५६६ एकड़ भूमिमें खेती हुई थी। इसका औसत ०.६३ एकड़ प्रति व्यक्ति हुआ। यदि औसत पैदावार ८९६ पौण्ड प्रति एकड़ मान लिया जाय क्योंकि १९३६–३७ का यही पञ्चवर्षीय औसत है तो चावलकी पैदावार प्रति व्यक्ति प्रतिवर्ष ५६४ पौण्ड अर्थात् प्रतिव्यक्ति प्रतिदिन १.५ पौण्डके लगभग होगी। यह स्मरण रखना चाहिये कि खेतीके योग्य सभी खेतको हमने धानकी खेतीमें शामिल कर लिया है। यह बढ़ा-चढ़ाकर दिया हुआ आकड़ा भी स्वस्थ मनुष्यके भरण-पोषणके लिए पर्याप्त नही है। यहां यह भी लिख देना आव-श्यक है कि बंगालके मुस्लिम क्षेत्रके अन्य जिलोंकी अपेक्षा इस जिलेमे पाट-की खेती बहुत कम होती है। लेकिन केवल एक इसी जिलेसे बंगालकी खाद्य-समस्या हल नही हो जायगी।

पीछे दिखाया गया है कि गत १५ सालोंसे किस तरह लोग बंगाल छोड़-छोड़कर आसाममें जा रहे हैं। इससे आसामकी मुसलमान आबादीकी बढ़ती अवश्य हुई है लेकिन बंगालकी खाद्य समस्यापर इसका कोई असर नहीं पड़ा है और इससे कोई आशा भी नहीं की जा सकती जब हम यह देखते है कि

उसी अवधिमें बंगालकी आबादीमें प्रायः १ करोड़की वृद्धि हुई है और १९३१–४१ के बीच प्रायः १ करोड़ २ लाखकी वृद्धि हुई है जो कि समूचे आसाम प्रान्तकी जनसंख्याके बराबर है।

चाय भी महत्वपूर्ण वस्तु है जो बंगाल और आसाममें पैदा होती है। लेकिन इससे भी बंगालके मुसलमानी जिलोंको कोई सन्तोषप्रद लाभ नहीं है। १९३६–३७ मे बंगालमें २०३१०० एकड़ भूमिमें चायकी खेती हुई थी। इसमेंसे केवल ७,७०० एकड़ भूमि मुस्लिम क्षेत्रोमें पड़ती है। बाकी खेत गैर-मुस्लिम क्षेत्रके जलपाईगुड़ी और दार्जिलिंग जिलोमें पड़ते है। इस विषयमें आसामकी हालत इससे कही अच्छी है। १९३६–३७ मे आसाम प्रान्तमें ४३८९२५ एकड़ भूमिमें चायकी खेती हुई थी उसमेंसे ८८९५७ एकड़ भूमि केवल सिलहट जिलेमें पड़ती है जो मुस्लिम क्षेत्रमें लिया जा सकता है। बाकी चायकी खेतीके सबसे बड़े जिले, सिबसागर, लखीमपुर, दरांग और कचार है जो मुस्लिम क्षेत्रसे सर्वथा बाहर है।

ख—उत्तर-पश्चिमी क्षेत्र—

जहांतक खेती और अन्नका सम्बन्ध है उत्तर-पश्चिम मुस्लिम क्षेत्रकी हालत कही अच्छी है।

पञ्जाब प्रान्तके जो जिले मुस्लिम क्षेत्रमें पड़ते है उनकी कुल आबादी १,६८,७०,९०० और क्षेत्रफल ६३,७७५ अर्थात् २६४ प्रति वर्गमील है। सीमाप्रान्तकी आबादी २१३ प्रति वर्गमील, सिन्धकी ९४ और बलूचिस्तानकी ९ है। पञ्जाब, सीमाप्रान्त, सिन्ध तथा बलूचिस्तानकी सम्मिलित आबादी १३८ प्रति वर्गमील है जहा पूर्वी मुस्लिम क्षेत्रकी ८१० तथा सिलहट जिलेकी ५६९ प्रति वर्गमील है।

नीचेकी तालिकामें उत्तर-पश्चिमी क्षेत्र तथा बलूचिस्तानकी खेतीका विवरण दिया जाता है। इसमे समूचा पञ्जाब प्रान्त शामिल है। पञ्जाबके मुस्लिम क्षेत्रमें पड़नेवाले जिलोंकी जोतका विवरण आगे दिया जायगा। यह तालिका १९३९-४० के आधारपर बनायी गयी है:—

प्रान्त	जितनी भूमिमें खेती हुई (एकड़में)	चावल खेत एकड़में	चावल पैदावार टनमें	गेहूं खेत एकड़में	गेहूं पैदावार टनमें
पञ्जाब	२,५७,४४,१२९	९,७६,५५२	२,८७,०००	९५,६५,९७६	३,७६,०००
प्रति जनसंख्यां	०.९	—	—	—	—
सीमाप्रान्त	२०,००,६१७	३६,४२३	—	१,३१,३७३	२,६०,०००
प्रति जनसंख्या	०.६६	—	—	—	—
सिन्ध	४९,४५,८४३	१३,२८,७१३	४,४३,०००	१२,७०,५६३	३,२६,०००
प्रति जनसंख्या	१.१	—	—	—	—
प्रान्तोंका कुल जोड़	३,२६,९०,५८९	२३,४१,६८८	७,३०,०००	१,१७,६७,९१२	४३,४६,०००
प्रति जनसंख्याका जोड़	०.९०	—	—	—	—

(इस तालिकाका शेषांश आगेके पृष्ठपर)

(पीछेके पृष्ठका शेषांश)

प्रान्त	अन्य खाद्य सामग्री		खाद्य सामग्रीके मदमे जोड़			कपास
	खेत एकड़में	पैदावार टनमें	खेत एकड़मे	पैदावार टनमे	खेत एकड़मे	पैदावार गांठमे (४०० पौंडकी एक गांठ)
पञ्जाब	१३,५५,८६१	१४,७२,०००	१,९८,९८,३१७	५५,११,००० (१५,०६,६८,७००)	२६,४१,१०५	१०,१७,०००
प्रति जनसंख्या	—	—	०.७	मन ५.३ मन	०.०९	—
सीमाप्रान्त	९,७७,२३५	३,२३,०००	११,४५,०३१	५,८३,००० (१,५९,१५,९००)	१७,३५१	३,०००
प्रति जनसंख्या	—	—	०.६५	मन ५.२ मन	—	—
सिन्ध	१६,४५,०१०	१,९०,०००	४२,४४,२८६	९,५९,००० (२,६१,८०,७००)	८,५४,३९०	३,०९,०००
प्रति जनसंख्या	—	—	०.९३	मन ५.८ मन	०.१८	—
प्रान्तोंका कुल जोड़	२,०७,७८,११४	१९,८५,०००	२,६०,८७,७१४	७,०६१,००० (१९,२७,६५,३००)	३५,१२,८४६	१३,२९,०००
प्रति जनसंख्याका जोड़	—	—	०.७	मन ५.४ मन	०.१०	—

पञ्जाबके मुस्लिम तथा गैर-मुस्लिम क्षेत्रोंमें जन-संख्याके प्रतिव्यक्तिके हिसाबसे जो जोत पड़ती है वह सन् १९३७–३८ के अंकोंके आधारपर नीचे लिखी तालिकामें दिखायी गयी है:—

	कुल भूमि एकड़में	जो भूमि खेतीके लिए प्राप्त नही है एकड़में	खेतीके लिए प्राप्त कुल भूमि एकड़मे	खेतीके लायक होनेपर भी जिस भूमिमे खेती नही होती–एकड़मे	जितनी भूमिमें खेती हुई एकड़मे	जिनमें खाद्य सामग्री बोयी गयी एकड़में
पञ्जाबके गैर-मुस्लिम जिले	२,१८,९२,३३८	६७,३९,५७६	१,५१,५२,७६२	३७,६८,६४९	१,१३,८४,११३	१७,७८,९८१
पञ्जाबके मुस्लिम जिले	३,८२,६२,३८६	८२,५७,५५३	३,००,०४,८३३	१,४०,९२,०६९	१,५९,१२,७६४	१,१६,३२,१०७
सिन्ध	३,०१,७९,४८६	१,४२,६६,३४७	१,५९,१३,१३९	५८,९९,५१२	४८,७३,२४८	४२,९६,२११
सीमाप्रान्त	८४,३७,५८२	३०,३९,९८४	५३,९७,५९८	२८,५१,७००	२१,०९,०२९	२१,१२,९२९

	तेलहनके खेत एकड़में	गन्नेके खेत एकड़में	कपासके खेत एकड़में	जनसंख्या	प्रतिव्यक्ति खेतीमें जमीन एकड़में	प्रतिव्यक्ति खेतीके लिए प्राप्यभूमि एकड़में	प्रतिव्यक्ति खाद्य सामग्रीके लिए भूमि एकड़में
पञ्जाबके गैर-मुस्लिम जिले	४,१२,७७१	२,५६,५५०	७,७९,७७२	१,१५,४७,९१९	०.९८	०.३२	०.८४
पञ्जाबके मुस्लिम जिले	४,८८,७८३	२,५३,४६४	२३,५५,५७२	१,६८,७०,९००	०.९४	०.८३	०.६९
सिन्ध	२,१३,५१२	७,४२०	९,७०,१७४	४५,३५,००८	१.०८	१.३०	०.९४
सीमाप्रान्त	९१,७३९	७०,०८४	२२,१९५	३०,३८,०६७	०.६९	०.९३	०.६९

ऊपरकी तालिकासे प्रकट होता है कि बंगालकी अपेक्षा पञ्जाब, सिन्ध तथा सीमाप्रान्तमें प्रति व्यक्ति अधिक खेती ही नही होती है बल्कि खेतीका काम बढ़ानेके लिए खेती करने योग्य परती जमीन भी ज्यादा है। इसका एकमात्र कारण पञ्जाब और सिन्धमे बड़े पैमानेपर सिचाईकी व्यवस्था है।

अन्य प्रान्तोकी तरह बलूचिस्तानके सारे आंकड़े नही प्राप्त हो सके है। १९३३-३४ के आंकड़ोंसे पता चलता है कि उस साल ४,४९,०९४ एकड़ भूमि वहां जोती-बोयी गयी थी लेकिन फसल केवल २,७३,८७८ एकड़ भूमिमें हुई थी। हिसाब लगानेसे यह १९३१ की जनसंख्याके आधारपर प्रति-व्यक्ति क्रमशः १.१ तथा ०.७ एकड़ एवं १९४१ की जनसंख्याके अनुसार ०.८१ तथा ०.५४ एकड़ आता है।

पञ्जाब और सिन्धमें नहरोका सिलासिला बहुत बढ़िया है, इससे इन प्रान्तोमे केवल जोत बढ़ानेके लिए ही नही, बल्कि पैदावार बढ़ानेकी भी काफी गुञ्जायश है।

नीचेकी तालिकासे १९३९-४० की खेती तथा सिंचाईकी स्थितिका दिग्दर्शन हो जाता है:—

	जिनमें फसल बोयी गयी एकड़में	जो खेत सींचे गये एकड़में	आबाद खेतोंमें सिंचाईका औसत	नहरों तथा उनकी शाखाओंका फैलाव मीलमें	१९३९-४०के अन्ततक जो पूंजी लगायी गयी रुपयोंमें
पञ्जाब	२,५७,४४,१२९	१,३५,२१,८८९	६२.५	२०,१९३	३९,२६,९०,२६८
सिन्ध	४९,४५,८४३	४२,४३,९४९	८५.८	९,६२०	३०,००,८८,७६०
सीमाप्रान्त	२०,००,६१७	४,७५,४१३	२३.५	९७९	३,१५,२१,४४४
बलूचिस्तान	४,४९,०९४	१,४५,४०२	३२.३	२५२	१,४५,११,२७६
उत्तर-पश्चिमी क्षेत्रका जोड़	३,३१,३९,६८३	१,८३,८६,६५३	५५.४	३१,०४४	७३,८८,११,७४८
ब्रिटिश भारतका जोड़	२०,९९,५९,७८६	२,८२,९२,९३८	१३.४	७४,९११	१,५३,८९,४२,४३३
ब्रिटिश भारतके मुकाबले उत्तर-पश्चिमी क्षेत्रका औसत	१५.६	६१.४	—	४१.४	४७.९

	कुल आमदनी रुपयोमें	निगरानीका खर्च रुपयोमे	शेष आमद रुपयोमे	कुल लगी पूजी का औसत रुपयोमे	सिचाईसे प्राप्त कुल फसलका मूल्य रुपयोमे	सिचाईकी कुल फसलका औसत प्रतिव्यक्ति रुपयोमे
पञ्जाब	७,१०,९०,१४८	१,५३,९८,२२२	५,५६,९१,९२६	१४.१९	५०,७४,५७,६९६	१७≡)
सिन्ध	१,६८,६१,२९३	६८,८५,५५४	९९,७५,७३९	३.३२	११,०२,१२,६७७	२४।–)
सीमाप्रान्त	२३,२२,५५७	९,८०,०७१	१३,४२,४८६	०.४२	२,६६,८२,९१२	८।।।)
बलूचिस्तान	३,९४,५४०	२,५५,९५५	१,३८,५८५	०.९५	४,४८,३९८	।।।=)
उत्तर-पश्चिमी क्षेत्रका जोड़	९,०६,६८,५३८	२,३५,१९,८०२	६,७१,४८,७३६	९.०८	६४,४८,०१,९८३	१७।।=)
ब्रिटिश भारतका जोड़	१४,६०,४२,१२७	४,५६,९३,४७१	[१०,०३,४८,६५६	६.५२	१,३६,२९,०८,३७३	३।।)
ब्रिटिश भारतके मुकाबले उत्तर-पश्चिमी क्षत्रका औसत	६२.४	५१.४	६६.९	—	४७.३	—

सरकारी तथा गैर सरकारी साधनोंद्वारा पञ्जाब प्रान्तके मुस्लिम तथा गैर-मुस्लिम क्षेत्रोमें सिंचाईकी तुलनात्मक समीक्षा किया जाय तो नीचे परिणामपर पहुँचाजाता है:—

	सरकारी नहरोंसे	कुल सिचाईका औसत
पञ्जाबका मुस्लिम क्षत्र	८७,०८,०८९ एकड़	७८ फीसदी
गैर मस्लिम क्षेत्र	२४,९५,१९९	२२ ,,
	१,१२,०३,२८८ ,,	

ऊपरकी तालिकासे प्रकट होता है कि सरकारकी ओरसे सिचाईकी जो व्यवस्था है उसका सबसे ज्यादा लाभ पञ्जाबके मुस्लिम क्षेत्रको ही है। इसस यह भी स्पष्ट हो जाता है कि जहातक सिंचाईका सम्बन्ध है समस्त ब्रिटिश भारतकी अपेक्षा उत्तर पश्चिमी क्षेत्रकी हालत अच्छी है। पञ्जाबकी खेती समस्त ब्रिटिश भारतकी खेतीका सिर्फ १५.६ फीसदी है लेकिन सिचाई समस्त ब्रिटिश भारतकी सिचाईसे ६१.४ फीसदीसे कममें नही होती। समूचे ब्रिटिश भारतमे नहरों, उनकी शाखाओं तथा उपशाखाओकी लम्बाई ७४,९११ मील है। इसमेंसे ३१,०४४ मील या ४१.४ फीसदी केवल उत्तर पश्चिमी क्षेत्रमें पड़ता है। इस मदमे १५३ करोड़ ८९ लाख कुल सरकारी पूजी लगी हुई है जिसमेसे ७३ करोड़ ८८ लाख या ४७.९ फीसदी पूजी केवल उत्तर पश्चिमी क्षेत्रकी सिचाईकी व्यवस्थामे लगी हुई है। सिंचाई विभागसे समस्त ब्रिटिश भारतकी सालाना आमदनी १० करोड़ ३ लाख है। इसमें केवल उत्तर पश्चिमी क्षेत्रकी आमदनी ६ करोड़ ७१ लाख या ६६.९ फीसदी है। समूचे ब्रिटिश भारतमें सिंचाईसे पैदा की गयी समस्त फसलका मूल्य १३६ करोड़ २९ लाख है। इसमें केवल पञ्जाबका हिस्सा ६४ करोड़ ४८ लाख या ४७.३ फीसदी होता है। उत्तर पश्चिमी क्षेत्रमें जहां सिचाईकी फ़सलका मूल्य प्रति व्यक्ति १७॥=) पड़ता है वहां ब्रिटिश भारतमें केवल ३॥।

पड़ता है। पञ्जाबकी कुल सरकारी आमदनीका ४२ फीसदी केवल सिंचाईसे मिलता है। उसी तरह सिन्धसे १३.४ और सीमाप्रान्तसे ७.५ मिलता है। यदि केवल सिन्ध और पञ्जाबके ही आंकड़े लिये जायें तो प्रकट होगा कि इन प्रान्तोंकी हालत और भी अच्छी है। सिन्धमे कुल जोतका ८५.८ फीसदी तथा पञ्जाबमे कुल जोतका ६२.५ फीसदी नहरोद्वारा सीचे जाते है। जहां ब्रिटिश भारतमे कुल जोतका केवल १३.४ फीसदी खेत नहरोंद्वारा सिचाईके अन्दर है वहा उत्तर-पश्चिम क्षेत्रमें ५५ ४ फीसदीसे कम नही है। यदि ब्रिटिश भारतसे उत्तर-पश्चिमी क्षेत्रको अलग करके केवल उत्तर-पश्चिमी क्षेत्रकी तुलना शेष भागसे की जाय तो उत्तर-पश्चिमी क्षेत्रकी हालत और भी अच्छी प्रकट होगी। उत्तर-पश्चिमी क्षेत्र निकाल देनेके बाद समूचे भारतकी नहरसे सिचाई केवल ५.५ फीसदी खेतोकी होती है।

इन सुविधाओके होते हुए भी उत्तर-पश्चिम क्षेत्रकी गिनती उन प्रान्तोमें नही हो सकती जो अपनी जरूरतसे ज्यादा अन्न पैदा कर लेते है। जो कुछ भी थोडा-बहुत अन्न बच जाता है उसकी खपत पहाड़ी जिलोमे ही हो जाती है। सरकारी खेती अनुशीलन विभागने १९३४ के क्राप प्लैनिग कान्फरेन्स, शिमलामें प्रत्येक प्रान्तकी चावल तथा गेहूंकी पैदावारकी स्थिति पेश की थी। पञ्जाबमे न तो ज्यादा चावल होता ही है और न उसकी ज्यादा खपत ही होती है। गेहूंके सम्बन्धमे कहा गया था कि गेहूंकी पैदावारको अधिक नही कहा जा सकता। जो कुछ गेहूं फाजिल होता है उसकी खपत आसानीसे पड़ोसी जिलो तथा कलकत्तामें हो जाती है। जब सिन्धमे २०,००,००० एकड़ भूमिमे गेहुंकी खेती होने लगेगी तभी वास्तविक फाजिल पैदावार हो सकेगी।* ऊपर जो तालिका दी गयी है उसके आंकड़ोसे प्रकट होगा कि १९३९-४० तक तो सिन्धमें ऊपरके अंकोतक गेहूंकी खेती नही पहुंची है।

पञ्जावके डेवलपमेण्ट (उन्नति विभाग) के मन्त्री सरदार बल्देव सिंह-

---

* प्रोसीडिंग्स आव दि क्राप प्लैनिंग कान्फरेन्स (दिल्ली १९३४) पृ० ७-१०

ने जनवरी १९४५ में कलकत्तामें अपने एक वक्तव्यमें कहा था कि तीन साल पहलेतक पञ्जाबमे चावलकी पैदावारकी कमी रहती थी लेकिन अब तो पञ्जाबमें चावलकी पैदावार भी फाजिल होती है; १९४४-४५ मे ३० लाख टन फाजिल चावल पैदा हुआ। इससे प्रकट है कि पजाब और सिन्ध दोनों प्रान्त खेतीके काममे तेजीसे आगे बढ़ रहे है और आशा की जाती है कि शीघ्र ही वे भारतके अन्य प्रान्तोको अधिक तादादमें फाजिल अन्न देने लगेगे। पैदावारकी इस अचानक बढ़तीको युद्धसे भी प्रोत्साहन मिला है।

यह मानकर कि पञ्जाबकी आबादीमें ७५ प्रतिशत बालिग है और प्रत्येक बालिगके लिए प्रतिदिन १४ या १२ छटांक अन्नकी जरूरत पड़ती है हमलोग नीचे लिखे परिणामपर पहुँचते है—

प्रान्त	जनसंख्या	भोजन करने-वाले बालिग जनसंख्याके ७५ फीसदी	प्रतिवर्ष पैदावार मनोंमें	प्रतिबालिग १४ छं० प्रतिदिनके हिसाबसे सालभरका खर्च मनोमे	कमी मनोंमें	प्रनिबालिग १२ छं० प्रतिदिनके हिसाबसे सालभरका खर्च मनोमे	फाजिल मनोंमें
पञ्जाब	२८४१८८१९	२१३१४११४	१५०६६८७००	१७०१७९७९०	१९५११०९०	१४५८६८२३५	४८००४६५
					११.४२		३.२९
सिन्ध	४५३५००८	३४०१२५६	२६१८०७००	२७१५६७३०	९७६०३०	२३२७७५१०	२९०३१९०
					३ ५९		१२.४७
सीमाप्रान्त	३०३८०६७	२२७८५५०	१५९१५९००	१८१९२६९५	२२७६७९५	१५५९३८९५	३२२००५
					१२.५१		२.०६

उत्तर-पश्चिमी क्षेत्रकी आबादी भी अन्य क्षेत्रोंकी अपेक्षा अधिक दरमे बढ़ रही है। नीचेकी तालिकामें १८९१ तथा १९४१ और १९३१–१९४१ के बीचकी जनसंख्याकी ५० सालकी वृद्धि दिखलायी गयी है—

प्रान्त	जनसंख्या १९४१मे	जनसंख्या १८९१ मे	१९४१ तथा १८९१ का अन्तर		जनसंख्या १९३१ मे	१९४१ तथा १९३१ का अन्तर	
			संख्या	फीसदी		संख्या	फीसदी
पञ्जाब	२८,४१८,८१९	१८,६५२,६१४	९,७६६,२०५	५२.३	२३,५८०,८६४	४,८३७,९५५	२०.५
सिन्ध	४,५३५,००८	२,८७५,१००	१,६५९,९०८	५७.०	३,८८७,०७०	६४७,९३८	१६.७
सीमाप्रान्त	३,०३८,०६७	१,८५७,५१९	१,१८०,५४८	६३.५	२,४२५,०७६	६१२,९९१	२५.२
बलूचिस्तान	५०१,६३१	३८२,१०६	११९,५२५	३१.२	४६३,५०८	३८,१२३	८.२
ब्रिटिश भारतके प्रान्त	२९५,८०८,७२२	२१२,९७०,६१६	८२,८३८,१०६	३८.८	२५६,७५७,८१८	३,९०,५०,९०४	१५.२

नहरोके व्यापक फैलावके कारण पैदावारमे काफी वृद्धि हुई है और वृद्धि होनेकी सम्भावना है। लेकिन आबादीमे जिस तेजीके साथ वृद्धि हो रही हैं उसका मुकाबला पैदावारकी वृद्धि नही कर सकती। विगत ५० वर्षोमे पञ्जाबकी आबादीमे ५२ फीसदी, सिन्धमे ५७ तथा सीमाप्रान्तमें ६३ फीसदीकी वृद्धि हुई है। ब्रिटिश भारतके अन्य प्रान्तोके साथ साथ इन प्रान्तोको भी इस समस्याका मुकाबला करना है लेकिन अन्य प्रान्तोंकी अपेक्षा इसे हल करनेकी सुविधा भी इन प्रान्तोको प्राप्त है।

अन्नकी पैदावारके अलावा पञ्जाब और सिन्ध मे कपासकी खेती बहुत अधिक होती है। १९३९-४० मे पञ्जाबमे १०१७००० गाठ, सिन्धमें ३०९०००, गाठ, तथा सीमाप्रान्तमे ३००० गाठ रुई पैदा हुई थी। एक गाठ ४०० पौण्डकी होती है। तीनो प्रान्तोमे क्रमशः २६४१,१०५ तथा ८५४३९० और १७३५१ एकड़ भमिमे कपासकी खेती हुई थी।* कपास किसानोका नगद आमदनीका जरिया है। इस फसलका महत्व उस दृष्टिसे प्रकट होगा कि जहा समस्त भारतमे कपासकी पैदावार ३३८१,००० गाठ है वहां केवल उत्तर-पश्चिम क्षेत्रमें १३२९००० गाठ या ३९.३ सैकड़ा है, और सिन्धप्रान्तके सक्खरके सिचाई क्षेत्रमे उत्तम कपासकी खेतीका दिनोदिन विस्तार होता जा रहा है। सक्खर बाधके पहले १९३२-३३ मे जहा सिन्धमें केवल ३४२,८६० एकड भूमिमे कपासकी खेती होती थी वहा १९३९-४० में ८५५२७७ एकड़ भूमिमे कपासकी खेती हुई। यह सिचाईके निश्चित प्रबन्धका फल है। कपासकी फसलमे जो वृद्धि हुई है सब अमेरिकाकी किस्में है जो बाजारमे महँगी बिकती है।† यद्यपि सिन्धके समान नही, तो भी

---

* अनुएल रिपोर्ट आव दि डिपार्टमेण्ट आव एग्रिकलचर, सिन्ध १९३९-४० पृ० ७-८

† स्टेटिस्टिकल रिपोर्ट फार ब्रिटिश इण्डिया १९३०-३१, १९३९-४०, पृ० ५५४

पञ्जाबमें कपासकी खेती और उत्तम फसलकी पैदावारमें दिनोदिन उन्नति हो रही है।

४०० पौण्डकी एक गांठका दाम १९३९ मे १०५) ० था। इस हिसाबसे पञ्जाबको कपाससे १९३९ मे ९ करोड़ और सिन्धको ३¾ करोड़की आमदनी हुई जहां समूचे भारतको ३५॥ करोडकी आमदनी इस बरस हुई थी।

इस कपासका अधिकाश भाग या तो दूसरे प्रान्तोको भेजा जाता है या विदेश चला जाता है क्योकि इन प्रान्तोमे रुईकी मिले बहुत ही कम है। पञ्जाबमे चर्खेका प्रचलन यद्यपि बहुत अधिक है तथापि उसमें कपासकी बहुत ज्यादा खपत नही हो सकती। १९३८-३९ मे समचे भारतमे ३८० सूती मिले थी जिनमे १० लाखसे ज्यादा चर्खे काम करते थे, लेकिन इनमेसे केवल ७ मिले पञ्जाब तथा सिन्धको मिलाकर थी जिनमे केवल ७००० चर्खे और २००० करघे चलते थे। सीमाप्रान्त और बलूचिस्तानमे तो इसका नामोनिशानतक नही है।"※

ऊपरके प्रसंगमे उत्तर-पश्चिमी क्षेत्रसे अभिप्राय पञ्जाब, सिन्ध तथा सीमाप्रान्तोसे है। इसमे पञ्जाबके वे जिले भी शामिल है जिनमे गैर-मुसलमान बहुसख्यक है।

२

जंगल

प्रत्येक देशके लोग जंगलको सबसे बड़ी सम्पति मानते है। लेकिन भारतमे जंगलोका पूरा विकास नही किया गया है और उनसे बहुत ज्यादा आमदनी

※ एम. पी. गाधी—इण्डियन टैक्सटाइल काटन इण्डस्ट्री (१९३९ अनुएल) पृ० ६२ ऐण्ड अपेण्डिक्स १

नहीं है। इसलिए इस विषयपर विस्तारसे विचार करनेकी आवश्यकता नहीं है, यहां केवल दिग्दर्शन-मात्र करा दिया जाता है।

पूर्वी क्षेत्र (बगाल) मे जंगल विभागने जंगलोको दो क्षेत्रोंमें वाट दिया है—उत्तरी और दक्षिणी। उत्तरी क्षेत्रके जगल कुल-के-कुल बगालके गैर-मुस्लिम क्षेत्र तथा दक्षिणी क्षेत्रके दो तिहाई मुस्लिम क्षेत्र और एक तिहाई गैर-मुस्लिम क्षेत्रमें पड़ते है। १९३९–४० मे प्रान्तभरकी आमदनी इस मदसे ६५८०३३) थी। दोनों भागोकी आमदनी अलग-अलग कर देनेपर गैर-मुस्लिम क्षेत्रकी आमदनी ४॥ लाख तथा मुस्लिम क्षेत्रकी आमदनी दो लाखके करीब होगी।*

पञ्जाबमें ५१८४ बर्गमील जगल है। इसमेसे पूर्वी भागमे जो मुस्लिम क्षेत्रसे बाहर पड़ता है, ३८७७ वर्गमील तथा पश्चिमी भाग यानी मुस्लिम क्षेत्रमें १३०७ वर्गमील जगल पड़ता है। १९३९-४० मे दोनो भागोकी कुल आमदनी २३६०१९२) रु० थी और खर्च २२८५००७) अर्थात् कुल बचत ७५,१८५) रु० थी।†

इस विषयमे सिन्धकी हालत अच्छी है। सिन्धमें ११३४ वर्गमील जंगल है जिनसे ७,७४,३४८) रु० की सालाना आमदनी है। २६२७४१) रु० के सालाना खर्चके बाद भी १९३९-४० मे इस विभागसे सिन्ध प्रान्तको ४१३६०५) रु० की आमदनी हुई थी।‡

३

खनिज

संयुक्तराष्ट्र अमेरिकाके कोलम्बिया विश्वविद्यालयके भूगर्भ शास्त्रके अध्यापक श्री चार्ल्स एच० बेहरेने फारेन अफेयर्समे लिखा था:—"बर्माको छोड़कर

---

* बंगालके जंगल महालकी रिपोर्टके आधारपर—१९३९-४०

† पञ्जाबके जंगल महालकी रिपोर्टके आधारपर—१९३९-४०

‡ सिन्ध प्रान्तके जंगल महालकी रिपोर्टके आधारपर १९३९-४०

अब भारत कोयला, पेट्रोल, कच्चा लोहा, मैगनीज, क्रोम, सोना, बाक्साइट, नमक, मैगनेसाइट, अभ्रक, जिप्सम, अनेक तरहके जवाहरात, मोनाजाइट तथा अन्य खनिज पदार्थोका बहुत बड़ा व्यापारिक केन्द्र होने जा रहा है।

वर्तमान युगमें औद्योगिक प्रभुता कोयला, लोहा और तेलपर निर्भर करती है। वर्तमान युगमें कोयला और लोहा उद्योगके सबसे बडे साधन माने जाते हैं। मानव-शरीरके विकासके लिए जितना जरूरी आक्सिजन तथा हाइड्रोजन है, उद्योगके विकासके लिए उतना ही जरूरी कोयला और लोहा हैं। दोनोंका साथ-साथ पाया जाना नितान्त आवश्यक है। तेल भी आवश्यक है परन्तु अनिवार्य नहीं। शान्तिके युगमें कोई भी राष्ट्र तेलके बिना अपना काम चला सकता है यदि खनिज पदार्थोके परिवर्तनपर कोई रोकटोक न हो। यदि वह तेल न भी पैदा करता हो तो जर्मनीकी तरह वह कोयलेसे तेल पैदा कर सकता है। फौलाद बनानेमे तेलका कोई महत्व नही है और लोहेके कारखानोमें यह कोयलेका काम नही दे सकता। इसलिए कोयलेका बहुत ज्यादा महत्व है।

हमारा पहला परिणाम तो स्पष्ट है कि भारतमें तेलकी अधिकता नही है लेकिन उसके पास सबसे प्रधान खनिज अर्थात् कोयले और लोहेकी अधिकता है इसलिए वह अपना औद्योगिक विकास भलीभाति कर सकता है। यद्यपि संसारके बड़े-बड़े औद्योगिक देशोकी अपेक्षा प्रतिव्यक्ति आमद कम है तो भी आवश्यक खनिज पदार्थोके वर्तमान सचित कोषको किसी तरहका धक्का निकट भविष्यमें पहुँचाये बिना भी प्रति व्यक्ति खर्च बढाया जा सकता है।

नीचेकी तालिकामे हम यह दिखलाना चाहते है कि खनिजोका बॅटवारा किस प्रकार है और उत्तर-पश्चिमी तथा उत्तर-पूर्वी क्षेत्रोके मुस्लिम क्षेत्रमे अन्य प्रान्तोंकी अपेक्षा उनका कितना अंश पड़ता है:—

१९३८ का उत्पादन

खनिज	बगाल (मुस्लिम क्षेत्र)		पञ्जाब		सिन्ध		सीमाप्रान्त		बलूचिस्तान	
	वजन	मूल्य	वजन	मूल्य (रुपयोमे)	वजन	मूल्य	वजन	मूल्य	वजन	मूल्य (रुपयोमे)
कोयला (टनोंमें)	—	—	१,८४,०२८	१०,२०,८५६	—	—	—	—	१४,३८८	९१,८१२
पेट्रोल (गैलनोंमें)	—	—	२,११,१३,४२०	५२,७८,३५५	—	—	—	—	—	—
क्रोमाइट (टनोंमें)	—	—	—	—	—	—	—	—	२१,८९२	३,२६,०१४
तांबा कच्चा (टनोंमें)	—	—	—	—	—	—	—	—	—	—
लोहा कच्चा (टनोंमें)	—	—	—	—	—	—	—	—	—	—
मैगनीज कच्चा ,,	—	—	—	—	—	—	—	—	—	—
मैगनेसाइट (टनोमे)	—	—	—	—	—	—	—	—	—	—
अभ्रक (हण्डरमें)	—	—	—	—	—	—	—	—	—	—

खनिज	मुस्लिम क्षेत्रका कुल जोड़		ब्रिटिश भारत		मुस्लिम क्षेत्रको बाद देकर ब्रिटिश भारत	
	वजन	मूल्य (रुपयोंमे)	वजन	मूल्य (रूपयोमे)	वजन	मूल्य (रुपयोमे)
कोयला (टनोंमें)	१,९८,४१६	११,१२,६६८	२,५२,७८,२१८	९,४६,३०,७१८	२,५०,७९,८०२	९,३५,१८,०५०
पेट्रोल (गैलनोंमें)	२,११,१३,४२०	५२,७८,३५५	८,७०,८२,३७१	१,६५,४३,१४२	६.५९,६८,९५१	१.१२,६४,७८७
क्रोमाइट (टनोंमें)	२१,८९२	३,२६,०१४	२७,०८६	४,२५,९४२	५,१९४	९९,९२८
तांबा कच्चा और माटे (टनोंमें)	—	—	२,८८,०७६	३२,४०,६४०	२,८८,०७६	३२,४०,६४०
लोहा कच्चा (टनोंमें)	—	—	१४,२१,७०१	२६,९१,८२९	१४,२१,७०१	२६,९१,८२९
मैंगनीज कच्चा ,,	—	—	७,६६,३४१	३,२०,९३,७०९	७,६६,३४१	३,२०,९३,७०९
मैगनेसाइट (टनोंमें)	—	—	२३,०५२	१,३४,८७६	२३,०५२	१,३४,८७६
अभ्रक (हण्डरमें)	—	—	१,०८,८३४	४०,८९,४८८	१,०८,८३४	४०,८९,४८८
कुल जोड़	—	६७,७०,९३७	—	१५,३८,५०,३४४	—	१४,७१,३३,३०७

ऊपरकी तालिकामे मैने उन खनिजोको शामिल नही किया है जिनका उत्पादन बहुत अधिक नही है, जैसे नमक (६४०७४ टन) कुल-का-कुल पञ्जाब प्रान्तके पश्चिमी क्षेत्रमे पैदा होता है और बाक्साइट (१०१३४ टन) कुल-का-कुल गैर-मुस्लिम क्षेत्रमे उत्पन्न होता है तथा इसी तरहके अन्य छोटे-मोटे खनिज पदार्थ है।

खनिज पदार्थोमे कोयलेका स्थान सबसे ऊपर है। कोयलेकी अधिकांश खाने गैर-मुस्लिम क्षेत्रमे पड़ती है। पञ्जाब तथा बलूचिस्तानके मुस्लिम क्षेत्रमे कुछ कोयला अवश्य पैदा होता है, लेकिन वह बहुत थोड़ा है। बंगालकी अधिकाश कोयलेकी खाने बर्दवान जिलेमे है। इस जिलेकी मुस्लिम आबादी मुश्किलसे १८ फीसदी है। स्वभावतः यह मुस्लिम क्षेत्रसे बाहर पड़ता है। आसामकी तेलकी खाने भी मुस्लिम क्षेत्रसे बाहर पड़ती है।

खनिज तेल थोड़ा-बहुत पञ्जाब, सीमाप्रान्त तथा बलूचिस्तानमे पैदा होता है। जियालाजिकल सर्वे आव इण्डियाके सुपरिण्टेण्डेण्ट डाक्टर जे० काजिन ब्राउनने इण्डियाज मिनरल वेल्थ (India's meneral wealth) नामक अपनी पुस्तकमे भारतकी १९०० से १९३३ (जब बर्मा भी भारतमें शामिल था) तकके खनिज तेलकी पैदावारका औसत आकड़ा दिया है। १९२९-३२ मे बर्मामे ८१.४ आसाममे १५.५ तथा पञ्जाबमे ३.१ फीसदी तेलकी पैदावार थी। उन्होने श्री सर एडविन पास्कोईका निम्न अवतरण दिया है :—"पञ्जाब तथा बलूचिस्तानके अनेक भागोमे बाढ तथा भूकम्पसे पथरीली भूमिमे इस तरहका परिवर्तन हो गया है कि वहां तेलका जो खजाना था वह गायब हो गया है। तेलके चिह्न तो अवश्य पाये जाते है लेकिन वे दिखावा मात्र है। तेलके खजानेसे उनका कोई सम्बन्ध नही है जिससे अप्राकृतिक ढंगसे भी तेल निकाला जा सके।* तेल निकालनेके उपाय किये भी गये लेकिन कुछ परिणाम नही निकला। लेकिन खौरका तेलका कारखाना सफलतापूर्वक चल

---

* ब्राउन : मिनरल वैल्थ आफ इण्डिया पृ० ६०।

रहा है। १९३८ में ब्रिटिश भारतकी कुल आमदनी खनिज पदार्थोसे १५,३८,५०,००० थी। इसमेसे उत्तर-पश्चिम क्षेत्रसे केवल ७६,१७,००० या ४.३ फीसदी रकमका खनिज प्राप्त हुआ था और पूर्वी-क्षेत्रसे एक पैसेका भी खनिज पदार्थ नही मिला था। यदि ब्रिटिश भारतके साथ देशी रियासतोकी इस मदकी आमदनीको मिला दिया जाय तो मुस्लिम क्षेत्रकी हालत और भी खराब प्रतीत होगी। यदि प्रोफेसर बेहरे निम्नलिखित परिणामपर पहुँचे है तो कोई अचरजकी बात नही:——भारतके खनिज पदार्थ भिन्न-भिन्न भागोमे इस तरह पाये जाते है कि यदि भारतका बॅटवारा हिन्दू और मुस्लिम भारतमे हो जाय तो हिन्दू भारत खनिजके मामलेमें बहुत सम्पन्न रहेगा और मुस्लिम भारत बहुत ही दरिद्र। यह असमानता इतनी ज्यादा है कि यदि घनी आबादीको काट-छाटकर इधर-उधर बसाया जाय तो भी इसमें किसी तरहका अन्तर नही पड़ सकता। खनिज पदार्थोकी वर्तमान पैदावारके कारण ही इसका उद्योग ज्यों-ज्यो बढ़ता जायगा त्यो-त्यो इसका महत्व भी बढ़ता जायगा। पाकिस्तान तथा हिन्दुस्तानमें भारतके बॅटवारेके प्रश्नका निर्णय करनेके पहले इसका पूरा अध्ययन कर लेना उचित होगा। हिन्दुस्तान (हिन्दू भारत) मे कोयले तथा लोहे-की अधिकता है। इसमे अन्य जलाये जानेवाली धातु तथा अधातविक खनिज और सोनाकी भी अधिकता है। बहुत ज्यादा बाक्साइट तथा थोड़ा-बहुत तांबा भी यहां पाया जाता है। इसके विपरीत पाकिस्तानमें कोयला और लोहा बहुत कम है, गलानेवाली धातुएँ भी नगण्य है, बाक्साइट तो प्रायः शून्य है। लेकिन पाकिस्तानमें मैगनीज और क्रोमियमको छोड़कर अन्य जलाये जानेवाले खनिज उतने ही पाये जाते है जितना हिन्दुस्तानमें। मैगनेसाइटको छोड़कर यहां (हिन्दुस्तानमे) अन्य सहायक खनिजका सचित लोहा बहुत ज्यादा है और तेल बहुत ज्यादा तादादमें यही है......

जिस दूसरे परिणामपर हम पहुँच चुके है, वह यह कि भारतके हिन्दू और मुस्लिम क्षेत्र एक दूसरेपर निर्भर करते है। देशके औद्योगिक विकासके लिए केवल हिन्दुस्तानको ही पाकिस्तानका मुखापेक्षी नहीं होना पड़ेगा बल्कि पाकि-

स्तानको हिन्दुस्तानका बहुत अधिक सहारा लेना पड़ेगा।' अन्तमें प्रोफेसर बेहरेने यह लिखकर समाप्ति की है:—

"मेरे इस रिपोर्टके लिखनेका यह अभिप्राय नही है कि भारत तथा ब्रिटिश सरकारके बीच समझौता होनेमे विलम्बकी जिम्मेदारी कहां और किसपर है और न मैं दोनों सम्प्रदायोंके धार्मिक विश्वासोंकी ही किसी प्रकार अवहेलना करना चाहता हूँ। मैंने तो केवल यह दिखलानेका यत्न किया है कि जहांतक खनिज पदार्थोंका सम्बन्ध है मुस्लिम तथा हिन्दूभारत एक दूसरेमें गुथे हैं और आर्थिक मामलोंमें एक दूसरेपर निर्भर करते है। जहां आर्थिक निर्भरता इतनी अनिवार्य हो वहां राजनीतिक समस्याको हल कर डालनेकी ओर ही ये बातें प्रेरित करती है। इससे प्रकट है कि यदि हिन्दुस्तानका बँटवारा धार्मिक आधारपर हुआ तो इससे हिन्दुओंकी अपेक्षा मुसलमानोंकी हानि कही अधिक होगी। इससे यह परिणाम भी निकलता है कि भारतकी आर्थिक समस्या समस्त एशियाके साथ सम्बद्ध है।"

सर होमी मोदी तथा डाक्टर जान मथाई भी इसी परिणामपर पहुँचे है:—

"आवादी, क्षेत्र तथा साधनकी दृष्टिसे आर्थिक विभागके लिए संयुक्त भारतको जो सुविधाएँ प्राप्त है वह अमेरिका तथा सोवियत रूसको छोड़कर संसारके अन्य किसी देशको प्राप्त नही है। पाकिस्तान तथा हिन्दुस्तानमे भारतका बँटवारा दोनोंको कमजोर बना देगा। इनमें भी हिन्दुस्तानकी अपेक्षा पाकिस्तानको अधिक क्षति उठानी पड़ेगी।...जहातक खनिज पदार्थोंका सम्बन्ध है, कोयला, लोहा, गलानेवाली धातुकी कमीके कारण दोनो क्षेत्रोमें पाकिस्तानकी हालत ज्यादा खराब हो जायगी और उसकी विशाल भावी औद्योगिक उन्नतिके लिए जिन खनिज पदार्थोंकी जरूरत है उसका उसे सदा अभाव बना रहेगा।" *

---

* सर होमी मोदी ऐण्ड डा० मथाई—ए मेमोरण्डम आन दि इकनामिक ऐण्ड फाइनैन्शल ऐस्पेक्ट ऑव पाकिस्तान पृ० २५-२६

"मुस्लिम क्षेत्रको एक लाभ अवश्य रहेगा। भारतमें जल-शक्तिसे बिजली निकालनेके लिए जो अनुसन्धान किया गया था उससे प्रकट होता है कि पाकिस्तानको हिन्दुस्तानकी अपेक्षा यह जल-शक्ति बहुत अधिक प्राप्त होगी। पूर्वी क्षेत्रमें १०८४ हजार किलोवाट तथा पश्चिमी क्षेत्रमें १७९३ हजार किलोवाट अर्थात् कुल २८७७ हजार किलोवाटकी जल-शक्ति प्राप्त है। इसके विपरीत हिन्दुस्तानमें केवल १३४३ किलोवाट प्राप्त होगी।"*

४

उद्योग-धन्धे

अब हमलोगोंको यह देखना है कि उद्योग-धन्धोंकी क्या हालत है—

उद्योगधन्धे—१९३९

१—सरकारी तथा स्थानीय पूंजीसे चलाये गये कारखाने—

* वही पृ० १६

उद्योग–धन्ध	बगाल		पञ्जाब		सिन्ध		सीमाप्रान्त		ब्रिटिश बलूचिस्तान		ब्रिटिश भारत	
(क) स्थायी	कारखानोंकी संख्या	मजदूरोंकी औसत दैनिक संख्या	कारखानोंकी संख्या	मजदूरोंकी औसत दैनिक संख्या	कारखानोंकी संख्या	मजदूरोंकी औसत दैनिक संख्या	कारखानोंकी संख्या	मजदूरोंकी औसत दैनिक संख्या	कारखानोंकी संख्या	मजदूरोंकी औसत दैनिक संख्या	कारखानोंकी संख्या	मजदूरोंकी औसत दैनिक संख्या
कपड़ा	—	—	१	१०९	—	—	—	—	—	—	२	२,१५७
शराब दारू	—	—	—	—	१	३४	—	—	—	—	२	१७५
लकड़ीका काम	—	—	—	—	—	—	—	—	—	—	३	५४९
सूतकी मिलें	१	११	१	११५	—	—	—	—	—	—	५	१,७०१
जहाज-घाट	४	२,०४८	—	—	—	—	—	—	—	—	८	४,९४३
बिजलीके कारखाने	९	१,११५	९	१,००९	१	४३	५	१४८	—	—	३४	३,५९२
इञ्जीनियरिंग	१०	१,९१२	५	९२०	३	५८१	—	—	१	४८	५२	७,७४५
फोरेज प्रेसें	—	—	—	—	—	—	—	—	१	४३	१	४३
टकसाल	१	९३३	—	—	—	—	—	—	—	—	२	१,८३६
लड़ाईके सामानके कारखाने	३	९,२७५	६	६,५५६	१	४३५	५	२७०	१	१,०७५	२५	३०,७०९
छापाखाने	११	३,५२१	६	१,४८०	१	१७५	१	१०५	—	—	४५	१२,५५५
रेलके कारखाने	१६	१५,१७३	७	११,४०२	५	१,७३६	—	—	—	—	७४	५५,७८४
चिराईके कारखाने	१	२५	१	८	१	—	—	—	—	—	६	२४५

उद्योग–धन्धे	बंगाल		पञ्जाब		सिन्ध		सीमाप्रान्त		ब्रिटिश बलूचिस्तान		ब्रिटिश भारत	
(क) स्थायी	कारखानोंकी संख्या	मजदूरोंकी औसत दैनिक संख्या	कारखानोंकी संख्या	मजदूरोंकी औसत दैनिक संख्या	कारखानोंकी संख्या	मजदूरोंकी औसत दैनिक संख्या	कारखानोंकी संख्या	मजदूरोंकी औसत दैनिक संख्या	कारखानोंकी संख्या	मजदूरोंकी औसत दैनिक संख्या	कारखानोंकी संख्या	मजदूरोंकी औसत दैनिक संख्या
चमड़ेके कारखाने	२	३२	—	—	—	—	—	—	—	—	१	३२
तारके कारखाने	१	१,११८	—	—	—	—	—	—	—	—	२	१,३३१
पानी पम्प करनेके कारखाने	५	७७०	१	६५	२	६२	१	२२	—	—	२६	२,१०१
ऊनकी मिलें	१	१६१	—	—	—	—	—	—	—	—	३	६२६
फुटकर कारखाने	४	५६७	६	५२६	२	९७	—	—	५	४२३	५४	४,९४२
जोड़ स्थायी	६८	३६,६६९	४३	२२,२७०	१७	३,२६३	१२	५४५	८	१,५८९	३४५	१३१०६६
(ख) मौसमी (अस्थायी)												
फोरेज प्रेसें	—	—	४	१०८	—	—	६	२२५	—	—	११	१,०४८
फुटकर	—	—	१	२४	—	—	—	—	—	—	१०	३३२
जोड़ (मौसमी)	—	—	५	१३२	—	—	६	२२५	—	—	२१	१,३८०
सरकारी तथा स्थानीय												
कारखानोंका जोड़	६८	३६,६६९	४८	२२,४०२	१७	३,२६३	१८	७७०	८	१,५८९	३७४	१३२४४६

२. अन्यान्य कारखाने—

उद्योग–धन्धे	बंगाल		पञ्जाब		सिन्ध		सीमाप्रान्त		ब्रिटिशबलूचिस्तान		ब्रिटिश भारत	
(क) स्थायी	कारखानोंकी संख्या	मजदूरोंकी औसत दैनिक संख्या	कारखानोंकी संख्या	मजदूरोंकी औसत दैनिक संख्या	कारखानोंकी संख्या	मजदूरोंकी औसत दैनिक संख्या	कारखानोंकी संख्या	मजदूरोंकी औसत दैनिक संख्या	कारखानोंकी संख्या	मजदूरोंकी औसत दैनिक संख्या	कारखानोंकी संख्या	मजदूरोंकी औसत दैनिक संख्या
१–बीननेवाली मिलें (सूती मिलें)	३३	३१,८५९	१४	९,२११	—	—	—	—	—	—	८३६	४,८६,८५३
पाटकी मिले	९७	२,८१,२२९	—	—	—	—	—	—	—	—	१०६	२,९८,९६७
मोजा बनानेके कारखाने	४१	१,९४५	६२	१,८६३	१	३०	—	—	—	—	१५२	७,७०८
रेशमकी मिलें	६	१,८८६	४	५६३	२	७०	—	—	—	—	१०७	६,२५१
ऊनी मिले	—	—	६	२,६६१	—	—	—	—	—	—	१३	६,८०७
फुटकर	६	१११	२५	१,९३६	—	—	—	—	—	—	८९	१०,४९१
जोड़	१८३	३,१७,९१०	१११	१६,२३४	३	१००	—	—	—	—	१३०३	८,१७,०७७
२–इञ्जीनियरिंग	२५९	६५,२४७	५५	३,११६	२९	२,२२८	२	९४	४	२६५	१००१	१,४८,४२४
३–खनिज और धातु फाउण्डरी	—	—	४६	१,५५४	२	६४	—	—	—	—	११०	६,०६६
लोहा और फौलाद गलाने तथा ढालनेकी मिलें	६	१६,९१४	—	—	—	—	—	—	—	—	९०	४०,७९०

उद्योग–धन्धे	बंगाल		पञ्जाब		सिन्ध		सीमाप्रान्त		ब्रिटिश बलूचिस्तान		ब्रिटिश-भारत	
(क स्थायी)	कारखानोंकी संख्या	मजदूरोंकी औसत दैनिक संख्या	कारखानोंकी संख्या	मजदूरोंकी औसत दैनिक संख्या	कारखानोंकी संख्या	मजदूरोंकी औसत दैनिक संख्या	कारखानोंकी संख्या	मजदूरोंकी औसत दैनिक संख्या	कारखानोंकी संख्या	मजदूरोंकी औसत दैनिक संख्या	कारखानोंकी संख्या	मजदूरोंकी औसत दैनिक संख्या
शीशा गलाने तथा ढालनेकी मिलें	१	२६२	—	—	—	—	—	—	—	—	१	२६२
पेट्रोल साफ करनेकी मिलें	—	—	२	८०३	—	—	—	—	—	—	४	२,९८१
फुटकर	६	४५७	२३	१,१०८	—	—	—	—	—	—	५३	५,०२४
कुल जोड़	१३	१७,६३३	७१	३,४६५	२	६४	—	—	—	—	१८७	५५,१२३
४–खाद्य, पेय व तम्बाकू												
आटाकी मिलें	११	१,१८१	१८	१,१७८	१३	७८९	—	—	—	—	८०	५,७९४
चावलकी मिलें	४००	१८,७४२	४३	१,०५६	—	—	—	—	—	—	१,१५८	४५,४०९
सुर्तीकी मिलें	४	१,३३९	१	५०	१	७७	—	—	—	—	१६५	११,८३९
फुटकर	२७	२,९२४	२६	९९५	९	३०१	४	९६	—	—	४७७	२६,३६५
कुल जोड़	४४२	२४,१८६	८८	३,२७९	२३	१,१६७	४	९६	—	—	१,८८०	९७,४०७
५–रसायन तथा रंग	११८	१७,२१२	३२	१,५५४	९	१,६४२	—	—	—	—	५८८	५५,९४५
६–कागज तथा छपाई												
कतरन तथा पल्पकी मिलें	४	६,२६८	१	९९५	—	—	—	—	—	—	१४	११,५५३

उद्योग-धन्धे	बंगाल		पञ्जाब		सिन्ध		सीमाप्रान्त		ब्रिटिश बलूचिस्तान		ब्रिटिश-भारत	
(क) स्थायी	कारखानोंकी संख्या	मजदूरोंकी औसत दैनिक संख्या	कारखानोंकी संख्या	मजदूरोंकी औसत दैनिक संख्या	कारखानोंकी संख्या	मजदूरोंकी औसत दैनिक संख्या	कारखानोंकी संख्या	मजदूरोंकी औसत दैनिक संख्या	कारखानोंकी संख्या	मजदूरोंकी औसत दैनिक संख्या	कारखानोंकी संख्या	मजदूरोंकी औसत दैनिक संख्या
छपाई तथा जिल्दसाजी	९६	६,५७५	४४	२,०११	१६	५०९	—	—	—	—	६५५	३०,९४२
फुटकर	१७	१,०९६	२	५६	—	—	—	—	—	—	४०	१,८८२
कुल जोड़	११७	१३,९३९	४७	३,०७०	१६	५०९	५	१०९	—	—	७०९	४४,३७७
प्रोसेस, पत्थर, लकड़ी काच, ईंट, टाइल, कुर्सी टेबुल वगैरह	१५	१,३५७	७	१,०१७	६	३२५	—	—	—	—	१८६	२०,५५३
सीमेण्ट, चूना तथा बर्तन	१३	३,५१४	५	८३५	२	५२४	—	—	—	—	४६	१३,०८८
कांच	१२	२,२८०	३	२०४	—	—	—	—	—	—	७४	८,९३४
लकड़ी चीरने, पत्थर खरादने तथा फुटकर	१८	१,१३७	४	१५१	१	४१	—	—	२	१०९	१५९	९,७१५
कुल जोड़	५८	८,२८८	११	२,२०७	९	८९०	—	—	२	१०९	४६५	५०,२१०

उद्योग—धन्धे	बंगाल		पञ्जाब		सिन्ध		सीमाप्रान्त		बलूचिस्तान		ब्रिटिश-भारत	
(क) स्थायी	कारखानोंकी संख्या	मजदूरोंकी औसत दैनिक संख्या	कारखानोंकी संख्या	मजदूरोंकी औसत दैनिक संख्या	कारखानोंकी संख्या	मजदूरोंकी औसत दैनिक संख्या	कारखानोंकी संख्या	मजदूरोंकी औसत दैनिक संख्या	कारखानोंकी संख्या	मजदूरोंकी औसत दैनिक संख्या	कारखानोंकी संख्या	मजदूरोंकी औसत दैनिक संख्या
८—चमड़ा सिझानेके कारखाने	५	४,०१७	२	१५५	१	१६	—	—	—	—	६६	१२,९०६
९—कपास काटने तथा गांठ बांधनेकी मिलें	३३	१९,१५५	—	—	—	—	—	—	१	६०	१८१	२५,९८७
१०—रस्सा बनाने तथा फुटकर मिलें	५८	९,६६५	२	१८७	६	२३२	—	—	—	—	२१८	१९,७१२
जोड़	१२८६	४,९७,२५२	४७	३३,२६७	९८	६,८४८	११	२९१	७	४३४	६,५९८	१३,२९,२४८
(ख) मौसमी खाद्य, पेय तथा तम्बाकू												
चावलकी मिलें	—	—	—	—	१०२	२,०३७	—	—	—	—	१०२	२,०३७
चीनीकी मिलें	१३	३,५५८	४	१,३०३	१	१७७	—	—	—	—	२५४	७४,८७२
चाय	२८८	१८,८२८	१०	२१५	—	—	—	—	—	—	१,०५५	६७,३०३

उद्योग धन्धे	बंगाल		पञ्जाब		सिन्ध		सीमाप्रान्त		बलूचिस्तान		ब्रिटिश भारत	
(क) स्थायी	कारखानोंकी संख्या	मजदूरोंकी औसत दैनिक संख्या	कारखानोंकी संख्या	मजदूरोंकी औसत दैनिक संख्या	कारखानोंकी संख्या	मजदूरोंकी औसत दैनिक संख्या	कारखानोंकी संख्या	मजदूरोंकी औसत दैनिक संख्या	कारखानोंकी संख्या	मजदूरोंकी औसत दैनिक संख्या	कारखानोंकी संख्या	मजदूरोंकी औसत दैनिक संख्या
काफी, सुरती, चाय सोडावाटर वगैरह	—	—	—	—	—	—	—	—	—	—	९७	५,८३६
जोड़	३०१	२२,३८६	१४	१,५१८	१०३	२,२१४	—	—	—	—	१५०८	१,५०,०४८
रसायन तथा रंग	—	—	—	—	—	—	—	—	—	—	२२	१,९८९
ओटाई तथा गांठ बँधाई	८	२,३६३	३११	२१,११५	१०३	१२,५६५	७	१९९	—	—	१८७९	१,२३,८७९
पाटकी गांठ बँधाई वगैरह	६२	१२,८६९	—	—	३	१०५	—	—	—	—	८५	१३,५२७
जोड़	३७१	३७,६१८	३२५	२२,६३३	२०९	१४,८८४	७	१९९	—	—	३४९८	२,८९,४४३
समस्त अन्य फैक्टरियोंका जोड़	१६५७	५,३४,८७०	७५२	५५,९००	३०७	२१,७३२	१८	४९८	७	४३४	१००९२	१६,१८,६९१
कुल जोड़	१७२५	५,७१,५३९	८००	७८,३०२	३२४	२४,९९५	३६	१२६८	१५	२०२३	१०४६६	१७,५१,१३७

ऊपरकी तालिकामें बंगाल और पञ्जाबके जो आंकड़े दिये गये हैं वे केवल उन जिलोके नही हैं जो मुस्लिम क्षेत्रमे पड़ते हैं, बल्कि समूचे प्रान्तोके हैं। इसलिए उन्हें देखकर धोखा होनेकी सम्भावना है—खासकर जहातक बंगालका सम्बन्ध है क्योंकि बगालके सभी उद्योग-धन्धे कलकत्ताके इर्दगिर्द केन्द्रित हैं जो मुस्लिम क्षेत्रसे बाहर पड़ता है। पाटकी पैदावार मुस्लिम क्षेत्रमें अवश्य होती है लेकिन पाटकी सभी मिलें हुगली नदीके किनारे कलकत्ताके निकट हैं। बंगालमें कपासकी ३० मिलें है। उनमेंसे केवल सात मुस्लिम क्षेत्रमें पड़ती हैं, बाकी सब पश्चिमी बंगालमें है जो मुस्लिम क्षेत्रसे बाहर है। इनमें केवल १ लाख १२ हजार चर्खे और २६०० करघे है जहा समूचे भारतमे प्रायः १० लाख चर्खे और २ लाख करघे है। यहाके अधिकाश मजदूरोंकी जीविकाका साधन पाटकी मिले है। लोहेके हर तरहके कारखाने पश्चिमी गैर-मुस्लिम जिलोमें है। इसी तरह सिवा पाटकी गाठें बांधनेके कारखानोंको छोड़कर सभी प्रधान कारखाने कलकत्ताके आसपास है। सरकारी तथा स्थानीय पूजीसे चालू कारखानोंमें हथियार (गोला—बारूद) के कारखाने, रेल कम्पनीके कारखाने, जहाजरानी तथा छपाईके कारखाने सबसे महत्वपूर्ण है। ये सबके सब कल-कारखाने कलकत्ताके आसपास है। इसलिए इतना तो निश्चयपूर्वक कहा जा सकता है कि ऊपरके आकड़ोसे बंगालमे उद्योग-धन्धोंकी स्थिति अच्छी और सन्तोष-जनक प्रतीत होती है। इसके साथ ही इन आकड़ोसे यह भी प्रकट हो जाता है कि इन उद्योग-धन्धोंका सम्बन्ध गैर-मुस्लिम क्षेत्रसे है, मुस्लिम क्षेत्रसे नही।

प्रोफेसर कूपलैण्डने भी इस स्थितिका संक्षेपमें इस प्रकार वर्णन किया है—"ब्रिटिश भारतके कुल कारखानोंका ३३ प्रतिशत बंगालमें है और ब्रिटिश भारतकी आबादीके २० फीसदी लोग इनमें काम कर रहे है। (यह आंकड़ा कारखानोंमें काम करनेवालोके औसतसे निकाला गया है) कलकत्ताको अलग करके पूर्वी बंगालमें ब्रिटिश भारतीय उद्योगोंका केवल २.७ प्रति सैकड़ा पड़ता है।

पञ्जाबकी हालत इससे एकदम भिन्न है। लाहौर मुस्लिम क्षेत्रमें पड़ता है इसलिए लाहौरके इर्दगिर्दके सभी कल-कारखाने मुस्लिम क्षेत्रमें पड़ते हैं। अतः पञ्जाबके आंकड़ेको थोड़ी अतिशयोक्तिके साथ मुस्लिम क्षेत्रका आंकड़ा मान लिया जा सकता है। इसलिए यदि बंगालके आंकड़ेको अलग कर दिया जाय और पञ्जाब, सीमाप्रान्त, सिन्ध तथा बलूचिस्तानके आंकड़ोंपर विचार किया जाय तो हमलोगोंको भारतके मुस्लिम क्षेत्रकी औद्योगिक स्थितिका वास्तविक ज्ञान हो जायगा। पञ्जाब, सीमाप्रान्त, बलूचिस्तान तथा सिन्धमें कुल मिलाकर ११७५ कारखाने हैं। इनमें सरकारी, अर्धसरकारी तथा गैरसरकारी सभी तरहके कारखाने शामिल हैं। इन कारखानोंमें १०६५८८ आदमी काम करते हैं। समस्त भारतके कारखानोंके मुकाबलेमें यहांके कारखानोंका आकार छोटा है। ब्रिटिश-भारतमें कुल १०४६६ कारखाने हैं और उनमें १७५११३७ व्यक्ति काम करते हैं। इस तरह समस्त ब्रिटिश-भारतकी अपेक्षा जहां उत्तर-पश्चिमी क्षेत्रके कारखानोंकी औसत ११.२३ फी सैकड़े आती है वहां काम करनेवालोंका औसत ६.१ फीसदी आता है। दूसरे शब्दोंमें जहां ब्रिटिश-भारतके प्रत्येक कारखानेमें काम करनेवालोंका औसत १६७ होता है वहा उत्तर-पश्चिम क्षेत्रके कारखानोंमे काम करनेवालोंका औसत प्रति कारखाना केवल ९० आता है। इन कारखानोंमेंसे सीमाप्रान्तके कारखाने अधिकांश सरकारी या गैर सरकारी हैं। उनकी संख्या ९१ है और उनमें २८०२४ आदमी काम करते है। इससे यह प्रकट होता है कि कारखानोंका औसत केवल ७.७ फी सैकड़ा होते हुए भी काम करनेवालोंका औसत २६.३ सैकड़ा है। दूसरे शब्दोंमें बड़े बड़े कारखाने या तो सरकारी है या गैर-सरकारी। बड़े सरकारी कारखाने या तो गोला-बारूदके है या रेलवे कारखाने हैं। गैरसरकारी कारखानोंमें, रुईके ओटनेवाले तथा गांठ बांधनेवाले कारखानोंको छोड़कर एक भी ऐसे कारखाने पञ्जाब या सिन्ध में नहीं है जिनमें सरकारी गोला-बारूद या रेलवे कारखानोंके बराबर आदमी काम करते हों। पञ्जाबके सबसे बड़े गैरसरकारी कारखाने गांठ बांधने और ओटनेके हैं।

ऊपर जो कुछ लिखा गया है उससे स्पष्ट है कि उत्तर-पश्चिमी क्षेत्र उद्योगके खयालसे पूरा विकसित प्रान्त नही है। उतना भी नही जितना ब्रिटिश-भारत है, क्योंकि बड़े-बड़े कल-कारखाने सरकारी हैं।

यदि बगालके कल-कारखानोको अलग कर दिया जाय, क्योंकि ये मुस्लिम क्षेत्रके बाहर पड़ते हैं, तब तो उत्तर-पश्चिम तथा पूर्वी मुस्लिम क्षेत्रकी औद्योगिक हालत समस्त ब्रिटिश-भारतके मुकाबले और भी असन्तोषजनक प्रतीत होगी। बगाल, पञ्जाब, सीमाप्रान्त सिन्ध तथा बलूचिस्तानके मुस्लिम क्षेत्रोकी आबादी समूचे ब्रिटिश भारतकी आबादीका २६.७ सैकड़ा है। लेकिन सरकारी, अर्ध-सरकारी तथा गैर-सरकारी कल-कारखानोंका कुल औसत सिर्फ १३.९ सैकड़े है और उनमे काम करनेवाले व्यक्तियोंकी संख्या ब्रिटिश-भारतके मुकाबले केवल ७.३६ सैकड़े है। जैसा ऊपर बताया गया है बड़े बडे कारखाने गोला-बारूद या रेलवेके हैं।

जिन उद्योगोंमे भारतकी अधिकाधिक पूजी लगी है, वे कपास, पाट तथा चीनीके कारखाने है। कपासकी पैदावार सबसे ज्यादा पञ्जाब तथा सिन्ध और पाटकी पैदावार सबसे ज्यादा बगालमें होती है। लेकिन इन्हे कात, बुनकर माल तैयार करनेवाले अधिकांश कारखाने दोनो क्षेत्रोमें मुस्लिम क्षेत्रसे बाहर हैं। १९३९-४० में भारतमे सूती मिलोकी लिमिटेड कम्पनियोंकी लागत पूजी ३३ करोड़ ९३ लाख रुपये थी जिनकी रजिस्टरी भारतमे हुई थी। ऊनकी उन सभी मिलोंकी लिमिटेड कम्पनियोको जोड़ देना चाहिये जिनकी रजिस्टरी विदेशोंमे हुई थी लेकिन जिनकी मिलें भारतमें थी और १९३८-३९ मे जिनमे २७१,७७८ पौड पूजी लगी हुई थी। इसी तरह पाटके कारखानोंमें लगी पूजी क्रमशः २० करोड़ ४६ लाख रु० तथा ३२९५५८७ पौड है और चीनीके कारखानोमें लगी पूजी १० करोड़ ९७ लाख रु० अथवा ३०६,६५६ पौड है। इन कारखानोका बहुत कम भाग मुस्लिम क्षेत्रमे पड़ता है। इसी तरह खानों तथा पत्थर तोडनेके कारखानोंमें १९ करोड़ ९८ लाख रु० देशी तथा ११,१०५६४४ पौड विदेशी पूंजी लगी है। इन उद्योग-धन्धोंमें मुस्लिम क्षेत्रोंका कोई हाथ

नही है क्योंकि कोयला, लोहा, तांबा आदिका एक भी कारखाना उनके हाथमें नही है, केवल पेट्रोलमें उनका थोड़ा हिस्सा है।

फारेन अफेयर्समे प्रकाशित प्रोफेसर चार्ल्स एच० बेहरेकी रिपोर्टसे ऊपर जो अवतरण दिया गया है वह इन आंकड़ोके अध्ययनसे साबित हो जाता है। यहां एक बात और जान लेना जरूरी है कि प्रोफेसर बेहरेने अपना परिणाम इस आधारपर निकाला है कि समस्त बगाल और आसाम अर्थात् पेट्रोलियमके वे क्षेत्र भी जो आसामके एकदम उत्तर-पूर्व पड़ते है, पूर्वी क्षेत्रमे सम्मिलित होंगे। लेकिन जैसा ऊपर बतलाया गया है कि लीगके प्रस्तावसे यह बात नही प्रकट होती है। इसी प्रकार उन्होंने उत्तर-पश्चिमी क्षेत्रमे समस्त पञ्जाबको शामिल कर लिया है। यदि उन्होने अपने विचारणीय विषयसे बंगालका वह पश्चिमी भाग जहां कोयला तथा उद्योगके सारे कारखाने केन्द्रित है, सिलहट जिलाको छोड़कर तेलके क्षेत्रो सहित समस्त आसाम तथा पञ्जाबके वे पूर्वी जिले जिनमेसे कई एकमें कल-कारखाने है—निकाल दिया होता तो मुस्लिम क्षेत्रोके कल्याणकी दृष्टिसे ही धर्मके आधारपर भारतके बॅटवारेके प्रस्तावके विरुद्ध उनके परिणाम और भी जोरदार होते।

भारतके सम्बन्धमे आक्सफोर्डद्वारा प्रकाशित अपनी पुस्तक 'अटलस ऑव इण्डिया' में डाक्टर ए० एम० लारेंजोंने भारतके कल-कारखानोंकी स्थितिका बहुत बढ़िया सक्षिप्त विवरण दिया है:—

"भारतके औद्योगिक विकास और उन्नतिके दो आधार है—एक तो कच्चे मालका उत्पत्ति-स्थान तथा दूसरा वातावरण। भारतके प्रधान उद्योग एक निर्दिष्ट क्षेत्रमे केन्द्रित है। बंगाल और बिहारका कोयला तथा लोहाकी खानोके आसपास लोहेके कारखाने केन्द्रित है। इसके उत्पादनके केन्द्र जमशेदपुर, कुलटी, बर्नपुर तथा मनोहरपुर है। सूती कपड़ेकी मिलें बम्बई प्रान्तमे केन्द्रित है क्योंकि यहांका जलवायु नर्म है और कच्चे मालकी सुविधा है। उत्पादनके केन्द्र बम्बई, शोलापुर, हुबली, और अहमदाबाद है। पाटके कारखाने बंगालमें

कलकत्ताके इर्दगिर्द, चीनीके कारखाने रेलवे लाइनोंके सन्निकट संयुक्तप्रान्त तथा बिहारके ऊख पैदा होनेवाले जिलोमें केन्द्रित है। इसी तरह सीमेण्टके कारखाने दक्खिनके उस पठारमें है जहां कच्चा माल मिलता है। उदाहरणके लिए चूना, जिपसम तथा खड़िया। कागजके कारखाने प्रधानतः बंगाल, बम्बई तथा संयुक्तप्रान्तमें है, चमड़ेके कारखाने संयुक्तप्रान्त तथा मद्रासमें और कांचके कारखाने गंगाके पठारके उत्तरी तथा मध्य क्षेत्रमें है।"*

स्थितिको एकदम स्पष्ट कर देनेके लिए केवल इतना और जोड़ देनेकी आवश्यकता है कि उत्तर-पश्चिमी क्षेत्रमे पड़नेवाले किसी भी प्रान्तका नाम इसमें नही आता है और बंगालके जिन स्थानोंका नाम आता है वे प्रायः सबके सब मुस्लिम क्षेत्रसे बाहर पड़ते है।

यह भी स्मरण रखनेकी बात है कि वर्तमान स्थिति भविष्यमें और भी संगीन होती जायगी। जिन भौगोलिक अवस्थाओं तथा वातावरणोंने कल-कारखानोंको इस तरह स्थान-विशेषमें केन्द्रित होनेकी प्रेरणा दी है, उनमें कोई परिवर्तन नही हो सकता। प्रान्तोंकी सीमामें किसी तरहके हेरफेरसे अथवा अलग स्वतन्त्र राष्ट्र कायम करनेसे भी खनिज पदार्थोकी स्थितिमें किसी तरहका परिवर्तन नही होगा।

नीचेकी तालिकामें उत्तर-पश्चिमी तथा उत्तर-पूर्वी मुस्लिम क्षेत्रमें शामिल किये जानेवाले प्रान्तों तथा भारतके अवशिष्ट प्रान्तोंके बीच कतिपय प्रधान वस्तुओंके आन्तर्प्रान्तीय व्यवसायका व्यौरा दिखलाया गया है। ये आंकड़े १९३९-४० के है। अंक हजार मनोमें है। बाहर भेजनेकी अपेक्षा जितना भी माल बाहरसे अधिक मँगाया गया है उसे ऋण चिन्ह (—) तथा बाहरसे मगानेकी अपेक्षा जो माल बाहर अधिक भेजा गया है उसे धन चिह्न (+) से व्यक्त किया गया है!

---

* ए० एम० लोरेंजो—अटलस ऑव इण्डिया सेक्सन ८।

अ-आयात, ब-निर्यात, स-बचत

१	२			३			४		
प्रान्त	कोयला और कोक			कपास			सूती कपड़ा		
	अ	ब	स	अ	बं	स	अ	ब	स
आसाम	७०	३,३४५	—	१२३	२	—	२	२६६	—
बंगाल	१,४७,०४३	६३,४८७	—	१४३	२०७	—	१२९	९५७	—
कलकत्ता	३,९६३	१,५३,६११	—	६२	४२९	—	१,७३७	१,५६२	—
पूर्वी प्रान्तोंका जोड़	१,५१,०७६	२,२०४४३	—६९,३६७	३२८	६३८	—३१०	१,८६८	२,७८६	—९१८
पञ्जाब	७०६	४४,८६६	—	६,६३७	१२	—	१७६	१,३५८	—
सीमाप्रान्त	१	२,५३९	—	१३३	१	—	१७६	) ३००	—
सिन्ध तथा बलूचिस्तान	२५	८,९४३	—	२,१६३	४१	—	४२	४६७	—
करांची	८८९	१,५८६	—	२	६,२७१	—	६५४	५५	—
उत्तर पश्चिमी प्रांतोंका जोड़	१६२१	५७,९३४	—५६,३१३	८,९३५	६,३२५	+२६१०	८७६	२,१८०	—१,३०४

अ–आयात, ब–निर्यात, स–बचत

१	५			६		
प्रान्त	अनाज, दाल, आटा			गेहूं		
	अ	ब	स	अ	ब	स
आसाम	२०७	१,१८०	—	—	७३	—
बंगाल	७.२९१	७,६५२	—	२९	२३०	—
कलकत्ता	८,५०४	३,००२	—	१७८	३,४६४	—
पूर्वी प्रान्तोंका जोड़	१६,००२	११,८३४	+४१६८	२०७	३.७६७	−३,५६०
पञ्जाब	१,४८३	१,३१०	—	१३,५४२	७९	—
सीमाप्रान्त	२९	१७४	—	१८	२७८	—
सिन्ध तथा बलचिस्तान	५,५०८	४८	—	६,४७३	४३	—
कराची	१	२,९५२	—	१	८,३३५	—
उत्तर पश्चिमी प्रान्तोंका जोड़	७,०२१	४,४८४	+२५३७	२०,०३४	८,७३५ +	११२९९

३०

अ–आयात, ब–निर्यात, स–बचत

प्रान्त	लोहा फौलाद			तेलहन			नमक		
	अ	ब	स	अ	ब	स	अ	ब	स
आसाम	११२	१,२६६	—	४७३	२०	—	२	१,२९०	—
बंगाल	४,०४०	६,४०९	—	३७४	१,८२३	—	५९४	५,८२२	—
कलकत्ता	७,२७९	७,९६३	—	४१७	७,२१६	—	१०,६०७	११०	—
पूर्वी प्रान्तोंका जोड़	११,४३१	१५,६३८	–४,२०७	१,२६४	९,२३९	–७,९७५	११,२०३	७,२२२	३,९८१
पञ्जाब	३९२	३,०१०	—	२,२५२	४६२	—	१,९८६	३१३	—
सीमाप्रान्त	१३	२६०	—	४३	५६	—	—	३३४	—
सिन्ध तथा बलूचिस्तान	१८७	९४६	—	२,९२२	१२१	—	११	२८०	—
करांची	१,४६६	१७७	—	३८	२,४८०	—	२३२	१२	—
उत्तर-पश्चिमी प्रान्तोका जोड़	२,०४७	८,३९३	–२,३३६	५,२५५	३,११९	२,१३६	२,१८९	९३९	१,२५०

अ–आयात, ब–निर्यात, स–बचत

प्रान्त	चीनी			पाट		
	अ	ब	स	अ	ब	स
आसाम	४	४७५	—	२,८५१	२	—
बंगाल	३७८	१,५४०	—	२६,०५२	१३७	—
कलकत्ता	८०४	१,०५६	—	२०९	३०,६८७	—
पूर्वी प्रान्तोंका जोड़	१,१८६	३,०७१	–१८८५	२९,११२	३०,८२६	–१,७१४
पञ्जाब	६४	३,६२४	—	६	२	—
सीमाप्रान्त	५३	३२२	—	—	७५	—
सिन्ध तथा बलूचिस्तान	१३	३२२	—	—	१	—
करांची	१,०५६	९०४	—	—	४	—
उत्तर पश्चिमी प्रान्तों का जोड़	१,१८६	५,१७२	–३९८६	६	८२	–७६

दोनों क्षेत्रोमें कोयला, कोक, सूती कपड़ा, लोहा फौलाद और चीनीका आयात निर्यातकी अपेक्षा कहीं अधिक हैं और पूर्वी क्षेत्रमें नमक तथा अनाजका निर्यात दालको शामिल कर तथा गेहूँको बाद देकर आयातकी अपेक्षा अधिक है। उत्तर पश्चिमी क्षेत्रमे कपास, गेहूँ तथा तेलहनका आयातकी अपेक्षा निर्यात अधिक है। ये आकड़े समूचे प्रान्तोंके है। यदि गैर-मुस्लिम-प्रधान जिलोको इनमेंसे अलग कर दिया जाय तो पूर्वी क्षेत्रकी हालत कोयला, कोक, लोहा और फौलादके सम्बन्धमें और भी खराब हो जायगी क्योंकि उस हालतमें बगालके मुस्लिम-प्रधान पूर्वी तथा उत्तरी जिलोंसे इन वस्तुओंका निर्यात एकदम नहीं होगा तथा गैर-मुस्लिम-प्रधान पश्चिमी जिलोंमें इन चीजोंका आयात नहीं होगा। इस तरह मुस्लिम क्षेत्रका कुल आयात बहुत अधिक बढ़ जायगा। इसी आधारपर पूर्वी मुस्लिम क्षेत्रमें पाटके व्यापारकी स्थिति अच्छी प्रकट होगी। पाटके आयातका अर्थ यह है कि विदेशोंमें भेजनेके लिए पाट मँगाया जाता है। इसका कारण यह है कि कोयला, कोक, लोहा और फौलाद गैर-मुस्लिम-प्रधान पश्चिमी जिलोंमें पाया जाता है और पाट मुस्लिम-प्रधान पूर्वी जिलोंमें पैदा होता है। गेहूँ पञ्जाबकी सबसे बड़ी निर्यातकी वस्तु है। लेकिन गैर-मुस्लिम भारत पञ्जाबके गेहूँपर उतना ज्यादा आश्रित नही रहेगा जितना मुस्लिम भारत गैर-मुस्लिम भारतके कोयला, लोहा तथा फौलादपर क्योंकि गैर-मुस्लिम भारत अपनी वर्तमान आवश्यकताभरके लिए गेहूँ पैदा कर लेता है। पञ्जाबके गेहूँको आस्ट्रेलियाके गेहूँका कड़ा मुकाबला करना पड़ेगा। आस्ट्रेलियाके गेहूँकी आमद भारतमें दिनोदिन बढ़ रही है। १९३५-३६ में जहां आस्ट्रेलियासे १३००० टन गेहूँ आया था वहां १९३८-३९ में १,५०,००० टन आया।

जब श्री हर्बर्ट एल मैथ्यूजने बातचीतके सिलसिलेमें श्री जिनाका ध्यान इन कठिनाइयोंकी ओर आकृष्ट किया, जिनपर उन लोगोंका भविष्य निर्भर करता है जिन्हें इन प्रदेशोंमें रहना है जो समस्त भारतसे अलग किये जायंगे—और स्पष्ट सवाल किया तब श्री जिनाने कहा:—"अफगानिस्तान गरीब देश है तो भी उसका निर्वाह हो ही जाता है। ईराककी भी वही हालत है यद्यपि उसकी आबादी

हमारी सात करोड़की आबादीका एक छोटा हिस्सा ही है। यदि हम-लोग आजाद होकर गरीब ही रहना चाहते है तो इसमें हिन्दुओको क्या आपत्ति है?...अर्थशास्त्र अपनी देखभाल आप कर लेगा।"* बहसके लिए इस तरहके उद्गार भले ही प्रकट किये जा सकते है लेकिन जिस प्रश्नपर सात करोड़ मुसलमानोंका सारा भविष्य निर्भर करता है उसे हल करने तथा जिसे बनाने-मे सैकड़ो साल लग गय है उसे इस निर्दयताके साथ तोड़ देनेके लिए यह उत्तर उपयुक्त नही कहा जा सकता।

५

मालगुजारी तथा खर्च

१—प्रान्तीय

इसके बाद यह देखना होगा कि दोनो मुस्लिम क्षेत्रोकी आमद और खर्चकी क्या हालत होगी। लीगका प्रस्ताव है कि भारतके उत्तर-पश्चिमी तथा उत्तर-पूर्वी क्षेत्रोंमे दो स्वतन्त्र मुस्लिम राज कायम हों जिन्हें रक्षा, विदेशी विषय, यातायात, चुगी, सिक्का तथा विनिमय वगैरहपर पूरा अधिकार हो। राज 'शब्द' का प्रयोग बहुबचनमे लीगके प्रस्तावमे भी किया गया है तथा श्री जिनाने १९४१ के मद्रास अधिवेशनमें अपने सभापतिके भाषणमे भी किया है। इससे विदित होता है कि दोनों मुस्लिम राज केवल भारतसे ही अलग नही किये जायँगे बल्कि परस्पर एक दूसरेसे भी स्वतन्त्र रहेंगे। लीगके प्रस्तावमें इन बातोंका इशारा है कि दोनों राजोमें शामिल होनेवाली इकाइयां भी स्वतन्त्र और खुदमुख्तार होंगी। इससे यह परिणाम निकलता है कि स्वतन्त्र राजोंका

---

* न्यूयार्क टाइम्स २१ सितम्बर १९४२

एक संघ उत्तरपश्चिममें तथा स्वतन्त्र राजोंका दूसरा संघ उत्तर-पूर्वी क्षेत्रमें होगा। प्रत्येक संघको संघ-शासन तथा स्वतन्त्र संघराष्ट्रके प्रत्येक उपकरणको कायम रखना होगा। इसके अलावा उनमें शामिल होनेवाली प्रत्येक इकाईको भी अपनी शासन-व्यवस्था आप करनी होगी। अर्थात् प्रत्येक संघकी व्यवस्था वर्तमान केन्द्रीय सरकार तथा प्रत्येक इकाईकी व्यवस्था वर्तमान प्रान्तीय सरकारकी भांति या इन्हीसे मिलती-जुलती होगी। इसीके अनुसार आमद और खर्चके भी प्रत्येक राजके बजट दो होंगे—एक संघ या केन्द्रका तथा दूसरा प्रत्येक इकाई या प्रान्तका। हमलोग यह जानते हैं कि प्रत्येक प्रान्तीय सरकारका अपनी आमदनीका अलग अलग जरिया है, जैसे, मालगुजारी, प्रान्तीय आबकारी वगैरह और इसी आमदनीसे प्रान्तीय शासन-यन्त्रको चलाना पड़ता है तथा शिक्षा, सार्वजनिक स्वास्थ्य यदि राष्ट्रके हितके कामोंको करना पड़ता है। केन्द्रीय सरकारके लिए अपनी आमतनीका अलग जरिया है, जैमे चुगी वगैरह और इससे केन्द्रीय शासनके साथ केन्द्रकी अन्य जिम्मेदारियोको निभाना पड़ता है, जैसे, रक्षा, घैदेशिक विषय वगैरह। यह मान लिया जा सकता है कि संघराष्ट्र तथा सघकी प्रत्येक इकाईका शासन केन्द्रीय तथा प्रान्तीय शासनके अनुरूप ही होगा। इमलिए दोनोकी आमदनीका जरिया और खर्चकी मदे भी करीब करीब समान ही होगी। इसीलिए उनकी आर्थिक दशाका अन्दाज हमलोग मुस्लिम स्वतन्त्र राजोमे पड़नेवाले प्रान्तोकी आर्थिक अवस्थापर विचार कर, लगा सकते है और यह भी देख सकते है कि प्रत्येक क्षेत्रका केन्द्रीय आमदनी और खर्च क्या होगा। लेकिन इस सम्बन्धमे दो कठिमाइया है, जिनका उल्लेख कर देना आवश्यक है। एक पूरे प्रान्तका बजट प्राप्त करना तो सम्भव है, पर जिलेवार आंकडा नही प्राप्त हो सकता, इसलिए जहा पूरा प्रान्त मुस्लिम क्षेत्रके अन्दर नही आता वल्कि उस प्रान्तके कुछ जिले या हिस्से ही मुस्लिम क्षेत्रमें आते है, और बाकी प्रान्त मुस्लिम क्षेत्रसे बाहर रह जाता है, वहां उतने हिस्सेकी आमद और खर्चका आंकड़ा प्राप्त करना यदि असम्भव नही तो कठिन अवश्य है। जहांतक केन्द्रीय सरकारका सम्बन्ध है यह काम और भी जटिल हो जाता है

कि इस तरह अलग किये गये प्रान्तोंकी आमदनीका केन्द्रीय हिस्सा किस प्रकार निर्धारित किया जाय। साथ ही यह भी स्मरण रखना चाहिये कि प्रान्तीय या केन्द्रीय आमदनी और खर्चके बारेमें जो कुछ भी यहां लिखा जायगा वह अन्दाज मात्र होगा इसलिए अस्थायी होगा। युद्धके कारण जो अवस्था उत्पन्न हो गयी है और भविष्यमें भी जिस अवस्थाके उत्पन्न होनेकी सम्भावना है उसका खयाल करते हुए पिछले बजटोंके अनुसार कोई भी गणना स्थायी या पक्की नहीं हो सकती। इन कठिनाइयोंके रहते हुए भी वर्तमान आमदनी और खर्चके आंकड़ोंकी सहायतासे हम इस काममें आगे बढ़ सकते हैं। इसलिए इन्हींके आधारपर हम उत्तर-पश्चिमी तथा उत्तर-पूर्वी स्वतन्त्र मुस्लिम राजोंकी प्रान्तीय तथा केन्द्रीय आमद और खर्चके विषयपर विचार करेंगे।

सबसे पहले प्रान्तीय बजटपर विचार करेंगे। द्वितीय विश्व-युद्धके पूर्वके साधारण वर्ष १९३८-३९ तथा १९३९-४० हैं। इसलिए इन्हीं वर्षों आंकड़ोंको लेना उचित होगा;—

प्रान्तीय आमदनी (हजार रुपयोंमें)

मद	बंगाल		आसाम		पञ्जाब	
	१९३८–३९	१९३९–४०	१९३८–३९	१९३९–४०	१९३८–३९	१९३९–४०
चुगी	२२,१२७	२२,१९७	१,१६९	१,३३९	—	—
इन्कम टैक्स	३,०००	५,५८०	३००	६४१	१,२००	२,२३२
नमक	१२	—	२	—	—	—
मालगुजारी	३२,४१०	३८,६१०	११,२६४	१३,६९०	२६,३५३	२३,४२०
आबकारी	१५,९३५	१६,५२८	३,५३३	३,३९६	१०,१५९	१०,४९८
स्टाम्प	२५,७७७	२५,६४४	१,८१२	१,७६३	७,८१२	७,४५५
जगल	२,२४१	२,३९८	१,६६९	१,७४६	२,३०३	२,५३९
रजिस्टरी	२,४१२	२,७३२	१७७	२०१	८३६	८५०
मोटरगाड़ियोंका लाइसेंस	२,११०	२,१३०	३७१	४०९	१,२८३	१,३४९
अन्य कर तथा चुगी	३,८९४	४,६६१	६	२३७	२८१	१,१४४
जोड़	१,०९,९९८	१,१०,४८१	२०,३०३	२३,४२२	५०,२२७	४९,४८७
रेल	१४	१४	—	—	—	—
सिंचाई	४६५	—	—	१	४५,११७	५०,८७०
शासन	९,०९३	९,३९८	१,३३५	१,३३७	८,०७९	९,०३२
सिविल	२,९०९	३,५५०	१,०३३	१,०९१	४,३४७	३,९६५
फुटकर	२,१०९	२,५७७	१६२	४५२	३,१२४	२,८३१
ऋण और सूद	२,९३५	२,९६२	१२	२६	४६१	३७६
जोड़	१७,५२५	१८,४७१	२,५४२	२,९०७	६१,१२८	६७,०७४
सहायता	३०	३०	३,००३	३,००४	३०७	३८५
असाधारण	१०८	४,१८५	—	—	१,९२४	४,१६३
कुल जोड़	१,२७,६६१	१,४३,१६७	२५,८४८	२९,३३३	१,१३,५८६	१,२१,१०९

प्रान्तीय आमदनी (हजार रुपयोंमें)

मद	सीमाप्रान्त १९३८–३९	सीमाप्रान्त १९३९–४०	सिन्ध १९३८–३९	सिन्ध १९३९–४०
चुगी	—	—	—	—
इन्कम टैक्स	१५०	२७९	३००	५५८
नमक	—	—	—	—
मालगुजारी	१,८६१	१,८५९	३,६०८	३,६८५
आबकारी	८७६	८८७	३,७४६	३,६३३
स्टाम्प	७४०	७०६	१,६८९	१,७१६
जंगल	५९७	५२२	४६५	७७६
रजिस्टरी	६७	६९	२००	२०७
मोटर गाड़ियोका लाइसेन्स	२०८	२३८	२१०	२६८
अन्य कर तथा चुगी	५९	११३	३६४	६६६
जोड़	४,५३८	४,६७३	१०,९७८	११,५०९
रेल	—	—	—	—
सिंचाई	१,२४७	१,३८१	७,२३९	८,८७१
शासन	८३४	८०७	१,०५६	१,४७६
सिविल	१,१२०	१,०१३	१,०६०	९९६
फुटकर	२८६	३२३	१६३	२११
ऋण और सूद	५८	६३	४७३	७३१
जोड़	३,५४५	३,५८७	९,९९१	१२,३६५
सहायता	१०,००१	१०,००१	१०,५०४	१०,५१२
असाधारण	—	—	५,५५६	८,५११
कुल जोड़	१८,०८४	१८,२६१	३७,०२९	४२,८८७

प्रान्तीय व्यय (हजार रुपयोंमें)

मद	बंगाल १९३८–३९	बंगाल १९३९–४०	आसाम १९३८–३९	आसाम १९३९–४०	पञ्जाब १९३८–३९	पञ्जाब १९३८–४०	सीमाप्रान्त १९३८–३९	सीमाप्रान्त १९३९–४०	सिन्ध १९३८–३९	सिन्ध १९३९–४०
आमदनीपर खर्च	९,७६४	१०,४६५	३,५९२	४,८५८	८,६४६	८,५०६	८५३	८५१	२,६०३	२,८२६
सिंचाई	३,८९२	३,८९७	६९	५९	१४,९८२	१५,८२६	४७७	४५८	१२,७९८	१७,०६७
ऋण	१,५७३	१,७१५	३,३९०	४१२	२,१०२	१,७४६	२४०	१८२	१६७	५१७
शासन क–साधारण	५१,९७१	५३,४७१	७,९८६	८,२११	३२,९५८	३२,८७४	७,२१२	७,८१६	८,३००	८,५००
ख–सामाजिक कार्य	३०,८०९	३२,४८८	७,१६१	७,३८६	३२,३८४	३२,५८८	३,६६८	३,८२५	५,२५२	५,५८५
सिविल	१२,८६९	१४,२३२	४,३८३	४,७८४	१४,०३७	९,२३४	३,९५४	३,७५१	२,३९९	३,०३४
फुटकर	१५,४६४	१९,४७७	३,३८७	३,५२३	१५,२२३	११,५४७	१,२६३	१,५२९	२,८६२	२,७६०
आमदनी मदके खर्चमें फुटकर	१,३२०	१,०८२	—	—	—	—	१६३	७४	१९९	२१९
बिजली स्कीममे पूंजीपर सूद	—	—	—	—	—	२,७३२	—	—	२०९	—
असाधारण	—	२९७	—	—	—	—	—	—	—	—
जोड़	१२७६६२	१३७१२४	२९९४८	२९२३३	११६१२८	११९५६१	१७८३०	१८६९५	३४५८०	४०५०८

सार्वजनिक उपयोगमें व्ययका व्यौरा (हजार रुपयोंमें)

मद	बंगाल		आसाम		पञ्जाब		सीमाप्रान्त		सिन्ध	
	१९३८–३९	१९३९–४०	१९३८–३९	१९३९–४०	१९३८–३९	१९३९–४०	१९३८–३९	१९३९–४०	१९३८–३९	१९३९–४०
विज्ञानविभाग	२९	३०	४	५	३६	२९	५	५	—	—
शिक्षा	१५,५१८	१६,२६०	३,६०५	३,८६७	१६,१३५	१६,३५१	२,२२५	२,३३८	३,०६१	३,१३१
दवादारू	५,५९६	५,६३३	१,४५४	१,४४०	५,२५८	५,०६०	६७५	७७६	७८८	८५४
स्वास्थ्य	४,०६०	३,९३९	८८६	८२१	२,०३७	१,८०१	१७७	१५९	२५७	२६६
कृषि	१,४०३	२,१६४	५७८	६३०	३,५५०	३,६६२	२३७	२४१	७७२	९६७
पशुचिकित्सा	५३०	५८३	१५८	१६३	१,७६०	१,८४९	१६०	१५३	११९	१२३
सहयोगसमिति	१,३३८	१,४४९	९६	९२	१,४९२	१,७८१	१२१	१२१	१२८	१२३
उद्योग-धन्धा	१,८३२	२,०२२	२७३	२७८	१,९३६	१,८८०	६२	२५	८५	९१
हवाई	—	—	—	—	—	—	—	—	—	—
रेडियो	—	—	—	—	—	—	—	—	४	—
फुटकर	५०३	४०८	८७	९०	१८०	१७५	६	३	४२	३०
जोड़	३०,८०९	३२,४८८	७,१४१	७,३८६	३२,३८८	३२,५८८	३,६६८	३,८२५	५,२५२	५,५८५

ऊपरकी तालिकाका अध्ययन करनेसे विदित होगा कि प्रत्येक प्रान्तकी आमदनी और खर्च बराबर है। अलग गिये जानेपर भी यदि इन प्रान्तोको इसी सतहपर रखा जायगा तो इनकी आमदनी और खर्च बराबर रहेगी। लेकिन आसाम, सीमाप्रान्त तथा सिन्धकी आमदनी वहांके खर्चको तब पूरा कर पाती है जब केन्द्रीय सरकारसे इन्हे क्रमशः ३० लाख, एक करोड़ तथा एक करोड़ और पांच लाख सलाना मिलता है। इनकी अपनी आमदनीसे इनका खर्च पूरा नही हो सकता था और यदि केन्द्रीय सरकार इन्हे उपर्यूक्त मदद न दे तो इन्हे सदा घाटा रहेगा।*

आसाम प्रान्तमें सामाजिक सेवाके मदमें १९३८-३९ मे ७१.४१ लाख तथा १९३९-४० मे ७३.८६ लाख प्रान्तीय सरकारका खर्च था। और यह स्पष्ट है कि केन्द्रीय सरकारसे सहायता न मिले तो इस मदमे आसाम प्रान्त आधी रकम भी खर्च नही कर सकेगा। इस सहायताके बिना सीमाप्रान्तकी हालत डावाडोल हो जायगी। सीमाप्रान्त अपना शासन-खर्च भी नही सँभाल सकता। केवल इस मदमे १९३८-३९ मे २२½ लाख तथा १९३९-४० में २८½ लाखकी कमी रही। परिणाम यह होगा कि सामाजिक सेवा तथा नागरिक उपयोगिताके मदके खर्चको एकदम घटाकर इन बिभागोको बन्द कर देना

---

* १९४० के लाहौरवाले प्रस्तावसे यह स्पष्ट नही होता कि उत्तर-पश्चिमी प्रान्तोंसे जो मुस्लिम राज बनेंगे तथा पूर्वमें मुस्लिम-प्रधान प्रान्तोसे जो राज बनेंगे, वे अपना एक संघ-राज कायम करेंगे अथवा अलग-अलग स्वतन्त्र और खुदमुख्तार बने रहेंगे। प्रस्तावकी शब्दावलीसे तो अन्तिम बातकी ही ध्वनि निकलती है। ऐसी हालतमें पाकिस्तानके गरीब तथा पिछडे प्रान्तोके ऊपर बजटका बहुत अधिक बोझ पडेगा और वर्तमान भारत सरकारकी भाति उनकी कमीको पूरा करनेके लिए उनकी कोई केन्द्रीय सरकार भी नही होगी।

यह स्मरण रखनेकी बात है कि कर्ज चुका देनेके बाद सिन्धको केन्द्रीय सहायताकी जरूरत नही पड़ती। १९४३-४४ से वह बन्द कर दी गयी है।

(शेष टेबिल अगले पृष्ठपर)

गवर्नमेण्ट आव इण्डिया (आमदनीका बंटवारा) सशोधित आर्डरके अनुसार केन्द्रीय सरकारद्वारा प्रान्तोको जो सहायता या अन्य आमदनी प्राप्त होती है।

पानेवाले प्रान्त	आमदनीपर कर १९३८-३९ (अकाउण्ट्स)	आमदनीपर कर १९४५–४६ (वजट)	पाटपर ड्यूटी १९३८–३९ (अकाउण्ट्स)	पाटपर ड्यूटी १९४५–४६ (वजट)	सहायता १९३८–३९ (अकाउण्ट्स)	सहायता १९४५–४६ (वजट)
बंगाल	३०.००	४६५.८०	२२१.२७	१२१.२२	—	—
बम्बई	३०.००	४६५.८०	—	—	—	—
मद्रास	२२.५०	३४९.३५	—	—	—	—
संयुक्तप्रान्त	२२.५०	३४९.३५	—	—	२५.००	—
पञ्जाब	१२.००	१८६.३२	—	—	—	—
मध्यप्रान्त-बरार	७.५०	११६.४५	—	—	—	—
बिहार	१५.००	२३२.९०	१७.१२	७.८०	—	—
आसाम	३.००	४६.५८	११.६९	१०.०८	३०.००	३०.००
उड़ीसा	३.००	४६.५८	०.९०	०.९०	४३.००	४०.००
सीमाप्रान्त	१.५०	२३.२९	—	—	१००.००	१००.००
सिन्ध	३.००	४६.५८	—	—	१०५.००	—

होगा। उसी तरह सिन्धमें भी शासन खर्चके मदमे कमी पड़ेगी, किन्तुसीमा-प्रान्तके समान नहीं। लेकिन यदि केन्द्रीय सरकारसे वह सहायता नही प्राप्त होगी तो सामाजिक तथा नागरिक उपयोगिताके कामोको एकदम बन्द करदेना पडेगा। बलूचिस्तानका सारा भार केन्द्रीय सरकारपर है। १९३२-३३ मे उसकी आमदनी २०.५४ लाख तथा खर्च ९१.५६ लाख था। ७१ लाखसे कुछ ऊपर घाटा केन्द्रीय सरकारको पूरा करना पड़ा था। इस तरह हम देखते है कि यदि आसाम, सीमाप्रान्त, सिन्ध और बलूचिस्तान अलग कर दिये जाय तो दोनो क्षेत्रोंकी सघ-सरकारको यह सहयता बराबर देते रहना पडेगा अर्थात् पूर्वी मुस्लिम क्षेत्रको ३० लाख सालाना और पश्चिमी मुस्लिम क्षेत्रको २ करोड़ ७६ लाख सालाना। तभी ये राज १९३९—३९ अथवा १९३९—४० की सतहपर अपनी शासन व्यवस्था कायम रख सकेंगे

यहां यह भी लिख देना आवश्यक है कि उस सतहपर सार्वजनिक कार्यके लिए व्यय करना असम्भव होगा क्योंकि नीचेकी तालिकासे प्रकट होगा कि वे बहुत नीची सतहपर थे:—

प्रान्त	सार्वजनिक कार्यमे औसत व्यय १९३८—३९, १९३९—४०	जनसख्याके अनुसार प्रति व्यक्तिपर औसत खर्च		
		रु०	आ०	पा०
बंगाल	२१६.४८ लाख रुपये	—	८	५
आसाम	७२.६३ ,,	—	११	३
पञ्जाब	३२४.८६ ,,	१	२	३
सीमाप्रान्त	३७.४६ ,,	१	३	८
सिन्ध	५४.१८ ,,	१	३	८

इन मदोंमें किसी तरहका खर्च बढ़ानेका मतलब होगा आमदमें वृद्धि करना, चाहे वह वृद्धि संघ-सरकारसे मददके रूपमें हो अथवा प्रान्तमें कर लगा कर हो। शासनके व्ययमें किसी तरहकी कटौतीकी आशा नही की जा सकती। सीमाप्रान्तके सिबा अन्य किसी प्रान्तने इस तरहके कोई लक्षण अबतक तो नहीं

प्रकट किये। सीमाप्रान्तमें यह भावना अल्पकालिक थी कि शासन-व्यय अधिक है और उसे घटाकर कम करना चाहिये। यह साधारण बात है कि भारतकी साधारण जनताकी आयके मोकाबले यहाके ऊची श्रेणीके कर्मचारियोका वेतन बहुत ज्यादा है। यदि शासन व्यय कम करनेकी नीयतसे नहीं तो कमसे कम उपर्युक्त विषयपर जोर देनेकी नीयतसे ही काग्रेसने मन्त्रियोका वेतन बहुत कम नियत किया था। मुस्लिम लीगके मन्त्रियोने उस नीतिको कबूल नहीं किया। इससे यही परिणाम निकलता है कि शासनके व्ययमे कमी करनेकी ओर उन्होने लेशमात्र भी प्रवृत्ति नही दिखलायी। यदि शासन विभागके लम्बी तनखाह पानेवाले कर्मचारी शासन व्ययमे किसी तरहकी किफायतसारी-की प्रवृत्ति नही दिखलाते तो कम वेतन पानेवालोसे इस तरहकी कोई आशा करना व्यर्थ है। इसलिए इस परिणामपर पहुंचना अनुचित नही होगा कि शासन-व्ययमे किसी तरहकी कमीकी आशा नही करनी चाहिये। अतएव सार्वजनिक कार्यके मदमे खर्चकी किसी तरहकी वृद्धिकी पूर्ति प्रान्तमें नया कर बिठाकर अथवा सघ-सरकारसे मदद लेकर ही हो सकेगी।

प्रान्तीय बजटके सम्बन्धमे एक बात और कह देना आवश्यक है। ऊपरकी तालिका तथा उसके विश्लेषणमे यह मान लिया गया है कि आसाम, बगाल तथा पञ्जाबका समूचा भाग मुस्लिम क्षेत्रमे पड़ेगा। लेकिन पीछे एक अध्यायमें हम यह दिखला आये है कि इन प्रान्तोके कुछ हिस्से ही मुस्लिम क्षेत्रमें पड़ेगे। ऐसी हालतमे इन प्रान्तोकी आमदनी और खर्च दोनोमे कमी हो जायगी। लेकिन यह बतलाना कठिन है कि यह कमी कितनी होगी। जिले-वार आंकड़े प्राप्त नही है और प्रत्येक जिलेका ठीक-ठीक आकड़ा निकालनेमें बहुत कठिनाई है। एक मोटा तरीका यह हो सकता है कि प्रत्येक प्रान्तकी आम-दनी और खर्चको उस प्रान्तकी हिन्दू और मुसलमान जनसख्याके आधार-पर बांट दिया जाय। लेकिन इस उपायसे आमदनीका अन्दाज ठीक-ठीक भले ही लगे पर खर्चका एकदम गलत अंक प्राप्त होगा। किसी स्वायत्त और खुदमुख्तार प्रान्त या संघको चाहे वह कितना ही छोटा क्यों न हो, भिन्न-भिन्न

विभागोंके शासनके लिए सदर हाकिम तो रखने ही होंगे। उदारणके लिए यदि बंगालको मुस्लिम तथा गैर-मुस्लिम दो क्षेत्रोंमें बांट दिया जाय तो दोनों क्षेत्रोंके लिए अलग-अलग शासक रखने होंगे और उसी तरह उनके अधीनस्थ कर्मचारी भी रहेगे अर्थात् जहां पहले एक शासकसे काम चलता था, वहां अब दो शासक रखे जायंगे। एकके बजाय दो प्रान्तीय सेक्रेटेरियट कायम करना पड़ेगा। किसी भी प्रान्तको दो क्षेत्रोंमें बाट देनेपर जिलेका खर्च भले ही ज्योंका त्यों रह जाय लेकिन प्रान्तका खर्च तो निश्चय ही दूना हो जायगा। वास्तविक खर्चका अन्दाजा लगान तो कठिन है लेकिन इतना निश्चयपूर्वक कहा जा सकता है कि जनसख्याके आधारपर वर्तमान खर्चको प्रति व्यक्ति बांट देनेसे जो परिणाम निकलेगा उससे कही ज्यादा खर्च प्रान्तके मुस्लिम जिलोके ऊपर पड़ेगा। इसलिए बगाल और पञ्जाबके व्ययपर विचार करते समय हमलोगोको यह स्वीकार कर लेना होगा कि प्रान्त तथा प्रान्तीय सदर अफसर (शासक) तथा प्रान्तीय सेक्रेटेरियटका खर्च जनसंख्याके अनुपातसे हिसाबके वर्तमान व्ययके हिस्सेसे कही ज्यादा होगा। आसामके सम्बन्धमें यह कठिनाई नही उपस्थित होती क्योंकि उसका केवल एक जिला अर्थात् सिलहट जिला मुस्लिम क्षेत्रमे पड़ेगा और वह भी बगाल मुस्लिम प्रान्तमे मिला लिया जायगा। इएसलिए उसके लिए अलग प्रान्तीय शासन स्थापित करनेकी जरूरत नही पड़ेगी। कहनेका मतलब यह है कि ऊपरकी तालिकामें पञ्जाब और बंगालका जो बजट आय-व्ययके लिहाजसे बराबरका बजट दिखलाया गया है वह उस वक्त वर्तमान आयके आधारपर बराबरका बजट नही रहेगा जब इन प्रान्तोके गैर-मुसलमान जिले अलग कर दिये जायंगे। घाटेका ठीक-ठीक अन्दाज नही लगाया जा सकता लेकिन इतना तो निश्चय है कि बहुत बड़ी कमीका सामना करना पड़ेगा। ब्रिटिश शासनकालमें ही जो प्रान्त एक प्रान्तसे अलग कर लिये गये है उनका उदाहरण सामने मौजूद है। हमारे सामने उड़ीसा और सिन्धका उदाहरण है। अलग किय जानेके बाद इनमेसे एक प्रान्त भी अपना व्यय नही संभाल सका और भारत सरकारको इन प्रान्तोंकी बहुत अधिक सहायता करनी पड़ी। हमने देखा

कि सिन्धको १ करोड़ ५ लाख सालाना मिलता है और उड़ीसाको १९३८–३९ और १९३९–४० मे ४३ लाख सालाना मिला था। प्रान्तीय आय-व्ययके इस पहलूपर अधिक जोर इसलिए देनेकी आवश्यकता है कि प्रोफेसर कूपलैण्डने पाकिस्तानके आय-व्ययकी आलोचना करते हुए यह लिख दिया है कि "अखण्ड भारतमे आय-व्ययकी जो हालत प्रान्तोंकी है, वही हालत पाकिस्तानमे भी रहेगी।"* और इसलिए उन्होने इसका विस्तृत दिग्दर्शन नही कराया है। सर होमी मोदी तथा डाक्टर मथाईने सप्रू कमेटीके सामने जो व्यवस्था पत्र (मेमोरेण्डम) उपस्थित किया है उसमे वे लोग भी इस पहलूको छोड़ गये है।

जनसंख्याके आधारपर आसाम, बगाल तथा पञ्जाब प्रान्तके मुस्लिम जिलोके आय और व्ययका अलग-अलग ब्यौरा देना आवश्यक है। यहा इतना लिख दिया जा सकता है कि बगालके मुस्लिम जिलोकी आबादी ६७.९ फीसदी, आसामकी ३०.५ फीसदी और पञ्जाबकी ५९ ४ फीसदी प्रत्येक प्रान्तकी वर्तमान आबादीकी होगी।

२—**संघका आय-व्यय**

अब यह देखना है कि भारतके केन्द्रीय सरकारके आय-व्ययका कौन अंश उत्तर-पश्चिम तथा उत्तर-पूर्वी मुस्लिम राष्ट्र-सघके जिम्मे पड़ेगा। ऊपर कहा जा चुका है कि ठीक-ठीक आकड़ोका पता लगाना कठिन काम है। बहुत बड़ी उलझनदार गणनाके बाद प्रोफेसर कूपलैण्डने अपनी पुस्तक "दि फ्यूचर आव इण्डिया" मे तथा सर होमी मोदी और डाक्टर मथाईने कुछ आंकड़े निकाले है। मै उन्ही आंकड़ोके आधारपर जहा-जहां सम्भव है आगे बढ़नेकी कोशिश करूंगा। प्रोफेसर कूपलैण्डने १९३८–३९ के आधारपर आकड़ा तैयार किया है और सर होमी मोदी तथा डाक्टर मथाईने प्रोफेसर कूपलैण्डके तरीकेमें कुछ रद्दोबदल कर १९३९–४० के आधारपर आंकड़ा तैयार किया है। इस तरह जिन सालोके हमें प्रान्तीय आंकड़े मिले है उन्ही सालोंके लिए

* प्रोफेसर कुपलैण्ड—"दि फ्यूचर आव इण्डिया", पृष्ठ ९१।

ये केन्द्रीय आंकड़े भी मिल जाते हैं। इन आंकड़ोंको तालिकाके रूपमें इस प्रकार दिया जा सकता है:—

आमदनी (लाख रुपयोंमें)

मद	१९३८–३९* केन्द्रीय	१९३८–३९* उत्तर-पश्चिमी क्षेत्र	१९३९–४०† उत्तर-पश्चिमी क्षेत्र	१९३९–४०† पूर्वी क्षेत्र
चुगी	४०५०.५३	४४८.०६	५८२.९	१२३६.३
आबकारी	८६५.७३	१००.९२	७८.०	१२१.१
कारपोरेशन टैक्स	२०३.७२	१५.२८	१७.१	७३.५
अन्य टैक्स	१३७४.४४	१२१.१०	१५०.४	२९७.५
नमक	८१२,०४	७६.६५	११९.१	२०७.६
अफीम	५०.८९	———	———	———
रेल	१३७.३२	१५०.००	–१११.८	–१४०.८
तार, डाक, टकसाल और करेन्सी	४१.४०	५.१७	२१.३	३६.०
अन्य मद	१०३.२०	१८.८७	१९.८	१.६
जोड़	७६३९.२७	९३६.०५	८७६.८	१८३२.८

खर्च (लाख रुपयोंमें)

मद	१९३८–३९* केन्द्रीय	१९३८–३९* उत्तर-पश्चिमी क्षेत्र
आमदनीपर खर्च	४२३.६०	५१.४९
सिचाई	९.२४	७.०२
ऋण	१३३८.५४	१८६.००
शासन	९८४.६९	१४५.५६

* कूपलैण्ड—फ्यूचर ऑव इण्डिया पृ० ९२

† मेमोरैण्डम टू सप्रू कमेटी बाई सर होमी मोदी ऐण्ड डाक्टर मथाई पृ० ७

सिविल	२१९.५८	१०.८३
फुटकर	२०४.३२	३३.१३
रक्षा	४६१८.००	—
लेन-देन	३०६.३२	२०५.००
जोड़	८१०४.१९	६३९.०३

१९३९–४० †

मद	उत्तर-पश्चिमी क्षेत्र	उत्तर-पूर्बी क्षेत्र
शासन	१४५.८	२०३.१
ऋण	२१६.४	४४१.७
पेन्शन	४०.७	६५.५
प्रान्तोंको मदद	२०५.०	३०.०
अन्य मद	३०.४	४७.६
जोड़	६३८.३	७८७.९

ऊपरकी तालिकामें १९३८–३९ तथा १९३९-४० के आंकड़े है। आगेकी तालिकाके आकड़े और भी हालके है। ये भारत सरकारके १९४५-४६ के बजटके व्याख्यात्मक व्यवस्थापत्र (एक्सप्लेनेटरी मेमोरैण्डम) से लिये गये हैं। प्रान्तोंके आंकड़े एक-एक प्रान्तके अलग-अलग न होकर सभी प्रान्तोंके एकमें मिलाकर दिये गये है। लेकिन युद्धके कारण इनकी साधारण स्थितिमें कोई अन्तर नहीं आया है यद्यपि इससे पजाब और सिन्धकी आमदनीमें अस्थायी वृद्धि हो गयी है। जहां बंगालमे घाटा बहुत ज्यादा बढ़ गया है वहां सिन्धने अपना कर्ज अदा कर दिया है और अब उसे सहायताकी जरूरत नहीं रह गयी है जो १९४३-४४ से बन्द कर दी गयी है। लेकिन सीमाप्रान्त तथा आसाममें सहायताके मदमें किसी तरहका परिवर्तन नहीं हुआ है।

† मेमोरैण्डम टू सप्र कमेटी बाई सर होमी मोदी ऐण्ड डा० मथाई पैरा १२

भारतका आय-व्यय और कर्ज १९३८–३९ तक (करोड़ रुपयोंमें)

१ केन्द्रीय सरकारका बजट	१९३८–३९	१९३९–४०	१९४४–४५ (संशोधित)	१९३९–४०से १९४४–४५ तकका जोड़	१९४५–४६ बजट
१—आमदनी	८४.५२	९४.५७	३५६.८८	१,१२२.६१	३६२.३४*
२—खर्च	८५.१५	९४.५७	५१२.६५	१५,९९.५५	५१७.६३
३–फाजिल (+) या कमी (–)	–०.६३	....	–१५५.७७	–४७६.९४	–१५५.२९
४–(१) और (२) की फीसदी	९९.३	१००.००	६९.७	७०.२	७०.०
२ क. भारतके नाम लगी कुल पूंजी	८५.१५	९४.५७	५७२.०६	१४७८.९३	५३५.३९
१—शासन व्यय	३८.९७	४५.०३	११५.४२	४०२.२२	१२३.४०
२—रक्षा व्यय	४६.१८	४९.५४	४५६.६४	१३४६.७१	४११.९९
(क) पूंजीपर	...	...	५९.४१	१४९.३८	१७.७६
(ख) आमदनीपर	४६.१८	४९.५४	३९७.२३	११९७.३३	३९४.२३
(१) साधारण बजट	३८.०७	३६.७७	३६.७७	२२०.६२	३६.७७
(२) मंहगी	...	१.१९	१६.९२	४७.४८	१९.७६
(३) युद्ध-जनित	...	३.५२	३३४.२२	८७८.४६	३२८.५१
(४) नान-एफेक्टिव चार्ज	८.११	८.०७	९.३२	५०.८०	९.१९
३—(आमदनीपर) रक्षा-व्ययका कुल व्ययपर औसत	५४.२	५२.४	७७.५	७४.९	७६.२

	ख. युद्ध-खर्च जो वापस होगा	...	४.००	४३९.५२	१३९३.८८	४८८.८०
३	केन्द्रीय सरकारका कुल ऋण जिसपर सूद दिया जाता है (इसमें बिना मदके कर्ज और जमा की गयी रकम भी शामिल है)	१२०५.७६	१२०३.८६	१८११.०२	...	२१८०.५७
४	प्रान्त					
	(१) आमदनी	८४.७४	९०.८३	२००.७८	७८४.१२	१८८.१७
	(२) खर्च	८५.७६	८९.२२	२०८.०५	७६७.९६	१९१.७४
	(३) फाजिल (+) कमी (−)	−१.०२	+१.६१	−७.२७	+१६.१६	−३.५७
	(४) कर्जकी स्थिति† (कुल कर्ज)	१६३.२०	१६७.६१	२१५.४१	५२.२१	...

* इसमें नये कर भी शामिल हैं।

† इसमें स्थायी कर्ज, अस्थायी कर्ज, बिना मदके कर्ज तथा केन्द्रीय सरकारसे लिये गये कर्ज शामिल हैं।

ऊपरकी दोनों तालिकाओंका मिलान करनेसे प्रकट होता है कि प्रोफेसर कूपलैण्ड, सर होमी मोदी और डा० मथाईनें जो आंकड़े दिये हैं उसमे रेलवेकी आमदनीमे बहुत ज्यादा अन्तर है। प्रोफेसर कूपलैण्डने लिखा है, कि "पाकिस्तान क्षेत्रमे १२८ लाखका लाभ हुआ और युद्ध-क्षेत्रमे १८२ लाखका घाटा।" युद्ध-क्षेत्रमें इस मदसे जो घाटा हुआ उसे वह गणनामे नही रखते क्योकि उनकी गणना रक्षा-विभागमें की जायगी। प्रोफेसर कूपलैण्डने नफेकी रकमको बढ़ाकर १५० लाख इस आधारपर माना है कि यात्रियोसे आमदनी बढेगी। लेकिन वह १५० लाखका आकड़ा कभी भी प्राप्त नही हो सकता। इससे स्पष्ट है कि प्रोफेसर कूपलैण्डने जो तरीका अपनाया है और उससे आमदनीकी जो बढती दिखायी है उसका समर्थन कहीसे भी नही हो सकता क्योकि उनके दिये गये आंकड़ोके अनुसार ही वास्तविक आमदनी (१२८-१८२) = –५४ लाख होनी चाहिये। और उत्तर-पश्चिमी क्षेत्रकी कुल आमदनी १९३८–३९ में ९३६.०५ लाखके बजाय ७०२.०५ लाख होनी चाहिये।

व्ययका हिसाब लगानेमे प्रोफेसर कूपलैण्डने अनेक मदोपर विचार नही किया है जिनका स्पष्ट उल्लेख उन्होने किया है और यह आशंका की जाती है कि एक स्वतन्त्र खुदमुख्तार राजके विभिन्न विभागोको चलानेके लिए अनुमानित व्ययसे बहुत ज्यादा व्यय होगा क्योकि एक स्वतन्त्र संघ शासनको चलानेमे वे ही व्यय होगे जो एक नये प्रान्तीय शासनके चलानेमें पड़ते है। लेकिन जो आंकड़े दिये गये है उन्हे सही मान लेनेपर हम लोग यह देखते है कि उत्तर-पश्चिमी क्षेत्रमे १९३८–३९ मे ९३.०२ तथा १९३९–४० मे २३८.५ लाख की बचत होगी। ऊपरके आंकड़ेमे रक्षाका व्यय नहीं शामिल है। अब यह देखना है कि क्या बचतकी इस रकमसे उत्तर-पश्चिमी स्वतन्त्र मुस्लिम राजके रक्षा-विभागका व्यय पूरा हो जायगा।

मुस्लिम लीगकी विचारधाराका समर्थन प्रोफेसर कूपलैण्डने अपनी पुस्तकमें आदिसे अन्ततक किया है, लेकिन वे भी इसी परिणामपर पहुँचे हैं कि बचतकी

इस रकमसे उत्तर-पश्चिमी स्वतन्त्र मुस्लिम राजकी रक्षाका व्यय पूरा नही हो सकता। उन्हीके शब्दोंको यहां उद्धृत कर देना उचित होगा—"प्रतीत होता है कि पाकिस्तानकी सबसे बड़ी कठिनाई और सबसे बड़ा खतरा उसकी रक्षाका प्रश्न है। ऊपर जिन सम्भावनाओंकी चर्चा की गयी है यदि वे वास्तविक है तब तो उन्हें अपनी उत्तर-पश्चिमी सीमाकी रक्षाकी व्यवस्था हिन्दू भारतकी सहायताके बगैर ही करनी होगी। जिस पैमानेपर अतीतमें इस क्षेत्रकी रक्षाकी व्यवस्था की गयी थी, उस पैमानेपर भी रक्षाकी व्यवस्था करना—आधुनिक ढंगके अस्त्र-शस्त्रकी बढ़ती कीमतको छोड़कर भी—उसकी शक्तिसे बाहरकी बात होगी। इसके लिए एक तरफ कर लगाकर इतनी अधिक आमदनी खड़ी करनी पड़ेगी और दूसरी ओर शासन-व्यय तथा सार्वजनिक मदके व्ययमें इतनी ज्यादा कटौती करनी पड़ेगी कि रहन-सहनके साधारण मापदण्डको एक दम गिरा देना पड़ेगा और इन पिछड़ी जातियोको और भी पीछे ही ढकेल नही दिया जायगा बल्कि अनेक वर्षोंके लिए इनके भाग्यका फैसला कर दिया जायगा। पर शायद इतनेसे ही काम न चले। पाकिस्तानके पूर्वीय क्षेत्रकी सीमाकी रक्षा-की व्यवस्था करनेकी भी चिन्ता अब शायद करनी पड़े।

इस अध्यायके आरम्भमे भारतके बॅटवारासे जो लाभ होगा उसका दिग्दर्शन जितना व्यवहारतः सम्भव हो सकता है, कराया जा चुका है, इसलिए उससे जो हानि होगी उसका भी व्यावहारिक दिग्दर्शन करा देना आवश्यक है। तब रक्षाके इस अनिवार्य विषयपर आकड़े और उचित सम्भावनाएँ किस परिणामपर ले जाती है? क्या यह बात एकदम स्पष्ट नही है कि भारतका अंग रहकर पाकि-स्तानकी जितनी पूरी रक्षा हो सकी है, उसे वह कायम नही रख सकेगा? रक्षाके साधारण साधन भी उसकी आमदनीका बहुत बड़ा अंश अपनी ओर खीच लेंगे और जनता की सामाजिक उन्नति रुक जायगी। पाकिस्तानको यह खतरा सिरपर उठाना पड़ेगा।* अपने मतके समर्थनमें उन्होंने पञ्जाब एसेम्बलीमे

---

* प्रोफेसर कूपलैण्ड—"दि फ्यूचर ऑव इण्डिया" पृ० १९५–९६।

दिये गये सर सिकन्दर हयात खांके भाषणका एक अंश उद्धृत भी किया है।

प्रोफेसर कूपलैण्डने न तो उत्तर-पूर्वी मुस्लिम क्षेत्र और न गैर-मुस्लिम जिलोंको ही अलग कर समस्त मुस्लिमक्षेत्रोका दिग्दर्शन कराया है। सर होमी मोदी तथा डाक्टर मथाईने दोनोपर विचार किया है। ऊपरकी तालिकामें उत्तर-पूर्वी क्षेत्रके जो आकड़े दिये गये है वे सम्पूर्ण बंगाल और आसाम प्रान्तके है। नीचेकी तालिकामे उत्तर-पश्चिमी तथा उत्तर-पूर्वी मुस्लिम क्षेत्रोंकी——गैर-मुस्लिम ज़िलोंको निकालकर——आयव्ययका जिलेवार व्योरा दिया गया है:——

(लाख रुपयोंमें)

(१९३९-१९४०)*

आमदनी			व्यय		
मद	पूर्वी क्षेत्र	उत्तर-पश्चिमी क्षेत्र	मद	पूर्वी क्षेत्र	उत्तर-पश्चिमी क्षेत्र
चुंगी	७७५.०	४०२.२	शासन	१२६.८	१००.६
केन्द्रीय आबकारी	७५.५	५३.८	ऋण	२७६.७	१४९.५
कारपोरेशन टैक्स	४६.०	१२.०	पेन्शन	४१.०	२८.०
अन्य टैक्स	१८६.५	१०३.७	प्रान्तोको मदद	१८.८	१४१.४
नमक	१३०.०	८३.२	अन्य मद	३०.०	२१.०
डाक तथा तार	२२ ०	१४.७			
रेलोंसे घाटा	–८८.५	–७७.२			
फुटकर	१ ०	१३.६			
जोड़	११४७ ५	६०५ ०	जोड़	४९३.३	४४०.५

* मेमोरैण्डम टू सप्रू कमेटी बाई. सर होमी मोदी ऐण्ड डा० मथाई पैरा १३।

इससे प्रकट होगा कि फाजिलमें तो कमी हो जायगी लेकिन रक्षाकी आवश्यकताओमें कमी नहीं होगी। इसपर दूसरे पहलूसे विचार किया जा सकता है। रक्षाकी समस्यापर विचारनेके लिए यह उचित नही होगा कि दोनोंक्षे त्रोंकी जनसंख्या के अनुपातसे इस मदके खर्चको दोनोंपर बांट दिया जाय। दोनों मुस्लिम क्षेत्र सीमापर हैं इसलिए स्थल-मार्गद्वारा विदेशी आक्रमणोसे देशकी रक्षाका सारा भार उन्हें ही सभालना होगा। उत्तर-पश्चिम सीमाप्रान्तकी ओरसे आक्रमणकी आशका केवल ब्रिटिश शासनकालमे ही नही, बल्कि मुसलमानोके शासनसे लेकर समस्त मुस्लिम शासनकालतक बनी रही। इस दूसरे विश्वयुद्धने इस बानकी सम्भावना भी प्रकट कर दी कि उत्तर-पूर्वी क्षेत्रकी ओरसे भी आक्रमण हो सकते है और भविष्यमे उधरसेअ सावधान नही रहा जा सकता। यद्यपि मुस्लिम क्षेत्रमें जो समुद्री किनारे पड़ते है वे बहुत लम्बे नही होगें तो भी जहाजी बेडेका समुचित प्रबन्ध तो करना ही होगा। यदि रक्षाका व्यय उतना ही मान लिया जाय जितना युद्धके पहले था, और जनसख्याके अनुसार उसे बाट दिया जाय——यद्यपि यह तरीका असन्तोषजनक और गलत होगा——तो हमलोग निम्नलिखित परिणामपर पहुंचते है। यह रक्षाकी दृष्टिसे बहुत बड़ी कमी प्रकट करता है, यद्यपि इस परिणामपर पहुंचनेमें रक्षाके वर्तमान साधनोके बढ़े हुए मूल्यका खयाल नही किया गया है:——

पूर्वी क्षेत्र लाख (रुपयोंमें)

	प्रान्तवार			जिलावार		
सन्	रक्षाके लिए प्राप्य आयका अंश	रक्षापर व्यय	कमी	रक्षाके लिए प्राप्य आय	रक्षापर व्यय	कमी
१९३९-४०	१०४४.९;	११९७.८;	१५२.९,	६४४.२;	७४८.९,	१०४.७

पश्चिमी क्षेत्र (लाख रुपयोंमें)

सन्						
१९३८-३९	९३.०२;	६४२.०१;	५४८.९९			
१९३९-४०	२३८.५;	६१९ ७६;	३८१.२६;	१६४.५;	४२३.७३;	२५९.२३

रक्षाके प्रश्नका दूसरा पहलू भी है जिसकी अवज्ञा नही की जा सकती। जब हम स्वतन्त्र मुस्लिम राज कायम कर लेंगे तब हमें अपने ही नागरिकोंमेंसे सैनिक रखकर उन्हे वेतन देना होगा और भारतके बाकी हिस्सेको अपने नागरिकोंमेसे सैनिक रखकर उन्हे वेतन देना होगा। जहांतक रक्षा विभागकी नौकरी का सम्बन्ध है, इस बंटवारेकी आर्थिक उलझन उत्तर-पश्चिमी मुस्लिम राजके लिए बहुत ही हानिकर साबित होगी। डाक्टर अम्बेदकरने दिखलाया है कि १९३० मे सेनाका जो संघटन था उसमें ५८.५ फीसदी सैनिक उन प्रदेशोके थे जो उत्तर-पश्चिमी मुस्लिम क्षेत्रमे पडते है।* भारतीय सेनामे मुसलमान सैनिकोंके अनुपातका हिसाब स्वतन्त्र रूपसे किया गया है और डाक्टर अम्बेदकरने दिखलाया है कि पैदल सेनामें ३६ प्रति सैकड़े और घुड़सवारोमे ३० प्रति सैकड़े मुसलमान है और प्रायः वे सबके सब पञ्जाब अथवा सीमाप्रान्तके निवासी है।† इस क्षेत्रको समस्त भारतसे अलग कर उसे एक स्वतन्त्र राज बना देनेपर, जब बाकी भारतके लोग अपने यहाके नागरिकोंको अपनी सेनामें भारती करने लगेंगे तब वे सैनिक अपने पदसे हटा दिये जायगे। यदि उत्तर-पश्चिमी मुस्लिम स्वतन्त्र राज इन्हे अपनी सेनामें न रखेगा तब इनका क्या होगा? विद्वान डाक्टरने यह भी दिखलाया है कि पाकिस्तान—जिसके सबसे अधिक नागरिक वर्तमान भारतीय सेनामे भरती होते है—केन्द्रीय कोषमे सबसे कम रकम देता है जो नीचे दिये आकड़ोसे स्पष्ट हो जायगा—

केन्द्रीय कोषमे जो रकम दी जाती है

पञ्जाब	१,१८,०१,३८५ ००
सीमाप्रान्त	९,२८,२९४ ,,
सिन्ध	५,८६,४६,९१५ ,,
बलूचिस्तान	०
जोड	७,१३,७६,५९४ ,,

---

* डा० अम्बेदकर—थाट्स आन पाकिस्तान, पृष्ठ ७०।
† वही पृष्ठ ७६–७७।

इसके मुकाबलेमें हिन्दुस्तानके अन्य प्रान्त इस प्रकार रकम देते हैं—

मद्रास	९,५३,२६,७४५ रु०
बम्बई	२२,५३,४४,२४७ ,,
बंगाल	* १२,००,००,००० ,,
संयुक्तप्रान्त	४,०५,५३,००० ,,
बिहार	१,५४,३७,७४२ ,,
मध्यप्रान्त बरार	३१,४२,६८२ ,,
आसाम	१,८७,५५,९६७ ,,
उड़ीसा	५,६७,३४६ ,,
जोड़	५१,९१,२७,७२९ रु०

इन आकड़ोंसे प्रकट होता है कि पाकिस्तानके प्रान्तोंसे बहुत थोड़ी रकम केन्द्रीय सरकारको मिलती है। प्रधान रकम तो हिन्दुस्तानसे ही मिलती है। यदि वास्तवमे देखा जाय तो हिन्दुस्तानके प्रान्तोकी आमदनीसे केन्द्रीय सरकार पाकिस्तानके प्रान्तोंमे काम करती है। पाकिस्तानके प्रान्त हिन्दुस्तानके प्रान्तोपर बोझ-स्वरूप हैं। वे केन्द्रीय सरकारको केवल थोड़ी रकम ही नही देते, बल्कि उससे बहुत बड़ी रकम पाते भी हैं। केन्द्रीय सरकारकी सलाना आमदनी १२६ करोड़ है। इसमेंसे ५२ करोड़ प्रतिवर्ष केवल सेनापर व्यय किया जाता है। इस ५२ करोड़ रकमका बहुत बड़ा अंश उस मुसलमान सेनापर व्यय किया जाता है जिसके अधिकांश सैनिक पाकिस्तानके प्रान्तोंके है। इस रकमका बहुत बड़ा भाग तो हिन्दुस्तानके प्रान्तोसे मिलता है लेकिन वह उस सेनापर व्यय किया जाता है जिसके अधिकांश सैनिक गैर-हिन्दू है।†

* बंगालकी केवल आधी रकम दिखायी गयी है क्योकि प्रायः आधी जनसंख्या हिन्दू है।

† डा० अम्बेडकर—पाकिस्तान या पार्टिशन ऑव इण्डिया पृ० ८६-८७।

इससे यह स्पष्ट है कि उत्तर-पश्चिमी मुस्लिम क्षेत्रको केवल उस बड़ी रकम-के लाभसे ही वंचित होना नही पड़ेगा जो केन्द्रीय सरकार अन्य प्रान्तोसे वसूल कर उसपर व्यय करती है बल्कि अपनी सेनाको वेतन देनेके लिए उसे रुपयोकी भी व्यवस्था करनी पड़ेगी। उस क्षेत्रके लोग सेनामें भर्ती होकर जो रकम वेतनके रूपमें पाते है, वह तो बन्द हो ही जायगी साथ ही अपनी सेना रखनेके लिए उन्हे अतिरिक्त कर देना पड़ेगा। श्री के० टी० शाहने लिखा है.—"इस अदृश्य पारितोषिककी बहुत बड़ी रकम हो जाती है, क्योंकि भारतीय सेनामें सबसे अधिक संख्या पञ्जाबियोंकी है, उन सैनिको और अफसरोकी तनखाहे भत्ता, पेशन तथा कम्पके साथ रहनेवाले मजदूरोंका वेतन और ठीकेदारोंका नफा सब मिलाकर बडी रकम हो जाती है। इस मदमे युद्धके पहले जो व्यय होता था उसमेसे ऊपरकी सब रकमोंको मिलाकर कमसे कम दस करोड़की रकम केवल पञ्जाबको इस 'अदृश्य पुरस्कार' के रूपमें मिल जाती है। युद्धने तो इसे और भी बढा दिया है। युद्धके बाद यह रकम २५ करोडसे कम किसी भी हालतमे नही होगी।"※

पञ्जाब प्रान्तकी इस सम्भावित हानिको सर सिकन्दर हयात खां भलीभांति समझते थे। इसलिए बॅटवारेकी अपनी योजनामें उन्होंने इस बातपर बहुत अधिक जोर दिया है कि यदि भौमिक आधारपर भारतका किसी तरह बँटवारा हो तो सेनामे कमसे कम उतने मुसलमान अवश्य रहें जितने ता० १ जनवरी १९३७ को थे। इस युद्धमे भी उत्तर-पश्चिमी क्षेत्रने भारतीय सेनाको बहुत अधिक सैनिक प्रदान किया है और इस तरह यह लाभ उठाया है जिसकी चर्चा श्री के० टी० शाहने की है। केन्द्रीय व्यवस्थापक सभामे एक प्रश्नका उत्तर देते हुए मार्च १९४५ में युद्धमन्त्रीने बतलाया था कि भारतीय सेनामें जितने सैनिक भर्त्ती किये गये उनमें २९.९ सैकड़े पञ्जाबी ४ सैकडे अफगानी (सीमाप्रान्त) और ०.४ सैकडे सिन्धी अर्थात् कुल ३४·३ सैकड़े उत्तरी क्षेत्रके है।

※ के० टी० शाह—व्हाई पाकिस्तान हवाई नाट पृ० १६४

सार्वजनिक ऋण (१९३९-४०)

१९३९-४० के अन्तमे केन्द्रीय तथा प्रान्तीय सरकारोंका सार्वजनिक ऋण इस प्रकार था:—

केन्द्रीय सरकार

भारतमें	५,०५,५१,१०,८१६ रु०
इग्लैण्डमें	९,४४,६१,५५,३९९ ,, (३२९,३२८,३९४ पौ०, एक पौण्ड १३ रु० के बराबर माना गया है)

प्रान्तीय सरकारे:—

बंगाल	३०,००,००० रु०	
आसाम	५०,००,००० ,,	
पञ्जाब	३४,०५,५०,५१५ ,,	उत्तर-पश्चिमी क्षेत्रका जोड़
सीमाप्रान्त	५७,२४,९०० ,,	६३,१९,५२,१६७ रु०
सिन्ध	२३,५६,७६,७५२ ,,	
कुर्ग	३,६२,५२८ ,,	
मद्रास	११,९६,९२,३१९ ,,	
बम्बई	३१,१८,७३,७२० ,,	
संयुक्तप्रान्त	३१,१३,९२,८८६ ,,	
बिहार	० ,,	
मध्यप्रान्त बरार	४,८८,४०,८६३ ,,	
उड़ीसा	० ,,	
जोड़	१४३,२१,१२,९३७ ,,	

कुल प्रान्तोंको मिलाकर १४३ करोड़का जो सार्वजनिक ऋण है उसमेंसे ६३ करोड़ केवल पञ्जाब, सीमाप्रान्त तथा सिन्धके ऊपर है। कर्जकी इस

रकमका अधिकांश भाग सिंचाईके प्रबन्धमें लगा हुआ है जिससे पञ्जाबको खासी आमदनी है और सिन्धको भी इससे खासी आमदनी होगी। पूर्वी क्षेत्रके ऊपर कर्जका कोई ऐसा बोझ नहीं है।

यदि भारतका विभाजन मुस्लिम तथा गैर-मुस्लिम क्षेत्रोंमें हो और इस सार्वजनिक ऋणको दोनो क्षेत्रोमें बाटना पड़े तो यह हिसाब भी एक उलझनकी वस्तु हो जायगा। लेकिन इसमें सन्देह नही कि उत्तर-पश्चिमी तथा पूर्वी क्षेत्र पर इसका जो बोझ पड़ेगा वह हल्का नहीं होगा।

इसके अलावा युद्धके कारण केन्द्रीय सरकारका सार्वजनिक ऋण बहुत ज्यादा बढ़ गया है। १९३९-४० के अंकके आधारपर कोई हिसाब लगाना गलत होगा। १९३९-४० में जो ऋण ९४४½ करोड़ था वह इस वक्त २००० करोड़के लगभग होगा। यदि पुराने आंकड़ेके अनुसार ही केन्द्रीय कर्जका बँटवारा दोनों क्षेत्रोंके मुस्लिम जिलोंके अनुसार कर दिया जाय तो भी प्रान्तीय कर्जको मिलाकर उनका हिसाब ५०० करोड़से कम नही होगा। ३ प्रति सैकड़ाके हिसाबसे इस रकमका सालाना सूद १५ करोड़ होगा। रक्षाके अलावा शासनके खर्चके बाद जो रकम दोनों क्षेत्रोंके पास बचेगी उसकी करीब करीब दूनी यह सूदकी रकम हो जायगी। लेकिन जैसा ऊपर कहा गया है कि पावनाका यह रूप इतना सीधासादा नहीं होगा बल्कि बहुत जटिल होगा। इस सम्बन्धमें सर अर्देशिर दलालने लिखा है:—

"ब्रिटिश भारतकी इस इकाईको भिन्न-भिन्न टुकड़ोंमें बाटना अर्थ-शास्त्रीय और आर्थिक दृष्टिसे बहुत कठिन ही नही, बल्कि असम्भव होगा। रेल विभाग, डाक तथा तार विभाग, सिंचाई तथा जल कलके विभागको टुकड़ोंमें बांटना पड़ेगा। इन सभी राष्ट्रीय कामोंके लिए जो कर्ज लिये गये हैं उन्हें बांटना पड़ेगा और इनके स्थानपर नये आंकड़े खड़े करने होंगे। इसी तरह सेनाको तोड़ना पड़ेगा और अतीतका देना तथा भविष्यके व्ययको ठीक करना होगा। केन्द्रीय सरकारकी आमदनीसे बहुत ज्यादा रुपया सिन्धके सक्खर बांधमें व्यय किया गया है। इस व्ययको तथा पाकिस्तानके अन्दर भारत सरकारने अन्य बड़े-बड़े

कामोंके लिए जो व्यय किये है उसे पाकिस्तानको देना पड़ेगा। पाकिस्तानके हिस्सेसे भारत सरकारने हिन्दुस्तानमे इस तरहके बड़े बडे कामोंके लिए जो व्यय किये है वह रकम इसमेंसे घटा दी जायगी। जब यह सब, जटिल, कठिन और हृदयविदारक काम सम्पन्न हो जायगे—यदि बिना किसी मुसीबत और असम्भव कठिनाइयोके ये सम्पन्न हो गये—तब प्रकट होगा कि पाकिस्तान एक बहुत ही गरीब और साधन-विहीन राष्ट्रके रूपमे प्रकट हुआ है। अलग होनेके साथ ही उसके सामने अनेक समस्याए उपस्थित होगी, जिन्हे हाथमे लेना आवश्यक होगा। इसके साथ ही कर्जका वह बोझ सिरपर होगा, जिसे अदा करना कठिन हो जायगा। ऐसी अवस्थामे उसे उस आर्थिक और औद्योगिक उन्नतिसे अपनेको वञ्चित रखना पड़ेगा जिसकी आशा स्वतन्त्र भारतमे की जाती है।"*

---

* नीचेकी तालिकामे कर्जकी स्थितिका पूरा-पूरा हवाला मिल जाता है। इस तालिकाका अध्ययन करते समय इस बातको ध्यानमें रखना होगा कि १९४५–४६ के बजटमें कर्जकी जो रकम दिखायी गयी है उसमे ३१–३–४६ तकके कर्जका पूरा ब्यौरा नही है, क्योंकि अनुमानित समयसे पहले ही अचानक युद्ध बन्द हो जानेके कारण, कर्जकी वास्तविक रकम बहुत ज्यादा बढ़ गयी है। यह २००० करोड़से भी ज्यादा होगी और उसी अनुपातसे प्रान्तोका हिस्सा भी होगा।

प्रान्तोके सिरपर अपने कर्जका बोझ अलग है। प्रान्तके सभी कर्जोंसे आमदनीका जरिया नही है। बंटवाराके बाद भारत सरकारके कर्जका जो हिस्सा उनके जिम्मे पड़ेगा, वह प्रान्तीय कर्जके अतिरिक्त होगा। प्रान्तीय कर्जकी अपेक्षा केन्द्रीय सरकारके कर्जका बहुत बड़ा हिस्सा ऐसा है जिससे किसी तरहकी आमदनी नही होती।

देनाके मुकाबले पावनाकी जो तालिका है, उससे बहुत अंशोंमे आमदनीकी कोई गुञ्जाइश नही है। उदाहरणके लिए पौण्डपावना (स्टर्लिंग सिक्योरिटी) तथा बर्माको दिये गये कर्ज है। यदि इनमेंसे कर्जकी कोई रकम प्राप्त न हो सके या अपना बोझ संभालने लायक भी सूद इनसे प्राप्त न हो सके तो प्रत्येक प्रान्तपर पहलेकी अपेक्षा बोझ बढ़ जायगा। अन्तिम बंटवारा करनेसे पहले प्रत्येक पावनाकी आंच-पड़ताल आवश्यक होगी।

अक्तूबर १९३९ के शर्तनामाके अनुसार युद्धका जो व्यय सीधे भारतके जिम्मे होगा उससे सम्बन्ध रखनेवाले पेंशन वगैरहकी रकमोंका अभीतक कोई निपटारा नही हुआ है।

भारत सरकारका १९४५-४६ का एक्स प्लेनेटरी मेमोरैण्डम बजट

भारत सरकारका वह ऋण जिसपर सूद देना पड़ता है तथा वह जिसपर सूद मिलता है। (करोड़ रुपयोंमें)

सभी प्रान्तोंको मिलाकर कर्जकी स्थितिका आजतकका ब्यौरा इस तालिका-में दिया गया है।

१९३६-३७ से प्रान्तोंकी ऋणकी स्थिति (करोड़ रुपयोंमें)

	१९३८-३९ के अन्तमें	१९४४-४५
१—सार्वजनिक ऋण		
(क) स्थायी ऋण	१५.०७	५०.९२
(ख) चलता ऋण	१.५०	६८.२३
(ग) केन्द्रीय सरकारका ऋण	१२३.२४	६६.५७
२—अस्थायी ऋण	२३.३९	२९.७७
३—कुल कर्ज (१ और २ का जोड़)	१६३.२०	२१५.४९
४—कर्ज (प्रान्तीय सरकारोंद्वारा दिये गये कर्ज और पेशगीको काटकर)	१०२.४८	१८५.७९

भारतमें

सार्वजनिक ऋण	१९३८-३९ (युद्धके पहले)	१९४५-४६ (प्रस्तावित बजट)
कर्ज	४३७.८७	१,४८४.४३
ट्रेजरी बिल और वेतन आदि	४६.३०	८६.६१
	४८४.१७	१,५७१.०४

अनफण्डेड ऋण (अर्थात् जो कर्ज किसी मदके लिए नही है)		
नौकरीका	१.०३	.७४
पोस्टआफिस सेविग्स बैंक (इसमे डिफेस सेविग्स बैंक शामिल है।)	८१.८८	११०.२०
पोस्टआफिसमे नकद और डिफेंस सेविग्स		
सेविग्स	५९.५७	४३.९०
स्टेट फ्राविडेण्ट फण्ट	७२.४०	९७.२०
नेशनल सेविग्स सर्टिफिकेट	...	५१.६५
अन्य	१०.२५	१३.०८
जोड	२२५.१३	३१६.७७
जमा		
घिसाई तथा संचित कोष	२७.३४	१२५.८९
अन्य जमा रकम	...	१२९.२८
भारतमें कुल देनाका जोड़	७३६.६४	२१,४२,९८
इग्लैण्डमे		
सार्वजनिक ऋण कर्ज	३९६.५०	१३.४२
युद्धका चन्दा	२०.६२	२०.६२
रेलवे खरीदनेमें मावजेकी रकम	४७.८२	२६.०१
जोड़	४६५.९४	६.०१
बिना किसी मदका कर्ज नौकरीका	४.१८	३.५९
इंग्लैण्डमें कुल देना	४६९.१२	६३.६०
कुल देना जिसपर सूद देना पड़ता है	१२०५.७६	२२०६.५८

(शेषांश अगले पृष्ठके नीचे)

रेलवे

ब्रिटिश भारतकी इन प्रधान रेलवे लाइनोंमेसे ईस्टर्न बंगाल रेलवे तथा आसाम बंगाल रेलवेका कुल हिस्सा प्रायः पूर्वी क्षेत्रमें पड़ता है। इनमे कुल ७९.५५ करोड़ पूजी लगी हुई है और इनसे सालाना नफा १२८ करोड़ ४५ लाख है अर्थात् १.६ फी सदी है। नार्थ वेस्टर्न रेलवे प्रायः उत्तर-पश्चिमी क्षेत्रमें पड़ता है इसमे १५३ करोड़ २६ लाख रुपया लगा है और इसका सालाना नफा ४ करोड़ ९३ लाख ३४ हजार है अर्थात् लागत पूजीपर ३.२२ फी सदी नफा मिलता है। इससे प्रकट होता है कि ब्रिटिश भारतकी अन्य प्रधान रेलोकी अपेक्षा इन दोनो क्षेत्रोंमे पड़नेवाली रेलोंमें कम नफा है। इस विषयमें भी ब्रिटिश भारतके अन्य क्षेत्रोंकी अपेक्षा मुस्लिम क्षेत्रोंकी हालत खराब रहेगी। रेलवेकी आमदनीका यह पहलू अब महत्वपूर्ण हो गया है क्योकि यदि कुल नही तो अधिकांश प्रधान रेलवे——सरकारकी हो गयी है और उनसे जो आमदनी होगी वह

पावना जिसपर सूद मिलता है

रेलवेमें लगी पूजी	७२५.२४	७९७.३८
अन्य व्यावसायिक विभागको दी गयी पूजी	२७.४२	४२.१०
प्रान्तोंको दी गयी पूजी	१२३.२८	७६.९७
देशीनरेशोंको दी गयी पूजी तथा अन्य	२०.७१	१८.६५
वर्मापर ऋण	४९.७३	४८.१५
रेलवेका देना अदा करनेके लिए एच० एम० जी० के पास जमानत	...	२६.०१
	९४६.३८	१००९.२६
खजानेमें नकद जमा	३०.३०	५४७.०२
अन्य	२२९.०८	६५०.३०

(क) ऊपरकी तालिकामें प्रत्येक सालके अन्तकी बाकी दी गयी है।

(ख) पौण्ड पावनेको १ शि० ६ पें० की दरसे रुपयेमें बदल दिया गया है।

रेलवे (१९३९–४०) (हजार रुपयोंमें)

रेलवे	कुल लगी पूजी	कुल आमदनी	खर्च	लाभ	कुल आमदनी पर खर्चका औसत	लगी पूजी पर लाभका औसत
आसाम बंगाल	२,६४,८७४	२१,३३५	१६,८२६	४,५०६	७८.८६	१.७०
बी. एन डब्ल्यू (ओ. टी.)	२,२८,४९४	३६,२९०	१८,४८२	१७,८०८	५०.९३	७.७९
बंगाल नागपूर	७,८४,५९७	१,१०,४४६	७४,३४४	३६,१०२	६७.३१	४.६०
बी. बी. ऐण्ड सी. आई.	७,७५,०२०	१,२८,७०३	७४,१००	५४,६०३	५७.५७	७.०५
ईस्टर्न बंगाल	५,३०,६४६	६३,६५९	५५,३२०	८,३३९	८६.९०	१.५७
ईस्ट इण्डियन	१४,९९,४१७	२,१५,५४६	१,३१,०८४	८४,४६२	६०.८२	५.६३
जी. आई. पी.	११,७७,९७०	१,४२,२९८	९१,१०१	५१,१९७	६४.०२	४.३५
एम. एस. एम.	५,६३,४६०	८०,१७१	४८,९२६	३१,२४५	६१ ००	५.५५
नार्थ वेस्टर्न १	१५,३२,६०२	१,६८,९७९	१,१९,६४५	४९,३३४	७०.८०	३.२२
रुहेलखण्ड कमायू	४७,५९१	७,६९३	३,७१९	३,९७४	४८.३४	८.३५
साउथ इण्डियन	४,८६,८५३	५५,१२६	३८,६८८	१६,४३८	७०.१८	३.३८
१नार्थ वेस्टर्न (कमर्सल)	११,९४,४३१	१,५५,०४३	१,००,७००	५४,३४३	६४.९५	४.५५
१नार्थ वेस्टर्न (मिलिटरी)	३,३८,१७१	१३,९३६	१८,९४५	–५,००९	१३५.९५	–१ ४८

उसी राष्ट्रको प्राप्त होगी जिसमे वे होंगी और उनसे जो हानि होगी उसे भी उसी राश्ट्रको बर्दाश्त करना पड़ेगा।

५

विभाजनके प्रस्तावकी आलोचना

१—बँटवाराके पक्षकी दलीलें

मुस्लिम और गैर-मुस्लिम राजोमे भारतके बंटवारेके दावेके मौलिक सिद्धान्तों-पर अर्थात् यह सिद्धान्त कि हिन्दू और मुसलमान दो अलग-अलग राष्ट्र है, दूरतक विचार किया गया। सास्कृतिक और राजनीतिक आधारपर बंटवारेकी अनेक योजनाओंकी भी समीक्षा की गयी। हमलोगोंने यह भी देखा कि भारतके उत्तर-पश्चिमी तथा पूर्वी भागमे स्वतन्त्र मुस्लिम राज कायम करनेके उद्देश्यसे अखिल भारतीय मुस्लिम लीगके प्रस्तावने जो मौलिक आधार नियत किया है उसमे ये योजनाएं कहांतक मेल खाती है और कहा इनमे भेद है। लीगने बंटवारे-का कोई विस्तृत ब्योरा नही उपस्थित किया है, केवल बंटवारेके आधारका सर-कारी तौरसे निर्देशभर कर दिया है। इसलिए हमलोगोंको इस बातपर विचार करना आवश्यक हो गया कि लीगके प्रस्तावमे जो सिद्धान्त दिये गये हैं उनके अनुसार किन क्षत्रोंमें मुस्लिम राज कायम हो सकते है और इन स्वतन्त्र मुस्लिम राजोंकी आमदनीका साधन क्या है और क्या हो सकता है। अब हम मुस्लिम और गैर-मुस्लिम भिन्न-भिन्न क्षेत्रोके आधारपर बंटवारेके प्रश्नपर साधारण तौरसे विचार कर सकते है और यह दिखला सकते है कि संसारकी वर्तमान स्थितिका उसपर क्या प्रभाव पड़ेगा।

प्रोफेसर रेजिनल कूपलैण्डने बटवाराके पक्षका समर्थन बड़ी ही जोरदार भाषामें की है। इसलिए बंटवाराके पक्षके समर्थनके लिए उसीसे यहां अवतरण दे देना सबसे ज्यादा उपयुक्त होगा—

(१) "हिन्दू और मुसलमानोके बीच दिनपर दिन वढते हुए वैमनस्यका कारण भय और अभिमान है। पाकिस्तान इसे सदाके लिए हल कर देगा।

पाकिस्तान आधेसे ज्यादा भारतीय मुसलमानोंके दिलसे हिन्दू राजका भय दूर कर देगा क्योंकि पाकिस्तान कायम होनेपर उन्हें यह आशा हो जायगी कि आज या कल वे उनके चंगुलसे सदाके लिए छुटकारा पा जायंगे। आज जहां वे एक बड़े राजमें अल्पमत समुदाय बनकर रहते है वहां बटवारा होते ही वे दो छोटे राजोंमें बहुमत समुदाय बन जायगे। यह मुसलमानोके लिए कम अभिमानकी बात नही होगी। साथ ही उन्हे इस बातका दावा हो जागया कि एक संयुक्त भारतीय राष्ट्रमें वे महज एक सम्प्रदाय न होकर, एक स्वतन्त्र राष्ट्र है और अपने स्वतन्त्र राष्ट्रके अन्दर उन्हे हर तरहकी राष्ट्रीय स्वतन्त्रता प्राप्त है। इसके साथ ही संसारमे उन्हें कदम आगे बढानेका मौका मिलता है........यह स्वतन्त्र मुस्लिम राज्य मध्यपूर्वके अन्य स्वतन्त्र मुस्लिम राष्ट्रोंका सहयोगी राष्ट्र होगा। आजकी अपेक्षा उस दिन उनके दिलमे यह भावना अधिक व्यापक रूपसे जागरित होगी कि वे ऐसे देशके साथ भ्रातृभावमे बंधे है जिसकी सीमा भारतसे कही दूरतक फैली हुई है। और दूसरी तरफ यदि वे संसारसे मुह मोड़ लेते है और हिन्दू बहुमतके अधीन हमेशाके लिए रहनेको राजी हो जाते है तो उनकी यहां वही हालत होगी जो यूरोपमे किसी भी अल्पसंख्यक समुदायकी हो रही है।

(२) "दूसरे, भारतभरके अल्पसंख्यक समुदायकी समस्या जिस खूबीके साथ पाकिस्तानद्वारा हल हो जाती है, वैसी किसी अन्य उपायसे हल नही हो सकती। पाकिस्तान बराबरीके सिद्धान्तको जिस रूपमे ग्रहण करता है, वही उसका उचित रूप है। जब एक या अधिक हिन्दू राजोकी बराबरीमें मुस्लिम राज कायम किये जाते है तब उनका आकार कितना ही छोटा क्यों न हो राष्ट्रीयताकी दृष्टिसे सभी समान हैं। इतनेपर भी सभी राष्ट्रोंमें अल्पसंख्यक समुदाय रह जायंगे......। यद्यपि साम्प्रदायिक एकरूपता अव्यावहारिक आदर्श है, यद्यपि अन्य अल्पसंख्यक समुदायोंके अतिरिक्त भी हिन्दू राजमे लाखों मुसलमान रह जायंगे, लेकिन उनसे समस्यामें किसी तरहकी जटिलता नहीं उपस्थित होगी; क्योंकि उदासीन ब्रिटिश अधिकारसे भारतको मुक्त करनेमें उलझे रहनेके कारण इन विभक्त राजोंमें अधि-

कारोंके लिए साम्प्रदायिक कलह रुक जायगी। मुस्लिम राजोंके लिए लीगके कार्यक्रममें संयुक्त शासन तथा अल्पसंख्यकोंके लिए रक्षणकी व्यवस्था है, लेकिन वे प्रधानतः मुस्लिम राज रहेंगे और मुस्लिम संस्कृति तथा मुस्लिम नीतिकी वहां व्यापक प्रधानता रहेगी—जिस तरह हिन्दू राज सभी बातोंके लिए प्रधानतः हिन्दू रहेंगे। इन स्वतन्त्र राष्ट्रोंमे बसनेवाले अल्पसंख्यकोंको अपने बहुसंख्यक समुदायके साथ कलह जारी रखनेके लिए किसी तरहका प्रोत्साहन नहीं मिल सकता, ताकि उन्हें केन्द्रमें प्रधानता प्राप्त हो.......। क्योंकि उस हालतमें इस तरहका कोई केन्द्रीय शासन नही रहेगा। ......कहा जाता है कि बहुमत सम्प्रदायवाले अपनी जिम्मेदारीका पालन ईमानदारीसे करेंगे और अल्पसंख्यकोंसे आशा की जाती है कि वे अपनी अवस्थापर सन्तुष्ट रहेंगे। क्योकि सघ प्रान्तोंकी अपेक्षा स्वतन्त्र राजोंमे इस बातका सदा भय बना रहेगा कि यदि कोई राज अपने यहाके अल्पसंख्यक समुदायको तंग करेगा तो दूसरे राजोंमे बसे उस सम्प्रदायके लोगोंपर भी उस राजद्वारा जुल्म होने लगेंगे।

(३) तीसरे, विभाजनसे समस्त भारतकी रक्षाका प्रश्न हल हो जाता है। ....उत्तर-पश्चिम सीमापर स्वतन्त्र मुस्लिम राज स्थापित होते ही उधरसे भयकी शंका सदाके लिए जाती रहती है। सीमाके उस पारके सभी निवासी मुसलमान हैं। जहां उन्हें एक बार यह मालूम हो गया कि उन्हे अपने ही इस्लामी भाइयोका मुकाबला करना पड़ेगा वहा उनका गैर-मुसलमानोके खिलाफ जेहादका धार्मिक और राजनीतिक जोश सदाके लिए ठण्डा पड जायगा।... इसके अलावा पाकिस्तान तथा पड़ोसके अन्य स्वतन्त्र मुस्लिम राजोके साथ सन्धि द्वारा मैत्रीसे भी इस आशंकाको दूर किया जा सकता है। १९३७ में जिस सआदाबादकी सन्धिके अनुसार तुर्की, ईरान, फारस तथा अफगानिस्तान एक सूत्रमें बंध गये थे उसमें एक और साथीका प्रवेश क्यों नहीं हो सकता?

(४) चौथे, अविच्छिन्न भारतमें जब सैनिक संघटन भारतीयों और प्रधानतः हिन्दुओंके हाथमें हो जायगा उस समय भारतीय सेनामें मुसलमानोंकी संख्या निश्चय ही घटा दी जायगी।.....वैसी हालतमें मुसलमान सैनिकोंकी संख्या जो

१९३९ में एक तिहाईसे ज्यादा थी और इस समय भी ३०.८ फीसदी है, वह घट-कर चौथाईसे भी कम हो जायगी। इसका असर पञ्जाबके निवासियोकी केवलमात्र रहन-सहन और जीविकापर ही नहीं पड़ेगा—जैसा दिखलाया गया है कि पञ्जाब-निवासियोकी जीविकाका प्रधान जरिया सेनामे नौकरी तथा पेशन है—बल्कि इससे सैनिक शक्ति हिन्दुओके हाथमें चली जायगी।

(५) कहा जाता है कि एकमात्र विभाजनद्वारा ही मुसलमानोको आर्थिक आत्म-निर्णयका अधिकार प्राप्त हो सकता है। हिन्दू-मुस्लिम वैमनस्यका एक कारण यह भी रहा है, और हिन्दू राजसे मुसलमानोके भयभीत होनेका एक प्रधान कारण यह है कि इससे हिन्दुओंके हाथमे जो अधिकार चला जायगा उसके सहारे वे समस्त भारतमें अपनी आर्थिक प्रभुता कायम कर लेगे।... जिन प्रान्तोमे मुसलमानोका बहुमत है वहा भी खुदरा चीजोकी दूकाने हिन्दुओकी ही पायी जाती है, शहरी जीवनमे हिन्दुओकी ही प्रधानता है, पञ्जाब तथा सिन्ध मे भी नये पेशे तथा मध्यश्रेणीके व्यवसायोमे हिन्दुओकी ही प्रधानता है... यह तो बुरा था ही, लेकिन औद्योगिक विकासने परिस्थितिको और भी बुरा बना दिया है.. । उत्तर-पश्चिमी प्रान्तका मुस्लिम-क्षेत्र कृषि-प्रधान है। इसकी आबादी ब्रिटिश भारतकी आबादीका १२.३ सैकड़े है। लेकिन ब्रिटिश भारतमे जितने कल-कारखाने है उनका ५ १ प्रतिशत ही यहां है और खनिज पदार्थ भी केवल ५ ४ सैकड़े है। बगालका औद्योगिक विकास बहुत ज्यादा हुआ है। ब्रिटिश भारतकी जनसख्याके मुकाबले यहांकी जनसंख्या २० प्रति सैकड़े है और यहाके कल-कारखानोमें काम करनेवालोके हिसाबसे यहां तमाम भारतके ३३ फीसदी कल-कारखाने है लेकिन जिन क्षेत्रोमे अधिकाश कल-कारखाने है वह प्रधानत: हिन्दू-प्रधान कलकत्ता नगर और उसका पड़ोस है। कलकत्ताको अलग कर देनेपर उत्तर-पूर्वी मुस्लिम क्षेत्र उत्तर-पश्चिमी मुस्लिम क्षेत्रकी अपेक्षा कही ज्यादा कृषि-प्रधान हो जाता है। भारतीय कल-कारखाने हिन्दू क्षेत्रमे ही सम्मिलित हैं और इनमें पूजी भी हिन्दू पूंजीपतियोंकी ही लगी है तथा इनमे काम करनेवाले मजदूर भी अधिकांश हिन्दू ही है...कमसे कम अपनी आर्थिक स्थितपर तो

पाकिस्तानका अधिकार रहेगा। कमसे कम उत्तर-पश्चिमीक्षेत्रमें तो वह अपना कारखाना स्थापित कर उनकी रक्षा कर सकेगा। अपने यहांकी कपासको बम्बई न भेजकर वह ज्यादासे ज्यादा मिले खड़ी करेगा और कड़ी चुगी लगाकर अपने यहांकी पैदावारकी रक्षा करेगा। समय पाकर अधिक पूंजी हो जानेपर वह अपने औद्योगिक विकासके लिए अपने यहाके सुरक्षित जल-शक्तिका उपयोग करेगा। उत्तर-पश्चिमी भारतके लिए माल मँगानेके बन्दरगाहके रूपमे करांची बन्दरगाहको उन्नत कर बम्बई बन्दरगाहको गौण बना दिया जा सकता है।.......*"

२—पाकिस्तान पक्षके तर्कोंका उत्तर

ऊपर जो अवतरण दिये गये है उनकी एक एक करके समीक्षा कर लेना उचित होगा।

(१) आरम्भमें ही यह लिख देना उचित होगा कि जहा भावुकता और दुर्भावनाको इतनी ऊँचाईतक चढ़ा दिया गया है वहां इस तरहकी महत्वपूर्ण समस्याओंपर शान्तचित और निष्पक्ष दृष्टिसे विचार करना, असम्भव नही तो कठिन अवश्य है। साधारणत: अभिमानकी भावना भयकी भावनाको दबा देती है, लेकिन प्रोफेसर कूपलंण्डके विश्लेषणके अनुसार भारतीय मुसलमानोंमें दोनो वर्तमान है। आखिर इस भयकी भावनाका कारण क्या है? भारतपर अधिकार प्राप्त करने तथा उसके शासनकी बागडोर अपने हाथमें लेनेके बादसे इस देशपर ब्रिटिश सरकार शासन कर रही है। यदि मुसलमानोकी प्रभुता और लाभोको हानि पहुँची है तो वह ब्रिटेनके कारण न कि हिन्दुओं अथवा अन्य गैर-मुस्लिमोके कारण क्योंकि मुसलमानोंके साथ ही साथ वे भी अपने सारे अधिकारोंसे वञ्चित कर दिये गये। इसलिए उनके द्वारा अधिकारोंके दुरुपयोगका प्रश्न ही कहां उठता है। यह ऐतिहासिक तथ्य है कि ब्रिटिश शासनके आरम्भिक युगमें हिन्दुओंकी अपेक्षा मुसलमानोंपर शासकोंकी कड़ी निगाह रहती थी और उन्हें सन्देहकी दृष्टिसे देखा जाता है था और यह भी अस्वीकार नही किया जा सकता कि कुछ वर्षोंतक हिन्दुओंकी अपेक्षा उन्हें अधिक सताया और तंग किया गया।

---

* आर० कूपलैण्ड : दि फ्यूचर ऑव इण्डिया, पृष्ठ ७५-९।

लेकिन साथ ही यह भी अस्वीकार नही किया जा सकता कि जब ब्रिटिश अधिकारियोने यह देखा कि हिन्दुओने उनकी शक्तिका मुकाबला करना आरम्भ कर दिया है तब उन्होने यह तै किया कि वह समय आ गया है जब हिन्दुओकी पीठ ठोंकना बन्द कर देना चाहिये और उसके स्थानमे मुसलमानोकी पीठ ठोकना आरम्भ कर देना चाहिये। ब्रिटिश अधिकारियोके इस नीति-परिवर्ततनका फल यह हुआ कि हिन्दू तथा मुसलमान एक दूसरेको अविश्वास तथा सन्देहकी दृष्टिसे देखने लगे और तीसरे दलके हाथमे अक्षुण्ण और निर्विघ्न अधिकार छोड़ दिया। यदि घटनाओका अध्ययन शान्तचित्तसे और स्थितिका अध्ययन विवेकशीलताके साथ किया गया होता तो अविश्वास उस तीसरे दलके उद्देश्य के प्रति होता। लेकिन दुर्भाग्यवश विचार-धाराका प्रवाह ही उलट दिया गया। यदि मुसलमान पिछडे रह गये तो उसकी जिम्मेदारी किसी भी प्रकार हिन्दुओपर नही है। उसकी सारी जिम्मेदारी उस ब्रिटिश सरकारपर है जिसने १५० वर्षोसे सारा अधिकार अपने हाथोमे बटोर रखा हैं। उन अधिकारोमेसे जो कुछ भारतीयोको मिला है वह १९१९ तथा १९३५ के शासन-विधानके अनुसार जिसके निर्माणकी सारी जिम्मेदारी ब्रिटेनके ऊपर है। १९३५ के शासन-विधान के अनुसार कुछ प्रान्तोमे मुसलमानोका अधिकार रहा जहा उनका बहुमत है। कमसे कम भारतके दो बडे-बड़े प्रान्तो—बंगाल तथा पञ्जाब—और सिन्धमे शासन-विधानके प्रयोगकाल अप्रैल १९३७ से मुसलमानोंका अक्षुण्ण शासन कायम रहा। केन्द्रीय शासन सदा ब्रिटेनके हाथमे ही रहा। उन प्रान्तोंमे भी जहां मुसलमानोका अल्पमत था, २७ महीने छोड़कर हिन्दू बहुमतको शासन करनेका कोई अवसर नही मिला। यदि मुसलमान पिछड़े रह गये तो इसके लिए हिन्दू बहुमतके मत्थे दोष किस तरह मढ़ा जा सकता है? केन्द्रमे शासन करनेका उन्हें कभी अवसर नहीं मिला और हिन्दू बहुमत प्रान्तोमें शासन करनेका अल्पकालिक अवसर ही उन्हें मिला। प्रश्न यह उठता है कि प्रगतिशील मुसलमानोके मार्गकी बाधाएँ दूर करनेके लिए उत्तर-पश्चिमी तथा उत्तर-पूर्वी क्षेत्रोंके मुसलमान मन्त्रियोंने क्या किया है? यदि उसके उत्तरमें यह कहा जाय कि हिन्दू अल्पसंख्यकके

विरोधके कारण वे कुछ नही कर सके—जो किसी भी प्रमाणद्वारा सिद्ध नही किया जा सकता—तब क्या यह पूछना उपयुक्त नही होगा कि भारतके विभाजनमें भी इस अवस्थामें किस तरह सुधार किया जायगा जब कि आजकलकी तरह अल्प-सख्यक समुदाय उस समय भी कायम रहेगे। यदि यह स्थिर कर लिया गया हो कि उनके सारे राजनीतिक अधिकार छीन लिये जायँगे अथवा उन्हें इस तरह दबा दिया जायगा कि वे बहुसंख्यकका मुकाबला या विरोध वैधानिक रीतिसे भी नही कर सकें तब तो बातें ही दूसरी है। यदि उत्तर-पश्चिमी तथा पूर्वी स्वतन्त्र मुस्लिम राजोसे—खासकर पञ्जाब और बगालसे—अल्पसख्यक समुदायके लोग किसी भी उपायसे गायब कर दिये जाय तब की बात दूसरी है। लेकिन इस तरहका कोई भी सुझाव नही पेश किया गया बल्कि मुस्लिम लीगके प्रस्तावमे जो कुछ कहा गया है यदि उसे सही मान लिया जाय तब तो उसके अनुसार,—"अल्पसख्यक समुदाय कायम रहेगे और उनकी धार्मिक, सास्कृतिक, आर्थिक, राजनीतिक, शासन सम्बन्धी तथा अन्य अधिकारो तथा स्वार्थोकी रक्षाके लिए शासन-विधानमे गैर-मुस्लिम राजोके आधारपर उनकी सहमतिसे पर्याप्त, प्रभावपूर्ण तथा अनिवार्य सरक्षणकी व्यवस्था की जायगी।" जैसा हम लोगोने ऊपर देखा है पञ्जाबमे भी अल्पसख्यक समुदाय नगण्य नही होगे जहा मुसलमानोंकी आबादी ७५ फी सदीसे अधिक नही होगी। उसी तरह उत्तर-पूर्वी क्षेत्रमे यदि समूचा बगाल और आसाम प्रान्त उसमे मिला दिया गया तो मुसलमानोकी आबादी ५१ या ५२ फी सदीके बीचमे होगी और यदि गैर-मुसलमान-प्रधान जिले उससे निकाल भी दिये जायें तो भी मुसलमानोकी आबादी किसी भी हालतमे ६९ फी सदीसे ज्यादा नही होगी। यह बात समझमे नही आती कि इन क्षेत्रोंको मुस्लिम-राज किस तरह कहा जायगा, क्योकि मुस्लिम राजका तो यही अर्थ होगा कि उस राजमे मुसलमानोंका अत्यधिक बहुमत है। इससे मुसलमानोको केवल इस बातका सन्तोष हो सकता है कि एक वृहत् राजमें अल्पसंख्यक बनकर रहनेकी अपेक्षा वे दो छोटे-छोटे राजोंमें बहुसंख्यक बन जायंगे इस तरहके अभिमानको जागृत कर उसे सन्तुष्ट करनेके लिए जितने बड़े त्यागकी जरूरत होगी उसपर मुसलमानों-को गौरसे विचार करनेकी आवश्यकता है।

रही विश्वके अन्य राष्ट्रोंके साथ सम्बन्ध स्थापित करनेकी बात। वह भी बहुत कुछ मुस्लिम राज होनेपर ही निर्भर करता है। संसारमें आज एक भी ऐसा देश नही है जिसपर मुसलमानोका शासन हो और जिसमें इतना जबर्दस्त गैर-मुस्लिम अल्पसंख्यक हों जैसा कि उत्तर-पश्चिमी तथा उत्तर-पूर्वी क्षेत्रमे होगा। लेकिन अन्य देशोंके मुसलमानोकी सहानुभूति प्राप्त करनेमे भारतके मुसलमानोंको बाधा कब पड़ी ? जहातक हिन्दुओका प्रश्न है वे भी कभी मुसलमानोके रास्तेमे बाधक नही बने, यद्यपि इन्हें इस बातकी स्वभावतः आशा रही है कि आवश्यकता पड़नेपर और विपत्ति आनेपर यहाके मुसलमान अपनी सारी शक्तिका उपयोग देशकी रक्षामे करेगे। बहुत दिनकी बात नही है जब खिलाफत आन्दोलनके समय दुनियाके दूसरे भागके मुसलमानोके स्वत्वोकी रक्षा-के लिए भारतके, गैर-मुसलमान बिना किसी भेद-भावके एक साथ खड़े हो गये और मुसलमानोके खलीफाके अधिकारोकी रक्षाके लिए उतना ही त्याग किया और यातनाएँ सही जितना पञ्जाबके हिन्दू, मुसलमान तथा सिक्खोके ऊपर किये गये अन्याचारोके निवारणके लिए। किसी भी मुसलमानी राजके खिलाफ हिन्दुओने कभी कुछ नही किया है और कोई कारण नही है कि पारस्प-रिक लाभके लिए मध्यपूर्वकके मुसलमानी राष्ट्रोके साथ भारत मैत्री सम्बन्ध स्थापित न करे और इस तरहकी किसी सन्धिपर हस्ताक्षर न करे। सब कुछ कहने और करनेके बाद भी यह मुसलमानोपर ही निर्भर करता है कि वे क्या चाहते है। भारतके साथ अपने दीर्घ-कालीन सम्बन्धको कायम रखकर उसे अक्षुण्ण और बलशाली बने रहने देना और उसकी बरकतोका उपभोग करते रहना अथवा अपने अभिमानकी तुष्टिके लिए छोटे स्वतन्त्र राजमे परिर्वातत होना जो संयुक्त भारतसे निश्चय ही कमजोर होगा और समस्त भारतको कमजोर बना देगा। जिस बातका उनके जीवनपर ऐसा व्यापक प्रभाव पड़ेगा और जो विभाजन भारतवर्षके ८०० सालोके इतिहासपर पानी फेर देगा उस सम्बन्धमें गैर-मुसलमामोंको अपना मत प्रकट करनेसे वञ्चित नही किया जा सकता।

जिन क्षेत्रोंमे स्वतन्त्र मुस्लिम राजकी स्थापनाकी चर्चा हो रही है, वहांके तथा समस्त भारतके गैर-मुस्लिम—विभाजनका उनपर जो प्रभाव पड़ेगा तथा विभाजनके समर्थक मुसलमानोंने समय समयपर विभाजनका जो अन्तिम ध्येय बतलाया है, उसे दृष्टि-पथपर रखते हुए—यदि इसे सन्देहकी दृष्टिसे देखे तो उसे अनुचित नहीं कहा जा सकता। यह तो किसी भी प्रकार अस्वीकार नही किया जा सकता कि संयुक्त भारतकी अपेक्षा विभाजित भारत कमजोर रहेगा और अन्तर्राष्ट्रीय संघोमें उसकी उसी तरह सुनवायी नही हो सकती जैसी संयुक्त भारतकी हो सकती है।

अपने औद्योगिक विकास तथा सैकड़ो अन्य कामोके लिए और अन्तर्राष्ट्रीय व्यसवायके लिए दूसरे देशोसे वह सुविधाएँ उसे नही प्राप्त हो सकतीं। मुस्लिम क्षेत्रकी हालत और भी असुविधा-जनक होगी क्योकि वह बाकी भारतसे कहीं ज्यादा छोटा होगा। लेकिन विभाजनका बुरा प्रभाव गैर-मुस्लिम भारतपर भी काफी पड़ेगा।

विभाजनके समर्थकोने जो घोषणाएँ की है उन्हे दृष्टिमे रखते हुए भयकी आशंका और भी दृढ हो जाती है। यहा मै कुछ अवतरण दे देना चाहता हूँ जिससे प्रकट होगा कि यह आशका निर्मूल नही है कि विभाजनकी आड़में भारतमे मुसलमान राजको पुनः स्थापित करनेकी चेष्टा की जा रही है। श्री. एफ. के.-खां दुर्रानीने अपनी पुस्तक 'दि मीनिंग ऑव पाकिस्तान' की भूमिकामें जो—१२ नवम्बर १९४३ को लिखी है—लिखा है:—"भारतकी एक इंच भी भूमि ऐसी नहीं है जिसे हमारे पूर्वजोने अपना रक्तदान कर नही प्राप्त किया हो। हमलोग उनके उस रक्तके प्रति विश्वासघात नही कर सकते। भारत—समस्त भारत—हमलोगोंको विरासत है और इस्लामके लिए उसे पुनः जीतना होगा। धार्मिक दृष्टिसे इस्लामका प्रचार अनिवार्य और आवश्यक है और इसका मतलब हिन्दुओंके प्रति द्वेष और घृणा नहीं है बल्कि उसके एकदम विपरीत है। हमलोगोंका अन्तिम ध्येय इस्लामके झण्डेके नीचे धार्मिक तथा राजनीतिक दृष्टिसे

भारतका एकीकरण होना चाहिये। क्योंकि भारतका राजनीतिक उद्धार किसी दूसरी तरह सम्भव नही है।" *

पञ्जाबीने लिखा है:—"यह स्पष्ट कर दिया आवश्यक है कि हिन्दू भारतसे मुस्लिम प्रदेशको अलग कर देना ही अन्तिम ध्येय नही है, बल्कि एक आदर्श इस्लामी राज स्थापित करनेके लिए यह साधनमात्र है। प्रस्तावित विभाजनसे हम हिन्दुओकी आर्थिक दासतासे मुक्त हो जायँगे। चूकि हम लोगोका उद्देश्य आदर्श इस्लामी राजकी स्थापना है, इसलिए यह पूर्ण स्वाधीन राष्ट्रका भी द्योतक है। स्वाधीनता प्राप्त करनेके बाद, अपने इस्लामी राजके आदर्शको गैर-इस्लामी ससारमे बहुत दिनोंतक कायम रहने देना असम्भव होगा। ऐसी अवस्थामे हमलोगोंको इस्लामी आदर्शपर विश्व-क्रान्तिके लिए यत्न करना होगा। इस तरह यह स्पष्ट है कि हमलोगोंका अन्तिम ध्येय इस्लामी आदर्शके आधारपर विश्व-क्रान्ति है। विभाजन तो हिन्दुओकी आर्थिक दासतासे मुक्ति ब्रिटेनकी राजनीतिक गुलामीसे छुटकारा तो इस अन्तिम ध्येयकी प्राप्तिके लिए कतिपय साधनमात्र है।"†

"अल्पसंख्यक मुस्लिम सम्प्रदाय अतीतमें अनेक राजोमें अन्य धर्मावलम्बियोके साथ पूर्ण सद्भावनाके साथ रहे है, लेकिन जब कभी उन्होने स्वतन्त्र मुस्लिम राज स्थापित करनेकी क्षमता अपनेमें, अपनी संख्या या शक्तिके अनुसार महसूस की, उन्होंने अल्पसंख्यक बने रहना कबूल नही किया।......स्वतन्त्र मुस्लिम राज कायम करनेका भारतमें यह आन्दोलन चीन तथा रूस आदिके अल्पसंख्यक मुसलमानोंको इसी तरहका आन्दोलन जारी करनेके लिए बहुत अधिक प्रोत्साहन देगा।"

"मध्य एशियामें २ करोड़की आबादीमें मुसलमानोंकी सख्या ९५ फीसदी है। इतना बहुमत होते हुए भी वे रूस तथा चीनकी अधीनतामें पड़े हुए है।"

---

* एफ० के० खां दुर्रानी—मीनिंग ऑव पाकिस्तान, १०

† कान्फेडरेन्सी इन इण्डियाबाई पञ्जाबी पृ० २६९–७०

"प्रत्येक देशमें इस्लाम सम्बन्धी राजनीतिक समस्या समान है। इसलिए एक मुसलमानी देशके उद्धारका प्रभाव दूसरेपर निश्चित रूपसे पड़ेगा। भारतके मुसलमानोंके स्वभाग्य-निर्णयका प्रभाव संसारके अन्य देशोके मुसलमानोंपर निश्चित रूपसे पड़ेगा—खासकर चीनके पश्चिमी तथा रूसके पूर्वी प्रदेशके मुसलमानोंपर—जहां वे बहुसख्यक है। भारत उपद्वीपमे यदि मुसलमान अल्प-सख्यक समुदायकी स्थिति स्वीकार कर लेंगे तो उसका फल यह होगा कि भारतके ९ करोड़ मुसलमानोके भाग्यका सदाके लिए निपटारा तो हो ही जायगा इसके साथ ही सोवियत रूसके ३ करोड़ तथा पश्चिमी चीनके ५ करोड़ मुसल-मानोको सदाके लिए दासताके गर्तमे ढकेल देना होगा।

"यह तो स्वाभाविक और निश्चित है कि यदि काग्रेसके प्रयाससे भारत स्वाधीन हो गया तब भविष्यमें चीन और रूसके साथ मैत्री स्थापित कर तीनो देशोके मुसलमानोंको अधीनतामे रखनेका प्रयत्न किया जायगा। भारतकी भावी काग्रेस सरकार मध्य एशियामें किसी भी स्वतन्त्र मुस्लिम राजकी स्थापनाके प्रयासको सन्देहकी दृष्टिसे देखेगी क्योकि उसका असर यह होगा कि भारतके मुसलमान भी अपना अलग अलग स्वतन्त्र राज स्थापित करनेके लिए आन्दोलन खड़ा करेंगे।"*

अपना स्वतन्त्र राज कायम करनेकी मुसलमानोकी आकाक्षा संसारभरके मुसलमानोंको एक सूत्रमे बाधनेके प्रयासका एक अंग है (सिलसिला-ए-जामिया-वहादत उमाम-इस्लाम) जिसे तुर्कीमें स्वर्गीय अतातुर्कको प्रेरणासे स्वर्गीय सैयद जलील अहमद सिनयूसीकी संरक्षतामे जारी किया गया था। उसके उद्देश्योंमें एक उद्देश्य वर्तमान स्वतन्त्र मुस्लिम राजोके अतिरिक्त संसारके उन देशोंमें जहां मुसलमानोंका बहुमत हो—अधिकाधिक स्वतन्त्र मुस्लिम प्रजातन्त्र राज कायम करना था। जिन दस मुस्लिम प्रजातन्त्रकी स्थापनाका प्रयास था उनमें एक बंगालमें, दूसरा उत्तर-पश्चिमीमें तथा तीसरा हैदराबाद रियासतमें था।"†

---

* एम० आर० टी०: इन इंडिण्याज प्राब्लम ऑव हर फ्यूचर कांस्टिट्यूशन पृ० ६०-६०।

† अन्सारी—पाकिस्तान—दि प्राब्लम ऑव इण्डिया पृ० ४७

का

इन घोषणाओंको पढ़कर यदि गैर-मुसलमानोके हृदयमें यह आशंका उठे कि विभाजनकी आड़में मुसलमानोंका इरादा भारतपर पुनः विजय प्राप्त करना तथा मध्यएशियावर्ती मुसलमानोंको चीन तथा रूसकी अधीनतासे छुटकारा दिलाकर विश्वव्यापी इस्लामी-क्रान्ति करनेका है तो इसके लिए उन्हें कोई दोषी नही ठहरा सकता। जिन लोगोने यह स्वप्न देखा है उनकी आकांक्षाएं प्रशंसनीय है, यद्यपि इनका आधार हिन्दुओ, चीनियो तथा रूसियोके प्रति अविश्वास है। उनके बारेमें यह मान लिया गया है कि मुसलमानोंको सतानेके अतिरिक्त उनके लिए और कोई काम नही है जो पूर्णतया निराधार है।

यह भी स्मरण रखनेकी बात है कि जिस जातिका ध्येय इस्लामके लिए भारत तथा विश्वपर विजय प्राप्त करना है उस जातिके दिलमें यदि इस बातकी आशका हो कि हिन्दू बहुमत शक्तिशाली मुस्लिम अल्पमतको सताएगा तो इसकी निस्सारता तो केवल विश्व-विजयके उद्देश्यसे ही साबित हो जाती है।

(२) यह समझ सकना कठिन है कि सम्पूर्ण भारतमेसे दो नये मुस्लिम राज कायम कर देनेसे भारत तथा उन नये राजोसे अल्पमतकी समस्या कैसे हल हो जाती है। संसारमे ऐसा एक भी देश नही है जिसमे केवल एक ही जातिके लोग बसते हों। प्रत्येक देशमे अल्पमत समुदायका होना अनिवार्य है। इसमें न कभी विकल्प हुआ है और न भारतमें ही विभाजनके बाद ऐसा हो सकता है। विभाजनके बाद मुस्लिम तथा गैर-मुस्लिम क्षेत्रोके बीच आदान-प्रदानसे उस समस्याके हलको आर्थिक तथा मानवीय कारणोसे भी अव्यावहारिक बतलाया गया है। मुस्लिम क्षेत्रमें अल्पसंख्यक समुदायकी संख्याका ऊपर दिग्दर्शन कराया गया है। उत्तर-पश्चिमी क्षेत्रमें गैर-मुस्लिम प्रधान जिलोंको शामिल करने या न करनेके अनुसार गैर-मुस्लिम आबादी २५ से २८ फीसदी तक होगी। इसी तरह पूर्वी क्षेत्रमें बंगाल या आसामके गैर-मुस्लिम प्रधान जिलोंको शामलि रखने या न रखनेके अनुसार उस क्षेत्रके गैर-मुसलमानोंकी आबादी ३१ से ४८ फीसदीतक होगी। यदि हमलोग उत्तर-पश्चिमी तथा उत्तर-पूर्वी क्षेत्रको एक साथ लेकर विचार करें तो इन क्षेत्रोंके गैर-मुस्लि

जिलोंको शामिल करने अथवा न करनेके अनुसार इसकी आबादी ७१.६६ अथवा ५५.२३ फीसदी होगी। यदि गैर-मुस्लिम क्षेत्रसे समस्त पञ्जाब, बंगाल और आसामको निकाल दिया जाय तब ब्रिटिश भारतके गैर-मुस्लिम क्षेत्रमे मुसलमानोकी आबादी १०.७४ फीसदी मात्र रह जाती है।और यदि गैर-मुस्लिम प्रधान जिले मुस्लिम क्षेत्रसे हटाकर गैर-मुस्लिम क्षेत्रमें मिला दिये जाते है तब १३.२२ फीसदी रहती है।

गैर-मुस्लिम प्रान्त:—

(क) यदि समस्त बगाल, आसाम और पञ्जाब मुस्लिम क्षेत्रमे शामिल कर लिये जाते है—

प्रान्त	लाखमें जनसंख्या	मुसलमान	मुसलमानोंका औसत
मद्रास	४९३ ४२	३८ ९६	७.९०
बम्बई	२०८ ५०	१९.२०	९.२१
संयुक्तप्रान्त	५५०.२१	८४.१६	१५.३०
बिहार	३६३.४०	४७.१६	१२.९८
मध्यप्रान्त बरार	१६८.१४	७.८४	४.६६
उड़ीसा	८७ २९	१.४६	१.६८
अजमेर मारवाड़	५ ८४	०.९०	१५ ४०
अण्डमन निकोबार	० ३४	०.०८	२३.७०
कुर्ग	१.६९	०.१४	८.७८
दिल्ली	९.१८	३.०५	३३.२२
जोड़	१८८८ ०१	२०२.९५	१०.७५

मुस्लिम प्रान्त—

(क) गैर-मुस्लिम जिलोको निकाल देनेपर—

प्रान्त	कुल आबादी	मुसलमान	औसत
बंगाल	४०९.६५	२८७.१०	७०.०८
आसाम	३१.७६	१८.९२	६०.७१
पञ्जाब	१६८.७०	१२३.६३	७३.२५
सीमाप्रान्त	३०.३८	२७.८९	९१.७९
सिन्ध	४५.३५	३२.०८	७०.७५
बलूचिस्तान	५.०२	४.३९	८७.५०
जोड़	६९०.८६	४९४.०१	७१.५६

(ख) गैर-मुस्लिम जिलोंको शामिल रखनेपरः—

प्रान्त	कुल जनसंख्या	मुसलमान	औसत
बंगाल	६०३.०६	३३०.०५	५४.७३
आसाम	१०२.०५	३४.४२	३३.७३
पञ्जाब	२८४.१९	१६२.१७	५७.०७
सीमाप्रान्त	३०.३८	२७.८९	९१.७९
सिन्ध	४५.३५	३२.०८	७०.७५
बलूचिस्तान	५.०२	४.३९	८७.५०
जोड़	१०७०.०५	५९१.००	५५.२३

(ग) यदि पञ्जाब, बंगाल तथा आसामके गैर-मुस्लिम जिले मुस्लिम क्षत्रसे अलग कर दिये जाते हैं तबः—

प्रान्त	कुल जनसंख्या	मुसलमान	औसत
बंगाल	१९३.४२	४२.९५	२२.२१
आसाम	७०.८९	१५.५०	२१.८९
पञ्जाब	११५.४९	३८.५४	३३.३७
टोटल	३७९.८०	९६.९९	२५.२७
अन्य गैर-मुस्लिम प्रान्त	१८८८.०१	२०२.९५	१०.७५
जोड़	२२६७८१	२९९.९४	१३.२२

ब्रिटिश भारतमें मुसलमानोंकी कुल जनसंख्या ७९३.९५ लाख है। इसमेंसे यदि आसाम, बंगाल तथा पञ्जाबके गैर-मुस्लिम जिले मुस्लिम क्षेत्रसे अलग कर दिये गये तब २९९.९४ लाख (३७.७७) फीसदी और यदि अलग नहीं रखे गये तब २०२.९५ लाख या (२५.५६) फीसदी मुसलमानों-की आबादी गैर-मुस्लिम क्षेत्रमें रह जायगी। प्रत्येक प्रान्तमें उनका औसत भिन्न भिन्न होगा, जैसे उड़ीसामें १.६८ फीसदी, संयुक्तप्रान्तमें १५.३० फी सैकड़े तथा दिल्ली प्रान्तमें ३३.२२ फी संकड़े।

दूसरी ओर गैर-मुस्लिम जिलोंको शामिल रखने या न रखनेके अनुसार उत्तर-पश्चिमी क्षेत्रमें गैर-मुसलमानोंकी आबादी क्रमशः १३८.४० तथा ६१.४६ लाख तथा उसी तरह उत्तर-पूर्वो मुस्लिम क्षेत्रमें ३४०.६४ तथा १३४.७६ लाख होगी। दूसरे शब्दोंमें गैर-मुस्लिम जिलोंको शामिल रखने या न रखनेके अनुसार दोनों मुस्लिम क्षेत्रोंको मिलाकर गैर-मुसलमानोंकी आबादी क्रमशः ४७९.०४ अथवा १९६.२५ लाखसे कम नहीं होगी। इस तरह गैर-मुस्लिम या मुस्लिम क्षेत्रोंमें गैर-मुस्लिम प्रधान जिलोंको शामिल

रखने या न रखनेके अनुसार अल्पसंख्यक मुसलमानों तथा अल्पसंख्यक गैर-मुसलमानोंकी कुल आबादी क्रमशः ६८१.९९ लाख अथवा ४९६.१५ लाख होगी।

अगर तादादपर विचार किया जाय तो हिन्दू और मुस्लिम क्षेत्रोंमें अल्पसंख्यकोंकी तादाद पर्याप्त होगी। मुस्लिम क्षेत्रोंसे गैर-मुस्लिम जिलोंके अलग करने या न करनेके अनुसार गैर-मुसलमानोंकी आबादी उत्तरी-पश्चिमी क्षेत्रमें २५ से ३५ फीसदी तथा उत्तर-पूर्वी क्षेत्रमें ३१ से ४८ फीसदी तथा गैर-मुस्लिम क्षेत्रमें मुसलमानोंकी आबादी १०.७४ से १३.२२ फीसदीतक होनेके कारण गैर-मुस्लिम अल्पसंख्यकोंकी तादाद मुस्लिम अल्पसंख्यकोंसे कही ज्यादा होगी।

इसके साथ ही मुसलमान अल्पसंख्यक कन्याकुमारी अन्तरीपसे हिमालयकी तराईतकके विस्तृत क्षेत्रमें बिखरे रहनेके कारण प्रभावशाली नही हो सकेंगे, लेकिन गैर-मुस्लिम अल्पसंख्यक दोनों संकीर्ण क्षेत्रोके भीतर ही रहनेके कारण केन्द्रित रहेंगे और अपने स्वार्थों तथा विशेषाधिकारोंकी मांगोंपर जोर डालनेके लिए बलशाली अल्पसंख्यक समुदाय होंगे।

अगर मुस्लिम तथा गैर-मुस्लिम क्षेत्रोंके बीच विस्तृत पैमानेपर आबादीका आदान-प्रदान हो तो अल्पसंख्यक समुदायोंका अन्त हो सकता है। आबादीका आदान-प्रदान ऐच्छिक अथवा अनिवार्य हो सकता है। लाखों करोड़ों मुसलमानोंको गैर-मुस्लिम क्षेत्रोंसे मुस्लिम क्षेत्रोंमें तथा गैर-मुसलमानोको मुस्लिम क्षेत्रोंसे गैर-मुस्लिम क्षेत्रोंमें अपनी इच्छासे चले जानेकी कल्पना नही की जा सकती। आबादीके आदान-प्रदानके लिए अपनी इच्छासे स्थानान्तरित होनेका बहुत असन्तोषजनक परिणाम बाल्कन राज उदाहरणस्वरूप है। कारण सहज है। कोई भी व्यक्ति अपनी इच्छासे अपनी मातृभूमि छोड़कर छापा मारना नहीं चाहता था। भारतीयोंके सम्बन्धमें यह और भी निश्चित है कि हिन्दुओं और मुसलमानोंका गृह-प्रेम इतना उत्कट होता है कि एक दूसरे राष्ट्रके सदस्य या नागरिक बननेके लिए वे उस स्थानको छोड़कर—जहां वे अनेक पुश्तोंसे बसे हुए हैं—कहीं अन्यत्र जाना कदापि स्वीकार नहीं करेंगे। खिलाफत

आन्दोलनके समय हिज्रतका जो अनुभव मुसलमानोंको हुआ था उसके आधार-पर भी यही कहा जा सकता है कि इसके लिए लोगोंमें ज्यादा उत्साह नहीं होगा। दूरीके अलावा वातावरण, [भाषा, जलवायु, स्थानीय असस्था, रहन-सहनमें इतना ज्यादा भेदभाव होगा कि उससे अनुत्साह ही नहीं मिलेगा बल्कि लोग इस प्रश्नपर विचारतक नही करेंगे। इसके साथ ही इतनी बड़ी आबादीके स्थानान्तरित करनेके व्ययका भी प्रश्न है जहां वे सदियोसे बसे है, वहांसे उन्हें उखाड़कर एकदम नयी जगहमें बसानेकी क्रियामे सम्पत्तिकी हानि—यद्यपि मावजा दिया जायगा—आदिका इतना बड़ा बोझ होगा जिसे न मुस्लिम और न गैर-मुस्लिम राष्ट्र ही बर्दाश्त कर सकेंगे। लोगोंको असीम कष्टका सामना करना पड़ेगा और आर्थिक तथा शासन दोनों दृष्टियोंसे इस योजनाको पूरा करना असम्भव होगा। अनिवार्य आदान-प्रदानमें ये कठिनाइयां सौगुनी बढ़ जायंगी। अन्य मुसीबतोंके साथ एक यह भी मुसीबत आ खड़ी होगी कि पुलिस और सेनाकी देखरेखमें आबादीको स्थानान्तरित करना पड़ेगा जो विचारसे बाहरकी बात है। यूनान तथा तुर्कीकी चन्द लाख आबादीके आदान-प्रदानके आधारपर जो लोग मंसूबा बांधते है वे लोग यह भूल जाते है कि भारतमें कमसे कम ५ से ७ करोड़ जनसंख्याको इधर उधर दूर-दूरतक ले जाना पड़ेगा और इस काममें इतना ज्यादा खर्च पड़ेगा कि दोनों राष्ट्र यदि उसके बोझको संभाल भी सकेंगे तो भी इस व्ययके भारसे उनकी रीढ़ टूट जायगी और बहुत समयतकके लिए वे बेकार हो जायंगे।

लीगके प्रस्तावमें कहा गया है कि मुस्लिम राष्ट्र गैर-मुस्लिम राष्ट्रोंके अल्प-संख्यकोंकी सहमतिसे उनकी धार्मिक, सांस्कृतिक, आर्थिक, राजनीतिक, शासन-सम्बन्धी तथा अन्य अधिकारोंकी रक्षाके लिए उपयुक्त तथा अनिवार्य संरक्षण की व्यवस्था करेगा।

प्रश्न यह उठता है कि यदि मुस्लिम और गैर-मुस्लिम राष्ट्र स्वतन्त्र राष्ट्र कायम किये जायंगे और दोनों राष्ट्रोंको अपना शासन विधान तैयार करनेकी स्वतन्त्रता होगी तो ये स्वतन्त्र राष्ट संरक्षण प्रदान करनेकेलिए बाध्य किस तरहसे

किये जायंगे। मान लीजिये कि स्वतन्त्र अस्तित्व कायम हो जानेके बाद ये राष्ट्र संरक्षण प्रदान करनेसे साफ इनकार कर दें तब उन्हें बाध्य किस प्रकार किया जा सकेगा। यह भी मान लिया जाय कि आरम्भमें इस तरहके संरक्षण प्रदान किये जाते हैं लेकिन आगे चलकर उनमें इस तरहके परिवर्तन कर दिये जाते हैं जो अल्पसंख्यकोंके लिए अहितकर हों अथवा वे संरक्षण एकदम हटा दिये जाते है, तब उन्हें प्रयोगमें लानेके लिए किस तरह बाध्य किया जा सकता है? मान लीजिये कि शासन विधानमें संरक्षणोंका उल्लेख तो कर दिया गया लेकिन उन-पर अमल नही किया जाता है अथवा उनका समग्र प्रयोग नही होता है, ऐसी हालतमें एक स्वतन्त्र राष्ट्र दूसरे स्वतन्त्र राष्ट्रको उसपर अमल करनेके लिए किस तरह बाध्य करेगा? यह मान लिया गया है कि राष्ट्र स्वतन्त्र होंगे, एकका दूसरेपर कोई अधिकार नही होगा, और दोनोंके ऊपर न तो कोई केन्द्रीय सर-कार होगी जिसके हाथमें विधानके नियमोपर अमल करनेका कर्तव्य हो। जब राष्ट्र स्वतन्त्र होंगे, अपने विधानमें परिवर्तन करनेके लिए पूर्ण स्वतन्त्र होंगे और शर्तोंका पालन करानेके लिए कोई केन्द्रीय सरकार न होगी तब केवल विधान और अनिवार्य शब्दोंके प्रयोगसे ही काम नही चल सकता।

राष्ट्रसंघका अनुभव भी यही बतलाता है। राष्ट्रसंघने इस बातका जिम्मा लिया है कि सन्धिकी शर्तोंमें अल्प संख्यकोके लिए जो धाराएं दी गयी थीं उनका वह पालन करावेगा। लेकिन यह नही हो सका। इससे स्पष्ट है कि इस तरहके आश्वासनके होते हुए भी कोई बाहरी शक्ति इस तरहकी शर्तोंका पालन करानेमें समर्थ नही हो सकती। बन्धकके सिद्धान्त व्यावहारिक नहीं हैं। अत्याचारका उत्तर अत्याचारसे देना जायज नहीं माना जाता। आंखके बदले आंख और दांतके बदले दांतके प्राचीन कानूनमें भी यह व्यवस्था नही थी कि एकके अपराधके बदले दूसरेकी आंख या दांतको क्षति पहुंचायी जाय और न उसमें यही व्यवस्था है कि एक अपराध करे और दूसरा दण्डका भागी बने। तब भला किस आधारपर एक समुदायके अपराधके लिए दूसरे समुदायको केवल इसलिए दण्ड दिया जा सकता है कि दोनों एक ही धार्मिक विश्वासके हैं और

एक ही देवताकी पूजा करते हैं यद्यपि एक न तो दूसरेको जानता ही है और न उनके कारनामोमें उसका किसी तरहका हाथ ही है। एक प्रमुख मुसलमानके शब्दोंमें "बन्धकका सिद्धान्त कारगर नही हो सकता, यदि उसपर अमल किया भी जाय तो वह सभ्य मनुष्योंको जंगली बना देगा या दूसरे शब्दोंमें इन्सानको हैवान बना देगा।"* पाकिस्तानके प्रचारक चाहे जो भी कहें लेकिन इस बातपर कयास नहीं किया जा सकता कि अच्छे विचारके मुसलमान या गैर-मुसलमान इस जंगली उपायसे काम लेना चाहेंगे।

अलग और स्वतन्त्र राष्ट्रोंका अस्तित्व ही इस बातको अत्यन्त कठिन बना देता है कि एक राष्ट्र दूसरे राष्ट्रपर इसके लिए दबाव डाल सके कि वह अपने अधीनस्थ नागरिकोंके साथ उचित व्यवहार करे यदि वे दोनों एक संघराष्ट्रके सदस्य नहीं हैं। ऐसी हालतमें प्रत्येक स्वतन्त्र राष्ट्रके लिए एक ही शान्तिमय उपाय है अर्थात् दोनों राष्ट्रोंमें एक दूसरेके प्रतिनिधि रहें। इसके अतिरिक्त तो युद्ध ही एकमात्र रास्ता है चाहे वह आर्थिक युद्ध हो या सशस्त्र युद्धका मार्ग ग्रहण किया जाय। लेकिन संगीन शिकायतोके लिए भी तबतक युद्ध सम्भव नही है जबतक दोनों राष्ट्रोके निवासी इस स्थितिपर न पहुंच जायं कि युद्धके अतिरिक्त कोई दूसरा उपाय समझौतेका न दिखायी पड़े। केवल शिकायतोंपर युद्ध सम्भव नहीं है। जबतक कि किसी राष्ट्रको गहरा घाव न लगेगा और जबतक वह अपनी शक्तिको भलीभांति आजमा नही लेगा, तबतक वह युद्धके खतरेमें कभी भी जाना नहीं चाहेगा। दूसरे राष्ट्रके किसी सुदूर कोनेमें बसे हुए अपने सहधर्मियोके स्वार्थ और हितकी अपेक्षा वह अपने नागरिकोंके स्वार्थ और हितपर सबसे पहले ध्यान देगा।

यह प्रश्न केवल सैद्धान्तिक विवेचनका भी नहीं है। भारतके पड़ोसमें ही अनेक स्वतन्त्र मुस्लिम राष्ट्र है। आजतकका एक भी उदाहरण ऐसा

---

* ट्रीटी बिट्वीन इण्डिया ऐण्ड यूनाइटेड किंगडम बाई सर सुलतान अहमद, पृष्ठ ८४।

नहीं मिला कि भारतके मुसलमानोंपर किये गये अत्याचारोंसे उत्तेजित होकर उन्होंने युद्धका ऐलान किया हो। अपने इस लम्बे शासनकालमें ब्रिटिश सरकारने तथा लीगने कथनानुसार अपने २७ मासके अल्पकालके जीवनमें कांग्रेस मन्त्रिमण्डलने भारतके मुसलमानोंपर जो जुल्म और अत्याचार किये उन्हें देखकर किसी पड़ोसी मुस्लिम राष्ट्रके ललाटपर शिकन आते नहीं देखा गया। कांग्रेस मन्त्रिमण्डलको उस तरह मुसलमानोंपर तथाकथित जुल्म करते देखकर पञ्जाब, बंगाल तथा सिन्धके मुस्लिम मन्त्रिमण्डलने भी तो अँगुली नहीं उठायी! यह तो कपोलकल्पना मात्र है कि जो नये मुस्लिम राष्ट्रके निर्माणसे ही स्थिति इस तरह बदल जायगी कि गैर-मुस्लिम क्षेत्रके मुसलमानों तथा मुस्लिम क्षेत्रके गैर-मुसलमानोके साथ उचित और न्यायपूर्ण व्यवहार होने लगेगा। अल्पसंख्यकोंको हर हालतमे मानवताके नैसर्गिक सिद्धान्तोपर तथा उन व्यापक सदाचारों तथा माननीय नियमोंपर निर्भर करना पड़ेगा जो सभी सभ्य समाजको संचालित करते हैं चाहे उनके जो भी धार्मिक विश्वास हों। इस बातपर जोर देना सरासर भूल है कि मुसलमानोके सतानेके अतिरिक्त गैर-मुसलमानोंको दूसरा कोई काम नही करना होगा और साथ ही गैर-मुसलमान यह मान लें कि मुसलमान इतने निरीह हैं कि वे गैर-मुसलमानोंपर किसी तरहका अत्याचार या जुल्म कर ही नही सकते। इस तरहकी धारणा या घोषणा कि मुसलमानोंका गैर-मुसलमानोपर विश्वास नही है, इसलिए किसी भी रूपमें वे केन्द्रीय सरकार स्वीकार नही कर सकते, धूर्ततासे खाली नहीं है। चाहे उस केन्द्रीय सरकारके अधिकार कितने ही सीमित क्यों न हों और उसके कर्तव्यक्षेत्र दायरेके भीतर क्यों न हों और साथ ही गैर-मुसलमानोंके इस अश्वासनपर विश्साव करें कि उनके साथ न्यायके साथ व्यवहार किया जायगा। यदि विश्वाससे विश्वासका उदय होता है तो अविश्वाससे अविश्वासका भी उदय होता है और यदि आप गैर-मुसलमानोंका अविश्वास करते हैं और हर कदमपर उनकी ईमानदारीपर सन्देह प्रकट करते हैं तब आपको यह आशा करनेका कोई अधिकार नहीं है कि उनकी भी आपके प्रति वही धारणा नही होगी। स्वतन्त्र

राष्ट्रोंके निर्माणसे ही अल्पसंख्यकोंकी समस्या हल नहीं हो जाती बल्कि उसका हल और भी जटिल हो जाता है। मुस्लिम तथा गैर-मुस्लिम दोनों राष्ट्रोंके अल्पसंख्यकोंकी दशा और भी दयनीय हो जाती है। वे न तो स्वयं अपनी रक्षा कर सकते हैं और न अपने अधिकारोंकी प्राप्तिके लिए दूसरोंकी सहायता ही प्राप्त कर सकते हैं।

(३) तथा (४) भारतके उत्तर-पश्चिमी तथा उत्तर-पूर्वी सीमाकी रक्षाकी समस्या भी पाकिस्तानसे हल नहीं होती। कहा जाता है कि उत्तर-पश्चिम सीमा-के उस पार बसनेवाली जातिया मुसलमान है इसलिए सीमापर मुस्लिम राष्ट्रकी स्थापनाके बाद गैर-मुसलमानोंके खिलाफ जेहादका उनका सारा धार्मिक, राज-नीतिक जोश जाता रहेगा। ऐसी आशाका न तो कोई वास्तविक आधार है और न इतिहास ही इसकी पुष्टि करता है। भारतके इतिहासमें यह पहला अवसर नहीं होगा कि यहा स्वतन्त्र मुस्लिम राष्ट्र कायम होगे। कुतुबुद्दीन ऐबकके समयसे लेकर उत्तर-पश्चिमी भारतके एक कोनेमे स्वतन्त्र सिख राजकी स्थापना तक भारतमें स्वतन्त्र मुस्लिम राज थे। उस ६०० सालकी लम्बी अवधिमें भारत-पर जितने भी बाहरी मुसलमानोंके आक्रमण हुए हैं सभी मुसलमान राजोंपर थे क्योंकि उस समय भारतपर हिन्दुओंका शासन नही था। अलाउद्दीन खिलजीके शासनकालसे ही दिल्लीके मुसलमान सुलतानोंको उत्तर-पश्चिमके आक्रमणसे सदा उलझे रहना पड़ा है। अलाउद्दीनको तो अपनी सीमापर बहुत बड़ी सेनाका प्रबन्ध करना पड़ा था फिर भी आक्रमणकारियोंका दल बारबार आता ही रहा। मुसलमान शासकोंकी अन्ततक यही नीति बनी रही। तैमूर, बाबर, नादिरशाह अब्दाली सभी मुसलमान थे और भारतपर इनकी चढ़ाइयां मुसलमान शासकोंके विरुद्ध हुई थी। ये उस समयकी बड़ी बड़ी चढ़ाइयां हैं जिनकी चर्चा यहा कर दी गयी है। इन उदाहरणोंके देखते हुए यह कैसे कहा जा सकता है कि सीमाप्रान्तपर स्वतन्त्र मुस्लिम राज कायम होनेके बाद उधरसे विदेशी आक्रमणका भय जाता रहेगा। वर्तमान युगमें चढ़ाई करना आसान नही है इसलिए आक्रमण नहीं होंगे। लेकिन

इसका कारण सीमाप्रान्तमें स्वतन्त्र मुस्लिम राजका कायम हो जाना नहीं होगा, बल्कि कुछ दूसरे ही कारण होंगे।

केवल इतना ही नहीं है कि अन्य मुसलमान बादशाहोंने भारतके मुसलमानी राज्योंपर चढ़ाई की अथवा भारतके मुसलमान बादशाहोंने किसी बाहरी मुसलमान राज्यपर चढ़ाई की बल्कि राज्य और सिंहासनके लिए मुसलमान आपसमें ही लड़े। इस्लाम धर्ममें इस बातकी शिक्षा अवश्य है कि यह धर्म ग्रहण करनेके बाद देश और जातिका भेदभाव भूल जाना चाहिये लेकिन इस्लामकी यह शिक्षा मुसलमानोंके बीचके परस्पर युद्धको उसी तरह नही रोक सकी जिस तरह ईसाई धर्म ईसाइयोके बीचके परस्पर युद्धको रोकनेमें असमर्थ रहा है। अतीत इतिहासमें बहुत दूर जानेकी जरूरत नही है। हम लोग जानते हैं कि प्रथम विश्व-युद्धमें तुर्कोंके खिलाफ युद्ध करनेमें अरब सैनिक एक बार भी नहीं हिचके। एक तरफ तो हिन्दुस्तानके मुसलमान तुर्कीके सुलतानकी हर तरहसे मदद करनेके यत्नमें थे कि उनकी शक्ति और प्रतिष्ठा कायम रहे उधर दूसरी ओर अरब के लोग उनके खिलाफ विद्रोह कर रहे थे। आधुनिक फारसके वास्तविक निर्माता रजाशाह पहलीवीको सिंहासनका परित्याग कर अपने जीवनके अन्तिम दिन निर्वासनमें इसलिए बिताने पड़े कि उनके देशके मुसलमानोंकी सहायतासे ही यूरोपीय शक्तियां उनके खिलाफ षड्यन्त्रमे सफल हो सकीं। प्रथम और द्वितीय विश्वयुद्धके बीच अफगानिस्तानमें दो बार क्रान्ति हुई। अमानुल्लाखांको बच्चासक्काने पदच्युत किया और बच्चासक्काको नादिरशाहने मार भगाया। ये तीनके तोनों निश्चयरूपसे मुसलमान ही थे। आज भी इस बातकी कोशिश जारी है कि तुर्कों, फारसों और अफगानोंको अकेला छोड़कर समग्र अरब राष्ट्रोंको एक सूत्रमें संगठित कर दिया जाय। इन उदाहरणोंसे स्पष्ट है कि भिन्न-भिन्न राष्ट्रीयता तथा जातीयताके मुसलमानोंको—एक देशमें ही बसनेवाले मुसलमानोंको—एक सूत्रमें संगठित करनेमें सफलता नहीं मिल सकी, जब कि यह आशा की जाती है कि केवल मुसलमान ही नहीं बल्कि प्रत्येक राष्ट्रको यह सद्बुद्धि प्राप्त होगी कि वह शान्तिपूर्वक आपसमें मिलकर युद्ध और रक्तपातके

बिना रहना सीखेगा, लेकिन यह कहना निर्मूल है कि मुस्लिम राष्ट्र एक दूसरेके ऊपर चढ़ाई नही करेंगे।

यह तो उत्तर-पश्चिमी सीमाकी ओरसे आक्रमणकी बात हुई। अब जहांतक उत्तर-पूर्वी सीमाकी बात है वहांके लिए यह भी बताना नहीं है क्योंकि उत्तर-पश्चिमकी अपेक्षा इधरसे चढ़ाईका खतरा अब बहुत ज्यादा हो गया है। पूर्वमें स्वतन्त्र मुस्लिम राष्ट्रकी स्थापनाका एकमात्र फल यह होगा कि उत्तर-पश्चिमकी सीमाके बारेमें जो बातें कही जाती है उस तरहका कोई लाभ मुस्लिम राष्ट्रको तो प्राप्त नही होगा लेकिन भारतके गैर-मुसलमानोको जो प्राकृतिक रक्षाका साधन प्राप्त है उससे वे वंचित हो जायँगे।

स्वतन्त्र मुस्लिम राष्ट्रके पक्षमें जो तर्क उपस्थित किया गया है, वह केवल उत्तर-पश्चिमी क्षेत्रमें लागू हो सकता है। यह तर्क रक्षाकी समस्याको आसान करनेके लिए पेश किया जाता है लेकिन वास्तवमें गैर-मुस्लिम क्षेत्रोकी रक्षाकी समस्या इससे और भी जटिल हो जाती है। अगर भारतके गैर-मुस्लिम क्षेत्रोके खिलाफ धार्मिक और राजनीतिक जेहादका जोश बढ़ा तब ऐसी हालतमें भारत-की सीमाके भीतर मुस्लिम राष्ट्रोका अस्तित्व उसे और भी संगीन बना देगा। भारतके उत्तर-पश्चिमी भागमें पर्वत-मालाओंकी प्राकृतिक रक्षाके साधनके त्याग देनेपर गैर-मुसलमानोंको अपने देशकी रक्षाकी व्यवस्था उस प्राकृतिक साधनके बिना ही करनी पड़ेगी। यदि पाकिस्तानके पक्षके समर्थनके लिए इसमें कोई तथ्य है तब गैर-मुसलमानोंका यह कहना सर्वथा उचित होगा कि प्राकृतिक रक्षाके साधनोंसे उन्हें वंचित करनेकी आड़में दूषित मनोवृत्ति काम कर रही है खासकर जब पाकिस्तानकी स्थापनाका अन्तिम ध्येय वैसा है जैसा पीछे कहा जा चुका है और ऐसी अवस्थामें भारतके गैर-मुसलमान विभाजनके लिए किसी भी हालतमें तैयार नहीं होंगे।

डा० अम्बेदकरका कहना है कि "सुरक्षित सीमाकी अपेक्षा सुरक्षित सेना कहीं अच्छी होती है।* सम्भव है उसके समर्थनमें बहुत कुछ कहनेके लिए हो।

---

* डा० अम्बेदकर: 'थाट्स आन पाकिस्तान' पृष्ठ ९५।

रक्षाके प्रश्नपर नये दृष्टिकोणसे विचार करना होगा क्योंकि युद्धके नये नये साधनोंके निकल जानेसे युद्धकी प्रणालीमें घोर परिवर्तन हो गया है। युद्धकी पुरानी पद्धतिके अनुसार भी मुस्लिम राष्ट्रोंको उत्तर-पश्चिम तथा पूर्वी क्षेत्रोंमें शेष भारतके लिए जितने समुद्री किनारेकी रक्षाका भार रहेगा उसे छोड़कर भी व्यापक समुद्री किनारेकी रक्षाकी व्यवस्था करनी होगी। इससे यह प्रश्न सहज ही उठ जाता है कि मुस्लिम तथा गैर-मुस्लिम राष्ट्रोके पास इसके लिए क्या साधन है? उन्हें केवल बाहरी आक्रमणोंसे रक्षाकी व्यवस्था नही करनी होगी बल्कि भारतके भीतर ही एक दूसरेके आक्रमणसे रक्षाकी व्यवस्था करनी होगी। यह दिखलानेके लिए बहुत अधिक गणितकी जरूरत नही होगी कि विभाजनके बाद मुस्लिम तथा गैर-मुस्लिम दोनों राष्ट्रोंकी आमदनीके साधनोमें बहुत बड़ी कमी पड़ जायगी और रक्षाके साधनोंका व्यय बहुत अधिक बढ़ जायगा और दोनों अपनेको ऐसी लाचारीकी हालतमें पायेंगे कि अपने राष्ट्रमें बसनेवालोंके ऊपर करका बहुत अधिक बोझ लादे बिना रक्षाकी समुचित व्यवस्था नहीं कर सकेंगे। "आर्थिक तथा व्यावसायिक साधन" वाले अध्यायमें हमने दोनों-मुस्लिम तथा गैर-मुस्लिम राष्ट्रोंकी आर्थिक स्थितिका दिग्दर्शन कराया है। विभाजनके बाद तंग हालत हो जानेपर भी मुस्लिम राष्ट्रोंकी अपेक्षा गैर-मुस्लिम राष्ट्रोंकी आर्थिक दशा अच्छी ही रहेगी। अपनी रक्षाकी समुचित व्यवस्था करनेके लिए मुस्लिम राष्ट्रोंके पास न तो धन ही रहेगा और न सैनिक साधन ही। किसी भी हालतमें "भारतके प्रत्येक निवासीके लिए यह बहुत बड़े महत्वकी बात है कि उसकी रक्षाके साधन विघटित होकर बहुमुखी नही हो जाते, उनका विस्तार इतना नहीं बढ़ जाता कि वे प्रभावहीन हो जाते है, तथा वे इतने खर्चीले नहीं हो जाते कि उनकी उचित व्यवस्था ही नहीं हो सकती तथा अन्तर्राष्ट्रीय संसारमें उनकी स्थिति पूर्ण रूपसे सुरक्षित रहती है।*

डाक्टर अम्बेडकरकी पुस्तक (थाट्स आन पाकिस्तान पृ० ७०) की

---

* सर सुलतान अहमद : 'ए ट्रीटी बिट्वीन इण्डिया ऐण्ड दि यूनाइटेड किंगडम', पृष्ठ ८७।

इस तालिकासे प्रकट होता है कि भारतीय सेनाकी साम्प्रदायिक स्थितिमें किस तेजीके साथ परिवर्तन हुआ है:—

क्षेत्र और जाति	औसत १९१४	औसत १९१८	औसत १९१९	औसत १९३०
१—पञ्जाब सीमाप्रान्त तथा काश्मीर	४७	४६.५	४६	५८.५
१—सिख	१९.२	१७.४	१५.४	१३.५८
२—पञ्जाबी मुसलमान	११.१	११.३	१२.४	२२.६
३—पठान	६.२	५.४२	४.५४	६.३५
२—नैपाल कमायूं, गढ़वाल	१५	१६.६	१२.२	१६.४
१—गोरखा	१३.१	१६.६	१२.२	१६.४
३—उत्तर भारत	२२	२२.७	२५.५	११
१—संयुक्तप्रान्तके राजपूत	६.४	६.८	७.७	२.५५
२—हिन्दुस्तानी मुसलमान	४.१	३.४२	४.४५	०
३—ब्राह्मण	१.८	१.८६	२.५	०
४—दक्षिण भारत	१६	११.९	१२	५.५
१—मराठा	४.९	३.८५	३.७	५.३३
२—मद्रासी मुसलमान	३.५	२.७१	२.१३	०
३—तामिल	२.५	२	१.६७	०
५—बर्मी	०	नगण्य	१.७	३.०

"ऊपरकी तालिकासे स्पष्ट है कि पञ्जाबी मुसलमान तथा पठानोंकी संख्यामें अतिशय वृद्धि हुई है। साथ ही सिखोंका स्थान प्रथमसे घटकर तृतीय हो गया

है राजपूतोंका स्थान चतुर्थ तथा संयुक्तप्रान्तके ब्राह्मणों, मद्रासी मुसलमानों एवं तामिलवालोंकी संख्या शून्य हो गयी है।"*

"१९३० में भारतीय सेनामें विभिन्न सम्प्रदायोंकी स्थितिकी आलोचना करते हुए डाक्टर अम्बेदकर इस परिणामपर पहुंचे है कि पैदल सेनामें गोरखोंको मिलाकर मुसलमानोंकी संख्या ३६ फीसदी,—यदि गोरखोंको निकाल दें तब ३० फीसदी तथा घुड़सवार सेनामें ३० फीसदी थी। दिल्लीके पड़ोसके १ फीसदी नगण्य संख्याको छोड़कर पैदल सेनाके सभी मुसलमान तथा समस्त घुड़सवार सेनाके प्राय: १९ फीसदी सैनिक पंजाब तथा सीमाप्रान्तके थे।"† इसके बादके आंकड़ोंको जाननेके लिए केन्द्रीय व्यवस्थापक सभाके सदस्योने अनेक बार प्रश्न पूछे लेकिन भारत सरकारने उन्हें प्रकट करनेसे इनकार कर दिया। सर सिकन्दर हयात खा सरीखे पञ्जाबी मुसलमानके लिए यह उपयुक्त ही था कि भारतीय संघकी योजनाका मसविदा बनाते समय वे इस बातपर जोर दें कि भारतीय सेनाका जो संघटन १९३७ की जनवरीमें था उसमें किसी तरहका परिवर्तन नही किया जायगा और यदि सेना घटायी जाय तो युद्धके अवसरोको छोड़कर विभिन्न सम्प्रदायोंका वही अनुपात रहे जो जनवरी १९३७ में था। मुसलमानोके अतिरिक्त १९३० में भारतीय सेनाके १३.५८ फीसदी सिख भी पञ्जाब प्रान्तके ही हैं। विभाजनका सबसे पहला परिणाम यह होगा कि भारतीय सेनाकी इस बड़ी तादादको गैर-मुस्लिम क्षेत्रसे अलग कर दिया जायगा और यदि मुस्लिम राष्ट्र समर्थ होंगे तो इन्हें अपनी सेनामें भर्ती करना होगा। यह बतलाया जा चुका है कि जातियोंमें लड़ाकू और गैर-लड़ाकूके भेदभावका न तो कोई वास्तविक कारण है और न इसका कोई ऐतिहासिक आधार। यह भेदभाव तो सन् १८५७के सिपाही-विद्रोहमें भाग लेनेके कारण संयुक्तप्रान्त तथा बिहारवालोंको दण्ड देने तथा पञ्जाबियोंको पुरस्कार देनेके लिए किया गया था।

---

* डा० अम्बेदकर : 'थाट्स आन पाकिस्तान', पृष्ठ ७५।

† वही पृष्ठ ७६।

इस अप्राकृतिक भेदभावको मिटानेके लिए भारतके प्रत्येक प्रान्तसे लगातार मांग पेश की जा रही है। इसलिए ऊपर जो अनुपात दिखलाया गया है उसे कोई भी राष्ट्रीय सरकार कायम नहीं रख सकेगी। और यदि भारतका विभाजन न भी हुआ तो प्रत्येक प्रान्तको सेनामें उचित हिस्सा देना पड़ेगा। तो भी विघटनका यह काम संयुक्त भारतमें इतने जल्द और तेजीसे नहीं होगा जितना कि भारतके विभाजन तथा स्वतन्त्र राष्ट्रोंकी स्थापनासे होगा। प्रोफेसर कूपलैण्डने लिखा है कि भारतीय सेनामें १९३९ में मुसलमानोंकी संख्या एक तिहाई थी और इस समय भी ३०.८ फीसदी है। यदि इस अनुपातको घटाकर २५ फीसदी कर दिया जाय तो पञ्जाबके रहनेवालोंकी रहन-सहनपर इसका बहुत ज्यादा प्रभाव पड़ेगा क्योंकि यहांके अधिकांश लोग पञ्जाबी सेनाओंके वेतन और पेन्शनपर निर्भर करते हैं।* विभाजनके कारण हिन्दुस्तानी सेनामें नौकरी पानेका यह रास्ता बन्द हो जानेपर उनकी हालत और भी अधिक दयनीय हो जायगी।

यह कहा जा सकता है कि जो लोग आज भारतीय सेनामें नौकरी कर रहे हैं वे उस दिन मुस्लिम राष्ट्रीय सेनामें नौकरी करेंगे। शायद यह सम्भव हो, यद्यपि यह कठिन है, यदि असम्भव नहीं कि इतने छोटे मुस्लिम राष्ट्र इतनी बड़ी सेना रख सकेंगे कि उन तमाम अलग किये हुए सैनिकोंको भर्ती कर लें। यदि वे उन्हें भर्ती कर भी लें तो उनके रखनेका सारा व्यय मुस्लिम राष्ट्रोंको अपनी ही जनतासे लेना पड़ेगा। भारतके अन्य किसी भी भागसे उन्हें कुछ नही मिलेगा। मुस्लिम राष्ट्रकी इस मदमें जितनी क्षति होगी, गैर-मुस्लिम राष्ट्रको उतना ही लाभ होगा क्योंकि वह रकम—चाहे वह जितनी भी हो—गैर-मुस्लिम राष्ट्र अपनी सेनाके सैनिकोंपर व्यय करेगा जिससे सेनामें वे ही लोग होंगे जिनसे आयके रूपमें आमदनी होगी।

(५) कहा जाता है कि आर्थिक स्वभाग्य-निर्णयका अधिकार मुसलमानोंको एकमात्र विभाजनसे ही प्राप्त हो सकता है। आर्थिक प्रश्नके दो पहलू हैं। एकका

---

* आर० कूपलैण्ड : 'दि फ्यूचर आव इण्डिया', पृष्ठ ७७।

सम्बन्ध सरकारी नौकरियोंसे है। स्वतन्त्र राष्ट्र हो जानेके बाद मुस्लिमक्षेत्र उन दायरोंमें मुसलमानोंकी स्थितिमें कोई भी सुधार नहीं कर सकेंगे। सरकारी नौकरियोंमें भिन्न-भिन्न सम्प्रदायोके लिए अनुपात कायम कर दिया गया है, यदि कहीं वह उचित और ठीक नहीं है तो उसमें संशोधन कराया जा सकता है। यदि यह नियत हो कि सरकारी नौकरियोंसे गैर-मुसलमान एकदम वञ्चित रखे जायँ अथवा केवल अपने धार्मिक विश्वासके कारण उनका स्थान नीचा कर दिया जाय तब समझमें नही आता कि उनका अनुपात कैसे कम कराया जा सकता है! इसके अलावा यह स्मरण रखनेकी बात है कि मुस्लिम और गैर-मुस्लिम राष्ट्रोंमें भिन्न भिन्न सम्प्रदायोंको सरकारी नौकरियोंमें उचित स्थान देकर परस्पर सद्भाव कायम रखा जा सकता है और अन्तर्राष्ट्रीय मनोमालिन्य रोका जा सकता है। चूँकि मुस्लिम राष्ट्रोंमें गैर-मुसलमानोंकी संख्या अपेक्षाकृत अधिक होगी इसलिए गैर-मुस्लिम राष्ट्रमें मुसलमानोंकी अपेक्षा मुस्लिम राष्ट्रमें उनकी स्थिति मजबूत होगी। गैर-मुस्लिम राष्ट्रोंमे मुसलमानोंकी आबादी १से १३ फीसदीतक होगी लेकिन मुस्लिम राष्ट्रोंमें गैर-मुसलमानोकी आबादी २५ से ४८ फीसदीतक होगी। ऐसी हालतमें सरकारी नौकरियोंमें मुस्लिम राष्ट्रोंमें जो महत्व गैर-मुसलमानोंको प्राप्त होगा गैर-मुस्लिम राष्ट्रोंमें उसका दावा मुसलमान नही पेश कर सकेंगे। इसका परिणाम यह होगा कि न्याय और सद्भावके लिए गैर-मुस्लिम राष्ट्रोंकी सरकारी नौकरियोंमें मुसलमानोंकी संख्या तो घट जायगी लेकिन मुस्लिम राष्ट्रोंमें गैर-मुसलमानोंकी सरकारी नौकरियोंकी औसत-संख्यामें कोई घटती नही होगी। सरकारी नौकरियोंके लिए भिन्न भिन्न सम्प्रदायोंकी जो संख्या नियत है विभाजन होनेपर उनमें उलट फेर अनिवार्य है क्योंकि वर्तमान व्यवस्था विभाजनके ख्यालसे नहीं की गयी थी। और साथ ही संयुक्तराष्ट्रके नागरिकोको जो सुविधा प्रदान की जा सकती है विभाजनके बाद वह सुविधा और रिआयत किसी भी प्रकार अलग-अलग राष्ट्रको प्राप्त नही हो सकेगी। इस तरह जहांतक नौकरियोंका सम्बन्ध है यह बात भी ध्यानमें रख लेनेपर कि मुस्लिम राष्ट्रोंमें मुसलमानोंको ज्यादा सरकारी नौकरियां मिलेंगी और इस तरह हिन्दुस्तानमें उन्हें जो हानि होगी उसकी वहां पूर्ति हो जायगी—मुस्लिम राष्ट्रोंमें मुसलमानोंको कोई विशेष लाभ नहीं होगा लेकिन हिन्दुस्तानमें (गैर-मुस्लिम राष्ट्रों) में वे घाटेमें रहेंगे।

दूसरा पहलू औद्योगिक विस्तारद्वारा आर्थिक सुधार है। भारतके वर्तमान उद्योग-धन्धोंमें गैर-मुसलमानोंकी प्रधानताका कारण उनका राजनीतिक उत्कर्ष नहीं है। भारतका राजनीतिक अधिकार न तो हिन्दुओंके हाथमें है और न मुसलमानोंके हाथमें, जो कुछ भी अधिकार है अंग्रेजोंके हाथमें है। इसलिए इस क्षेत्रमें हिन्दुओंने जो कुछ भी प्रधानता प्राप्त की है वह राजनीतिक उत्कर्षके कारण नहीं बल्कि अध्यवसायके कारण। यदि आर्थिक उत्कर्षका आधार राजनीतिक प्रधानता होती तो आज भारतके व्यावसायिक क्षेत्रमे पारसियोंका कोई स्थान न होता क्योंकि जनसंख्यामें उनका अनुपात केवल नगण्य है। लेकिन भारतीय उद्योगके क्षेत्रमें उनका स्थान यदि हिन्दुओंसे बढ़कर नहीं है तो घटकर भी नहीं है। उनसे कभी किसीने डाह नही की, और न कभी उन्होंने ही यह शिकायत की कि भारतकी असीम जनसंख्या जो पारसी नहीं है—के बोझके नीचे—वे दबे जा रहे हैं। इसलिए इस कथनमें कोई सार्थकता नही है कि हिन्दुओंको प्रधान स्थान प्राप्त है। भारतके उद्योग-धन्धोंमें जो स्थान हिन्दुओंको प्राप्त है उस स्थानसे मुस्लिम राष्ट्रमें वे तभी च्युत हो सकेंगे जब मुस्लिम राष्ट्र उनके साथ अन्याय करेगा, बेईमानीसे पेश आवेगा, साम्प्रदायिक संकीर्णताका परिचय देगा। कहनेका मतलब यह है कि मुस्लिम राष्ट्रोंमे भी जबतक भेदभावकी नीतिसे काम नहीं लिया जायगा, हिन्दुओंकी हालत किसी भी तरह खराब नहीं हो सकती। अगर पाकिस्तानके समर्थकोंकी यही मंशा है—और विभाजनके समर्थनमें जो बातें कही गयी है यदि भावी कार्यक्रमका वही आधार रहा तो दूसरा उद्देश्य हो भी नहीं सकता—तब मुसलमानोंको यह आशा कभी नहीं करनी चाहिये कि गैर-मुसलमान इस स्थितिको कभी भी स्वीकार करेंगे। यदि हिन्दुओंके हाथमें राजनीतिक अधिकार रहता और यदि उसका उपयोग उन्होंने किसीको हानि पहुँचाकर अपने लाभके लिए किया होता तो स्थिति निश्चय ही भिन्न होती। लेकिन जैसा ऊपर दिखलाया गया है केन्द्रीय शासनमें उन्हें कोई अधिकार प्राप्त नहीं है और प्रान्तोंमें जो भी अधिकार उन्हें २७ मासकी छोटी अवधिमें प्राप्त था उसके मुकाबिले मुसलमानोंको पाकिस्तानके प्रान्तोंमें ८ सालकी लम्बी

अवधितक प्राप्त रहा। न तो उसमें कोई बाधा उपस्थित हुई और न ब्रिटिश सरकारकी तरफसे किसी तरहका हस्तक्षेप ही हुआ बल्कि उनकी सद्भावना ही मुस्लिम मन्त्रिमण्डलको प्राप्त थी। इस सम्बन्धमें यह भी स्मरण रखनेकी बात है कि केवल अपने अध्यवसायके बलपर पञ्जाबके अनेक सिखोंने पञ्जाबसे बाहर उद्योग-धन्धे कायम कर लिये है। मुसलमान सम्प्रदायके मेमन तथा खोजा जातियोंकी तरह राजपूताना, काठियावाड़, गुजरात तथा चटगांवके हिन्दू भारतके प्रधान व्यावसायिक जातियोंमें हैं। इन लोगोंने यह व्यावसायिक प्रधानता किसी राजनीतिक प्रभुताके कारण नही प्राप्त की है। दूसरे मुसलमान इस अवस्थाको नही प्राप्त हो सकते यदि उनका इरादा दूसरी जातियोंको दबाना न हो और मुस्लिम राष्ट्रोंमें अन्य राष्ट्रीयताकी जातियोंके प्रति उनका उपर्युक्त व्यवहार किसी भी हालतमे उचित और न्यायानुमोदित नही हो सकता।

विभाजनके विरुद्ध तर्क

इस तरह जिन आधारोंपर विभाजनका समर्थन किया जाता है वे या तो वास्तविक नही है या ऐसे है जिन्हें विभाजनके लिए उचित तथा न्यायानुमोदित नही स्वीकार किया जा सकता। इसके प्रतिकूल विभाजनके विषयमें अनेक सार्थक तर्क है। यहां उनमेंसे कुछ कारणोंका संक्षिप्त विवरण दे देना अनुचित नही होगा:—

(१) छोटे-छोटे स्वतन्त्र राष्ट्रोंके अस्तित्वका युग यदि बीत नहीं गया तो गिना हुआ अवश्य है। हालके अनुभवोसे यही निष्कर्ष निकलता है कि कोई छोटा राष्ट्र अपनी स्वतन्त्रताकी रक्षा नही कर सकता। बड़े बड़े राष्ट्र भी उसकी रक्षामें कठिनाईका अनुभव कर रहे है। इसलिए स्वाभाविक प्रवृत्ति स्वतन्त्र राष्ट्रोंको संयुक्त करनेकी ओर हो रही है। बड़े-बड़े राष्ट्रोंके ऊपर एक विशिष्ट राष्ट्र शक्ति कायम करनेकी ओर वर्तमान राजनीतिज्ञोंकी प्रवृत्ति हो रही है। इसलिए भारतमें छोटे-छोटे राष्ट्रोंको कायम कर उसकी शक्ति और आकारको कम करनेका मतलब वर्तमान राजनीतिक प्रवाहके विपरीत आचरण करना

होगा। इस बातकी बहुत अधिक सम्भावना है कि मुस्लिम राष्ट्रोंको अलग कर देनेसे ही बिभाजनकी समस्याका समाधान नहीं हो जायगा बल्कि एक बार आरम्भ होनेपर ऐसी स्थिति भी उत्पन्न हो सकती है कि भारतके बिभाजनके क्रियाकी केवल मुस्लिम तथा गैर-मुस्लिम राष्ट्रोंमें ही समाप्ति न होकर ये मुस्लिम और गैर-मुस्लिम राष्ट्र, देशी रियासतोके अलावा भी अनेक छोटे-छोटे राष्ट्रोंमें बँट जायँ। इस तरह छोटे छोटे राष्ट्रोंमें बँटकर यदि भारत कभी स्वतन्त्र हुआ तो उसकी हालत ठीक उस परिवारकी तरह हो जायगी जो बँटबाराके बाद कमजोर होकर विदेशी शक्तियोके षड्यन्त्रका शिकार हो जाता है। परिणाम यह होगा कि उसके अंगीभूत सभी राष्ट्र कमजोर होंगे, विदेशी आक्रमणोसे अपनी रक्षा नहीं कर सकेंगे और एक दूसरेके खिलाफ उभाड़े जाते रहेंगे।

(२) किसी देशके प्राकृतिक साधनोंका सम्यक् प्रयोग सबके लाभके लिए तभी हो सकता है जब सबलोग एक दूसरेका खयाल रखें और सभी मिलकर काम करें। दो स्वतन्त्र राष्ट्रोंकी स्थापनाके बाद यह असम्भव हो जायगा। दोनों राष्ट्र एक दूसरेसे स्वतन्त्र होंगे, यही बात परस्पर समझौता तथा संयुक्त काम करनेके रास्तेमें बाधक होगी। छोटे-छोटे राष्ट्रोंका अस्तित्व विस्तृत पैमानेपर कोई भी योजनामें बाधक सिद्ध होगा। सभी राष्ट्रोंके ऊपर प्रकृतिकी समान कृपा नहीं होगी। अधिकांश राष्ट्रोंको आधुनिक राष्ट्रोंकी रक्षा और कल्याणके अत्यन्त आवश्यक तथा महत्वपूर्ण साधनोके लिए अन्य राष्ट्रोंपर निर्भर करना पड़ेगा। राष्ट्रका क्षेत्र जितना व्यापक होगा, साधनोंकी उतनी ही अधिक बहुलता प्राप्त होगी। प्राकृतिक साधनों—कृषि, खनिज, तथा शक्ति-उत्पादन—का दायरा जितना विस्तृत होगा उतनी ही ज्यादा सम्भावना व्यवस्थित अर्थशास्त्रकी होगी। विभाजनके साथ ही भारत इस लाभसे वञ्चित हो जायगा और जैसा कि इस पुस्तकमें दिखलाया जा चुका है उत्तर-पश्चिम तथा उत्तर-पूर्वके मुस्लिम राष्ट्रोंको इस दृष्टिसे सबसे अधिक क्षति उठानी पड़ेगी। पीछे दिखलाया जा चुका है कि मुस्लिम राष्ट्रोंके पास इतना भी पर्याप्त साधन नहीं रहेगा कि वे शासन चला सकें और रक्षाका व्यय सँभाल सकें।

(३) वर्तमान समयमें भारतकी सबसे बड़ी आवश्यकता यह है कि राष्ट्रीय निर्माण कार्यमें वह अधिकाधिक व्यय कर सके। ब्रिटिश शासनके अन्तर्गत भारतको असीम क्षति उठानी पड़ी है क्योंकि ब्रिटेमने भारतके साथ पुलिस राष्ट्रकासा व्यवहार किया है और राष्ट्रीय निर्माणने सभी बिभागोंको लापरवाही-से देखकर उनकी पूरी अवज्ञा की है। समस्त राष्ट्रको उस बड़े अभावकी पूर्ति करना है। मुस्लिम राष्ट्र इससे पृथक नहीं किये जा सकते। देशका किसी भी तरहसे बिभाजन उसके साधनोंको कम कर देगा और मुस्लिम तथा गैर-मुस्लिम दोनों राष्ट्रोंको उसकी बढ़ती मांगको पूरा करना असम्भव हो जायगा।

(४) वर्तमान युगमें मुस्लिम देशोंकी भी विचारधारा यही है कि धर्मकी अपेक्षा राजनीति तथा अर्थनीतिको ही आश्रयका आधार बनाया जायगा। मुस्लिम लीग तथा पाकिस्तानके समर्थक चाहे जो कहें लेकिन वास्तविकता यह है कि यूरोपके ईसाई राष्ट्रोंकी भांति संसारके मुस्लिम राष्ट्र भी—यदि अभी-तक नहीं हो गये हैं—तो अर्थवादी राष्ट्र होते जा रहे हैं। प्रश्न यह उठता है कि क्या भारतके ही मुसलमान उलटी धारा बहानेका प्रयास करेंगे और भारतमें अन्य किसी आधारपर राष्ट्र कायम करेंगे ?

(५) यह तो सभी जानते हैं कि विभाजनके प्रस्तावका घोर विरोध सभी गैर-मुसलमानोंकी ओरसे तो हो ही रहा है, मुसलमानोंकी ओरसे भी हो रहा है। मैं इस सम्बन्धमें कुछ नहीं कहना चाहता कि भारतके बहुसंख्यक मुसलमानोंका प्रतिनिधित्व मुस्लिम लीग करती है या वे अन्य दल जैसे, जमैयतुल-उलेमा, जैमयतुल मोमीन, अहरार, राष्ट्रीय मुस्लिम दल, अखिल भारतीय शिया कान्फरेंस वगैरह। असल बात यह है कि पिछले सभी दलोंने एक स्वरसे विभाजनका विरोध किया है। मुसलमान चाहे जो भी रुख अख्तियार करें, हिन्दुओं तथा सिखोंने तो स्पष्ट शब्दोंमें कह दिया है कि वे विभाजनका विरोध करेंगे। विभा-जनकी मांग ज्यों-ज्यों तीव्र होती जायगी, विरोध त्यों-त्यों उग्र होता जायगा। यह कहना कठिन है कि यह संघर्ष भविष्यमें क्या रूप ग्रहण करेगा। लेकिन एक बात तो निश्चित है कि जिन लोगोंका इससे अधिक सम्बन्ध है

उन लोगोंकी सद्भावना और रजामन्दीसे यह प्राप्त नहीं हो सकता और यदि विभाजन किसी प्रकार हो भी गया तो उसके बाद भी वह दुर्भाव और मनोमालिन्य बढ़ेगा। इस प्रस्तावकी तहमें जो अविश्वास है वह बढ़ता जायगा और यह आशा कि विभाजनके बाद सभी बातें स्थिर हो जायँगी, और स्वतन्त्र राष्ट्र एक दूसरेके मित्र बन जायँगे, बालूकी भीत साबित होगी। सम्भावना तो इसी बात की है कि इस मनोमालिन्य और अविश्वासके फलस्वरूप परस्पर मेल तथा सद्भावना और कठिन हो जायँगे और दोनों ओर रक्षाके साधनोंकी अधिक आवश्यकता प्रतीत होगी। यदि और कुछ बुरा नही हुआ तो भी आर्थिक युद्धकी आशंका तो दूर नहीं प्रतीत होती।

(६) इसका फल यह होगा कि स्वतन्त्र राष्ट्रोंमें अल्पसंख्यकोंकी दशा अतिशय शोचनीय हो जायगी। मुस्लिम तथा गैर-मुस्लिम राष्ट्रोंके बहुसंख्यक सम्प्रदायोंके इस संघर्षके फल स्वरूप वे उस सद्भाव तथा सहानुभूतिसे वञ्चित हो जायँगे जो उन्हें मिलना चाहिये और उनकी दशा आजकी अपेक्षा कहीं अधिक खराब हो जायगी। अल्प संख्यकोंकी हालत खाईंसे निकलकर कुएँमें गिरे हुएके समान हो जायगी। यदि विभाजनका प्रस्ताव सफल हुआ तो यह अवस्था गैर-मुस्लिम अल्पसंख्यक समुदायपर जबर्दस्ती लादी जायगी लेकिन मुस्लिम अल्पसंख्यक समुदाय तो अपनी रजामन्दीसे इस विपत्तिमें पड़ेगे क्योंकि वे इसके लिए यत्न करेंगे और गैर-मुसलमानोंसे जबर्दस्ती इसे प्राप्त करेंगे। इसलिए वे इसके लिए किसी दूसरेको दोषी नही ठहरा सकते।

पीछे कहा गया है कि मुस्लिम राष्ट्रके गैर-मुसलमान, गैर-मुस्लिम स्वतन्त्र राष्ट्रके मुसलमानोंकी अपेक्षा अपनी रक्षा अधिक कर सकेंगे क्योंकि मुस्लिम अल्पसंख्यककी अपेक्षा उनकी संख्या बहुत ज्यादा होगी और जहांतक मुस्लिम अल्पसंख्यक विस्तृत गैर-मुस्लिम स्वतन्त्र राष्ट्रमें इधर उधर बिखरे रहेंगे वहां गैर-मुस्लिम मुस्लिम स्वतन्त्र राष्ट्रमें केन्द्रित होंगे। साथ ही विशेष हकों और रिआयतोंके सम्बन्धमें आदान-प्रदानकी भी बहुत ज्यादा गुंजाइश नहीं होगी क्योंकि बराबरीके आदान-प्रदानका साधन मुस्लिम राष्ट्रोंके पास नहीं होगा इसलिए गैर-मुस्लिम-राष्ट्रोंको इसके लिए कोई समुचित प्रोत्साहन भी नहीं मिलेगा।

षष्ठ भाग

पाकिस्तानके विकल्प

१

क्रिप्सका प्रस्ताव

मार्च १९४० में मुस्लिम लीगने अपने लाहौरवाले अधिवेशनमें जबसे पाकिस्तानका प्रस्ताव स्वीकृत किया है तबसे भारतके मुसलमानोंकी उचित मांगों-की पूर्तिके उद्देश्यसे कितनी ही योजनाएँ उपस्थित की गयी हैं, जिन्हें हम पाकिस्तानके विकल्प कह सकते हैं।

१. इन विकल्पोंमें सर्वप्रथम स्थान ब्रिटिश युद्ध मन्त्रिमण्डलद्वारा प्रस्तुत उस प्रस्तावको दिया जा सकता है जिसे लेकर सर स्टैफर्ड क्रिप्स भारत आये थे। उन्होंने ही उसे सबसे पहले प्रकाशित किया था, इसी कारण वह 'क्रिप्स-प्रस्तावके नामसे प्रसिद्ध है। यहां क्रिप्स प्रस्तावके केवल उस अंशसे हमारा तात्पर्य है जिसमें भारतीय संयुक्त राजके प्रकार तथा उसकी विधान निर्मात्री परिषद्का वर्णन है। उसमें प्रस्तावित अस्थायी शासन व्यवस्था, क्रिप्सकी वार्ता अथवा उसके परिणामसे हमारा तात्पर्य नहीं है। उक्त प्रस्तावका उद्देश्य 'स्पष्ट शब्दोंमें उन उपायोंकी चर्चा करना था जो ब्रिटिश सरकार भारतको शीघ्रातिशीघ्र स्वशासनाधिकार प्रदान निमित्त करना चाहती है। उसका उद्देश्य एक नये भारतीय संयुक्तराजकी स्थापना करना है जो एक उपनिवेशके रूपमें रहेगा तथा सम्राट्के प्रति राजभक्तिके नियमोंसे उसी भांति बँधा रहेगा जिस भांति ब्रिटेन तथा अन्य उपनिवेश हैं। वह प्रत्येक विषयमें अन्य उपनिवेशोंके सम-कक्ष रहेगा तथा घरेलू अथवा बाहरी—किसी भी विषयमें अन्य उपनिवेशोंसे निम्न श्रेणीका न समझा जायगा।' 'युद्ध समाप्त होते ही भारतके लिए एक नया विधान निर्माण करनेके लिए, आगे वर्णित ढंगपर एक विधान निर्मात्री परिषद् संघटित करनेका प्रयत्न किया जायगा। इस बातका भी आयोजन रहेगा कि विधान निर्मात्री परिषद्में देशी राज्य भी सम्मिलित हो सकें।' और 'ब्रिटिश,

सरकार निम्नलिखित शर्तोंके साथ ऐसे विधानको स्वीकार करने और व्यवहृत करनेका बचन देती है—

(१) यदि ब्रिटिश भारतका कोई प्रान्त नये विधानको स्वीकार करनेके लिए प्रस्तुत न होगा तो उसे ऐसा करनेका अधिकार रहेगा। वह अपनी वर्तमान वैधानिक स्थितिमें ही बना रह सकेगा। यदि बादमें वह उक्त विधानको स्वीकार करनेके लिए प्रस्तुत हो जायगा तो उसे विधानमें सम्मिलित होनेकी सुविधा रहेगी। इस प्रकारके विधानको अस्वीकार करनेवाले प्रान्त यदि कोई ऐसा नया विधान बनायेंगे जिसमें उन्हें भारतीय संयुक्त राजके समान ही पूर्ण अधिकार रहेंगे और जिसके निर्माणकी विधि भी यहां वर्णित विधिसे ही मिलती जलती रहेगी तो ब्रिटिश सरकार ऐसे विधानको स्वीकार करनेके लिए प्रस्तुत रहेगी।

(२) ब्रिटिश सरकार भारतीयोंको सभी अधिकार हस्तान्तरित करने और अल्पमतवालोंके हितोंकी रक्षा करनेके लिए सभी आवश्यक बातोंके सम्बन्धमें विधान निर्मात्री परिषद्से जो सन्धि करेगी उसमें वह भारतीय संयुक्त राजपर ऐसा कोई प्रतिबन्ध न लगायेगी जिससे ब्रिटिश राष्ट्रमण्डलके अन्य सदस्योंके साथ उसके भावी सम्बन्ध-निर्णयमें किसी तरहका हस्तक्षेप हो। यदि युद्धकी समाप्तिके पूर्व प्रमुख सम्प्रदायोंके भारतीय नेता कोई अन्य सर्वसम्मत उपाय न खोज निकालेंगे तो विधान निर्मात्री परिषद्का संघटन इस प्रकार होगा—

युद्धकी समाप्तिके बाद ही प्रान्तीय असेम्बलियोंके चुनाव होंगे। उनके परिणामकी घोषणा होनेके उपरान्त ही प्रान्तीय असेम्बलियां प्रतिनिधित्वके अनुपातके आधारपर विधान निर्मात्री परिषद्का चुनाव करेंगी। इस परिषद्में असेम्बलीके लगभग १।१० सदस्य रहेंगे। देशी रियासतोंको भी उसी अनुपातमें अपने प्रतिनिधि चुननेके लिए आमन्त्रित किया जायगा जो अनुपातसे उनकी कुल जन संख्या और सारे ब्रिटिश भारतकी जनसंख्याके बीच होगा, ब्रिटिश भारतके प्रतिनिधियोंको जो अधिकार रहेंगे वे ी देशी रियासतोंके प्रतिनिधियोंको प्राप्त रहेंगे।"

उपर्युक्त बातोका साराश यही है कि ब्रिटिश सरकारका यह प्रस्ताव था कि युद्ध समाप्त होते ही एक नया भारतीय संयुक्त राष्ट्र बनानेका प्रयत्न किया जायगा जिसे पूरा औपनिवेशिक पद प्राप्त रहेगा और वह यदि चाहेगा तो ब्रिटिश मण्डलसे अपना सम्बन्ध भी विच्छेद कर लेगा। नये चुनावमें चुने गये प्रान्तीय असेम्बलियोंके सभी सदस्य आनुपातिक प्रतिनिधिद्वारा विधान निर्मात्री परिषद्का संघटन करेंगे। वही परिषद् भारतके लिए नया विधान प्रस्तुत करेगी। इसमें जनसंख्याके अनुपातसे देशी रियासतोंके प्रतिनिधि भी रहेंगे। विधान निर्मात्री परिषद्द्वारा प्रस्तुत किया गया विधान ब्रिटिश सरकार स्वीकार कर लेगी और उसे व्यवहृत करेगी। यदि कोई प्रान्त इस विधानको स्वीकार न करना चाहेगा तो वह संयुक्त राजसे पृथक् रहनेके लिए स्वतन्त्र रहेगा। वह यदि चाहेगा तो अपने ढंगका विधान प्रस्तुत कर सकेगा और उसे भी भारतीय संयुक्त राजके समान अधिकार रहेगा। ब्रिटिश सरकार तथा विधान निर्मात्री परिषद्के बीच अधिकार हस्तान्तरित करनेसे सम्बद्ध सभी आवश्यक विषयो और नस्ल तथा धर्मके अनुसार बने अल्पसंख्यक दलोके सम्बन्धमें एक सन्धि होगी। इसका आरम्भ पृथक् स्वतन्त्र राजोसे नही, प्रत्युत् एक भारतीय संयुक्त राजसे किया गया है और यह बात प्रान्तोंकी इच्छापर छोड़ दी गयी है कि जो प्रान्त विधानको स्वीकार न करेंगे वे पृथक् रह सकेंगे और उनका पद भारतीय संयुक्त राजके समान ही होगा। प्रोफेसर कूपलैण्डके शब्दोंमें ब्रिटिश सरकारने अपने इस उद्देश्यकी स्पष्ट शब्दोंमें घोषणा कर दी कि वह भारतके नये विधानमें एक भारतीय संयुक्त राजकी स्थापना करना चाहती है जिसका पद औपनिवेशिक रहेगा। ब्रिटिश घोषणाको पढ़नेवाला कोई भी व्यक्ति यह बात स्वीकार करेगा कि प्रस्तावमें असम्बद्ध रह सकनेकी आयोजनावाली धाराका लक्ष्य भारतको स्वतन्त्र करनेकी पूरी योजनाको असफल होनेसे बचाना ही है।"†

विशेषतः यही कारण था जिससे मुस्लिम लीगने यह कहकर क्रिप्स

---

† आर० कूपलैण्ड : 'इण्डियन पालिटिक्स १९३६–४२', पृष्ठ १७६।

प्रस्ताव ठुकरा दिया कि इसमें विभाजनके सम्बन्धमें कोई स्पष्ट घोषणा नहीं है और जहां इसमें पाकिस्तानकी बात प्रकारान्तरसे स्वीकार कर ली गयी है वहां वस्तुतः उसमें एकसे अधिक संयुक्त राजकी किसी सम्भावनाके लिए कोई स्थान ही नहीं रह गया है।

४ अप्रैल १९४२ को प्रयागमें अखिल भारतीय मुसलिम लीगके अध्यक्ष पदसे किये गये भाषणमें तथा १३ अप्रैल १९४२ को पत्रप्रतिनिधियोंके सम्मेलनके सम्मुख किये गये अपने एक वक्तव्यमें श्री जिनाने स्पष्ट शब्दोंमें सारी बातें प्रकट कर दीं। उन्होंने इन कारणोंसे उक्त योजना अस्वीकार कर दी।

(१) इसका मुख्य उद्देश्य एक नये भारतीय संयुक्त राजकी स्थापना है। इसमें पृथक् होनेपर अल्पमतलवालोंको जो अधिकार प्रदान करनेकी बात कही गयी है वह केवल धोखेकी टट्टी है। (२) विधान निर्मात्री परिषद् प्रमुख संस्था होगी जिसका चुनाव ११ असेम्बलियोंके कुल सदस्योंमेंसे आनुपातिक प्रतिनिधित्वके आधारपर होगा, पृथक् निर्वाचन पद्धतिके आधारपर नहीं। पृथक् प्रतिनिधित्व होनेपर भी उसमें मुसलमानोंकी संख्या २५ प्रतिशतसे अधिक न होगी किन्तु आनुपातिक प्रतिनिधित्वसे उससे कम संख्या हो सकती है। उसका निर्णय बहुमतसे होगा, अतः यह पूर्णतः निश्चित है कि वह ऐसा विधान प्रस्तुत करेगी जो अखिल भारतीय संयुक्त राजके उपयुक्त होगा। (३) प्रान्त या प्रान्तोंको सम्बन्ध विच्छेद कर लेनेका अधिकार जिस प्रकारसे दिया गया है वह अत्यन्त महत्वपूर्ण है। उसमें कहा गया है कि यदि किसी प्रान्तकी असेम्बलीमें ६० प्रतिशत मतदाता सम्मिलित रहनेके पक्षमें हैं तो उस समस्याका वहीं अन्त हो जायगा; किन्तु यदि ५९ प्रतिशत व्यक्ति पक्षमें है और अल्पमतवाले ४१ प्रतिशत हैं तो प्रान्तकी जनता बालिग मताधिकारद्वारा इसका निर्णय करेगी। इस भांति मुस्लिम राष्ट्रकी एकता और अखण्डता स्वीकार नहीं की गयी है। प्रान्तोंकी प्रादेशिक अखण्डतापर ही, जो कि ब्रिटिश नीतिके फलस्वरूप संयोगसे बन गयी है, अत्यधिक जोर दिया गया है। मुसलमानोंका राष्ट्रीय आत्मनिर्णयका अधिकार, जोकि दोनों राष्ट्रोंके संयुक्त

अधिकारसे भिन्न है, स्पष्टत: स्वीकार नहीं किया गया है। अत्यधिक मुस्लिम बहुमतवाले पञ्जाब और बंगाल प्रान्तकी असेम्बलियोंमें मुसलमान बहुमतमें नहीं हैं। यहांके मुसलमान हिन्दू अल्पमतकी दयापर निर्भर रहेंगे। सीमाप्रान्त और सिन्धमें गैर-मुसलमानोंको जो अत्यधिक महत्व और स्थान दिया गया है उसे देखते हुए अपने लक्ष्यकी पूर्ति करना मुसलमानोंके लिए अत्यधिक कठिन होगा।

अत: यह योजना अस्वीकार्य ठहरी। कारण, एक तो इसमें पाकिस्तानकी बात स्पष्ट शब्दोंमें स्वीकार नहीं की गयी थी और दूसरे, मुसलमानोंका आत्म-निर्णयका सिद्धान्त नहीं माना गया था। विभाजनकी बात इसमें अवश्य स्वीकार की गयी थी जिसका कि पर्याप्त स्वागत किया गया।†

२

प्रोफेसर कूपलैण्डकी प्रादेशिक योजना

प्रोफेसर रेजिनाल्ड कूपलैण्डने 'दि फ्यूचर आव इण्डिया' नामक अपनी पुस्तकमें एक योजना उपस्थित की है जिसे वे प्रादेशिकतापर आधृत बताते हैं। उन्होंने सर सिकन्दर हयात खांकी भारतीय संघकी योजनासे प्रादेशिकताका भाव लिया है और प्रादेशिक सीमानिर्धारणकी वह योजना स्वीकार की है जो भारतके मर्दुमशुमारी-कमिश्नर एम० डब्ल्यू० एम० यीट्सने १९४१ की मर्दुमशुमारी-की रिपोर्टकी भूमिकामें भारतकी जल-विद्युत् शक्तिकी उन्नतिकी ५० वर्षीय योजनाके अन्तर्गत दी है। इस योजनाके अनुसार उत्तरी भारत नदियोंके ३ जल-शोषक प्रदेशोंमें बांट दिया जायगा—(१) सिन्ध नदीका जलशोषक प्रदेश—जो काश्मीरसे कराचीतक रहेगा (राजनीतिक शब्दावलीमें जो पाकिस्तान कहलाता है), (२) गंगा-यमुनाका जलशोषक प्रदेश—पञ्जाब और बंगालके बीचमें (अर्थात्

---

† स्पीचेज एण्ड राइटिंग्स आव मिस्टर 'जिना', पृष्ठ ३४०—३६४

हिन्दुस्तान) और (३) गंगा और ब्रह्मपुत्रका जल शोषक प्रदेश—बिहार और पूर्वी सीमाके बीच (अर्थात् उत्तरी-पूर्वी भारत)। गंगाके जलशोषक प्रदेशका दो टुकड़ोंमें विभाजन प्राकृतिक कारणोंके अनुकूल है। बिहारकी पूर्वी सीमापर जैसे ही गंगा १५० मील दूर ब्रह्मपुत्रसे मिलनेके लिए दक्षिणकी ओर झुकने लगती है वैसे ही देशकी प्राकृतिक स्थितिमें परिवर्तन होने लगता है। उत्तरी मैदानवाला देश मिटता जाता है, महान डेल्टावाला देश आने लगता है।† (४) महान् प्राय-द्वीप मोटे रूपमें चौथा प्रदेश कहा जा सकता है। प्रोफेसर कूपलैण्डके कथना-नुसार नदियोंके जलशोषक प्रदेशोमें आर्थिक आवश्यकताओंकी भी पूर्ति हो जाती है। आर्थिक उन्नति अनेक अंशोमें जल-विद्युत्के सम्यक् उपयोगपर निर्भर करती है। नदियोंके पूर्ण उपयोग और जल-विद्युत्शक्तिके कारखानोंके लिए लम्बे प्रदेशकी योजनाकी आवश्यकता है जिसकी कि पृथक् क्षेत्रों अथवा पृथक् प्रान्तोके साधनोंद्वारा पूर्ति सम्भव नहीं है। उसके लिए प्रान्तेतर सहयोगकी आवश्यकता है। उसमें इतना व्यय पड़ेगा और ऐसा नियन्त्रण आवश्यक होगा जो केवल प्रादेशिक आधारपर ही सम्भव है। इसके लिए भारतको निम्नलिखत चार प्रदेशोंमें विभक्त किया जा सकता है—

† आर० कूपलैण्ड : 'दि फ्यूचर आव इण्डिया', पृष्ठ २०।

प्रदेशका नाम	ब्रिटिश भारतके प्रान्त	देशी रियासतें	क्षेत्रफल १००० वर्गमीलमें देशी रियासतोंको लेकर	क्षेत्रफल १००० वर्गमीलमें देशी रियासतोंको छोड़कर
सिन्ध	सीमाप्रान्त पञ्जाब, ब्रिटिश बलूचिस्तान, सिन्ध, अजमेर-मारवाड़ा	काश्मीर, सीमाप्रान्तीय एजेन्सियां और रियासतें, पञ्जाबकी रियासतें, पर्वतीय रियासतें, बलूचिस्तानकी रियासतें, राजपूतानाकी रियासतें—निम्नलिखित (क) और (ख) छोड़कर	५६९.७३	२१८.३५
गंगा	संयुक्तप्रान्त बिहार, उड़ीसा	युक्तप्रान्तकी रियासतें, ग्वालियर उड़ीसाकी, रियासतें, ग्वालियरके पूर्व मध्यप्रान्तकी रियासतें, छत्तीसगढ़की रियासतें (ग) छोड़कर, राजपू-तानाकी रियासतें (क) भरतपुर, बूंदी, धौलपुर, करौली, कोटा	३११.८०	२०८.२०
डेल्टा	बंगाल आसाम	बंगालकी रियासतें, आसामकी रियासतें, सिक्किम	१५६.९६	१३२.३९
दक्षिण	मद्रास बम्बई, मध्यप्रान्त और बरार, कुर्ग, पंथपिपलोदा	पश्चिम भारतकी रियासतें, ग्वालियरके पश्चिम और दक्षिण मध्य भारतकी रियासतें, गुजरातकी रियासतें, बड़ौदा राजपूतानाकी (ख) रियासतें—बासवाड़ा, दांता, डूंगरपुर, पलनपुर, छत्तीसगढ़की (ग) रियासतें,—बस्तर, छुईखदान, काकेर, कवधी, खैरागढ़, नन्दगांव, दक्षिण और कोल्हापुरकी रियासतें, हैदराबाद, मद्रासकी रियासतें मैसूर, त्रावणकोर और कोचीन	५३९.२५	३०२.७९

(शेषांश आगेके पृष्ठपर)

(पीछेके पृष्ठका शेषांश)

जनसंख्या १० लाखमें देशी रियासतोंको लेकर				जनसंख्या १० लाखमें देशी रियासतोंको छोड़कर				प्रति जनसंख्या देशी रियासतोंको लेकर			प्रति जनसंख्या देशी रियासतोंको छोड़कर		
हिन्दू	मुसलमान	आदि जातियां	कुल	हिन्दू	मुसलमान	आदि जातियां	कुल	हिन्दू	मुसलमान	अन्य	हिन्दू	मुसलमान	अन्य
२१.३४	३१.९०	१.२२	६१.२५	९.३८	२२.७५	०.१३	३७.०८	३४.८	५२.०	१३.२	२५.२	६१.३	१३.५
९१.८९	१४.०३	९.८१	११६.५५	७९.१५	१३.२९	७.०७	१००.०९	७८.७	१२.०	९.३	७९.०	१३.२	७.८
३०.६६	३६.८५	५.५९	७३.५०	२९.२७	३६.४५	४.३७	७०.५१	४१.७	५०.१	८.२	४१.५	५१.६	६.९
११०.४४	११.२२	८.७७	१३९.८२	७२.४२	६.६१	५.१३	८७.१८	८०.५	८.२	११.३	८३.०	७.५	९.५

जनसंख्याके आधारपर अनुपात का अनुमान बैठानेमें विद्वान् प्रोफेसरने नकशेमें थोड़ीसी हिसाब-सम्बन्धी भूल की है जिसे मैंने ठीक कर दिया है।

प्रोफेसरके कथनानुसार प्रादेशिकता विभाजनसे भी भिन्न है और संघसे भी इसमें भारतकी कल्पना की गयी है। किन्तु यह केन्द्र नये ढंगका होगा जिसके हाथमें केवल उतने ही न्यूनतम अधिकार रहेंगे जिनकी कि भारतकी अखण्डताकी रक्षाके निमित्त उसे देनेकी आवश्यकता होगी और वह इन अधिकारोंका प्रयोग अखिल भारतीय मतदाताओंके बलपर नही, प्रदेशोंकी संयुक्त संस्थाके रूपमें करेगा।

भारतकी अखण्डताके लिए विदेशियोंकी दृष्टिसे जिन न्यूनतम अधिकारोंकी आवश्यकता होगी, वे ये है—(१) परराष्ट्र सम्बन्धी विषय और रक्षा, (२) विदेशी व्यापार अथवा 'जकात नीति और (३) मुद्रा। रक्षामें केवल अपनी ही स्थल, जल और विमान सेनाके नियन्त्रण और बनाये रखनेकी बात आती है जितनी कि बाहरी आक्रमणसे भारतकी रक्षाके लिए आवश्यक हो।

देशसे जाकर विदेशमें बसने और विदेशसे आकर देशमें बसनेपर नियन्त्रण रखने और जन्मजात नागरिकों जैसे अधिकार प्राप्त करनेके प्रश्न भी परराष्ट्र सम्बन्धी मामलोंसे सम्बद्ध है।

केन्द्रमें दूतावाससे सम्बद्ध लोगोंको रखने, जकात वसूल करने आदिका खर्च विशेष न होगा। खर्चकी मोटी मद रक्षा-सम्बन्धी होगी और वर्तमान युद्धके पूर्व भारतकी रक्षाका व्यय जकातसे प्राप्त होनेवाली आयसे ही कमबेश पूरा हो जाता था। इस प्रश्नपर विचार किया होगा कि क्या घाटेकी पूर्ति करनेके लिए केन्द्रको कर लगानेका अधिकार रहना चाहिये अथवा विधानमें निश्चित आधारपर विभिन्न प्रदेशोंद्वारा उसकी पूर्ति होनी चाहिये। इसी भांति विधानमें बचतका धन विभिन्न प्रान्तोंमें वितरित करनेकी धारा बनायी जा सकती है।

इन न्यूनतम केन्द्रीय विषयोंके अतिरिक्त यातायात—रेल, विमान, जहाजरानी, बेतारके तार, टेलीफोन, तार और सम्भवतः डाक विभागको भी इसम सम्मिलित कर देना अधिक सुविधाजनक और आर्थिक दृष्टिसे लाभकर होगा। साधारण स्थितिमें अन्तर्प्रादेशिक केन्द्रके लिए इनकी विशेष आवश्यकता नही भी हो सकती है पर विधानमें ऐसी धारा रखी जा सकती है कि युद्ध जैसी तात्कालिक आवश्यकता उत्पन्न होनेपर इन वस्तुओंपर केन्द्रका नियन्त्रण रहे। जनगणना, वैज्ञानिक शोध, औद्योगिक उन्नति, खानों और तैल-कूपोंकी खुदाई प्रमुख बन्दर और जलयातायात, शस्त्रास्त्र, विस्फोटक पदार्थ आदिका नियन्त्रण भी केन्द्रमें रहनेसे अधिक सुविधा और आर्थिक लाभ हो सकता है। किन्तु ये विषय विभिन्न क्षेत्रोमें बिखरे होगे। जिन मामलोमें एकरूपता लानेकी आवश्यकता है उनके सम्बन्धमें अनुरोधपूर्वक ही केन्द्रीय कानून बनवानेकी व्यवस्था रखी जा सकती है अर्थात् ऐसे केन्द्रीय कानून प्रदेशोंकी अनुमति लेकर ही बनाये जा सकेगे।

अन्तर्प्रादेशिक संयुक्तराजको हलके ढगका संघ कहा जा सकता है किन्तु यह ध्यान रखना चाहिये कि प्रादेशिकतासे एक नये भावकी उत्पत्ति होती है। यह सबसे पहले भारतको कई बड़े राजोंमें विभक्त करता है जोकि पूर्णतः स्वतन्त्र हो सकते है परन्तु वे कुछ संयुक्त उद्देश्योंकी पूर्तिके लिए अपने अधिकारोंको बांट देनेका निश्चय करते है। सभी वर्तमान संघ इस ढंगसे विभाजित किये गये है कि स्थानीय स्वशासनके सिद्धान्तका राष्ट्रीय एकताके सिद्धान्तसे सामंजस्य हो जाता है। किन्तु प्रादेशिकतामें ऐसा दोहरा सिद्धान्त लागू नहीं होता। केन्द्र शुद्ध अन्तर्प्रादेशिक सस्था है। वह संस्थाके रूपमें ही समझी जायगी। उसकी कार्यकारिणी और असेम्बलीके सदस्य अपने प्रदेशके एजेण्टके रूपमें कार्य करेंगे। पर वह ऐसे संघसे भिन्न रहेगा जो केवल एक संस्थाके रूपमें रहता है, जिसके हाथमें अपना कोई अधिकार नहीं होता और उसके जिन निश्चयोंको इकाइयां स्वीकार करती है, उन्हें वे स्वयं अपने खर्चसे व्यवहृत करती है। पर अन्तर्प्रादेशिक केन्द्र एक सरकारके रूपमें होगा। वह

अपने सैनिकों और कर्मचारियोंको आदेश देगा और अपने ढंगसे अपना कार्य करेगा। वस्तुतः उसकी स्थिति (कान्फेडरेसी) राज संघ और (फ्रेडरेशन) सघके मध्यवर्तीकी-सी होगी।

अन्तर्प्रादेशिक असेम्बली १९३५ के शासन-विधानमें वर्णित संघ असेम्बलीसे इस अर्थमें भिन्न होगी कि उसमें भारतीय राष्ट्रीयताकी भावना और शक्ति व्यक्त न होगी,कारण, प्रादेशिक भावनाका अर्थ ही यह है कि सारे भारत-को एकराष्ट्रीयताकी उपलब्धि नहीं हो सकी है। उसमें विभिन्न प्रदेशोंकी पृथक् पृथक् राष्ट्रीयताओकी भावनाका प्रदर्शन होगा। अतः उसमें प्रत्येक प्रदेशके प्रतिनिधियोकी संख्या समान होनी चाहिये और सम्बद्ध इकाइयोंको पर्याप्त प्रतिनिधित्वके लिए संख्यामें लेशमात्र भी बृद्धि न करनी चाहिये। इसमें प्रदेशोके आकार-प्रकार तथा उनकी जन-संख्याका कोई ध्यान न रखना चाहिये। सदस्योंको अपने प्रदेशोंसे अधिकार प्राप्त होंगे और उन्हीके प्रति वे जिम्मेदार होंगे। वे प्रादेशिक असेम्बलियोंद्वारा चुने जा सकते हैं और चुनावकी पद्धति ऐसी हो जिससे प्रान्तों और राजोंको पर्याप्त प्रतिनिधित्व प्राप्त हो सके। यदि गंगाके जलशोषक प्रदेश और दक्षिण प्रदेशोके अन्तर्गत पड़नेवाले कुल प्रान्त और राज इन प्रदेशोमें सम्मिलित होना न स्वीकार करेंगे तो अन्तर्प्रादेशिक केन्द्रमें उनके प्रतिनिधित्वकी ऐसी व्यवस्था करनी पड़ेगी कि उनके प्रतिनिधियोंकी संख्या उतनी ही हो मानो गैर-प्रदेशवाले प्रान्त वस्तुतः प्रदेशोंमें मिलकर एक हो गये हों। अर्थात् अन्तर्प्रादेशिक असेम्बलीमें दो मुस्लिम प्रदेशों—सिन्धका जलशोषक प्रदेश और डेल्टाका प्रदेश—के प्रतिनिधियोंकी संख्या गंगाके जलशोषक प्रदेश और दक्षिणी प्रदेशके प्रतिनिधियोंकी संख्याके बराबर होगी। इस बातका कोई खयाल न किया जायगा कि बादवाले प्रदेश प्रदेशोंके रूपमें संघटित हुए हैं अथवा नहीं।

केन्द्रका क्षेत्र केवल तीन विषयोंके लिए सीमित रहनेसे तथा बहुत थोड़ेसे कार्यके कारण केन्द्रीय मन्त्रि-मण्डलमें केवल ४ विभागीय मन्त्री रहेंगे और एक दो बिना विभागवाले मन्त्री रहेंगे। वहां वैधानिक संयुक्त सरकार रहेगी,

और कुछ अंशोंमें स्विट्जरलैण्ड जैसा विधान लागू होगा। सम्भव है कि कौंसिल ही प्रधान मन्त्री तथा मन्त्रि-मण्डलके अन्य सदस्योका चुनाव करे और उनका कार्यकाल उतने ही दिनोंका हो जितने दिनोंका कौसिलका रहे। स्विट्जरलैण्डके मन्त्रि-मण्डलके समान ही वे भी किसी कानूनको बनानेके लिए कौलिसके बहुमत-पर निर्भर रह सकते हैं और अपने शासनकी दैनिक काररवाईके लिए वे कौसिलके प्रति उत्तरदायी न होंगे। स्विट्जरलैण्डके आदर्शपर मन्त्रि-मण्डलके पदोंका भी समान बँटवारा हो सकता है। प्रत्येक प्रदेशको कमसे कम एक और अधिकसे अधिक दो स्थान मिलें। इस कार्यके लिए भी वे प्रान्त प्रदेश माने जायँ जो किसी प्रदेशमें सम्मिलित न हों। प्रधान मन्त्री क्रमानुसार एक बार हिन्दू रहे और दूसरी बार मुसलमान।

विधानकी धाराओंका ठीक अर्थ प्रतिपादित करनेके लिए सर्वोच्च न्याया-लयके अधिकार वैसे ही होंगे जैसे अधिकार इस समय संघन्यायालयको है। इसमे प्रत्येक प्रदेशका एक न्यायाधीश रहे और बिना प्रदेशवाले प्रान्त इस मामले में भी एक प्रदेश माने जायँ।

इस नयी व्यवस्थाका साम्प्रदायिक समस्यापर क्या प्रभाव पड़ेगा? प्रोफे-सर कूपलैण्डका मत है कि इसका उत्तर केन्द्रमें स्थापित साम्प्रदायिक सन्तुलनके प्रकारपर निर्भर करता है। प्रादेशिक व्यवस्थामें अन्तर्प्रादेशिक असेम्बलीके चुनावमें कोई राष्ट्रीय भावना काम न करेगी। सदस्य केवल अपने प्रदेशोंके हो शुद्ध प्रतिनिधि रहेंगे। वे वस्तुतः अपनी सरकारोंके शासनादिष्ट प्रदेशों और असेम्बलियोंके प्रतिनिधित्वके रूपमें रहेंगे और तदनुकूल ही उन्हें अपना मत प्रदान करना पड़ेगा। इस भांति केन्द्रीय असेम्बलीका साम्प्रदायिक सन्तुलन सदस्योंके या दलोंके व्यक्तिगत मतोंका सन्तुलन न होगा, वह प्रदेशोंकी पारस्परिक नीतिका सन्तुलन होगा। इससे भारतके दो प्रमुख सम्प्रदायोके प्रतिनिधियोको भारतकी संयुक्त सेनाके लिए दिन प्रतिदिन एक साथ मिलकर काम करनेका अवसर मिलेगा और सम्भव है कि एक दिन ऐसा आ जाय जब हिन्दू और मुसलमान, कनाडियन अथवा स्विस लोगोंकी भांति अपनी राष्ट्रीयताकी विशेषताओंको बनाये

रखते हुए भी स्विट्जरलैण्ड अथवा कनाडाकी भांति एक भारतीय राष्ट्रत्वकी भावनाके प्रति जागरूक हो उठें। यह कहते हुए प्रोफेसर कूपलैण्ड हिन्दुओंको सलाह देते हैं कि वे किन्हीं भी शर्तोंपर संयुक्त राज स्वीकार कर लें ताकि उसका व्यवहृत होना सम्भव हो जाय। मुसलमानोंसे आप अपील करते हैं कि यद्यपि इस योजनाद्वारा मुस्लिम राजोंकी पूर्ण स्वाधीनताकी मांग पूरी नही होती तथापि उनकी अन्य सभी मांगें तो पूरी हो जाती है, अतः उन्हें इसे स्वीकार कर लेना चाहिये। यह दो राष्ट्रोंके सिद्धान्तको स्वीकार करती है। इसमे राष्ट्रीय राज अथवा राजोके अन्तर्गत भारतीय मुस्लिम राष्ट्रकी स्थापनाकी बात है। इसमे यह बात स्वीकार की गयी है कि वे राज, फिर उनका आकार-प्रकार अथवा जन-संख्या कुछ भी क्यों न हो, पदमें हिन्दू राजों अथवा प्रान्तोके समूहके समकक्ष है। इसमें उनकी स्वतन्त्रतामे कोई हस्तक्षेप नही किया जाता अपितु यह उन्हें एक छोटे क्षेत्रके अधिकारोंमें अन्य राजोंके साथ अपने चुने हुए प्रतिनिधियोद्वारा हिस्सा बंटानेका अवसर प्रदान करती है।

मैने प्रोफेसर कूपलैण्डकी प्रादेशिक योजनाकी रूपरेखा यथासाध्य उन्हींके शब्दोंमें देनेका प्रयत्न किया है। विद्वान लेखकने जैसा कि स्वयं स्वीकार किया है, इसमें सन्देह नहीं कि यह योजना इस बातपर आधृत है कि भारतमे दो राष्ट्र हैं और यहां एक भारतीय राष्ट्र नही है। इस अनुमानको अपने सामने रख-कर लेखक मुस्लिम लीगके विभाजनके दावेको यथासाध्य पूरा करनेका प्रयत्न करता है और ऐसा करते हुए उसने भौगोलिक और आर्थिक एकतापर आधृत प्रादेशिकताके द्वारा धार्मिक और साम्प्रदायिक जनसंख्याके वितरणके आधारपर स्वशासित मुस्लिम राजोंकी स्थापनाका समर्थन किया है। डाक्टर राधाकमल मुखर्जीके शब्दोंमें "प्रोफेसर कूपलैण्डने आर्थिक सिद्धान्तोंपर मुसल-मानोंके 'वतन'का जो राजनीतिक सीमानिर्धारण किया है वह कृषि सम्बन्धी भूगोलकी दृष्टिमें भद्दी भूल है।"*

---

* डाक्टर राधाकमल मुखर्जी : 'एन एकनामिस्ट लुक्स एट पाकिस्तान' पृष्ठ १२।

इस योजनापर सबसे बड़ी आपत्ति यह की जा सकती है कि यह सर्वांशमें प्रादेशिकताके अनुरूप भी तो नही चलती। प्रोफेसर कूपलैण्डने यह बात स्वीकार की है कि पञ्जाबका बहुत-सा भाग वस्तुतः गंगा नदीके जलशोषक प्रदेशमें पड़ता है, परन्तु उन्होंने उसे सिन्ध नदीके जलशोषक प्रदेशमें सम्मिलित कर लिया है। कोई भी ऐसा भौगोलिक कारण नहीं है जिसके द्वारा इस प्रदेशमें जिसमें तीन चौथाई राजपूताना शामिल है, मार्ग परिवर्तन करनेका औचित्य सिद्ध हो सके। प्रोफेसरके शब्दोमे 'प्राकृतिक तथा नस्लकी दृष्टिसे इसका अपना पृथक् महत्व है।' और यदि किसी कारणसे यह प्रदेश सिन्ध नदीके जल-शोषक प्रदेशमें जोड़ा भी जाय तो कोई कारण नहीं कि चार दक्षिणी राज गुज-रातके साथ एक प्रदेशमे जोड़ दिये जायं जिनका कि गुजरात और उसके निवा-सियोसे कोई साम्य या सम्पर्क नही और स्वय गुजरात ही अथवा कमसे कम उसका उत्तरी आधा भाग, जिसे अरावली पहाड़ियोसे निकलनेवाली नदियां ही सीचती है और भारी वर्षा होती है, इस प्रदेशमे क्यो न शामिल कर लिया जाय और दक्षिणसे पृथक् कर लिया जाय।

गगा नदीके जलशोषक प्रदेशपर जब हम विचार करते है तो देखते है कि यह भी भौगोलिक और प्राकृतिक दृष्टिकोणकी सर्वथा उपेक्षा कर मनमाने प्रदेश मिलाकर बना दिया गया है। यह बात तो सर्वविदित है कि हिमालयसे निकलनेवाली अनेक नदियोका उद्गम और जलशोषक प्रदेश ब्रिटिश सीमाके बाहर पडता है और उसकी व्यवस्था करनेमें बड़ी कठिनाईका सामना करना पड़ता है। उत्तर बिहारकी कोसी नदी जो प्रायः भारी गजब ढाया करती है इसी प्रकारकी एक नदी है। बागमती तथा अन्य ऐसी ही कितनी नदियां हैं जो मुजफ्फरपुर तथा दरभंगा जिलोंमें बाढ़ तथा भारी आपत्ति ढा देती है। सोन और नर्बदाका उद्गम अमरकण्टक पहाड़ियोंमें है, परन्तु वे उलटी दिशामें बहती हैं। अमरकण्टकमें भारी वर्षा होनेसे अत्यधिक दूर-दूरपर बसे बिहार-के पटना और शाहाबाद और कभी कभी सारनके जिलोंमें तथा मध्यप्रान्त-के जबलपुर, हुशंगाबाद तथा नीचेके अन्य जिलोंमें और गुजरातके भी

कुछ भागोंमें भी भीषण बाढ़ और प्रलयकासा दृश्य उपस्थित हो जाता है।

प्रोफेसर कूपलैण्डने बहुत बादमें अमेरिकाकी टेनेसी घाटीकी अधिकृत योजनाका उल्लेख किया है और उसीके आधारपर अपनी नदियोंके जल-शोषक प्रदेशकी योजना उपस्थित की है। किन्तु उन्होंने ऐसी किसी भी योजनाके लिए परम आवश्यक बातकी सर्वथा उपेक्षा की है। वह यह कि आप किसी भी नदीको मनमाने ढंगसे काटकर उसके जलशोषक प्रदेशकी उन्नतिकी कोई योजना नहीं बना सकते। इसके लिए नदीके पूरा प्रदेशको, उसके उद्‌गमसे लेकर किसी अन्य नदीमें अथवा समुद्रमें उसके मिलनेतकके प्रदेशको एक साथ लेना होगा। प्रोफेसर कूपलैण्डने गंगाको, जहां वे दक्षिणकी ओर मुड़ती हैं वहीं पर, उन्हें मनमाने ढंगसे काट दिया है। यदि देशके प्राकृतिक रूप और भूमिके प्रकारपर दृष्टिपात करें तो हम देखेंगे कि उत्तरी बिहार—चम्पारनका पश्चिमोत्तर और उत्तरी प्रदेश, मुजफ्फरपुर, दरभंगा, मुंगेर, भागलपुर और पूर्निया जिलेके उत्तरी भागमें और बंगालके उत्तरी जिलों तथा व्यवहार्यतः सारी आसाम घाटी-में कोई विशेष अन्तर नहीं है। यदि हम प्रोफेसरके कथनानुसार गंगाको दो भागों-में विभक्त भी करें तो गंगाकी दो शाखाएं हो जाती हैं—एक भागीरथी और दूसरी हुगली जो बंगालके पश्चिमी जिलोंमे बहती बतायी जा सकती है पर ये प्रदेश पूर्वमें मेघना और पद्माके जलशोषक प्रदेशोंकी अपेक्षा बिहारसे अधिक मिलते हैं। इसके अतिरिक्त छोटा नागपुरसे पश्चिमी बंगालके जिलोंमें होकर बहनेवाली दामोदर नदी है जो अपनी बाढ़के कारण भीषण आपत्ति ढा देती है। जिस समय ये पंक्तियां लिखी जा रही हैं उसी समय भारत सरकारके एक सदस्यकी अध्यक्षतामें बिहार और बंगालकी सरकारोंके प्रतिनिधियोंकी एक बैठक इसी प्रश्नपर विचार करनेके लिए हो रही है कि बाढ़के भीषण संकटसे रक्षाके निमित्त कौनसे उपाय किये जाने चाहिएं। प्रोफेसर कूपलैण्डकी प्रादेशिकता और प्रस्तावित विभाजनके लिए इस सम्बन्धमें गंगाके जलशोषक प्रदेश और डेल्टाके बीच कुछ कामचलाऊ समझौता करना पड़ेगा। यह समस्या स्वयं हल न हो सकेगी। बात यह है कि प्रोफेसरने जिस जिस विभाजनकी सिफारिश की है

वह पूर्णतः मनमाना है और सच पूछिये तो प्रादेशिकताका मखौल है। प्रादेशिकता यदि उचित रूपसे व्यवहृत की जाय तो उस अवस्थामें जो प्रदेश बनेंगे इससे वे सर्वथा भिन्न होंगे और उनसे प्रोफेसरके देशको चार भागोंमें विभाजित करनेके उस मूल उद्देश्यकी लेशमात्र भी पूर्ति न होगी कि दो मुस्लिम क्षेत्र शेष भारतके साथ समानताके आधारपर बना दिये जायं।

यह बात उस समय और अधिक स्पष्ट हो जाती है जब हम चौथे प्रदेश-पर विचार करते है। इसमें उत्तरके तीन प्रदेशोको छोड़कर सारा भारत आ जाता है। यदि देशका इतना विस्तृत भूखण्ड जो लम्बाईमें १००० मील है और चौड़ाईमें उसका आधा है, एक प्रदेशमें आ सकता है तो कोई कारण नहीं है कि सारा देश ही एक प्रदेश न मान लिया जाय। चार प्रदेशोंमें यदि विभाजन न किया जाय तो दो गैर-मुस्लिम क्षेत्रोके मुकाबलेमें दो मुस्लिम क्षेत्रोके उद्देश्यकी पूर्ति और कैसे हो सकती थी ? मुस्लिम क्षेत्र तो किसी भी हालतमें दोसे तीन या अधिक नही हो सकते। प्रोफेसर कूपलैण्ड जानते है कि दक्षिणी प्रदेशके लिए तो किसी नदीके जलशोषक प्रदेश द्वारा विभाजन करनेके लिए भी कोई बहाना नही रह गया है। वह तो स्पष्टतः अन्य किसी प्रदेशोसे बची हुई भूमिवाला प्रदेश है।

विद्वान प्रोफेसरने अपने प्रदेश बांटते समय और किसी बातकी ओर ध्यान नहीं दिया है। प्रोफेसर राधाकमल मुखर्जीने इस बातकी ओर ध्यान दिलाया है कि 'प्रादेशिक समाजशास्त्रमें प्रादेशिकताके भावका अर्थ होता है किसी प्रदेशके निवासियोंकी रहन-सहन, व्यवसाय, भाषा, परम्परा और संस्कृतिकी एकता और अखण्डता।' 'भाषा, विज्ञान और सांस्कृतिक बातोंकी उपेक्षा करना तो प्रादेशिकताके भावका मखौल उड़ाना है।'* यदि भारत अपने विभिन्न भागोंमें प्रचलित भाषा सम्बन्धी और सांस्कृतिक मतभेदोंके कारण एक राष्ट्र नही है तो इन मतभेदोंको रखते हुए भी प्रत्येक प्रदेश भारतका एक संकुचित संस्करण हो जायगा और यदि प्रदेश अपने भीतरी अन्तरोंके रहते हुए भी मिलकर काम

---

* राधाकमल मुखर्जी : 'एन एकनामिस्ट लुक्स एट पाकिस्तान', पृष्ठ १३

चला सकते हैं तो कोई कारण नहीं है कि सारा भारत मिलकर अपना काम न चला सके। वस्तुतः प्रोफेसर कूपलैण्ड यह बात स्वीकार करते हैं कि उनका प्रादेशिक विभाजन किसी स्पष्ट सिद्धान्तपर आधृत नही है। बहुत सम्भव है कि प्रदेशोंकी विभिन्न इकाइयां उसमें सम्मिलित होना स्वीकार न करें। उन्हें यह आशा है कि सिन्ध और डेल्टा प्रदेशोंकी इकाइयोको प्रदेशोंमें सम्बद्ध होनेमें कोई कठिनाई न होगी, परन्तु गंगाके जलशोषक प्रदेश और दक्षिणी प्रदेशमें कठिनाई उत्पन्न होनेकी आशंका है। यदि एक बार भी ऐसी कठिनाई उपस्थित हो जाय तो दो मुस्लिम देशोंके दो गैर-मुस्लिम प्रदेशोसे मुकाबला करनेकी बात ही असम्भव हो जायगी। किन्तु बिना निराश हुए प्रोफेसर यह सुझाव पेश कर देते हैं कि अन्तर्प्रादेशिक केन्द्रमें प्रतिनिधित्वके लिए बादवाले दो प्रदेशोकी इकाइयोंको, बिना यह देखे कि वे प्रदेशमें सम्मिलित होती है अथवा नही, यह मान लेना चाहिये कि वे दोनों प्रदेशोमें शामिल हैं।

चार प्रदेश बनाते समय प्रोफेसर कूपलैण्डने न तो प्रदेशके छोटे या बड़े क्षेत्रकी ओर कोई ध्यान दिया है और न जनसंख्याकी ओर। नकशेसे स्पष्ट है कि डेल्टा जिसका क्षेत्रफल देशी रियासतोंको लेकर १५६.९६ वर्गमील है और उनको छोड़कर १३२.३९ वर्गमील है, गंगा नदीके जलशोषक प्रदेश और दक्षिणी प्रदेशके समान मान लिया गया है जिनका क्षेत्रफल देशी रियासतोंको लेकर और छोड़कर क्रमशः ३११.८० और ५३९.२५ वर्गमील अथवा २८०.२० और ३०२.७९ वर्गमील है। जनसंख्याका अन्तर तो इससे भी अधिक है। सिन्ध नदीके जलशोषक प्रदेशमें देशी रियासतोंको लेकर और छोड़कर जहां ६१२.५ अथवा ३७०.८ लाख जनसंख्या है और उसी क्रमसे डेल्टा प्रदेशमें ७३५.० लाख अथवा ७०५.१ लाख जनसंख्या है वहां गंगाके जलशोषक प्रदेशमें क्रमशः ११६५.५ लाख अथवा १०००.९ लाख जनसंख्या है और दक्षिणी प्रदेशोंमें क्रमशः १३६८.२ लाख अथवा ८७१.८ लाख जन-संख्या है। यदि हम विभिन्न प्रदेशोंमें मुस्लिम और गैर-मुस्लिम जनसंख्याका अनुपात लगायें तो वह और भी महत्वपूर्ण प्रतीत होगी। यदि हम ब्रिटिश

भारत और देशी रियासतोंके मुसलमानोंको एक साथ मिलाकर देखें तो सिन्ध और डेल्टा प्रदेशोंमें हमें मुसलमानोंका अनुपात नाममात्रके बहुमतमें अर्थात् ५२.० प्रतिशत और ५०.१ प्रतिशत मिलता है जब कि शेष दोनों गैर-मुस्लिम प्रदेशोंमें ४८.० प्रतिशत और ४९.९ प्रतिशत मिलता है। यदि हम केवल ब्रिटिश भारतको लें तो सिन्ध और डेल्टा प्रदेशोंमे मुसलमानोका बहुमत ६१.३ और ५१.६ प्रतिशत मिलता है और गैर-मुस्लिम प्रदेशोमें क्रमशः ६८.७ और ४८.४ प्रतिशत। मुस्लिम प्रदेशोमें मुसलमानोंके नाममात्रके इस बहुमतके विरुद्ध गंगाके जलशोषक प्रदेश और दक्षिणी प्रदेशको यदि हम देखे तो वहांपर देशी रियासतोंको लेकर गैर-मुसलमानोंका अत्यधिक बहुमत ८८.० और ९१.० प्रतिशत पाते हैं और वहांपर मुसलमानोका अनुपात केवल १२.० और ८.२ प्रतिशत है। केवल ब्रिटिश भारतमें गैर-मुसलमानोंका अनुपात क्रमशः ८६.८ और ९२.५ प्रतिशत है तथा मुसलमानोंका केवल १३.२ और ७.५ प्रतिशत।

यह सारा अनौचित्य, सारी अव्यवस्था केवल इसीलिए सहन कर लेनी होगी कि दो मुस्लिम प्रदेशोके मुकाबलेमें दो गैर-मुस्लिम प्रदेश रखने हैं। यदि यही उद्देश्य है तो इसकी अपेक्षा यह कहना अधिक अच्छा, स्पष्ट और उचित होगा कि मुस्लिम और गैर-मुस्लिम प्रान्तों और राज्योंमें अन्य किन्ही बातोंका कोई भी खयाल किये बिना पद और अधिकारोंमें समानता होनी चाहिये, भार और उत्तरदायित्वकी कोई बात नही। प्रादेशिकता अथवा आर्थिक सुविधा-की नकाबका पर्दा इतना पतला है कि वह न तो मुसलमानोको धोखा दे सकता है और न गैर-मुसलमानोंको।

प्रोफेसर कूपलैण्डने जिस विधानकी सिफारिश की है उससे स्थिति और अधिक स्पष्ट हो जाती है। अन्तर्प्रादेशिक केन्द्रकी जो व्यवस्थापक कौसिल होगी उसके सदस्योंका कोई स्वतन्त्र अस्तित्व न होगा, प्रत्युत् वे अपने शासनादेशोंके अनुसार अपने अपने प्रदेशके प्रतिनिधिका ही काम करेंगे। केवल व्यवस्थापिका सभाके सदस्योंके सम्बन्धमें ही नही, यह बात शासन परिषद्के सदस्योके भी

सम्बन्धमें लागू होंगी। वे भी अपने अपने प्रदेशोंका प्रतिनिधित्व करेंगे। प्रोफेसरके मस्तिष्कमें यह बात नही आयी कि यदि किसी विधानमे बारबार गत्यवरोधकी नौबत आ सकती है तो वह उन्हीके द्वारा प्रस्तावित विधान हो सकता है। अन्य विधानोंमें ऐसे गत्यवरोधकी आशंका और उसका प्रतिकार रहता है। प्रोफेसर कूपलैण्डके विधानमे गत्यवरोधोके लिए द्वार तो खुला ही है, उनका होना अनिवार्य है, फिर भी उन्होने गत्यवरोधोके प्रतिकारका कोई उपाय नहीं बताया है।

जब यह बात पूर्णतः स्पष्ट कर दी गयी है कि केन्द्रमे जिन लोगोंको काम करना है उन्हें आपसमें परामर्श करके ऐसा कार्य नहीं करना है जो स्वयं सर्वोत्तम और उचित समझते हैं किन्तु उस ढंगसे कार्य करना है जो उनसे हजारों मील दूर बैठे उनके प्रदेशके लोग, जिन्हें कभी आपसमें विचार-विनिमय और परामर्श करनेका अवसर नही मिला है, सर्वोत्तम और उचित समझते है-- तो यह आशा करना सर्वथा निराधार है कि केन्द्रमे एक साथ मिलकर कार्य करनेसे ऐक्य होना सम्भव हो सकेगा। उस समयतक साथ मिलकर कार्य करनेका कोई अर्थ ही नही होता जब साथ काम करनेवाले व्यक्ति मिलकर कार्य नहीं करते प्रत्युत यन्त्रपरिचालित रूपमें कार्य करते है, और जिनके हाथमे उनका परिचालन रहता है वे उससे बहुत दूरपर बैठे रहते हैं। इसके अतिरिक्त ऐक्यकी उस समयतक कोई आशा ही कैसे रखी जा सकती है जब इकाइयोंमे मुसलमान और गैर-मुसलमानकी भावना ठूस-ठूसकर भरी जाती है और तदनुसार उन्हें कार्य करनेके लिए कहा जाता है तथा किसी भी कोनेसे राष्ट्रीयताका लेशमात्र भी प्रकाश नही आने दिया जाता।

मुस्लिम और गैर-मुस्लिम प्रदेशोंको पद और अधिकारमें समानता दिलाना ही इस विधानका अभीष्ट है। इसके अतिरिक्त इसके अन्य किसी पहलूपर विचार करना ही व्यर्थ है। इसमें कही भी इस बातकी सिफारिश नही की गयी कि पद और अधिकारकी इस समानताके अनुरूप चारों प्रदेशोंमे उत्तरदायित्व और भारमें भी समानता रहेगी। वस्तुतः इसके प्रतिकूल ही अर्थ निकलता है।

कहा गया है कि रक्षा-विभागके अतिरिक्त अन्तर्प्रादेशिक केन्द्रके कार्य सञ्चालनके लिए अधिक व्ययकी आवश्यकता न पड़ेगी। वर्तमान युद्धके पूर्व रक्षा-विभागका व्यय जकातद्वारा पूरा कर लिया जाता था और युद्धके उपरान्त भी यदि यही निमय रहा तो यह कल्पना की गयी है कि इसमें कोई विशेष कठिनाई न होगी। विद्वान प्रोफेसरने इस सम्बन्धमें इस बातपर विचार करनेकी आवश्यकता नहीं समझी है कि भूतकालमें विभिन्न प्रदेश इस उद्देश्यसे कितना कर देते रहे है और भविष्यमे उन्हें कितना देना होगा। वे इतना ही कहकर सन्तुष्ट हो गये हैं कि सरकारी आमदनी खर्च करनेमें मुस्लिम प्रदेश गैर-मुस्लिम प्रदेशोंके समान ही रहेगे और गैर-मुस्लिम प्रदेश मजेमें सरकारी आमदनीका अधिकांश दिया करेगे और इस कार्यमें मुस्लिम प्रदेश उनकी समानता न करेंगे। ऐक्य उत्तम वस्तु है, परन्तु क्या अत्यधिक मूल्य चुकाकर यह किन्हीं भी शर्तोंपर खरीदना चाहिये?

३

सर सुलतान अहमदकी योजना

तीसरी योजना सर सुलतान अहमदने 'ए ट्रीटी बिट्वीन इण्डिया एण्ड दि युनाइटेड किंगडम' नामक अपनी पुस्तकमें उपस्थित की है। पाकिस्तानके प्रस्तावपर विचार करनेके उपरान्त वे इस निष्कर्षपर पहुंचे है कि 'यदि पश्चिमोत्तर और पूर्वोत्तर पाकिस्तान स्वतन्त्र प्रभु राज रहेंगे और उनका शेष भारतके साथ कोई वैधानिक सम्बन्ध न रहेगा तो व्यवहार्यतः वे असफल होंगे। कारण, न तो उनकी सैनिक सुरक्षा ही रहेगी और न उनकी आर्थिक स्थिरता ही रहेगी। उनकी असफलताका एक कारण यह भी रहेगा कि वे शेष भारतके मुसलमानोंको शान्ति और न्याय दिलानेमें भी समर्थ न होंगे। अतः अन्य विकल्प खोजने और उनपर विचार करनेकी आवश्यकता है। ऐसा करते समय

हमें यह बात न भूलनी चाहिये कि हमें भारतके उन भयाक्रान्त मुसलमानोंको सन्तुष्ट करना है जो जीवनके प्रत्येक क्षेत्रमे हिन्दूप्रभुत्वसे भयभीत रहते हैं।* इसलिए आप अपनी योजना उपस्थित करते है और इस बातका दावा करते है कि यह योजना व्यवहार्य तथा भारतकी वर्तमान विचित्र स्थितिमे अनुपयुक्त नही है। आपकी योजना ब्रिटिश सरकारके क्रिप्स प्रस्तावपर आवृत है। आपकी योजनामें भारतको सयुक्त राज बनानेकी बात है जिसमें कितनी ही इकाइयां सम्मिलित रहेगी। वे सब संघराज होंगी और उनका अपना एक केन्द्र रहेगा। इन इकाइयोंकी सीमामें जहां आवश्यक समझा जायगा परिवर्तन किया जा सकेगा। पश्चिमोत्तर और पूर्वोत्तर प्रान्तोंकी, आवश्यकतानुसार सीमापरिवर्तनके साथ दो इकाइयां बन जायँगी जिनमें मुसलमानोंका बहुमत पर्याप्त रूपमें बढ़ जाय। सभी भीतरी मामलोमें इन इकाइयोंको पूर्ण स्वशासनाधिकार रहेगा और इनकी प्रभुसत्ता होगी। बाहरी मामलोंमें उनकी स्वतन्त्रतामे केवल उतने ही अधिकारोंकी कमी रहेगी जितने अधिकार वे सभी इकाइयोंसे समझौता करके संयुक्त राजको प्रदान कर देंगी।

(१) **अधिकार** ; केन्द्रको इन विषयोंमें अधिकार रहेंगे—रक्षा, परराष्ट्र सम्पर्क, मुद्रा, जकात, रेडियो, विमान, यातायात, रेल, जहाजरानी, डाक और तार। अवशिष्ट अधिकार प्रान्तोंको रहेगे।

(२) **संघ असेम्बली** : संघ असेम्बलीमे ४० प्रतिशत मुसलमान, ४० प्रतिशत हिन्दू और १० प्रतिशत दलित रहेंगे। शेष १० प्रतिशतमें भारतीय ईसाई, एंग्लो इण्डियन, सिख, पारसी, आदि रहेगे। इससे बहुमत अधिक परिवर्तनशील बन सकेगा और वह विभिन्न दलोंके सक्रिय सहयोगपर निर्भर करेगा। इसमे हिन्दुओंको भी बहुमत प्राप्त करनेका अवसर रहेगा और मुसलमानोंको भी। बहुमत इतना संकुचित भी रहेगा कि वह विरोधी दलके सहयोग और सद्भावपर निर्भर करेगा।

---

* सर सुलतान अहमद : 'ए ट्रीटी बिटवीन इण्डिया एण्ड दी युनाइटेड किंगडम,' पृष्ठ ८८

(३) **विधान निर्मात्री परिषद्** : विधान निर्मात्री परिषद्का संघटन इस प्रकार होगा:—ऊपर हिन्दू और मुसलमानोके लिए ८० स्थान बताये गये है। ये ८० स्थान ४० दुहरे निर्वाचन क्षेत्रोंसे एक एक हिन्दू और एक एक मुसलमान सदस्य लेकर पूरे किये जायँगे। प्रत्येक निर्वाचनक्षेत्र ५०० मण्डलोंमें विभक्त किया जायगा। प्रत्येक मण्डलमें ऐसे बालिग मुसलमानों और बालिग हिन्दुओंके पृथक् पृथक् रजिस्टर रखे जायँगे जो शिक्षित होंगे अथवा जिनका अपना मकान होगा या जो कोई कर देते होंगे। ऐसे मण्डलोमें ऐसे मुसलमान और हिन्दू मतदाता अपना एक-एक प्रतिनिधि चुनेंगे। इस प्रकार प्रत्येक निर्वाचन क्षेत्रमें पृथक् निर्वाचन पद्धतिसे ५०० मुसलमान और ५०० हिन्दू चुने जायँगे। ये १००० मुसलमान और हिन्दू संयुक्त निर्वाचन पद्धतिद्वारा एक मुसलमान और एक हिन्दू सदस्य चुनेंगे। दलितवर्ग तथा अन्य लोगोके प्रतिनिधि चुननेके लिए भी इसी प्रकारकी पद्धति काममें लायी जा सकती है। इस प्रकार संघटित असेम्बलियोंके दस प्रतिशत अथवा पांच प्रतिशत सदस्योंको लेकर विधाननिर्मात्री परिषद् संघटित हो सकती है।

(४) **शासन परिषद्** : (क) शासन परिषद्में साम्प्रदायिक अनुपात वही रहेगा जो असेम्बलीमे रहेगा। (ख) शासन परिषद् असेम्बलीके प्रति उत्तर-दायी रहेगी। (ग) प्रधान मन्त्री क्रमानुसार मुसलमान और गैर-मुसलमान रहेगा। (घ) प्रधान मन्त्रीके मुसलमान रहनेपर उपप्रधान मन्त्री हिन्दू रहेगा और हिन्दू प्रधानमन्त्री रहनेपर उपप्रधान मन्त्री मुसलमान रहेगा। (अं) प्रधान सेनापति यदि गैर-मुसलमान रहेगा तो रक्षा-सदस्य मुसलमान रहेगा और प्रधान सेना पतिके मुसलमान रहनेपर रक्षा-सदस्य गैर-मुसलमान। (च) संयुक्त उत्तरदायित्व-की परम्परा रहेगी। सिद्धान्तकी बात छोड़ भी दें तो भी यह उपाय ऐसे संरक्षणका कार्य करेगा कि इसके कारण किसी सम्प्रदायकी स्वीकृतिके बिना उससे सम्बन्धित कोई निर्णय न किया जा सकेगा। कारण, सम्बन्धित सम्प्रदायके मन्त्री पदत्याग कर देंगे और मन्त्रि-मण्डल भंग हो जायगा।

(५) **मुल्की विभागकी नौकरियां** : जहांतक सम्भव होगा वहांतक मुल्की

विभागकी नौकरियोंमें भी वही अनुपात रहेगा। उसमें योग्यताका भी विचार रखा जायगा। उन्नति प्राय: योग्यता और अधिक कार्यकालके क्रमके अनुसार होगी।

(६) **सार्वजनिक संस्थाएँ** : सभी स्वशासित संस्थाओं, कारपोरेशनों, म्युनिसिपल कौंसिलों, विभिन्न बोर्डों और कमीशनोंमे भी उपरिलिखित साम्प्रदायिक अनुपातर हेगा।

(७) **सेनामें नौकरियां** : सेनामें काम करनेवाले सैनिकोंमें ५० प्रतिशत मुसलमान रहेंगे और ५० प्रतिशत गैर-मुसलमान।

(८) **संरक्षणकी धाराएँ** : इस सम्बन्धमें कांग्रेसद्वारा घोषित सैद्धान्तिक अधिकारों और अल्पमतवालोंके अधिकारोंकी तथा श्री जिनाकी १४ शर्तोंका जिक्र किया जा सकता है जिनमें (क) धार्मिक सामाजिक और सास्कृतिक तथा (ख) राजनीतिक और शासन सम्बन्धी संरक्षणोंकी मांग की गयी है। (ग) के सम्बन्धमें आपत्तिजनक अश मिलाकर 'वन्दे मारम्' गान और इकबालका गान सरकारी तौरपर एक साथ स्वीकार किया जा सकता है। कांग्रेसके राष्ट्रीय झण्डेपर मुस्लिम चिह्न भी अंकित किया जाय। गायकी कुर्बानीकी छूट रहे परन्तु उसका कोई प्रदर्शन न किया जाय। अजाके कारण किसीको कोई कठिनाई न बोध हो। मसजिदके आगे बाजा बन्द कर दिया जाय तथा उसके बदलेमें हिन्दुओंके जुलूसोंमें कोई बाधा न डाली जाय। बाद-विवादसे बचनेके लिए केन्द्रमें अंग्रेजी भाषा और रोमन लिपिका व्यवहार किया जाय। प्रान्तोंमें अंग्रेजी भाषाके उपयोगकी अनुमति दी जा सकती है। 'ख' में किसी प्रान्तमें प्रादेशिक पुनर्विभागद्वारा मुस्लिम बहुमतको प्रभावित करने, मुसलमानोंको व्यक्तिगत कानून और संस्कृतिके संरक्षणके लिए वैधानिक आश्वासन देने और सरकारी तथा स्थानीय संस्थाओंकी नौकरियोंमें साम्प्रदायिक अनुपातके लिए कानून बनानेकी बात आती है। पाकिस्तानका इरादा रद कर देनेपर पहली बातका प्रश्न ही नहीं उठता। अन्य बातें स्वीकार कर लेनी चाहियें। इस बीच और कोई शिकायत उठ खड़ी हो तो उसका भी निपटारा हो जाना चाहिये।

(९) **सरक्षणोंका पक्का आश्वासन** : ब्रिटिश सरकारके क्रिप्स प्रस्तावमें अल्पसंख्यकोंके सम्बन्धमें ब्रिटेनके आश्वासनकी व्यवस्था थी। भारत ऐसे किसी ब्रिटिश या विदेशी आश्वासनको केवल तभी अस्वीकार कर सकता है जब भारतवासियोंके हृदयमें भारतके संयुक्त राजको प्रभुसत्ताके लिए ही वही आदर हो तथा अपने पूर्ण औपनिवेशिक स्वराज्यमें वैसा ही विश्वास हो जिसके बलपर वह संरक्षणोंका वैसा ही पक्का और प्रभावकर आश्वासन दे सके जैसा विदेशी सत्ता देती। 'यदि ऐसा हो तो हम अपने देशके कानूनमें विश्वास करेंगे और तब हम अपनी शिकायतोंकी अपीलका फैसला इकाइयोकी अदालतों अथवा संयुक्त राजके सर्वोच्च न्यायालय अथवा अन्तमें अन्तर्राष्ट्रीय न्यायालयसे करावेंगे।'

(१०) **सांस्कृतिक संरक्षण** : धार्मिक विश्वासों, धार्मिक संस्थाओ, शिक्षण संस्थाओं और धर्मार्थ संस्थाओंको स्वतन्त्रता सम्बन्धी सांस्कृतिक संरक्षण इस्टोनियाके सांस्कृतिक स्वशासन कानूनके ढंगपर दिये जा सकते हैं। इकाइयोंमें अल्पसंख्यकोके धार्मिक, सामाजिक और शिक्षण अधिकारो तथा संस्थाओंकी रक्षा और शासनके लिए सांस्कृतिक कौसिल स्थापित की जा सकती है।

(११) **राजनीतिक संरक्षण** : यदि कोई सम्प्रदाय किसी बिलको अपने लिए हानिकर बतावे तो उसपर उस समयतक कोई कार्रवाई न की जाय जबतक उक्त सम्प्रदायके कमसे कम तीन चौथाई व्यक्ति उसके लिए सहमति न प्रकट करें।

(१२) पारसी सम्प्रदायसे सम्बन्धित प्रस्ताव केवल बम्बई अस्मेबलीमें उपस्थित किये जायँ और उन्हें उपरिलिखित (११) पैरामें वर्णित राजनीतिक संरक्षण प्राप्त रहें।

(१३) पारसी सम्प्रदायसे सम्बन्धित प्रस्ताव केवल बम्बई असेम्बलीमें उपस्थित किये जायँ और उन्हें भी उपरिलिखित (११) वें पैरामें वर्णित राजनीतिक संरक्षण रहें।

इकाइयाँ

सम्बद्ध राजोंकी असेम्बलियोंमें, तथा शासन विभाग और सरकारी नौकरियोंमें प्रतिनिधित्वके सम्बन्धमें निम्नलिखित समुदायोंपर विचार किया जा सकता है—

(क) प्रतिनिधित्वके अल्पसंख्यक दल यदि चाहेंगे तो पृथक् निर्वाचन पद्धति बनाये रखे जा सकते हैं परन्तु केन्द्रमें अपने प्रतिनिधित्वके लिए उन्हें उसी पद्धतिका आश्रय लेना चाहिये जिसके लिए 'विधान निर्मात्री परिषद्' शीर्षक पैरामें सिफारिश की गयी है।

(ख) इस समय विभिन्न प्रान्तोंमें अल्पसंख्यकोंके प्रतिनिधियोंकी जितनी संख्या है उसे यदि चाहें तो बनाये रख सकते हैं परन्तु बंगालमें यूरोपियन प्रतिनिधियोंकी संख्यामें पर्याप्त कमी हो जानी चाहिये।

(ग) आवश्यकता प्रतीत हो तो इकाइयोंकी सीमामें परिवर्तन कर दिये जायँ परन्तु वह परिवर्तन इस ढंगका न हो जिससे कोई बहुसंख्यक दल अल्पसंख्यक दलमें परिवर्तित हो जाय।

(घ) यथासम्भव और योग्यताको ध्यानमें रखते हुए शासन विभाग तथा सरकारी नौकरियोंमें भी साम्प्रदायिक अनुपात वही रखा जाय जो असेम्बलियोंमें रहे।

(अं) उपरिलिखित (४), (५), (६), (८), (९), (१०), (११), और (१२) पैरा जब इकाइयों और विशेषतः अल्पसंख्यकोंपर लागू हो सकते हों तब उनपर लागू किये जायँ।

एक और विकल्प सुझाया गया है। केन्द्रमें हिन्दुओं और मुसलमानोंको क्रमानुसार ५१ प्रतिशत बहुमत करके समताकी व्यवस्था की जा सकती है। ऐसा करनेसे मत प्राप्त करनेके लिए की जानेवाली चालबाजियां मिट जायँगी और एक दूसरेको समझने तथा संयुक्त रूपसे, मिलकर कार्य करनेके लिए अत्यधिक उपयुक्त वातावरण प्रस्तुत हो सकेगा। जब एक पक्षको यह ज्ञात

रहेगा कि हम यदि अपरपक्षके प्रति अभी अन्याय करेंगे तो दूसरी बार अपर-पक्षको जैसे ही अवसर हाथ लगेगा वह हमें पत्थरका जबाब पत्थरसे देगा, तब कोई पक्ष किसीके प्रति अन्याय न कर सकेगा। इस विकल्पमें यह दोष है कि ४०–४० प्रतिशत प्रतिनिधित्ववाली योजनामें अन्य अल्पसंख्यकोके हाथमें शक्ति-सन्तुलनका जो अधिकार रहेगा वह सर्वथा जाता रहेगा।

सर सुलतान अहमदकी उपरिलिखित योजना स्पष्ट है। इसमें अपना वास्त-विक उद्देश्य स्पष्टतः प्रकट कर दिया गया है, इसमें प्रादेशिकता अथवा अन्य किसी वादके पर्देमे छिपाकर अपनी बात नही कही गयी है। अतः इसपर ध्यानपूर्वक विचार करना आवश्यक है। मुस्लिम लीगके विचारोको माननेवाले व्यक्तियोंको छोड़कर ब्रिटिश भारतमे भी कोई ऐसा व्यक्ति न होगा, जो संघ-योजनाके विरुद्ध हो। देशमे केवल मुस्लिम लीग ही ऐसी सस्था है जिसने किसी भी रूपमें किसी भी प्रकारकी सघ-योजनाको स्वीकार करनेसे इनकार कर दिया है। केन्द्रकी सत्ता और अधिकारके अन्तर्गत आनेवाले विषयोंके सम्बन्धमे कोई समझौता करनेमे भी कोई अजेय कठिनाई उपस्थित नही हो सकती। सर सुलतान अहमदने अपनी सूचीमें जो विषय दिये है उनमे केवल एक महत्वपूर्ण विषय छूटा है जिसपर लोगोंका मतभेद हो सकता है। वह है—व्यापक पैमानेपर योजना बनाने और उसे व्यवहृत करनेका विषय। किन्तु यह विषय ऐसा नही है जिसपर कोई समझौता होना असम्भव हो। अगस्त १९४२ में अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटीने जो प्रस्ताव स्वीकार किया है, जिसकी कि सरकार और अखिल भारतीय मुस्लिम लीगके अध्यक्षने अत्यन्त कटु आलोचना की है, उसके उपरान्त इस बातपर कोई भी कांग्रेसजन आपत्ति नही कर सकता कि अवशिष्ट अधिकार प्रान्तोंको प्रदान किये जायँ।

योजनाकी शेष बाते कुछ कल्पनाओंपर आधृत है। मूल कल्पना यह है कि हिन्दू, जोकि बहुसंख्यक है, मुसलमानोंको कुचलनेके उद्देश्यसे ही सदासे कार्य करते आ रहे है, अब भी ऐसा ही कर रहे है और भविष्यमें भी ऐसा ही करेंगे। अतः यह आवश्यक है कि भावी शासन विधानकी योजना इस ढंगकी बनायी

जाय जिससे उनका अत्याचार करना असम्भव हो जाय। हिन्दुओंपर तोनों ओरसे आक्रमण होता रहा है और उसके लिए सर सुलतान अहमद अवश्य ही उत्तरदायी नही है। प्रथम आक्रमण तो दलितवर्गोंको हिन्दुओंसे पृथक् कर उनकी जनसंख्याका अनुपात कम करनेकी चेष्टाद्वारा हुआ है। द्वितीय आक्रमण आदिवासियोको हिन्दुओसे मृथक् करनेकी चेष्टाद्वारा हुआ है। मानव विज्ञान-के अधिकारी आचार्योंतकने यह बात स्वीकार की है कि आदिवासियोंकी गणना हिन्दुओमें की जानी चाहिये। इस प्रकार हिन्दुओंका अनुपात और अधिक कम किया गया है। हिन्दुओंके इतने घटाये हुए अनुपातको और अधिक घटाये जानेका अन्तिम प्रयत्न विधानद्वारा किया जा रहा है। इस भाति असेम्बली, शासन व्यवस्था और सरकारी नौकरियोंमे हिन्दुओको उचित प्रतिनिधित्वसे वञ्चित रखनेका प्रयत्न किया जा रहा है। सर सुलतान अहमदका प्रस्ताव है कि १३.५० प्रतिशत दलितवर्गो और ५.६५ प्रतिशत आदि-वासियोंको पृथक् कर देनेसे हिन्दू सारी जनसख्याका ५१.० प्रतिशत रह जाते है, उन्हे भी केन्द्रमें ४० प्रतिशत प्रतिनिधित्व दिया जाय और मुसल-मानोको भी ४० प्रतिशत प्रतिनिधित्व दिया जाय जो कि जनसंख्याका केवल २६.८३ प्रतिशत है। यहांतक कि दलितवर्गोका प्रतिनिधित्व भी, जिन बड़ी हिमायत करनेका मुस्लिम लीग दावा करती है, घटाकर १० प्रति-शत कर दिया गया है। इस सम्बन्धमे कुछ ही समय पूर्वकी ऐतिहासिक घटनाएं दे देना अनुचित न होगा। भारतीय राष्ट्रीय काग्रेस और अखिल भारतीय मुस्लिम लीगमे लखनऊमें जो समझौता हुआ था उसमें उन प्रान्तोंके मुसलमानोंको पर्याप्त प्रतिनिधित्व देनेका निर्णय किया गया जहां वे अल्पसंख्यक थे। इस भाति युक्तप्रान्त और मद्रास प्रेसीडेन्सीमे, जहां उनकी आबादी क्रमशः १४ और ६.१५ प्रतिशत थी, उन्हें ३० और १५ प्रतिशत प्रतिनिधित्व दिया गया। बिहार और उड़ीसामे, जहां उनकी आबादी १० और ११ प्रतिशत थी, उन्हें २५ प्रतिशत प्रतिनिधित्व मिला। किन्तु बंगाल और पञ्जाबमें, जहां बहुसंख्यक थे और उनकी आबादी ५१.३ और ५१ प्रतिशत थी, उन्हें

क्रमशः ५० और ४० प्रतिशत प्रतिनिधित्व मिला। यह समझौता ब्रिटिश सरकारने स्वीकार कर लिया और तदनुसार १९२०के समझौतेद्वारा स्वीकृत यह प्रतिनिधित्व मान लिया गया। पर मुसलमान इससे असन्तुष्ट हो गये और उन्होंने इसे अस्वीकार कर दिया। उनका कहना था कि यह इसलिए अनुचित है कि इसमें उन प्रान्तोंके मुसलमानोंके प्रतिनिधित्वका अनुपात कम कर दिया गया है जहां वे बहुसंख्यक है। उन्होंने यह मांग की कि वे जहापर बहुमतमें हैं वहां ऐसा न हो कि उनका प्रतिनिधित्व बहुमतसे घटाकर अल्पमत अथवा समान भी कर दिया जाय। अब तख्ता एकबारगी ही उलट दिया गया है और अब वे ही व्यक्ति जो मुस्लिम लीगके दृष्टिकोणसे सहानुभूति रखते हैं बड़ी गम्भीरतापूर्वक इस ढंगकी योजनाएं उपस्थित करते है जिनसे बहुमतवाला हिन्दू सम्प्रदाय घटकर असहाय अल्पमत बन जाय। हिन्दुओंका जहां बहुमत है जैसे सारे भारतवर्षमें, वहां बहुमतका शासन बुरा और निन्दनीय है परन्तु जहां मुसलमान बहुमतमें है जैसे उत्तर-पश्चिम और पूर्वी क्षेत्रमे, वहा बहुमतका शासन अच्छा है। सर सुलतान अहमदने केन्द्रमें प्रतिनिधित्वका जिस रीतिसे विभाजन किया है वह इन्ही विचारोंपर आधृत है। हिन्दू बहुमत घटाकर ४० प्रतिशत कर दिया गया है और मुसलिम प्रतिनिधित्व बढ़ाकर ४० प्रतिशत कर दिया गया है ताकि दोनों समानताकी श्रेणीमें आ जायं। सर सुलतान अहमद अपनी योजनाकी यह विशेषता बताते हैं कि हिन्दुओं और मुसलमानोंके बीच शक्ति सन्तुलन अल्पसंख्यकोंके हाथ रहेगा।

असेम्बलीमें ही इस शक्ति सन्तुलनका अन्त नही हो जाता। शासन व्यवस्था और सरकारी नौकरियोंकी नियुक्तिमें भी यह सारी योजना प्रविष्ट हो जाती है। कहीं कहीं तो वह इससे भी आगे बढ़ जाती है। इसमें कहा गया है कि प्रधान मन्त्री क्रमानुसार एक मुसलमान और एक गैर-मुसलमान होगा। गैर-मुसलमानमें ईसाई, सिख पारसी, आदिवावी, दलित तथा वे अन्य सब लोग आ जाते हैं जो मुसलमान नहीं हैं। इसमें हिन्दू भी आते हैं। योजनाके अन्तर्गत विधानमें ही ऐसी व्यवस्था रखी गयी है कि किसी निश्चित समयके

उपरान्त मुसलमान प्रधान मन्त्री होगा किन्तु हिन्दू सर्वथा असहायावस्थामें छोड़ दिये गये हैं और यदि मुसलमान तथा अन्य अल्पसंख्यक दल मिल जायं तो यह सम्भव है कि हिन्दूके प्रधान मन्त्री बननेका कभी अवसर ही न आये। यह कहा जा सकता है कि ऐसी कल्पना अनुचित है कि अल्पसंख्यक दल मिलकर कभी हिन्दू प्रधान मन्त्री न बनने देंगे। किन्तु इसके विरुद्ध यह कल्पना क्या कम अनुचित है कि हिन्दू और गैर-मुस्लिम दल मिलकर यह प्रयत्न करेंगे कि कोई मुसलमान कभी प्रधान मन्त्री न बनने पाये? यदि यह कल्पना सम्भव है तो दूसरी भी कम सम्भव नही। यदि हिन्दू और गैर-मुसलमान मिलकर मुसलमान प्रधान मन्त्री न बनने देंगे तो यह भी उसी भांति सम्भव है कि मुसलमान और अन्य अल्पसंख्यक मिलकर हिन्दू प्रधान मन्त्री न बनने देंगे। यह अच्छी बात है कि सर सुलतान अहमदने प्रधान मन्त्रित्व अन्य सबको पृथक् करके केवल हिन्दुओं और मुसलमानोके लिए सुरक्षित नही रखा है। इसी प्रकार यदि प्रधान सेनापति गैर-मुसलमान होगा तो रक्षा-सदस्य मुसलमान होगा और प्रधान सेनापतिके मुसलमान होनेपर रक्षा-सदस्य गैर-मुसलमान। यदि मुसलमान और अन्य अल्पसंख्यक दल मिल जायं तो इन दोनोंपर भी किसी हिन्दूकी नियुक्ति होना असम्भव है। इन सब बातोंसे यह स्पष्ट लक्षित होता है कि वैधानिक चालोंद्वारा मुस्लिम अल्पमतके हितोंकी रक्षा और संरक्षणका उद्देश्य तो कम है, हिन्दू बहुमतको कष्ट देने, पीड़ित करने और कुचलनेका उद्देश्य अधिक है।

सर सुलतान अहमदकी योजनाके पैरा ६ में वर्णित सार्वजनिक संस्थाओं सम्बन्धी धाराका कोई अर्थ नहीं निकलता। क्या इसका अर्थ यह है कि सभी कारपोरेशनों, म्युनिसिपल कौसिलों, लोकल बोर्डों आदिमें हिन्दुओं और मुसलमानोंका ४९.४० प्रतिशत प्रतिनिधित्व रहेगा चाहे जनसंख्याके अनुसार उनका अनुपात कुछ भी क्यों न हो? साथ ही क्या यही व्यवस्था सभी प्रान्तोंमें रहेगी? यह सुझाव सर्वथा लचर है और मैं समझता हूं कि सर सुलतान अहमदने इसके सभी पहलुओंपर भलीभांति विचार किये बिना ही इसे दे दिया

है। यह बात बिलकुल नहीं जँचती कि उन्होंने गम्भीरतापूर्वक ऐसा सुझाव रखा हो कि उड़ीसाकी किसी म्युनिसिपलिटी अथवा लोकल बोर्डमें, जहां कि मुसलमानोंकी आबादी १ अथवा १.५ प्रतिशतसे अधिक नहीं है, मुसलमानोंको ४० प्रतिशत प्रतिनिधित्व दिया जाय।

भारतीय सेनामें ५० प्रतिशत मुसलमान और ५० प्रतिशत गैर-मुसलमान भरती करनेका भी यह अर्थ हो सकता है कि यदि सेनामें एक भी हिन्दू न भरती किया जाय तो यह कार्य अवैधानिक अथवा गैरकानूनी न कहा जा सकेगा। बहुत सम्भव है कि उसमें मुसलमानोंके अतिरिक्त केवल सिख, ईसाई और दलित ही रखे जायँ। यह कहा जा सकता है कि सर सुलतान अहमदका उद्देश्य यह नही है, किन्तु मै यहांपर उनकी भाषांका ही अर्थ दे रहा हूँ। सर सुलतान अहमद जैसी स्थितिवाले व्यक्तिसे विशेषत: तब जब मुसलमानोंके अधिकारोंके सम्बन्धमें उनके शब्द सर्वथा स्पष्ट हैं, सर्वसाधारण अधिक सरल और स्पष्ट भाषाकी अपेक्षा रखते है।

धार्मिक, सामाजिक और सांस्कृतिक संरक्षणोंके सम्बन्धमें सर सुलतान अहमदकी योजनामें जो सुझाव उपस्थित किये गये हैं उनकी बारीकियोंमें जाना व्यर्थ है। केवल इस बातकी ओर इगित कर देना ही पर्याप्त है कि योजनामें जहां गायकी कुर्बानीमें और अजांमें हस्तक्षेपकी मनाही की गयी है वहां यह कहा गया है कि हिन्दू जुलूस यदि उपद्रवसे त्राण पाना चाहते है तो मसजिदके सामने बाजा बन्द करके शान्ति खरीदें।

भाषा और लिपिकी पेचीगी और वादविवादपूर्ण समस्याको आप केन्द्रमें अंग्रेजी भाषा और रोमनलिपिके उपयोगकी सलाहद्वारा सुलझा लेते है और प्रान्तोंको प्रान्तीय भाषाओंका व्यवहार करनेके लिए स्वतन्त्र छोड़ देते है।

मैंने सर सुलतान अहमदकी योजनाकी उन बातोंकी ओर विशेष रूपसे ध्यान दिलाया है जो एकांगी जान पड़ती हैं और जिनमें हिन्दुओंके प्रति अन्याय किया गया है। किन्तु इसका यह अर्थ लगाना अनुचित होगा कि मै यह समझता हूँ कि उसमें कोई बात ऐसी नहीं ही है जिसके आधारपर बात चलायी

जाय अथवा इसमें उठाये गये प्रश्नोंपर शान्त वातावरणमें पक्षपातशून्य दृष्टिसे विचार किया जाय तो इसमें सुधारकी कोई गुंजाइश ही नहीं है।

४

सर अर्देशीर दलालकी योजना

मई १९४३ में सर अर्देशीर दलालने 'एन आल्टरनेटिव टु पाकिस्तान' शीर्षक कुछ लेख समाचार-पत्रोमे प्रकाशित कराये थे जिनमे उन्होने कहा था कि 'भारत पर्वत और समुद्रद्वारा निर्धारित सीमासहित केवल भौगोलिक इकाई ही नही है, अपितु वह अनादिकालसे एक सास्कृतिक और आध्यात्मिक इकाई भी है। यह ऐक्य सास्कृतिक परम्परा और व्यवहारद्वारा असंख्य पीढ़ियोसे चला आ रहा है। जो लोग यहां आकर बसे अथवा जिन्होने यहां विजय प्राप्तकर भारतको अपना निवास बनाया वे अपनी सहनशीलता और स्थितिके अनुकूल अपनेको मोड़ लेनेके कारण यहीकी जनतामे सर्वथा घुल मिल गये। यही भारतीय सभ्यताकी विशेषता है। पाकिस्तान इस ऐक्यको नष्ट करना चाहता है।' उसपर केवल तभी विचार किया जा सकता है जब अन्य कोई विकल्प उसका समान ही न हो। इससे उद्भूत बातोंकी संक्षेपमे चर्चा करते हुए आप इस निष्कर्षपर पहुँचते है कि 'पाकिस्तानका परिणाम अन्य लोगोके लिए घातक होनेके बजाय स्वयं मुसलमानोके लिए ही अधिक घातक होगा' और 'भारतकी इकाईको खण्ड खण्ड करनेसे इतनी अधिक आर्थिक कठिनाइयां उत्पन्न होंगी कि उनपर विजय प्राप्त करना सर्वथा असम्भव होगा'। 'जबतक राजनीतिक दल राजनीतिक और आर्थिक उद्देश्योंपर आधृत होनेके स्थानपर धार्मिक उद्देश्योंपर स्थापित होते रहेंगे तबतक मुसलमान यही महसूस करेंगे कि ब्रिटेनकी पार्लमेण्टरी शासन-पद्धतिमें, जो उन्हें प्रदान की जा रही है, वे सदैव ही गुलाम बने रहेंगे और उन्हें अन्य देशोंके राजनीतिक दलोंकी भांति शासन करनेका कभी अवसर ही न मिल सकेगा। संयुक्त भारतकी किसी केन्द्रीय

सरकारकी बातपर उनके आपत्ति करनेका मूल कारण यही है। देशके बहुमतवाले राजनीतिक दल होनेके नाते हिन्दुओंको अल्पमतवाले दलोंका विश्वासभाजन बननेके लिए सभी प्रकारका उतिच त्याग करना चाहिये। इसलिए उन्होंने पाकिस्तानका एक विकल्प उपस्थित किया है जो कि इस प्रकार है—

भारतका भावी शासन-विधान संघ-प्रणालीका और ठोस रहेगा। उसमें पार्लमेण्टरी शासन व्यवस्था और न्याय व्यवस्था रहेगी। न्यायानुमोदित शासन होगा। तथा न्यायके लिए सर्वोच्च न्यायालयसंघ न्यायालय होगा। न्यूनतम विषय ही जिसका केन्द्रमें रखना आवश्यक होगा, केन्द्रके शासनमें रहेंगे। शेष सारे विषय सम्बद्ध इकाइयोंके मातहत रहेंगे और उन्हीके हाथमें अवशिष्ट अधिकार रहेंगे।

केन्द्रीय विषय ये रहेंगे—रक्षा, परराष्ट्र सम्पर्क, मुद्रा, ऋण, जकात, आयकर, संघकर, प्रवास; विदेशियोंका देशमें आकर बसना और नागरिक अधिकार प्राप्त करना ; रेल, डाक और तार, जलमार्ग और उद्योगोंका विस्तार। संघबद्ध इकाइयोंकी सीमाके ऐसे पुनर्निर्धारणपर कोई आपत्ति न होनी चाहिये जिससे मुसलिम बहुमतवाले क्षेत्र अपनेको अर्धशासित इकाइयोंमें संघटित कर सकें।

निम्नलिखित आधारपर प्रत्येक व्यक्तिको वैयक्तिक, नागरिक और धार्मिक स्वतन्त्रताका पक्का आश्वासन रहना चाहिये और सबके सैद्धान्तिक अधिकारोंका एक घोषणापत्र होना चाहिये—न्यायकी दृष्टिमें भारतीय संघके सभी नागरिक समान समझे जायँगे।

प्रत्येकको भाषण, लेखन और सम्पर्ककी पूर्ण स्वाधीनताका पक्का आश्वासन रहेगा। किसी भी व्यवितको न्यायानुमोदित न्यायालयद्वारा ही कोई दण्ड दिया जा सकेगा और वही किसीपर मुकदमा चल सकेगा। किसीके भी मकानमें कोई व्यक्ति बलपूर्वक प्रविष्ट न हो सकेगा।

धर्म, विश्वास, जाति, वर्ण, रंग अथवा सम्प्रदायका सदस्य होनेके कारण कोई व्यवित किसी कार्य अथवा पदसे वंचित न किया जायगा। धर्म और आत्मानुकूल कार्य करनेकी स्वतन्त्रताका प्रत्येक व्यक्तिको पच्का आश्वासन रहेगा।

विश्वास, पूजा, उपासना, प्रचार, सम्पर्क-स्थापन और शिक्षाकी स्वतन्त्रताका भी आश्वासन रहेगा। न्यायकी दृष्टिमें प्रत्येक धर्म समान रहेगा।

अल्पसंख्यक दल अपने पृथक् अस्तित्वके लिए जिन हितोंको अपना मूल समझेंगे, विशेषतः शिक्षा, भाषा, धर्म और व्यक्तिगत कानून, राज्य उनकी पूर्णतः रक्षा करेगा। सभी अल्पसंख्यकोंको अपने खर्चसे दातव्य और धार्मिक संस्थाएँ, स्कूल तथा अन्य शिक्षण संस्थाएँ स्थापित करने, उनका प्रबन्ध और नियन्त्रण करनेका समान अधिकार रहेगा। इनमें उन्हें अपनी भाषाका उपयोग करने और अपने धर्मके अनुसार आचरण करनेका अधिकार होगा।

ऐसे प्रत्येक ग्राममें जहां किसी अल्पसंख्यक सम्प्रदायके कमसे कम ५० बालकोंके अभिभावक अपने लिए प्राइमरी स्कूलकी स्थापनाकी मांग करें वहां शिक्षा विभागके अधिकारी उनके लिए स्कूल खोल देंगे और उसमें अल्प-संख्यकों-की अपनी भाषामें ही शिक्षा दी जायगी।

अल्पसंख्यकों द्वारा स्थापित सभी स्कूलों, कालेजों, कला तथा अन्य व्यव-सायोंकी शिक्षण संस्थाओंको यदि वे सरकारी नियमोंके अनुकूल चलें तो उन्हें उसी ढंगसे सरकारी सहायता प्राप्त होगी जैसे अन्य सार्वजनिक अथवा बहुसंख्यक सम्प्रदायकी इस प्रकारकी संस्थाओंको प्राप्त होगी और दोनोंपर समान रूपसे नियन्त्रण रहेगा।

चुनाव सम्बन्धी मताधिकार और व्यापक बनाना पड़ेगा किन्तु साम्प्रदायिक निर्वाचन पद्धति कायम रखनी पड़ेगी। बहुसंख्यक निर्वाचन क्षेत्रोंमें मुसलमानोंके अतिरिक्त अन्य अल्पसंख्यकोंके लिए कुछ स्थान सुरक्षित रहेंगे। उनमें वृद्धि की जा सकती है तथा मुसलमान चाहें तो उनके लिए भी, कुछ और क्षेत्र बढ़ाये जा सकते हैं। स्थानीय स्वशासित संस्थाओंके सम्बन्धमें भी अनेक निर्वाचन क्षेत्रोंका जिनमें कुछ स्थान सुरक्षित रहें, सिद्धान्त स्वीकार किया जा सकता है।

१९३५ के शासन-विधानमें विभिन्न प्रान्तीय असेम्बलियोंमें मुसलमानों और दलितवर्गके प्रतिनिधियोंकी जो संख्या स्वीकार की गयी है वह कायम रखी

जा सकती है। केवल बंगालके सम्बन्धमें, यदि सम्भव हो तो, पारस्परिक समझौते-द्वारा पूनावाले समझौतेमें कुछ संशोधन किया जा सकता है। यदि इकाइयोंकी सीमामें कुछ परिवर्तन किया जायगा तो असेम्बलीके लिए निर्धारित प्रतिनिधियोंकी संख्यामें अवश्य ही परिवर्तन करना पड़ेगा। यदि नव-निर्धारित इकाइयोंमें मुसलमान अल्पमतमें हों तो उनका प्रतिनिधित्व आजके समान ही बना रहेगा। किन्तु जिन प्रान्तोंमें हिन्दू अल्पमतमें होगे वहां उन्हें भी अधिक प्रतिनिधित्व देना पड़ेगा। अधिक मुस्लिम बहुमतवाली इकाइयोंमें साधारण स्थान यदि मुस्लिम बहुमतको प्रदान किये जायें तो अनुचित न होगा। किसी भी इकाई या राजमें स्थानका विभाजन इस ढंगसे नहीं होना चाहिये कि बहुमतवाला दल अल्पमत बन जाय।

संघ राजोंमें असेम्बलीमें चुने गये मन्त्रियोका मन्त्रि-मण्डल बनेगा, किन्तु वे संयुक्त मन्त्रि-मण्डल होंगे और उनका निर्माण इस ढंगपर होगा:—ऐसे सभी अल्पसंख्यकोंको अपनी जनसंख्याके अनुपातसे मन्त्रि-मण्डलमें प्रतिनिधित्व प्राप्त होगा जो एक निश्चित न्यूनतम प्रतिशतसे अधिक होगे अथवा असेम्बलीमें उनका प्रतिनिधित्व जिस अनुपातसे होगा उसी अनुपातसे मन्त्रि-मण्डलमें रहेगा।

मन्त्रि-मण्डलके सदस्योंकी ठीक संख्या कितनी रहेगी इसका निर्धारण इसी उद्देश्यसे गठित एक कमीशन करेगा। प्रत्येक अल्पसंख्यक सम्प्रदायके मन्त्रियोंका चुनाव असेम्बलीमें उस सम्प्रदायके प्रतिनिधि आनुपातिक प्रतिनिधित्वके ढंगपर करेंगे। प्रधान मन्त्री अथवा मन्त्रि-मण्डल बनानेवाले अधिकारी यदि अल्पसंख्यकोंकी निर्धारित संख्याके अतिरिक्त भी किसी अल्पसंख्यक सम्प्रदायमेसे किसी अन्य सदस्यको मन्त्रि-मण्डलमें लेना चाहेंगे तो उसमें कोई बाधा न होगी।

केन्द्रीय असेम्बलीमें मुसलमानोंको उनके सदस्योंकी कुल संख्याके ३३$\frac{1}{3}$ प्रतिशत स्थान मिलेंगे परन्तु, महिलाओं अथवा विशेष हितवाले जैसे मजदूर, जमींदार, व्यापारीवर्ग आदिको छोड़कर सभी अल्पसंख्यक समुदायोंको कुल मिलाकर ५० प्रतिशतसे अधिक स्थान न मिलेंगे।

केन्द्रीय सरकार संयुक्त सरकार रहेगी और उसमें कमसे कम तिहाई मुसलमान रहेंगे। असेम्बलीके मुसलमान सदस्य आनुपातिक प्रतिनिधित्वकी पद्धतिपर केन्द्रीय सरकारके लिए मुसलमान सदस्योंका चुनाव करेंगे। इसी प्रकार असेम्बलीके सिख सदस्य और दलितवर्गके सदस्य अपना एक एक प्रतिनिधि चुनेंगे। केन्द्रीय मन्त्रिमण्डलमें केन्द्रीय सरकारके लिए अल्पसख्यकोंके प्रतिनिधियोंकी संख्या कुल मन्त्रियोंकी संख्याके ५० प्रतिशतसे अधिक न होगी। प्रधान मन्त्री यदि चाहेंगे तो संख्याके अतिरिक्त भी किसी अल्प-सख्यक समुदायको मन्त्रिमण्डलमें ले सकेंगे। उनके इस कार्यमें कोई बाधा न होगी।

शासन असेम्बलीके प्रति उत्तरदायी होगा। असेम्बली उसके विरुद्ध अविश्वास प्रस्ताव ला सकती है। ऐसा प्रस्ताव केवल तभी स्वीकार किया जा सकेगा जब यह पूर्ण बहुमतसे स्वीकृत हो और जब उस बैठकमें असेम्बलीके कमसे कम दो तिहाई सदस्य उपस्थित हों।

असेम्बलीमें ऐसा कोई बिल, प्रस्ताव अथवा उसका अश स्वीकृत न होगा जिसका समुदायके तीन चौथाई सदस्य यह कहकर विरोध करें कि यह हमारे समुदायके धार्मिक और सांस्कृतिक हितोंको अथवा व्यक्तिगत कानूनको जिससे हम अभीतक शासित होते रहे हैं भारी नुकसान पहुँचेगा। किसी भी समुदायको उस समयतक ऐसा अधिकार न मिलेगा जबतक उसके सदस्योंकी संख्या कुल सदस्योंकी संख्याका कमसे कम १५ प्रतिशत न हो।

यदि ऐसा कोई विवाद उठ खड़ा हो कि अमुक बिल या प्रस्ताव अमुक धाराके अन्तर्गत आता है अथवा नहीं, तो वह मामला संघन्यायालयमें उपस्थित किया जायगा।

संघन्यायालयमें ५ न्यायाधीश रहेंगे जिनमें दो मुसलमान होंगे।

सेनामें मुसलमानोंका अनुपात किसी भी हालतमें उतनेसे कम न होगा जो १९३८ में था।

भारत सरकारके ४ जुलाई १९३४ के प्रस्ताव संख्या एफ १४।१७—बी

३३ में सरकारी नौकरियोंमें साम्प्रदायिक प्रतिनिधित्वके लिए जो धाराएँ हैं, वे आवश्यक छोटे-मोटे परिवर्तनके साथ कानून बनाकर शामिल कर ली जायँगी।

विधानमें केवल तभी कोई परिवर्तन हो सकेगा जब केन्द्रीय व्यवस्थापक सभाके सारे सदस्य मिलकर उनपर विचार करें और दो तिहाई बहुमतद्वारा यह स्वीकार कर लिया जाय तथा संघबद्ध इकाइयोंकी असेम्बलियां भी, यदि असेम्बली और कौसिल दो हों तो दोनों मिलकर, बहुमतसे उसकी स्वीकृति प्रदान करें।

सभी बातोंकी वैधानिकतापर अन्तिम वादविवाद और निर्णय संघ-न्यायालयमें हो सकेगा।

उपर्युक्त प्रस्तावोंमें कौंसिलें, उनके संयुक्त और पृथक् प्रभाव क्षेत्रों तथा अन्य ऐसी कितनी ही बातोंका कोई जिक्र नहीं है जो भारतके लिए विधान प्रस्तुत करते समय आ उपस्थित होंगी। वे बातें उन्ही संस्थाओंपर छोड़ देनी चाहिये जो विधानका निर्माण करेंगी। उनका अल्पसंख्यकोंको पर्याप्त संरक्षण प्रदान करनेकी मुख्य समस्यासे कोई विशेष सम्पर्क नही होगा।

देशी राज्योंको सम्प्रति पृथक् छोड़ देना ही अच्छा होगा।

यह दावा नहीं किया जा रहा है कि ऊपर जिस विधानकी रूप-रेखा दी गयी है वह आदर्श है। 'मैं संयुक्त मन्त्रि-मण्डलोंके विधानको इन प्रस्तावोंका सार समझता हूँ।' अल्पसंख्यकोंके संरक्षणोंके लिए मुख्यतः ये बातें बतायी गयी है कि यह एक ऐसा विधान है जिसमें कोई संशोधन केवल उसी पद्धति-से हो सकेगा जिसमें अल्पसंख्यकोंका पर्याप्त प्रतिनिधित्व रहेगा और उनके धार्मिक और सांस्कृतिक स्वतन्त्रताकी रक्षा होगी और उन्हें सरकारी नौकरियोंमें तथा सेनामें भी उचित भागका पक्का आश्वासन मिलेगा। इसमे असेम्बलियोंमें तथा केन्द्रीय और राजकीय मन्त्रि-मण्डलोंमें अल्पसंख्यकोंको उचित प्रतिनिधित्व मिलेगा। इसमें संघबद्ध-इकाइयोंको उतना ही स्वशासन प्राप्त

है जितना किसी भी संघके लिए सम्भव है। अन्तिम मुख्य बात यह है कि इसमें संघ-न्यायालयकी व्यवस्था है जिसे कि विधानकी धाराओंका कोई दुरुपयोग या उल्लंघन होनेपर उसमें हस्तक्षेप करनेका अधिकार है।

संरक्षण केवल कागजी संरक्षण नहीं है। विधानको पूर्णतः भंग किये बिना उनका उल्लंघन सम्भव नही है। सम्भव है कि उस स्थितिमें गृह-युद्ध आरम्भ हो जाय। इस सम्बन्धमें सबसे बुरी कल्पना यही हो सकती है कि यह दस वर्षतकके लिए एक प्रयोग होगा, तदुपरान्त मुस्लिम अल्पमत यदि चाहेगा तो वह अपना अलग मार्ग चुन सकेगा।

इसके अतिरिक्त यह न भूलना चाहिये कि युद्धकी समाप्तिके उपरान्त एक अन्तर्राष्ट्रीय संस्थाका स्थापित होना अनिवार्य है। यह संस्था राष्ट्र-संघसे कहीं अधिक शक्तिशाली होगी और अल्पसंख्यकोंको सच्चा और वास्तविक संरक्षण देनेमें समर्थ हो सकेगी।

सर अर्देशीर दलाल पारसी है और इसलिए न तो वे अधिकारोंके लिए लड़नेवाले हिन्दुओंमें शामिल हैं, न मुसलमानोंमें। अतः उनकी योजना दोनों सम्प्रदायोंके हितोंसे निष्पक्ष मानी जा सकती है। वे केन्द्र और प्रान्तोंमें संयुक्त मन्त्रि-मण्डल बनानेपर जोर देते हैं और असेम्बली तथा मन्त्रि-मण्डलमें मुसलमानोंको उतना प्रतिनिधित्व देना चाहते हैं जो उनकी जनसंख्यासे अधिक है। उनके लिए वे केवल यही सीमा निर्धारित करते हैं कि अल्पसंख्यकोंके प्रतिनिधि कुल संख्याके ५० प्रतिशतसे अधिक न हों। मन्त्रि-मण्डलमें अल्पसंख्यकोंके प्रतिनिधियोंका चुनाव असेम्बलीमें उक्त सम्प्रदायके सदस्य आनुपातिक प्रतिनिधित्वके आधारपर करेंगे। प्रधान मन्त्री यदि चाहेगा तो अल्पसंख्यकोंके मन्त्रियोंकी निर्धारित संख्याके अतिरिक्त भी उनमेसे कोई सदस्य मन्त्रिमण्डलमें ले सकेगा। इस भांति यदि प्रधान मन्त्री का विश्वास उन्हें प्राप्त हो तो मन्त्रि-मण्डलोंमें अल्पसंख्यकोंको ५० प्रतिशतसे अधिक स्थान मिल सकते हैं।

५

डाक्टर राधाकुमुद मुकुर्जीका साम्प्रदायिक समस्यापर नया सुझाव

डाक्टर राधाकुमुद मुखर्जीने 'ए न्यू एप्रोच टु दि कम्युनल प्राब्लम' नामकी एक पुस्तिका प्रकाशित की है जिसमें आपने प्रथम विश्वयुद्धके उपरान्त यूरोपके विभिन्न देशोंके अल्पसख्यकोके साथ राष्ट्रोंके मातहत और आश्वासनपर हुई सन्धियों और रूसके विधानके प्रयोगके अनुभवोके आधारपर कुछ निष्कर्ष निकाले है जो संक्षेपमें नीचे दिये जा रहे है।

साम्प्रदायिक समस्या एक सार्वदेशिक समस्या है। कारण, नस्ल सम्बन्धी तथा धार्मिक और सामाजिक परिधिया राजनीतिक और राष्ट्रीय परिधियोंसे सर्वथा भिन्न रही हैं। दोनोका एक होना सर्वथा असम्भव है। प्रत्येक राजको अपने अन्तर्गत अनेक वर्गो और समुदायोको लेकर चलना पडता है। किसी अल्प-संख्यकको सर्वथा निर्मूल कर देनेमे कोई भी राज समर्थ नही हुआ है। अत. यह आवश्यक है कि अल्पसंख्यकोके साथ व्यवहार करनेके लिए कोई उपाय खोज निकाला जाय। प्रथम महासमरके पूर्व क्रीमियाके युद्धके उपरान्त ३० मार्च १८५६ को पेरिसकी जो सन्धि हुई थी उसमे यह शर्त रखी गयी थी कि किसी भी देशमे प्रजाका कोई भी भाग, धर्म, जाति या नस्लके कारण, अन्य वर्गोसे नीचा न समझा जायगा। महासमरके उपरान्त अल्पसंख्यकोंके सम्बन्धमे एक योजना तैयार की गयी और वह अल्पसंख्यकोंको आश्वासन देनेवाली सन्धिके रूपमें वैध करार दी गयी। राष्ट्रसघसे विश्वके सभी राज—जिनकी संख्या एक बार ५२ तक पहुँच गयी थी—इन अन्तर्राष्ट्रीय शर्तोंको पालन करनेके लिए बाध्य थे।

किसी संयुक्त राजके अन्तर्गत रहनेवाले विभिन्न सम्प्रदायोंका मतभेद इन ३ भागोंमें बाटा जा सकता है—(१) भाषा (२) नस्ल और (३) धर्म। जो अल्पसंख्यक दल अपने लिए विशेष प्रकारके व्यवहारकी मांग करे उसकी

जनसंख्या, तुर्कीके विधानके अनुसार 'जन-संख्याका पर्याप्त भाग' होनी चाहिये। इस सम्बन्धमें सबने मिलकर यह बात स्वीकार कर ली थी कि अल्पसंख्यक समुदायकी जनसंख्या राजकी सारी जनसंख्याका २० प्रतिशत होना चाहिये। कारण, आर्थिक और शासन-व्यवस्था सम्बन्धी दृष्टिसे इससे छोटे अल्पसंख्यक समुदायके लिए विशेष व्यवहारकी व्यवस्था करना अव्यवहार्य होगा।

अल्पसंख्यकोंको जिस संरक्षणका आश्वासन दिया गया था वह नस्ल, धर्म और भाषाके मतभेदोंतक सीमित था। इनके कारण उत्पन्न ऐतिहासिक और सांस्कृतिक विशेषताओंका पूर्ण आदर करना उचित समझा गया ताकि विभिन्न सम्प्रदाय अपने विकासके मार्गसे ही अपनी उन्नति और प्रगति करते हुए सारी मानवताकी सांस्कृतिक विकासमें सहायक हों। अतः प्रत्येक सम्प्रदायका यह अधिकार स्वीकार किया गाया कि वह अपनी भाषा तथा मातृभाषाका विकास कर सकता है। आरम्भिक पाठशालाओमें उसके बच्चोंको उनकी मातृभाषा और उनकी लिपिमें ही शिक्षा देनी होगी और अल्पसंख्यकोंके कमसे कम ठेठ बालक यदि अपने लिए पृथक् पाठशालाकी मांग करे तो राजको उसकी व्यवस्था करनी होगी।

इसके अतिरिक्त अन्य शासन-सम्बन्धी व्यय और सरकारी सहायताके अतिरिक्त अल्पसंख्यकोंको आरम्भिक पाठशालाओके लिए उसी अनुपातसे सरकारी सहायता मिलनी चाहिये जिस अनुपातसे ऐसी अन्य पाठशालाओके लिए बजटमें रखा जाय।

नस्ल सम्बन्धी संरक्षणके आश्वासनके लिए यह घोषणा की गयी कि प्रत्येक सम्प्रदाय अपने विशेष रीति-रिवाजो, व्यक्तिगत कानूनों, विवाह और उत्तराधिकार-सम्बन्धी नियमोंकी रक्षा कर सकेगा और उनके द्वारा अपने सम्प्रदायका पृथक् अस्तित्व और नस्ल सम्बन्धी सम्पूर्णता व्यक्त कर सकेगा। इसी भाति प्रत्येक सभ्य देशमें विभिन्न सम्प्रदायोंका धार्मिक संरक्षण स्वीकार कर लिया गया है। इसके लिए तुर्क विधानको आधार माना जा सकता है। उसमे कहा गया है कि 'सारी प्रजाको घर या बाहर, सर्वत्र अपने धर्म और विश्वासके अनूकूल,

'ऐसा आचरण करनेका अधिकार होगा जो शान्ति और सदाचारके प्रतिकूल न होगा। तुर्क-प्रजाके गैर-मुस्लिम अल्पसंख्यक समुदायोंके प्रति भी ठीक वैसा ही व्यवहार और न्याय होगा जैसा अन्य तुर्क-प्रजाके साथ। विशेषतः उन्हें अपने खर्चसे धार्मिक, सामाजिक और धर्मार्थ संस्थाएँ तथा शिक्षण संस्थाएँ स्थापित करनेका समान अधिकार रहेगा। इनमें उन्हें अपनी भाषाका व्यवहार करने और अपने धर्मके अनुकूल आरचण करनेका अधिकार रहेगा।'

शासन-व्यवस्थामें अल्पसंख्यकोंका क्या स्थान रहेगा, इस सम्बन्धमें तुर्क विधानमें कहा गया है कि 'नागरिक अथवा राजनीतिक अधिकारोकी प्राप्तिमें, जैसे सरकारी नौकरियों, उत्सवों, सम्मान प्राप्ति अथवा उद्योग व्यवसाय आदिमें, किसी भी तुर्क प्रजाका धर्म अथवा विश्वासका भेद बाधक न होगा। तुर्क प्रजाके अल्पसंख्यक गैर-मुसलमान अल्पसंख्यकोंको मुसलमानोंके समान ही नागरिक राजनीतिक अधिकार प्राप्त रहेगे। न्यायकी दृष्टिमें तुर्कीकी सारी प्रजा, चाहे उसका कोई भी धर्म क्यों न हो, एक समान समझी जायगी। सरकारी नौकरियों, उत्सवों, सम्मानों, सैनिक पदों, सार्वजनिक संस्थाओमें सारी प्रजाकी भरती एक समान रूपसे होगी और पद-वृद्धि आदिमें भी किसीके साथ कोई भेद-भाव न रखा जायगा।'

इस भांति योजनामें अल्पसंख्यकोको कुछ विशेष मामलों और हितोंके सम्बन्धमें, जो उनके विकासके लिए परम आवश्यक हैं, पूर्ण संरक्षण दिया गया है और इन विषयोंमें उन्हें पूर्ण स्वतन्त्रता दे दी गयी है। किन्तु अल्प-संख्यकोंके हितोंकी रक्षाकी भी एक सीमा है और वह है राजकी अखण्डता— जिसकी सर्वस्व त्यागकर रक्षा करना प्रत्येक सम्प्रदायका समान रूपसे कर्तव्य है और किसी भी सम्प्रदायको अपनी अतिशयोक्तिपूर्ण और असीम कल्पनाओंको, जो स्वयं राजकी अखण्डताको खण्ड करना चाहती हो, व्यवहृत करनेकी अनुमति नही दी जा सकती। ऐसा कोई भी प्रयत्न चलने नहीं दिया जा सकता जिससे अखण्डताका पक्ष दुर्बल हो।

रूस अत्यन्त विषम साम्प्रदायिक समस्याओंका सामना कर रहा है। रूसमें

(१) १७ करोड़की आबादी है, (२) १८० भिन्न राष्ट्रीय जातियां हैं, (३) १५१ भिन्न भाषाएँ हैं, (४) ११ राष्ट्रीय लोकतन्त्र हैं और (५) २२ स्वशासनाधिकारप्राप्त लोकतन्त्र हैं। जारशाहीने साम्प्रदायिक समस्या विरासतमें छोड़ी थी और रूसके सम्मुख अत्यधिक विषम कठिनाइयां उपस्थित थी। जारशाहीको अपने विस्तृत प्रदेशके विभिन्न समुदायोंके नागरिकोंकी एकतामें कोई दिलचस्पी नहीं थी और उसके शासनकालमें सबमें परस्पर बड़ी शत्रुता चलती थी। 'रूसी महान' के हितोंके अनुकूल साम्राज्यका शासन चलता था और वे अन्य सभी राष्ट्रीय जातियों और प्रजाको अपनेसे निम्न कोटिका मानते थे। आक्रमणात्मक और युद्धरत रूसी राष्ट्रीयतासे प्रभावित होकर गैर-रूसी राष्ट्रीय जातियोंको निर्दयता-पूर्वक रूसी वनानेकी स्पष्ट नीति चालू थी। विभिन्न राष्ट्रीय जातियोंपर इसकी प्रतिक्रिया हुई और पृथक् होनेकी भावना तीव्र रूपसे बढ़ी जिसे कि आत्म निर्णयके नारेसे बड़ा बल मिला। जब शासनकी बागडोर बोलशेविकोंके हाथमें आयी तो उन्होंने जारशाहीकी नीति सर्वथा उलट दी और विभाजनवाली भावनाओंको मिटानेके निमित्त उन्होने मुसलमान, तातार, तुर्क और तारतार जैसे सम्प्रदायोंके लिए घोषणा कर दी कि अबसे वे अपने विश्वासों, रीतिरिवाजों, राष्ट्रीय संस्थाओं और संस्कृतिके विषयमें स्वतन्त्र है, उनमें कोई हस्तक्षेप न किया जायगा और अब वे क्रान्तिके शक्तिशाली संरक्षणमें हैं। इस भांति बोलशेविकोंने पूर्व रूसी साम्राज्यकी सारी प्रजाको आत्म-निर्णयका आश्वासन दे दिया। स्वतन्त्र राष्ट्रसंघके रूपमें रूसी राष्ट्र-मण्डल संघटित कर दिया गया जो कि १९१८ के विधानके अनुसार 'रशियन सोशलिस्ट फेडरेटिव सोवियट रिपब्लिक कहलाया। यह घोषणा बोलशेविकोंद्वारा स्थापित अन्य रूसी प्रजातन्त्रोंका आदर्श बनी। यूक्रेन, श्वेतरूस, ट्रांस,-काकेशस संघ और केन्द्रीय एशियाई प्रजातन्त्र—ये सभी रूसी राज एक बड़े संघमें सम्मिलित हो गये और इस नये संघका नाम 'यूनियन ऑव सोशलिस्ट सोवियेट रिपब्लिक' (यू० एस० एस० आर०) रखा गया। इसमेंसे 'रूसी' शब्द निकाल दिया गया।

यू० एस० एस० आर० संघकी विभिन्न इकाइयां स्वयं संघके रूपमें संघ-

टित है अतः यह संघ कितनी ही मात्राओंमें संघसे भी ऊपर हैं। इस भांति ११ राष्ट्रीय अथवा संयुक्त लोकतन्त्रोंको अधिकतम अधिकार प्राप्त हैं। उन्हें पूर्ण स्वशासनाधिकार तो है ही, अपने प्रतिनिधि भेजकर यू० एस० एस० आर० (रूसी लोकतन्त्र) के संयुक्त शासनमें भाग लेनेका भी अधिकार है। उन्हें 'अपनेको सर्वथा स्वतन्त्र रखने, यहांतक कि संघसे भी अपना सम्बन्ध विच्छेद कर लेने' तकका अधिकार प्राप्त है (१९३६ के विधानकी धारा १७ द्वारा इसकी पुष्टि हो चुकी है)। इनसे निचली श्रेणीके २० स्वशासनाधिकार प्राप्त लोकतन्त्रोको आत्मनिर्णयका इतना अधिकार तो अवश्य नही है कि वे चाहें तो संघसे अपना सम्बन्ध-विच्छेदतक कर लें, पर वे अपना स्थानीय शासन करनेके लिए स्वतन्त्र है। तीसरी श्रेणीकी वे स्वशासनाधिकारप्राप्त इकाइयां है जिनका स्वशासन अपने ही स्थानीय मामलोतक सीमित है। इनकी संख्या समय समयपर बदलती रहती है और इनपर उन संयुक्त लोकतन्त्र अथवा स्वशासनाधिकारप्राप्त लोकतन्त्रोका नियन्त्रण रहता है जिनके प्रदेशके अन्तर्गत वे पड़ती हैं। नये विधानको अपने निर्माण तथा अपनी स्थिति दृढ़ करनेके लिए जो सबसे पहला कदम उठाना पड़ा वह यह था कि उसने भौगोलिक और आर्थिक दृष्टि-कोणको ध्यानमे रखते हुए राष्ट्रीय सिद्धान्तके अनुसार नया प्रादेशिक विभाजन किया और उस पुरानी पद्धतिका अन्त कर दिया जिसके अनुसार प्रत्येक प्रान्तमें सदा परस्पर लड़नेवाले कई नस्लोके लोग रहते थे।

मोटे तौरसे केन्द्र तथा विभिन्न श्रेणीकी उससे सम्बन्द्ध इकाइयोके बीच अधिकारोंका विभाजन इस प्रकार है—परराष्ट्रनीति, रक्षा, यातायात, डाक और तार-विभाग संयुक्त सरकारके हाथमें है। आर्थिक, राजस्व विषयक और मजदूरोंकी समस्याओंका प्रबन्ध संयुक्त सरकार और उससे सम्बद्ध राज आपसमें मिलकर करते हैं। न्याय, स्वास्थ्य, उन्नति और सुधार तथा शिक्षा विभागका शासन सम्बद्ध राजों और स्वशासनाधिकारप्राप्त प्रजातन्त्रों और प्रदेशोंके हाथमे है। इस भांति रूसकी विभिन्न इकाइयां इन सीमाओंके भीतर स्वशासनाधिकारप्राप्त है और उन्हें पूर्ण सांस्कृतिक स्वशासनाधिकार प्राप्त है। रूसकी विभिन्न नस्लोंमें

समानताका सिद्धान्त व्यवहृत करने तथा स्वशासनद्वारा पिछड़े प्रदेशों और सम्प्रदायोका सांस्कृतिक, बौद्धिक और आर्थिक धरालल ऊपर उठाकर समानताको स्थापित करनेके उद्देश्यसे ही नयी व्यवस्थाकी सृष्टि हुई है। प्रत्येक समुदाय अपने बच्चोको अपनी भाषामे ही शिक्षा देता है। जिन भाषाओंकी वर्णमाला न थी उनकी वर्णमाला खोज निकाली गयी है और सन् १९३४ तक वहां ७४ सम्प्रदायोंकी वर्णमालाएँ आविष्कृत हो गयी थी।

अल्पसंख्यकोंकी स्थानीय स्वतन्त्रता तथा आत्मनिर्णयपर इसीलिए कुछ प्रतिबन्ध लगा है कि वे संघकी सघटित शक्तिमें बाधक न बनें। वेबके शब्दोंमे— 'राज संयुक्त रूपसे अपने ऐक्यमें कोई बाधा नही पड़ने देता और अन्य सघराजोकी भाति उसने शासक-सत्ताके केन्द्रीकरणमें हीं वृद्धि की है। केवल रूसका प्रजातन्त्र ऐसा है जहां केन्द्रीकरणके कारण अल्पसंख्यकोंकी सास्कृतिक स्वाधीनतामें कोई कमी नही पडी है।' व्यवहार्यतः स्थानीय स्वशासनका अधिकार इसलिए बहुत कम हो जाता है कि जिन बड़े प्रदेशोके अन्तर्गत ये इकाइयां पड़ती हैं उनका शासन सिरपर रहता है और उनके विभिन्न सीमाक्षेत्रोंमें भेद करनेवाली शायद ही कोई स्पष्ट और प्रत्यक्ष रेखा हो। उच्च शासक-संस्था अपने मातहत संस्थाको अपने अधिकारमें ले सकती है, कारण उसका शासन दोनोंके जिम्मे रहता है, केवल अधीनस्थ संस्थाके ही जिम्मे नहीं रहता। यह मूल बात सदा स्मरण रखनी चाहिये कि विधानका आधार उसकी आर्थिक योजना है और जिसके दायरेमें सारे देश और उसके विभिन्न अंगोंका सारा जीवन आ जाता है. और यह आर्थिक योजना संघ-शासनकी सीमाके ही अन्तर्गत है। विधानकी १५ वी धारा दिखानेके लिए तो अवश्य ही संघके अधिकारोंको सीमित कर देती है परन्तु व्यवहार्यतः वह केवल विभिन्न सम्प्रदायोंकी सांस्कृतिक स्वाधीनता और विशेषतः उनकी भाषाओके प्रयोगके अधिकारोंकी ही रक्षा करती है।

संघसे सम्बन्ध-विच्छेदका अधिकार केवल ११ राष्ट्रीय अथवा संयुक्त लोकतन्त्रोंको उपलब्ध है। वह अनेक स्वशासनाधिकार-प्राप्त प्रजातन्त्रों तथा प्रदेशोंको

उपलब्ध नहीं है। स्टालिनके शब्दोंमें—'सम्बन्ध-विच्छेदके अधिकारके सम्बन्धमें कम्युनिस्ट पार्टीका रुख अन्तर्राष्ट्रीय स्थितिकी वास्तविकताको तथा क्रान्तिके हितोंको देखते हुए निश्चित किया गया है इसीलिए कम्युनिस्ट सभी उपनिवेशोंको पृथक् करनेके लिए लड़ते हैं पर साथ ही वे रूसकी सीमापरके प्रदेशोंको पृथक् होनेसे बचानेके लिए लड़ते हैं।' तीन वर्ष पूर्व १९१७ में स्टालिनने कहा था कि 'जब हम पीड़ित जनताके पृथक् होने, और अपने राजनीतिक भाग्यका स्वयं निर्णय कर सकनेके अधिकारको स्वीकार करते हैं तो इसके द्वारा हम इस प्रश्नका निपटारा नहीं कर देते कि अमुक राष्ट्र किसी निश्चित समयपर रूसी राजसे पृथक् हो जायं...। अतः हम सर्वहारा वर्ग और उसकी क्रान्तिके हितोको ध्यानमें रखकर किसीके पृथक् होने अथवा न होनेके सम्बन्धमें आन्दोलन करनेके लिए स्वतन्त्र हैं।' १९३७-३८ के शुद्धीकरणके जमानेमें समाचारपत्रोंमें ऐसे लोगोके कितने ही विवरण प्रकाशित हुए थे जो किसी प्रदेशको संघसे पृथक् करनेके लिए षड्यन्त्र रच रहे थे। केवल संघ लोकतन्त्रको ही सम्बन्ध विच्छेदका अधिकार प्राप्त है। किसी स्वशासनाधिकारप्राप्त प्रजातन्त्रको संयुक्त लोकतन्त्रकी श्रेणीमे परिवर्तित करनेके ये तीन उपाय है—(१) सम्बन्धित प्रजातन्त्रका किसी सीमापर बसा होना आवश्यक है। वह चारों ओरसे रूसी प्रदेशद्वारा घिरा न हो ताकि पृथक् होनेपर उसको जानेके लिए कहीं स्थान न रहे, (२) लोकतन्त्रकी जो राष्ट्रीय जाति ऐसा चाहे उसका अपने भीतर पूर्ण बहुमत होना आवश्यक है, अतः राजकी ओरसे किसी भी अल्पसंख्यकको सम्बन्ध विच्छेदका अधिकार नहीं दिया जा सकता, (३) ऐसे प्रजातन्त्रकी जनसंख्या बहुत कम न होनी चाहिये, अर्थात् १० लाखसे अधिक ही हो, कम नहीं।

इस भांति सोवियत प्रजातन्त्रने, अपने मुख्यांश, अपनेसे सम्बद्ध प्रजातन्त्रोंको अपनेमें बांध रखनेके लिए, पृथक् क्षेत्रोंका अधिकार प्रदान कर अपना अस्तित्व दृढ़ किया। ये प्रजातन्त्र एक बार संघमें आकर उससे पृथक् नहीं होना चाहते और दिन दिन संघको अधिकाधिक केन्द्रित बनाते जा रहे हैं। भारतकी एकता और अखण्डता आज बनानेकी वस्तु नहीं है। वह शताब्दियोंसे

बनी हुई है और १ शताब्दीसे अधिक कालसे तो भारत सरकार ही उसपर इसी रूपमें शासन कर रही है। यहां भी रूसके ढंगपर स्वतन्त्र मुस्लिम राज चाहनेवालों और उनके विरोधियोंके परस्पर विरोधी दृष्टिकोणोंको सन्तुष्ट करनेके लिए विभिन्न सम्प्रदायोंकी सांस्कृतिक स्वतन्त्रताकी योजना बनानी चाहिये। मुसलमानोंको यह आशंका है कि हिन्दू बहुमतवाला संघ मुस्लिम राजकी प्रभुशक्तिपर अपना अधिकार जाम लेगा। इस कठिनाईको हल करनेके कई व्यवहार्य उपाय हैं जिनके द्वारा संघके अन्तर्गत रहते हुए ही, राजको कई खण्डोंमें विभक्त किये बिना समस्या सुलझायी जा सकती है। उपाय ये हैं—(१) संघ और प्रान्तोंके, विषयोंका विभाजन इस प्रकारसे किया जाय कि प्रान्तोंको स्वशासनका लगभग पूर्ण अधिकार प्राप्त हो जाय और प्रत्येक पाकिस्तान राजको सभी व्यावहारिक दृष्टियोंमें प्रभुराज बना दिया जाय। (२) रूसके ढंगपर प्रत्येक सम्प्रदायको सांस्कृतिक स्वतन्त्रताका पक्का आश्वासन दे दिया जाय। (३) भाषाविज्ञानके आधारपर प्रान्तोंका पुनर्सीमा-निर्धारण कर दिया जाय बशर्ते कि वे आर्थिक दृष्टिसे आत्मनिर्भर हों।

ऐसी किसी योजनापर श्री जिनाके शब्दोंमें यह आपत्ति की जाती है कि 'वैधानिक अथवा अन्य प्रकारके संरक्षणोंका कोई अर्थ न होगा। जबतक केन्द्रमें हिन्दुओंका बहुमत रहेगा तबतक ये सभी संरक्षण केवल कागजी संरक्षण बने रहेंगे, और कुछ नहीं। इसका उत्तर यह है कि सम्प्रदायोंकी सांस्कृतिक स्वाधीनताकी योजनाके अन्तर्गत, अल्पसंख्यकोंके अधिकारोंकी रक्षा कानून और विधानद्वारा की जायगी। विधानमें सर्वोच्च न्यायालय जैसी पृथक् कानूनी संस्थाकी आयोजना हो सकती है जिसका कार्य ही यह होगा कि वह यह देखती रहे कि अल्प संख्यकोंको जो संरक्षण प्रदान किये गये हैं उनका सम्यक् रूपसे पालन होता है अथवा नहीं। कोई भी पीड़ित सम्प्रदाय इस न्यायालयमें अपनी शिकायत पेश कर सकेगा। इस प्रकारके न्यायालयके निर्माणमें साम्प्रदायिकता न बरती जानी चाहिये। भारतीय संयुक्त राज विभिन्न दलोंके पारस्परिक समझौतेद्वारा स्थापित होगा। वह संयुक्त राजके विधानमें रखे गये संरक्षणोंको रद्द नहीं

कर सकेगा और सर्वोच्च न्यायालय, जो कि असाम्प्रदायिक रहेगा, संरक्षणोंको व्यवहृत करानेमें समर्थ हो सकेगा।

६

कम्युनिस्ट पार्टी द्वारा पाकिस्तानका समर्थन

इस बातपर किसीको आश्चर्य न होना चाहिये कि भारतकी कम्युनिस्ट-पार्टीके नेता तथा उनके दलवाले रूसके विधान तथा श्री स्टालिनके लेखोके आधार-पर अखिल भारतीय मुस्लिम लीगकी पाकिस्तानकी मांगका समर्थन करते हैं। यह बात अवश्य ही आश्चर्यजनक है कि अखण्ड हिन्दुस्तान सम्मेलनके अध्यक्ष डाक्टर राधाकुमुद मुखर्जी भी इन्ही सूत्रोका आश्रय लेते है और इन्हीके आधार-पर अपने सुझाव उपस्थित कर देते है। अतः यह आंवश्यक है कि हम कुछ विस्तारसे कम्युनिस्टपार्टीद्वारा स्वीकृत तथा अक्तूबर १९१७ की क्रान्तिके उप-रान्त नये रूपमे विकसित रूसके विधानमें सम्मिलित श्री स्टालिनके दृष्टिकोणपर विचार करे।

श्री स्टालिन अपनी परिभाषामें कहते है—'राष्ट्र ऐतिहासिक ढंगसे विक-सित वह पुष्ट सम्प्रदाय है जिसकी भाषा, प्रदेश, आर्थिक जीवन और मनो-वैज्ञानिक ढाचेद्वारा यह व्यक्त हो कि वह एक सांस्कृतिक सम्प्रदाय है।'* अन्य ऐतिहासिक तत्वोंकी भाति 'उसमें परिवर्तन होता है, उसका अपना इतिहास होता है और उसका आदि तथा अन्त होता है। यहा इस बार पर जोर देना आवश्यक है कि उपयुक्त गुणोंमेसे कोई एक ही गुण राष्ट्रकी पूरी परिभाषा करनेके लिए पर्याप्त नही है। उसमे एक साथ सब गुण होना आवश्यक है। किन्तु साथ ही यह भी है कि इनमेसे यदि एक गुण न रहे तो राष्ट्र फिर राष्ट्र नही रह सकता।'* 'वर्त-मान राष्ट्रोकी उत्पत्तिकी एक ही कहानी है और वह है पूजीवादका विकास।

---

* 'मार्क्सिजम एण्ड दि नेशनल एण्ड कोलोनियल क्वेश्चन,' पृष्ठ ८

जागीर प्रथाका नाश और पूजीवादका विकास राष्ट्रोके संघटनका कारण बना। ब्रिटिश, फ्रेंच, जर्मन और इटालियन जनता पूजीवादकी विजय-यात्रा और जागीरदारोके अनैक्यके कारण ही राष्ट्र के रूपमे संघटित हुई।

'जहांपर राष्ट्रोंकी स्थापनाके समय ही केन्द्रित राजोंकी स्थापना हुई वहां राष्ट्र स्वतः राजमे संयुक्त हो गये और स्वतन्त्र बुर्जुआ, राष्ट्रीय राजोंमें परिणत हो गये। ब्रिटेन (आयर्लैण्डको छोडकर) फ्रान्स और इटलीमे यही हुआ। दूसरी ओर पूर्वी यूरोपमें जागीरदारीके नष्ट होने और इसलिए राष्ट्रोके निर्माणके पूर्व ही (तुर्कों, मगोलों आदिके) आक्रमणसे रक्षाके निमित्त केन्द्रित राजोंकी स्थापना हुई। अतः परिणामतः राज यहांपर राष्ट्रीय राजोंमे न तो परिणत ही हुए और न हो ही सकते थे। इसके स्थानपर वे कई सयुक्त, बहुराष्ट्रीय बुर्जुआ राजोंमें संघटित हो गये जिनमे एक राष्ट्र शक्तिशाली तथा प्रधान था और अन्य राष्ट्र निर्बल और उसके दास। आस्ट्रिया, हगरी और रूस इसके उदाहरण है।

फ्रास और इटली जैसे राष्ट्रीय राज, जो मुख्यतः अपनी ही राष्ट्रीय सेना-पर निर्भर रहते थे, विदेशी अत्याचारसे अनभिज्ञ थे। इनके विपरीत बहुराष्ट्रीय राज, जो एक राष्ट्रके प्रभुत्वपर आधृत है, राष्ट्रीय अत्याचार और राष्ट्रीय आन्दो-लनोंके मुख्य और वास्तविक स्थल थे। शासक और शासित राष्ट्रोंके हितोंमें जो संघर्ष रहता है वह जबतक हल नहीं किया जाता तबतक बहुराष्ट्रीय राजोंका अस्तित्व डाॅवाडोल रहता है और उसका दायित्व असम्भव रहता है। बहु-राष्ट्रीय बुर्जुआ राजकी सबसे अधिक अप्रिय और दुःखद घटना यह है कि वह इन विरोधोंको जीतनेमें असमर्थ रहता है और व्यक्तिगत सम्पत्तिको तथा वर्ग अस-मानता बनाये हुए जब जब वह राष्ट्रोंको समतलपर लाने और अल्पसंख्यकोंके अधिकारोंकी रक्षाका प्रयत्न करता है तब तब वह नये सिरेसे असफल होता है और विभिन्न राष्ट्रीय जातियोंमें शत्रुता बढ़ जाती है।

यूरोपमें पूंजीवादके विकास, नये बाजारोंकी आवश्यकता, कच्चे माल और ईंधनकी तलाश तथा साम्राज्यवादके विस्तार, पूंजीके निर्यात और महान सागर

तथा रेल-मार्गोंकी रक्षाकी आवश्यकताने एक ओर तो जहां पुराने राष्ट्रीय राजों-को नये प्रदेश हथियाने तथा इन नये उपनिवेशोंको ब्रिटेन, फ्रांस, जर्मनी, इटली जैसे बहुराष्ट्रीय राजोंमें जहांपर राष्ट्रीय अत्याचार और राष्ट्रीय संघर्ष अनिवार्य हैं, परिवर्तित करनेकी ओर सचेष्ट किया, वहां दूसरी ओर पुराने बहुराष्ट्रीय शासक राजोंमें केवल अपनी पुरानी सीमा सुरक्षित रखनेकी ही नही अपितु उसका विस्तार करने और पड़ोसी राजोंकी बलि देकर नयी (निर्बल) राष्ट्रीय जातियों-पर अपना अधिकार जमानेकी लालसा उत्पन्न कर दी। इस प्रकार राष्ट्रीय समस्याने व्यापक रूप धारण किया और अन्तमें घटनाचक्रके अनुसार वह उप-निवेशोंकी समस्यामें शामिल हो गयी और दमनने भीतरी प्रश्न बने रहनेके स्थानपर अन्तर्जातीय प्रश्नका क्रम धारण किया। वह निर्बल और प्रभुसत्ताशून्य राष्ट्रीय जातियोंको गुलाम बनानेके लिए महान साम्राज्यवादी शक्तियोके बीच संघर्ष और युद्धका कारण बन बैठा।'*

१९१४ से १९१८ तक चलनेवाले साम्राज्यवादी युद्धके कारण उपनिवेश-वाले विजयी राजों (ब्रिटेन, फ्रांस, इटली) के भीतर राष्ट्रीय आन्दोलन अपनी चरम सीमापर जा पहुँचा, पराजित बहुराष्ट्रीय राजों (आस्ट्रिया, हंगरी, १९१७ वाला रूस) का पूर्ण विघटन हो गया और अन्तमें नये बुर्जुआ राष्ट्रीय राजो (पोलैण्ड, चेकोस्लोवाकिया, युगोस्लाविया, फिनलैण्ड, जार्जिया, आर्मेनिया आदि) की स्थापना हुई जिनमें प्रत्येकके अपने अल्पसंख्यक थे। नये राष्ट्रीय-राजोंकी स्थापना व्यक्तिगत सम्पत्ति तथा वर्ग असमानताके आधारपर हुई है। उनके अस्तित्वके लिए यह आवश्यक है कि वे (१) अपने अल्पसंख्यकोंपर अत्याचार करें (पोलैण्ड श्वेतरूसियों, यहूदियों, लिथुआनियनों और यूक्रेनियनों-पर अत्याचार करता है; जार्जिया आसेटों, आबखासियनों और आर्मेनियनोंपर अत्याचार करता है; युगोस्लाविया क्रोटों, बोसनियनों तथा अन्य लोगोंपर

---

* मार्च १९२१ में रूसी कम्युनिस्टपार्टीकी दसवी कांग्रेसमें स्वीकृत प्रस्ताव, 'मार्क्सिज्म एण्ड दि कोलोनियल क्वेश्चन पृ० २७०–७१ पर उद्धृत।

अत्याचार करता है। (२) अपने पड़ोसियोंकी भूमि हड़पकर अपने प्रदेशका विस्तार करें जिसका अनिवार्य परिणाम संघर्ष और युद्ध है। और (३) राजस्व, अर्थ और सैनिक सभी दृष्टियोंसे 'महान' साम्राज्यवादी शक्तियोंके गुलाम बन जायँ।

ऐसा होना अनिवार्य था। कारण, व्यक्तिगत सम्पत्ति और पूजी अनिवार्यतः जनतामें अनैक्य, राष्ट्रीय एकताका सर्वनाश और दमन और अत्याचारकी वृद्धि करती है जब कि सामूहिक सम्पत्ति और श्रमद्वारा जनता अधिक निकट सम्पर्कमें आती है, राष्ट्रीय मतभेद मिटता है और दमनका अन्त हो जाता है। राष्ट्रीय दमनशून्य पूजीवादका अस्तित्व उसी प्रकार कल्पनामें न आनेकी वस्तु है जिस भांति पीड़ित राष्ट्रोंकी मुक्ति तथा राष्ट्रीय स्वाधीनताके बिना समाजवादका अस्तित्व। अतः राष्ट्रीय अत्याचारके अन्त, राष्ट्रीय समानताकी स्थापना तथा अल्पसंख्यकोंके अधिकारोंकी रक्षाके आश्वासनके लिए सोवियतकी विजय तथा सर्वहारा वर्गके अधिनायकत्व मूल शर्त है। रूसमें सोवियत पद्धतिकी स्थापना तथा राष्ट्रोंके सम्बन्ध-विच्छेदके अधिकारकी घोषणाके कारण रूसकी विभिन्न राष्ट्रीय जातियोके पारस्परिक सम्बन्धमे घोर परिवर्तन हो गया है। पृथक् रहनेसे अनेक सोवियत प्रजातन्त्रोंको पूजीवादी राजोसे भारी खतरा था और उनका अस्तित्व अनिश्चित और डावांडोल था। युद्धकालमें रक्षा सम्बन्धी उनके संयुक्त हितों और उत्पादक शक्तियोंका पुनर्गठन चूर-चूर हो गया और इस बातसे कि वे सोवियत लोकतन्त्र, जिनके पास पर्याप्त खाद्य सामग्री है, खाद्य सामग्रीकी कमीबाले लोकतन्त्रोंकी अवश्य सहायता करें, विभिन्न लोकतन्त्रोंके राजनीतिक ऐक्यकी बात परिलक्षित होती है। साम्राज्यवादी पराधीनता और अत्याचारसे मुक्ति पानेका एकमात्र उपाय यही है।*

उपर्युक्त उद्धरणोंमें अधिकृत रूपसे रूसकी कम्युनिस्टपार्टीके सिद्धान्त आ गये है। श्री स्टालिन तथा अन्य लोग अपने भाषणों और वक्तव्योंद्वारा १९१७ की क्रान्तिसे बहुत पहलेसे लेकर आजतक इनकी व्याख्या करते आये है।

---

* वही : उपर्युक्त प्रस्तावसे उद्धृत ; पृष्ठ २७३–७४।

आइये, इन सिद्धान्तोंकी ऊपर दी गयी व्याख्याके अनुसार हम मुस्लिम लीगके इस दावेपर विचार करें कि भारतके मुसलमान भारतके अन्य राष्ट्र या राष्ट्रोंसे पृथक् राष्ट्र हैं और इसलिए उन्हें केवल सम्बन्ध विच्छेद कर सकनेका ही अधिकार नही है अपितु भारतके जिन क्षेत्रोमे उनका बहुमत है उनमें उन्हे वस्तुतः जब चाहें तब पृथक् हो जानेका अधिकार प्राप्त है।

यदि हम कम्युनिस्टोंकी राष्ट्रकी परिभाषाको कसौटीपर कसे तो हम देखते हैं कि भारतके सारे मुसलमान एक राष्ट्र नही कहे जा सकते है। वे सबके सब एक ही भाषा नही बोलते। विभिन्न प्रान्तो और प्रदेशोमें उनकी भाषा भिन्न है। वस्तुतः मुसलमान जिस प्रान्तमें निवास करते है उसी प्रान्तकी प्रान्तीय भाषा बोलते है। उनकी भाषा वही रहती है जो उनके प्रान्तके गैर-मुसल्मान बोलते हैं और वह अन्य प्रान्तोसे भिन्न रहती है। यह बात केवल दूरस्थ प्रान्तों-के विषयमें ही सत्य नही है अपितु पश्चिमोत्तर प्रदेशके पास पास सटे प्रान्तोके विषयमें भी सत्य है। यहापर ४ प्रान्तोके निवासी बलूची, सिन्धी, पश्तो और पञ्जाबी बोलते है। इन सब भाषाओमे आपसमे उतना ही अन्तर है जितना हिन्दी अथवा हिन्दुस्तानी अथवा बंगाली और गुजरातीमे है।

जबतक हम सारे भारतको एक प्रदेश न मान ले तबतक यह नही कहा जा सकता कि ये सभी एक ही प्रदेशमे निवास करते है। भारतके पश्मिोत्तर प्रदेश तथा पूर्वी प्रदेशके बीच, जहां मुसलमान बहुसख्यक है, लगभग एक हजार मीलका अन्तर है। यह भी नही कहा जा सकता कि मुसलमानोका आर्थिक जीवन गैर-मुसलमानोसे भिन्न है। जिस प्रदेशमे वे रहते है उसीके गैर-मुसल-मानोके आर्थिक जीवनसे उनका आर्थिक जीवन मिलता है, और उसी भांति अन्य प्रान्तवाले मुसलमानों और गैर-मुसलमानोंसे वह भिन्न रहता है।

यह बात ध्यान देने योग्य है कि श्री स्टालिनने धर्मको किसी पृथक् राष्ट्रकी नीवका आधार नही बताया है। वस्तुतः उन्होंने अपने लेखोंमें अनेक स्थानोंपर इस कल्पनाका मजाक उड़ाया है कि यहूदी केवल अपने धर्मके कारण पृथक् राष्ट्र कहे जा सकते हैं। किन्तु हम यह बात मान सकते हैं कि वे 'किसी सांस्कृतिक

सम्प्रदायमें प्रकट मनोवैज्ञानिक ढांचा' जिसे कहते है उसमें धर्मका प्रभाव भी सम्मिलित है और किसी सम्प्रदायके सास्कृतिक विकासमें उसका निश्चय ही महत्वपूर्ण हाथ रहता है। इस्लामने चाहे जो शिक्षा प्रदान की हो इस बातमें सन्देह नही है कि सारे भारतमें इस्लामी संस्कृति एक रूपमे नही है। देशके बिभिन्न भागोंमें उसके रूपमें बहुत कुछ परिवर्तन हो गया है, और मुसलमान भी इस्लाममे अन्य समुदायोके समान ही विभिन्न रगोमें चित्रित दिखायी पड़ते है। शीया और सुन्नियोका मतभेद व्यवहार्यतः उतना ही पुराना है जितना पुराना इस्लाम है। इसके अतिरिक्त मुसलमानोंमे ऐसे कितने ही दल है जो पहले हिन्दू ही थे और जो आज भी उत्तराधिकार सम्बन्धी हिन्दू कानूनका पालन करते है और हिन्दू सम्प्रदायकी कितनी ही प्रथाओका भी पालन करते है। कादिया-नियोका भी हालका बना हुआ वर्ग है। अनेक मतभेद तो धार्मिक सिद्धान्तोको लेकर है पर उनका भी तो मुसलमानोके सामाजिक जीवनपर बहुत कुछ प्रभाव पड़ता है और वे उसमें प्रविष्ट हो गये है तो भी इतना अवश्य है कि इन मतभेदो-के बावजूद एक ऐसी मुस्लिम सस्कृति है जो सभी मुसलमानोमे पायी जाती है। इसी अर्थमे सर्वत्र व्याप्त एक भारतीय सस्कृति भी है जो सभी मुसलमानो और गैर-मुसलमानोमे, अनेक मतभेदोके रहते हुए भी, समान रूपसे व्याप्त है। इससे यह निष्कर्ष निकलता है कि कम्युनिस्टोकी परिभाषाके अनुसार भारतके मुसलमानोकी समष्टि एक पृथक् राष्ट्र नही है। भारतीय कम्युनिस्ट भी यह बात स्वीकार करते है। 'गाधीजीको धर्मको राष्ट्रत्वका आधार स्वीकार करनेमे सबसे अधिक आपत्ति है। उनका यह अर्थ इस तर्कमे सही है कि केवल धर्मसे ही राष्ट्र नही बनता। यहां इस बातपर विचार करना विषयान्तर समझा जायगा कि किसी जातिके मनोवैज्ञानिक ढांचे तथा राष्ट्रीय संस्कृतिके निर्माणपर धर्म-का क्या प्रभाव पड़ता है। ये दोनों वस्तुए राष्ट्रका ही अंग है। हमारे लिए इतना कहना ही पर्याप्त है कि भारतके मुसलमान केवल समानधर्मी होनेके कारण एक राष्ट्र नही कहे जा सकते। किन्तु केवल इतना कहना अर्धसत्य है।'❀ श्री

❀ पी० सी० जोशी : 'दे मस्ट मीट अगेन', पृष्ठ ७।

जोशीके कथनानुसार इस सत्यका आधा अंश यह है कि भारत विभिन्न राष्ट्रीय जातियोंका एक परिवार है।

दूसरी विचारणीय बात ऐतिहासिक है और वह है राष्ट्रीयताके प्रश्नका विकास। श्री स्टालिन इसे तीन कालोंमें विभाजित करते हैं। प्रथम काल वह काल है जिसमें पश्चिममें जागीरदारीका नाश और पूंजीवादकी विजय हुई। इस कालमें ब्रिटेन (आयर्लैण्डको छोड़कर), फ्रान्स और इटलीमें जनता राष्ट्रके रूपमें संघटित हुई।* 'पूर्वी यूरोपमें इसके विपरीत राष्ट्रीयताओंकी स्थापनाकी पद्धति और जागीरदारोके अनैक्यका अन्त: केन्द्रित राजोंकी स्थापनाकी पद्धतिके साथ साथ नही पड़ा.......संयुक्त राज स्थापित हुए जिनमें प्रत्येकमें कई राष्ट्रीय जातियां थीं जो राष्ट्रोके रूपमें संघटित नही हो पायी थी पर वे सब एक संयुक्त राजमें एक साथ मिलकर संघटित हो गयीं........ये पूर्वके बहुराष्ट्रीय राज उस राष्ट्रीय दमन और अत्याचारकी जन्मभूमि थे जिसने राष्ट्रीय संघर्षों, राष्ट्रीय आन्दोलनों, राष्ट्रीय समस्या तथा उस समस्याको हल करनेके विभिन्न उपायोंको जन्म दिया।† जारशाहीके जमानेमें रूस भी यूरोपके उन पूर्वी राजोंमेंसे एक था जहां सीमापरके प्रदेशोंपर महान रूसियोके अत्याचारके कारण यह प्रश्न उठ खड़ा हुआ।

'द्वितीय कालमें पूर्वी यूरोपमें पराधीन राष्ट्रों (चेक, पोल और यूक्रेनियन) में जागृति उत्पन्न हुई, उन्होंने अपना संघटन किया जिसके कारण, साम्राज्यवादी युद्धके फलस्वरूप, पुराने बुर्जुआ राष्ट्रीय राजोंका विघटन हुआ और नये राष्ट्रीय राजोंकी स्थापना हुई जो महान शक्तियोंके अधीन हो गये।

'तृतीय काल सोवियत काल है जिसमें पूजीवादका नाश तथा अत्याचार और दमनका अन्त हुआ।'‡

भारतमें विकासका यह रूप नहीं रहा। हमारे यहां निश्चय ही एक केन्द्रित राज रहा जिसका सारे भारतपर तो शासन रहा ही, देशी रियासतोंपर भी आधि-

* 'मार्क्सिजम एण्ड नेशनल एण्ड कोलोनियल क्वेश्चन', पृष्ठ ९९।

† वही, पृष्ठ ९९–१००। ‡ वही, पृष्ठ १००–१०१।

पत्व रहा। किन्तु इस केन्द्रित राजमें भारतके किसी सम्प्रदाय या प्रान्तके हाथमें कोई अधिकार नहीं रहा। यहांकी राष्ट्रीय जातियोंको जो दमन और अत्याचार सहन करना पड़ा वह पूर्वी यूरोप और विशेषतः रूसकी भांति केन्द्रीय अधिकार अपने हाथमें रखनेवाले किसी भारतीय दल अथवा सम्प्रदायके हाथों नहीं, वरन् सबको एक ही केन्द्रीय शक्ति, विदेशी शासन-सत्ताके अत्याचारोंका शिकार होना पड़ा। यहांपर राष्ट्रीय जातियोंके अधिकारोंकी आपसमें ही रक्षा करनेकी समस्या नही है, अपितु सभी राष्ट्रीय जातियोंपर समान रूपसे शासन करनेवाली संयुक्त केन्द्रीय सत्तासे अपने अधिकारोंकी रक्षा करनेकी समस्या है। अतः भारतका मसला यूरोपियन राष्ट्रीय जातियोंकी श्रेणीका नहीं अपितु उपनिवेशोंकी श्रेणी-का है। अतः तर्ककी दृष्टिसे मुख्य और सबसे महत्वपूर्ण प्रश्न ब्रिटेनके साम्राज्य-वादी चंगुलसे मुक्ति पानेका होना चाहिये, न कि पीड़ित राष्ट्रीय जातियोंके एक दूसरेसे पृथक् होनेका होना चाहिये। वस्तुतः इसी बातपर कांग्रेस सबसे अधिक जोर देती रही है।

यह कहा जा सकता है कि जो राष्ट्रीय जातियां अल्पसंख्यक हैं उन्हें यह आश्वासन मिल जाना चाहिये कि जब साम्राज्यवादी शासन और दमनसे मुक्ति मिल जाय तो साम्राज्यवादी शासनका अन्त हो जानेपर शासनारूढ़ होनेवाला बहुसंख्यक दल उनपर उसी भांति अत्याचार न करे। यह आश्वासन प्रदान करनेके लिए रूसके विधानके ढंगपर आत्मनिर्णय अथवा सम्बन्ध विच्छेदका अधिकार कुछ स्वतःसिद्ध और आवश्यक सीमाओंके साथ स्वीकार किया जा सकता है।

'किसी राष्ट्रके स्वतन्त्रतापूर्वक सम्बन्ध विच्छेद कर लेनेके "अधिकार" का अर्थ यह नहीं है कि किसी निश्चित समयपर वह "अवश्य ही" उससे अपना सम्बन्ध विच्छेद कर ले।......जब हम कहींकी पीड़ित जनताके सम्बन्ध-विच्छेदका, अपने राजनीतिक भविष्यका स्वयं निर्णय कर सकनेका अधिकार स्वीकार करते हैं तो इसके द्वारा हम इस प्रश्नका निर्णय नहीं कर डालते कि अमुक राष्ट्र किसी निश्चित समयपर रूसी राजसे पृथक् हो ही जाय। मैं किसी राष्ट्रके सम्बन्ध विच्छेदके अधिकारको भले ही स्वीकार कर लूं परन्तु इसका अर्थ

यह नहीं है कि मै उसे सम्बन्ध विच्छेदके लिए विवश करता हूं। किसी राष्ट्रकी जनताको सम्बन्ध विच्छेदका अधिकार प्राप्त होनेपर यह उसकी इच्छा और परिस्थितियोंपर निर्भर करता है कि वह इस अधिकारका प्रयोग करे या न करे, उससे सम्बन्ध विच्छेद करे या न करे। अतः हम सर्वहारा वर्ग और उसकी क्रान्तिके हितोंको दृष्टिमें रखते हुए किसीको सम्बन्ध विच्छेदके पक्ष या विपक्षमे प्रचार करनेके लिए स्वतन्त्र है। किसी विशेष मामलेमें सम्बन्ध विच्छेदके प्रश्नका निर्णय वर्तमान परिस्थितियोको देखते हुए करना चाहिये। सम्बन्ध विच्छेदके अधिकारका अर्थ किसी भी परिस्थितिमें अवश्य ही सम्बन्ध विच्छेद कर डालना न समझ लेना चाहिये।*' परन्तु भारतमे केवल सम्बन्ध विच्छेदके अधिकारकी स्वीकृतिकी ही माग नही की जाती अपितु, देशसे साम्राज्यवादी शासन उठनेके पूर्व ही, वस्तुतः तत्काल सम्बन्ध विच्छेद कर लेनेकी माग की जाती है।

स्पष्ट है कि श्री स्टालिन और कम्युनिस्ट पार्टी इस बातपर जोर नही देती कि विभिन्न देशोमे वहाकी विशेष परिस्थितियोंकी ओर ध्यान न देते हुए सर्वत्र एकसी नीति बरती जाय। श्री स्टालिन विशेषतः उस क्रान्तिमे भेद करते है जो उन साम्राज्यवादी देशोमे होती है जहाके निवासी अन्य देशोंकी जनतापर अत्याचार करते है तथा जो उन उपनिवेशो और पराधीन देशोमे होती है जो अन्य राजोके साम्राज्यवादी दमनके शिकार बनते है।† वे अपने समर्थनमें अन्तर्राष्ट्रीय कम्युनिस्ट सस्थाके निबन्धमेंसे कुछ अंश उद्धृत करते हुए कहते है कि चीन और भारत जैसे देशोमे 'विदेशी शासन वहांके सामाजिक जीवनके विकासमें निरन्तर बाधा डाला करता है' और 'इसीलिए उपनिवेशोकी क्रान्तिका पहला कदम विदेशी पूजीवादको उखाड़ फेकना होना चाहिये।‡ क्या इससे इस बातका समर्थन नही होता कि भारतमे पहला कदम विदेशी शासनसे मुक्तिका होना चाहियें, न कि देशके विभाजनका?

---

* स्टालिन : मार्क्सिजम एण्ड दि नेशनल एण्ड कोलोनियल क्वेश्चन', पृष्ठ ६४। † वही, पृष्ठ २३२। ‡ वही, पृष्ठ २३६।

यह बात भी स्मरण रखनी चाहिये कि एक ओर जहां कम्युनिस्ट पार्टीने राष्ट्रोके आत्मनिर्णय और अपना स्वतन्त्र राजनीतिक अस्तित्व रखनेके अधिकारकी नीति स्वीकार की वहां दूसरी ओर वह इतने ही जोरदार रूपमें यह बात स्वीकार करती है कि व्यक्तिगत सम्पत्ति और पूजीके नाशके बिना, सामूहिक सम्पत्ति और श्रमकी स्थापनाके बिना और सर्वहारा वर्गके अधिनायकत्वके बिना पीड़ित राष्ट्रीय जातियोकी मुक्ति नहीं हो सकती। अत: केवल एक संघ राजके भीतर सभी लोगोंके भाईचारेके साथ रहनेके लिए दोनो राष्ट्रीय जातियोके सम्बन्ध-विच्छेदके अधिकारकी स्वीकृति तथा सोवियत राज और सर्वहारा वर्गके अधि-नायकत्वकी स्थापनाके सिद्धान्तोंको एक साथ चलनेकी आवश्यकता है। इन दोमेंसे किसी भी एक सिद्धान्तको त्याग देनेसे काम नही चल सकता। यह स्पष्ट है कि दोनो पहलुओके एकीकरणमे अनेक कठिनाइयां उपस्थित होगी और जो लोग मुस्लिम लीगकी पाकिस्तानकी मांगका समर्थन करते है वे इस बातको जानते है। वे इस सम्बन्धमे एक पहलूपर तो बोलते है पर दूसरेपर सर्वथा मौन धारण कर लेते है। इस बातमें भी कुछ रहस्य अवश्य है कि भारत-की कम्युनिस्ट पार्टी लीगके प्रस्तावका जैसा जोरदार समर्थन कर ाही है उसे देखते हुए श्री जिना तथा मुस्लिम लीग यदि उनके प्रति पूर्णत: विरोधी नही तो उपेक्षाका भाव अवश्य रखती है।

१

सप्रू कमेटीके प्रस्ताव

कुछ समय पूर्व सर तेजबहादुर सप्रूकी अध्यक्षतामे ऐसे व्यक्तियोंकी एक कमेटी नियुक्त हुई जो सार्वजनिक जीवनमें तथा ब्रिटिश भारत और देशी रियासतोके उच्च पदोपर रहकर काम कर चुके हैं। कमेटीकी ओरसे यह दावा किया गया कि उसके सदस्य देशके किसी सम्प्रदाय-विशेषसे सम्बद्ध नहीं है और उन्होने भारतकी साम्प्रदायिक समस्या तथा वैधानिक समस्याका हल

खोजनेके लिए उपस्थित किये गये किसी प्रस्तावका समर्थन नहीं किया है, अतः कमेटीको आशा है कि वह ऐसे सुझाव उपस्थित कर सकेगी जो सर्वथा निष्पक्ष होंगे। कमेटीने अपने निर्णय दो खण्डोंमें प्रकाशित किये है। प्रथम खण्डमें केन्द्रमें राष्ट्रीय सरकारकी स्थापनाकी अस्थायी व्यवस्थाके सम्बन्धमें कुछ प्रस्ताव है और द्वितीय खण्डमें भारतके भावी विधानके सम्बन्धमें सुझाव पेश किये गये है। यहा मै द्वितीय खण्डमें उपस्थित किये गये प्रस्तावों की ही चर्चा करूंगा।

कमेटीके प्रकाशित प्रस्तावोंमें भारतकी स्वतन्त्रताके सम्बन्धमें कोई विशेष सिफारिशें नही की गयी है। ब्रिटिश पार्लमेण्टद्वारा इन प्रस्तावोके स्वीकृत होनेकी आशा है। इसके अतिरिक्त ये प्रस्ताव औपनिवेशिक विधान तथा स्वतन्त्र भारतके विधान—दोनों—के उपयुक्त है।

विधान निर्मात्री परिषद्—क्रिप्स प्रस्तावकी धारा 'डी' में इस परिषद्के संघटनकी जो पद्धति दी गयी है उसमें निम्नलिखित संशोधनोंके साथ विधान निर्मात्री परिषद्का संघटन होगा—(१) परिषद्में कुल १६० सदस्य रहेगे जिनमें विशेष हितों—वाणिज्य-व्यवसायों, जमीदारो, विश्वविद्यालयों, मजदूरों और महिलाओं—के १६; दलितवर्गोको छोड़कर हिन्दुओके ५१; मुसलमानोके ५१; दलितवर्गोंके २०; भारतीय ईसाइयोंके ७; सिखोंके ८; पिछड़ी जातियोंके और मूलनिवासियोंके ३; एंग्लो-इण्डियनोंका २; यूरोपियनोंका १ और अन्य लोगोंका एक प्रतिनिधि रहेगा। कमेटीने विधान निर्मातृ परिषद्में १६० सदस्य रखनेकी सिफारिश की है जब कि क्रिप्स प्रस्तावमें कहा गया थो कि सभी असेम्बलियोके कुल सदस्योंकी संख्याके $\frac{1}{10}$ व्यक्ति परिषद्में रहें। उक्त प्रस्तावके अनुसार भी लगभग इतनी ही संख्या होती है। कमेटीके प्रस्तावमें और क्रिप्स प्रस्तावमें यह अन्तर है कि कमेटीके प्रस्तावमें विभिन्न हितों अथवा सम्प्रदायोंके प्रतिनिधियोंकी संख्या निश्चित कर दी गयी है और इस भांति मुसलमानों और दलितवर्गोंके अतिरिक्त अन्य हिन्दुओंको समानताकी श्रेणीपर रख दिया गया है, जब कि क्रिप्स प्रस्तावमें आनुपातिक प्रतिनिधित्वकी पद्धतिपर

चुनावका विधान था जिसके अनुसार असेम्बलियोंमें विभिन्न दलोंके उतने ही प्रतिनिधि पहुंचते जितने प्रतिनिधित्वके अनुसार निश्चित होते, उससे एक भी अधिक नहीं। इस भांति हिन्दुओंकी अपेक्षा मुसलमानोंकी संख्या कहीं कम होती और हिन्दुओंकी संख्या कमेटीके प्रस्तावके अनुसार निर्धारित संख्यासे कहीं अधिक होती। कमेटीने साम्प्रदायिक एकताके उद्देश्यसे इस संशोधनकी सिफारिश की है।

विधानका कोई भी निर्णय उसी समय वैध होगा जब उपस्थित सदस्योंमेंसे तीन चौथाई सदस्य उसका समर्थन करें और मतप्रदान करें। ब्रिटिश सरकार विधान निर्मात्री परिषद्के वैध निर्णयोंके आधारपर विधानको कानूनी रूप प्रदान करेगी और जिन मामलोंपर आवश्यक बहुमत प्राप्त न होगा उनपर आवश्यकतानुरूप अपना निर्णय देगी।

भारतका विभाजन—कमेटी भारतको दो अथवा अधिक पृथक् स्वतन्त्र प्रभुराजोंमें विभक्त करनेके सर्वथा विरुद्ध है, कारण उससे सारे देशकी शान्ति और नियमित प्रगतिमें बाधा पड़ेगी और किसी सम्प्रदायको कोई विशेष सुविधा प्राप्त न होगी।

देशी राज—विधानमें ऐसा आयोजन रहना चाहिये कि देशी राज यदि स्वीकृत शर्तोंपर चाहें तो संयुक्त राजमें इंकाईके रूपमें प्रविष्ट हो सकें, किन्तु संयुक्त राजकी स्थापनाके लिए उसमें सभी कुछ या किसी देशी राजका शामिल होना अनिवार्य न होगा।

सम्मिलित न होना और सम्बन्ध विच्छेद—ब्रिटिश भारतके किसी भी प्रान्तको यह अधिकार न रहे कि वह अपनी इच्छासे संयुक्त राजमें सम्मिलित हो या न हो और न संयुक्त राजमें सम्मिलित किसी प्रान्त या राजको ही यह अधिकार रहे कि वह उससे सम्बन्ध विच्छेदकर पृथक् हो जाय।

भाषा-विज्ञान अथवा संस्कृतिके आधारपर प्रान्तोंकी सीमाके पुनः निर्धारणके नामपर नये विधानमें विलम्ब करना कमेटीकी दृष्टिमें अवांछनीय है। यह कार्य

बादमें हो सकता है। कमेटीने विधान निर्मात्री परिषद्के लिए कुछ सिफारिशें की हैं।

भारतके संयुक्त राजका एक प्रधान रहेगा, जिसे (१) विधानद्वारा स्वीकृत सभी अधिकार प्राप्त रहेगे, और विधानद्वारा निश्चित कर्तव्योंका पालन करना पड़ेगा। (२) वें सभी अधिकार प्राप्त रहेगे जो इस समय इंगलैण्डके सम्राट्को प्राप्त है जिनमें वे अधिकार भी सम्मिलित है जो देशी रियासतोंके सम्बन्धमें सम्राट्को प्राप्त है।

राजके प्रधानका कार्यकाल ५ वर्ष रहेगा और साधारणत: वह एक बारसे अधिक इस पदपर कार्य न करेगा।

राजके प्रधानको (१) या तो संयुक्त राजकी दोनो व्यवस्थापक सभाएं अपने संयुक्त अधिवेशनद्वारा या तो बिना किसी प्रतिबन्धके चुनेगी अथवा उनके लिए यह विकल्प रहेगा कि वे न्यूनतम इतनी जनसख्या अथवा इतनी मालगुजारीवाली देशी रियासतोके शासकोमेंसे चुने जा सकते है, अथवा (२) देशी नरेश अपने बीचमेसे चुनेंगे, अथवा (३) इंगलण्डके सम्राट् सयुक्त राजके मन्त्रिमण्डलके परामर्शसे, उपरिलिखित किसी विधिसे, नामजद करेंगे। यदि तृतीय विकल्प स्वीकार किया जाय और ब्रिटिश सम्राट्से भारतकी कड़ी न टूटे तब भी भारत-मन्त्री तथा उनका य। ब्रिटिश मन्त्रिमण्डलका भारतीय शासनपर जो नियन्त्रण है उसका तो अन्त ही हो जाना चाहिये।

राजका प्रधान संयुक्त राजके मन्त्रिमण्डलकी सलाहसे देशी नरेशोके अतिरिक्त अन्य इकाइयोके अध्यक्षकी नियुक्ति करेगा।

संयुक्त राजकी व्यवस्थापिका सभाएँ—राजके प्रधानके अतिरिक्त दो व्यवस्थापिका सभाए रहेंगी—एक संयुक्त राजकी असेम्बली और एक राज्य परिषद्। असेम्बलीके सदस्योंकी संख्या इस अनुपातमें रहेगी कि जनसंख्याके १० लाख व्यक्तियोंपर एक सदस्य रहे। उसके दस प्रतिशत स्थान विशेष हितों—जमीदार, वाणिज्य और व्यवसाय, मजदूर, महिलाओ—के प्रतिनिधित्व के लिए सुरक्षित रहेंगे। शेष स्थान इन सम्प्रदायोंमें बांट दिये जायंग—सवर्ण

हिन्दू, मुसलमान, दलितवर्ग, सिख, भारतीय ईसाई, एंग्लो-इण्डियन, अन्य सम्प्रदाय। यदि मुसलमान सम्प्रदाय पृथक् साम्प्रदायिक निर्वाचनके लिए स्थान सुरक्षित रखते हुए सर्वत्र संयुक्त निर्वाचनकी पद्धति स्वीकार कर ले तो केवल उसी स्थितिमें, हिन्दुओं और मुसलमानोंकी जनसंख्यामें भारी असमानता रहते हुए भी साम्प्रदायिक ऐक्यके हितकी दृष्टिसे कमेटी यह सिफारिश करेगी कि केन्द्रीय असेम्बलीमें विशेष हितोंको छोड़कर ब्रिटिश भारतके मुसलमानोंका प्रतिनिधित्व सर्वत्र हिन्दुओंके समान रहे।

यदि यह सिफारिश स्वीकृत न हो तो हिन्दू सम्प्रदाय समान प्रतिनिधित्व-की बातको ही अस्वीकार करनेके लिए नहीं अपितु साम्प्रदायिक निर्णयपर पुन-र्विचार करानेके लिए भी स्वतन्त्र होगा।

भारत-शासन-विधानमें सिखों तथा दलितवर्गोंको दिया गया प्रतिनिधित्व अपर्याप्त और अनुचित है। उसमें वृद्धि होना आवश्यक है। उन्हें कितना प्रति-निधित्व दिया जाय इसका निर्णय विधान निर्मातृ परिषद् करेगी।

संयुक्त राजकी असेम्बलीमें विशेष हितोंको छोड़कर अन्य स्थानोंके लिए बालिग मताधिकार रहेगा।

अधिकारोंका विभाजन : अधिकारोंके विभाजनकी विस्तृत सूची विधान निर्मातृ परिषद् प्रस्तुत करेगी। उसके प्रदर्शनके लिए कमेटी इन सिद्धान्तों-की सिफारिश करती है—(क) केन्द्रके यथासम्भव न्यूनतम अधिकार और कार्य रहने चाहिये पर ये बातें अवश्य रहनी चाहिएं—(१) सारे भारतके संयुक्त हितोंके विषय जैसे—परराष्ट्र रक्षा, देशी रियासतोंके सम्बन्ध, यातायात, वाणिज्य, जकात, डाक और तार, (२) इकाइयोंमें होनेवाले झगड़ोंका निपटारा, (३) जहां आवश्यक हो वहां विभिन्न इकाइयोंमें व्यवस्था और शासन-प्रबन्धमें मेल, और (४) ऐसे सभी विषय और कार्य जो सारे भारत अथवा उसके किसी भाग-की शान्ति तथा सुरक्षा और भारतकी राजनीतिक और आर्थिक अखण्डताकी रक्षा तथा विशेष स्थितिका सामना करनेके लिए आवश्यक हो।

अवशिष्ट अधिकार : संयुक्त राज तथा इकाइयोंके विषयों और अधिकारोंकी सूचीमें जो अधिकार न आयेंगे वे इकाइयोंके ही अधिकारमें रहेंगे।

एकसे अन्य इकाईके बीच जकात सम्बन्धी बाधाएं रद कर दी जायंगी परन्तु यदि किन्हीं इकाइयोंपर इसका बुरा असर पड़ेगा तो संयुक्त राजके खजानेसे उनकी पूर्ति की जायगी।

केन्द्रीय सरकार : संयुक्त राजका केन्द्रीय मन्त्रिमण्डल इस अर्थमें संयुक्त रहेगा कि उसमें इन सम्प्रदायोंका प्रतिनिधित्व रहेगा—(१) सवर्ण हिन्दू, (२) मुसलमान, (३) दलितवर्ग, (४) सिख, (५) भारतीय ईसाई, (६) एंग्लो-इण्डियन। मन्त्रिमण्डलमें इन सम्प्रदायोंका प्रतिनिधित्व यथासम्भव उसी अनुपातसे रहेगा जिस अनुपातसे असेम्बलीमें इनका प्रतिनिधित्व होगा।

यदि किसी सम्प्रदायके प्रतिनिधि मन्त्रिमण्डलमें सम्मिलित होनेसे इनकार कर दें तब भी उनके बिना भी मन्त्रिमण्डल विधिवत् स्थापित किया हुआ माना जायगा।

मन्त्रिमण्डल सामूहिक रूपसे असेम्बलीके प्रति उत्तरदायी रहेगा। प्रधान मन्त्री उसका नेता होगा जो कि प्रायः एक ऐसे दलका नेता होगा जिसका या तो स्वयं ही असेम्बलीमें बहुमत होगा अथवा जो अन्य दलोंको अपने साथ रखकर बहुमत बनाये रखनेमें समर्थ होगा। प्रधान मन्त्री और उपप्रधान मन्त्रियोंके पदोंपर सदैव ही कोई एक ही सम्प्रदाय पदारूढ़ न रहेगा।

अन्य मन्त्री प्रधान मन्त्रीकी सलाहसे नियुक्त किये जायंगे। इनमेंसे एक मन्त्री उपप्रधान मन्त्री रहेगा। ऐसा कानून रहेगा कि प्रधान मन्त्री और उपप्रधान मन्त्री एक ही सम्प्रदायके न रहें।

इसके लिए एक विकल्प भी सुझाया गया है। केन्द्रीय व्यवस्थापिका सभा अपने संयुक्त अधिवेशनमें एकमात्र हस्तान्तरित किये जा सकनेवाले वोटकी पद्धतिद्वारा उपर्युक्त प्रकारके मन्त्रिमण्डलका चुनाव करे। इसके मन्त्री व्यवस्थापिका सभाके कार्यकालतक पदारूढ़ रहेंगे। व्यवस्थापिका सभा ही मन्त्रियोंमेंसे एकको अध्यक्ष और एकको उपाध्यक्ष चुनेगी, पर ये दोनों एक ही सम्प्रदायके न होंगे।

देशी राजोंके मन्त्री : एक मन्त्री देशी राजोंके लिए रहेगा। देशी रियासतों सम्बन्धी सभी मामलाका सम्पर्क उसीसे रहेगा। उसके साथ कमसे कम तीन और अधिकसे अधिक पांच व्यक्ति काम करेंगे जो देशी रियासतों सम्बन्धी परामर्शदाता कहलायेंगे और उनका चनाव देशी रियासतोंके परामर्शसे निश्चित पद्धतिद्वारा होगा। मन्त्री सभी महत्वके प्रश्नोंपर इन परामर्शदाताओंसे सलाह लेंगे और विधान कानूनमें निश्चित कुछ मामलोंमें उनकी स्वीकृति प्राप्त करेंगे।

न्याय-व्यवस्था : संयुक्त राजके लिए एक सर्वोच्च न्यायालय रहेगा और प्रत्येक इकाईमें एक हाईकोर्ट रहेगी। न्यायाधीशोंकी संख्या और वेतन विधान-कानूनमें आरम्भमें ही निश्चित की जायगी। उसमें हाईकोर्ट, सम्बन्धित सरकार और सर्वोच्च न्यायालयकी सिफारिश और राजके प्रधानकी स्वीकृतिसे ही कोई संशोधन हो सकेगा पर किसी न्यायाधीशके वेतनमें उसके कार्यकालमें कोई हानिकारी परिवर्तन न किया जायगा।

भारतके प्रधान न्यायाधीशकी नियुक्ति राजके प्रधान करेंगे। सर्वोच्च न्यायालयके अन्य न्यायाधीशोंकी नियुक्ति भी भारतके प्रधान न्यायाधीशकी सलाहसे राजके प्रधान करेंगे। किसी हाईकोर्टके प्रधान न्यायाधीशकी नियुक्ति भी राजके प्रधान उक्त इकाईके प्रधान तथा भारतके प्रधान न्यायाधीशकी सलाहसे करेंगे। हाईकोर्टके अन्य न्यायाधीशोंकी नियुक्ति राजके प्रधान उक्त इकाईके प्रधान, उसीके प्रधान न्यायाधीश तथा भारतके प्रधान न्यायाधीशकी सलाहसे करेंगे। किसी हाईकोर्ट अथवा सर्वोच्च न्यायालयके न्यायाधीशकी कार्यविधि उतनी रहेगी जितनी विधान कानूनमें निश्चित रहेगी।

राजका प्रधान किसी हाईकोर्टके न्यायाधीशको दुर्व्यवहार अथवा मस्तिष्क या शरीरकी खराबीके कारण उसके पदसे पृथक् कर सकता है, बशर्ते कि इसकी रिपोर्ट मांगनेपर सर्वोच्च न्यायालय यह बात कहे कि उपर्युक्त कारणोंसे उक्त न्यायाधीश हटा दिया जाना चाहिये। इन्हीं कारणोंपर राजका प्रधान सर्वोच्च न्यायालयके किसी न्यायाधीशको पृथक् भी कर सकता है बशर्ते कि इन कारणोंकी

जांचके लिए विशेष रूपसे नियुक्त विशेष ट्रिब्यूनल यह रिपोर्ट दे कि उक्त न्यायाधीश हटा दिया जाना चाहिये।

रक्षा : मन्त्रिमण्डलमें रक्षा-विभाग भी रहेगा। उसके लिए एक मन्त्री रहेगा जो व्यवस्थापिका सभाके प्रति उत्तरदायी रहेगा किन्तु सेनाका वास्तविक नियन्त्रण और अनुशासन प्रधान सेनापतिके हाथमें ही रहना चाहिये।

देशमें शीघ्रसे शीघ्र राष्ट्रीय सेना स्थापित की जायगी। ऐसी सेनाकी स्थापनाके लिए कमेटी निम्नलिखित बातोंकी सिफारिश करती है:—

(क) भारतकी रक्षाके निमत्ति जिन ब्रिटिश दस्तोंकी अस्थायी रूपसे आवश्यकता हो तथा पर्याप्त भारतीय अफसर तैयार न होनेतक जिन अफसरोकी आवश्यकता हो उनके सम्बन्धमें संयुक्त राजकी सरकार तथा ब्रिटिश सरकारसे परस्पर सन्धि कर ली जाय और तदनुसार ये सैनिक और अफसर ले लिये जायं।

(ख) युद्ध समाप्त होते ही भारतीय सेनामें ब्रिटिश अफसरोंकी भरती तत्काल बन्द कर दी जाय। जो ब्रिटिश अफसर भारतीय सेनाके अफसर न होगे तथा जिनकी आवश्यकता भी न होगी वे ब्रिटिश सेनामें ही पुनः वापस भेज दिये जायं। एक ऐसी संस्था स्थापित कर दी जाय जिसमें आकाश, जल और स्थल—सेनाओंके लिए पर्याप्त संख्यामें अफसर तैयार किये जायं, उन्हें इसकी शिक्षा प्रदान की जाय। वर्तमान शिक्षा-पद्धतिमें जो दोष हैं वे दूर कर दिये जायं। जिन विश्वविद्यालयोंमें अफसरोंको शिक्षा प्रदान करनेके लिए शिक्षण-संस्थाएं नहीं हैं वहां वे स्थापित की जायं और उनका विस्तार किया जाय।

सरकारी नौकरियोंमें प्रतिनिधित्व : केन्द्रमें इस समय सरकारी नौकरियोंमें विभिन्न सम्प्रदायोंके प्रतिनिधित्वके लिए जो नियम हैं वे उस समयतक जारी रखे जा सकते हैं जबतक नया शासन-विधान लागू न हो। फिर भी कमेटीकी सिफारिश है कि सिखों, भारतीय ईसाइयों, एंग्लो-इण्डियनों और पारसियोंके लिए इस समय जो ८$\frac{१}{३}$ प्रतिशत है वह इस प्रकार विभाजन कर दिया जाय—सिख ३$\frac{१}{२}$ प्रतिशत, भारतीय ईसाई ३ प्रतिशत, एंग्लो इण्डियन और पारसी १$\frac{५}{६}$ प्रतिशत; किन्तु १९३५के भारत शासन-विधानकी धारा

२४२ के अन्तर्गत कुछ नौकरियोंमें एंग्लो-इण्डियनोंके लिए जो विशेष सुविधाएँ प्रदान की गयी है, उनपर इस सिफारिशका कोई प्रभाव न पड़ेगा।

संयुक्त राज और इकाइयोंके पब्लिक सर्विस कमीशनके अध्यक्ष और सदस्योंकी नियुक्ति राजके प्रधान अथवा इकाईके प्रधान संयुक्त राजके अथवा इकाईके प्रधान मन्त्रीकी सलाहसे करेंगे।

सैद्धान्तिक अधिकार : विधानमें सैद्धान्तिक अधिकारोंकी विस्तृत घोषणा होगी जिनमें इन बातोंका आश्वासन रहेगा—(क) वैयक्तिक स्वतन्त्रता, (ख) प्रकाशन और मिलने-जुलनेकी स्वतन्त्रा, (ग) सभी नागरिकोंको नागरिकताके समान अधिकार, (घ) पूर्ण धार्मिक सहिष्णुता, (ङ) सभी सम्प्रदायोंकी भाषा और संस्कृतिकी रक्षा और उन सभी बाधाओं और प्रतिबन्धोंका नाश जो दलित-वर्गोंपर परम्परा अथवा प्रथाके अनुसार लागू हुए हों तथा धार्मिक रीति-रिवाजोंकी रक्षा, जैसे—सिखोंका कृपाण धारण करना।

अल्पसंख्यकोंका कमीशन : केन्द्रमें तथा प्रान्तोंमें अल्पसंख्यकोंका एक स्वतन्त्र कमीशन रहेगा। इसमें असेम्बलीमें पहुँचे हुए विभिन्न सम्प्रदायोंके सदस्यों-द्वारा चुना हुआ प्रत्येक सम्प्रदायका एक-एक प्रतिनिधि रहेगा (यह आवश्यक नहीं है कि प्रतिनिधि उसी सम्प्रदायका सदस्य हो जिस सम्प्रदायका वह प्रतिनिधित्व करे। इसके चुनावमें असेम्बलीका कोई सदस्य खड़ा न हो सकेगा। इस कमेटीके सदस्योंका कार्यकाल असेम्बलीके समकालीन रहेगा। इस कमीशनका कार्य यह होगा कि यह अल्पसंख्यक सम्प्रदायके हितोंपर लगातार ध्यान रखे, इस सम्बन्धमें जिस प्रकारकी सूचना आवश्यक समझे, मांगे, समय-समयपर मौलिक अधिकारों सम्बन्धी नियमोंका उल्लघन करके बरती जानेवाली नीतिकी आलोचना करे तथा प्रधान मन्त्रीके सम्मुख अपनी रिपोर्ट पेश करे। उक्त रिपोर्ट-पर मन्त्रिमण्डल विचार करेगा और प्रधान मन्त्री उक्त कमेटीकी रिपोर्ट तथा उसपर की गयी सारी काररवाईका विवरण असेम्बलीमें उपस्थित करेगा और उसपर वहां वाद-विवाद हो सकेगा।

पंजाबके अल्पसंख्यक : कमेटी यह सिफारिश करती है कि विधान

निर्मातृ परिषद् पञ्जाब असेम्बलीमें सिखों, हिन्दुओं और भारतीय ईसाइयोंके प्रतिनिधित्वके प्रश्नपर गम्भीरतापूर्वक विचार कर कुछ निश्चय करे।

विधानमें संशोधन : विधानके प्रकाशनके ६ मासके पूर्व विधानमें संशोधनका कोई प्रस्ताव संयुक्त राजकी व्यवस्थापिका सभामें न उपस्थित किया जा सकेगा। ऐसा संशोधन उस समयतक स्वीकृत न समझा जायगा जबतक दोनों व्यवस्थापिका सभाओंके कमसे कम दो तिहाई सदस्य उसका समर्थन न करें। इसके अतिरिक्त ऐसे संशोधन उस समयतक व्यवहृत न हो सकेंगे जब-तक इकाइयोंकी असेम्बलीके कमसे कम दो तिहाई सदस्य उसे स्वीकार न कर लें।

विधानमें वर्णित किसी महत्वपूर्ण विषयके सम्बन्धमें कोई भी संशोधन, नया विधान लागू होनेके ५ वर्षके भीतर न किया जा सकेगा।

विभिन्न व्यक्तियोंने विभिन्न दृष्टिकोणोसे इस योजनाकी आलोचना की है। एक दल योजनाके किसी अंशको दोषपूर्ण बताता है तो दूसरा दल उसीकी प्रशंसा करता है। इस प्रकार अनेक आलोचनाएँ तो यो ही एक दूसरेका खण्डन कर देती हैं। इसमें किसी दल-विशेषके दकियानूसी दृष्टिकोणका समर्थन नही किया गया है, यह तर्क इसके पक्षमें उपस्थित किया जा सकता है। एक ओर जहां इसमें मुस्लिम लीगका भारतके विभाजनका प्रस्ताव अस्वीकृत किया गया है वहां विधान निर्मात्री परिषद्, केन्द्रीय असेम्वली तथा संयुक्त राजके मन्त्रिमण्डलमें मुसलमानोंको सवर्ण हिन्दुओंके समान प्रतिनिधित्व देनेकी सिफारिश भी की गयी है। जहां इसमें विधान निर्मात्री परिषद्, केन्द्रीय असेम्वली तथा केन्द्रीय मन्त्रि-मण्डलमें मुसलमानोंको सवर्ण हिन्दुओंके समान प्रतिनिधित्व प्रदान किया गया है वहां इस समान प्रतिनिधित्वके लिए यह शर्त लगा दी गयी है कि मुसलमान पृथक् निर्वाचन पद्धतिका त्याग कर दें। इसने स्वतन्त्रताको अपने क्षेत्रसे बहि-ष्कृत नहीं कर दिया है, अपितु औपनिवेशिक विधानके लिए भी उसीके समान द्वार खुला छोड़ दिया है। इसमें चुनावद्वारा देश राजका प्रधान चुनकेकी व्यवस्था रखी गयी है पर चुनाव करनेवालोंके लिए यह शर्त लगा दी गयी है कि वे देशी नरेशोंमेंसे ही किसीको चुनें। इसमें देशी रियासतोंका सम्पर्क संयुक्त राजके

केन्द्रीय मन्त्रिमण्डलके अधीन कर दिया गया है पर देशी नरेशोंको संयुक्त राजके प्रधानके पदके चुनावमें खड़े होनेकी सुविधा दे दी गयी है। इसमें राजके प्रधानका कार्यकाल ५ वर्ष निर्धारित किया गया है पर इस बातकी सम्भावना है कि बड़ी बड़ी देशी रियासतोंके ही दलमेंसे कोई व्यक्ति प्रधान होगा। इसमें मन्त्रि-मण्डलको असेम्बलीके प्रति उत्तरदायी बनाया गया है। पर उस मन्त्रिमण्डलमें सभी दलोंके प्रतिनिधियोंको रखनेका आयोजन है। इसमें असेम्बलीको साम्प्रदायिक दलोंमे विभक्त कर दिया गया है पर संयुक्त निर्वाचनकी पद्धति रख दी गयी है अत: सभी सम्प्रदायोंको यह छूट है कि वे अन्य दलोंके सदस्योके चुनावपर अपना प्रभाव डाल सकें। इसमें ऐसे प्रतिवन्ध लगाये गये हैं और ऐसा सन्तुलन रखा गया है कि न तो विधान निर्मातृ-परिषद्में और न संयुक्त राजकी असे-म्बली या मन्त्रिमण्डलमें ही किसी साम्प्रदायिक दलका प्रभुत्व हो सके। विधानकी बारीकियां विधान-निर्मातृ परिषद्के लिए छोड़ दी गयी हैं।

अन्य आलोचनाओंको जाने भी दें, फिर भी इस बातका कोई कारण नहीं जान पड़ता कि संयुक्त राजका प्रधान कोई देशी नरेश ही बनाया जाय। साथ ही इसमें इस बातका कोई आयोजन नहीं है कि देशी नरेश अपनी रियासतोंकी प्रजाको अधिकार हस्तान्तरित कर दे। देशी नरेशोंने समष्टि रूपसे ऐसी किसी क्षमता, योग्यता अथवा सहमतिका प्रमाण नहीं दिया है कि वे किसी लोकतन्त्रात्मक विधानमें रहकर कार्य करें और इस बातमें कोई तुक नहीं है कि देशी नरेशोंसे यह कहनेके स्थानपर कि वे प्रजाको अधिकार हस्तान्तरित कर दें, उन्हें केवल अपनी रियासतोंका ही नहीं, सारे भारतका एकछत्राधिकार प्रदान कर दिया जाय।

८

डाक्टर अम्बेडकरकी योजना

डाक्टर अम्बेडकरने साम्प्रदायिक समस्याका एक हल हालमें ही उपस्थित किया है जिसके विषयमें उनका दावा है कि उनका हल पाकिस्तानकी अपेक्षा उत्तम है। आपका हल इस सिद्धान्तपर आधृत है कि बहुसंख्यक सम्प्रदायको कुछ अधिक प्रतिनिधित्व दिया जा सकता है परन्तु उसे कभी भी पूर्ण बहुमत न मिलना चाहिये। यह सिद्धान्त उन प्रान्तोंपर भी लागू होगा जहां मुसलमानोंका बहुमत है। किसी भी स्थितिमें बहुमतको ४० प्रतिशतसे अधिक प्रतिनिधित्व नहीं मिलना चाहिये। डाक्टर अम्बेडकर विधान-सम्मेलनके किसी भी प्रस्तावके पूर्ण विरोधी हैं। आप उसे व्यर्थका कार्य बताते हैं। आप समझते हैं कि १९३५के भारत शासन विधानमें ही भारतका विधान इतने अधिक विस्तृत रूपमें है कि इसी कार्यके लिए विधान सम्मेलन नियुक्त करना पूर्णतः व्यर्थ होगा। उसे वही कार्य दुबारा करना पड़ेगा जब कि आवश्यकता केवल इस बातकी है कि भारत शासन-विधानकी वे धाराएँ निकाल दी जायें जो औपनिवेशिक पदके लिए बेमेल हैं।

असेम्बली, शासन-व्यवस्था तथा नौकरियोंमें साम्प्रदायिक प्रतिनिधित्वको तीन श्रेणियोंमें विभक्त करते हुए डाक्टर अम्बेडकर उन सिद्धान्तोंकी चर्चा करते हैं जिनके आधारपर यह सारी व्यवस्था चलनी चाहिये। आपका कहना है कि नौकरियोंके सम्बन्धमें केवल इतना करना आवश्यक है कि आज शासन विभागकी ओरसे जो पद्धति जारी है उसे कानूनी रूप दे दिया जाय। शासन-व्यवस्थामें हिन्दुओं, मुसलमानों तथा दलितवर्गोंका प्रतिनिधित्व असेम्बलीमें उनके प्रतिनिधित्वकी संख्याके अनुपातसे होना चाहिये। अन्य अल्पसंख्यकोंके प्रतिनिधित्वके लिए दो-एक स्थान सुरक्षित रखने चाहिये तथा इस प्रकारकी पद्धति बना देनी चाहिये कि पार्लमेण्टरी सेक्रेटरियोंमें उनका पर्याप्त प्रतिनिधित्व रहे। पार्लमेण्टरी सेक्रेटरियोंकी संख्यामें और भी वृद्धि करनी पड़ेगी।

असेम्बलीमें जिस दलका बहुमत हो उसीका मन्त्रिमण्डल न होना चाहिये प्रत्युत मन्त्रिमण्डल इस ढंगसे संघटित होना चाहिये कि उसे केवल असेम्बलीके बहुमतवाले दलोंसे ही नहीं, अल्पमतवाले दलोंसे भी शासनादेश प्राप्त हो। वह इस अर्थमें गैर-पार्लमेण्टरी हो कि असेम्बलीके कार्यकालकी समाप्तिके पूर्व वह हटाया न जा सके और इस अर्थमें पार्लमेण्टरी हो कि मन्त्रिमण्डलके सदस्य असेम्बलीके ही सदस्योंमेंसे चुने जायं और उन्हें असेम्बलीमें बैठने, भाषण करने, मत देने और प्रश्नोंका उत्तर देनेका अधिकार प्राप्त हो।

प्रधान मन्त्री मन्त्रिमण्डलका प्रधान होगा। उसपर पूरी असेम्बलीका विश्वास होना चाहिये। मन्त्रिमण्डलमें किसी विशेष अल्पसंख्यक समुदायका जो प्रतिनिधि हो उसपर असेम्बलीके उक्त सम्प्रदायके सदस्योंका विश्वास होना चाहिये। मन्त्रिमण्डलका कोई भी सदस्य केवल तभी पृथक् किया जाय जब असेम्बली उसे भ्रष्टाचार अथवा षड्यन्त्रका दोषी करार दे। इन सिद्धान्तोंके अनुसार बहुसंख्यक समुदायोंसे मन्त्रियों तथा प्रधान मन्त्रियोंका चुनाव असेम्बलीके सभी सदस्य मिलकर एकमात्र हस्तान्तरित किये जा सकनेवाले वोटद्वारा करें तथा अल्पसंख्यक दलके मन्त्रियोंका चुनाव असेम्बलीके प्रत्येक अल्पसंख्यक दलके सदस्य एकमात्र हस्तान्तरित किये जा सकनेवाले वोटद्वारा करें।

विभिन्न सम्प्रदायोंका निम्नलिखित प्रतिनिधित्व रहना चाहिये—

केन्द्रीय असेम्बलीमें—

सम्प्रदाय—	जनसंख्या—	वाञ्छनीय प्रतिनिधित्व
हिन्दू	५४.६८ प्रतिशत	४० प्रतिशत
मुसलमान	२८.५ ,,	३२ ,,
दलितवर्ग	१४.३ ,,	२० ,,
भारतीय ईसाई	१.१६ ,,	३ ,,
सिख	१.४९ ,,	४ ,,
एंग्लो इण्डियन	०.५ ,,	१ ,,

(जनसंख्याका प्रतिशत जनगणनामेंसे आदिवासियोंकी संख्या घटाकर निकाला गया है)

बम्बईमें—

सम्प्रदाय	जनसंख्या	वांछनीय प्रतिनिधित्व
हिन्दू	७६.४२ प्रतिशत	४० प्रतिशत
मुसलमान	९.९८ ,,	२८ ,,
दलितवर्ग	९.६४ ,,	२८ ,,
भारतीय ईसाई	१.७५ ,,	२ ,,
एंग्लो इण्डियन	०.०७ ,,	१ ,,
पारसी	०.४४ ,,	१ ,,

पंजाबमें—

सम्प्रदाय	जनसंख्या	वांछनीय प्रतिनिधित्व
मुसलमान	५७.०६ ,,	४० ,,
हिन्दू	२२.१७ ,,	२८ ,,
सिख	१३.२२ ,,	२१ ,,
दलितवर्ग	४.३९ ,,	९ ,,
भारतीय ईसाई	१.७१ ,,	२ ,,

वितरण निम्नलिखित सिद्धान्तोंपर आवृत बताया गया है—

(१) बहुमतका शासन सिद्धान्ततः अस्वीकार्य और व्यवहार्यतः अनुचित है।

(२) असेम्बलीमें किसी बहुसंख्यक दलको इतना प्रतिनिधित्व न मिल जाना चाहिये कि वह न्यूनतम अल्पसंख्यक दलकी सहायतासे अपना प्रभुत्व स्थापित कर ले।

(३) स्थानोंका वितरण इस ढंगसे न होना चाहिये कि बहुसंख्यक दल और किसी बड़े अल्पसंख्यक दलके मेलसे बने बहुमतद्वारा अल्पसंख्यकोंके हितोंकी सर्वथा उपेक्षा कर दे।

(४) वितरण इस ढंगका होना चाहिये कि यदि सभी अल्पसंख्यक दल आपसमें मिल जायं तो वे बहुसंख्यक दलपर निर्भर हुए बिना ही मन्त्रिमण्डल बना लें।

(५) बहुसंख्यक दलके प्रतिनिधित्वमें जितनी कमी की जाय वह अल्प-संख्यकोंमें उनके सामाजिक स्तर, आर्थिक स्थिति और शिक्षा-सम्बन्धी स्थितिको देखते हुए उल्टे क्रमसे वितरित कर दी जाय ताकि जिस अल्पसंख्यक दल-की सामाजिक, आर्थिक और शिक्षा-सम्बन्धी स्थिति अन्य अल्पसंख्यक दलकी अपेक्षा उन्नत है उसे दूसरेकी अपेक्षा कम प्रतिनिधित्व प्राप्त हो। जो पिछड़ा है उसे अधिक प्रतिनिधित्व मिले।

डाक्टर अम्बेडकरका दावा है कि उनकी योजना मुसलमानोंके लिए पाकि-स्तानकी अपेक्षा उत्तम है। कारण, उसमें (१) साम्प्रदायिक बहुमतका खतरा, जो कि पाकिस्तानका मूल है, सर्वथा जाता रहता है; (२) मुसलमानोंको इस समय जितना प्रतिनिधित्व प्राप्त है उसमें कोई कमी नहीं पड़ती; (३) गैर-पाकिस्तानी प्रान्तोंमें मुसलमानोंके प्रतिनिधित्वमें अत्यधिक वृद्धि हो जाती है जो कि पाकिस्तान स्थापित होनेपर सम्भव ही नहीं है।

डाक्टर अम्बेडकरका हिन्दुओंसे कहना है कि वे बहुमतके शासनपर जोर देना बन्द कर दें, कारण साम्प्रदायिक समस्याकी अधिकांश कठिनाइयोंकी यही जड़ है। उन्हें योजनाके अन्तर्गत जितना बहुमत प्रदान किया जा रहा है उससे तथा अल्पसंख्यकोंको दिये जानेवाले सन्तोषजनक संरक्षणोंसे वे सन्तुष्ट हो जायं।

डाक्टर अम्बेडकरने जो सिद्धान्त उपस्थित किये हैं उनपर थोड़ासा ध्यान देते ही यह बात स्पष्ट हो जाती है कि वे इस कल्पनाको लेकर आगे बढ़ते हैं कि हिन्दू और मुसलमान कभी आपसमें न मिलेंगे अथवा यह कहिये कि उन्हें कभी एकमें न मिलना चाहिये। यह कल्पना न तो सिद्धान्ततः उचित है न व्यव-हार्यतः। उससे यह भी स्पष्ट है कि जहां वे बहुमतका शासन तथा बहु-संख्यक दल और न्यूनतम अल्पसंख्यक दलको संयुक्त बहुमत शासन, सिद्धान्ततः अस्वीकार्य और व्यवहार्यतः अनुचित बताते हैं, वहां उन्हें अल्पमत दलोंका आपसमें

मिलकर बहुसंख्यक दलपर ही नही सभी सयुक्त बहुसंख्यकोपर शासन करना अनुचित नही प्रतीत होता। उन्होने जो आकड़े पेश किये है उनसे यह प्रकट है कि किसी भी वहुसख्यक दलको, फिर वह कितना ही भारी क्यो न हो, वे ४० प्रतिशतसे अधिक प्रतिनिधित्व देनेको प्रस्तुत नही। इसके बाद जो प्रतिनिधित्व बचेगा वह अल्पसंख्यकोमें वितरित कर दिया जायगा। अतः अल्पसंख्यकोके लिए यह सदैव सम्भव बना रहेगा कि वे बहुसख्यक दलको मन्त्रिमण्डल बनानेसे सदा वञ्चित रखें। उन्होने अपना तीसरा सिद्धान्त केन्द्र तथा दो प्रान्तोपर लागू नही किया जिनके कि उन्होने आकड़े दिये है। उन आकड़ोद्वारा केवल इतना ही सम्भव नही कि वहुसंख्यक दल एक बडे अल्पसख्यक दलको अपनेमें मिलाकर काफी वड़ा बहुमत बना ले, अपितु केन्द्र ओर बम्बईके दो बड़े अल्पसंख्यक मिलकर भी ऐसा कर सकते है।

डाक्टर अम्बेडकरका पांचवा सिद्धान्त उत्तम है। किन्तु ऐसा प्रतीत होता है कि वह केवल दलितवर्गोपर लागू होनेके लिए है अन्य लोगोपर नही। यह वात सभो स्वीकार करते है कि आदिवासी सामाजिक, आर्थिक और शिक्षासम्वन्धी सभी दृष्टियोसे देशकी सबसे पिछड़ी जातियोमेसे है। किन्तु सारी योजनामे उनका कही भी जिक्र नही है, केवल एक स्थानपर इतना कहा गया है कि विभिन्न सम्प्रदायोंकी जनसंख्याका प्रतिशत निकालनेमें उनकी सख्या जनगणनासे घटा दी गयी है। ब्रिटिश भारतकी जनसंख्यामें वे ५.६५ प्रतिशतसे कम नहीं है जब कि दलितवर्ग १३.५० प्रतिशत, मुसलमान २६.८३ प्रतिशत, ईसाई १.१८ प्रतिशत ओर सिख १.४१ प्रतिशत है। इन सबके लिए तो विशेष प्रतिनिधित्वकी व्यवस्था है पर उनकी सर्वथा उपेक्षा कर दी गयी है। कुछ प्रान्तोंमें तो उनकी संख्या दलितवर्गोकी संख्यासे भी अधिक है। आसाममें आदिवासी २४.३५ प्रतिशत हैं और दलितवर्ग केवल ६.६३ प्रतिशत। बिहारमें आदिवासी १३.९१ प्रतिशत हैं जब कि दलितवर्ग केवल ११.९४ प्रतिशत है। उड़ीसामें आदिवासी १९.७२ प्रतिशत हैं जब कि दलितवर्ग केवल १४.१९ प्रतिशत है। मध्यप्रान्त और बरारमे उनकी संख्या दलितवर्गोके

लगभग समान है। आदिवासी १७.४७ प्रतिशत हैं और दलितवर्ग १८.१४ प्रतिशत हैं। बम्बईमें आदिबासी ७.७४ प्रतिशत हैं और दलितवर्ग ८.८१ प्रतिशत। बिहार, मध्यप्रान्त और बरार तथा उड़ीसामें उनकी जनसंख्या मुसलमानोंसे अधिक है। इन प्रान्तोंमें मुसलमानोंकी जनसंख्या क्रमशः केवल १२.९८ प्रतिशत, ४.६६ प्रतिशत और १.६८ प्रतिशत है। आदिवासियोंको पृथक् कर देनेका सर्वोत्तम कारण यही है कि भारतकी तथा उपरिलिखित प्रान्तोंकी जनसंख्यामें उनका अनुपात दलितवर्गोंसे और कुछमें मुसलमानोंसे अधिक है। यदि डाक्टर अम्बेडकरका पांचवां सिद्धान्त लागू किया जाय तो अपने पिछड़ेपनके कारण आदिवासियोंको दलितवर्गोंसे भी अधिक प्रतिनिधित्व प्राप्त हो जायगा, और इस प्रकार दलितवर्गों और मुसलमानोंके बीच सारे अधिकार बांट लेनेकी सारी योजना ही उलट जायगी।

विद्वान डाक्टरने जो सिद्धान्त निकाले हैं उनके अतिरिक्त भी कुछ सिद्धान्त उनके प्रस्तावोंसे निकलते हैं। मन्त्रियोंके चुनावमें, अल्पसंख्यकोंको अपने प्रतिनिधि स्वयं चुननेका अधिकार दिया गया है, जब कि बहुसंख्यक दलके मन्त्रियोंका चुनाव असेम्बलीके सभी सदस्य मिलकर एकमात्र हस्तान्तरित किये जा सकनेवाले वोट द्वारा करेंगे।

इसका अर्थ यह होगा कि मन्त्रि-मण्डलमें बहुसंख्यक दलके प्रतिनिधियोंमें, कुलके केवल १६ प्रतिशत, अर्थात् ४० प्रतिशतके ४० प्रतिशत व्यक्तियोंका चुनाव केवल उस दलके सदस्य करेंगे, शेष मन्त्रियोंका अर्थात् मन्त्रि-मण्डलके अधिकांश मन्त्रियोंका चुनाव या तो एकमात्र अल्पसंख्यक दल करेंगे अथवा वे और सबके साथ मिलकर करेंगे। इस भांति मन्त्रि-मण्डलमें अल्पसंख्यकोंके केवल उतने ही प्रतिनिधि न रहेंगे जितना असेम्बलीके कुल सदस्योंमें उनका अनुपात रहेगा, अपितु वे औरोंके साथ मिलकर उन अनेक स्थानोंपर भी अपना प्रतिनिधित्व चुनवा सकते हैं जो बहुसंख्यक सम्प्रदायके लिए रहे हों।

इसके अतिरिक्त हिन्दू और मुसलमान यदि दलितवर्गोंकी सहायता न लें

तो वे आपसमें बिना मिले मन्त्रि-मण्डल स्थापित नहीं कर सकते किन्तु यदि उनमेंसे एक भी सम्प्रदाय दलितवर्गोंसे मिल जाय तो वह दूसरे तथा अन्य अल्पसंख्यकोंकी सहायताके बिना ही मन्त्रि-मण्डल स्थापित कर सकता है।

डाक्टर अम्बेडकरने समाचारपत्रोंमें जिस रूपमें अपनी योजना प्रकाशित करायी है उसमें केवल केन्द्र तथा बम्बई और पञ्जाबके ही आंकड़े दिये हैं। यदि अन्य प्रान्तोंके भी आंकड़े निकाले जायँ तो उनके सिद्धान्तोंका थोथापन प्रकट हुए बिना नहीं रह सकता। उदाहरणतः यह कहना कठिन है कि वे सीमाप्रान्तके शेष ६० प्रतिशत स्थान वहांके कुल ८.२१ प्रतिशत अल्पसंख्यकोंमें किस भांति वितरित करेंगे अथवा उड़ीसामें वे क्या करेंगे, जहां आदिवासियोंको छोड़कर—जिन्हें उन्होंने सर्वथा छोड़ रखा है—दलितवर्ग १४.१९ प्रतिशत, मुसलमान १.६८ प्रतिशत ०.३२ प्रतिशत हैं अर्थात् कुल मिलाकर केवल १६.१९ प्रतिशत अल्पसंख्यक हैं।

९

श्री मानवेन्द्रनाथ रायकी योजना

श्रीमानवेन्द्रनाथ रायने भारतके लिए एक विधानका मसविदा प्रस्तुत किया है। इसमें 'मूल प्रश्नों तथा विवादास्पद समस्याओंपर विचार किया गया है, बारीकियां बादके लिए छोड़ दी गयीं हैं।' 'मूल प्रश्न ये हैं—(१) अधिकार किस विधिसे हस्तान्तरित किये जायँ, (२) राजका संघटन कैसा हो और (३) अधिकार कहांसे प्राप्त हो। अन्य सम्प्रदायोंकी, जैसे दलितवर्गकी स्थिति भी विवादका प्रश्न रही है। इस मसविदेका उद्देश्य मूलप्रश्नोंको उत्तर देना और विवादास्पद प्रश्नोंका हल सुझाना है।' 'इस मसविदेकी मूल कल्पना यह है कि लोकतन्त्रात्मक विधान सारे भारतकी जनताके हाथमें अधिकार आ जानेकी बात सोचकर ही आगे बढ़ता है।' क्रान्तिके बिना विधान सम्मेलन अव्यवहार्य है अतः अधिकार हस्तान्तरित करनेके लिए ब्रिटिश पार्लमेण्ट ही पहले कदम

उठायेगी जो पहले तो जाब्तेसे और कानूनके साथ भारतीय जनताके हाथमें अधिकार हस्तान्तरित करेगी; दूसरे, भारतमें एक वैधानिक सत्ताका जन्म देगी ताकि भारतीय जनता प्रभुसत्ताके अधिकारको व्यवहृत कर सके। 'प्रभुसत्ता हस्तान्तरित करनेके आधारपर एक विधानके स्थानपर दूसरा विधान व्यवहृत करनेके लिए एक अस्थायी सरकारकी अनिवार्य आवश्यकता है। जिस भांति वसीयतके आदेश कार्यान्वित करनेके लिए कुछ व्यक्ति नियुक्त कर दिये जाते हैं उसी भांति ब्रिटिश पार्लमेण्ट ऐसी अस्थायी सरकार नियुक्त करेगी। इस प्रकार उत्तराधिकारका एक बिल बनेगा जिसके अनुसार ब्रिटिश भारत तथा देशी रियासतोंके सभी प्रदेशोंका अधिकार भारतीयोंको प्राप्त होगा, देशी रियासतोंके साथ हुई पुरानी सन्धियां समाप्त हो जायंगी। यह विश्वास करते हुए भावी विधान स्वीकार कर लिया जायगा कि उससे लोकतन्त्रात्मक स्वाधीनताकी स्थापना होगी, एक गवर्नर जेनरल नियुक्त होगा जो अस्थायी सरकारकी नियुक्ति करेगा। अस्थायी सरकार जो न्यायतः अधिकृत होगी और किसी निर्वाचित संस्थाके प्रति उत्तरदायी न होगी, जनताकी कमेटियोंकी प्रादेशिक सीमा और जनसंख्याका आधार निश्चित करेगी, भाषा, विज्ञान तथा सांस्कृतिक एक जातीयता और शासन व्यवस्थाकी सुविधाको ध्यानमें रखते हुए भारतीय प्रान्तोंकी सीमाका पुनः निर्धारण करेगी, जनताकी प्रान्तीय कौंसिलों और प्रान्तीय गवर्नरोंका चुनाव करायेगी और प्रान्तीय मन्त्रिमण्डल स्थापित करेगी, नवस्थापित प्रान्तीय सरकारोंसे पूछकर यह निश्चय करेगी कि कोई प्रान्त भारतके संघराजसे पृथक् तो नहीं रहना चाहता, गवर्नर जेनरल तथा संघ असेम्बलीके उपाध्यक्षोंका चुनाव करायेगी, राज्यपरिषद्के सदस्योंको नामजद करेगी और इस प्रकार भारतकी संघ राजकी जनताकी सर्वोच्च परिषद्की स्थापना करेगी और उन प्रान्तोंमें भी ऐसी ही व्यवस्था करेगी जो भारतके संघराजमें सम्मिलित न होना चाहेंगे। संघ सरकारों तथा प्रान्तीय सरकारोंके मन्त्रिमण्डलोंकी स्थापनाके उपरान्त वह पद त्याग कर देगी।

देशी नरेशोंकी स्थितिसे उत्पन्न होनेवाली कठिनाईको दूर करनेके लिए इस

विधानमें यह उपाय बताया गया है कि ब्रिटिश सरकारसे कहा जायगा कि वह उनसे इस आशयका समझौता कर ले कि वे अपनी रियासतोंपर शासनका अधिकार त्याग दें और उनके लिए कुछ आर्थिक भता या सहायता निश्चित कर दी जाय जिनसे वे सम्मानजनक रीतिसे अपना जीवन यापन कर सकें।

विधानमें मौलिक अधिकारों और मौलिक सिद्धान्तोंकी घोषणाका आयोजन है जिसमें एक घोषणा इस आशयकी भी रहेगी कि 'सभी निर्वाचित संस्थाओंमें अल्पसंख्यकोंके अधिकार पृथक् निर्वाचन पद्धतिके आनुपातिक प्रतिनिधित्वद्वारा सुरक्षित रहेंगे।' संघराजका रूप ओर ढांचा बताते समय उक्त विधानमें कहा गया है कि 'जो प्रान्त संघराजसे पृथक् रहना चाहेगा वह उसकी सम्बद्ध इकाई न बन सकेगा।'

भारतके संघराजकी स्थापनाके पूर्व विधानद्वारा संघटित जनताकी प्रान्तीय कौंसिलोंको ऐसा प्रस्ताव रखनेका अधिकार रहेगा कि हमारा प्रान्त संघराजसे पृथक् रहे। यदि यह प्रस्ताव बहुमतसे स्वीकृत हो जाय तो इसपर बालिग मताधिकारद्वारा प्रान्तकी जनताका मत लिया जायगा। प्रान्तके मतदाता यदि बहुमतसे इस प्रस्तावका समर्थन करें तभी यह व्यवहृत हो सकेगा। संघसे पृथक् रहनेवाले प्रान्त विधानकी धाराओंसे, उन धाराओंको छोड़कर जो कि स्पष्टत: संघके लिए बनी हैं, शासित रहेंगे ओर उन्हें अपना दूसरा संघ स्थापित करनेका अधिकार रहेगा। भारतका संघराज, मुद्रा ओर रेलवे व्यवस्था आदि पारस्परिक हितके प्रश्नोंपर उनके साथ सहयोग ओर पारस्परिक मैत्रीकी सन्धि कर लेगा। भारतका संघराज वृहद् संघ ब्रिटिश राष्ट्र-मण्डलका सदस्य रहेगा और कुछ शर्तोंपर उससे उसकी सन्धि रहेगी। भारतका संघराज संघटित हो जानेपर संघकी सम्बद्ध इकाइयोंको संघसे सम्बन्ध-विच्छेदका जन्मजात अधिकार प्राप्त रहेगा। सम्बन्ध-विच्छेदके प्रस्तावपर प्रान्तीय सरकार जनमत संग्रह करेगी और यदि प्रान्तके मतदाताओंका बहुमत उसका समर्थन करे तो वह अपना सम्बन्ध-विच्छेद कर सकेगा।

विधानमें संघ-असेम्बली, राज्यपरिषद्, जनताकी सर्वोच्च परिषद्, गवर्नर

जेनरल, न्याय और शासनकी अधिकारी सस्थाए, प्रान्त, समाजका आर्थिक संघटन, न्याय-विभाग और स्वायत्त-शासन, आदिके सम्बन्धमे जो बातें दी गयी है उनका सारांश मैने नही दिया है; कारण, उनका हमारे वर्तमान विषय——साम्प्रदायिक समस्या और उसके प्रस्तावित हल पाकिस्तान——से कोई सम्बन्ध नहीं। ऐसे महत्वके प्रश्नोपर यहां चलती हुई चर्चा कर देना अनुचित होगा विशेषत· जब उनमें साम्प्रदायिक समस्याको लेकर कोई विशेष बात नही कही गयी है।

श्री रायने साम्प्रदायिक समस्यापर जो सुझाव रखे है उनका साराश ऊपर दिया गया है। इनके विषयमे श्री रायका दावा है कि 'इसमें मुस्लिम लीगकी मागकी पूर्णतः पूर्ति कर दी गयी है। भारतकी जनताको अधिकार हस्तान्तरित होनेके पूर्व जैसी स्थिति कि आज है, कुछ प्रदेशोके पृथक्करणकी माग कार्य विधिके प्रतिकूल है। मसविदेमे यह समस्या हल कर दी गयी है। भारतको एक वैधानिक इकाई मानकर ही अधिकारोको हस्तान्तरित किया जायगा। तदुपरान्त स्थायी सरकारद्वारा, जो किसी भारतीय निर्वाचित संस्थाके प्रति उत्तरदायी न होगी, पुर्निर्धारित सीमावाले प्रान्त सघमें सम्मिलित होने न होनेके लिए स्वतन्त्र होगे। दूसरी ओर प्रान्तोके सम्बन्ध-विच्छेदकी धारा रखकर मसविदेमें सघ-व्यवस्थावाली शासन-पद्धतिकी आयोजना की गयी है, अत. खण्डनात्मक प्रवृत्तियोके लिए कोई स्थान नही रह गया है। सघवाद और केन्द्रवादका एकीकरण किया गया है।'

यहा इस सम्बन्धमें मुझे केवल यही कहना है कि मुस्लिम लीग विभाजनके प्रश्नको दूर भविष्यपर छोड़ देना चाहती है, न वह जनमतसग्रहके लिए ही प्रस्तुत है, न यही सम्भावना है कि वह भाषा, विज्ञान और सास्कृतिक एकजातीयताके आधारपर प्रान्तोकी सीमाके पुनर्निर्धारणको स्वीकार कर ले, कारण, सम्भव है कि उक्त नयी सीमा धर्म और साम्प्रदायिकताके आधारपर निर्धारित सीमासे मेल न खाये और वह सीमा-निर्धारण भी ऐसी अधिकृत संस्थाद्वारा होनेकी बात कही गयी है जिसके विधानके विषयमें केवल इतना बताया गया है कि वह ब्रिटिश पार्लमेण्टद्वारा नियुक्त गवर्नर जेनरलद्वारा नियुक्त की जायगी। अल्पसंख्यकोंके अधिकारोंकी रक्षाके लिए सभी निर्वाचित सार्वजनिक संस्थाओंमें

पृथक् निर्वाचन-पद्धतिसे आनुपातिक प्रतिनिधित्वकी जो धारा रखी गयी है उससे भी मुस्लिम लीग सन्तुष्ट होनेवाली नहीं।

उपसंहार

पिछले पृष्ठोमें मैंने वे अनेक योजनाएं दी हैं जो मुस्लिम लीगके भारतके पश्चिमोत्तर और पूर्वमें स्वतन्त्र मुस्लिम-राज-स्थापनके प्रस्तावके विकल्पके रूपमें उपस्थित की गयी हैं ताकि पाठक उनपर विचार कर अपना मत निर्धारित कर सकें। मेरे लिए यह आवश्यक नही है कि मै अपनी ओरसे कोई योजना उपस्थित करूं। जहातक मुझे पता है देशमें मुस्लिम लीगके अतिरिक्त अन्य किसी भी साम्प्रदायिक दल अथवा संस्थाने ऐसा कोई प्रस्ताव उपस्थित नहीं किया है कि भारतको स्वतन्त्र मुस्लिम और गैर-मुस्लिम राजोंमें विभक्त कर दिया जाय। स्वय मुसलमानोंमें भी कितने ही दल ऐसे हे जिन्होंने इस प्रस्तावका विरोध किया है। मेरा यह काम नहीं है कि मै यह निश्चित करने बैठूं कि ये दल मुसलमानोंके बहुमत अथवा किसी अंशकी ओरसे बोलनेके अधिकारी हैं अथवा नहीं। और न मेरे प्रतिपाद्य विषयके लिए ही इसकी कुछ आवश्यकता है। मै समझता हूं कि गैर-मुस्लिम संस्थाओंने, बिना किसी अपवादके इसका विरोध किया है। जो लोग विभाजनकी किसी भी योजनाके विरुद्ध हैं वे इन विकल्पोमेंसे किसी भी विकल्पको आधार बनाकर इस विषयमें वार्ता आरम्भ कर सकते हैं तथा ऐसा कोई उचित हल खोज सकते हैं जिससे सभी दल सन्तुष्ट हो जायं। मैं इस बातमें निश्चय ही विश्वास करता हूं कि गोलमेज सम्मेलन बुलाकर सबके लिए सन्तोष-प्रद योजना तैयार की जा सकती है। ऐसा कोई सम्मेलन यदि उपरिलिखित योजनाके ढंगपर ही कोई योजना प्रस्तुत करे तो उससे कोई विशेष लाभ हो सकनेकी सम्भावना प्रतीत नहीं होती। जहांतक मुस्लिम लीगका प्रश्न है उसके अध्यक्ष तथा अन्य नेताओंने यह मत प्रकट कर दिया है कि लीग ऐसी किसी भी योजनापर विचार करनेके लिए प्रस्तुत नहीं है जो लीगके लाहौरवाले प्रस्तावको

स्वीकारकर आगे नही बढ़ती। किसी भी वार्ताके श्रीगणेशके लिए यह आवश्यक है कि उसके पूर्व उक्त प्रस्ताव स्वीकार कर लिया जाय। यह उसकी अनिवार्य शर्त है। अतः लीग ऐसी किसी योजनापर विचार-विनमियके लिए प्रस्तुत नहीं है जो इस प्रस्तावको आधार रूपमें स्वीकार कर आगे नही चलती। इतना ही नहीं कि लीग ऐसी किसी योजनापर वार्ता करनेके लिए प्रस्तुत नहीं जो उसके स्वयं निकाले अर्थको स्वीकार नही कर लेती, अपितु वह स्पष्ट शब्दोंमें उसकी ऐसी व्याख्या करनेसे भी इनकार करती है जिससे सारा चित्र स्पष्ट और समझमें आने लायक हो जाय। श्रीयुत् चक्रवर्ती राजगोपालाचारीने जो प्रस्ताव उपस्थित किया है उसके सम्बन्धमें उनका दावा है कि उसमें लीगके लाहौरवाले प्रस्तावकी सभी शर्तें पूरी हो जाती हैं। लीगके प्रस्तावमें जो बात सिद्धान्त रूपमें और साधारण शब्दोंमें कही गयी है उसीको उन्होंने ठोस रूप देनेकी चेष्टा की है। किन्तु लीगके अध्यक्ष उसपर विचारतक करनेके लिए प्रस्तुत न थे और महात्मा गांधीसे उनकी जो लम्बी वार्ता चली उसमें उन्होंने विस्तारसे उस प्रस्तावपर विचार-विनिमय करनेके स्थानपर महात्माजीको प्रस्तावमें निहित सिद्धान्तों और नीतियोंके सम्बन्धमें 'आदेश देने' की ही चेष्टा की। अतः मुस्लिम लीगको किसी ठोस योजनाकी आवश्यकता नहीं है। इसीलिए मैंने जानबूझकर अपनी ओरसे कोई योजना उपस्थित करनेकी चेष्टा नहीं की है। अस्तु, किसी भी योजनामे दो बातोंका होना आवश्यक है। उसमें सभी सम्प्रदायोके प्रति न्याय होना चाहिये। इतना ही नही, आजकलकी तू-तू मैं-मैं और संकीर्णतासे वह परे होनी चाहिये और उसमें देश और करोड़ों देशवासियोके लिए कोई ठोस वस्तु स्पष्ट दिखायी पड़नी चाहिये जिसपर सबलोग गर्व कर सकें और जिसके लिए सभी लोग लड़ें, जियें और मरें। मनुष्य किसी सम्प्रदायका सदस्य अवश्य होता है, किन्तु इतना ही नही, वह मनुष्य भी होता है और शायद किसी सम्प्रदायका सदस्य होनेकी भावनाकी अपेक्षा उसमें मनुष्यताकी भावना अधिक होती है। ऐसी किसी भी योजनाका कोई मूल्य नही हो सकता जिसमें मनुष्यकी सर्वथा उपेक्षा की गयी हो और साम्प्रदायिक दावेकी मांगसे भी अधिक पूर्ति कर दी गयी हो। इस महान्

देशके निवासियोके लिए तो केवल वैसी ही योजना उपयुक्त हो सकती है जिसमें यहांका छोटासे छोटा नागरिक भी पूर्वकालकी अपेक्षा अधिक प्रसन्न और उत्तम जीवन बिता सके।

भारतवासियोके सम्मुख वस्तुतः दो विकल्प है जिनमेंसे उन्हें एक चुनना है। दो प्रकारकी योजनाएं उनके सम्मुख है—एक देशके विभाजन और देशकी जनताको विभिन्न क्षेत्रो और राष्ट्रीयताओमें विभक्त कर देनेकी है और दूसरी है भारतकी अखण्डताकी रक्षा करने तथा उसके सभी निवासियों, यहातक कि छोटेंसे छोटे दलोकी भी नैतिक, बौद्धिक और भौतिक—सभी प्रकारकी अधिकतम उन्नति करने तथा सभी सामाजिक, राजनीतिक अथवा आर्थिक बाधाओंको पूर्णतः दूर कर देनेकी। देशके सभी निवासियोको, फिर वे चाहे मुसलमान हो चाहे हिन्दू अथवा अन्य कोई, इन दोनोमेंसे एक बात चुननी है। यह निर्णय उन्हें भलीभाति अपनी दोनो आखे खोलकर, पूर्णतः समझ-बूझकर, सारी बातोंको ध्यानमें रखकर, हित-अनहित सोचकर करना है। इसमे जोर जबर्दस्तीका कोई प्रश्न नही उठ सकता। न इसमें अपर पक्षको ठगने या धोखा देनेकी ही कोई बात हो सकती है। इस बातसे इनकार नही किया जा सकता कि ये प्रश्न अत्यधिक महत्वपूर्ण हें और इनका केवल भारतमे ही नही विश्वके अन्य देशोंसे भी सम्बन्ध है। इन बातोंका अन्य देशोके लाखो आदमियोपर प्रभाव डालना अनिवार्य है। हमे हरएक प्रश्नपर ठण्डे मस्तिष्कसे न्यायबुद्धिसे विचार और निश्चय करना चाहिये। यदि हम प्रत्येकके प्रति न्यायबुद्धि रखते हुए अपना निश्चय करेंगे तो ऐसा हल खोजना असम्भव नही है जो सबको स्वीकार्य हो। यह कहना व्यर्थ है कि पिछले दिनों ऐसे समझौतेके सभी प्रयत्न निष्फल हुए है। इससे तो हमारी निर्बलता और आत्मविश्वासकी कमी ही प्रकट होगी।

किन्तु किसी वार्ताको सफल अथवा कमसे कम सम्भव बनानेके लिए हमें 'अल्टिमेटम' देना त्याग देना चाहिये। हमें ऐसी शर्ते लगानी छोड़ देनी चाहिये जिनकी पूर्ति किसी वार्ताका श्रीगणेश होनेके पूर्व ही हो जानी चाहिये। हमें यह मांग करनी छोड़ देनी चाहिये कि हमारी न्यूनतम

इतनी मागें जो अधिकतम कही जा सकती हैं, वार्ता आरम्भ होनेके पहले ही स्वीकृत हो जानी चाहिये। वाद-विवाद, समझाना-बुझाना, लेना और देना—ये मार्ग हमारे सम्मुख खुले है। इसके अतिरिक्त, सभ्य उपाय भी केवल ये ही हैं। अन्य उपायोकी हम कल्पना भी नही कर सकते, भले ही आज सभ्य राष्ट्र व्यापक पैमानेपर उनका प्रयोग कर रहे हों और अखिल विश्व उसका तमाशा देख रहा हो।

अल हमजाने अपनी पुस्तकमें उदाहरण देकर यह दिखानेका प्रयत्न किया है कि पाकिस्तान यूरोपके कुछ न्यूनतम और न्यून देशों और राष्ट्रोसे क्षेत्रफल और जनसंख्यामें बड़ा होगा। यूरोपके न्यूनतम अथवा न्यून देशोसे बडे होकर ही हम क्यो सन्तुष्ट हो जाय? क्यो न हमारा लक्ष्य यह हो कि हमारा भारत यूरोपके महानतम देशोसे, अमेरिकाके महानतम देशोंसे बड़ा और एशियाके महानतम देशोके लगभग बड़ा ही जाय? क्या यह आदर्श नहीं है कि जिसके लिए हम जिये और मरें? इसका अर्थ यह नही है कि हम अपनेसे छोटे और निर्बलोंको दबाने और कुचलनेके लिए बड़ा बनना चाहते है। भारतका दीर्घकालीन इतिहास इस बातका साक्षी है कि उसने कभी अपने किसी पड़ोसी देश अथवा दूरस्थ देशपर कोई अत्याचार नही किया। हम केवल इसलिए बड़ा बनना चाहते है कि हम अपनी सेवा भी कर सकें और दूसरोंकी भी; हम अपने यहांके छोटेसे छोटे-की सेवा कर सकें और अन्य स्थानोंके भी छोटेसे छोटेकी सेवा कर सकें। प्रत्येक सम्भव उपायद्वारा इस सेवाके मार्गकी सभी बाधाओं और कठिनाइयोंको दूर कर दीजिये। बड़ा बन जानेसे दमन और उत्पीड़नका जो प्रलोभन और प्रोत्साहन सम्मुख रहता है उसे प्रत्येक सम्भव उपायसे पूर्णतः नष्ट कर दीजिये। हमें निराश नही होना है और लाचारीका हल नही खोजना है।

इसमें सन्देह नही किया जा सकता कि विभाजन लाचारीका हल है। वह अल्पसंख्यकोंकी समस्याका निराकरण नही कर सकता, भले ही वह उसे विषम न बनाये। पर मुझे तो यह सन्देह है कि इससे समस्या और विषम रूप धारण करेगी। यह अपने पीछे अनेक कटु स्मृतियां छोड़ जायगा। इसके प्रयोगद्वारा,

एक ओर तो प्रसन्नताकी सीमा न रहेगी पर दूसरी ओर क्षोभ और धीरे-धीरे सुलगनेवाली प्रतिक्रिया होगी। इससे वैसे ही झगड़ोंकी जड़ पकड़ेगी जिनके कारण भाई भाईका खून कर देता है और विश्वव्यापी महासमरका जन्म होता है। इसे नगण्य न समझनेमें ही हमारी बुद्धिमत्ता है। हमारी बुद्धिमत्ता इसमें भी है कि हम सद्भाव और मैत्रीके उस कोषको भी नगण्य न समझें जो हमें एक हजार वर्षसे साथ रहने और जीवन बितानेसे प्राप्त हुआ है। उसके कारण आज भी सन्तोष-जनक समझौता होना सम्भव है।

किन्तु यहीपर एक 'किन्तु' आ जाता है जिसकी उपेक्षा सम्भव नही। यदि इन सब बातोंका कोई प्रभाव न पड़े और विभाजन अनिवार्य हो जाय तो उसके बादकी प्रतिक्रियाका सामना करनेके लिए हमें प्रस्तुत रहना चाहिये और मृग-मरीचिकामें न फँस जाना चाहिये कि उसके उपरान्त सारा झगड़ा समाप्त हो जायगा। उसका उत्तम चित्र खीचना जितना सरल है उतना ही सरल उस समयकी विनाशक घटनाओंका चित्रण भी हो सकता है। हमें प्रत्येक स्थितिमें न्यायपरायण और ईमानदार होना चाहिये और यदि वस्तुतः हम सब अपने जीवन और व्यवहारमें ऐसे बन जायं तो सर्वनाश रोकने और उसके कारण उत्पन्न होने-वाली कटुताका प्रभाव कम करनेके लिए अब भी कुछ किया जा सकता है। मैं निराशापूर्ण शब्दोसे इस पुस्तकका अन्त नही करना चाहता। अपने देश-वासियों—हिन्दुओं, मुसलमानो, सिखो, ईसाइयो, पारसियो तथा अन्य लोगो—की न्याय-परायणता और सद्बुद्धिके विषयमे मै निराश नहीं हू और समझता हूं कि वे अवश्य ही ऐसा कुछ महत्वपूर्ण ओर सारगर्भित निर्णय करनेमे समर्थ होंगे जिसपर हमारे आगे आनेवाली पीढ़ियां गर्व कर सकेगी तथा जो किकर्तव्य-विमूढ़ जगतीके लिए एक अनुकरणीय आदर्शका कार्य करेगा। यह केवल तभी सम्भव है जब सत्यरूपी प्रकाश और हिसारूपी पाथेय लेकर हम अपने मार्गपर अग्रसर हों।

हमने अपनी इसी पीढ़ीमे अपनी आखो दो सर्वनाशी महासमर देखे है। प्रथम महासमरके उपरान्त राष्ट्रीय राजोंकी स्थापनाद्वारा राष्ट्रींय जातियोंकी

समस्या हल करनेका जो प्रयोग किया गया वह असफल रहा और उसीके फल-स्वरूप उससे भी बढ़कर व्यापक और सर्वनाशी द्वितीय महासमर हुआ। कुछ लोग कहते हैं कि यूरोपपर ऐसे दो सर्वनाशोंका कोई प्रभाव नही पड़ा है और वह अब भी, अवसर पाते ही युद्धके लिए सन्नद्ध रहनेवाली राष्ट्रीय जातियों-पर अपना नियन्त्रण रखकर, विश्वमे शान्ति बनाये रखनेपर जोर देगा। क्या यह सम्भव नही है कि हम अपने देशमें ऐसा राज स्थापित कर सकें, जो असंख्य मत-भेदों और अनेक कटु-स्मृतियोंके रहते देशकी सारी जनताकी केवल रक्षा ही न करे अपितु उसकी उच्च आकांक्षाओंकी भी पूर्ति करे? इसका अर्थ आत्मनिर्णयसे इनकार करना नही, अपितु उसकी पूर्ति करना है। आवश्य-कता केवल इस बात की है कि सभी ऐसा निश्चय कर लें तथा सद्भाव, प्रेम और ईमानदारीसे इसे व्यवहृत करें।
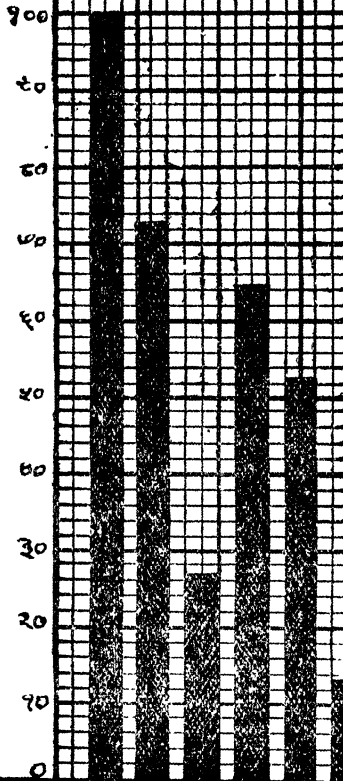
———

देशी रियासतें

जन-संख्या जातियों के अनुसार

	संख्या	फी सदी
क	९०८५७९०१	१००.००
ख	७८१९८३०८	८६.०७
ग	१२६५९५९३	१३.९३
घ	६४११९५५१	७०.५७
च	५५२२७१८०	६०.७८
छ	८८९२३७३	९.७९
ज	८७२८२३३	९.६१
ट	२८३४११९	३.१२
ठ	१५२६३५०	१.६८
ड	९९००५३	१.०९

फी सदी

१००
९०
८०
७०
६०
५०
४०
३०
२०
१०
०
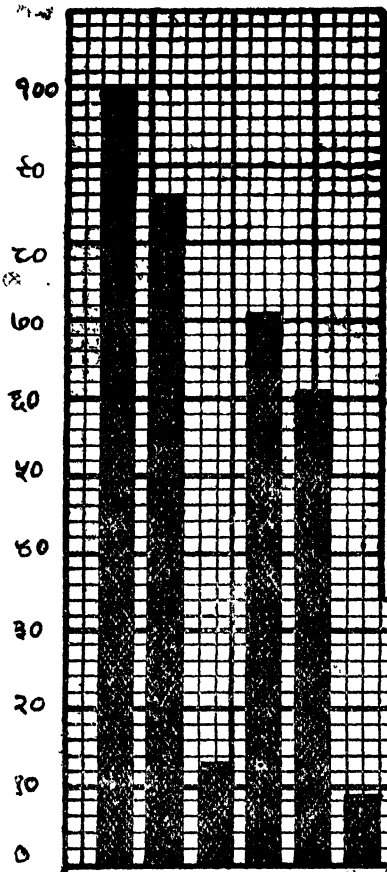
क कुल जोड़
ख गैर-मुस्लिम
ग मुस्लिम
घ हिंदू
च सवर्ण हिंदू
छ दलित जातियां
ज आदि जातियाँ
ट ईसाई
ठ सिक्ख
ड अन्य

सम्पूर्ण भारत (ब्रिटिश तथा देशी राज्य)
जन-संख्या
जातियों के अनुसार
क ३८८९९८६२३ १००·००
ख २९६९४०५२७ ७६·१९
ग ९२०५८०९६ २३·८१
घ २५४९३०५०६ ६५·६३
च २०६११७३२८ ५३·३१
छ ४८८१३१८० १२·६२
ज २५४४१४८९ ६·५८
ट ६३१६५४९ १·६३
ठ ५६९१४४७ १·४७
ड २२२८५३९ ०·५७
१००
९०
८०
७०
६०
५०
४०
३०
२०
१०
०
फी सदी
क कुल जोड़
ख गैर मुस्लिम
ग मुस्लिम
घ हिन्दू
च सवर्ण हिन्दू
छ दलित जातियां
ज आदि जातियां
ट ईसाई
ठ सिख
ड अन्य

हिन्दू बहुमत प्रान्त

फी सदी

१०० ९० ८० ७० ६० ५० ४० ३० २० १० ०

मदरास
गैर मुस्लिम ४५४४४६६३ (९२.१० प्र.श.)
मुस्लिम ३८६६४५२ (७.९ फी सदी)

बम्बई
गैरमुस्लिम १८९२९४७२ (९०.७१ प्र.)
मुस्लिम १९२०३६८ (९.२९ फी सदी)

सी.पी.
गैरमुस्लिम ४६६०४३०९ (८४.७०)
मुस्लिम ८४१६३०८ (१५.३० फी सदी)

बहार व बरार
गैरमुस्लिम ३१६२३८३७ (८७.०२ प्र.)
मुस्लिम ४७१६३१४ (१२.९८ फी सदी)
गैरमुस्लिम १६०२६८८७ (९५.३४ प्र.)
मुस्लिम ७८३६१७ (४.६६ फी सदी)

उड़ीसा
गैरमुस्लिम ८५८२२४३ (९८.३२ प्र.)
मुस्लिम १४६३०२ (१.६८ फी सदी)

पाकिस्तान–उत्तर-पश्चिमी क्षेत्र
प्रान्तों के आधार पर
सिन्ध, सीमाप्रान्त, बिलूचिस्तान और पंजाब

१००
९०
८०
७०
६०
५०
४०
३०
२०
१०
०

क जोड़
ख गैरमुस्लिम
ग मुस्लिम
घ हिन्दू
च सवर्ण हिन्दू
छ दलितवर्ग
ज सिक्ख
ट ईसाई
ठ आदि-जातियां
ड अन्य

जातिवार जन-संख्या

	संख्या	फीसदी
क	३६४९३५२५	१००.००
ख	१३८४०२३१	३७.९३
ग	२२६५३२९४	६२.०७
घ	९००५२४२	२४.६८
च	७५५९८७१	२०.७२
छ	१४४५३७१	३.९६
ज	३८५८२९९	१०.५७
ट	५४२०४१	१.४८
ठ	३६८२२	०.१०
ड	३९७२५७	१.०९

पाकिस्तान — पूर्वी क्षेत्र
जिलों के आधार पर

बंगाल— बर्दवान कमिश्नरी तथा चौबीस परगना, कलकत्ता, खुलना, जलपाइगुड़ी, दार्जिलिंग जिलों को छोड़कर।

आसाम— केवल सिलहट जिला

जातिवार जनसंख्या

	संख्या	फी सदी
क	४५०८१३८१	१००.००
ख	१३४७८८०२	३०.५८
ग	३०६०२५७९	६९.४२
घ	१२५३४००९	२८.४३
च	८२४९१६८	१८.७९
छ	४२८४८४१	९.५२
ज	५७७८७	०.१३
ट	७७६५२२	१.७६
ठ	११०४८५	०.२५

१००
९०
८०
७०
६०
५०
४०
३०
२०
१०
०

जोड़ | गैर मुस्लिम | मुस्लिम | हिन्दू | सवर्ण हिंदू | दलितवर्ग | ईसाई | आदि जाति | अन्य

पाकिस्तान – पूर्वी क्षेत्र
प्रान्तोंके आधार पर
(बंगाल और आसाम)

जातिवार जन संख्या
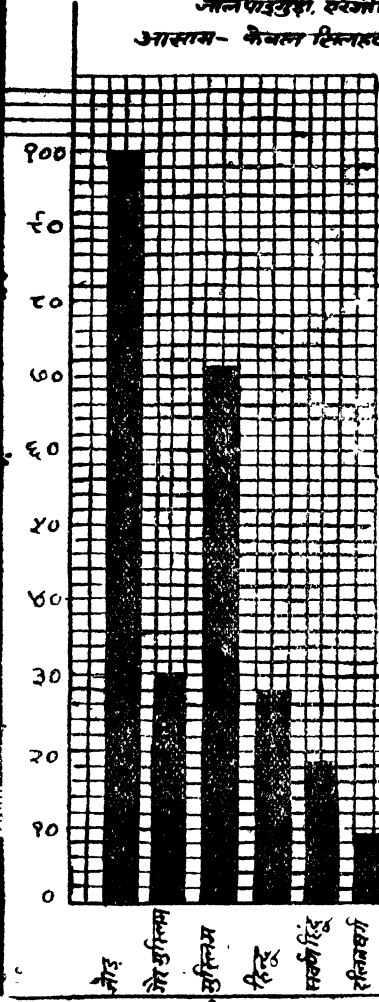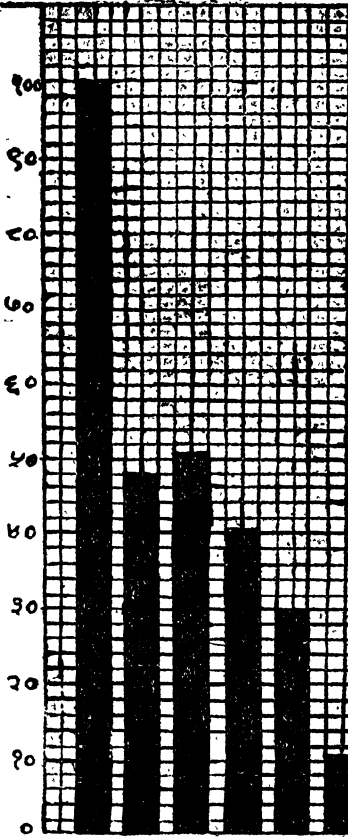
	संख्या	फी सदी
क	७०५११२५८	१००.००
ख	३४०६३३४५	४८.३१
ग	३६४४७९१३	५१.६९
घ	२९२७२२४७	४१.५१
च	२१२१६९८६	३०.०९
छ	८०५५२६१	११.४२
ज	२०७३१९	०.२९
ट	४३७४३८५	६.२०
ठ	२०९३९७	०.३०

उद्योग धन्धे

मजदूरों की दैनिक औसत संख्या के अनुसार

		ब्रिटिश भारत संख्या	ब्रिटिश भारत फी सदी	हिन्दू क्षेत्र संख्या	हिन्दू क्षेत्र फी सदी	मुस्लिम क्षेत्र संख्या	मुस्लिम क्षेत्र फी सदी
सरकारी तथा स्थानीय पूंजी के कारखाने	स्थायी	१३१०६६	७.४८	१०३९२३	४.९०	२७९६३	१.६०
	मौसिमी	१३६०	०.०८	१०२३	०.०६	३४५	०.०२
अन्य कारखाने	स्थायी	१३२९२४८	७४.९१	१२४९३५८	७१.११	६९८९०	३.९९
	मौसिमी	२८९४४३	१६.४०	२५८७९६	१४.७८	३०६४७	१.७५
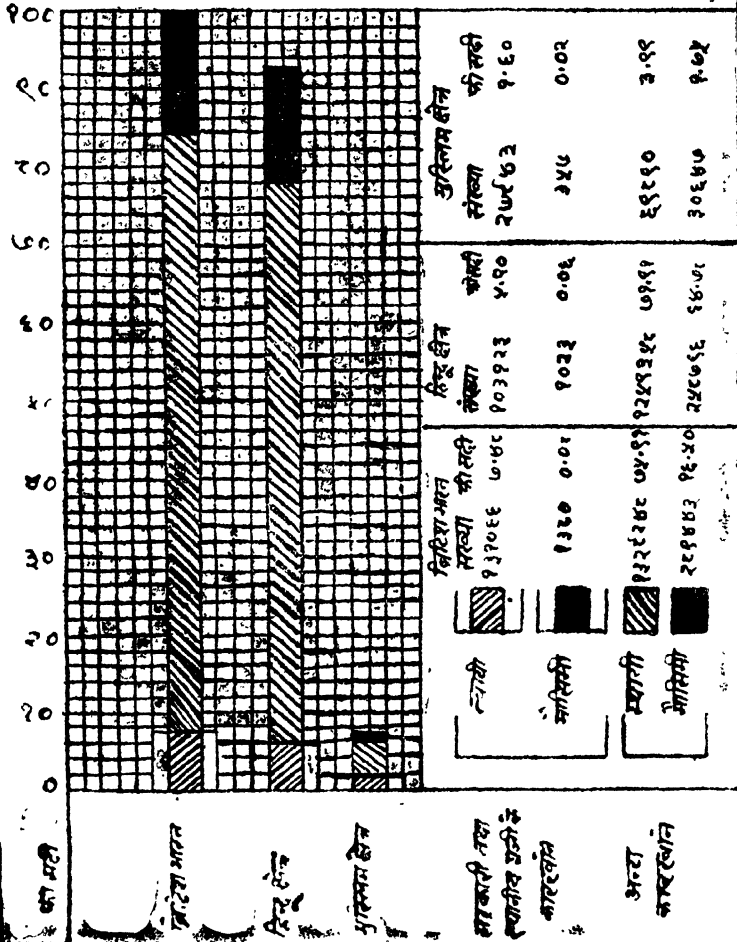
खनिज (मूल्य के आधार पर)

ब्रिटिश भारत तथा मुस्लिम और गैर मुस्लिम क्षेत्रों में

१९३८

फी सदी

० १० २० ३० ४० ५० ६० ७० ८० ९० १००

ब्रिटिश भारत

हिन्दू क्षेत्र

मुस्लिम क्षेत्र

	ब्रिटिश भारत		हिन्दू क्षेत्र		मुस्लिम क्षेत्र	
	रुपया	फीसदी	रुपया	फीसदी	रुपया	फीसदी
कोयला	९४६३०७१८	६१.५०	९३५९८०५०	६०.७९	११९२६६८	०.७२
पेट्रोल	१६५४३१४२	१०.७६	११२६४७८७	७.३३	५२७८३५५	३.४३
कच्चा तांबा	३२८०६८०	२.१०	३२८०६८०	२.१०	...	...
कच्चा लोहा	२६११८२९	१.७५	२६११८२९	१.७५	...	...
मैंगनीज़	३२०१३७०१	२०.८६	३२०१३७०१	२०.८६	...	...
अभ्रक	४०८१४८८	२.७०	४०८१४८८	२.७०	...	...
क्रोमाइट या मैगनेसाइट	३६०८७८	०.३७	२३४८०४	०.१६	१२६०७४	०.२१

शिमला सम्मेलनके बाद

हिन्दू-मुस्लिम समस्या हल करनेके प्रयासके इतिहासका वर्णन १९४५ की जुलाईके शिमला-सम्मेलनतकका दिया गया है। उसके बाद और भी कुछ घटनाएं हुई हैं जिनका समावेश इस द्वितीय संस्करणमें कर देनेसे हालतककी घटनाएं इस पुस्तकमें आ जाती हैं। १९४४ में महात्मा गांधी तथा श्री जिनाके बीच जो वार्तालाप हुआ था, उस बातचीतके सिलसिलेमें यह बात पहले-पहल स्पष्ट रूपसे सामने आयी थी कि मुस्लिम राष्ट्रमें शामिल किये जानेवाले क्षेत्रोंकी सीमा निर्धारित करनेमें यह देखनेके लिए कि अमुक इकाई मुस्लिम प्रधान क्षेत्र है या नहीं, प्रान्तको ही इकाई माना जायगा, न कि जिलोंको या किसी छोटे हलकेको। इस सम्बन्धमें मुस्लिम लीग तथा उसके कर्णधारोंने अपना मत प्रकट करनेसे साफ इनकार कर दिया था जबतक कि श्री राजगोपालाचारीका यह फार्मूला सामने नहीं आया कि उत्तर-पश्चिमी तथा उत्तर-पूर्वी भारतमें जहां मुसलमानोंकी जनसंख्या स्पष्ट बहुसंख्यक है वहां एकदेशीय क्षेत्रोंकी सीमा निर्धारित करनेके लिए कमीशन नियुक्त किया जायगा और इस तरह उन्होंने श्री जिनाको मजबूर कर दिया और लाचार होकर श्री जिनाने ४ थी अक्तूबरको लन्दनके 'न्यूज क्रानिकल' पत्रके प्रतिनिधिसे बातचीतमें कह दिया कि 'हिन्दुस्तानका बंटवारा पाकिस्तान तथा हिन्दुस्तान, जो प्रभुराष्ट्रोंमें होना चाहिये जिसमें समस्त उत्तर-पश्चिमी सीमाप्रान्त, बलूचिस्तान, सिन्ध, पञ्जाब, बंगाल तथा आसाम आजकी भांति बने रहें और उन्हें प्रभुसत्ता प्राप्त स्वतन्त्र मुस्लिम राष्ट्र मान लिया जाय।* ५ अक्तूबर १९४४ को लन्दनके डेली वर्कर पत्रके प्रतिनिधसे एक दूसरी मुलाकातमें श्री जिनाने कहा—'पाकिस्तानकी मांगके महत्वको पूरी तरह समझनेके लिए यह बात ध्यानमें रखना नितान्त आवश्यक है कि छहों

---

* जिना-गांधी टाक्स पृष्ठ ७५।

प्रान्त अर्थात् उत्तर-पश्चिमी सीमाप्रान्त, बलूचिस्तान, सिन्ध, पञ्जाब (उत्तर-पश्चिममें) तथा बंगाल और आसाम (उत्तर-पूर्वमें) की मुस्लिम जनसंख्या ७ करोड़ है जो कुल आबादीकी ७० फीसदीसे किसी भी हालतमें कम नहीं होगी।'* गांधी-जिना वार्ताकी समाप्तिपर एक प्रेस कान्फरेन्समें श्री जिनाने लाहौरवाले प्रस्तावके सम्बन्धमें एक प्रश्नका हवाला दिया जिसमें कहा गया कि बंटवारा इन छहों प्रान्तों—उत्तर-पश्चिमी सीमाप्रान्त, सिन्ध, पञ्जाब, बलूचिस्तान, बंगाल तथा आसाम—की वर्तमान सीमाके आधारपर ही होना चाहिये। आवश्यकता होनेपर कुछ भूमि-भागको इधर-उधर किया जा सकता है। उन्होंने "आवश्यकता होनेपर" वाक्यांशपर बहुत ज्यादा जोर देते हुए कहा कि 'भौमिक निपटारा केवल एकहीके लिए लागू नहीं है, बल्कि हिन्दुस्तान तथा पाकिस्तान दोनों-तरफके लिए लागू है।'† इससे उन्होंने यह स्पष्ट कर दिया कि सीमा-निर्धारणका काम बादको उसी तरह किया जायगा जिस तरह दो राष्ट्रोंकी सीमाको निर्धारित करनेकी समस्या हल की जाती है। इस तरह यह स्पष्ट कर दिया गया कि इकाई प्रान्त होंगे, उससे कम कोई क्षेत्र , कमिश्नरी, जिला, ताल्लुका या सब-डिवीजन नहीं। तो भी एक प्रश्न अस्पष्ट ही रह गया। वह था भौमिक निपटाराका प्रश्न। हम आगे चलकर देखेंगे कि इसकी व्याख्या किस तरह की जाती है।

श्री जिनाने लन्दनके डेली वर्कर पत्रके प्रतिनिधिको जो यह वक्तव्य दिया था कि पाकिस्तानकी सीमा इस तरह स्थिर की गयी है कि उसके अन्दर ऊपर बताये गये ६ प्रान्त आ जायं जिनमें मुसलमानोंकी जनसंख्या ७ करोड़से कम नही होगी और यह जनसंख्या समूची आबादीकी ७० फीसदी होगी' उसपर हमें दृष्टिपात करना चाहिये। इससे स्पष्ट है कि श्री जिना आंकड़ोंमें विश्वास नही करते और यह मान लेते हैं कि हजारों वर्षोंके इतिहास और भूगोलकी भांति आंकड़े भी महज भ्रान्त धारणाके द्वारा नियन्त्रित किये और बदले जा सकते है। इस पुस्तकके पिछले पन्नोंमें जनसंख्याकी जो तालिका दी गयी है उसे देखनेसे

---

* वही पृष्ठ ७९। † वही पृष्ठ ७२।

साफ विदित हो जायगा कि उत्तर-पश्चिमी क्षेत्रके चार प्रान्तों—पञ्जाब, सिन्ध, बलूचिस्तान, उत्तर-पश्चिमी सीमाप्रान्त—की कुल जनसंख्या ३,६४,९३,५२५ है। इसमें २,२६,५३,२९४ अर्थात् ६२.०७ फीसदी मुसलमान हैं। इसी तरह उत्तर-पूर्वी क्षेत्रके बंगाल और आसाम प्रान्तकी कुल जनसंख्या ७,०५,११,२५८ है। उसमें ३,६४,४७,०१३ अर्थात् ५१.६९ फीसदी मुसलमान हैं। यदि दोनों क्षेत्रोंको एकमें मिला दिया जाय तो दोनोंकी कुल आबादी १०,७०,०४,७८३ होगी और उसमें ५,९१,०१,२०७ अर्थात् ५५.२३ फीसदी मुसलमान होंगे। इन आंकड़ोंसे साफ प्रकट होता है कि दोनों क्षेत्रोंको मिलाकर मुसलमानोंकी आबादी ५ करोड़ ९० लाख होती है, न कि ७ करोड़ जैसा कि श्री जिनाने कहा है और दोनों सम्प्रदायोंके अनुपातमें मुसलमानोंकी संख्या केवल ५५.२३ फीसदी है न कि ७० फीसदी।

जिस भौमिक निपटारेकी चर्चा ऊपर की गयी है उस सम्बन्धमें भी कुछ स्पष्टीकरण प्राप्त हो सका है। वी. वी. सी. के श्री डोनाल्ड एडवर्डके साथ बात-चीतके सिलसिलेमें श्री जिनासे पूछा गया कि दोनां क्षेत्रोंसे पाकिस्तान राज कायम करना कठिन काम होगा—जबकि दोनों क्षेत्र, एक हिन्दुस्तानके उत्तर पश्चिम और दूसरा उत्तर पूर्वमें—हजार मीलकी दूरीपर हैं और दोनोंके बीचमें हिन्दू क्षेत्र पड़कर दोनोंको अलग कर रहे है। इसके उत्तरमें श्री जिनाने कहा:—जब आप ग्रेड ब्रिटेनसे ब्रिटिश कामनवेल्थके दूसरे भागोंके लिए रवाना होते हैं तो आपको अनेक विदेशी मुल्कोंसे होकर गुजरना पड़ता है—उदाहरणके लिए स्वेज नहर। आपसी प्रबन्धसे यह सब ठीक हो जाता है। आज भी तो हमलोग इस उत्तर पूर्वी मुस्लिम क्षेत्रसे उत्तर पश्चिमी मुस्लिम क्षेत्रमें बिना किसी कठिनाईके तथा कथित हिन्दू क्षेत्रसे होकर आते जाते हैं। यह व्यवस्था उस समय भी क्यों जारी नही रहेगी ? जो राज उनके साथ मैत्रीपूर्ण भाव रखना चाहता है उस पड़ोसी राजके रास्तेमें हिन्दुओंको किसी तरहकी बाधा नहीं उपस्थित करना चाहिये। उत्तर–पश्चिमी मुस्लिम क्षेत्र तथा उत्तर–पूर्वी मुस्लिम क्षेत्रके बीच यातायातका मार्ग बन्द कर

देनेका अधिकार उन्हें नहीं होगा। सन्धिकी शर्तोंमें एक शर्त यह भी होगी।*

इस वक्तव्यसे यह भी स्पष्ट हो जाता है कि उत्तर–पश्चिम तथा उत्तरपूर्वके दोनों मुस्लिम राष्ट्रोंको मिलाकर एक मुस्लिम राज कायम किया जायगा। लेकिन लीगके १९४० के लाहौरके प्रस्तावमें ऐसी कोई बात नहीं है। उसमें स्पष्ट उल्लेख है कि उत्तर-पश्चिम तथा उत्तर-पूर्वके जिन क्षेत्रोंमें मुसलमान बहुसंख्यक हैं उन्हें एकमें मिलाकर स्वतन्त्र मुस्लिम राज कायम किये जायंगे, एक मुस्लिम राजकी तो कहीं चर्चा भी नहीं है। अब श्री जिनाने यह दावा भी पेश कर दिया है कि दोनों क्षेत्रोंको मिलाकर एक मुस्लिम राजकी स्थापना ही नहीं की जायगी बल्कि दोनों क्षेत्रोंके बीचवाले हिन्दू इलाकोंको एक हजार मील लम्बा रास्ता भी देना पड़ेगा। आप फरमाते हैं कि आज भी दोनों क्षेत्रोंमें आने-जानेका स्वतन्त्र मार्ग है तब उस समय यह कायम क्यों नहीं रहेगा? इसका तो बहुत ही सरल उत्तर यह है कि आज उत्तर–पश्चिम तथा उत्तर-पूर्वके दोनों क्षेत्र तथा उनके बीचके इलाके एक ही राजके शासनके अधीन हैं। इसलिए यातायातकी उन्हें स्वतन्त्रता ही नहीं है बल्कि वे एक ही केन्द्रीय सरकारके अधीन हैं जिसकी राजधानी दिल्ली है। विभाजनके बाद पाकिस्तान और हिन्दुस्तानके दोनों क्षेत्र स्वतन्त्र प्रभुसत्ता प्राप्त राज हो जायंगे। इसलिए अपने राजके एक भागसे दूसरे भागमें जानेके लिए एक स्वतन्त्र राजको दूसरा स्वतन्त्र राज अपने राजसे होकर रास्ता क्यों देगा?

उसी मुलाकातमें श्री जिनासे यह सवाल भी किया गया था कि आसाममें हिन्दुओंकी तादाद बहुत ज्यादा होते हुए भी उसे पाकिस्तानमें क्यों शामिल किया जायगा। इसके उत्तरमें श्री जिनाने कहा:—पाकिस्तानमें शामिल कर लेनेके सिवा आसामकी कहीं अन्यत्र गुजर नहीं है। इससे श्री जिनाका यह अभिप्राय मालूम होता है कि बंगालके पाकिस्तानमें मिला लिये जानेके बाद आसाम समस्त हिन्दुस्तानसे कट जाता है इसलिए उसे पाकिस्तानके पूर्वी क्षेत्रमें मिला देना ही उपयुक्त होगा। लेकिन आसाम हिन्दुस्तानसे तभी अलग हो सकता है जब जल-

---

* दी डान २-४-४६

पाईगुड़ी और दार्जिलिगके जिले—जिसमें मुसलमानोंकी संख्या क्रमशः २३ और २४ फी सदी है तथा कूचबिहारकी हिन्दू रियासत जिसमें ६२ फीसदी हिन्दू हैं—मुस्लिम क्षेत्रमें शामिल कर लिये जायँगे। इस प्रश्नपर विचार करते समय कि पाकिस्तानके प्रभुराजमें कौनसे क्षेत्र शामिल किये जायंगे, ईमानदारी तथा न्यायको ताकपर रख दिया जाता है। पंजाब, बंगाल तथा आसाम प्रान्तके उन जिलोंको—जहां हिन्दुओंकी जन-संख्या बहुत अधिक है—इसलिए पाकिस्तानमें शामिल कर लिये जायंगे चूंकि इस समय वे उन प्रान्तोंके अंग है जिन्हें मुस्लिम बहुसंख्यक प्रान्तकी संज्ञा दी गयी है। दोनों मुस्लिम क्षेत्रोके बीच रास्ता देनेके लिए हिन्दू किसी तरहकी बाधा नहीं उपस्थित कर सकते और आसामको पाकिस्तानके मुस्लिम क्षेत्रमें इसलिए मिला लिया जायगा कि वह हिन्दुस्तानसे कट जाता है। आसाम हिन्दुस्तानसे इसलिए कट जाता है कि पाकिस्तान राजके हिन्दू बहुसंख्यक जिलोंसे होकर भी आसाम जाने-आनेका रास्ता मुस्लिम राज नहीं देगा। यह उसी कहावतको चरितार्थ करता है कि चित् पड़ा तो तुम हारे, और पट पड़ा तो हम जीते।

हालमें एक दूसरी बात भी पैदा हो जाती है। बंगालके मुस्लिम लीग मन्त्रिमण्डलके प्रधानमन्त्री श्री सुहरावर्दीका यह दावा है कि पाकिस्तानके पूर्वी क्षेत्रमें केवल बंगाल और आसाम प्रान्त ही नहीं शामिल किया जाना चाहिये बल्कि विहार प्रान्तके सिंहभूम, मानभूम, सन्थाल परगना तथा पूर्णिया जिलेको शामिल किया जाना चाहिये। वे पूर्वी क्षेत्रके अंग होंगे। उसी समय पाकिस्तान यह दावा पेश करने योग्य होगा कि कच्चा लोहा तथा तांबाका अधिक भाग, कोयला तथा मिट्टीके तेलका बहुत बड़ा हिस्सा तथा अन्य अनेक धातु जो हिन्दुस्तानमें पाये जाते हैं, पाकिस्तान क्षेत्रमें है। क्योंकि लोग इस बातपर बहुत जोर देते दिखायी देते हैं कि पाकिस्तानमें उपर्युक्त आवश्यक धातुओंका बहुत बड़ा अभाव होगा जिनकी उपेक्षा कोई भी स्वतन्त्र राज नहीं कर सकता। इसका उत्तर श्री सुहरावर्दी विहार प्रान्तके उपर्युक्त जिलोंको पाकिस्तान क्षेत्रमें शामिल करके देते है। इस उपायसे पाकिस्तान राज आत्म-निर्भर बना दिया जायगा। इसकी उन्हें कोई परवा नहीं है कि ये जिले उन प्रान्तोंमें नहीं हैं जिसे पाकिस्तानमें शामिल करनेकी चर्चा है और इन जिलोंकी मुस्लिम आबादी भी बहुत कम अर्थात् कुल जन-संख्याकी केवल १८.१२ फीसदी है।

तालिका

उत्तर–पश्चिमी तथा उत्तर–पूर्वी क्षेत्रके मुसलमानों और गैर-मुसलमानोकी आबादी। बिहारके उपरोक्त चारों जिलोंकी आबादी भी इसमें शामिल है।

उत्तर–पश्चिमी क्षेत्र	३,६४,९३,५२५	२,२६,५३,२९४	६२.०७	१,३८,४०,२३१	३७.९२
बंगाल और आसाम	७,०५,११,२५८	३,६४,४७,९१३	५१.६९	३,४०,६३,३४५	४८.३०
दोनोंका जोड़	१०,७०,०४,७८३	५,९१,०१,२०७	५५.२३	४,७९,०३,५७६	४४.७६
बिहारके जिले:—					
पूर्णिया	२३,९०,१०५	९,७६,०४८	४०.८४	१४,१४,०५७	५९.१६
सन्थाल परगना	२२,३४,४९७	२,६२,८३६	११.७६	१९,७१,६६१	८८.२४
मानभूम	२०,३२,१४६	१,३२,२३४	६.५१	१८,९९,९१२	९३.४९
सिंहभूमि	११,४४,७१७	४३,२३३	३.७७	११,०१,४८४	९६.२३
चारों जिलोंका जोड़	७८,०१,४६५	१४,१४,३५१	१८.१२	६३,८७,११४	८१.८७
कुल जोड़	११,४८,०६,२४८	६,०५,१५,५५८	५२.७१	५,४२,९०,६९०	४७.२८

यहांपर यह उल्लेखकर देना अनुचित नहीं होगा कि विहारके इन जिलोंको पूर्वी मुस्लिम क्षेत्रमें मिला देनेके बाद मुसलमानोंकी जन-संख्या ४८.३४ फीसदी हो जायगी अर्थात् बहुसंख्यक सम्प्रदाय न रहकर वे अल्पसंख्यक सम्प्रदाय बन जायंगे और उस क्षेत्रमें बहुसंख्यक सम्प्रदाय होनेके नाते उस क्षेत्रमें स्वतन्त्र मुस्लिम राष्ट्र कायम करनेका उनका जो भी दावा है वह भी इस भूमि-भागके मिला लेनेपर खतम हो जाता है। यदि उत्तर-पश्चिमी और उत्तर-पूर्वी मुस्लिम क्षेत्रोंको एकमें भी मिला दिया जाय तो भी विहारके इन क्षेत्रोंको शामिल कर लेनेपर दोनों क्षेत्रोंको मिलाकर मुसलमानोंका ५५.२३ फीसदी बहुमत और भी घट जाता है और वह ५२.७१ हो जाता है जिसे नाममात्र बहुमत कह सकते है। श्री जिनाके भौमिक आदान-प्रदानका क्या अभिप्राय है यह अब समझमें आता है जिसे उन्होंने दोनों क्षेत्रोंके लिए लागू बतलाया है। अर्थात् हिन्दुस्तान दे और पाकिस्तान ले।

दो राष्ट्रके सिद्धान्तके प्रतिपादनके बादसे ही एक दूसरा प्रश्न भी जन-साधारणके समक्ष उपस्थित हो गया है। अन्य विचारोंपर ध्यान न देकर, जैसे वे देश, जहां वे बसते है, भाषा जो वे बोलते है,सभी मुसलमान केवल एक धर्मावलम्बी होनेके नाते एक राष्ट्रके प्राणी हो जाते है। इसलिए यह प्रश्न स्वाभाविक ही उठ सकता है कि उन मुसलमानोंकी क्या स्थिति होगी जो हिन्दुस्तानमें बसे रह जायंगे, जो लीगके प्रस्तावके अनुसार हिन्दू राष्ट्र होगा। ऊपर जिस मुलाकातकी चर्चा की गयी है उस मुलाकातमें जब श्री जिनासे इस सम्बन्धमें पूछा गया कि उन क्षेत्रोंके बारेमें आपने क्या प्रबन्ध करनेका निश्चय किया है तब श्री जिनाने कहा:— उन क्षेत्रोंमें, उदाहरणके लिए मद्रास ले लीजिये, हिन्दू शासन होगा और वहांके मुस्लिम अल्पसंख्यक समुदायके लिए तीन रास्ता खुला रहेगा (१) जिस राजमें वे बसते हैं उसकी नागरिकता वे स्वीकार कर सकते हैं (२) वे वहां परदेशीकी तरह रह सकते हैं (३) वे पाकिस्तानमें आकर बस सकते है। हमलोग उनका स्वागत करेंगे। उनके बसनेके लिए जगहकी कमी नहीं है लेकिन वे क्या करेंगे यह तय करना उनके हाथमें है। इससे यह स्पष्ट है कि श्री जिना यह बात स्वीकार कर लेते हैं कि जो लोग आज भारतवर्षके नागरिक हैं वे विभाजनके बाद हिन्दुस्तानके नागरिक

नहीं रह जायंगे। इसलिए उनके लिए उपरोक्त तीनो रास्तोंमेंसे कोई एक रास्ता चुन लेना है। अतएव हमलोगोंको उन तीनों मार्गोंकी समीक्षा कर लेनी चाहिये।

पहला रास्ता उनके लिए यह बतलाया गया है कि वे जिस राजमें बसते हैं उसकी नागरिकता कबूल कर लें। यह साधारण नियम है कि विदेशियोंको नागरिक अधिकार देनेके लिए सभी राजोंमें अलग–अलग नियम हैं। और जो लोग उन नियमोंकी पूर्ति करते हैं उन्हें ही नागरिक बननेका अधिकार दिया जाता है। इसलिए प्रत्येक स्वाधीन राष्ट्रके लिए पूरी स्वतन्त्रता है कि अपनी जन-संख्यापर नियन्त्रण रखनेके लिए वह अपने इच्छानुसार नियम बनावे और यदि कोई विदेशी नागरिकताका अधिकार प्राप्त करना चाहे तो उसके लिए वे कड़ा नियम बना सकते हैं या उसे एकदम रोक सकते है। दक्षिण अफ्रीका, कनाडा और आस्ट्रेलियाके उदाहरण हमलोगोंके सामने हैं। ये तीनों उपनिवेश उसी प्रकार ब्रिटिश कामनवेल्थ और साम्राज्यके सदस्य हैं जिस प्रकार भारतवर्ष है, ये तीनों उसी सम्राट्के प्रति उसी प्रकार वफादार हैं जिस प्रकार कानूनन भारतवर्षको वफादारी प्रकट करनी पड़ती है। तो भी इन उपनिवेशोंने अपने देशमें बसनेवाले हिन्दुस्तानियोंको नागरिकताका अधिकार देनेसे सदा इन्कार किया है और अपने प्रयत्नोमें वे सदा सफल रहे हैं। संयुक्त राष्ट्र अमेरिका इसके लिए कई नियम बना रखे है और प्रत्येक परदेशीको महज इसलिए वह नागरिक अधिकार देनेके लिए तैयार नहीं है कि वह परदेशी नागरिक बनना चाहता है। इसलिए यदि हिन्दुस्तान स्वतन्त्र और खुदमुख्तार हो गया तो उसे भी पूरा अधिकार होगा कि अपने देशमें बसनेवाले विदेशियोंको नागरिक अधिकार प्रदान करनेके लिए वह कड़ा नियम बनावे या किसी भी विदेशीको नागरिक बननेसे रोके। हिन्दू राजमें बसे हुए मुसलमानोंकी इच्छापर ही यह निर्भर नहीं करेगा कि वे उस राजके नागरिक बन जायं। इसके लिए उन्हें उस हिन्दू राजसे अनुमति प्राप्त करनी होगी। लेकिन श्री जिनाकी बातोंसे तो यही प्रकट होता है कि मुसलमानोंको नागरिक बन जानेके मार्गमें किसी तरहकी बाधा उपस्थित करनेका अधिकार हिन्दुओंको न होगा।

दूसरा उपाय उन्होंने यह बतलाया है कि वे परदेशीके रूपमें रह सकते हैं।

यहां भी श्री जिनाने वही धारणा बना ली है। लेकिन प्रत्येक स्वतन्त्र राजकी तरह हिन्दुस्तान भी किसी परदेशीको अपने राजमें बसने देनेके लिए बाध्य नही किया जा सकता। खासकर जब उन विदेशियोंकी तादाद उतनी ज्यादा हो जितनी हिन्दू राजमें बसनेवाले मुसलमानोंकी होगी। यह भी स्मरण रखनेकी बात है कि एक स्वतन्त्र राज इस तरहका नियम भी बना सकता है कि उसके राजमें कोई भी विदेशी किसी तरहकी सम्पत्ति खासकर स्थावर सम्पत्ति नही हासिल कर सकता। दक्षिण अफ्रीकाका उदाहरण हमलोगोंकी आंखोंके सामने है।

तीसरा सुझाव उन्होंने यह रखा है कि हिन्दुस्तानमें जो मुसलमान बचे रह जायंगे वे पाकिस्तानमें जाकर बस सकते हैं। कानूनन यही सम्भव है। प्रत्येक विदेशीके लिए यह अधिकार है कि वह विदेशी राजको छोड़कर अपने राजमें जाकर बस सकता है यदि उसने ऐसा कोई अपराध नही किया है जिसके लिए विदेशी अदालतमें उसके ऊपर मुकदमा चलाया जानेवाला हो। हिन्दुस्तानके मुसलमान यदि चाहें तो हिन्दुस्तान छोड़नेके लिए स्वतन्त्र हैं लेकिन वे अपने साथ अपनी अचल सम्पत्ति नही ले जा सकते—यदि उन्हे ले जानेकी आज्ञा भी प्रदान कर दी जाय। चल सम्पत्ति जैसे, नगद, जवाहिरात, पशु तथा सामान वगैरह वे अपने साथ ले जा सकते हैं। जो कुछ वे अपने साथ न ले जाकर छोड़ते जायंगे उसके लिए हिन्दुस्तान किसी तरहका मावजा देनेके लिए बाध्य नही है क्योंकि विदेशी राष्ट्रीयता कबूल करनेके कारण वे हिन्दुस्तान अपनी निजी इच्छासे छोड़कर चले जायंगे। लेकिन यह कयासके बाहरकी बात है कि हिन्दुस्तानके मुसलमान इस तरह हिन्दुस्तान छोड़कर पाकिस्तानमें बसनेके लिए जाना पसन्द करेंगे। जिस भूमिमें वे सदियोसे रहते चले आ रहे हैं उसका प्रेम उन्हें इस तरह उसे छोड़कर जानेसे रोकेगा। हिन्दुस्तानसे पाकिस्तान जानेके लिए उन्हें जितनी लम्बी यात्रा करनी पड़ेगी वह भी कठिन और दुरूह होगी। उन्हें अजहद दिक्कतों और मुसीबतोंका सामना करना पड़ेगा। इसके साथ एक स्थानसे दूसरे स्थानको जानेमें उनकी आर्थिक स्थितिको जो धक्का लगेगा और उनकी भावी हालत जिस हदतक खराब हो जायगी वह भी स्थानान्तरित होनेके लिए उनका रास्ता रोकेगी।

इसलिए यह तीसरा रास्ता उनके लिए ग्रहण करना असम्भव ही होगा। उनके सामने दो ही रास्ते रह जायंगे और इन दोनों रास्तोंमेंसे किसीको भी ग्रहण करनेके लिए वे स्वतन्त्र नहीं होंगे क्योंकि हिन्दुस्तान स्वतन्त्र राज होगा और अपनी सुविधा-के अनुसार ही वह किसी विदेशीके लिए किसी तरहकी रियायत करेगा।

दो राष्ट्रके सिद्धान्तसे इस तरहकी जो दिक्कतें पैदा होंगी उनकी ओर पाकिस्तानके समर्थकोंका ध्यान नहीं है। इन बातोंकी उन्हें लेशमात्र भी चिन्ता नहीं प्रतीत होती। श्री जिना साहब तो इसी स्थितिको कबूल करते दिखायी देते हैं कि और यह निर्विवाद सिद्ध भी है कि हिन्दुस्तानमें मुसलमानोंका दर्जा विदेशियोंके समान होगा और इसलिए उन्हें उन्ही कमियों और अभावोंका सामना करना पड़ेगा जो प्रत्येक विदेशीको किसी दूसरे राजमें भोगना पड़ता है। लेकिन पाकिस्तानमें बसनेवाले हिन्दुओं तथा अन्य गैर मुसलमानोंके लिए यह सिद्धान्त लागू नहीं होता क्योंकि वे न तो अपनेको विदेशी समझेंगे और न किसी दूसरे राष्ट्रके नागरिक होनेका दावा करेंगे। लेकिन यदि उनके साथ विदेशीका-सा व्यवहार भी किया जायगा तो उनकी अवस्था भिन्न रहेगी क्योंकि विदेशी नाग-रिकता उनके ऊपर जबर्दस्ती लादी जायगी, लेकिन मुसलमानोंकी अवस्था इससे एकदम विपरीत होगी क्योंकि अपनी आंखें खोलकर, अपनी स्वतन्त्र इच्छाके अनसार वे इस अवस्थाको पसन्द करेंगे, इतना ही नहीं बल्कि इस दशाको हिन्दुओं तथा अन्य गैर-मुसलमानोंके विरोध करते रहनेपर भी जारी करनेके लिए जोर दे रहे हैं।

यहींपर केन्द्रीय तथा प्रान्तीय एसेम्बलियोके चुनावोंकी चर्चा कर देना भी उचित होगा। केन्द्रीय एसेम्बलीके चुनावमें मुस्लिम लीगको आशातीत सफ-लता मिली। मुसलमानोंके लिए सभी सुरक्षित सीटोंपर लीगका कब्जा हो गया। यहांपर यह लिख देना अनुचित नहीं होगा कि मुस्लिम मतदाताओंने जितने वोट दिये उसका एक चौथाई वोट राष्ट्रीय मुसलमानोंको मिला था। सिन्धमें उन्हें ३२ सैकड़े और पंजाबमें ३० सैकड़े वोट मिले थे। केन्द्रीय एसेम्बलीके लिए उत्तर-

पश्चिमी सीमाप्रान्त तथा दिल्ली कमिश्नरीको एक एक प्रतिनिधि भेजनेका अधिकार है। दोनों प्रदेशोंके ये प्रतिनिधि संयुक्त निर्वाचन-प्रणालीद्वारा चुने जाते हैं। इन दोनों क्षेत्रोंसे कांग्रेसने मुस्लिम उम्मीदवार खड़ा किया था और दोनों विजयी हुए।

प्रान्तीय एसेम्बलीके लिए प्रायः सभी क्षेत्रोंसे लीगने उमीदवार खड़े किये थे। लीगके मुकाबले जमैयतुल-उलेमा, मोमिन, अहरार तथा राष्ट्रीय मुस्लिम संगठनोंने अपने उम्मीदवार खड़े किये थे। इसलिए इन क्षेत्रोंमें संघर्ष हुआ। जिन प्रान्तोंको लीग पाकिस्तानमें शामिल करना चाहती है और जिनमें चुनाव हुआ उन प्रान्तोंमें मुसलिम लीगको नीचे लिखे अनुसार सीटें मिलीं:—

प्रान्तीय चुनावमें मुसलमानोंकी वोटिंगका विश्लेषण

प्रान्त	लीगको प्राप्त सीटें	गैर-लीगियों द्वारा प्राप्त	लीगके वोट	औसत	गैर-लीगियोंके वोट	औसत
सीमाप्रान्त	१७	२१	१,४७,८८०	४१.४	२,०८,८९६	५८.५
सिन्ध	२६	८	१,९९,६५१	५६.८	१,५२,२३५	४३.३
पंजाब	७३	१३	६,७९,७९६	६५.१	३,५८,२३५	३४.३
आसाम	३१	३	१,८८,०७१	६९.०	८,४०,४५३	३१.०

मुस्लिम लीग पंजाब, आसाम तथा उत्तर-पश्चिमी सीमाप्रान्तमें अपना मन्त्रिमंडल नहीं कायम कर सकी। सीमाप्रान्त तथा आसामकी प्रान्तीय व्यवस्थापक सभाओंमें कांग्रेसका स्पष्ट बहुमत था। इसलिए कांग्रेस दल ही मन्त्रिमण्डल बना सकता था। गवर्नरके निमन्त्रणपर कांग्रेसने उन प्रान्तोंमें अपना मन्त्रिमण्डल कायम किया। उत्तर-पश्चिमी सीमाप्रान्तके बारेमें यह भी लिख देना उचित होगा कि प्रान्तीय एसेम्बलीमें ही कांग्रेसका स्पष्ट बहुमत नहीं था बल्कि मुस्लिम सदस्योंमें भी कांग्रेसका बहुमत था। सिन्ध प्रान्तीय व्यवस्थापक सभामें कांग्रेस तथा गैर-लीगी मुसलमानोंको कुल मिलाकर २९ सीटें प्राप्त थीं और मुस्लिम लीगको

केवल २८ । तीन सीटें यूरोपियनोंकी थीं। उन्होंने वक्तव्य प्रकाशितकर घोषणा कर दी थी कि जहांतक प्रान्तमें मन्त्रिमण्डलके संगठनका प्रश्न है वे तटस्थ रहेंगे। तो भी सिन्धके गवर्नरने लीगको ही मन्त्रिमण्डल कायम करनेके लिए निमन्त्रण देना पसन्द किया। गवर्नरके निमन्त्रणपर लीगने मन्त्रिमण्डलका संगठन किया जो यूरोपियन सदस्योंकी सहायतासे अपना शासन चला रही थी। (लेकिन सिन्धमें मुस्लिम लीग मन्त्रिमण्डल टिकाऊ नहीं हो सका। लीगके अनेक सदस्य सैयद दलमें शामिल हो गये और सैयद दलने लीग मन्त्रिमण्डलके खिलाफ अविश्वासका प्रस्ताव पेश किया। लेकिन प्रान्तीय व्यवस्थापक सभामें प्रस्ताव उपस्थित किये जानेके पहले ही सिन्धके गवर्नरने सिन्ध एसेम्बली भंग करनेकी घोषणा कर दी और सिन्ध एसेम्बलीका नया चुनाव होने जा रहा है।—अनु०) सिन्धके अलावा बगाल ही ऐसा प्रान्त है जहां मुस्लिम लीग अपना मन्त्रिमण्डल कायम कर सका है।

लीगके नेताओंने घोषणा की कि चुनाव लड़नेका उनका उद्देश्य मन्त्रिमण्डलोंका संगठन करना नहीं था बल्कि उससे कहीं महान् और व्यापक उद्देश्य पाकिस्तानकी स्थापनाके लिए उन्होंने चुनावमें भाग लिया था। इन चुनावोंने बिना किसी द्विविधा-के साबित कर दिया कि मुसलमानोंका बहुत अधिक बहुमत पाकिस्तानके पक्षमें है। लेकिन ऊपरकी तालिकासे साफ जाहिर है कि उत्तर-पश्चिमी सीमा प्रान्तके मुसलमानोका बहुमत पाकिस्तानके खिलाफ है। सिन्धके कम-से-कम ४३ तथा पजाबके कम-से-कम ३४ फीसदी मुसलमान मुस्लिम लीग और पाकिस्तानके खिलाफ हैं। बंगालके आंकड़े यहां नहीं दिये जा सके क्योंकि इसके छपनेतक वे उपलब्ध नही हो सके थे। उन प्रान्तोंके आंकड़ोंका दिग्दर्शन कराना यहां उपयोगी नहीं होगा जिन्हें मुस्लिम लीगके नेता पाकिस्तानके दायरेके अन्दर नहीं लेना चाहते। वहांके मुसलमानोंके वोटोंके विश्लेषणका महत्व केवल इतना ही होगा कि उन प्रान्तोके कितने मुसलमान उस प्रान्तमें विदेशी समझे जायंगे। यहां यह भी लिख देना उचित होगा कि जिस क्षेत्रको समस्त हिन्दुस्तानसे अलग करनेकी कोशिशें हो रही हैं उन क्षेत्रोंके गैर-मुसलमानोंको बिलगावके सम्बन्धमें अपना मत प्रकट करनेका अधिकार स्वीकार न करना उनके साथ अन्याय करना होगा।

यदि उन लोगोंके मतोंको उन मुसलमानोंके मतोंके साथ जोड़ दिया जाय जो पाकिस्तानके विरुद्ध हैं तो साफ जाहिर हो जायगा कि कुल मिलाकर कोई भी प्रान्त पाकिस्तानके पक्षमें नहीं है और व्यवस्थापक सभाओंके चुनाव पाकिस्तानके पक्षमें न होकर उसके विरुद्ध हैं।

—:० समाप्त :०—

('खण्डित भारत'के पृष्ठ ६४० का शेषांश) ※

जब कि प्रान्तीय व्यवस्थापिका सभाओंके सदस्योंका निर्वाचन हो रहा था, तत्कालीन भारत-सचिव लार्ड पेथिक लारेन्सने १९ फरवरी १९४६ को साधारण सभामे एक घोषणा की जिसमें कहा गया कि ब्रिटिश सरकारने श्रीमान् नरेशकी स्वीकृतिसे मन्त्रिमण्डलके सदस्यों—लार्ड पेथिक लारेन्स, सर स्टैफर्ड क्रिप्स और श्री अलबर्ट वी० अलेक्जेडर—का एक विशेष दल भारत भेजनेका निश्चय किया है जो वाइसरायको साथ लेकर कार्य करेगा और (१) विधान-निर्माणकी विधि, (२) विधान-परिषद् के सघटन और (३) एक ऐसी शासन-परिषद् बनानेके सम्बन्धमें जिसे भारतके प्रमुख दलोंका समर्थन प्राप्त हो, अधिक-से अधिक मतैक्यका आधार ढूँढ निकालनेके लिए ब्रिटिश भारतके चुने हुए प्रतिनिधियों और देशी रियासतोंके साथ आरम्भिक वार्ता चलायेगा।

अमात्य दलके प्रस्थान करनेके समय, १५ मार्च १९४६ को प्रधान मन्त्री श्री एटलीने साधारण सभामें एक और वक्तव्य दिया जिसमें उन्होने स्पष्ट कर दिया कि अमात्य दल स्वतन्त्रता प्राप्त करनेके कार्यमे भारतको यथासम्भव सहायता देनके विचारसे जा रहा है। उन्होने कहा 'स्वय भारत यह निश्चय करेगा कि उसकी भावी स्थिति और संसारमें उसका स्थान क्या होगा। संयुक्त राष्ट्रों या राष्ट्रमण्डलके द्वारा एकता प्राप्त की जा सकती है, पर कोई भी बड़ा राष्ट्र अपनेको संसारकी घटनाओंसे पृथक् रखकर अकेला नही टिक सकता। मुझे आशा है कि भारत ब्रिटिश राष्ट्रमण्डलमें रहना पसन्द करेगा। मुझे इसका भी निश्चय

※ लेखक महोदयने यह अंश अपने मूलग्रंथके तृतीय संस्करणमें बढ़ाया है। इसलिए 'खण्डित भारत'की द्वितीयावृत्तिकी बची हुई प्रतियोंमें उक्त परिवर्द्धित अंशका अनुवाद दिया जा रहा है। यह अंश विषयानुक्रमणिकामें सम्मिलित नहीं है। जो सज्जन इस पुस्तकके दूसरे संस्करणकी प्रति पहले खरीद चुके हैं, उन्हें यह अंश चार आनेमें मिलेगा।

—प्रकाशक।

है कि इससे उसको बड़ा लाभ होगा; पर यदि वह ऐसा करना चाहता है तो उसे अपनी स्वतन्त्र इच्छासे ही करना चाहिये क्योंकि ब्रिटिश राष्ट्रमण्डल अथवा साम्राज्य किसी बाहरी दबावके बन्धनसे आपसमें नही बँधा है, यह तो स्वतन्त्र जातियोंका स्वतन्त्र सघ है। इसके विपरीत, यदि वह बिलकुल स्वतन्त्र रहना चाहता है—जिसका उसे हमारी समझमे पूरा अधिकार है—तो सक्रमणको यथासम्भव सुगम और सरल बनानेमे सहायता करना हमारा कर्तव्य होगा' अल्पसख्यकोंका हवाला देते हुए उन्होंने कहा 'हमे अल्पसख्यकोके अधिकारोंका पूरा-पूरा ध्यान है। उनकी स्थिति ऐसी होनी चाहिये कि वे भयसे विमुक्त होकर रह सके; पर साथ ही हम किसी अल्पसंख्यकको बहुसख्यककी प्रगतिके मार्गका रोडा भी नही बनने दे सकते।' भारतकी देशी रियासतोंके सम्बन्धमे उन्होंने कहा कि मुझे आशा है कि ब्रिटेन और देशी रियासतोके राजनायक विभिन्न अंगोको मिलाकर एक महान् सघ बनानेकी समस्याका हल ढूँढ निकालेगे और हमे इसका ध्यान रखना पडेगा कि भारतीय रियासते उसमे अपना उचित स्थान प्राप्त कर सके।

अमात्य दल मार्चके अन्तमे भारत पहुँचा और वाइसराय लार्ड वेवलके साथ पूरी तत्परतासे कार्य आरम्भ कर दिया। उसने विभिन्न समूहों, दलो और सम्प्रदायोके नेताओसे उनका दृष्टिकोण समझनेके लिए मुलाकात की और कुछ समयके बाद एक सम्मेलनका आयोजन किया जिसमे एक ओर तो कांग्रेस और अखिल भारतीय मुसलिम लीगके प्रतिनिधि थे और दूसरी ओर दलके सदस्य। सम्मेलनकी बठक कई दिनोतक शिमलामे चलती रही। उसमे दलोमे कोई समझौता तो नही हो सका, पर उनका दृष्टिकोण बिलकुल स्पष्ट हो गया। अमात्य दल और वाइसरायने १६ मई १९४६ को सम्राट्‌की सरकारकी पूर्ण स्वीकृतिसे एक दूसरा वक्तव्य निकाला जिसमे कहा गया कि 'चूंकि आपसमें कोई समझौता नही हो सका इसलिए नया विधान शीघ्र प्रस्तुत करनेके लिए हमारी समझमे जो अच्छी व्यवस्था सम्भव जान पड़ेगी उसे करना हम अपना कर्तव्य समझते हैं।...इस दृष्टिसे हमलोगोने निश्चय किया है कि ऐसा प्रबन्ध शीघ्र किया जाय जिसमें भारतीय ही भारतके भावी विधानका निश्चय कर सकें और जबतक नया विधान

तैयार न हो जाय तबतक ब्रिटिश भारतका शासन-कार्य चलानेके लिए मध्यकालीन सरकारकी स्थापना अविलम्ब कर ली जाय।' पृथक् और पूर्ण स्वतन्त्र प्रभु पाकिस्तान राजके, जिसका दावा मुसलिम लीगने किया है, प्रश्नपर विचार करनेके अनन्तर वक्तव्यमे यह निष्कर्ष निकाला गया कि मुसलिम लीगने जैसे राजका दावा किया है वैसे पृथक् प्रभु पाकिस्तान राजकी स्थापनामे साम्प्रदायिक अल्पसख्यकोंकी समस्या हल नही होगी, और न हमे पजाब और बगाल तथा आसामके उन जिलोको जिनमें गैर-मुसलिम आबादीकी प्रधानता है, प्रभु पाकिस्तान राजमे सम्मिलित करनेका कोई औचित्य ही देख पडता है।' वक्तव्यमें आगे इस बातका विचार किया गया कि मुसलिम बहुमतवाले क्षेत्रोंतक सीमित लघुतर प्रभु पाकिस्तान राज समझौतेका आधार हो सकता है या नही, पर अन्ततः लाचार होकर यह मानना पड़ा कि लघुतर या वृहत्तर कोई भी प्रभु पाकिस्तान राज साम्प्रदायिक समस्याका ऐसा कोई हल प्रस्तुत नही करता जो स्वीकार करने योग्य हो। उसमें कहा गया कि ऊपर जो दलीले दी गयी है उनके अलावा शासन सम्बन्धी आर्थिक और सैनिक प्रश्न भी है जो गम्भीर है। परिणाममे सदस्योंने कहा 'इसलिए हम ब्रिटिश सरकारको यह राय देनेमे असमर्थ है कि जो अधिकार इस समय अग्रेजोके हाथमे है वह दो पूर्णतः पृथक् राजोंको सौपा जाय' उन्होंने वक्तव्यके १५ वे पैराग्राफमे अपना यह प्रस्ताव दिया—

'हमारी सिफारिश है कि विधानका आधार निम्नलिखित हो—

१ ब्रिटिश भारत और रियासतोके संयोगसे भारतका एक संघराज बने जो परराष्ट्र सम्बन्ध, रक्षा और यातायातकी व्यवस्था करे तथा इन विभागोंके कार्य-संचालनके लिए धन संग्रह करनेका उसे आवश्यक अधिकार हो।

२. संघकी एक शासन परिषद् और व्यवस्थापिका सभा हो जो ब्रिटिश भारत और रियासतोंके प्रतिनिधियोंसे संघटित की जाय। यदि व्यवस्थापिका सभामें कोई बड़ा साम्प्रदायिक प्रश्न उपस्थित हो तो उसका निर्णय दोनों प्रमुख सम्प्रदायोंमेसे प्रत्येकके उपस्थित प्रतिनिधियों और सभी उपस्थित सदस्योंके मताधिक्यके आधारपर हो।

३. संघके हाथमें रखे गये विषयोंके अतिरिक्त और सब विषय और शष सभी अधिकार प्रान्तोंके हाथमें रहे।

४. संघको दिये गये अधिकारोंके अलावा और सब अधिकार रियासतों-के हाथमे रहे।

५. प्रान्तोंको शासन परिषद् और व्यवस्थापिका सभाके साथ समूह बनानेकी आजादी हो और प्रत्येक समूहको सामान्य प्रान्तीय विषयोंका निश्चय करनेका अधिकार हो।

६. संघ और समूहोंके विधानमे ऐसी व्यवस्था रहे जिसमे कोई प्रान्त व्यवस्थापिका सभाका बहुमत होनेपर १०-१० वर्षपर विधानपर पुन. विचार कर सके।

विधान परिषद्‌के लिए यथासम्भव विस्तृत आधारपर और ठीक ठीक प्रतिनिधित्व प्राप्त करनेका सर्वाधिक सन्तोषजनक तरीका बालिग मताधिकार-के आधारपर निर्वाचन करना ही हो सकता था, पर इस प्रकार नयी परिषद्‌का संघटन करनेमें इतना अधिक समय लग जाता कि वह गवारा नही किया जा सकता था इसलिए दलने व्यावहारिक विकल्पके रूपमे यह प्रस्ताव रखा कि विधान परिषद्‌का संघटन करनेके लिए नव-निर्वाचित व्यवस्थापिका सभाओंका ही उपयोग किया जाय। चूंकि प्रान्तीय व्यवस्थापिका सभाओंके सदस्योंकी सख्या प्रत्येक प्रान्तमें आबादीके अनुपातमें समान नही है इसलिए यह निश्चय किया गया कि सबमे अच्छा और व्यावहारिक उपाय यह होगा कि—

क—प्रत्येक प्रान्तके लिए आबादीके अनुपातसे—मोटे तौरसे दस लाख-की आबादीपर एकके हिसाबसे—सदस्योंकी जगहें रखी जायँ जो बालिग मता-धिकारके बहुत कुछ पास ही होंगी।

ख—प्रत्येक प्रान्तमें प्रमुख सम्प्रदायोंकी आबादीके अनुपातसे जगहें बाँट दी जायँ।

ग—प्रत्येक सम्प्रदायसे लिये जानेवाले प्रतिनिधियोंका चुनाव प्रान्तीय व्यवस्थापिका सभाके उस सम्प्रदायके सदस्योंद्वारा हो।

इस प्रयोजनकी सिद्धिके लिए दलने भारतमें साधारण, मुसलिम और सिख—केवल तीन प्रमुख सम्प्रदायोंको माना। साधारणमें ऐसे लोग रखे गये जो मुसलमान या सिख नही है। चूकि बहुत छोटी अल्पसख्यक जातियोंको आबादीके आधारपर बहुत कम प्रतिनिधित्व मिलता या मिलता ही नही इसलिए उनके लिए पूरे प्रतिनिधित्वकी व्यवस्था की गयी जिसमें उनके विशेष हितोंकी रक्षा हो सके। यह व्यवस्था नागरिकों, अल्पसख्यको और कबायली तथा पृथक् किये गये क्षेत्रोके अधिकारोके सम्बन्धमे राय देनेके लिए एक परामर्श-समितिके संघटनके रूपमें की गयी जिसमे सम्बद्ध लोगोंके हितोका पूर्ण प्रतिनिधित्व हो। यह समिति मौलिक अधिकारोंकी सूची, अल्पसंख्यकोंकी रक्षाके लिए धाराएँ तथा कबायली और पृथक् किये गये क्षेत्रोंके शासनकी योजना सघकी विधान-परिषद्-में पेश करेगी और यह राय देगी कि ये अधिकार प्रान्तके विधानके अंग हों अथवा समूह या सघके विधानके।

साधारण विधान-परिषद्के सम्बन्धमे १९ वे पैराग्राफमें यह प्रस्ताव रखा गया कि प्रत्येक प्रान्तीय व्यवस्थापिका सभा विधान-परिषद्के लिए नियत संख्यामें (साधारण, मुसलिम या सिख) प्रतिनिधियोंका चुनाव करेगी जो आनुपातिक प्रतिनिधित्वके आधारपर संक्रमणकारी एक मत (सिंगल ट्रैंस्फरेबुल वोट) वाले तरीकेसे होगा। सदस्योंकी सख्या प्रान्तकी १० लाखकी आबादीपर एकके हिसाबसे निश्चित कर दी गयी। प्रान्त क. ख. ग.—तीन वर्गोमें बांट दिये गये। क–वर्गमें मद्रास, बम्बई, युक्तप्रान्त, बिहार, मध्यप्रान्त और उडीसा रखे गये जिनमेंसे प्रत्येक में गैर मुसलमान बहुसंख्यक और मुसलमान अल्पसंख्यक है। विधान-परिषद्में इन प्रान्तोंके सदस्योंकी कुल संख्या १८७ रखी गयी जिसमें १६७ साधारण और २० सदस्य मुसलिम होंगे। ख–वर्गमें पंजाब, पश्चिमोत्तर सीमाप्रान्त और सिन्ध रख गये जिनके कुल सदस्य ३५ होंगे जिनमें ९ साधारण, २२ मुसलिम और ४ सिख होंगे। ग–वगमें बंगाल और आसाम रखे गये जिनके कुल ७० सदस्ययोंमें ३४ साधारण और ३६ मुसलमान होंगे। इस प्रकार ब्रिटिश भारतके

लिए कुल २९२ जगहें रखी गयी जिनमें २१० साधारण, ७८ मुसलिम और ४ सिख सदस्योंके लिए होंगी।

चीफ कमिश्नरके अधीन प्रान्तोके प्रतिनिधित्वके लिए क——वर्गमें केन्द्रीय व्यवस्थापिका सभाका दिल्लीका प्रतिनिधि, अजमेर, मेरवाड़ाका प्रतिनिधि और कुर्गकी व्यवस्थापिका सभाद्वारा निर्वाचित एक सदस्य जोड दिये जायँगे। ख—— वर्गमें ब्रिटिश बलूचिस्तानका एक सदस्य शामिल कर लिया जायगा।

रियासतोंको १० लाखकी आबादीपर एकके हिसाबसे ९३ जगहे देनेकी व्यवस्था की गयी। चुनावका तरीका परामर्श कर निश्चित कर लिया जायगा।

वक्तव्यके १९ वे पैराग्राफमे आगे यह व्यवस्था रखी गयी है कि——

(३) इस प्रकार चुने गये सदस्य जहातक जल्द हो सके, दिल्लीमे एकत्र होंगे।

(४) एक आरम्भिक बैठक होगी जिसमे कार्यक्रम निश्चित किया जायगा, अध्यक्ष तथा अन्य पदाधिकारियोका चुनाव होगा और नागरिको, अल्पसंख्यको तथा कबायली और पृथक् किये गये क्षेत्रोके अधिकारोंके सम्बन्धमे राय देनेके लिए परामर्श-समिति संघटित की जायगी। इसके पश्चात् प्रान्तीय प्रतिनिधि ऊपर कहे गये क. ख. ग——वर्गोमे विभक्त हो जायँगे।

(५) ये वर्ग प्रत्येक वर्गमे सम्मिलित प्रान्तोंके लिए विधान बनानेका कार्य आरम्भ कर देंगे और यह निश्चय करेंगे कि समूहोके लिए विधान बनाया जायगा या नही, और यदि बनाया जायगा तो समूह किन-किन प्रान्तीय विषयोंको अपने हाथमे रखेंगे। प्रान्तोंको निम्नलिखित (८वी) उपधाराके अनुसार समूहसे पृथक् हो जानेका अधिकार होगा।

(६) वर्गोंके और देशी रियासतोंके प्रतिनिधि संघका विधान बनानेके लिए पुनः एकत्र होंगे।

(७) संघकी विधान-परिषद् में अगर कोई ऐसा प्रस्ताव पेश हो जो १५ वें पैराग्राफमें दी गयी व्यवस्थासे भिन्न हो या किसी बड़े साम्प्रदायिक प्रश्नसे सम्बद्ध हो तो उसका निर्णय दोनों सम्प्रदायोमेसे प्रत्येकके उपस्थित सदस्योंके मताधिक्य-

के आधारपर होगा। परिषद्का अध्यक्ष इस बातका निश्चय करेगा कि प्रस्ताव साम्प्रदायिक महत्त्वका है या नही और किसी बड़े सम्प्रदायके बहुसंख्यक प्रतिनिधियों-के ऐसा अनुरोध करनेपर अपना निर्णय देनेके पूर्व सघ न्यायालयकी राय ले लेगा।

(८) नये विधानका प्रयोग आरम्भ होते ही अगर कोई प्रान्त समूहमे पृथक् होना चाहे तो उसे इसका अधिकार होगा। इस प्रकारका निश्चय नये विधानके अनुसार चुनाव हो जानेपर प्रान्तकी नयी व्यवस्थापिका सभा कर सकेगी।

वाइसराय प्रान्तीय व्यवस्थापिका सभाओसे प्रतिनिधियोंका चुनाव शुरू कर देने और रियासतोंसे वार्ता-समिति कायम करनेका तत्काल अनुरोध करेंगे। अधिकार-हस्तान्तरके कारण उत्पन्न होनेवाले प्रश्नोके समाधानके सम्बन्धमे विधान-परिषद् और सयुक्त राज (ब्रिटेन) के बीच सन्धिके लिए वार्ता चलेगी। जबतक विधान-निर्माणका कार्य चलेगा तबतक भारतका शासन कार्य भी चलता रहेगा। और इसके लिए मध्यकालीन सरकार अविलम्ब स्थापित की जायगी जिसे प्रमुख राजनीतिक दलोंका समर्थन प्राप्त होगा।

इस निश्चयके अनुसार वाइसरायने ऐसी सरकार कायम करनेके लिए बातचीत शुरू कर दी जिसके सभी विभाग—जिनमे सेना सचिवका विभाग भी सम्मि-लित होगा——जनताके पूर्ण विश्वासपात्र नेताओके हाथमे हो। ब्रिटिश सरकार 'भारत सरकारमे होनेवाले परिवर्तनोके महत्वको समझते हुए इस प्रकार बनी हुई सरकारको शासन-सचालन और परिवर्तन यथासम्भव क्षिप्र और सरल बनानेके कार्यमे पूरा सहयोग करेगा।'

वक्तव्यका अन्त अपील और इस दृढ़ आशाके साथ किया गया कि भारतीय जनता इन प्रस्तावोंको सामंजस्य और सद्भावके साथ स्वीकार कर कार्यान्वित करेगी जिनसे प्रेरित होकर वे प्रस्तुत किये गये हैं।

सभी सम्बद्ध दलोंने इस वक्तव्यकी पूरी जाच-पडताल की। मुसलिम लीगके अध्यक्षने अपने २२ मई १९४६ के वक्तव्यमें अमात्य दलके पूर्ण प्रभु पाकि-स्तान राजकी स्थापनाकी मुसलमानोंकी माग अस्वीकार कर देनेपर खेद प्रकट किया और वक्तव्यके क्रियात्मक अंशोंके कुछ महत्त्वपूर्ण विषयोंपर विस्तारके साथ विचार

किया। काग्रेस कार्यसमितिने २४ मई १९४६ को एक प्रस्ताव स्वीकार किया जिसमें ७७ ऐसे विषयोंका उल्लेख करनेके पश्चात् जिनके स्पष्टीकरण और संशोधनकी आवश्यकता थी, एक विषयपर खास तौरसे जोर दिया गया। इसमें कहा गया है कि 'अमात्य दलने अपने वक्तव्यमे प्रान्तीय स्वतन्त्रता और शेष अधिकार प्रान्तोंके हाथमे होनेका मौलिक सिद्धान्त मान लिया है। आगे यह भी कहा गया है कि प्रान्तोंको समूह बनानेकी स्वतन्त्रता होगी। फिर भी बादमे यह सिफारिश की गयी है कि प्रान्तोंके प्रतिनिधि वर्गोमें बँट जायँगे जो प्रत्येक वर्गके प्रान्तोके लिए विधान बनानेका कार्य आरम्भ करेगे और यह निश्चय करेगे कि उन प्रान्त-समूहोंके लिए विधान बनाना आवश्यक है या नही। इन दोनों व्यवस्थाओंमे स्पष्टतः विरोध है और ऐसा जान पडता है कि कुछ अशोमे यह अनिवार्य बना दिया गया है जिससे प्रान्तीय स्वतन्त्रताका मौलिक सिद्धान्त स्पष्ट रूपसे भग हो जाता है। वक्तव्यका सिफारिशी रूप कायम रखने और दोनो व्यवस्थाओमे सामजस्य बनाये रखनेके विचारसे समितिने १५ वे पैराग्राफका यह अभिप्राय समझा है कि प्रान्त पहले इस बातका निश्चय करेगे कि जिन वर्गोमे वे रखे गये है उनमे वे रहना चाहते हैं या नही। इस प्रकार विधान-परिषद्को पूर्ण सत्ता-युक्त और विधान बनाने तथा उसे प्रयोगमें लानेके अन्तिम अधिकारसे सम्पन्न मानना चाहिये।'

भारतकी देशी रियासतोंके सम्बन्धमें कार्य समितिने कहा कि 'विधान-परिषद्का संघटन नितान्त असमान तत्वोंसे नही हो सकता और विधान-परिषद्के लिए प्रतिनिधियोंकी नियुक्तिका तरीका यथासम्भव वैसा ही होना चाहिये जैसा प्रान्तोंमे बरता गया है।' उसने इस बातपर जोर दिया कि अस्थायी सरकारके पद, अधिकारों और सघटनकी पूरी व्याख्या हो जानी चाहिये। अमात्य दलने विभिन्न दलोंद्वारा रखे गये प्रश्नोंके समाधानके लिए २५ मईको एक और वक्तव्य निकाला जिसमें कहा गया था कि विधान-परिषदके अपना काम पूरा कर लेनेपर सम्राट्की सरकार भारतीय जनताको सत्ता हस्तान्तरित करनेके लिए आवश्यक काररवाई करनेकी पार्लमेण्टसे सिफारिश करेगी, पर इसके लिए दो बातें आवश्यक होंगी जिनका उल्लेख वक्तव्यमें किया जा चुका है—एक तो अल्पसंख्यकोंकी रक्षाकी

समुचित व्यवस्था और दूसरी, सत्ता-हस्तान्तरके कारण उत्पन्न होनेवाले विषयोंके सम्बन्धमें सम्राट्‌की सरकारसे सन्धि करनेकी इच्छा।

कांग्रेसने जो व्याख्या की थी उसके सम्बन्धमें अमात्य दलने कहा कि वह दलके अभिप्रायसे मेल नही खाती। प्रान्तोंके समूहीकरणका कारण सर्वविदित है; योजनाका यह आवश्यक अंग है और दलोंकी सहमतिसे ही इसमें परिवर्तन हो सकता है। रियासतोंके प्रतिनिधियोंकी नियुक्ति किस प्रकार होगी, इस प्रश्नके सम्बन्धमे रियासतोंसे वार्ता करनी पड़ेगी। मध्यकालीन सरकारके पदका स्पष्टीकरण करनेकी कांग्रेसकी मागके सम्बन्धमें वक्तव्यमें कहा गया कि मध्यकालमें वर्तमान विधान जारी रहेगा इसलिए मध्यकालीन सरकार केन्द्रीय व्यवस्थापिका सभाके प्रति वैध रूपसे उत्तरदायी नही हो सकती। फिर भी सरकारके सदस्योंके, अगर वे कोई महत्वपूर्ण प्रस्ताव व्यवस्थापिका सभामे स्वीकार न करा सके या उनके विरुद्ध अविश्वासका प्रस्ताव स्वीकार हो तो, व्यक्तिगत रूपसे या सामान्य स्वीकृतिसे पदत्याग करनेमे कोई बात बाधक नही होगी। काग्रेसने भारतसे अग्रेजी सेना हटानेकी जो माग की थी उसके सम्बन्धमे वक्तव्यमें कहा गया कि नया विधान प्रयोगमें आनेपर स्वतन्त्र भारतकी इच्छाके विरुद्ध यहा अग्रेजी सेना रखनेका कोई विचार नही है; पर मध्यकालमे, जिसके अल्प ही होनेकी आशा है, वर्तमान विधानके अन्तर्गत भारतकी सुरक्षाका दायित्व पार्लमेंटपर रहेगा। इसलिए अग्रेजी फौजका रहना आवश्यक है। वक्तव्यमे यह स्पष्ट कर दिया गया कि योजना अखण्ड बनी रहेगी और यह तभी सफल हो सकती है जब सहयोगके भावसे स्वीकार कर कार्यान्वित की जायगी।

६ जून १९४६ को अखिल भारतीय मुसलिम लीगकी कौसिलने एक प्रस्तावद्वारा इस बातको दुहराया कि 'पूर्ण प्रभु पाकिस्तानकी प्राप्ति भारतके मुसलमानोंका अपरिवर्तनीय ध्येय बना हुआ है और वे उसकी प्राप्तिके लिए बड़ेसे बडे त्याग और कष्टको तुच्छ समझते है।' पर इससे संलग्न गम्भीर प्रश्नोंका विचार कर और यह देखकर कि ६ मुसलिम प्रान्तोके ख और ग वर्गोमे समूहीकरणके रूपमे अमात्य दलकी योजनामें पाकिस्तानका आधार वर्तमान है, मुसलिम लीगने

विधान बनानेवाली सभासे इस आशासे सहयोग करनेकी इच्छा प्रकट की कि अन्तत: इसका परिणाम पूर्ण प्रभु पाकिस्तानका स्थापन होगा। प्रस्तावमे कहा गया था 'यही कारण है कि मुसलिम लीग योजनाको स्वीकार कर रही है और विधान बनानेवाली सभामे सम्मिलित होगी, यह प्रान्तो और समूहोके संघसे पृथक् होनेके अवसर और अधिकारका बराबर ध्यान रखेगी जिनका अभिप्राय अमात्य दलकी योजनामे निहित है। मुसलिम लीगका अन्तिम रुख विधान बनानेवाली सभाके कार्यके परिणाम और उन विधानोंके अन्तिम रूपपर निर्भर होगा जिन्हे सभा सयुक्त और पृथक् वर्गोके रूपमे बनायेगी। विधान बनानेवाली सभा या विधान-परिषद् का कार्य चलते समय या बादमे किसी भी समय आवश्यकता पड़नेपर इस प्रस्तावमे व्यक्त किये गये रुख और नीतिमे परिवर्तन करनेका अधिकार मसलिम लीग सुरक्षित रखती है।' केन्द्रमे प्रस्तावित मध्यकालीन सरकार स्थापित करनेकी व्यवस्थाके सम्बन्धमे कौसिलने अध्यक्षको वाइसरायसे बातचीत करने और उचित निर्णय तथा कार्य करनेका अधिकार दे दिया।

जब कि १६ मईके वक्तव्यके अर्थ और अभिप्रायके सम्बन्धमे पूरे अमात्य दलके साथ तर्क-वितर्क चल रहा था, वाइसराय कांग्रेस और मुसलिम लीगके प्रतिनिधियोंके साथ मध्यकालीन सरकारके इसदस्योकी सख्या और नामोके सम्बन्धमें बात करते रहे। इस वार्त्तालापसे दलोमे कोई समझौता न हो सकनेके कारण अमात्य दल और वाइसरायने १६ जून, १९४६ को एक और वक्तव्य निकाला। वक्तव्यमे इस बातका उल्लेख करनेके अनन्तर कि समझौतेका प्रयत्न विफल हो गया और दृढ तथा प्रतिनिधिमूलक मध्यकालीन सरकारकी स्थापना आवश्यक है, यह भी घोषित किया गया कि वाइसराय कुछ व्यक्तियोंको, जिनका नाम निर्देश कर दिया गया था, इस बिनापर मध्यकालीन सरकारमे काम करनेके लिए आमन्त्रित कर रहे है कि विधान-निर्माणका कार्य १६ मईवाले वक्तव्यके अनुसार चलता रहेगा। आमन्त्रित व्यक्तियोंमे ६ हिन्दू जो सभी कांग्रेसी थे और एक दलित वर्गका था, पाच मुसलमान जो लीगके प्रतिनिधि थे, एक सिख, एक ईसाई और एक पारसी थे। अन्तिम सज्जन भारत सरकारके उच्चपदस्थ कर्मचारी थे। वक्तव्य-

में यह भी कहा गया था कि विभागोंका बँटवारा दोनो प्रधान दलोके नताओसे परामर्श करके किया जायगा और मध्यकालीन सरकारका यह संघटन किसी अन्य साम्प्रदायिक समस्याके हलके लिए किसी हालतमें नजीर नही माना जायगा वक्तव्यमें २६ जून नयी सरकारके आरम्भका दिन नियत कर दिया गया। वक्तव्यके ८ वे पैराग्राफमें कहा गया था, 'ऊपर कही गयी विधिसे सयुक्त सरकारके संघटनमे अगर दोनों बडे या कोई एक दल सम्मिलित होनेसे अनिच्छा प्रकट करे तो वाइसराय उन व्यक्तियोंसे यथासम्भव प्रतिनिधिमूलक सरकार कायम करनेके कार्यमे अग्रसर होगे जो १६ मईका वक्तव्य स्वीकार करनेको तैयार है। प्रान्तीय गवर्नरोंको १६ मईवाले वक्तव्यमें कही गयी बातोके अनुसार विधान-परिषद्‌के प्रतिनिधियोंका चुनाव करनेके लिए व्यवस्थापिका सभा बुलानेका आदेश दे दिया गया।

दलोने वक्तव्यपर पुन सावधानीके साथ विचार किया और अन्तमे २६ जून, १९४६ को काग्रेस कार्यसमितिने एक प्रस्ताव स्वीकार किया जिसमे अमात्य दलके १६ मई और १६ जूनवाले वक्तव्यो और इस बीच काग्रेस-अध्यक्ष और अमात्य दल तथा वाइसरायमे हुए पत्र-व्यवहारका विस्तारके साथ आलोचन किया गया था और कहा गया था कि ये प्रस्ताव काग्रेसके लक्ष्यतक तो नही पहुँचते, पर कार्यसमितिने भारतकी समस्याको शान्तिपूवक हल करनेके लिए कोई रास्ता निकालनेके विचारसे उनपर गम्भीरतापूर्वक विचार किया है। प्रस्तावमे यह दिखलाया गया था कि केन्द्रीय सत्ताके परिसीमित होनेसे सारा ढाचा ही कमजोर हो गया है और कुछ प्रान्तों तथा कुछ अल्पसख्यको, विशेषकर सिखोके हकमे यह बुरा है, पर प्रस्तावोपर समग्र रूपमे विचार करनेपर यह देख पडता है कि उनमें केन्द्रीय सत्ताको बढाने और दृढ करने तथा प्रान्तोंका समूहीकरणके सम्बन्धमें अपने इच्छानुसार कार्य करने और अल्पसंख्यकोंकी, जो अन्यथा घाटेमे रहते, रक्षाका अधिकार सुरक्षित करनेकी पूरी गुजाइश है। इसलिए कार्यसमितिने निश्चय किया कि काग्रेसको प्रस्तावित विधान-परिषद्‌मे सम्मिलित होना चाहिये। अस्थायी सरकारके सम्बन्धमे कहा गया कि इसे अधिकार, सत्ता और दायित्व

प्राप्त होना चाहिये और विधानतः नही तो व्यवहारतः वास्तविक स्वतन्त्र सरकार-के रूपमें काम करना चाहिये जिसमें यह भावी पूर्ण स्वतन्त्रताकी ओर अग्रसर हो सके। इस प्रकारकी सरकारके सदस्य जनताके ही प्रति दायी हो सकते है, किसी बाहरी सत्ताके प्रति नही। अस्थायी या अन्य सरकारके निर्माणमे कांग्रेसजन न तो कांग्रेसके राष्ट्रीय रूपका परित्याग कर सकते है, न कोई कृत्रिम या अन्याय्य समानता स्वीकार कर सकते है और न किसी साम्प्रदायिक समूहका वीटो माननेके लिए तैयार है, इसलिए १६ मईके वक्तव्यमे उल्लिखित मध्यकालीन सरकार स्थापित करनेका प्रस्ताव स्वीकार करनेमे समिति असमर्थ है।

बातचीतके दौरानमें मुसलिम लीगने दावा किया था कि मध्यकालीन सरकारके मुसलमान सदस्य उसीके मनोनीत किये हुए हो अन्य नही और सरकारमें कांग्रेस और लीगकी बराबरी रहे। १६ जूनके वक्तव्यमे जहा पाच लीगी सदस्योंके मुकाबले छः कांग्रेसजनोंको लेना स्वीकार कर इस दावेकी दूसरी बात एक तरहसे नामजूर कर दी गयी वहा केवल लीगद्वारा मनोनीत मुसलमान सदस्योंको रखनेकी बात मानकर अपने हिस्सेके छः सदस्योमे एक मुसलमान सदस्य मनोनीत करनेकी कांग्रेसकी माग नामजूर कर दी गयी। इसलिए जबतक कांग्रेस अपनेको विशुद्ध हिन्दू संस्था न मान ले और यह न स्वीकार कर ले कि केवल मुसलिम लीगको मध्यकालीन सरकारके लिए मुसलमान सदस्योके नाम पेश करनेका अधिकार है तबतक उसके लिए १६ जूनका वक्तव्य नामजूर करनेके अलावा और कोई चारा नहीं था। कांग्रेस का समितिके प्रस्ताव स्वीकार कर लेनेके बाद मुसलिम लीगकी कार्यसमितिने एक प्रस्ताव स्वीकार किया जिसमे १६ जूनके वक्तव्य और अमात्य दलसे परामर्श करनेके बाद वाइसरायके दिये हुए आश्वासनो और स्पष्टीकरणके आधारपर मध्यकालीन सरकारमे सम्मिलित होना स्वीकार कर लिया गया था। इस स्थलपर पत्र-व्यवहारको विस्तारपूर्वक देना अनावश्यक है, केवल एक पत्र उद्धृत कर देना काफी होगा जिसे वाइसरायने २५ जूनको उस दिनकी स्थितिके सम्बन्धमें श्री जिनाको लिखा था—'हमलोग (अमात्य दल और वाइसराय) आपको बतला चुके है कि कांग्रसने १६ जूनके वक्तव्यमें प्रस्तावित मध्यकालीन

सरकारम सम्मिलित होना अस्वीकार करते हुए १६ मईका वक्तव्य स्वीकार कर लिया ह। इससे जो स्थिति उत्पन्न हो गयी है उसमें १६ जनवाले वक्तव्यका ८ वा पैराग्राफ लागू हो जाता है । इस पैराग्राफमे कहा गया है कि वक्तव्यमें निर्दिष्ट विधिसे सयक्त सरकारके सघटनमें अगर दोनो बड़े दलोमेसे कोई सम्मिलित होनेसे अनिच्छा प्रकट करे तो वाइसराय उन व्यक्तियोंसे यथासम्भव प्रतिनिधिमूलक सरकार कायम करनेके का मे अग्रसर होंगे जो १६ वी मईका वक्तव्य स्वीकार करनेको तयार है। चूकि काग्रेस और मुसलिम लीग दोनोने १६ वी मईका वक्तव्य स्वीकार कर लिया है इसलिए जितनी जल्दी हो सके दोनों दलोकी सयुक्त सरकार कायम करनेका विचार है। जो लम्बी बातचीत चल चुकी है उसका खयाल करते हुए तथा इस विचारसे कि हम सबको कुछ और भी काम करने हे, मध्यकालीन सरकारकी स्थापनाके सम्बन्धमे और आगे वार्ता करनेके पूर्व थोडासा विराम-काल रखना अच्छा होगा'। इसके बाद अमात्य दलने मभ्यकालीन सरकारकी स्थापना सम्बन्धी वार्ता कुछ कालके लिए स्थगित कर दी, तबतक विधान-परिषद् के लिए निर्वाचन होता रहा। इस बीच उसने वाइसरायको मध्यकालीन सरकारकी स्थापना होनेके समयतक शासन-कार्य चलानेके लिए अफसरोंकी निरीक्षक (केअरटेकर) सरकार कायम करनेको कह दिया। अमात्य दल १९४६ के जूनके अन्तमे भारतसे विदा हो गया।

काग्रेस प्रतिनिधियोंको छोड़कर केवल मुसलिम लीगके सदस्योसे मध्यकालीन सरकारका सघटन न करनेके अमात्य दल और वाइसरायके निर्णयसे मसलिम लीग कटकर रह गयी।

अखिल भारतीय काग्रस कमेटीकी ७ जुलाईकी बैठकमें १६ मईवाला वक्तव्य स्वीकार करने और १६ जूनवाला वक्तव्य अस्वीकार करनेका कार्यसमितिका निश्चय स्वीकार कर लिया गया।

अखिल भारतीय मुसलिम लीगकी कौन्सिलकी बैठक जुलाईके अन्तमें हुई जिसमें उसन एक प्रस्तावद्वारा अमात्य दलके प्रस्तावकी स्वीकृति, जिसकी सूचना लीगके अध्यक्षन ६ जुलाई, १९४६ को भारत-सचिवको दे दी थी, वापस

ले ली गयी। एक दूसरे प्रस्तावद्वारा कौन्सिलने निश्चय किया कि 'पाकिस्तानकी प्राप्ति' अपने न्याय्य अधिकारोकी स्थापना, सम्मान-रक्षा और वर्त्तमान ब्रिटिश दासता तथा सर्वत्र हिन्दुओंके सोचे हुए भावी आधिपत्यसे पिण्ड छुडानेके लिए मुसलिम राष्ट्रके प्रत्यक्ष संघर्ष छेडनेका समय अब आ गया है।' इसने कार्यसमिति-को इस नीतिको कार्यान्वित करनेके लिए प्रत्यक्ष संघर्षका कार्यक्रम अविलम्ब तयार करने और जब तथा जिस रूपमें आवश्यक हो संघर्षके लिए मुसलमानोंको संघटित करनेका आदेश दे दिया। ब्रिटिश मनोवृत्तिके प्रति विरोध और अप्रसन्नता-के चिह्न स्वरूप कौन्सिलने मुसलमानोंको ब्रिटिश सरकारसे मिली हुई उपाधियो-का शीघ्र परित्याग करनेका आदेश दिया।

जुलाईमें प्रान्तीय व्यवस्थापिका सभाओंकी बैठक हुई और १६ मईके वक्तव्यमें रखी गयी शर्तोंके मुताबिक विधान-परिषद्‌के लिए सदस्य चुन लिये गये। सिखोंने पहले अपने प्रतिनिधि नहीं चुने, पर बादमें कुछ विषयोंका स्पष्टी-करण हो जाने और आश्वासन मिल जानेपर उन्होंने प्रतिनिधियोंका चुनाव कर लिया। मध्यकालीन सरकारकी स्थापनाके सम्बन्धमें पुनः बातचीत शुरू हुई और चूंकि मुसलिम लीग १६ मईवाले वक्तव्यकी स्वीकृति वापस ले चुकी थी इसलिए अब सिर्फ कांग्रेस मैदानमें रह गयी। कांग्रेसने संयुक्त सरकारके संघटनके सम्बन्धमें मुसलिम लीगसे वार्ता चलानेका प्रयत्न किया पर वह असफल रही। अन्ततः वाइसरायने पण्डित जवाहरलाल नेहरूको मध्यकालीन सरकारका संघ-टन करनेके लिए आमन्त्रित किया और उन्होंने संघटन किया भी। इसमें दलित-वर्गके एक सदस्यको मिलाकर छः हिन्दू, तीन मुसलमान जिनमें दो कांग्रेस या लीग किसीके सदस्य नहीं थे, एक सिख, एक ईसाई और एक पारसी थे। सदस्योंने २ सितम्बर १९४६ को पदग्रहण किया।

२९ जुलाईको स्वीकृत प्रस्तावका अनुसरण कर मुसलिम लीगने १६ अगस्त-के सारे देशके मुसलमानोंके लिए 'प्रत्यक्ष संघर्ष' मनानेका दिन नियत कर दिया। बहुत बड़े पैमानेपर प्रदर्शन करनेका आयोजन किया गया और बंगालमें तो लीगसे बाहरके सभी वर्गोंके विरोध करनेपर भी लीगी मन्त्रिमण्डलने उस दिन सार्वजनिक

छुट्टी घोषित कर दी। कलकत्तामें दिनका आरम्भ दंगे, लूट, हत्या और अग्निकाण्ड से हुआ जो कई दिनोंतक जारी रहे और अत्यधिक धन-जनकी हानि हुई। अन्य कई स्थानोंपर भी साम्प्रदायिक दंगे आरम्भ हो गये जो तभीसे देशके विभिन्न भागोंमें अल्पाधिक मात्रामे चलते जा रहे है। कलकत्ताके दंगेके बाद शीघ्र ही पूर्वी बंगालके नोआखाली जिलेमे भीषण उपद्रव शुरू हो गया जो कुमिला, चटगाव, ढाका आदि आसन्नवर्ती जिलोंमें भी फैल गया। इसमे हिन्दुओंकी बडी क्षति हुई। कलकत्ता और नोआखालीमे हुए अत्याचारोकी खबर बिहार पहुँची जहासे लोग नौकरीके लिए बंगाल जाया करते हैं, और बिहारमें भी भयकर उपद्रव हुआ जो सारन जिले-मे आरम्भ होकर पटना, गया, मुगेर आदि जिलोंमे फैल गया। इन जगहोमे मुसल-मानोंको बहुत नुकसान पहुँचा। कुछ समयके बाद पश्चिमोत्तर सीमाप्रान्त और पजाब-मे भी दंगे शुरू हुए जहा वे अबतक जारी है और हिन्दुओं और सिखोके जान मालका बहुत नुकसान हुआ है।

मध्यकालीन सरकारके सघटनके बाद शीघ्र ही वाइसरायने मुसलिम लीगसे उसके प्रतिनिधियोंको लेने और उन्हे इसमे सम्मिलित होनेके लिए बाध्य करनेके विचारसे बातचीत शरू कर दी। काग्रेसकी ओरसे यह कहा गया कि लीगके सदस्य मध्यकालीन सरकारके संघटनके समय इस कारण नही लिये गये कि लीगने १६ मई वाले वक्तव्यकी स्वीकृति वापस लेकर विधान-परिषद्‌मे सम्मिलित होने और विधान बनानेके कार्यमे भाग लेनेसे इन्कार कर दिया था। इसलिए यह आवश्यक है कि मध्यकालीन सरकारमे सम्मि-लित किये जानेके पूर्व लीग १६ मई वाले वक्तव्यकी स्वीकृतिद्वारा विधान-परि-षद्‌में सम्मिलित होनेकी अपनी इच्छाका प्रमाण दे।

एसा प्रतीत होता है कि लार्ड वेवलको इस सम्बन्धमें लीगका कोई स्पष्ट निर्णय नही प्राप्त हुआ और उन्होंने ४ अक्तूबरको श्री जिनाको एक पत्र लिखकर इस वक्तव्यसे सन्तोष कर लिया कि 'चूकि मन्त्रिमण्डलमे सम्मिलित होनेका आधार १६ मई वाले वक्तव्यकी स्वीकृति है इसलिए मै ऐसा मानता हूँ कि लीग कौसिलकी बैठक शीघ्र बुलाकर बम्बईवाले प्रस्तावपर पुनः विचार किया जायगा।' श्री जिनाने

अपने १३ अक्तूबरके पत्रमे लिखा कि हमलोगोंने और बातोंके साथ साथ वाइसराय-के ४ अक्तूबरके पत्रके आधारपर मुसलिम लीगकी ओरसे पाच सदस्योंको मनोनीत करनेका निश्चय किया है। लार्ड वेवलने यह मानकर कि श्री जिनाने १६ मईवाले वक्तव्यकी शर्त स्वीकार कर ली है, मध्यकालीन सरकारके लिए पाच व्यक्तियोंको मनोनीत करनेको कह दिया। श्री जिनाद्वारा मनोनीत व्यक्तियोंमेसे एक दलित वर्गका भी था। वे सदस्य अक्तूबरके अन्तिम सप्ताहमें मध्यकालीन सरकारमे सम्मि-लित हुए और तबसे उसमें बने हुए हैं।

लीगके सदस्योंके मध्यकालीन सरकारमे सम्मिलित होनेके पूर्व अन्य सदस्य एक टीम और मन्त्रिमण्डलके रूपमें काम कर रहे थे। वाइसरायने भी इस मध्यकालीन सरकारको मन्त्रिमण्डलके रूपमें मान लिया था और यह मानी हुइ बात है कि वाइसरायके आदेशसे ही सभी कागजोंमे मन्त्रिमण्डल—केबिनेट— शब्द सरकारी तौरपर प्रयुक्त होने लगा था। हमलोग अपनी काररवाइयोमे भी मन्त्रिमण्डलके ही रूपमे व्यवहार करते थे; पर लीगके सदस्य इस मध्यकालीन सरकारको मन्त्रिमण्डल माननेके लिए तैयार नही थे; वे इसे भारत शासन विधान-के अन्तर्गत शासन परिषद्—एक्जिक्यूटिव कौसिल—ही मानते थे जिसका प्रत्येक सदस्य न्यनाधिक रूपमे अपने विभागका प्रधान था और वाइसरायके अतिरिक्त, और किसीके प्रति अपनेको दायी नही मानता था। फिर भी कहना पड़ता है कि ऐसे कम ही अवसर आये होंगे जब मन्त्रिमण्डलमें लीगी सदस्योंसे औरोंका मतभेद हुआ हो। यह बिलकुल स्वाभाविक भी है क्योंकि सामने आनेवाली अधिकाश समस्याएँ इस प्रकारकी होती है कि उनमे साम्प्रदायिक मतभेदके लिए स्थान ही नही रहता और वास्तविक शासन-कार्यमे दो राष्ट्रोंके सिद्धान्तपर चलनेवाले आन्दोलनका कही कोई आधार होता भी नही। पर सिद्धान्त रूपमे यह स्थिति कायम रखी जाती थी जिसका परिणाम यह होता था कि कुछ प्रश्नोंपर उनके गुण दोषके अनुसार विचार न होकर इस दृष्टिसे विचार होता था कि निर्णय कही दो राष्ट्रों-के सिद्धान्तके विरुद्ध पडकर उस सिद्धान्तपर आधृत पाकिस्तानकी मागपर कोई बुरा असर न डाले। स्थिति दिनोंदिन विषमतर होती गयी और कांग्रेसकी ओरसे

यह मांग की गयी कि मुसलिम लीगके सदस्य या तो १६ मईका वक्तव्य स्वीकार कर विधान-परिषद् में सम्मिलित होनेका निश्चय करें और मध्यकालीन सरकार चलानेका आधार मान ले या मध्यकालीन सरकारसे बाहर हो जायँ। विधान-परिषद् की बैठकका, जो ९ दिसम्बरको बुलायी गयी थी, विचार करते हुए यह और भी आवश्यक हो गया। परिषद् का अधिवेशन निकट आ जानेके कारण इस प्रश्नको हल करनेकी आवश्यकता स्वीकार की जाने लगी। ब्रिटिश सरकारने मन्त्रि-मण्डलके दोनों दलोंके प्रतिनिधियोको विचार-विमर्शके लिए लन्दन आमन्त्रित किया। कुछ आरम्भिक पत्र-व्यवहारके अनन्तर पण्डित जवाहरलाल नेहरू, सरदार बलदेवसिह, श्री जिना और श्री लियाकत अली खाने नवम्बरके अन्तिम सप्ताहमे लार्ड वेवलके साथ लन्दन गये। यह बात एक प्रकारसे समझ ली गयी थी कि किसी भी हालतमे विधान-परिषद् का अधिवेशन स्थगित नही होगा और नेहरूजीको उस तारीखके पहले ही वापस आ जाना चाहिये। लन्दनमें विचार-विमर्श हुआ। पर जैसी कि आशा नही थी, समझौता करानेमे वार्ता सफल नही हो सकी। इसपर सम्राट् की सरकारने ६ दिसम्बरको एक और वक्तव्य निकाला जिसमे कहा गया कि वार्तालापका मुख्य अभिप्राय विधान-परिषद् में सभी दलोंको सम्मिलित करना और उनका सहयोग प्राप्त करना था और मुख्य कठिनाई अमात्य दलके १६ मईवाले वक्तव्यके वर्गोंसे सम्बन्ध रखनेवाले १९ वें पैराग्राफ (५ और ८) के अर्थके विषयमें है। इसमें कहा गया कि 'अमात्य दलका बराबर यह अभिप्राय रहा है कि वर्गोंका निर्णय, अगर कोई ऐसा समझौता न हो जो उसके विरुद्ध पड़े तो, वर्गोंके प्रतिनिधियोंके बहुमतके आधारपर होना चाहिये। मुसलिम लीगने इसे मान लिया है, पर कांग्रेसने एक और ही अर्थ पेश किया है। उसका कहना है कि समग्र रूपमें वक्तव्यका यह अर्थ निकलता है कि प्रान्तोंको समूहीकरण और अपने विधानके सम्बन्धमें निर्णय करनेका अधिकार है। सम्राट् की सरकारने विधानज्ञोंकी राय ली है जिससे यह निश्चय हो जाता है कि १६ मईवाले वक्तव्यका अर्थ वही है जो अमात्य दल बराबर अपने अभिप्रायके रूपमें व्यक्त करता रहा है। इसलिए वक्तव्यका यह भाग, इस अर्थके साथ, १६ मईवाली योजनाका एक आवश्यक

अंग माना जाना चाहिये और विधान-परिषद् के सभी दलोंको यह स्वीकार- होना चाहिये। इसने अमात्य दलका अभिप्राय मान लेनेके लिए कांग्रेसपर जोर दिया जिसमें मुसलिम लीगके अपने रुखपर पुनः विचार करनेके लिए रास्ता निकल आये। अगर अमात्य दलके पुनः हामी भरनेके बावजूद विधान-परिषद् इस मौलिक विषयका निर्णय संघन्यायालयसे कराना चाहे तो यह कार्य बहुत जल्द होना चाहिये।' वक्तव्यमे एक बातपर बहुत जोर दिया गया था; वह यह कि अगर आपसमें मेलके साथ कार्य न किया जाय तो विधान-परिषद् के सफल होनेकी सम्भावना कम ही रहेगी। अगर ऐसी विधान-परिषद् द्वारा कोई विधान तैयार कर लिया जाय जिसमें भारतीय जनताके एक बड़े भागका प्रतिनिधित्व नही हुआ है तो सम्राट-की सरकार, जैसा कि कांग्रेस भी कहती है, देशके किसी अनिच्छुक भागपर उसे लादनेका विचार नही कर सकती। इस वक्तव्यका अभिप्राय १६ मईवाले वक्तव्य-का कांग्रेसने जो अर्थ लगाया था उसे अन्तिम बार अस्वीकार करना था जिसके अनुसार किसी प्रान्तको आरम्भिक स्थितिमे ही यह निश्चय करनेका अधिकार था कि जिस वर्गमें वह रखा गया है उसमें वह सम्मिलित हो या न हो और वह वर्गमें सम्मिलत हो या न हो, प्रान्तके सदस्योंसे न कराकर सारे वर्गके मताधिक्यके आधारपर करना अनिवार्य नही था। आसामकी विचित्र स्थितिके कारण इस प्रश्नका व्यावहारिक महत्व बहुत बढ गया था। इस प्रान्तमें मुसलिम आबादी सिर्फ ३३ ७ प्रतिशत है फिर भी यह बंगालके साथ ख—वर्गमे रख दिया गया था। इसका परिणाम यह था कि बंगाल-के मुकाबलेमे इसका अत्यधिक अल्पमत होना और यदि आसामका बहुमत भी उस वर्गमे सम्मिलित होनको अनिच्छुक होता तो इस प्रश्नका निर्णय केवल आसामके प्रतिनिधियोंके मनसे न होकर सारे वर्गके बहुमतके आधारपर होनेके कारण वह अपनी इच्छाको पूरा नही कर सकता था। आसामके मुकाबले-में बंगालका पलड़ा अनुचित और अन्याय्य रूपसे भारी कर देने और बंगालके प्रति-निधियोंके मतद्वारा उसे ग—वर्गमें रहनेके लिए बाध्य कर देनेसे अमात्य दलकी योजना सदोष हो गयी थी। यह भी आशंका थी कि वर्गोंमें रखे गये प्रान्तोंका विधान

बनानेका अधिकार पूरे वर्गको प्राप्त होनेसे बंगालके प्रतिनिधि, विशेषकर मुसलमान प्रतिनिधि जिनका वर्गमें बहुमत होगा, ऐसा बिधान बना देंगे जिससे नये विधानमें आसाम असेम्बलीके लिए ग—वर्गमें सम्मिलित होनेके विरुद्ध कोई निर्णय कर सकना असम्भव हो जायगा। और इस प्रकार अमात्य दलके १६ मईवाले वक्तव्यके अनुसार मिले हुए व र्ग से पृथक् होनेका प्रान्तका अधिकार समाप्त हो जायगा। कांग्रेसका कहना था कि जो व्याख्या ऐसी बुरी स्थिति उत्पन्न कर सकती है वह कभी ठीक नहीं हो सकती, वक्तव्यके शब्दोंसे यह अभिप्राय नही व्यक्त होता और इसके विभिन्न अंगोंमें परस्पर विरोध उत्पन्न हो जाता है पर सम्राट्की सरकारकी दृष्टिमें इन सब बातोंका कोई महत्त्व नहीं था और ६ दिसम्बरके वक्तव्यमे यह स्पष्ट कर दिया गया कि व्याख्यामें दलका अभिप्राय ठीक-ठीक व्यक्त किया गया है। दूसरे शब्दोंमें अमात्यदलका विचार आरम्भसे ही आसामके प्रति इस प्रकारका अनुचित व्यवहार करनेका था। इसलिए कांग्रेसके सामने अब प्रश्न यह था कि यह व्याख्या स्वीकार की जाय या नहीं और १६ मई वाला पूरा वक्तव्य ही अस्वीकार किया जाय या नहीं। कांग्रेस कार्यसमिति और अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटीने आसामकी जनताके इस बलके आधारपर कि अगर उसके प्रति अन्याय किया गया और उसपर ऐसा विधान लादा गया जो उसे अन्ततः पृथक् होनेके अधिकारसे वंचित कर देगा तो वह कभी नहीं झुकेगी, सम्राट्की सरकारद्वारा की गयी व्याख्याको स्वीकार करने और उसके आधारपर विधान-परिषद्का आरम्भ करनेका निश्चय कर लिया। ऐसी आशा की गयी कि अब मुसलिम लीग विधान-परिषद्में सम्मिलित हो जायगी, पर वह सम्मिलित होनेसे इनकार ही करती गयी और स्थिति ठीक वही बनी रही जो लार्ड वेबलके मध्यकालीन सरकारके तीन सदस्यों और श्री जिनाके साथ लन्दन जानेके पूर्व थी। स्पष्टतः यह ऐसी स्थिति थी जो आगे नहीं चल सकती थी।

पूर्व निश्चयके अनुसार विधान-परिषद्की बैठक ९ दिसम्बर १९४६ को दिल्लीमें हुई। इसमें मुसलिम लीगके सदस्योंके अतिरिक्त देशके सभी दलों, वर्गों और सम्प्रदायोंके प्रतिनिधि सम्मिलित हुए। इसमें दो मुसलमान प्रतिनिधि

पश्चिमोत्तर सीमा प्रान्तके थे, एक संयुक्त प्रान्तका और एक दिल्ली प्रान्तका था। परिगणित जातियोंके सभी प्रतिनिधि, जो सभी उसी सम्प्रदायके थे, प्रथम अधिवेशनमें सम्मिलित हुए। उसी प्रकार ईसाइयों, एंग्लोइंडियनों, सिखों और पारसियोंके भी प्रतिनिधि सम्मिलित हुए। कांग्रेसजन, हिन्दू सभावाले लिबरल फडरेशन (उदारदल) के सदस्य और वे लोग भी जो किसी दलके नहीं थे, बिना किसी अपवादके सम्मिलित हुए। केवल वेही सदस्य बाहर रहे जो मुसलिम लीगके द्वारा मनोनीत हुए थे। विधान-परिषद्‌ने सतर्कताके साथ कार्य आरम्भ किया और कोई महत्वका निर्णय नहीं किया जिसमें मुसलिम लीगके सदस्योंको स्थितिपर पुनः विचार करने और किसी स्पष्ट निर्णयका सामना किये बिना बादमें भी परिषद्‌में सम्मिलित होनेकी सुविधा रहे। विधान-परिषद्‌के उद्देश्योकी व्याख्या सम्बन्धी प्रस्तावपर भी पूरा विचार नहीं किया गया, बादमें होनेवाले अधिवेशनके लिए स्थगित कर दिया गया। विधान-परिषद्‌ने कार्य संचालन सम्बन्धी कुछ नियम बनाये, पर उनका निर्माण करते समय भी इस बातका खयाल रखा गया कि विवादग्रस्त नियमोंपर पुनः विचार किया जा सके।

पर लीग सम्मिलित होनेके लिए तैयार नही थी और ६ दिसम्बर १९४६ वाला वक्तव्य इसके द्वारा अस्वीकृत कर दिये जानेके बाद दंगे शुरू हो गये। यह स्थिति असह्य थी। दिनोंदिन देशकी परिस्थिति गम्भीरतर होती जा रही थी। मन्त्रिमण्डलमें दो पृथक् दल होनेके कारण भारत सरकारका शासन कार्य भी जटिलतर होता जा रहा था। कुछ न कुछ करना अनिवार्य हो गया। घटनाओंका दबाव इस कदर बढ़ गया कि ब्रिटिश सरकार अधिक कालतक प्रतीक्षा कर उनका आपसे आप ठिकाने लगना नहीं देख सकती थी। उसने २० फरवरी १९४७ को अपनी नीतिके सम्बन्धमें एक और वक्तव्य निकाला जो पार्लमेंटकी सभाओंमें पेश किये जानेके साथ ही भारतमें भी प्रकाशित किया गया। इसमें समझौतेकी बातचीतके पूर्व इतिहासकी बाह्य रेखा देकर आगे कहा गया है—

'(६) सम्राट्‌की सरकारको इस बातका विशेष खेद है कि भारतीय दलोंमें अब भी मतभेद बने हुए है जो विधान-परिषद्‌को जो कार्य करना चाहिये उसके

सम्पादनमें बाधक हो रहे हैं। योजनाका यह सार है कि परिषद् पूणतः प्रातिनिधिक हो।

'(७) सम्राट्की सरकार अमात्य दलकी योजनाके अनुसार भारतके सब दलों द्वारा स्वीकृत विधानके आधारपर बने हुए अधिकारियोंको अपना दायित्व हस्तान्तरित करना चाहती है, पर दुर्भाग्यवश इस प्रकारके विधान और ऐसे अधिकारियोंके प्रस्तुत होनेका कोई स्पष्ट लक्षण नही देख पड़ता। अनिश्चयकी वर्तमान स्थिति खतरेसे भरी हुई है और अनिश्चित कालतक नही चलने दी जा सकती। सम्राटकी सरकार यह स्पष्ट कर देना चाहती है कि जून, १९४८ तक जिम्मेदार भारतीयोंके हाथमें सत्ता सौपनेके लिए आवश्यक काररवाई करनेका उसका निश्चित विचार है।

'(९) सम्राट्की सरकार ऐसी सरकारको दायित्व हस्तान्तरित करनेको इच्छुक है जो जनताके समर्थनके दृढ़ आधारपर टिकी होकर शान्ति बनाये रखने और न्याय तथा योग्यतापूर्वक शासन करनेमें समर्थ हो। इसलिए यह आवश्यक है कि सारे दल अपने मतभेदोंको दूर कर दे जिसमे वे दायित्वके गुरुभारको, जो अगले वर्ष उनके सरपर पड़नेवाला है, वहन करनेके लिए प्रस्तुत हो सकें।

(१०) अमात्य दलके महीनोंके कठिन परिश्रमके बाद विधान प्रस्तुत करनेकी विधिके सम्बन्धमें बहुत कुछ समझौता हो गया। उसके गत मई मासके वक्तव्यमे इसका उल्लेखकर दिया गया है। इसपर सम्राट्की सरकारने पार्लमेण्ट से ऐसे विधानके लिए सिफारिश करना स्वीकार किया जो उसमे दिये गये प्रस्तावके अनुसार पूर्ण प्रातिनिधिक विधान-परिषद्द्वारा तैयार किया गया हो। किन्तु अगर यह देख पड़े कि ७ वें पौराग्राफमे दिये गये समयके अन्दर उक्त विधानपूर्ण प्रातिनिधिक परिषद् द्वारा तैयार नही किया जा सकेगा तो सम्राट्की सरकारको यह विचार करना पड़ेगा कि उस तारीखको सत्ता किसको हस्तान्तरित की जाय—समग्र ब्रिटिश भारतकी किसी प्रकारकी केन्द्रीय सरकारको, या कुछ क्षेत्रोंमे वर्तमान प्रान्तीय सरकारोंको या और किसी रूपमे जो उपयुक्त और भारतीय जनताका हित-साधक हो।

'(११) सत्ताका अन्तिम हस्तान्तर, सम्भव है, जून, १९४८ के पहले न हो तो भी उसकी तैयारी पहलेसे ही शुरू हो जानी चाहिये। इस बातका विशेष ध्यान रहे कि मुल्की शासन भली भांति चलता रहे और देशकी रक्षाकी पूरी व्यवस्था कर ली जाय। परहस्तान्तरका कार्य ज्यों ज्यों आगे बढ़ता जायगा त्यों त्यों १९३५ के भारत शासन विधानका पूरा पूरा चालन भी कठिन होता जायगा। उचित समयपर सत्ताके अन्तिम्म हस्तान्तरके लिए कानून बना लिया जायेगा।'

भारतीय रियासतोंके सम्बन्धमें सम्राटकी सरकारने यह घोषित किया कि सर्वोच्च प्रभुत्वके अन्तर्गत जो अधिकार और कर्तव्य थे उन्हें वह ब्रिटिश भारतकी किसी सरकारको हस्तान्तरित नही करेगी। उसने यह विचार भी प्रकट किया कि सत्ता हस्तान्तरके कारण जो प्रश्न उत्पन्न होंगे उनके सम्बन्धमे बातचीत उनके ही प्रतिनिधियोंके साथ की जायगी जिन्हें सत्ता हस्तान्तरित की जायगी।

इस वक्तव्यने सत्ता-हस्तान्तरके लिए एक तारीख नियत कर दी। इसने यह स्पष्ट कर दिया कि सबकी स्वीकृति और सहमतिसे सरकारकी स्थापना न होनेपर सम्राट्की सरकारको यह निश्चय करना पड़ेगा कि सत्ता किसे हस्तान्तरित की जाय, और कठिनाईकी हालतमें उसे देशके एकाधिक अधिकारियोंको इसे सौपना पड़ सकता है। उसने यह भी स्पष्ट कर दिया कि जहांतक देशी नरेशोंका सम्बन्ध है, सर्वोच्च प्रभुत्वका अन्त कर दिया जायगा, ब्रिटिश भारतकी सरकारको हस्तान्तरित नहीं किया जायगा। इस प्रकार इस वक्तव्यने एक सत्ताका स्थापन जिसे अधिकार सौंपा जा सके, भारतके सभी दलोंके लिए आवश्यक कर दिया।

उसी समय निकाले गये एक दूसरे वक्तव्य द्वारा लार्ड वेवलके बुलाये जाने और वर्माके लार्ड, माउण्ट बाटनके भारतका वाइसराय नियुक्त किये जानेकी घोषणा की गयी। लार्ड माउण्ट बाटन २३ मार्च १९४७को भारत पहुँचे और पद-ग्रहण किया। नये वाइसरायने भारतको, विशेषकर पश्चिमोत्तर भाग और बंगालको भयंकर साम्प्रदायिक उपद्रवमें ग्रस्त देखा जिसमें अधिकांशतः एक पक्ष-हिन्दुओं और सिखों—की क्षति हो रही थी। २० फरवरीके वक्तव्यमें देशकी एकाधिक सत्ताओंको अधिकार हस्तान्तरित करनेका विचार प्रकट किया गया था, और ऐसा जान

पड़ता था कि जिन प्रान्तोंपर मुसलिम लीगका अधिकार नहीं है उन्हें अधिकारमें लानेके लिए वह अपने प्रयत्न केन्द्रित कर रही है। बगालमें लीगी मन्त्रिमण्डल शासन कर रहा था। आसाममें, जिसके लिए मुसलिम लीग गैर-मुसलिम प्रधान प्रान्त होने और हिन्दुओंकी सर्वाधिक संख्या होनेपर भी दावा करती थी, काग्रेसी मन्त्रिमण्डलका शासन था। पजाबमें यूनियननिस्ट मन्त्रिमण्डल था जिसके सदस्यों-में मुसलमान, सिख और हिन्दू थे, पर मुसलिम लीग दलके रूपमें उससे पृथक् थी। पश्चिमोत्तर सीमाप्रान्तमे काग्रेसने १९४६ के चुनावमें बहुसख्यक जगहोंको ही नही प्राप्त किया था बल्कि बहुसंख्यक मुसलिम जगहोंको भी जीता था जिसके फलस्वरूप वहा काग्रेस मन्त्रिमण्डलका शासन था। सिन्धमें १९४६ के साधारण निर्वाचनमें चुने गये सदस्योंमें बहुमत मुसलिम लीगके विरोधी दलका था। वहां दो यूरोपीय सदस्य थे जिनकी स्थिति बड़ी महत्वपूर्ण थी, पर वे लीगी दलको स्पष्ट रूपसे बहुसख्यक बनानेमें असमर्थ थे। फिर भी गवर्नरने बहुसंख्यक दलकी उपेक्षा कर लीगके नेताको मन्त्रिमण्डलका सघटन करनेके लिए आमन्त्रित किया और उसने सघटन किया भी। कुछ महीनोके बाद नया चुनाव करनेके लिए चाल चली गयी जिसमे मुसलिम लीगने बहुमत प्राप्त करनेका उपाय कर लिया जिससे इस समय सिन्धमें लीगी मन्त्रिमण्डल है। इस प्रकार केवल दो प्रान्तों—बंगाल और सिन्ध—की व्यवस्थापिका सभामें मुसलिम लीगका बहुमत है और इसलिए उसने अपना मन्त्रिमण्डल बनाया है। २० फरवरीकी घोषणाके बाद वह ऐसे अन्य प्रान्तोंके मन्त्रिमण्डलपर भी किसी प्रकार अधिकार करनेका प्रयत्न करती रही है जिन्हे वह पाकिस्तानका अंग बनानेका दावा करती है, जिसमें सत्ता-हस्तान्तरका ठीक समय आनेपर वह दावा कर सके कि उन प्रान्तोंपर लीगका अधिकार है और वहा लीगी मन्त्रिमण्डल शासन कर रहा है इसलिए लीगको ही सत्ता हस्तान्तरित की जाय। पंजाब और सीमाप्रान्तमे उग्र आन्दोलन आरम्भ कर दिया गया जिसमें अत्याचार, उपद्रव, लूटपाट और हत्या चलती रही। पंजाबके यूनियनिस्ट प्रधानमन्त्री सर खिज्र हयात खां तिवानाने पदत्याग कर दिया, और चूकि व्यवस्थापिका सभामें समथन प्राप्त न होनेके कारण मुसलिम लीग मन्त्रिमण्डल बनानेमें असमर्थ

थी इसलिए गवर्नरने भारत शासन विधानकी ९३ वीं धाराके अनुसार प्रान्तका शासन-सूत्र अपने हाथमें ले लिया और तबसे प्रान्तका शासन उसी रूपमें होता रहा है । पश्चिमोत्तर सीमाप्रान्तमें मन्त्रिमण्डल अपने स्थानपर डटा रहा और घोषित कर दिया कि उसे व्यवस्थापिका सभामे बहुसंख्यक दलका समर्थन प्राप्त है और लीग ी जबर्दस्तीके आगे झुकनेका कोई कारण नही है। इसके फलस्वरूप उस प्रान्तमें घोर अशान्तिकी स्थिति बनी हुई है । लार्ड माउण्ट बाटनने वाइसराय नियुक्त होनेके समय ही यह स्थिति समझ ली थी और उन्हें इसका हल निकालना था । वे परामर्शदाताके रूपमे कई अनुभवी अफसरोंको साथ ले आये थे । उन्होंने दलके नेताओं तथा अन्य लोगोसे विचार-विनिमय कर कुछ अपने प्रस्ताव तयार किये । यह स्पष्ट हो गया कि मुसलिम और गैर मुस्लिम क्षेत्रोंमें देशके विभाजनसे कम किसी चीजसे मुसलिम लीग सन्तुष्ट न होगी और किसी न किसी प्रकारसे समझौता न होनेतक यह अशान्ति बनी ही रहेगी । लीगके बाहर कोई भी विभाजनके पक्षमें नही है, हिन्दू, सिख और काग्रेस जन ही नही, ईसाई पारसी और गैरलीगी मुसलमान भी किसी प्रकारके विभाजनके घोर विरोधी हैं, साथ ही काग्रेसका बराबर यह मत रहा है कि वह देशके किसी भागको उसकी इच्छाके विरुद्ध अपने साथ रहनेके लिए बाध्य नही करेगी । कांग्रेसके इसी मतका हवाला देते हुए ६ दिसम्बरवाले वक्तव्यमें कहा गया कि देशके किसी अनिच्छुक भागपर कोई विधान लादनेका विचार नही किया जा सकता । इसलिए प्रश्न अब यह था कि देशके किमी भागको, जो पृथक् होनेका निश्चय कर चुका है, भारतके साथ रहनेको बाध्य किया जाय या नही, और महसूस किया गया कि ऐसा नही किया जा सकता । इससे यह अनुगमन निकला कि लीग भी किमी प्रान्तके किसी भागको, अगर वह उसके साथ रहना पसन्द न करे तो, रहनेके लिए बाध्य नही कर सकती । पंजाबके मध्य तथा पूर्वी और बगालके पश्चिमी तथा उत्तरी भागोंमे ऐसे बहुतसे बड़े क्षत्र है जिनकी आबादीमें गैर मुसलिम बहुसख्यक है । ये भाग अगर लीगके पाकिस्तानमे रहना न चाहें तो वे रहनेके लिए बाध्य नही किये जा सकते । इसलिए सूत्र यह निकला कि यदि मसलिम लीग देशके कुछ भागोंको इस आधारपर

कि उनकी आबादीमें मुसलिम बहुसंख्यक हैं और वे पृथक् होना चाहते हैं, पृथक् करनेका आग्रह करती है तो उसी प्रकार दूसरे भी जो उसके साथ नही रहना चाहते बाहर रह सकते हैं। इसलिए अगर पाकिस्तानकी स्थापना होती है तो पंजाब और बंगालका विभाजन भी करना होगा।

लार्ड माउण्टबाटनने सम्राटकी सरकारकी राय लेनेके लिए लार्ड इस्मेके नेतृत्वमें अपने कुछ परामर्शदाताओंको पहले ही लन्दन भेज दिया था और बादमें स्वयं भी हवाई जहाजसे वहां गये। वे सम्राटकी सरकारकी ओरसे एक वक्तव्य और सत्ता-हस्तान्तरके लिए आवश्यक काररवाई करनेका अधिकार लेकर वापस आये। वक्तव्य ३ जून १९४७ को भारत और लन्दनमें साथ-साथ प्रकाशित हुआ। इसमें प्रान्तों और देशके उन भागोंकी इच्छाका निर्धारण जो पार्थक्यके पक्षमें माने जाते हैं, और अगर विभाजनका निश्चय हो तो विभाजन करनेकी विधिका निर्देश किया गया है। पंजाब, सिन्ध और बंगालकी व्यवस्थापिका सभाओंको यह निश्चय करना है कि वे भारतीय संघमें रहनेके पक्षमे है या नही। अगर वे भारतीय संघमें न रहना चाहें तो बगाल और पजाबकी व्यवस्थापिका सभाओंके सदस्य दो-दो दलोंमे बॅट जायँगे। एक दलमें पंजाबके पश्चिमी जिलोके सदस्य होंगे, जिनमें मुसलमान बहुसख्यक है और दूसरेमें उन जिलोके प्रतिनिधि होंगे जिनमें गैरमुसलमान बहुसंख्यक हैं। ये पृथक पृथक् बैठकर यह निश्चय करेंगे कि वे प्रान्तका विभाजन चाहते है या नही। उसी प्रकार मुसलिम बहुसख्यक और गैरमुसलिम बहुसंख्यकवाले बगालके जिलोंके प्रतिनिधि भी अलग-अलग दलोंमें बैठकर इस प्रश्नका निर्णय करेगे। अगर इनमेंसे कोई भी दल प्रान्तके विभाजनके पक्षमें निर्णय करे तो प्रान्तका विभाजन कर दिया जायगा और सीमा-कमीशनद्वारा सीमा निर्धारित कर दी जायगी। सीमाका निर्धारण करनेमे आबादीका ही नही अन्य बातोंका भी ध्यान रखा जायगा। वक्तव्यमें कहा गया है कि भारतको उपनिवेशका पद देनेके लिए तत्काल पार्लमेण्टमे कानूनी काररवाई की जायगी और यदि भारतके विभाजनका निश्चय हुआ तो दो उपनिवेश होंगे नही तो एक ही। उपनिवेशकी स्थापनाके साथ ही सर्वोच्च प्रभुत्वका अन्त हो जायगा। आशा की

जाती है कि अधिकसे अधिक अगस्तके मध्यतक कानूनी काररवाई पूरी और सत्ता हस्तान्तरित हो जायगी। इस प्रकार सत्ता-हस्तान्तरकी जो तारीख पहले नियत की गयी थी उसके लगभग दस मास पहले ही यह कार्य सम्पन्न हो जायगा।

पश्चिमोत्तर सीमा प्रान्तसे इस प्रश्नका निर्णय जनमत-संग्रह द्वारा करनेको कहा गया है और ब्रिटिश बलूचिस्तानके लोगोंकी इच्छा जाननेके लिए भी कोई तरीका बरता जा रहा है। आसाममें सिलहट ही एक ऐसा जिला है जिसमें मुसलमान बहुसंख्यक हैं। यदि बंगालके विभाजनका निश्चय हो तो सिलहट जिलेमें, यह निश्चय करनेके लिए कि वह आसामका अंग होकर रहना चाहता है या पूर्वी बंगाल प्रान्तके साथ मिल जाना चाहता है, जनमत संग्रह करना होगा। नीति सम्बन्धी इस वक्तव्यको कांग्रेस कार्यसमितिने स्वीकार कर लिया और अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटीने भी उसे मान लिया। अखिल भारतीय मुसलिम लीगकी कौन्सिलने भी ९ जून १९४७ की बैठकमें कुछ बातोंके निर्णयका अधिकार सुरक्षित रखते हुए इस योजनाको स्वीकार कर लिया।

घटना-चक्र बड़ी तीव्र गतिसे चल रहा है। पंजाब और बंगालकी व्यवस्थापिका सभाएँ जूनके अन्ततक यह निश्चय करनेवाली हैं कि ये प्रान्त भारतीय संघमें रहेंगे या नहीं। सम्भावना यही है कि निर्णय प्रान्तोंके विभाजनके पक्षमें और भारतीय संघमें रहनेके विपक्षमें होगा। इस निश्चयका पहलेसे ही अनुमान कर सीमा-कमीशनके कार्यक्षेत्र और सदस्योंकी नामावलीके सम्बन्धमे विचार भी किया जा रहा है। विभाजनकी व्यवस्थाका कार्य—अगर विभाजनका निणय हुआ तो—पहलेसे ही आरम्भ हो गया है और निश्चय होनेके साथ ही विभाजनका कार्य आरम्भ कर दिया जायगा। पश्चिमोत्तर सीमाप्रान्तमें जनमत-संग्रहका प्रबन्ध कर दिया गया है और यदि बंगालके विभाजनका निर्णय हुआ तो सिलहटमें भी जनमत-संग्रहका वैसा ही प्रबन्ध कर दिया जायगा। ब्रिटिश पार्लमेण्टके विधान स्वीकार करनेके साथ ही भारतमें उपनिवेशकी स्थापना हो जायगी।

आशा है, जुलाईमें पार्लमेण्ट कानूनी काररवाई शुरू करेगी और अगस्तके आरम्भ-में, पार्लमेण्टकी सभाओंके विश्रामके लिए स्थगित होनेके पूर्व ही, पूरी हो जायगी तथा भारतमें औपनिवेशिक पदकी वास्तविक स्थापना और उपनिवेशोंको सत्ता हस्तान्तरित करनेका कार्य अगस्त १९४७ के मध्यतक पूरा हो जायगा।

चूंकि बंगाल और पंजाब प्रान्तोंके विभाजनने बहुत अधिक महत्व प्राप्त कर लिया है इसलिए इस स्थलपर विभाजनके आधारका, जिसका दावा किया जाता है, उल्लेख कर देना अप्रासंगिक न होगा। पंजाबमें सिखोंकी स्थिति विचित्र है। सिखोंकी लगभग ९५ प्रतिशत आबादी पंजाबमें केन्द्रित है। उनके अधिकांश धार्मिक और उनके महान् इतिहासमें आये हुए महत्वपूर्ण स्थान पंजाबमें ही हैं। वे हट्टे-कट्टे तथा परिश्रमी होते हैं और संसारके विभिन्न युद्ध-क्षेत्रोंमें प्रदर्शित अपनी वीरताके लिए ही नहीं बल्कि कृषि और कालोनी (बस्तियां) बसानेके कार्योंमें भी ख्याति प्राप्त की है। नहरोंके निकलनेपर उन्होंने पंजाबके एक बहुत बड़े भू-भागमें जो रेगिस्तानके रूपमें था, बड़े बड़े क्षेत्रोंको चासोपयोगी बनाया है जो आज उन्हींके अधिकारमें है। वे व्यवसायकी ओर भी साहसपूर्वक बढ़े हैं और उनके बहुतसे कारखाने पंजाबमें ही नहीं, प्रान्तके बाहर भी हैं। अगर मुसलिम और गैरमुसलिम बहुसख्याके हिसाबसे जिलोंको दो वर्गोंमें रखकर, जैसा कि विभाजनके प्रश्नका निर्णय करनेके लिए व्यवस्थापिका सभाके सदस्योंका दो दलोंमें विभाग किया गया है, आबादीके आधारपर प्रान्तका विभाजन किया गया तो इससे बहुत सी उलझने पैदा हो जायँगी। गुरदासपुर जिलेमें मुसलमान और गैर-मुसलमान लगभग समसख्यक—मुसलमान ५१.१४ प्रतिशत और गैर-मुसलमान ४८.८६ प्रतिशत—है। गैर-मुसलमानोका दावा है कि पंजाबकी सारी आबादीके लिहाज-से ४३ प्रतिशत होनेसे हम अल्पसंख्यक और ५७ प्रतिशत होनेसे मुसलमान बहु-संख्यक भले ही हों, पर अधिकांश कर हम ही देते रहे हैं और प्रान्तीय व्यवस्थापिका सभाके मतदाताओंमें भी हमारा ही अनुपात अधिक है। निम्नलिखित अंकोंसे यह बात स्पष्ट हो जायगी:—

	१९४१ की गणनाके अनुसार आबादी	व्यवस्थापिका सभाके मतदाता	जमीनका लगान	आय-कर	अन्य-कर	औसत आर्थिक भाग
गैरमु०	४३ प्रतिश०	५६ प्रति०	५६ प्रति०	९० प्रति०	७०प्रति०	७० प्र०
मुस०	५७ प्रति०	४४ प्रति०	४४ प्रति०	१० प्रति०	३०प्रति०	३० प्र०

उनकी ओरसे यह दावा किया जाता है कि गतकालमे पंजाबके निर्माण-में हमने जो बहुत बड़े अनुपातमे सहायता की है उसके विचारसे सिर्फ आबादीके आधारपर पंजाब और सम्पत्तिका बँटवारा न्याय्य न होगा। यह समस्या नहरोंके सम्बन्धमें भी उत्पन्न होती है। पंजाबमे आबपाशीकी व्यवस्था देशम सबसे बढी हुई है और, जैसा कि पहले कहा जा चुका है, इन्हीं नहरोंकी सहायतासे हालके कुछ वर्षोमें कई जिलोंकी उन्नति की गयी है। इसलिए यह विचारका मुख्य विषय है कि ऐसा कोई विभाजन नही होना चाहिये जिससे सिचाईकी व्यवस्था उलट-पुलटकर बिलकुल बेकार हो जाय। उदाहरणार्थ, यदि नहरका बँटवारा इस प्रकार हो कि उससे सींचा जानेवाला एक भाग मुसलिम क्षेत्रमें पड़े और दूसरा गैर-मुसलिम क्षेत्रमें, तो इससे कोई लाभ न होगा। इस तरहका बँटवारा परस्पर विरोधका कारण होगा जिससे नहरके सचालन और जलके वितरणके सम्बन्धमे लड़ाई होती रहेगी। कई जिलोंमे सिखोके बड़े-बड़े भूभाग है जो मुसलिम क्षेत्रमें पड़ते है। उन्होने अपने ही पुरुषार्थसे इन क्षेत्रोंको चासोपयोगी बनाया है। इसी प्रकार मुसलमानोंने भी कुछ भूभागोका विकास किया है। व्यक्तियोमे जमीनके टुकडे ज्यामितिके वर्गोंके रूपमें बँटे होते है। यदि जलवायु, जमीनकी किस्म, और सिचाईकी सुविधा अल्पाधिक समान हो तो एक वर्गक्षेत्रका विनिमय दूसरे वर्ग-क्षेत्रके साथ बिना किसी परेशानी और उलझनके आसानीसे हो सकता है। इसलिए सबसे युक्तियुक्त उपाय यह होगा कि मुसलमानो और गैर-मुसलमानोंमे आबादी और वर्गक्षेत्रोंका परिवर्तन हो—मुसलमान उन जिलोंमे चले जायँ जो मुसलिम

क्षत्रमें रखे गये हैं और उन जिलोंके गैर-मुसलमान उन जिलोंमें चले आयें जो गैर-मुसलिम क्षेत्रमें डाले गये है। अगर बिना दिक्कत और तकलीफ, बिना खर्च और परेशानीके आबादी और जमीनका परिवर्तन हो सके तो पंजाबकी बस्तियों (कालोनीज़) में भी यह हो सकता है और सिखोंकी आबादीका अधिकतर भाग इसी तरीकेसे मुसलिम जिलोंमे हटाकर उस भागमे लाया जा सकता है जो अब गैर-मुसलिम होगा। अगर कडाईके साथ आबादीके आधारपर जिलेवार बँटवारा हो तो ब्रिटिश पंजाबकी सिखोंकी आबादी बुरी तरह बँट जायगी। इस रूपमें बॅटनेपर ब्रिटिश पजाबकी उनकी कुल आबादी ३७,५७,४०१ मेसे २०,७३,५४६ या ५५ प्रतिशत तो गैर-मुसलिम क्षेत्रमें पड़ेंगे और १६,८३,८५५ या ४५ प्रतिशत मुसलिम क्षेत्रमें।

यह बात भी स्मरण रखनेकी है कि जब दो स्वतन्त्र प्रभुराजोंकी स्थापना होगी तब यह स्वाभाविक और वाछनीय है कि कोई प्राकृतिक सीमा हो जो आसानीसे पहचानी जा सके और दोनों राजोंके बीच एक प्रकारके घेरेका काम दे सके। इस प्रकारकी प्राकृतिक सीमाका काम रावी नदीसे चल सकेगा—इसके पूर्वका भाग गैर-मुसलिम क्षेत्र होगा और पश्चिमका मुसलिम क्षेत्र। इस क्षेत्रके ऊपरके हिस्सेकी सिचाई अपरबारी दोआब सर्किलकी नहरोंसे होती है और नीचेके हिस्सेकी सिचाई लोअरबारी दोआब सर्किलकी नहरोंसे। पहली नहरोंका शीर्ष-स्थान गुरुदासपुर जिलेकी पठानकोट तहसीलमे पड़ता है जहा गैरमुसलमानोंका विशेष प्राधान्य है। इसी क्षेत्रमें माटगुमरी जिला पड़ेगा जो कालोनी है। इसके पश्चिममे अन्य कालोनीवाले जिले है और आबादी और जमीनका परिवर्तन बड़ी आसानीसे हो सकता है जिससे मुसलिम क्षेत्रमे सिखोंकी संख्या बहुत घट जायगी और गैर-मुसलिम क्षत्रमें उसी हिसाबसे बढ जायगी। हिसाब लगाकर देखा गया है कि अगर इस आधारपर विभाजन हो तो पूर्वी पंजाबमें सिख ५५ प्रतिशतके बजाय ७० प्रतिशतसे भी अधिक हो जायेंगे। उनके बहुतसे पवित्र स्थान और मन्दिर भी उन्हींके क्षेत्रमें पड़ेंगे।

इसी प्रकार बंगालमें भी मुसलिम बहुसंख्यकवाले जिलोंके अन्दर ऐसे भूभाग हैं जिनमें गैर-मुसलमानोंका प्राधान्य है। उदाहरणार्थ, मुसलिम बहुसंख्या-वाले फरीदपुर जिलेमें हिन्दू भूभागोंके साथ कुछ भूभाग मिले हुए हैं जिनमें परि-गणित जातिया विशेष रूपसे बसी हुई हैं। हिन्दू सन्त और सुधारक श्री गौरांग महाप्रभुने एक ऐसे जिलेमे जीवनयापन किया और ऊँचे उठे जो मुसलिम क्षेत्रमें पड़ता है, हालां कि यह हिन्दू बहुसख्यावाले जिलोंसे मिला हुआ है और स्वयं भी हिन्दू-प्रधान भूभाग है। बंगालके सम्बन्धमे भी प्राकृतिक सीमाका प्रश्न विचार-णीय है। इन प्रश्नोंपर विचार करना और ऐसी रेखा खीचना जो उचित और न्याय्य होनेके साथ-साथ दो प्रभु राजोके बीचकी व्यावहारिक सीमा भी हो, सीमा कमीशनका कर्तव्य होगा।

इस प्रकार यदि बहुसंख्यक मुसलिम आबादीवाले प्रान्त विभाजनका निश्चय करें तो भारतका विभाजन हो जायेगा, पर यदि विभाजनका निश्चय हुआ तो पंजाब और बंगालका भी विभाजन करना ही होगा। विभाजनसे निस्सन्देह शासन और सम्पत्ति-विभाजन सम्बन्धी कई समस्याएँ उठ खड़ी होंगी। सुदीर्घ-कालसे देश एक ही शासनके अधीन रहा है। रेलवे, टेलीफोन, टेलीग्राफ, सड़कें और बहुतसी संस्थाएँ सामान्य रूपसे सबकी हैं और वे किसी एक प्रान्तके काम न आकर कई प्रान्तों और सारे देशके काम आती है। किसी न किसी प्रकार इनका बँटवारा करना होगा। कई प्रान्तोंमें भारत सरकारकी अचल सम्पत्ति, इमारतें आदि हैं जिनका बँटवारा करना पड़ेगा। फिर नहरें है जो बँटे हुए भागोंसे होकर जायेंगी। इस तरहकी सम्पत्तिका भी किसी प्रकारका बँटवारा आवश्यक होगा। भारतका बहुत भारी राष्ट्रीय ऋण है जो २,२०० करोड़के आसपास है। अगर मालियतका बँटवारा होगा तो देनका और पौंड पावनेका भी बँटवारा होना ही चाहिये। फिर फौजी कर्मचारियोंसे भिन्न, विभिन्न श्रेणियोंके मुल्की कर्मचारी हैं। सरकारकी इस मानव-सम्पत्तिके विभाजनके लिए भी कुछ-न-कुछ करना होगा। अन्तमें रक्षासेना, उसका भांडार और सामग्री तथा उसके अधिकार और नियन्त्रण-

में चल-अचल सम्पत्ति है जो कम महत्त्वपूर्ण नहीं है। इनका भी बँटवारा करना होगा। इन सबका विभाजन करना महाकठिन कार्य होगा, और सबसे बढ़कर यह प्रश्न रह ही जाता है कि विभाजनका आधार क्या होगा। विभाजनका कार्य पूरा हो जानेपर परिणाम सम्भवतः मृतसागरका सेब या दिल्लीका लड्डू होगा, जिसे पाकर भी मनुष्य उतना ही पछताता है जितना न पानेपर।

——:o:——

विषयानुक्रमणिका

—:०:—